सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

५८

(१८ मई, १९३४ – १५ सितम्बर, १९३४)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

भूमिका

प्रस्तुत खण्डमें मईके उत्तरार्धसे सितम्बर, १९३४ के पूर्वार्ध तककी चार माहकी सामग्रीका संकलन किया गया है। इससे एक सप्ताह पूर्व ८ मईसे गांधीजीने उड़ीसा का अपना शेष दौरा धर्म-यात्राओंकी पुरानी परिपाटीके अनुसार पद-यात्राके द्वारा करना शुरू कर दिया था। उनकी यह पद-यात्रा, बीचमें दो दिन, १७ और १८ मईको छोड़कर — जब वे अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें भाग लेनेके लिए पटना गये थे — अनवरत चलती रही और ८ जूनको पूरी हुई। कुछ दिनों बाद उन्होंने पुनः रेलगाड़ीका उपयोग करना शुरू किया, और दौरेके इस चरणमें वे पूना, अहमदाबाद, अजमेर, कराची, कलकत्ता, कानपुर और लखनऊ गये तथा अन्तमें २ अगस्त को बनारस पहुँचे। सम्पूर्ण हरिजन-यात्रा कुल मिलाकर ९ माह चली। इसमें उन्होंने १२००० मीलकी दूरियाँ तय कीं — १५६ मील पद-यात्राके द्वारा — और लगभग दस लाख रुपया इकट्ठा किया। दौरेमें लगभग लगातार, जगह-जगह, सनातनियोंने काले झण्डे दिखाकर उनके खिलाफ विरोधका प्रदर्शन किया और २५ जूनको पूनामें किसी ने उस कारपर जिसमें उसने माना था कि गांधीजी हैं, बम भी फेंका। सनातनी प्रदर्शनकारियोंके नेता पण्डित लालनाथपर अजमेरमें ५ जुलाईको, जिस समय वे एक सभामें भाषण कर रहे थे, लाठीसे प्रहार किया गया। गांधीजी ने माना कि यह प्रहार किसी 'सुधारक' द्वारा ही किया गया होगा और उसके प्रायश्चित्तके रूपमें उन्होंने तत्काल यह घोषणा की कि वे दौरेकी समाप्तिपर ७ दिनका उपवास करेंगे। ५ अगस्तको वर्धा पहुँचनेके बाद उन्होंने ८ अगस्तको यह उपवास आरम्भ किया और उसे १४ अगस्तको पूरा किया। २३ अगस्तको केन्द्रीय असेम्बलीमें रंगा अय्यरने अपना विवादास्पद मन्दिर-प्रवेश विधेयक वापस ले लिया। सरकारने और असेम्बलीके कई सदस्योंने भी सिद्धान्त तथा अव्यावहारिकताके आधारपर इस विधेयकका विरोध किया था। विधयकके इस गौरवहीन अन्तपर सबसे ज्यादा प्रसन्नता सनातनियोंको हुई।

यह दौरा, गांधीजी ने ४ अगस्त, १९३३ को उन्हें एक वर्षकी कैद की सजा होनेके बाद सक्रिय राजनीतिमें भाग न लेनेका जो निश्चय किया था, उसकी अवधि पूरी होनेके साथ-साथ ही समाप्त हुआ। किन्तु इस बीच ३० माह के अन्तरालके बाद वर्धामें १२ जूनको कांग्रेस कार्यकारी समितिकी एक बैठक हो चुकी थी। अलबत्ता, इस बैठकमें कांग्रेसके अध्यक्ष सरदार वल्लभभाई पटेल तथा जवाहरलाल नेहरू और खान अब्दुल गफ्फार खाँ जैसे उसके महत्वपूर्ण सदस्य नहीं थे, क्योंकि वे

तो उस समय भी जेलके अन्दर ही थे। कार्यकारी समितिकी दूसरी बैठक १७ और १८ जूनको बम्बईमें हुई, जिसमें उसने ब्रिटिश सरकारके 'साम्प्रदायिक निर्णय'के सम्बन्धमें उसे न तो स्वीकार और न अस्वीकार करते हुए एक प्रस्ताव पारित किया। गांधीजी इन दोनो बैठकोमें हाजिर रहे। पण्डित मदनमोहन मालवीय और मा० श्री० अणेने उक्त निर्णयको पूरी तरह अस्वीकार कर देनेकी मांग की थी। अतः जब गांधीजी अपने दौरेके सिलसिलेमें बनारसमें थे तब कार्यकारी समितिकी एक बैठक मालवीय तथा अणे और समितिके अन्य सदस्योंके बीच विद्यमान इस मतभेदको दूर करनेके उद्देश्यसे वहाँ भी हुई। इस बैठककी अध्यक्षता सरदार पटेलने की, जो तबतक जेलसे रिहा हो चुके थे। चूंकि समिति स्वीकार और अस्वीकारका अपना बुनियादी रवैया नहीं छोड़ सकी, अतः मालवीय और अणेने कांग्रेससे त्यागपत्र दे दिया।

विभिन्न दृष्टियो और मतोके प्रति गांधीजी उदार सहिष्णुताका भाव रखते थे, इसलिए वे संसदीय कार्यक्रममें विश्वास रखनेवालो या समाजवादियों-जैसे लोगोको, जो कांग्रेसके भीतर कांग्रेसकी मुख्य धारासे हटकर चलना चाहते थे, अपने स्वधर्मका अनुगमन-पालन करनके लिए न केवल प्रोत्साहित करते रहे, बल्कि सलाह-सूचना या मैत्रीपूर्ण आलोचना आदिके द्वारा उनका मार्गदर्शन भी करते रहे। वे कौंसिलोमें प्रवेशके पक्षमें नहीं थे, किन्तु पटनामें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें कौंसिल-प्रवेशका प्रस्ताव पेश करते हुए उन्होने कहा, "संसदीय कार्यको, जिनका उधर झुकाव हो, उनके लिए छोड देना चाहिए। मुझे आशा है कि ज्यादातर लोग तो कौंसिलके कार्यकी चकाचौंधसे सदा अप्रभावित रहेंगे। . . . अपनी जगहपर वह कार्य उपयोगी होगा। परन्तु कांग्रेसने यदि अपना सारा ध्यान विधान-सभाके कार्यपर ही लगा दिया, तो वह उसके लिए आत्महत्या-जैसा होगा। स्वराज्य उस मार्गसे कभी नही आना है। स्वराज्य तो केवल जनसाधारणकी सर्वांगीण चेतनासे ही आ सकता है" (पृष्ठ ११)। उनकी अपनी योजना तो "अस्पृश्यता-निवारण और अन्य रचनात्मक कार्य" करते रहनेकी ही थी (पृ० ३००)। यद्यपि वस्तुस्थितिको देखते हुए "रियायतके रूपमें" वार-बार जोर देते रहे कि "राष्ट्रीय कार्यक्रममें उसका (संसदीय बोर्डका) स्थान सबसे छोटा है। रचनात्मक कार्यक्रमकी मदद बिना वह, स्वराज्यकी दृष्टिसे, बेकार रहेगा। वह कार्यक्रम केवल कागजपर नही, बल्कि ठोस और वास्तविक भारत-व्यापी कार्यमें चलना चाहिए" (पृ० ३००)।

कांग्रेसके अन्दर समाजवादी दलके बननेका उन्होंने स्वागत तो किया, किन्तु उसके कार्यक्रममें जो भी त्रुटियाँ दिखाई पड़ी उन्हें उन्होने निःसंकोच भावसे बताया। इस कार्यक्रमके दो दोषोकी ओर उन्होंने मुख्य रूपसे इस दलका ध्यान खींचा :- एक तो उसकी भारतीय परिस्थितियोकी अवहेलना और दूसरे उसका यह मानकर चलना कि "वर्गों और जनसाधारणके बीच अथवा मजदूरों और पूंजीपतियोके बीच संघर्ष अनिवार्य है और वे पारस्परिक हितके लिए काम कभी नही कर सकते" (पृ० ७५)।

'मजदूरोंको अपने अधिकारोंका ज्ञान होना चाहिए और यह भी जानना चाहिए कि इन अधिकारोके लिए कैसे लडा जाये और प्राप्त किया जाये, यह सब सही है किन्तु उनका विचार था कि हर अधिकार के साथ उसीके जोडका कर्त्तव्य भी जुडा होता है अतः समाजवादियोके घोषणापत्रमें मजदूरोंके कर्त्तव्योंका उल्लेख भी होना चाहिए और इन कर्त्तव्योंके पालनपर भी जोर दिया जाना चाहिए" (पृ० ७५)।

गाधीजी को इस बातका विश्वास था कि भारतके पूँजीपति और जमीदार अपनी सम्पत्तिमें से जनताको क्रमशः उसका समुचित हिस्सा देनेके खिलाफ नही है। अपने इस विश्वासको व्यक्त करते हुए उन्होने कहा, "काँचके घरोमे रहनेवाले हम लोगोको पत्थर तो नही फेंकने चाहिए . . . हमने खुद रहन-सहनकी वे आदतें पूरी तरह नही छोडी हैं जिनके लिए पूंजीपति बदनाम हैं। वर्ग-युद्धका विचार मुझे नही जँचता। भारतमें वर्ग-युद्ध अनिवार्य नही है, इतना ही नही; यदि हम अहिंसाका सन्देश समझ ले तो हम उससे बच सकते है" (पृ० २२७)। इस सन्दर्भमे उन्होने पश्चिमसे आयात मोहक "शब्दो और नारो" की (पृ० २२७) अन्धी आवृत्तिको अवाछनीय तो बताया किन्तु यह स्वीकार किया कि ये शब्द और नारे सत्यकी उस व्याकुल खोजके सूचक है जो आज पश्चिमकी आत्माको बेचैन किये है।

"मै इस वृत्तिकी कद्र करता हूँ। हम वैज्ञानिक अनुसन्धानकी इस वृत्तिसे अपनी प्राच्य संस्थाओका अध्ययन करे तो संसारने जिस समाजवाद और साम्यवादके सपने अभीतक देखे है, उससे अधिक सच्चे समाजवाद और साम्यवादका हम विकास कर लेगे। यह मान लेना बेशक गलत बात है कि जनसाधारणकी दरिद्रताके प्रश्नके बारेमे पाश्चात्य समाजवाद या साम्यवाद अन्तिम हल है" (पृ० २२७)। उन्होने पश्चिमके समाजवादियों और साम्यवादियोंकी इस धारणाको मान्य नही किया कि "मनुष्य स्वभावसे स्वार्थी होता है।" उन्होने घोषणा की कि मनुष्य अमीर हो या गरीब हो, मालिकोके वर्गका हो या मजदूरोके वर्गका, वह "अपनी अन्तरात्माकी पुकारके अनुरूप कार्य कर सकता है और उसमे पशुके जो आवेग हैं उनसे वह ऊपर उठ सकता है। और इसलिए वह स्वार्थ और हिंसासे, जिनका सम्बन्ध पाशविक प्रकृतिसे है मनुष्यको नित्य आत्मासे नहीं, ऊपर उठ सकता है" (पृष्ठ २५९)। उन्होने अहिंसापर, और श्रम तथा पूँजीके, जमीदार और काश्तकारके सामंजस्यपूर्ण सहयोगपर आधारित समाजवाद अथवा साम्यवादकी सिफारिश की। उन्होने नरेन्द्रदेवको लिखा, समाजवादी उद्देश्यका आपका निरूपण "मुझे भयभीत करता है, तीनो सिद्धान्तोके जो फलितार्थ है वे इतने व्यापक है कि मेरी समझसे बाहर है। वे कार्यक्रमको *नशीला* बना देते है, जबकि सभी तरहके नशोसे मुझे डर लगता है" (पृष्ठ ८७)। उन्होने सुझाव दिया कि समाजवादियोको देशके सम्मुख व्यावहारिक समाजवाद रखना चाहिए, "आप वैज्ञानिक समाजवादकी बजाय, जैसाकि आपके कार्यक्रमको नाम दिया गया है, देशको व्यावहारिक समाजवाद दें, जो भारतीय परिस्थितियोके अनुरूप हो।" (पृ० २८९)।

और इसी प्रसंगमें अन्तमें जवाहरलालको लिखा १७ अगस्त, ३४ का पत्र भी उल्लेखनीय है। जवाहरलालने बैलगाड़ीवाले समाजवादके प्रति अपना तिरस्कार आक्रोशके साथ व्यक्त किया था। गांधीजी ने इस पत्रमें कार्यकारिणीके प्रस्तावकी पूरी जिम्मेदारी अपने ऊपर ली और लिखा, "अलबत्ता, तरीके या साधनपर हमारे जोर देनेमें अन्तर है। मेरे लिए साधन उतने ही महत्वपूर्ण हैं जितना लक्ष्य; बल्कि एक तरहसे साधन अधिक महत्वपूर्ण है, क्योंकि उनपर तो हम कुछ नियन्त्रण रख सकते है। अगर साधनोंपर हमारा काबू न रहे तो लक्ष्यपर वह बिलकुल ही नही रह जायेगा (पृष्ठ ३३६)।"

खादी कार्यकर्त्ताओंके समक्ष बोलते हुए गांधीजी ने एडम स्मिथके इस मतसे अपनी असहमति जाहिर की कि आर्थिक क्रिया-कलापके अध्ययनमें मानव-तत्व गड़बड़ पैदा करता है। गांधीजीने कहा, "इसी मानव-तत्वपर खादीका समूचा अर्थशास्त्र टिका है; और मानवकी स्वार्थपरायणता, जिसे एडम स्मिथ 'शुद्ध आर्थिक हेतु' कहते हैं, 'गड़बड़ पैदा करनेवाला तत्व' है जिसपर हमें काबू पाना होगा। इसलिए जो बात मिलके कपड़के उत्पादनपर लागू होती है, वह खादीपर लागू नही होती। व्यावसायिक उत्पादनमें घटिया माल बनाना, मिलावट करना, मानवकी हीन रुचियोंको सन्तुष्ट करना, वगैरह आम बातें हैं। खादीमें इनके लिए कोई स्थान नहीं है; और न खादीमें अधिक-से-अधिक मुनाफा और कम-से-कम मजदूरीके सिद्धान्तकी गुंजाइश है। कत्तिन कोई मशीन नही है . . . खादीकी कला पहले हृदयको और बादमें आँखको भाती है।" (पृष्ठ ३७३-७४)। डॉडके साथ हुई अपनी एक बातचीतमें उन्होने कहा कि चरखेमें और कोई गुण न हो लेकिन यह गुण तो है कि यह राष्ट्रके बचे हुए समयका सदुपयोग कर अतिरिक्त उत्पादनमें सहायक होता है। इसका उद्देश्य धन्धेमें लगे हुए लोगोंको धन्धेसे निकाल बाहर करना कदापि नहीं है। उन्होंने कहा, "इने-गिने थोड़े-से लोगोंकी नहीं, किन्तु करोड़ोंकी रोजकी आमदनी जिससे दूनी हो सके, ऐसा कोई दूसरा साधन आप ढूंढ दें तो मैं चरखा छोड़ देनेको तैयार हूँ।" (पृ० ४२३)।

लेकिन कांग्रेसके प्रबुद्ध वर्गको गांधीजी के खादी-कार्यक्रममें और उससे जुड़े हुए दूसरे सहगामी कार्योंमें कोई आस्था न थी। अपनी तथा उनकी दृष्टि तथा कार्य-पद्धतिके अन्तरसे गांधीजी परेशान हो उठे थे और वे गम्भीरतासे कांग्रेस छोड़नेकी बातपर विचार करने लगे थे। वल्लभभाई पटेलको लिखे पत्रोंमें हमें इस प्रश्नको लेकर उन्हें जो मानसिक क्लेश हो रहा था, उसकी झलक मिलती है। उन्होंने वल्लभभाई पटेलको लिखा कि मुझे लगता है कि "मैं कांग्रेसकी प्रगतिको रोक रहा हूँ।" कांग्रेसमें व्याप्त गन्दगीसे निपटनेका मुझे उसे छोड़नेके सिवा कोई रास्ता दिखाई नही देता। "मेरे निकल जानेसे कांग्रेससे पाखण्ड चला जायेगा।" (पृष्ठ ३४८)। धीरे-धीरे वे इस खेदजनक निर्णयपर पहुँचे कि "कांग्रेससे अपने सभी तरहके पद-सम्बन्ध और शारीरिक, यहाँतक कि मूल सदस्यताके सम्बन्ध भी सर्वथा तोड़ देनेसे कांग्रेस और

राष्ट्रका सबसे अधिक हित होगा . . . मुझे लगता है कि अब मेरे इसमें बने रहनेसे लाभ की अपेक्षा हानि अधिक है . . . एक पके फलके गिरनेसे पेडको कोई क्षति नही होती। इसी प्रकार मेरे बाहर चले जानेसे कांग्रेसको कोई क्षति नही पहुँचेगी। वस्तुतः फल तो व्यर्थका बोझ होगा अगर वह पूरी तरह पक चुकनेके बाद भी पेडसे न गिरे . . . मुझे लगता है कि मैं अब कांग्रेसके लिए व्यर्थका बोझ हूँ।" (पृष्ठ ४०३-४)। उन्होने इस बातको अच्छी तरहसे समझ लिया था कि जो प्रबुद्ध वर्ग कांग्रेसका नेतृत्व करनेकी इच्छा रखता है वह जनता-जनार्दनकी जरूरतोको नही समझ सकता। उन्होने कहा, "मेरी विवेकबुद्धि उस दिशासे ठीक विपरीत दिशाकी ओर मुझे ले जाती है जिधर कि अधिकांश बुद्धिमान कांग्रेसी, अगर मेरे प्रति अद्‌भुत वफादारीके कारण उनकी गतिमें बाधा न पडे तो, सहर्ष और सोत्साह जाना चाहेंगे . . .।" वे अपने उन कांग्रेसी मित्रोंकी वफादारी और निष्ठाका नाजायज फायदा नही उठाना चाहते थे; और वे नेता जो उनकी कार्य-पद्धतिसे सहमत नही थे अपने बहुमतके द्वारा उनकी नीतियोंको अमान्य ठहराने और उन्हें कांग्रेससे निवृत्त करनेके लिए तैयार न थे। इसलिए गाधीजी इस निष्कर्षपर पहुँचे कि "ऐसी वफादारीको मैं एकमात्र इसी तरीकेसे तुष्ट कर सकता हूँ कि स्वेच्छापूर्वक निवृत्त हो जाऊँ।" (पृष्ठ ४२७)।

अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलन हो अथवा राजनीतिक स्वाधीनता या आर्थिक समानताके लिए किया जा रहा संघर्ष, गांधीजी का ध्यान इस बातपर तो था ही कि इन लक्ष्योकी प्राप्तिके लिए तत्काल और प्रभावकारी कदम उठाये जायें; लेकिन इसके साथ ही वे इस सम्बन्धमें भी पूरी तरह सचेष्ट थे कि व्यक्तियोकी तथा समाजकी अखण्डता अक्षुण्ण रहनी चाहिए। उनका विश्वास था कि जीवन एक अखण्ड और अविभाज्य वस्तु है और आध्यात्मिक साधना जीवनकी माँगोसे पलायन नही बल्कि उनसे जूझना और उसमें और गहरे प्रवेश करना है। प्रेमाबहन कंटकको एक पत्रमें वे कांग्रेसके कार्यक्रमके विषयमें कोरी बात करने और उसे पूरा करनेमें भेद करते हुए लिखते हैं, "जो लोग कृष्ण-कृष्ण कहते हैं वे उसके पुजारी नही हैं। जो उसका काम करते हैं वे ही उसके पुजारी हैं। रोटी-रोटी कहनेसे पेट नही भरता। रोटी खानेसे ही भरता है।" (पृष्ठ ४१४)।

श्री अरविन्दके एक अनुयायी दिलीपकुमार रायको लिखे एक पत्रमें समुचित विनम्रताके साथ कर्मयोगके बारेमें अपनी तात्कालिक धारणा स्पष्ट करते हुए उन्होने कहा, "मैं यह नही मानता कि मेरी वर्तमान कर्मशीलता मेरी आत्मानुभूतिमें अथवा भगवानमें मेरे लीन हो जानेमें मेरी कर्म-विरतिकी अपेक्षा कम सहायक है। संन्यास समस्त शारीरिक क्रियाओका बन्द हो जाना थोड़े ही है। मेरे लिए उसका अर्थ है, उन सब शारीरिक अथवा मानसिक क्रियाओका बन्द हो जाना जो स्वार्थमय हैं। अगर मुझे विश्वास दिलाया जा सकता कि अकर्म मेरे लिए बेहतर मार्ग है, तो मैं वह मार्ग तत्काल अपना लेता।" (पृष्ठ २०१-२)। अनासक्त कर्म व्यक्तिके आध्यात्मिक

विकासमें इसीलिए सहायक होता है क्योंकि यह निश्चित रूपसे जीवनको अखण्ड बनानेमें मदद करता है। जीवनको एक-दूसरेसे विच्छिन्न ऐसे खण्डोंमें विभाजित नहीं किया जा सकता जिनमें से कुछको आध्यात्मिक माना जाये और कुछको लौकिक। "राजनीति, धर्म, सामाजिक सुधार, आर्थिक उन्नति—ये सब एक ही इकाईके अंग हैं।" (पृष्ठ १७८)।

व्यक्तिगत और सामाजिक अखण्डताको अक्षुण्ण बनाये रखनेकी तथा लोगोंमें संघर्ष पैदा करनेके बजाय उन्हें परस्पर मिलानेकी प्रवृत्ति ही किसी कर्मको आध्यात्मिक बनाती है। गांधीजी के सामाजिक और राजनीतिक आदर्श यान्त्रिक नहीं थे; उनमें एक प्रकारकी सजीवता थी और अपने लक्ष्योंकी प्राप्तिके लिए वे राजसिक नहीं सात्विक शक्तिका निर्माण करना चाहते थे। अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनके प्रति उनका उत्साह अत्यन्त तीव्र था किन्तु वे उसे गलत साधनोंके द्वारा अथवा "तर्क, विनय, मर्यादा" (पृष्ठ १३५)का त्याग कर सफल नहीं बनाना चाहते थे। बनारस में एक सार्वजनिक सभामें भाषण करते हुए उन्होंने कहा, "धर्म बुद्धिग्राह्य विषय नहीं, हृदयग्राह्य विषय है . . . मैं किसीके साथ बलप्रयोग तो करना नहीं चाहता और न झगड़ा ही करना चाहता हूँ। किसीको भी मुझसे डर नहीं होना चाहिए। मुझसे सनातन धर्मका अहित, अकल्याण नहीं हो सकता। जिस सनातन धर्मको आप मानते हैं उसीको मैं भी मानता हूँ।" (पृष्ठ २८१)।

प्राप्त स्थितिको तथा उसे बदलने और सो भी सबकी सहमतिसे बदलनेकी आवश्यकताको इस तरह हृदयसे स्वीकार करनेमें गांधीजी को सबसे बहुमूल्य सहयोग स्त्रियोंसे मिला, जो गांधीजी के विचारमें "आध्यात्मिकतामें पुरुषोंसे अधिक श्रेष्ठ है तथा जिनमें त्याग करनेकी, धैर्यकी और कष्ट-सहन करनेकी ज्यादा सामर्थ्य है और इस प्रकार वे धर्मकी ज्यादा अच्छी तरहसे रक्षा कर सकती है।" (पृ० ११३) कोई माँ अपने बुद्धिहीन, मूढ़ और विकलांग बच्चेसे विशेष स्नेह करेगी। पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियाँ उनकी इस बातको माननेके लिए ज्यादा तैयार थी: "हम सभी थोड़े-बहुत पापी तो हैं ही, और हमारे धर्मग्रन्थ—गीता, भागवत और तुलसीकृत रामायण—स्पष्ट शब्दोंमें यह घोषणा करते हैं कि जो ईश्वरकी शरण लेगा, उसका नाम जपेगा, वह पापसे छूट जायेगा। यह प्रतिज्ञा सारी मानव जातिके लिए है।" (पृष्ठ २९१) उन्होंने कहा कि गीता न केवल मेरी माँ है बल्कि वह समस्त विश्वकी माँ है। अस्पृश्योंकी सेवाके विषयमें गांधीजी की दृष्टि यह थी कि उनकी सेवा समाजको छिन्न-भिन्न किये बिना माताकी सेवाकी तरह करनी है। उन्होंने सुधारकके धर्म-संकटका वर्णन करते हुए कहा, "डॉ० अम्बेडकर. . . होशियार. . . बैरिस्टर. . . उनमें त्यागवृत्ति भी जबर्दस्त है . . . वे सादगीसे रहते हैं . . . ऐसे मनुष्यकी भी आज समाजमें क्या दशा है? . . . यह किसके लिए धर्मकी बात है? जिसे यह सब सहन करना पड़ता है, उसका हृदय-स्पर्श कैसे किया जा सकता है? दूसरी ओर रहा शंकराचार्यके

हृदयको स्पर्श करना। दो व्यक्ति दो छोरपर है। इनका मिलन कैसे कराया जा सकता है? इन दोके बीचमें हम लोग है . . . हम दोनोको अपने त्याग और अपनी सहन-शक्तिसे ही जीत सकते हैं।" (पृष्ठ १७२-१७३)

त्यागका अर्थ गांधीजी के लिए अकसर यह होता था कि वे अपने निकट सहयोगियोकी भूलचूककी जिम्मेदारी स्वयं ओढ लेते थे। अपने हृदयकी पीड़ाको जनता तक पहुँचानेका उनका सुपरीक्षित तरीका उपवास था, इसको उन्होंने कई बार अपनाया था और वह अत्यन्त कार्यकारी सिद्ध हुआ था। जैसा कि उन्होंने वल्लभभाई पटेलको लिखा था और सिन्धके पत्रकारोंके समक्ष उससे भी ज्यादा जोरदार शब्दोमे कहा था, "वे केवल एक ही भाषा समझते हैं—हृदयकी -और उपवास जब बिलकुल निःस्वार्थ होता है तो वह हृदयकी भाषा होती है।" (पृष्ठ १७७)। १० जुलाई, १९३४के अपने वक्तव्यमे उन्होंने प्रस्तावित उपवासकी चर्चा करते हुए कहा कि मैं यह उपवास पण्डित लालनाथपर हुए आक्रमणके प्रायश्चित्तके रूपमें कर रहा हूँ, पण्डित लालनाथके प्रति और उन सनातनियोके प्रति जिनका वे प्रतिनिधित्व करते है मेरा यह कर्त्तव्य है और आन्दोलनमें भाग ले रहे मेरे समर्थकोको चेतावनी-स्वरूप भी है। इस सन्दर्भमे अपने समर्थकोसे उन्होंने कहा कि "उन्हें इसमे साफ दिलसे और मन, वचन, कर्ममे हिंसा तथा असत्यसे रहित रहकर भाग लेना चाहिए।" (पृष्ठ १६५)। उपवाससे एक दिन पहले ६ अगस्तको जारी किये गये अपने वक्तव्यमें गाधीजी ने उपवास जिनके प्रति उद्दिष्ट था उनके दायरेमे सभी काग्रेसियोको भी शामिल किया। चुनावके दौरान काग्रेसियोके आपसी कलहकी तथा भ्रष्टाचारकी भर्त्सना की "यद्यपि मेरे उपवासको इन गन्दे तरीकोसे कुछ लेना-देना नही है, पर मेरी बड़ी इच्छा है कि काग्रेसी कार्यकर्त्ता मेरे इन शब्दोसे मेरी पीड़ाको समझें और उसे कम करनेके लिए इस शुद्धीकरण सप्ताहमें अपना अन्तर्निरीक्षण करे और काग्रेसको उसके सिद्धान्तोके अनुरूप सगठन बनानेका सकल्प करे।" (पृष्ठ ३१४)। उपवास शुरु करनेके दिन प्रार्थना-सभामें भाषण करते समय भी गाधीजी ने शुद्धीकरणकी आवश्यकताकी चर्चा की और लोगोको दो शत्रुओके, असत्य और अशुद्धताके विरुद्ध चेतावनी दी। समाचारपत्रोको दी गई एक भेंटमें उन्होंने एक बार फिर "न केवल हरिजन कार्यकर्त्ताओके लिए वरन काग्रेसके लिए भी आन्तरिक शुद्धि प्राप्त करनेकी मुख्य आवश्यकता" पर बल दिया। उन्होंने कहा कि कांग्रेस-जैसी शक्तिशाली राष्ट्रीय सस्थाको यदि "उन लोगोकी जिनसे मिलकर काग्रेस सस्था बनी है, आन्तरिक शुद्धि द्वारा पोषण नहीं मिलता, तो एक शक्तिशाली राष्ट्रीय संस्थाके रूपमें वह समाप्त हो जायेगी।" (पृष्ठ ३२१)।

जवाहरलाल नेहरूको लिखे अपने पत्रोंमें उन्होंने अपनी बात बहुत साफ-साफ कही है, जैसा कि एक वरिष्ठ और कनिष्ठ सहयोगीमे, जो एक-दूसरेको अच्छी तरह समझते थे और जो मिलकर एक जिम्मेदारी सँभाल रहे थे, स्वाभाविक ही था।

कमला नेहरूकी बीमारीके कारण जब सरकारने जवाहरलालको जेलसे रिहा कर दिया तब गांधीजी ने उन्हें सलाह दी कि वे कोई राजनीतिक बात न कहें और लिखा, "यदि मेरी दलील तुम्हारी विवेक-बुद्धिको जँचती है, तो तुम अपने आत्मसंयमको सही ढंगसे प्रकट करोगे।" (पृष्ठ ३२१)। आनन्द भवनके लिए बनाये जा रहे न्यासके सम्बन्धमें जवाहरलाल नेहरूने जो आलोचना की थी, उसकी चर्चा करते हुए गांधीजीने कहा, "तुम्हारे रुखसे क्रोध प्रकट होता है. . . मैं तुमसे कहूँगा कि इस मामलेको इस प्रकार व्यक्तिगत न समझो जैसा तुमने समझा है . . . पिताजीकी स्मृतिका संरक्षक राष्ट्रको बना दो और तुम राष्ट्रके एक अंग बन जाओ।" (पृष्ठ ३३७)। जिन लोगोंको वे अपना समझते थे उनसे यह अपेक्षा रखते थे कि वे लोग कभी-कभी बिना सोचे-समझे भी उनके आदेशका पालन करें। उदाहरणके तौरपर नारणदास गांधीको उन्होंने लिखा, "मैं जो कहता हूँ, तदनुसार तो तभी करना चाहिए जब तुम्हारी बुद्धि उसे स्वीकार करे। अथवा जब यह कहूँ कि बुद्धि कबूल न करे तब भी करना।" (पृष्ठ ३९९)

तैयबजी परिवारमें जब 'एक विचित्र रहस्यमयी दुनिया' में रहनेवाली रैहाना और उसके माता-पिताके बीच माता-पिताके प्रेमपूर्ण पूर्वाग्रहोंको लेकर एक गलतफहमी उठ खड़ी हुई तब गांधीजी ने रैहानाको लिखा, "याद रखो कि उन लोगोंने तुम्हें जो प्रशिक्षण दिया है और स्नेहका जो घेरा तुम सबके आसपास डाल रखा है, यदि वह न होता तो तुम तुम नहीं होती . . .।" (पृष्ठ ४३३)। साथ ही उन्होने उसके पिताको पत्र लिखा, "मैं बिना किसी शिकायतके खुशीसे उसे अपने रास्तेपर चलने देता या उसे एक अलग घर और गुजारा दे देता और अपने मनके मुताबिक रहने देता।" (पृष्ठ ४६१)। हर व्यक्तिको अपने-अपने विवेकके अनुसार अपना विकास करना चाहिए, अपने इस विश्वाससे प्रेरित होकर गांधीजी ने मार्गरेट स्पीगलको लिखा, "ईश्वरने तुम्हें कुछ दिया है, उसीके अनुरूप नेक बननेकी तुम्हें कोशिश करनी चाहिए। कोई दो आदमी संसारमें एक-जैसे नहीं होते।" (पृष्ठ ५३)। हम किस तरह निरन्तर बड़े होते जा रहे हैं, इसकी चर्चा करते हुए उन्होंने प्रेमाबहन कंटकको लिखा, "वर्षगाँठ तो रोज होती है। हम रोज जन्म लेते हैं और रोज मरकर फिर जन्म लेते हैं।" (पृष्ठ २८१)।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम निम्नलिखित संस्थाओं, व्यक्तियों, पुस्तकोंके प्रकाशकों तथा पत्र-पत्रिकाओंके आभारी हैं।

संस्थाएँ : साबरमती आश्रम संरक्षक तथा स्मारक न्यास और संग्रहालय, नवजीवन ट्रस्ट और गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबाद; गांधी स्मारक निधि व संग्रहालय, नई दिल्ली; राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली; नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्ली; तथा विश्व भारती पुस्तकालय, शान्तिनिकेतन।

व्यक्ति : श्री भगवानजी अनूपचन्द मेहता, राजकोट; श्री एं० के० सेन, कलकत्ता; श्री क० मा० मुंशी, श्रीमती लीलावती आसर, श्रीमती मनुबहन मशरूवाला, श्रीमती लीलावती मुंशी, श्री शान्तिकुमार मोरारजी, बम्बई; श्री महेश पट्टणी, भावनगर; श्रीमती वसुमती पण्डित, सूरत; श्री एस० डी० सातवलेकर, पारडी (सूरत); श्री घनश्यामदास बिड़ला, कलकत्ता; श्री एम० आर० मसानी, श्री जयरामदास दौलतराम, श्रीमती वनमाला देसाई, नई दिल्ली; श्री हरिभाऊ उपाध्याय, अजमेर; श्री कान्ति गांधी, बम्बई; श्री वालजी गो० देसाई, श्रीमती प्रेमलीला ठाकरसी, पूना; श्रीमती मीराबहन, आस्ट्रिया; श्री परीक्षितलाल मजमुदार, श्री रमणीकलाल मोदी, श्रीमती शान्ताबहन पटेल, अहमदाबाद; श्री कनुभाई मशरूवाला, अकोला; श्री नारणदास गांधी, श्री प्रभुदास गांधी, राजकोट; डॉ० राजेन्द्रप्रसाद, पटना; श्री काशीनाथ एन० केलकर, पूना, श्री यू० राजगोपाल कृष्णैय्या; श्री जी० एन० कानिटकर, पूना; श्री फूलचन्द के० शाह, बढवान सिटी; श्री डी० एम० पटेल, अहमदाबाद; राजकुमारी अमृतकौर, शिमला; कुमारी प्रेमाबहन कंटक, सासवड़; श्रीमती एस० अम्बुजम्माल, मद्रास; श्रीमती सुशीला गांधी, फीनिक्स; श्री नारायण म० देसाई, बारडोली; श्रीमती एफ० मेरी बार, कोट्टागिरी; तथा श्री भगवानजी पु० पण्ड्या, बढ़वान।

पुस्तकें : 'महात्मा,' खण्ड ३, 'सरदार वल्लभभाई पटेल' २, 'टु दि स्टुडेन्ट्स,' 'बापुना पत्रो—४: मणिबहन पटेलने,' 'बापूज लेटर्स टु मीरा,' 'बापुनी प्रसादी,' 'मध्यप्रदेश और गांधीजी,' 'बापुकी छायामें—मेरे जीवनके सोलह वर्ष 'पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद,' 'ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स,' 'बापुना पत्रो—२: सरदार वल्लभभाईने,'' डॉ० वि० च० राय,' 'बापुना पत्रो—७: श्री छगनलाल जोशीने,' तथा 'माई डियर चाइल्ड'।

पत्र-पत्रिकाएँ : 'अमृतबाजार पत्रिका,' 'ट्रिब्यून,' 'पायनियर,' 'बॉम्बे क्रॉनिकल,' 'लीडर,' 'सर्चलाइट,' 'स्टेट्समैन,' 'हरिजन,' 'हरिजनबन्धु,' 'हरिजन सेवक,' 'हिन्दुस्तान टाइम्स,' और 'हिन्दू'।

अनुसन्धान और सन्दर्भ-सम्बन्धी सुविधाओंके लिए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी पुस्तकालय, गांधी स्मारक संग्रहालय, इंडियन कौंसिल ऑफ़ वर्ल्ड अफेयर्स पुस्तकालय, सूचना और प्रसारण मन्त्रालयका अनुसन्धान और सन्दर्भ विभाग, नई दिल्ली, साबरमती संग्रहालय, गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबाद तथा श्री प्यारेलाल नैयर, नई दिल्ली हमारे धन्यवादके पात्र हैं। कागजपत्रोंकी फोटो-नकल तैयार करनेमें सहायता देनेके लिए हम सूचना और प्रसारण मन्त्रालय, नई दिल्लीके फोटो-विभागके आभारी हैं।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री गांधी जीके स्वाक्षरोमें मिली है उसे अविकल रूपमें दिया गया है। किन्तु दूसरो द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमें हिज्जोंकी स्पष्ट भूलोंको सुधारकर दिया गया है।

अंग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करनेमें अनुवादको मूलके समीप रखनेकी पूरी चेष्टा की गई है, किन्तु साथ ही भाषा सुपाठ्य बनानेका भी पूरा ध्यान रखा गया है। छापेकी स्पष्ट भूले सुधारनेके बाद अनुवाद किया गया है। और मूलमें प्रयुक्त शब्दोके संक्षिप्त रूप यथासम्भव पूरे करके दिये गये है। नामोको सामान्य उच्चारणके अनुसार ही लिखनेकी नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोके उच्चारणमें संशय था, उनको वैसा ही लिखा गया है जैसा गांधीजीने अपने गुजराती लेखोमें लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोंमे दी गई सामग्री सम्पादकीय है। गाधी जीने किसी लेख, भाषण आदिका जो अंश मूल रूपमे उद्धृत किया है, वह हाशिया छोड़कर गहरी स्याही में छापा गया है, लेकिन यदि ऐसा कोई अंश उन्होने अनूदित करके दिया है तो उसका हिन्दी अनुवाद हाशिया छोड़कर साधारण टाइपमें छापा गया है। भाषणकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गाधी जीके कहे हुए नही है, बिना हाशिया छोडे गहरी स्याहीमें छापे गये है। भाषणों और भेंटकी रिपोर्टोके उन अंशोमें जो गांधी जीके नही है, कही-कही कुछ परिवर्तन किया गया है और कही-कही कुछ छोड़ भी दिया गया है।

शीर्षककी लेखन-तिथि जहाँ उपलब्ध है वहाँ दायें कोनेमें ऊपर दे दी गई है। परन्तु जहाँ वह उपलब्ध नही है वहाँ उसकी पूर्ति अनुमानसे चौकोर कोष्ठकोमें की गई है, और आवश्यक होनेपर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन पत्रोमें केवल मास या वर्षका उल्लेख है, उन्हें आवश्यकतानुसार मास या वर्षके अन्तमें रखा गया है। शीर्षकके अन्तमें साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशनकी है। गांधी जीकी सम्पादकीय टिप्पणियाँ और लेख, जहाँ उनकी लेखन-तिथि उपलब्ध है अथवा जहाँ किसी निश्चित आधारपर उसका अनुमान किया जा सका है, वहाँ लेखन-तिथिके अनुसार और जहाँ ऐसा सम्भव नहीं हुआ है वहाँ उनकी प्रकाशन-तिथिके अनुसार दिये गये है।

इस पुस्तक मालाके खण्ड १ के सन्दर्भ जनवरी १९६९ संस्करणसे है।

साधन-सूत्रोमें 'एस० एन०' संकेत साबरमती संग्रहालय, अहमदाबादमें उपलब्ध सामग्रीका, 'जी० एन०' गाधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध कागज-पत्रोका, 'एम० एम० यू०' गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध मोबाइल माइक्रोफिल्म यूनिटकी रीलोंका, 'एस० जी०' गांधी स्मारक निधि और सग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध सेवाग्राम संग्रहकी फोटो-नकलोका तथा 'सी० डब्ल्यू०' सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय (कलेक्टेड वर्क्स ऑफ़ महात्मा गांधी) द्वारा संग्रहीत पत्रोंका सूचक है।

सामग्रीकी पृष्ठभूमि देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध कुछ परिशिष्ट भी दिये गये है। अन्तमें साधन-सूत्रोंकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीखवार घटनाएँ दी गई है।

विषय-सूची

चित्र-सूची

१. निवेदन : कार्यकर्त्ताओंसे

जिस दिन मैं यह लेख लिख रहा हूँ, यह मेरी पैदल यात्राका छठा दिन है।[1] रेल और मोटरसे अब तक मैं ७५० मीलकी यात्रा कर लेता और सरसरी तौरसे कमसे-कम १,५०,००० आदमियोसे मिल लिया होता। पैदल ४० मीलसे अधिक नही चला, क्योकि यह छठा दिन तो मौनमें निकल गया; किन्तु फिर भी करीब २०,००० नर-नारियोके सम्पर्कमें आ सका हूँ।

मुझे ऐसा अनुभव हुआ है कि कृत्रिम यात्रा तथा स्वाभाविक यात्रामें कामका परिमाण उलटा होता है। आशय यह है कि कृत्रिम यात्राकी गतिका वेग तो अधिक पर काम कम होता है; किन्तु स्वाभाविक यात्राकी गतिका वेग जहाँ बहुत कम होता है, वहाँ काम वास्तवमें अधिक होता है। पिछले पाँच दिनोमें ग्रामवासियोंके साथ मेरा खूब समागम रहा है, पर इन अनुभवोकी चर्चा तो फिर कभी करूँगा। इस लेखके लिखनेका हेतु इतना ही है कि मैं समस्त भारतवर्षके सहयोगकी याचना करूँ। उत्कलके नेताओके लिए यह कोई मामूली बात नहीं थी कि उन्होंने परिश्रम और सावधानीके साथ निश्चित किये हुए अपने प्रान्तके कार्यक्रमको एकदम उड़ा दिया। भारतके इस अत्यन्त गरीब प्रान्तसे भी उन लोगोंको ३०,०००) एकत्रित कर लेनेकी आशा थी। मेरी अपनी धारणा तो यह थी कि उड़ीसामें ५०,०००) इकट्ठा हो सकता था। पर जब उन्हें सत्यका साक्षात्कार हुआ, तो उन्होने अर्थलाभकी आशा छोड़ देने और अपने सहयोगियोंके रोषकी जोखम उठानेमें तनिक भी आनाकानी नही की। और जब डाक्टर विधानचन्द्र रायको मैंने अपना इरादा सुनाया, तो उन्हें भी अपने बंगाल-प्रान्तके कार्यक्रमका त्याग करते हुए कोई कठिनाई नहीं हुई। मैं नही समझता कि फिर अन्य प्रान्तोके लिए यह बात कुछ मुश्किल होगी। मैं यह विश्वास कदापि नही करूँगा कि रेल और मोटरकी यात्राकी अपेक्षा पैदल यात्रा कही अधिक सुन्दर है, यह बात उनकी समझमें न ही आ सकेगी।

किन्तु कोरे निष्क्रिय सहयोगकी अपेक्षा मैं अधिककी माँग करता हूँ और आशा भी अधिककी करता हूँ। मैं देशभरके सक्रिय सहयोगकी याचना करता हूँ। मैं आशा करता हूँ कि देशके तमाम कार्यकर्त्ता एकसाथ अपने-अपने प्रान्तमें इसी प्रकारकी पैदल यात्राओंका आयोजन करें, जिसमें वे लोगोको हरिजन-सेवाका सन्देश सुनायें — और अगर मैं उनके यहाँ जाता, तो जैसे वे मुझे रुपये-पैसेकी थैलियाँ हरिजन-कार्यके लिए भेंट करते, उसी प्रकार मेरे पास भेजनेके लिए वे जगह-जगह जाकर रुपये

१. गांधीजीने ८ मई, १९३४ को पुरीमें सवारीका प्रयोग त्याग दिया था और अगले दिन पैदल हस्तिनापुर गये थे। देखिए खण्ड ५७, "वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको", ८-५-१९३४।

व पैसे-पाई इकट्ठा करें। कार्यकर्त्ताओं और हरिजनोंके बीच खूब घनिष्ठ सम्पर्क स्थापित होना चाहिए और सनातनियोंसे भी मित्रतापूर्वक जाकर मिलना-जुलना चाहिए। कार्यकर्त्ता जिस गाँवमें जायें, वहाँके हरिजनोंकी कठिनाइयों और कष्टोंका उन्हें पूरा पता लगाना चाहिए। वहाँ अधिक मन्दिर खुलने चाहिए और अधिकसे-अधिक हरिजन बालकोंको सार्वजनिक पाठशालाओंमें भरती कराना चाहिए। कार्यकर्त्ता तथा ग्रामवासी यह समझें कि मैं उड़ीसाके गाँवोंमें जो यात्रा कर रहा हूँ, वह मानो उनके ही गाँवोंमें कर रहा हूँ। यदि मेरा कार्य आध्यात्मिक है, तो उसका यही परिणाम होना चाहिए कि हरिजन-कार्यके लिए लोगोंके दिलमें और भी अधिक उत्साह बढ़े। इस यात्राके परिणामस्वरूप नये-नये कार्यकर्ता मिलने चाहिए और जो कार्यकर्ता मौजूद हैं, उन्हें इस कार्यके प्रति अपनेको और भी अधिक लगनसे अर्पित कर देना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १८-५-१९३४

२. पत्र : भगवानजी अ० मेहताको

१८ मई, १९३४

भाई भगवानजी[1],

आपके पत्रपर तारीखकी जगह ३०-१२-१९३३ लिखा हुआ है; किन्तु यह भूलसे हुआ होगा; क्योंकि मुझे तो यह कल ही मिला। कोई बात नहीं, भाई प्रभाशंकर[2] के विषयमें तुम्हारे मधुर अनुभवोंको जानकर अच्छा लगता है। किन्तु मेरे लिए तो अप्रासंगिक हैं। जो रतिलाल[3] का उत्तरदायित्व स्वीकार करता है, उसे जेकीबहन[4] जैसी अपंग महिलाको उसका हिस्सा देनेमें आनाकानी कदापि नहीं करनी चाहिए, ऐसी मेरी राय है। इस मामलेमें छगनलाल[5] का नाम लेना ठीक नहीं है। [क्या कोई भी समझदार आदमी नासमझ आदमीके कामकी आड़ ले सकता है।] आप और हम सभी जानते हैं कि छगनलालको उस विषयमें कुछ नहीं मालूम। आपने इतना लम्बा पत्र लिखनेका लोभ क्यों किया, मैं तो यही नहीं समझा। अगर आप मेरी बात समझ गये हों तो कृपया अपनी बुद्धि और प्रभावका उपयोग इस बातमें करें कि बहनोंको रतिलालकी तरफसे उनका भाग मिलना ही चाहिए।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५८२३) से। सी० डब्ल्यू० ३०४६ से भी; सौजन्य : भगवानजी अ० मेहता।

१. सौराष्ट्रके एक वकील।
२. प्रभाशंकर पारेख, रतिलालके ससुर।
३. डॉ० प्राणजीवन मेहताका द्वितीय पुत्र।
४. डॉ० प्राणजीवन मेहताकी छोटी पुत्री जयकुँवर, मणिलाल डॉक्टरकी पत्नी।
५. डॉ० प्राणजीवन मेहताका सबसे बड़ा पुत्र।

३. भाषण: अ० भा० कां० कमेटीकी बैठक, पटनामें – १

१८ मई, १९३४

मैं उन लोगोंको जिन्होंने अनेक संशोधन पेश किये हैं बधाई देता हूँ और कहता हूँ कि उनके भाषणोंसे अपने वक्तव्यमें अभिव्यक्त मेरा मत ही दृढ़ होता है।[1] संशोधनोंमें मुझे ऐसी कोई चीज नहीं मिली जिससे मुझे अपना निर्णय बदलनेकी प्रेरणा मिले। यह देखकर निस्सन्देह मुझे आश्चर्य होता है कि भाषण देनेवालोंमें किसीने भी मुझे अपनी इस बातके लिए आड़े हाथों नहीं लिया कि मैंने अपने सिवा बाकी सभीको सविनय प्रतिरोध स्थगित रखनेकी राय दी है।

इसके विपरीत, सभी संशोधन एक स्वरसे सविनय प्रतिरोध स्थगित रखनेकी माँग करते हैं। इससे मुझे आश्चर्य तो होता है, परन्तु इसका मुझे दुःख नहीं है। इससे इतना ही मालूम होता है कि मेरा फैसला ठीक मौकेपर हुआ है। बहरहाल, जब आप यह कहते हैं कि एक कदम और बढ़कर मैं स्वयं भी सविनय प्रतिरोध करनेका विचार छोड़ दूँ, तो आप मुझे काम करनेकी मेरी व्यक्तिगत निजी स्वतन्त्रतासे वंचित करना चाहते हैं। इस बातमें आप निस्सन्देह स्वतन्त्र हैं कि अपने सविनय प्रतिरोधमें कांग्रेसका प्रतिनिधित्व करनेके मेरे दावेका आप खण्डन करें। कांग्रेसकी ओरसे इस तरहका खण्डन किये जानेकी बात मैं समझ सकता हूँ और उसकी सराहना भी कर सकता हूँ।

पूना-सम्मेलनके निश्चय[2] के अनुसार व्यक्तिगत सविनय प्रतिरोध भी कांग्रेसके नाम पर ही किया जानी था और अब आपके सामने जो चीज़ रखी गई है वह यह है कि पूनाके-निश्चयमें थोड़ा परिवर्तन कर दिया जाये। तब सविनय प्रतिरोध करनेवालोंकी संख्या अनिश्चित रखी गई थी और अब वह एक व्यक्ति तक ही सीमित कर दी गई है। मैं आपसे इसका अनुमोदन करनेके लिए कह रहा हूँ, यह बात ही इसका प्रमाण है कि मैं कांग्रेसके नाम पर और कांग्रेससे अधिकार प्राप्त करके काम करना चाहता हूँ। परन्तु यदि आपको लगे कि आप मुझे वह अधिकार नहीं दे सकते तो भी आप मुझे व्यक्तिगत रूपसे कार्य करनेकी स्वतन्त्रतासे वंचित न करें; क्योंकि उसका मतलब तो मेरी सत्ता समाप्त कर देना ही होगा। यदि मुझे विश्वास हो कि इस कदमसे भारत अपने लक्ष्यकी दिशामें प्रगति करेगा तो मैं अपने अस्तित्व तकको मिटा देनेमें संकोच नहीं करूँगा।

१. देखिए खण्ड ५७, पृष्ठ ३७८-८१।

२. देखिए खण्ड ५५, पृष्ठ २६२ तथा २७६-८।

मेरा तो यह विश्वास है कि भारत किसी भी व्यक्तिकी काम करनेकी स्वतन्त्रताको छीनकर स्वराज्य प्राप्त नहीं करेगा। एक वक्ताने यह कहकर कि "एक आदमी द्वारा प्राप्त किया हुआ स्वराज्य राष्ट्रके किसी कामका नहीं", वस्तुतः यह कहा है कि मैं केवल अपने अकेलेके कार्य द्वारा स्वराज्य लानेका भरोसा दिला रहा हूँ। उन्होंने मेरे ही शब्दोंको उद्धृत किया है। मैंने ये शब्द हजारों मंचोंसे हिंसा-पथके अनुयायियोंसे कहे हैं। मैंने कहा है कि यदि वे किन्हीं अंग्रेज या भारतीय अधिकारियोंकी जान लेकर स्वराज्य प्राप्त करनेमें सफल भी हो जायें, तो वह स्वराज्य उनके अपने ही लिए होगा, भारतके जन-समुदायके लिए नहीं, और किसीको क्या मालूम कि उससे आगे वे और किस-किसकी जान लेंगे।

सविनय प्रतिरोध हिंसाका पूर्ण विकल्प है। प्रत्येकको अहिंसाके द्वारा ही स्वराज्य प्राप्त करना है। इस अस्त्रसे जन-समुदायको प्रेरणा और नई शक्ति मिली है। वैधानिक कार्यसे जन-समुदाय जागरूक नहीं बनता। मैं चाहूँगा कि आप कुछ दिनोंके लिए मेरे साथ आयें और जो-कुछ मैं कहता हूँ उसकी सचाईको परखें। मैंने अपने निर्णय आपपर थोपनेकी कोशिश कभी नहीं की है। आप लोगोंको नम्रतापूर्वक मनानेके सिवाय मेरे पास और कोई ताकत नहीं है। मेरा आपसे यही अनुरोध है कि आप मुझे अपनी मान्यताके विरुद्ध काम करनेके लिए बाध्य न करें।

लाला दुनीचन्द[1]ने कहा है कि मैं संविधानकी सीमाओंका, जिसके निर्माणमें मेरा भी हाथ रहा है, उल्लंघन न करूँ। मैं उनसे यह कह देना चाहता हूँ कि मैं सविनय अवज्ञाकारी इसीलिए हूँ कि मैं स्वभावसे ही संविधानका पालन करनेवाला हूँ। यही कारण है कि मैं आपका प्रतिनिधि बनकर आपके पास आया हूँ। कांग्रेस संविधानकी चार-दीवारीके बाहर जानेकी मेरी कोई इच्छा नहीं है।

यदि मैं आपमें विश्वास नहीं जगा सका हूँ तो आप मुझे अधिकार न दें। परन्तु मेरा अनुरोध इतना ही है कि मुझे व्यक्तिगत रूपसे काम करनेकी स्वतन्त्रता दी जाये। निराशाके परिणामस्वरूप मैं इस निर्णयपर नहीं पहुँचा हूँ। मेरी इच्छा अहिंसात्मक प्रतिरोध पर मेरे अडिग विश्वाससे उत्पन्न हुई है।

निश्चय ही यह काम सेनापतिका है कि कार्यवाहीका समय और उसकी पद्धति वह स्वयं निश्चित करे। उसे यह विश्वास होना चाहिए कि सिपाहियोंमें नियत समय पर कार्यवाही करनेकी क्षमता है। जिस सेनापतिके पास कोई भौतिक शक्ति न हो, उसके सिपाहियोंको किन शर्तोंका पालन करना होगा, इसका निर्णय भी उसे ही करना होता है। वह तो अपने सिपाहियोंसे यही कह सकता है कि वे उसकी बातको बुद्धि और हृदयकी कसौटी पर परखें। अकेले सविनय प्रतिरोध करनेमें मेरा मतलब आपमें से किसीको भी कम गिनना नहीं है।

इतने बरसों तक मैं जिन प्रतिबन्धोंके भीतर काम करता रहा, उनका मुझे ज्ञान नहीं था। परन्तु ऐसा वक्त आया जब यह जरूरी लगा कि यदि हमें सत्याग्रह-शस्त्रको बदनामीसे बचानी है तो यह परिस्थिति समाप्त कर देनी चाहिए।

१. अम्बालाके एक कांग्रेसी कार्यकर्ता।

आप अपने सेनापतिकी बात मानें या न मानें, यह आप पर निर्भर करता है। अहिंसात्मक संघर्षमें यदि सेनापति चाहे तो अपने सिपाहियोको बर्खास्त कर सकता है और इसी तरह यदि उसकी शर्तें उन्हें मंजूर न हो तो वे भी उसे बर्खास्त कर सकते है।

यह कोई धमकी नही है। मैं कांग्रेसका सदस्य तो बना ही रहूँगा; परन्तु फिर कांग्रेसका प्रतिनिधि होनेका दावा नही करूँगा। फिरसे उस प्रतिनिधिपर आपका विश्वास जमनेमें यदि एक या दो साल लग जायें तो वह कोई खास बात नही होगी। अहिंसात्मक संघर्षमें सेनापति सजा देनेका अधिकार नही रखता। उसके पास इतना अधिकार नही होता कि वह अपने आदेशका जबर्दस्ती पालन करवाये। उसका अधिकार समझाने-बुझानेकी उसकी ताकत पर निर्भर करता है। ऐसे सेनापतिसे कार्यवाहीकी दिशा बदलनेके लिए कहनेका अर्थ है, उसे अपनी न्यायबुद्धिके विपरीत काम करनेके लिए बाध्य करना। यदि उसके आदेश आपको नही भाते तो आपको पूरी स्वतन्त्रता है कि आप ऐसे सेनापतिको बर्खास्त कर दें।

मैं यह बात क्रोधमें नही कह रहा हूँ। यदि अपनी सलाह न माननेके कारण मैं आपसे क्रुद्ध हो जाऊँ तो मैं सविनय प्रतिरोध करनेके अयोग्य ठहरूँगा। मेरा दावा है कि मै तर्क-सम्मत बातको मानकर चलता हूँ। बच्चे भी मुझसे नही डरते और मुझे अपनी इच्छाके अनुरूप चलानेमें समर्थ हो जाते हैं। मक्खियो द्वारा तंग किये जाने पर भी मैंने उन्हे कभी हानि नही पहुँचाई है। यदि आप ठीक समझते है, तो ऐसे आदमीको स्थान रिक्त कर देनेका आदेश देनेमें आपको डरना क्यो चाहिए। मैं आपसे कहता हूँ कि इससे मुझे कोई दु.ख नहीं होगा। इसके विपरीत, आपकी स्पष्टवादिताके लिए मैं आपको धन्यवाद ही दूंगा। परन्तु यदि आप अपने सेनापतिको बनाये रखना चाहते हैं तो आपको तर्क-वितर्क छोड़ देना चाहिए और उसका अनुशासन मानना चाहिए।

आप उसका अनुशासन न मानें, यह तो आपपर निर्भर करता है। परन्तु यदि आप एक बार उसे अपना सेनापति स्वीकार कर लें तो आपको यह महसूस करना चाहिए कि आप उसका आदेश माननेके लिए बाध्य है। वक्ताओंमें से एकने मुझसे कहा है कि मैंने इस अवसर पर राजनीतिमें आध्यात्मिकताको नया-नया शामिल कर लिया है। एक मित्रने मुझे उस प्रस्तावका स्मरण दिलाया है जिसे कार्य-समितिने दांडी-यात्राके अवसरपर १९३० मे पारित किया था।[1] उस प्रस्तावकी भूमिकामें वही चीज है जिसका जिक्र मैंने इस वक्तव्यमे किया है। वहाँ वह स्व० पण्डित मोतीलाल नेहरूके अनुमोदन पर रखा गया था। भूमिकामें स्पष्ट शब्दोंमें कहा गया है कि वही लोग संघर्ष शुरू करें एव उसे जारी रखें जो सत्य और अहिंसाको नीति नही अपितु कर्त्तव्य मानकर चलते हो। इसलिए मुझे यह अधिकार दिया गया था कि मैं संघर्ष शुरू कर दूं और उसे जारी रखूं और कांग्रेसियोको आदेश दिया गया था कि वे मेरी मदद करें।

१. १५ फरवरी, १९३० को अहमदाबादमें, देखिए खण्ड ४२, पृष्ठ ४९८।

मैं जो आज कहता हूँ वह उस भूमिकाके कथनसे अलग नही है। निस्सन्देह, जिन्होंने तब सविनय प्रतिरोधको राजनीतिक हथियारके रूपमें अपनाया, वे संघर्षमें शमिल हुए। परन्तु उनसे आशा की जाती थी कि जबतक वे संघर्षमें रत रहेंगे, अपेक्षित सिद्धान्त और अनुशासनके प्रति वफादार रहेंगे। मै उनसे इसके प्रति इसी तरह वफादार रहनेकी आशा रखता था जैसे कि एक जेलर मन, वचन और कर्मसे उस कैदीकी रक्षा करता है जो हत्याका अपराधी हो और जिसे फिलहाल उसके अधिकारमें रखा गया हो। यदि आप मेरा नेतृत्व स्वीकार करते है तो आपको मेरी शर्तें माननी होंगी। यदि नहीं तो आप मुझे उस रास्ते पर चलनेके लिए स्वतन्त्र रहने दें जिसे मैं सही मानता हूँ। फिर उसपर चाहे मै अकेला ही क्यो न पड़ जाऊँ।

१९२२का बारडोली-निर्णय[1], जिसे स्वर्गीय हकीम साहब और डॉ० अन्सारी अत्यन्त कठिनाईसे स्वीकार कर सके थे, एक ऐसा कदम था जिससे देश अपमानजनक हार और विनाशसे बच गया। इससे आम लोगोके सामने यह स्पष्ट हो गया कि शान्तिपूर्ण संघर्षमें हिंसाके लिए कोई स्थान नही है। जिन्होंने अभी हालके संघर्षमें भाग लिया था, उनके कर्ममे हिंसा नही थी। यह तो केवल ईश्वर ही जानता है कि हमारे विचार कहाँतक हिंसा-भावनासे अछूते थे। यह माना जा सकता है कि हमने वचनमें उसी सीमातक अहिंसाका पालन नही किया।

हमारी अहिंसा ज्यादातर कर्म तक सीमित थी। यदि देश जेल जानेकी कला सीख जाता है और अहिंसाका पालन करनेकी कला सीख जाता है, जैसे कि पठानोंने किया है, तो आसानीसे स्वराज्य हासिल किया जा सकता है। मुझे बारडोली-निर्णयका कोई पश्चात्ताप नही है और मै इसे बुद्धिमत्तापूर्ण राजनैतिक कदम मानता हूँ। मैं अपनी इस सलाहको भी वैसा ही मानता हूँ। ऐसा समझा जाता है कि मेरा हृदय अत्यन्त कोमल है, पर मुझे मालूम है कि वह इस्पातकी तरह कठोर है।

यदि आप इस वक्तव्यका कोई अनुचित अर्थ लगायें तो उसमें मैं कुछ नही कर सकता। जिस व्यक्तिका जिक्र मैंने अपने वक्तव्यके शुरूमें किया है वह मुझे उतना ही प्रिय है जितना कि अपना पुत्र। उसके विरुद्ध मेरे पास कोई आरोप नही है। मैंने उस पर कोई दोष नही लगाया है। मैंने दोष अपनेपर लगाया है। वह इस वक्त मेरे साथ यात्रा कर रहा है। यदि मैंने उसके विरुद्ध कोई निर्णय नही दिया तो मैं दूसरोके विरुद्ध ऐसा कैसे कर सकता था? परन्तु जब मै देखता हूँ कि हमारी ढिलाईकी सीमा यहाँतक आ पहुँची है कि उससे हमारे हितकी हानि हो रही है, तो ऐसी स्थितिमें यदि मैं सदस्योंको ढिलाई खत्म करनेके लिए न कहूँ और यह चेतावनी न दूं कि लोगोको फिरसे संघर्षमें जुटनेका आह्वान देनेसे पहले यह स्पष्ट देना चाहिए कि अब अत्यन्त कड़ा अनुशासन और मन,

१. कार्य-समितिके सामूहिक सविनय अवज्ञाको स्थगित कर देनेके प्रस्तावकी ओर संकेत है, देखिए खण्ड २२, पृष्ठ ३००-८१।

वचन तथा कर्मसे अहिंसाकी आवश्यकताको भली-भाँति समझ लेना जरूरी है, तो मैं विश्वासघातका अपराधी होऊँगा।

मैंने अभी सीमा-प्रान्तके बारेमें कुछ शब्द कहे। मेरे मनमें बंगालके लिए वैसी ही तीव्र भावना है। मैं जानता हूँ कि आज बंगालमें क्या हो रहा है। कुछ बंगाली ऐसे हैं जो मुझपर इस बातका आरोप लगाते हैं और ऐसा मानते हैं कि मैं बंगालके दु:खोकी उपेक्षा करता हूँ। उनमेंसे कुछ बंगालका प्रतिनिधित्व करनेके मेरे दावेका खण्डन करते हैं। यदि मैं बंगालका प्रतिनिधित्व नही करता तो मैं किसी भी प्रान्तका प्रतिनिधित्व नही करता। मैं बंगालकी कविता और संवेदनशीलताका प्रशंसक हूँ। अपने इस प्रान्तसे मैं प्रेमकी रेशम डोरसे बँधा हूँ। परन्तु आज मैं असहाय हूँ। मेरे होंठ मेरे व्रतके कारण बन्द हैं।[1]

क्या मुझे खान अब्दुल गफ्फार खाँके कैद हो जानेका दु:ख नहीं है, जिनका अहिंसामें विश्वास हमारे विश्वाससे ज्यादा दृढ़ है? दोनो भाइयोके मनमें अहिंसा असाधारण सीमा तक घर कर चुकी है। मैं समझता हूँ कि 'कुरान'की हरएक आयतमें उन्हें अहिंसाका सन्देश मिलता है। क्या सेनापतिके रूपमें मैं उन्हे उनके भाग्यपर छोड़कर उनके कैद हो जानेके प्रति दार्शनिको-जैसी उदासीनता बरत सकता हूँ? जवाहरलाल नेहरूको जेलमें डाल दिया गया है और सरदार वल्लभभाई पटेलको भी। चूँकि वे मेरी सब बातोंको मान लेते हैं, लोग खिल्ली उड़ाते हुए उन्हें गांधीका अन्धानुयायी कहते हैं। क्या आप समझते हैं कि उनमें बुद्धि नही है? वे मुझसे भी बड़े बैरिस्टर रहे हैं। फौजदारी मामलोके वकीलके रूपमें उन्होंने नाम कमाया है। जो-कुछ मैंने कहा उसे उन्होंने सही माना, क्योंकि उन्हें इस बातका विश्वास था कि मेरा प्रस्ताव बुद्धिमत्तापूर्ण है। क्या मै इन लोगोंको जेलमें छोड़ दूँ और अपनेको या आप लोगोंको फिरसे ऐशो-आरामकी जिन्दगी बसर करने दूँ? जिस उद्देश्यसे वे जेल गये हैं, मैं उसी उद्देश्यके लिए आपको बाहर रहनेके लिए कहता हूँ।

लेकिन मैं यह नहीं चाहता कि आप ऐशो-आरामकी जिन्दगी बसर करनेके लिए बाहर रहें। मैं चाहता हूँ कि आप स्वेच्छासे गरीबी स्वीकार करनेके लिए बाहर रहें। आगे आनेवाले किसी भी संघर्षमें, आपके जो आश्रित पीछे रह जायेंगे उनके लिए आपको भत्ते नही मिलेंगे। जेलोसे बाहर कामकी कमी नही है। हिन्दू-मुस्लिम एकताके लिए आप अपना जीवन दे सकते है। क्या आप खादीकी उपेक्षा कर ग्रामीणोके लिए स्वतन्त्रता प्राप्त करनेकी आशा रख सकते है? और फिर अस्पृश्यता की बात है। आप लोगोंको, जो बाहर होगे, न तो आराम मिलेगा और न शान्ति ही मिलेगी। मैंने आपके सामने एक भी बात ऐसी नही रखी है जो १९२० से अबतक कांग्रेसके कार्यक्रममें शामिल न की गई हो। आप पहले उस कार्यक्रमको

१. ४ अगस्त, १९३३ को एक सालकी साधारण कैदकी सजा पानेके पश्चात् यरवदा जेलसे बिना शर्त रिहा होनेपर (देखिए खण्ड ५५, पृ० ३५८-६०) गांधीजीने निश्चय किया था कि वे सत्याग्रह नहीं करेंगे और कैदकी शेष अवधिमें अर्थात् ३ अगस्त, १९३४ तक, हरिजन-कार्य करेंगे।

पूरी तरह कार्यान्वित करें, आप केवल तभी मुझे यह कह सकेंगे कि मैं जेल न जाऊँ।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २०-५-१९३४ और २१-५-१९३४

४. पत्र : अमतुस्सलामको

[१९ मई, १९३४से पूर्व][1]

प्यारी बेटी अमतुलसलाम,

तुम्हारा खत व तार मिले। डॉक्टर जीवराज [मेहता] पर खत भेजता हूँ। डॉ० शर्माको नही लिखता। इस तरह तुमको उनको बुलाना अच्छा नही है। किसी की जरूरत है तो बम्बईसे हो सकता है।

तुमने डॉ० शर्माके खुराकके बारेमें जो लिखा है इस बारेमें मै उनको लिखता हूं।[2] तुम्हारी तरफसे खत बराबर मिलते रहने चाहिए।

बापूकी दुआ

[पुनश्च :]

उन्नीस तक पटना, बादमें कटक।

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९६) से।

५. प्रस्ताव : कौंसिल-प्रवेशके बारेमें[3]

पटना

१९ मई, १९३४

चूँकि कांग्रेसमें ऐसे सदस्योंकी संख्या बहुत ज्यादा है, जो विधान-सभाओंमें प्रवेशको[1] जरूरी समझते हैं और देशकी प्रगतिमें इसे लक्ष्यकी ओर उठाया गया एक कदम मानते है, अतः अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी पण्डित मदनमोहन मालवीय और डॉ० मु० अ० अन्सारीको इस कामके लिए नियुक्त करती है कि वे डॉ० मु० अ० अन्सारीकी अध्यक्षतामें कांग्रेस संसदीय बोर्ड नामसे एक बोर्डका गठन करें।

१. "पुनश्च" से।

२. देखिए "पत्र : हीरालाल शर्माको", पृष्ठ २०।

३. कार्यकारिणी समितिकी सुबहकी बैठकमें स्वीकृत; अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठक तीसरे पहर तीन बजे राधिका सिंह इन्स्टीट्यूट पटनामें हुई थी। बैठकमें यह प्रस्ताव गांधीजी द्वारा रखा गया था। डॉ० मु० अ० अन्सारीने इसका अनुमोदन किया था। प्रस्ताव पर गांधीजीके भाषणके लिए देखिए अगला शीर्षक।

बोर्ड कांग्रेसकी ओरसे विधान-सभाके सदस्योके चुनावों पर नियन्त्रण रखेगा और कोषमें वृद्धि करने, उसकी देखरेख तथा तत्सम्बन्धी कामके लिए उसके उपयोग का उसे अधिकार होगा। बोर्ड अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीके अधीन होगा और उसे इसका संविधान बनाने, समय-समय पर इससे सम्बन्धित मामलोके इन्तजामके लिए नियमादि बनानेका अधिकार होगा।

संविधान और नियमो तथा व्यवस्थाओंको स्वीकृतिके लिए कार्यकारिणी समितिके सामने रखा जायेगा, लेकिन स्वीकृति मिलनेसे पहले भी यह लागू होगा। जो लोग समय-समय पर निर्धारित कांग्रेस-नीतिको विधान-सभामें रखनेका वचन देंगे, बोर्ड उन्ही उम्मीदवारोंको चुनेगा।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २०-५-१९३४

६. भाषण: अ० भा० कां० कमेटीकी बैठक, पटनामें – २[1]

१९ मई, १९३४

यह ठीक ही है कि यह प्रस्ताव[2] पेश करनेके लिए मुझसे कहा गया है, क्योंकि जहाँतक मेरी जानकारी है विधान-सभाओके बहिष्कारका विचार मेरे ही दिमागकी उपज है। बहिष्कारका दृढ़तासे पालन करनेके लिए मैंने कांग्रेसमें अपने कुछ सम्मानित साथियोके साथ वर्षों संघर्ष किया। लेकिन थोड़े-से प्रभावशाली व्यक्तियोने इसे हमेशा गलत ही समझा।

इसलिए, पिछले साल जुलाईमें पूनाकी अनौपचारिक सभा[3]में जब हम मिले और सर्वश्री सत्यमूर्ति और आसफअलीने मुझसे कहा कि मैं कौंसिल-प्रवेशका बहिष्कार समाप्त कर दूं, तो मैंने उन्हें सुझाव दिया कि वे कांग्रेसियोका एक कौंसिल-प्रवेश दल संगठित करें।

आइए, बहिष्कारके इतिहास पर हम एक नजर डालें। १९२० में देशने इसे अपनाया। देशको इसने नया जीवन प्रदान किया, जिसकी आश्चर्यजनक अभिव्यक्ति किसीसे भी छिपी नही रही। लेकिन १९२२ में जब सविनय प्रतिरोध स्थगित कर दिया गया, तो कौंसिल-प्रवेश कार्यक्रम सामने आया और फिर उसने स्वराज्य पार्टीका रूप ग्रहण किया। पहले तो उस पार्टीने कांग्रेससे मान्यता प्राप्त की और १९२६में वह उसकी सर्वाधिकारिणी बन गई।

१९२९ में कांग्रेस विधान-सभा दलके नेता पण्डित मोतीलाल नेहरूके आग्रह पर, विधान-सभाका पुनः बहिष्कार किया गया। लेकिन तब भी कांग्रेसके अन्दर एक ऐसा

१. गांधीजीने भाषण हिन्दीमें दिया था।
२. देखिए पिछला शीर्षक।
३. देखिए खण्ड ५५, पृ० २७४ तथा २७६-८।

गुट था जो पुनः बहिष्कार नही चाहता था। और अब, जबकि सविनय प्रतिरोध व्यवहारतः स्थगित कर दिया गया है, विधान-सभाओंमें वापसीकी मांगसे डॉ० अन्सारी सरीखे पुराने और अपरिवर्तनवादी नेताके नेतृत्वमें स्वराज्य पार्टी पुनः जीवित हो उठी है।

मैं अपनेको व्यावहारिक आदर्शवादी मानता हूँ। विधान-सभाओंमें मेरा अविश्वास बना रहेगा, क्योंकि मै उन्हें स्वराज्यकी — जनताके लिए हितकारी स्वराज्यकी प्राप्तिका साधन नही मानता। लेकिन मै देख रहा हूँ कि कुछ कांग्रेसियोंकी कौंसिल-प्रवेशमें आस्थाको डिगानेमें मै सफल नही हो पाया हूँ। इसलिए अब सवाल यह है कि उन्हें, कांग्रेस-प्रतिनिधियोंकी हैसियतसे, विधान-सभाओंमे प्रवेशकी अपनी इच्छा पूरी करनी चाहिए या नही। मुझे इसमें बिलकुल सन्देह नही है कि जो मान्यता वे चाहते है वह उन्हें मिलनी चाहिए। मान्यता न देनेका मतलब है हमारे बीच जो प्रतिभाएँ हैं, उनका उपयोग न करना। ये देशभक्त उस तथाकथित राजनीतिक कार्यके अभावसे निष्क्रिय बने रहे तथा इनके अन्दर असन्तोष भरता गया। यद्यपि ये हर तरहसे हमारी ही तरह पक्के देशभक्त हैं। इनके असन्तोषका प्रभाव औरों पर भी पड़ा और पूरे वातावरणमें एक जड़ता व्याप गई। ऐसा इसलिए हुआ कि कांग्रेसियोंने, समग्र रूपसे, चरखे जैसे शुद्ध रचनात्मक कार्यको खुले मनसे कभी नही अपनाया। मेरा इस परिस्थितिको तटस्थ भावसे देखते रहना सम्भव नही था। इसलिए डॉ० अन्सारीने जब मुझे लिखा, तो उन्हें कांग्रेसियोंका एक संसदीय दल संगठित करनेको प्रोत्साहित करनेमें मुझे कोई झिझक नही हुई। अब सरकारकी अनुज्ञासे हम एक वैधसंगठनके रूपमे एकत्रित हुए हैं। इसलिए यह उचित ही है कि हम डॉ० अन्सारीके प्रयासको मान्यता दें। इसलिए यह प्रस्ताव आपके सामने है।

सविनय प्रतिरोधके व्यवहारतः स्थगित हो जानेसे यह प्रस्ताव और भी आवश्यक हो जाता है। व्यवहारतः मैं इसलिए कहता हूँ कि अब यह कड़ाईसे एक व्यक्ति तकही सीमित है। इस प्रस्ताव द्वारा हम एक बोर्डकी स्थापना कर रहे है, जिसे विधान-सभाओके कार्यके संचालनकी जिम्मेदारी दी जायेगी। अखिल भारतीय चरखा संघकी तरह, यह एक स्वायत्त निकाय होगा। केवल एक ही अन्तर रहेगा। अखिल भारतीय चरखा संघके कार्यमें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी या कांग्रेस हस्तक्षेप नहीं करती है, परन्तु संसदीय दल अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके अनुशासनमें कार्य करेगा, क्योंकि उसे समय-समय पर देशमें पैदा होनेवाले राजनैतिक प्रश्नों पर अपनी राय व्यक्त करनी होती है। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी स्वभावतः यह चाहती है कि विधान-सभाओंमें उसका राजनैतिक मत संसदीय दलके माध्यमसे प्रतिबिम्बित हो। इसलिए वह विधान-सभाओंमें कांग्रेसियोसे यह अपेक्षा रखेगी कि वे उसके मतको व्यक्त करें। अन्य सब बातोंमे वह एक स्वायत्त निकाय होगा।

कुछ प्रान्तीय कांग्रेस समितियोंने यह राय जाहिर की है कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी एक पृथक बोर्ड बनानेकी बजाय, कौंसिलके कार्यकी खुद ही जिम्मेदारी ले ले। कार्य-समितिने इस सुझाव पर विचार किया है और इसे अव्यावहारिक मानते हुए अस्वीकार कर दिया है।

मुझे बराबर यह आशा रही है कि सभी कांग्रेसी विधान-सभाओंमें प्रवेश करना नही चाहते है और संसदीय मनोवृत्तिवाले वर्गकी कौंसिलोंमें जितनी आस्था है, हम सबकी उतनी नही है। अभीतक मैंने आपके आगे कौंसिलोंमें जानेवालोंका दृष्टिकोण रखनेकी कोशिश की है। उन्हे आशा है कि कौंसिलोंके द्वारा वे राष्ट्रके लिए सीमित लाभ प्राप्त कर सकते हैं। मुझे इस बातमें जरा भी सन्देह नही है कि वह लाभ, उसके लिए जो शक्ति खर्च होगी उसकी तुलनामें क्षुद्र ही होगा। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीको पूर्णतया एक संसदीय निकाय ही नही बन जाना चाहिए। उसे कांग्रेस-जनोकी सभी राष्ट्रीय गतिविधियोका प्रतिनिधित्व और नियमन करना चाहिए। उसे १९२० के महान् रचनात्मक कार्यक्रममें रुचि लेनी चाहिए, जिसमें खादी, हिन्दू-मुस्लिम एकता, अस्पृश्यता, मद्यनिषेध, राष्ट्रीय शिक्षा, ग्राम-संगठन, ग्रामोद्योग, औद्योगिक मजदूर, आदि कार्य शामिल हैं। संसदीय कार्यको, जिनका उधर झुकाव हो उनके लिए छोड़ देना चाहिए। मुझे आशा है कि ज्यादातर लोग तो कौंसिलके कार्यकी चकाचौंधसे सदा अप्रभावित रहेंगे।

अपनी जगह पर वह कार्य उपयोगी होगा। परन्तु कांग्रेसने यदि अपना सारा ध्यान विधान-सभाके कार्य पर ही लगा दिया, तो वह उसके लिए आत्महत्या जैसा होगा। स्वराज्य उस मार्गसे कभी नही आना है। स्वराज्य तो केवल जन-साधारणकी सर्वांगीण चेतनासे ही आ सकता है।

आज तीसरे पहर दो साथियोंने मेरे पास आकर बड़े ही उत्तेजित ढंगसे इसका विरोध किया। उन्हे भय था कि कार्यकी मौजूदा दिशा अन्तमें पूरी कांग्रेसको ही एक कौंसिलगामी पार्टीमें बदल देगी। मैंने कहा कि मुझे ऐसा कोई डर नही है। 'परिवर्तन-विरोधी' यदि तड़क-भड़कवाले कौंसिल कार्यक्रमसे होड़में टिक नही सकता, तो उसकी आस्था अवश्य ही दुर्बल है। इसलिए मैं ऐसा महसूस करता हूँ कि मैंने जो प्रस्ताव पेश किया है, वह परिस्थितिके बिलकुल अनुरूप है। रॉंचीके स्वराज्यवादी प्रस्ताव[1] को स्वत: पर्याप्त और इसीलिए पूर्ण होना था। वह इस सुदूर सम्भावनाको दृष्टिमें रखते हुए पास किया गया था कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठक कभी भी नही हो सकेगी। चूंकि उसकी बैठक हो सकी है, इसलिए कार्य-समितिका प्रस्ताव ही रॉंचीके फैसलेकी पुष्टिका सबसे उपयुक्त मार्ग है। रॉंची-प्रस्तावके लिए जो करना जरूरी था, अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीको उसे दोहरानेकी जरूरत नही है।

एक सवाल यह पूछा गया है कि दो सदस्योको अन्य सदस्योको नियुक्त करनेका अधिकार क्यो दिया गया है। मैंने सदा यह देखा है कि सुव्यवस्थित लोकतन्त्रमें जिन्हें कोई अधिकार दिया जाता है उन पर यह विश्वास किया जाता है कि वे उस अधिकारका न्यायोचित ढंगसे उपयोग करेंगे। प्रस्तावमें उल्लिखित इन दो सज्जनोंकी ईमानदारी पर यदि आपका विश्वास है, तो आपको इन पर यह भी विश्वास रखना चाहिए कि वे बोर्डमें पूर्णतया योग्य व्यक्तियोको ही नियुक्त करेंगे। ऐसे सदस्योको इन पर थोपना जो इनके साथ जितना ये चाहते हैं उतना सहयोग

१. २ और ३ मई, १९३४ को हुए स्वराज्यवादियोंके सम्मेलनका प्रस्ताव देखिए पृष्ठ १४ भी।

न कर सकें, गलत होगा। किसी विशेष प्रशासनकी बागडोर जब हम किसीके हाथमें देते हैं, तो उसे अपने सहयोगियोको आप चुननेकी स्वतन्त्रता होनी चाहिए। कांग्रेसने मेरी सलाह पर इसे अपनी एक परम्परा बना लिया है। कार्यकारी समितिके बारेमें इस नियमको संविधानमें शामिल करनेकी मेरी हिम्मत नही हुई। पर अनुभवसे हमने यह जाना है कि यह परम्परा अच्छी तरह काम करती है। अध्यक्ष अपने सहयोगी आप चुनता है। उस चुनावके लिए आपकी स्वीकृति केवल एक औपचारिकता बन गई है।

बिहार भूकम्प-समितिकी जब बैठक हुई तो मैं एक कदम और आगे बढ़ गया, और एक प्रस्ताव द्वारा अध्यक्ष राजेन्द्र बाबूको अपने सहयोगी आप चुननेका अधिकार दे दिया गया। बोर्डकी स्थापनाके बारेमें भी मैं इसी कार्य-विधिकी सलाह देता हूँ।

अब दो शब्द यह प्रस्ताव पास करनेकी अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी क्षमता के बारेमें। अध्यक्ष अपनी व्यवस्था दे ही चुके हैं। मैं इस कार्यवाहीकी इसके गुणोंके कारण वकालत करना चाहता हूँ। यदि आज कांग्रेसका अधिवेशन हो रहा होता, तो स्वभावतः अपने कियेको केवल वही रद्द कर सकता था। परन्तु आपत्कालमें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीको वह सब काम करना होता है जो कांग्रेस अपने अधिवेशनमें कर सकती है। अपने ऊपर आई जिम्मेदारीसे वह कन्नी नही काट सकती। यदि कांग्रेस चाहे तो अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके कार्यों पर फिरसे विचार कर सकती है। काम करनेका जब आपको अधिकार है और वह आपका कर्त्तव्य भी है, तो आप राष्ट्रपर एक अधिवेशन बुलानेका खर्चा नहीं डाल सकते।

मैं आपको संशोधनोंकी अच्छी तरह जाँच करनेसे नही रोकना चाहता। सदस्योंका यह अधिकार है कि वे संशोधन सुझायें। परन्तु प्रस्ताव पेश करनेवाला सदस्य यदि आपके संशोधन स्वीकार न कर सके, तो उस हालतमें बेहतर यही है कि वे वापस ले लिये जायें। और यदि संशोधनोंको स्वीकार न करनेके उसके कारण आपको जँचते न हों, तो फिर वह प्रस्ताव ही अस्वीकृत कर देना चाहिए। किसी कुशलसे कुशल चितेरेने भी अभीतक कोई ऐसा चित्र नही बनाया है, जिसकी कुछ-न-कुछ आलोचना न हुई हो। सभी सुझावोंको यदि उसे अपने चित्रमें स्थान देना पड़े, तो वह चित्र मात्र पुताई हो जायेगा। बहुत झंझटके बाद तैयार किया गया प्रस्ताव उस चित्रकी तरह है जिसे या तो अस्वीकार करना होगा या स्वीकार। जबतक उसके प्रणेताको ही अपनी गलतीका विश्वास न हो जाये, उसमें हेरफेर नही हो सकता।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २३-५-१९३४

७. भेंट: 'हिन्दू'के प्रतिनिधिको

२० मई, १९३४

गांधीजी बहुत सवेरे सियालदह एक्सप्रेस गाड़ीसे पटनासे रवाना हुए। उन्हें बहुत-से लोगोंने विदाई दी। थके हुए होनेके बावजूद, वे हर स्टेशनपर अपना हाथ खिड़कीसे बाहर निकालकर हरिजन-कार्यके लिए पैसे माँगनेसे नहीं चूकते थे। केवल थोड़ी देरके लिए वे सो गये थे। उतनी ही देर इस कार्यके लिए वे पैसा नहीं माँग पाये। उन्हें पर्याप्त मात्रामें रुपये भी मिले। हर दर्शनार्थीसे वे रुपये माँगते थे और यदि कोई थोड़ी देर बात करना चाहता तो उसकी कीमत नकद दस रुपये थी। उन्होंने कहा:

गाड़ियोंमें मैं हरिजनोंके लिए चन्दा इकट्ठा करनेके सिवा और कुछ नही करता हूँ।

मोकामेह स्टेशनपर एक बंगाली सज्जन तेजीसे भागते हुए आये और उन्होंने गांधीजीसे कहा कि वे हरिजन-निधिके लिए १,००१ रु० देना चाहते हैं। महात्माजी प्रफुल्लित हो गये और उन्होंने अपना हाथ फैलाया। बंगाली सज्जनने कहा "परन्तु इसे लेनेके लिए आपको कलकत्ता आना पड़ेगा। हम इससे भी बहुत ज्यादा देंगे।"

संवाददाता: चूंकि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी द्वारा यह प्रस्ताव पास कर दिया गया है कि आपके ७ अप्रैलके वक्तव्यको स्वीकार कर लिया जाये और आपको कांग्रेसकी ओरसे एकमात्र सविनय प्रतिरोधी बना दिया जाये, तो क्या आप कृपापूर्वक यह बता सकते हैं कि यदि आप इसे कार्यरूप देना चाहेंगे तो कैसे और कब?

गांधीजी: इसे कार्यरूप कैसे दूंगा सो मैं आपको नही बता सकता; क्योंकि मैं स्वयं नही जानता। जहाँतक तारीखका सम्बन्ध है, वह तो जब मुझे यरवदा जेलसे रिहा किया गया था तभी नियत हो गई थी। इसके आगे जैसे बाकीके लोग कुछ नही जानते वैसे मैं भी कुछ नही जानता। फिर भी रिहा होनेके वक्त मैंने जो कहा था उसपर मैं दृढ़ हूँ और मैं कहूँगा कि सविनय अवज्ञा अनिवार्य न हो, इस उद्देश्यके लिए प्रयत्न करनेमें मैं कोई कसर उठा नही रखूंगा।

संवाददाता: आपका प्रस्ताव[1] जिसमें कौंसिल-प्रवेशकी अनुमति है, राँची प्रस्तावसे इस दृष्टिसे अलग पड़ता है कि आपके प्रस्तावमें श्वेत पत्रका कोई उल्लेख नहीं है और उसके प्रति कांग्रेसके रुखकी व्याख्या भी उसमें नहीं की गई है। क्या आप मुझे बता सकते हैं कि राँची-प्रस्तावके अतिरिक्त इस प्रस्तावका क्या

१. देखिए पृ० ८-९।

महत्त्व है और आपके मतमें अब कांग्रेसियोंको राँची-प्रस्तावके प्रति क्या रुख अपनाना चाहिए?

गांधीजी: राँची-प्रस्ताव एक स्वतन्त्र प्रस्ताव था। उससे स्वराज्यवादी-अपने मनकी बात जान सकते थे और अनिवार्य परिस्थितियोंमें यदि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीसे मान्यता प्राप्त करना असम्भव होता, तो भी वे काम कर सकते थे। परन्तु अब अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीकी बैठककी अनुमति मिल जानेपर उसके लिए राँची-सम्मेलनके प्रस्तावोको स्वीकार करनेका सवाल ही नही रहा। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीका कौन्सिल-दलको आत्मसात कर लेना और कांग्रेसके राजनीतिक कार्यक्रम को चलानेके उद्देश्यसे उसे अपनी एजेंसीमें वदल देना काफी है। श्वेत-पत्रके प्रति कांग्रेसके रुखकी व्याख्या करना अनावश्यक है; क्योकि वह तो सर्वविदित ही है। काग्रेस ऐसी कोई चीज स्वीकार नही कर सकती जो उसके उद्देश्य, अर्थात् पूर्ण स्वराज्य-प्राप्तिसे मेल न खाती हो।

यह पूछे जानेपर कि क्या वह वे चाहते हैं कि स्वराज्य-दलको भंग कर दिया जाये, महात्माजीने उत्तर दिया:

आपके पिछले प्रश्नके उत्तरमें इस प्रश्नका उत्तर आ गया है। स्वराज्यदल कांग्रेस-संगठनका ही हिस्सा वन गया है।

भेंटके समाप्त होने तक गाड़ी जहाझा पहुँच चुकी थी। याद रहे कि कुछ समय पहले यहाँ हरिजन-विरोधी प्रदर्शनमें महात्माजीकी मोटर-गाड़ी पर पत्थर फेंके गये थे; और उसकी शीशेकी खिड़की टूट गई थी। आज इस जगह अत्यन्त मित्रतापूर्ण वातावरण था। प्लेटफार्म पर एक हजारसे ज्यादा लोग इकट्ठे थे और लगातार "महात्मा गांधीकी जय" चिल्ला रहे थे तथा हरिजन-आन्दोलनके प्रवर्तक पर फूल बरसा रहे थे। बहरहाल, गांधीजीने जनसमूहसे कहा वे फूल नहीं पैसा चाहते हैं।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २१-५-१९३४

८. भेंट: 'हिन्दुस्तान टाइम्स' के प्रतिनिधिको[१]

२१ मई, १९३४

प्र०: अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकके बारेमें आपकी क्या धारणाएँ हैं?

उ०: दोनो प्रस्तावोके क्रान्तिकारी स्वरूपको दृष्टिमें रखकर आलोचना मर्यादामे रही और मतदानसे यह स्पष्ट हो गया कि सदस्योंने परिस्थितिको समझकर उत्तर-दायित्वपूर्ण भावनाका असाधारण परिचय दिया है। लोगोंकी उपस्थिति भी काफी अच्छी थी।

प्र०: क्या आप ऐसा समझते हैं कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी द्वारा आपको इजाजत मिल जानेपर, उसके अनुरूप सविनय अवज्ञा आन्दोलन आरम्भ करना आपके लिए जरूरी हो जायेगा?

उ०: अब फिर ३ अगस्त हमारे सामने है; लेकिन उस दिन क्या होगा मैं ठीक नहीं बता सकता।[२] अभी मैंने कोई कार्यक्रम तय नही किया है। उस दिन तक मुझे पर्याप्त काम निबटा देने हैं।

प्र०: समाजवादी गुटके कांग्रेसमें विलयके बारेमें आप क्या सोचते हैं? इस बारेमें क्या आप कोई सन्देश देंगे?

उ०: मैं विलयका स्वागत करता हूँ। अगर दलने संयमसे और देशके विशेष हालातको ध्यानमें रखकर काम किया, और मुझे यकीन है कि वह करेगा, तो परिणाम अच्छा ही होगा। मैं समझता हूँ कि वे लोग हिंसात्मक तरीके छोड़कर अहिंसात्मक तरीकोंको अपनानेके लिए वचनबद्ध हैं।

प्र०: देशको अपनी सलाहके सन्दर्भमें आप पण्डित जवाहरलाल नेहरू, सरदार वल्लभभाई और अब्दुल गफ्फार खाँसे क्या उम्मीद रखते हैं?

उ०: मुझे इसमें सन्देह नही कि अगर वे बाहर होते तो वैसा ही करते जैसा मैंने किया। आज तो वे जेलमें हैं, अर्थात् बाहरकी परिस्थितिसे अनभिज्ञ हैं। यहाँकी कार्यवाहीको प्रत्यक्ष देखे बिना वे क्या सोचेंगे, ऐसा पूछना अनुचित है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, २२-५-१९३४

१. गांधीजी बीरीमें उतरे और गांधी सेवा आश्रम चम्पापुरहाट तक पैदल गये। उस दिन मौन दिवस होनेसे उन्होंने प्रश्नोंके जवाब लिखकर दिये।

२. देखिए पृ० ७की पाद टिप्पणी।

९. पत्र : जमनालाल बजाजको

२१ मई, १९३४

चिं० जमनालाल,

एलविन[1]का पत्र पढ़ गया। टिकट-खर्च बचानेके लिए उसे अलग डाकसे लौटा रहा हूँ। इनकी संस्था देखनेके बाद इन्हें मदद देनी पड़ेगी, ऐसा लगता है। इनके पास जो रुपये आते हैं, वे कहाँसे? ये गायन सिखाते हैं सो किस तरह? इनके साथ शामरावके अलावा और कौन है?

ऐसा मालूम होता है कि इनकी मांसाहार किये बिना गति नहीं है। इनकी ऐसी श्रद्धा नहीं है कि दूध-फल पर निर्वाह हो सके। परन्तु ये कुछ भी खायें; इस कारण इनकी मदद बन्द करनेका कोई प्रयोजन नहीं है। परन्तु कताई बन्द हो जाये या हल्की पड़ जाये तो यह सहन नहीं किया जा सकता। यदि कताईमें इनका विश्वास न हो तो उसे छोड़ देना चाहिए। मैं यह नहीं कहता कि ये कातें तभी मदद दी जाये; आशय यह है कि ये सत्यकी रक्षा करें। देखना इतना ही है कि काम सब स्वच्छ हो। एलविन सीधे-भोले हैं, इसलिए आत्मवंचना कर सकते हैं। इसीलिए इस बातकी आवश्यकता है कि मित्र लोग इनकी देखभाल करें।

डॉ० अन्सारीकी पार्टी[2]का निश्चय हो गया होगा। जबतक इसका स्पष्टीकरण न हो जाये, तबतक उसमें दिलचस्पी अवश्य लेते रहना। राजाजी भी दिलचस्पी लें। मालवीयजीको अन्दर लानेके बाद मदद भी देनी होगी और यह भी देखना होगा कि वे नुकसान भी न करने पायें। विलम्ब या जल्दी करके वे नुकसान पहुँचा सकते हैं।

जुलाई तकका कार्यक्रम तो देख लिया न? इसके अनुसार कार्य करनेसे लोग मुझसे कई जगह मिल सकेंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९३३) से।

१. वेरियर एलविन।

२. कांग्रेसने केन्द्रीय विधान-सभाके चुनाव लड़नेके लिए डॉ० अन्सारीकी अध्यक्षतामें संसदीय बोर्ड बनाया था।

१०. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

चम्पापुरहाट, (उत्कल)
२२ मई, १९३४

भाई वल्लभभाई,

आपका पत्र परसों मिला। इस समय ३ बजे हैं। . . .[1] आश्रममें सब सो रहे हैं। कल (सोमवारको) यहाँ पहुँचे। समाजवादी दलके हमारे मित्र मसानी साथ हैं। वे आज वापस बम्बई चले जायेंगे। अगाथा[2] भी साथ है। चार-पाँच दिन में जायेगी। सेरेसोल[3] आज आ पहुँचेंगे। दो-चार दिन हमारे साथ रहेंगे। म्यूरियल[4] भी आयेगी। दो दिन रह कर जायेगी। दूसरे यहाँके जो लोग साथ हैं, उनके नाम नहीं दे रहा हूँ। यह (पद) यात्रा १२ तारीखको बालासोरमें पूरी होगी। इसके बाद पैदल चलना छोड़कर प्रत्येक प्रान्तको थोड़े-थोड़े दिन देना तय किया है। वहाँ कार्य एक स्थान॰ पर बैठकर करना है। १४ तारीखको बम्बई पहुँचना है। वहाँसे १७ को पूना और २६ को अहमदाबाद। वहाँसे सिन्ध। तीन दिन सिन्ध रहकर, तीन दिन लाहौर और वहाँसे यू० पी०। इसीके साथ कार्यक्रमकी एक प्रति रख रहा हूँ। इसमें फेरफार हो सकता है। सब प्रान्तोंके आदमियोंको पटना बुला लिया था। उनका खयाल था कि मुझे उनके प्रान्तोंमें तो जाना ही चाहिए। अन्तमें यह निर्णय किया कि सब प्रान्तोंमें थोड़े दिन एक-एक जगह ही जाकर बैठूं। ये महीने बरसातके होंगे, इसलिए पैदल चलना मुश्किल हो सकता है। पटनाका हाल तो आपने पढ़ लिया। जो हुआ सो ठीक ही हुआ समझिये। लोगोंकी यही इच्छा थी। केवल मेरे हाँ कहनेकी प्रतीक्षा की जा रही थी। परन्तु आरम्भ होते ही झगड़े भी शुरू हो गये हैं। अन्सारी और मालवीयजीकी भलमनसाहत और सहनशीलताकी हद नहीं, डॉ० रायके तेज स्वभावका पार नहीं। अब देखें क्या होता है। इसके साथ सुशीला[5] का लिखा शब्द-चित्र भेजूंगा। शायद ओम[6] भी लिखेगी। अगाथासे लिखनेके लिए कहूँगा।

बा छूट गई। वह वर्धासे दिल्ली होकर कहीं-न-कहीं साथ हो जायेगी।

१. साधन-सूत्रमें छूटा हुआ है।

२. अगाथा हैरिसन।

३. पियरे सेरेसोल, स्विट्जरलैंडवासी इन्जिनीयर, बिहार भूकम्प सहायता कार्यके सम्बन्धमें भारत आये थे।

४. म्यूरियल लेस्टर।

५. श्री सुशीला पै, राजकोट वनिता-विश्रामकी मुख्याध्यापिका। बादमें कस्तूरबा स्मारक निधिकी मन्त्री।

६. उमादेवी बजाज।

बाढ़-संकट-निवारण कोषका जो रुपया है, उसमेंसे ५,००० इसी प्रकारके हरि-जन-संकटके लिए मैंने खर्च करना चाहा। परन्तु मैंने सुना कि आपने उसमेंसे कुछ भी खर्च करनेकी मनाही की है। इसलिए एक हजार ही मिले। और रुपये लेनेसे पहले आपसे ही पूछ लेना ठीक मालूम हुआ। इस बारेमें जो याद हो या इच्छा हो सो लिखिये।

सुरेन्द्र[1] वर्धामें उपवास कर रहा है, केवल स्वास्थ्य सुधारनेके लिए। जेलके भोजनने बड़े-बड़े महारथियोंके शरीर तोड़ दिये। नारणदासकी नाकसे खून बहता था। बूढ़े जैसे होकर बाहर आये। स्वामीका फौलाद जैसा शरीर भी टूट गया। सुरेन्द्रका भी वैसा ही हुआ। निरे स्टार्च और तेलसे काम नहीं चला। मैं देखता हूँ कि दूध-दहीके बिना काम नहीं चलता। मणिलालकी सुशीलाको लड़का हुआ है। मणिलालने आज तक खबर ही नहीं दी। इस वंशवृद्धिमें मेरी तो दिलचस्पी ही नहीं रही। अगर कुछ होता है तो गहरा उद्वेग। फिर भी यह कहनेसे कि कुदरतको कौन रोक सकता है या यूरोपकी पद्धति (सन्तति-नियमनकी) ग्रहण करके 'चारु-लोचने! चलो, आनन्द मनायें और उसका परिणाम रोकें' की वृत्ति अपनानेसे मुझे तो नहीं लगता कि शुद्ध ज्ञान मिल सकता है। जबतक मृत्यु अजित है, तबतक मनुष्य जो-कुछ करता है सब बेकार है। इसीलिए ईशोपनिषद्का पहला मन्त्र लिखा गया। वह ध्यानमें है न? शायद आपको याद होगा कि मैं यह उपनिषद् जेलमें रटता था और रोज उसका पाठ करता था। याद न हो और चाहो तो भेज दूंगा। उसमें कुल अठारह मन्त्र हैं। इतनेमें ही सारा ज्ञान भर दिया गया है। इसमें और गीतामें भेद नहीं है। जो इसमें बीजरूपमें है, वह गीतामें सुन्दर वृक्षके रूपमें दिया गया है। अब और आगे नहीं लिखूंगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृष्ठ १०२–३

१. एक आश्रमवासी।

११. पत्र : अमृतलाल चटर्जीको[1]

२२ मई, १९३४

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ।

आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १४४७) से; सौजन्य : ए० के० सेन।

१२. पत्र : लालजी परमारको

२२ मई, १९३४

चि० लालजी,

तेरा पत्र मिला। (पढकर) प्रसन्नता हुई। तू सावधानीसे रहे और निरन्तर चंगा होता चला जाये, तो मैं समझूं कि मेरा काम हो गया। मुझे लिखते रहना। तुझे वेतन क्या मिलता है? और तू किस तरह रहता है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२९६) से।

१३. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

२२ मई, १९३४

चि० अमला,

तुम्हारी सगिनी गिलहरीकी मृत्युपर मेरी संवेदना। तुम्हारा यह सोचना ठीक है कि तुम्हारे इर्द-गिर्द रहनेवाले लोग जिस सिद्धान्तकी डींग हाँकते हैं, उसके अनुरूप आचरण नही करते। वे ऐसा महसूस नही करते कि हिंसा करनेसे बचना-भर काफी नही है। पीड़ितोके प्रति सक्रिय सहानुभूति दिखाना जरूरी है।

१. अमृतलाल चटर्जीके अनुसार सविनय प्रतिरोधकों और हरिजन उन्होंने सेवकोंके बारेमें श्री गांधीजी को एक रिपोर्ट भेजी थी। यह उसीकी प्राप्ति-स्वीकृति है, देखिए खण्ड ५७, "पत्र : अमृतलाल चैटर्जीको", २३ अप्रैल, १९३४।

मेरे लिए तुम्हें चिन्तित नहीं होना चाहिए। अभियानका फल मेरे लिए अच्छा होगा। मैं बिलकुल ठीक हूँ।

स्नेह।

बापू

[पुनश्च :]

संलग्न[1] पत्र लालजीके लिए, जो वही रह रहा है।

[अंग्रेजीसे]

स्पीगलके कागजात; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

१४. पत्र : हीरालाल शर्माको

[१९ तथा][2] २३ मई, १९३४

भाई शर्मा,

अमतुस्सलाम तुमारी तारीफ करती है। इतनी ही शिकायत वह लिखती है कि तुमारा वजन बहूत कम हो गया है। खाना कम कर दिया है। मैं इतना हिं कहना चाहता हूं कि शरीरको निरर्थक कष्ट देना इतना हि गुनाह है जितना शरीरको पंपालना। इसलिये शरीर रक्षाके लिये जो आवश्यक है वह किया जाय।

इतना तो चार दिनोके पहले[3] लिख चुका था। अब तुमारा खत मिला है। दिल चाहे तब मेरे पास आ सकते हैं। लेकिन वहांके मरीजोंको छोड़कर नहिं। मेरा मुसाफरी क्रम तो तुमारे पास होगा। जुन १२ तक तो यहीं काम चलेगा। पीछे शायद मुंबई।

तुमारी इच्छा सिद्ध होनेमें कुछ देर लगेगी। मै चाहता हूँ थोड़े और स्थिरचित्त बनो। लेकिन यह सब बातें करनेपर। इस समय तो सबका प्रेम संपादन कर रहे हैं सो अच्छा ही है।

बापूके आशीर्वाद

बापूकी छायामें : मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० ६८ और ६९ के मध्यकी प्रतिकृतिसे।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. विषय-वस्तुसे अनुमानित।

३. अर्थात्, १९ मई, १९३४ को।

१५. पत्र : क० मा० मुन्शीको[1]

लखनपुर
२३ मई, १९३४

मैंने मन्दिर-प्रवेश विधेयकपर आपका लेख पढ़ लिया है और उसकी विचार-सारणी मुझे पसन्द आई है। अब उसका परिमार्जन करके और जितना बने उतना संक्षिप्त करके आप मेरे पास भेजें तो मैं उसे 'हरिजन' में प्रकाशित करा दूंगा।

श्रीयुत कन्हैयालाल मुन्शी
गिलबर्ट बिल्डिंग
बबूलनाथ रोड, बम्बई

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५३८) से; सौजन्य: क० मा० मुन्शी।

१६. पत्र : प्रभाशंकर पट्टणीको

[२३ मई, १९३४][2]

सुज्ञ भाईश्री,

आपका पत्र मिला। भावनगर आना नहीं होगा। पदयात्राने सब कुछ बदल दिया है। जिन-जिन प्रान्तोंमें जाऊँगा, वहांके एक-एक शहरमें ही ठहरे रहकर जो हो सकेगा, सो करूँगा। पदयात्रा चौमासेमें हो नहीं सकती, और सभी प्रान्त अपना-अपना हिस्सा चाहते हैं, इसलिए उपरोक्त बीचका मार्ग निकाला है। आप कुशल होंगे। अपनी थैली तो आप शायद अहमदाबाद भेजेंगे। यहाँ भेजें, तो भी कोई हर्ज नहीं।

मोहनदास

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९३२) से। सी० डब्ल्यू० ३२४८ से भी; सौजन्य: महेश पी० पट्टणी।

१. यह सन्देश सुशीला पै द्वारा इसी तारीखको श्री मुन्शीको लिखे गये पत्रमें भिजवाया गया था।
२. डाककी मुहरसे।

१७. पत्र : वसुमती पण्डितको

२३ मई, १९३४

चि० वसुमती,

मेरा पत्र न मिलनेसे तू दुखी होती है, यह कैसे निभेगा? मैं तो हमेशा यही समझता हूँ कि तुझे सबके बादमे लिखूँ तो भी कोई हर्ज नही। मेरी इच्छा है कि तू वही रहकर अपना स्वास्थ्य ठीक कर ले। डाक्टर शर्मापर विश्वास जम गया हो, तो उनका इलाज जारी रख। और अन्य तकलीफ़ोंसे दुःखी न होना, अब तो तुझे सीख लेना चाहिए।

सुरेन्द्रसे कहना कि यदि डॉक्टर शर्माका इलाज चल रहा हो, तो अभी उसे मेरे पास आनेकी जरूरत नही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९३८६) से। सी० डब्ल्यू० ६३१ से भी; सौजन्य : वसुमती पण्डित।

१८. पत्र : पी० निरुपमाको

२३ मई, १९३४

चि० निरुपमा,

तुमारा खत मिला। तुमारी भाषा अच्छी है। जेवर अनावश्यक हैं; जेवरसे लड़कीयां बाह्य सौन्दर्य पर मुग्ध होती है। गरीब मुल्कमें जेवरका शोख कम होना चाहिये। यह सब कारण जेवरके विरोधमें हैं।

बापूके आशीर्वाद

कुमारी पी० निरुपमा[1]
मारफत पी० मंजुनाथ नायक[2]
सुदामा कुटीर, उड़ीपी[3]

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ९२२३) से।

१, २, ३. साधन-सूत्रमें यह रोमन लिपिमें है।

१९. तार: जेल महानिरीक्षकको

सालीपुर
२४ मई, १९३४

जेल महानिरीक्षक
पूना

अभी-अभी मालूम हुआ है कि हैदराबाद जेलमें काकासाहब कालेलकरके वजनमें कमी आ गई है और वे बीमार हैं। यह भी कि खुली हवामें सोनेकी उन्हे इजाजत नही है। सही स्थितिके बारेमें कृपया तार दें।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्सट्रेक्ट्स: होम डिपार्टमेन्ट, स्पेशल ब्रांच, ८०० (४०) (४), भाग – २, पृ० १७७।

२०. पत्र: डी० के० कर्वेको

कटकके पते पर
२४ मई, १९३४

प्रिय प्रो० कर्वे,

पिछली १५ मईका आपका पत्र अभी-अभी मिला है। अगर आप और स्वर्गीय सर विट्ठलदासकी वसीयतके निष्पादकोंके बीच चल रहा झगड़ा आपसमें तय हो जाये तो मुझे बड़ी खुशी होगी। और यह आपसमें तय हो या नहीं, आपके विश्वविद्यालयके लिए चन्देके निमित्त उदार प्रतिक्रियाकी जो अपील की गई है, उसे तो मैं पसन्द करूँगा ही। यह दु:खकी बात है कि आप-जैसा अद्भुत परिश्रमी और अपने आदर्शके प्रति महान श्रद्धा रखनेवाला व्यक्ति ऐसे कार्यके लिए जिसके निमित्त उसने अपना जीवन उत्सर्ग कर दिया हो धनकी कमी महसूस करे। जिस ओरसे आपको मददकी

आशा नही है यदि उस ओरसे मदद पानेमें आपको इस पत्रसे सहायता मिल सके तो मुझे खुशी होगी।

आपका,
मो० क० गांधी

प्रो० डी० के० कर्वे
श्रीमती नथीबाई दामोदर ठाकरसी
इंडियन वीमेंस यूनिवर्सिटी
यरण्डवाना, कर्वे रोड पूना – ४

[अंग्रेजीसे]
महात्मा, खण्ड – ३, पृ० ३४४के *सामनेकी प्रतिकृति।*

२१. पत्र : जी० वी० सुब्बारावको

कटकके पते पर
२४ मई, १९३४

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। मैं 'गोष्ठी'के हर पृष्ठको तो नहीं पढ़ पाया हूँ; लेकिन सरसरी दृष्टिसे मैं इसे देख गया हूँ। अफसोसके साथ मुझे यह कहना पड़ता है कि आपकी दलीलका मेरे ऊपर कोई असर नही पड़ा। अपने सहयोगियोंके चुनावपर मुझे कोई खेद नही है। और मेरा फैसला पश्चात्ताप या दोषकी भावनासे उत्प्रेरित नहीं है। पूनामें जो फैसला हुआ वह भूल नही थी। इसके अलावा और कोई फैसला किया ही नही जा सकता था। व्यक्तिगत सविनय अवज्ञाका प्रयोग तो करना ही था। उस वक्त इसे अकेले अपने तक सीमित रखना, बहुत बड़ी गलती होती; जबकि अब वैसा न करता तो वह कायरता होती। जिन्होंने निर्णयको समझा है वे ऐसा बिलकुल महसूस नही करते कि वे चुपचाप खड़े-खड़े मुझे अपनी बलि दे देनेकी अनुमति दे रहे हैं। उनकी कुर्बानी मेरी कुर्बानीसे शायद ज्यादा कठोर होगी। तो भी आप निडर होकर अपनी आलोचना जारी रखें। कौन जानता है कि आपकी आलोचनाओंसे किसी दिन जिन्हें आप फैसलेकी बहुत-सी मेरी भूलें समझते हैं, मुझे उनकी जानकारी हो जाये। और अगर तबतक आपकी आलोचनाओंका मेरे ऊपर प्रभाव नही पड़ता, मुझे पश्चात्ताप नही होता, तो इससे क्या फर्क पड़ता है?

हाँ, गोपालकृष्णैय्याका पत्र मैंने देख लिया था।

आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत जी० वी० सुब्बाराव
मंत्री, आन्ध्र कांग्रेस स्वराज्य पार्टी
बेजवाड़ा

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३६२७) से।

२२. पत्र : चारु प्रभा सेनगुप्तको

कटकके पते पर
२८ मई, १९३४

प्रिय चारु प्रभा,

अफसोस है कि मैं बंगाल नहीं जा रहा हूँ। मैं क्या कर सकता हूँ? अगर तुम पुरीसे न गई होती तो कितना अच्छा होता। कमसे कम पहले गांव तक तो मैं तुम्हें अपने साथ पैदल चलाता ही; और मैं जानता हूँ उसके धार्मिक महत्त्वके अलावा भी तुम्हें इसमें आनन्द आता।

स्नेह।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १४९११) से; सौजन्य: ए० के० सेन। जी० एन० ८७०५ से भी।

२३. पत्र : क० मा० मुन्शीको[1]

२४ मई, १९३४

सेठ मथुरादासका तार आया है। मैं लगभग १८ जूनको बम्बई पहुँचूंगा, इसलिए जो योग्य समझो करना।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५३९) से; सौजन्य: क० मा० मुन्शी।

२४. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

२४ मई, १९३४

भाई घनश्यामदास,

यह . . .[2]का दूसरा खत है। दोनोंको ऐसे ही छोड़नेसे तो लाभ नहिं होगा। . . .[3]को घुमाना चाहिये। उसके लिये दूसरे रस पैदा करनेकी आवश्यकता पाता हूँ। . . .[4]की हालत और मुश्केल है। उसका क्या किया जाय? मैं तो इतना देखता

१. यह सन्देश सुशीला पै द्वारा इसी तारीखको श्री मुन्शीको लिखे गये पत्रमें भिजवाया गया था।
२ और ३, ४. नाम नहीं दिये जा रहे हैं।

हूं कि वह खुद अपने लिये कुछ नहिं कर सकेगा। उसको एक साथी ऐसा चाहिये जिसका कुछ प्रभाव पड़े और जिसका वह सुने।

कलकत्ते जानेका बिलकुल नहिं रहा है। अब तो मुझको मिलनेके ही लिये आओ तब ही आना। ठक्कर बापासे बातें करनेके बाद देखा जाये।

बापूके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ७९६० से; सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला।

२५. टिप्पणी

अतिशयोक्तिसे बचो

पंडित लालनाथने मेरा इस ओर ध्यान आकर्षित किया है कि अस्पृश्यता-निवारणका समर्थन करनेवाले कुछ अखबारोंने देवघरकी दुर्घटनाके बारेमें बहुत बढ़ा-चढ़ाकर लिखा है और मेरी मोटरके हुडपर लाठियाँ चलानेवाले लोगोंपर यह इलजाम लगाया है कि उनका इरादा मेरी जान लेनेका था। विरोध-प्रदर्शन करनेवालोंपर ऐसा कोई दोष नही लगाया जा सकता कि उनका इरादा मेरी जान लेनेका था। वहींसे बिना दस्तखतका एक पर्चा भी प्रकाशित हुआ है जिसमें सुधारकोंके विरुद्ध प्रदर्शन करनेवालोंको मार डालनेकी धमकी दी गई है। मै यह नही मान सकता कि यह बेनामका पर्चा किसी उत्तरदायी मण्डल या व्यक्तिने छपवाया है। जहाँतक मैं जानता हूँ, कलकत्तेमें सनातनियोंने मन्दिर-प्रवेश बिलके विरोधमें सभा इत्यादि करनेका जो दिन नियत किया था, उस दिन उनके विरुद्ध न तो कोई प्रदर्शन ही किया गया और न उन्हें कोई नुकसान ही पहुँचाया गया। फिर भी इस बातपर मैं जितना भी जोर दूं उतना थोड़ा है कि सुधारकोको मन, वचन और कर्मसे अहिंसक रहना चाहिए। उन्हें इन सनातनियोके विरोध-प्रदर्शनोंपर कोई ध्यान नही देना चाहिए। मैंने जहाँतक देखा है, जनता इन सनातनियोके विरोध-प्रदर्शनोका तनिक भी समर्थन नही कर रही है। कुछ भी हो, उनकी भावनाके प्रति आदर दिखाकर ही हमें उन्हें जीतना है। उनके कार्योंके प्रति हमें ऐसी कोई बात मुँहसे नहीं निकालनी चाहिए जिससे वे चिढ़ें या गुस्सा हो।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २५-५-१९३४

२६. क्या वे इसे करेंगे?

जबसे मैंने पैदल यात्रा आरम्भ की है, सैकडो ग्रामवासी हमारे साथ-साथ यात्रियोकी तरह चलते रहे है। कुछ अपने कष्टोकी कहानी भी सुनाते हैं। इस यात्रामे, जब मैं साखीगोपालके निकट पहुँच रहा था, बुनकरोके एक प्रतिनिधिने मुझसे कहा कि बुनकर बडे कष्टमे है, क्योकि उनके कपडेकी कोई माँग नही है।[1] मैंने उससे कहा कि यह भविष्यवाणी तो मैंने पन्द्रह वर्ष पहले ही की थी कि जबतक बुनकर मिलके सूतका व्यवहार करेंगे, तबतक मिलोकी प्रतियोगितामे ठहर नही सकते; हाथ-करघेका पोषणकर्त्ता और जीवनदाता तो चरखा ही है। इसके उत्तरमे, जहाँतक मुझे स्मरण है, पहली ही बार मैंने सुना — 'हमें हाथका कता सूत दीजिए; हम उसे बुनेंगे।'

'अवश्य, यदि तुम जैसा मैं कहूँ, वैसा करो' — मैंने कहा।

'हम करेंगे' — बूढेने जवाब दिया। वह बुनकर बूढा था और उसकी कमर झुकी हुई थी।

मुझे उसके उत्तरसे अत्यधिक प्रसन्नता हुई और मैंने कहा — 'यह बडी अच्छी बात है। पर ऐसी हालतमे मैं तुम्हे, तुम्हारी पत्नी और बच्चोंको ओटना, धुनना और कातना सिखलाऊँगा। तुम्हे तब अपने करघेके लिए काफी सूत मिल सकेगा। तुम्हे अच्छा, मजबूत और इकसार सूत कातना होगा और टूट-फूट एवं खराबीसे बचना होगा। फिर मैं उम्मीद यह करूँगा कि तुम पहली बारके कते सूतसे अपने निजी उपयोगके लिए खद्दर तैयार करो; और इसके बाद जो खादी बचेगी, उसे मैं खरीद लूँगा। मैं तुम्हारे कुटुम्बका एक सदस्य बननेका प्रयत्न करूँगा और अपने अनुभवोका लाभ तुम्हे प्रदान करूँगा। यदि तुम्हे मादक द्रव्योंका व्यसन होगा तो उसे छोड़नेको कहूँगा। तुम्हारे कुटुम्बके आय-व्ययकी मैं जाँच करूँगा और तुम्हे ऋण लेनेसे रोकूँगा।

बूढेका मुख प्रसन्नतासे चमक उठा और वह बोला — 'हम निश्चय ही आपकी सलाहके मुताबिक चलेंगे। इस समय भूखमरी मुँह बाये हमारे सामने है।' मैंने उससे कहा कि अपने कुछ साथियोंको लेकर साखीगोपालके गोपबन्धु आश्रममें ३ बजे मुझसे मिलो।

वह अपने मित्रोके साथ आया। मैंने सुबहकी बातचीतमें कही हुई बहुतेरी बातें दोहरानेके बाद कहा — मैं जानता हूँ कि तुम लोग अपने करघोको चलाने लायक सूत तुरन्त ही नही कात सकते। इसलिए शुरूमें अत्यन्त आशाजनक कुटुम्बोको मैं काफी सूत दूँगा। जबतक तुम उस सूतको बुनोगे तबतक अपने करघोको आगे काम देनेके लिए काफी सूत तैयार कर लोगे। इस दिये हुए सूतसे तुम जो पहली खादी

१. भेंट १० मई, १९३४को हुई थी।

बुनोगे, वह तुमसे ले ली जायेगी। दूसरी बारके लिए भी यदि तुम्हारे पास काफी सूत न होगा, तो कुछ सूत मैं फिर दूंगा। इसके बाद तुम्हें स्वावलम्बी हो जाना पड़ेगा। पहले तुम अपने कुटुम्बके कपड़ेकी आवश्यकता पूरी करोगे और इससे जो बचेगा उसे बेचोगे।

मैं इसे अत्यधिक महत्त्व और शक्तिका प्रयोग समझता हूँ। भारतवर्षमें कदाचित् एक करोड़ बुनकर हैं। यों तो ठीक-ठीक कितने हैं — यह कोई नहीं बता सकता, पर एक करोड़की संख्याके अनुमानमें कोई जोखिम नहीं है। यदि ये लोग बुनाईकी कलाके साथ तत्सम्बन्धी अन्य प्राथमिक कार्यों (ओटाई, धुनाई, कताई)को भी अपना ले तो ये न केवल अपने अस्तित्वको सुरक्षित कर लेंगे, वरन् खादीको भी सम्भाव्य सीमा तक सस्ती कर सकेंगे और अबतक जैसी खादी बनती आई है उसकी अपेक्षा अधिक टिकाऊ और खूबसूरत खादी तैयार कर सकेंगे।

'हरिजन'के पाठक जानते हैं कि मध्यप्रदेशमें कुछ ऐसे हरिजन बुनकर कुटुम्ब हैं, जो अपने कामके लिए रूई स्वयं धुन और कात लेते हैं। इसके साथ मैं ओटाईको भी जोड़ता हूँ। यदि बुनकर अपने हितकी दृष्टिसे बुनाईके पहलेकी सभी क्रियाओंको स्वयं ही करने लग जायें तो खादीका भविष्य सुरक्षित हो सकता है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २५-५-१९३४

२७. बातचीत: एम० आर० मसानी और ना० र० मलकानीसे[1]

२५ मई, १९३४

म०: क्या आपका मतभेद मुख्य रूपसे साधनोंके बारेमें ही है या आपको यह भी सन्देह है कि समाजवाद हिंसापर आधारित होता है?

गांधीजी: यह तथ्य ही है। इसमें सन्देहकी कोई बात नहीं। यह जरूरी नहीं कि हिंसा शारीरिक ही हो। आपकी समाजवादी पद्धति बल-प्रयोगपर आधारित है।

म०: परन्तु बल-प्रयोग उसका साध्य नहीं है। यह बहुजनहिताय ही है।

गांधीजी: हिंसा अधीरता और अहिंसा धीरताकी निशानी है। महान् धैर्यके बिना महान् परिवर्तन नहीं किये जा सकते। भावी असफलताके बीज हिंसामें विद्यमान रहते हैं। उदाहरणके लिए मान लीजिए कि १०० आदमियोंमें से पाँच इतने शस्त्र-

१; इसकी प्रस्तावनात्मक टिप्पणीमें ना० र० मलकानीने, जो गांधीजीके कार्यवाहक सचिव थे, लिखा था कि "इन टिप्पणियोंको गांधीजीने स्वीकृत किया था। यह बात २५ मई, १९३४की है। हमें सुबह सिसुआसे पातपुर तक पाँच मील पैदल चलना पड़ा . . . गांधीजी नंगे पाँव सिरपर कपड़ा रखे हुए चले। उनका दायाँ हाथ मसानीके कन्धे पर और बायाँ मेरे कन्धे पर था। उनके शब्द हमें निर्देश देते थे। उनके हाथ हमें कभी शान्त करते थे तो कभी नियंत्रित बातचीतमें 'म' मसानी और मलकानी दोनोंको ही सूचित करता हैं . . .।"

सज्जित और शक्तिसम्पन्न हैं कि अगर ९५ असहाय लोग उनका विरोध करें तो वे उनके सिर काट ले सकते हैं। वह पाँचोंकी पूरी तरह असफलता होगी। परन्तु मान लीजिए कि ९५ में से कोई एक इन पाँचोंकी हत्या करके बाकी बचे हुए ९४ की इच्छाके बिना उनपर अपना अधिकार जमा लेता है, तो आप यह नहीं कह सकते कि नया शासन सबके लिए अच्छा होगा। इसका अर्थ यह हो सकता है कि एक बुरे शासनके बाद दूसरा बुरा शासन आ जायेगा।

म० : परन्तु ९४ की इच्छा और सक्रिय सहयोगके बिना कोई अधिकार नहीं छीन सकता।

गांधीजी : हम यह मानकर चलें कि उनकी इच्छा नहीं है।

म० : परन्तु हमारी इच्छा है। समाजवादी कार्यक्रमको सब समझ सकते हैं और स्वीकार कर सकते हैं।

गांधीजी : यदि आप उडीसाके किसानसे व्यापारपर एकाधिकार और उद्योगको समाजवादके दायरेमें लानेके लिए बातचीत करें तो वह नहीं समझ पायेगा कि आप क्या बात कर रहे हैं।

म० : परन्तु गुजराती एवं दक्षिणका किसान भूमि-सुधारकी बात समझ सकता है।

गांधीजी : मैंने गुजराती किसानोंको गाँवमें साहूकारीका समर्थन करते और उसका पक्ष लेते हुए देखा है। वे इस तरहकी बातें करते हैं कि 'बनिया विपत्तिके समय उनका हित करता है। इन लोगोंमें जागृति लानेकी जरूरत है। आवश्यकतासे अधिक उच्चाकांक्षावाला कार्यक्रम रखनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। मैं व्यावहारिक व्यक्ति हूँ। आपके कार्यक्रमको जिस हदतक उनपर अमल हो सकता है उस हदतक काटकर कम कर लूंगा।

म० : आजकल रुझान कृषिके विकेन्द्रीकरणकी दिशामें है। सघन खेती छोटे पैमानेपर ही हो सकती है। परन्तु उद्योगमें रुझान बड़े पैमानेपर उत्पादन और बादमें बड़े पैमाने पर नियन्त्रणके पक्षमें है। ऐसी स्थितिमें मजदूरों और पूंजीपतियोंके बीच संघर्ष अवश्यम्भावी है। कुछ ऐसे उद्योग हैं, जिनका रुझान सदा बड़े पैमानेके उद्योग बननेकी दिशामें ही रहता है।

गांधीजी : परिवहन, बीमा, विनिमय जैसे उद्योग सरकारके ही हाथमें होने चाहिए। परन्तु मैं इस बातपर जोर नहीं दूंगा कि सभी बड़े उद्योग सरकार अपने हाथमें ले ले। मान लीजिए कि कोई समझदार और विशेषज्ञ व्यक्ति है और वह किसी उद्योगको चलानेके लिए अपनी सेवाएँ प्रस्तुत करता है; वह ज्यादा पारिश्रमिक नहीं माँगता और यह सब समाजकी भलाईके लिए करता है। तो मैं इस पद्धतिको इतनी लचकदार रखूंगा कि उक्त उद्योग ऐसे व्यक्तिको संगठित करने दिया जाये।

म० : ऐसे लचीलेपनमें मुझे भी कोई आपत्ति नहीं है, परन्तु शर्त यह है कि सारा निजी लाभ समाप्त कर दिया जाना चाहिए। यदि कोई व्यक्ति समाजके लिए काम करनेका वायदा करता है तो उसे ऐसा करनेकी अनुमति दी जानी चाहिए।

परन्तु मैं इस बातका आश्वासन चाहूँगा कि उद्योग राष्ट्रीय नीतियों पर चलाये जायें। इसलिए मैं चाहूँगा कि राज्यमें उद्योगोंका प्रतिनिधित्व क्रियात्मक आधारपर हो और हरएक व्यापारका अपना अलग प्रतिनिधित्व हो।

गांधीजी: बालिग मताधिकार पर आधारित राज्यमें यह बात निरर्थक होगी। भारत कृषि-प्रधान देश है और इसलिए बालिग मताधिकारसे खेतीको अधिक प्रधानता मिलेगी।

म०: रूसमें कुछ अलग पद्धति है। शहरी मजदूरका वोट ज्यादा कीमती होता है — चार किसानोंका वोट शहरी मजदूरके एक वोटके बराबर है। बाकी चुनाव तो हमारे कांग्रेस चुनावकी भाँति अप्रत्यक्ष होता है।

गांधीजी: मैं शहरी वोटको उस तरहकी तरजीह नही दूँगा। मैंने गोलमेज परिषद्में बालिग मताधिकार और गाँवके लोगो द्वारा वोट दिये जानेका प्रस्ताव आग्रह-पूर्वक रखा था। किन्तु वह प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया गया, क्योंकि गोलमेज परिषद् प्रतिनिधि संस्था नही थी।

म०: परन्तु कोई भी ऐसी परिषद् जिसमें भूमिपतियों और पूंजीपतियोंके प्रतिनिधि हों बालिग मताधिकारको अस्वीकार ही करेगी। वे कहेंगे कुछ, और करेंगे कुछ।

गांधीजी: तब हमे उन्हे तर्क और अनुरोधके द्वारा अपने विचारोके अनुकूल करना होगा। मैं तथाकथित वर्ग-संघर्षमें विश्वास नही करता।

म०: हम व्यक्तियोंको तो बदल सकते हैं, परन्तु पद्धतिको कभी नहीं बदल सकते। उदाहरणके लिए चम्पारनके निलहोंको ही लीजिए। वे अन्ततक नहीं माने। यदि उनपर गवर्नर द्वारा दबाव न डाला जाता तो कुछ भी न होता।

गांधीजी: मैं पक्की तौरपर ऐसा नही कह सकता। कुछ निलहे बदल गये थे। मुझे नही मालूम कि समझौतेमे निलहों और सरकारने क्या भूमिका निभायी। परन्तु यह निश्चित है कि यदि निलहोने साथ न दिया होता तो सरकार कुछ भी नही कर सकती थी।

म०: परन्तु गवर्नरका रुख अमित्रतापूर्ण होता तो उन्होंने भी अन्त तक प्रतिरोध किया होता।

गांधीजी: आप बात बदल रहे हैं। मेरा सिर्फ यह कहना है कि कुछ निलहे बदल गये थे। भारतमें यूरोपियनोंके चार वर्ग है: — व्यापारी, सैनिक, असैनिक कर्मचारी और पादरी। निश्चय ही आप यह नही सुझाना चाहते कि इन वर्गोंके लोगोंको व्यक्तिगत रूपमें नही बदला जा सकता। आप हिंसाको अलग रख दे तो आप देखेंगे कि आपमें और मुझमें अधिक अन्तर नही है। हम दोनो लाखों भूखे लोगोंका हित चाहते हैं।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ४-८-१९३५

२८. भाषण : पातपुरमें

२५ मई, १९३४

आज ७ बजे सुबह गांधीजी पातपुर पहुँचे। दल पिछली रात सिसुआमें ठहरा था।

पातपुरके भाषणमें गांधीजीने इलाकेको खादी उत्पादन करनेवाला स्थान बताया और श्रोताओंको मिलमें तैयार कपड़ेकी जगह खादी पहननेके लिए प्रेरित किया। चरखा संघने उन्हें कुछ खादी भेंट की। जनताकी ओरसे १०१ रुपयेकी थैली भेंट की गई।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, २५-५-१९३४

२९. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

ककतिया[1]
२६ मई, १९३४

प्रिय सतीशबाबू,

आपका पत्र मिला। बंगालका फैसला मुझे ठीक लगा। बरसातके बाद बंगालमें घूमकर तीन महीने बिताना मेरे लिये कितना अच्छा होता। पर चूंकि मैं बंगाल नहीं आ रहा हूँ, कलकत्ता भी नहीं, इसलिए चाहूँगा कि जिन लोगोंने मेरी इस पैदल तीर्थयात्राका अर्थ समझा है, वे चन्देकी अपनी रकमें मेरी उड़ीसाकी इस तीर्थयात्राके दौरान यहीं मेरे पास भेज दें। इसलिए आप जितना-कुछ मिल सके इकट्ठा करके मेरे पास भेज दें। भगीरथजी[2] भी, जो यहाँ आये थे, मेरी इस रायसे सहमत थे कि मैं कलकत्ता नहीं जा सकता तो भी जो चन्दा इकट्ठा हो सके वह मेरे पास भेज दिया जाये। दौरेका कार्यक्रम आपको मिल चुका है। थैलियाँ चाहे जब भेजी जा सकती हैं। अगर और कहीं नहीं, तो कमसे-कम बालासोरके पतेपर ही भेज दी जायें। वहाँ मैं तकरीबन १२ तारीखको पहुँच रहा हूँ और वही मेरा

१. कटक जिलेका एक गाँव।
२. भागीरथ कनौडिया।

आखिरी मुकाम है। थैलियाँ पहले भेजना सम्भव न हो तो बालासोर भेजना तय कर लें।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]
अमृतबाजार पत्रिका, २६-५-१९३४

३०. पत्र : क्षीरोदचन्द्र मैतीको

२७ मई, [१९३४][1]

अगर मुझे यह विश्वास हो जाये कि आपके निर्देशानुसारमें मैं लाभदायक कार्य कर सकूँगा तो मैं अन्य सारे काम छोड़कर कई महीने बंगालका दौरा करूँ। लेकिन फिलहाल मुझे यह विश्वास नहीं है।

आपका,
मो० क० गांधी

श्री क्षीरोद चन्द्र मैती
बिवत्तरहाट, मिदनापुर

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५०५८) से।

३१. पत्र : मथुरादास सेठको[2]

२७ मई, १९३४

बहुत करके मैं १४ तारीखको बम्बई पहुँच ही जाऊँगा और १९को पूना रवाना हो जाऊँगा। पक्का निश्चय तो बादमें होगा। इससे जो सम्भव हो सो कर लेना। मुझे जगह-जगह मत घसीटना। एक ही सभामें जो हो जाये सो ठीक। मैं तो वहाँ एक जगह बैठकर बातें करना और समझाना चाहूँगा। अस्पृश्यता केवल पैसेसे नहीं जायेगी; ज्यादातर लोगोंके हृदय द्रवित होंगे तभी जायेगी। इस विषयमें मैं तुमसे विचार करनेको कहूँगा।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५४०) से; सौजन्य : क० मा० मुन्शी।

१. जी० एन० रजिस्टरके अनुसार; साधन-सूत्रमें यह साफ नहीं है।
२. यह संदेश गांधीजीके निजि सचिव चन्द्रशंकर शुक्ल द्वारा क० मा० मुन्शीके नाम इसी तारीखको लिखे गये पत्रमें भिजवाया गया था।

३२. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

२७ मई, १९३४

भाई ठक्कर बापा,

मैंने कान्नानूरके गोपालनको लिखा है। वह पत्र चन्द्रशंकर अथवा बालजीने नष्ट तो नहीं किया होगा। काशी जाना, क्या तय ही हो गया है? अगर वहाँ जाना हो, तो बोर्डकी बैठक भी वहीं कर ली जाये। अब तो, इसके लिए अनेक स्थान हैं। आपके फोड़े अच्छे हो गये होंगे। हमारी गाड़ी भी चल रही है, यद्यपि बहुत अच्छी नहीं। निरन्तर काम करनेवाली रमाबहन बीमार पड़ी है। हरखचन्द[1] यहाँ नहीं है, ईश्वरलाल[2] भी नहीं है। बाकी सब नये रगरूट हैं।[3] किन्तु "जाको राखै साँइयाँ मार सकै नहिं कोय।" हिल्डापुडकी बाबत राजाको लिखा है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११३९) से।

३३. पत्र : जमनालाल बजाजको

२७ मई, १९३४

चि० जमनालाल,

मैंने मान लिया है कि तुम डॉ० सुरेश बनर्जीको सँभाल लोगे।

तुम्हारे पत्र और तारका जवाब दे चुका हूँ। तुम्हारे पास यात्राका कार्यक्रम तो है ही। वर्धा उतरनेका मन तो बहुत होता है; पर उतरा नहीं जा सकेगा। मुसाफिरीका क्रम तय हो जाने पर फिर उसीके मुताबिक चलना ठीक लगता है।

तुम्हारी तबीयत संभल रही होगी। एलविनके बारेमें मेरा पत्र[4] मिला होगा।

मालवीयजी पूनामें कार्यकारी समितिकी बैठक करनेको लिखते हैं। मेरी तारीखोंके दौरान हो तो मुझे तो दोनों समान हैं। बम्बईमें हड़ताल चल रही होगी तो मुझे

१. हरखचन्द मोतीचन्द, काठियावाड़के एक धनाढ्य जनसेवी।

२. एक आश्रमवासी।

३. गांधीजी ने यहाँ एक गुजराती मुहावरेका प्रयोग किया है, जिसका शब्दानुवाद होगा: "सब बुहारियाँ नई हैं।"

४. २१ मई, १९३४ का; देखिए पृष्ठ १६।

वहाँ रहना ही अच्छा नहीं लगेगा। पर यह तो अप्रासंगिक बात लिख डाली। बम्बई १४से १८ तारीख तक तो रहना ही है।

ओमकी[1] गाड़ी ठीक चल रही है। अनुभवसे काफी सीख रही है। पर पढ़नेमें आलस्य काफी है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९३४) से।

३४. भाषण : केन्द्रपाड़ामें

[२७ मई, १९३४][2]

उड़ीसाके गहरे अनुभवोके बाद यह कार्यक्रम मुझे बिलकुल अच्छा नही लगता। लेकिन बंगालको छोड़कर कोई प्रान्त अपने यहाँ मेरा दौरा रद्द करनेको तैयार नही हुआ। प्रायः सभी प्रान्तीय कार्यकर्त्ता यह मानते थे कि पैदल यात्रा ज्यादा लाभदायक होगी। मैंने कहा कि तीन-चार दिनोंकी पैदल-यात्रा तो हास्यास्पद ही होगी और अगर उसके साथ-साथ रेल और मोटरसे भी यात्रा की गई तो उसका नैतिक प्रभाव नही पड़ेगा। इसलिए एक समझौता किया गया और संशोधित कार्यक्रम उसीका परिणाम है। इसकी विशेषता यह है कि हर प्रान्तमें पूरी अवधि तक एक स्थान पर ही रहना है। देखता हूँ, संयुक्त-प्रान्तके मामलेमें हृदतक ठक्करबापाने छूट ली है; क्योंकि वह वास्तवमें एक प्रान्त नही है। इससे भयंकर भाग-दौड़ बच जायेगी।

संशोधित कार्यक्रम मुख्यतया कोष-संग्रहके लिए किया गया दौरा बन जायेगा, उसमें मैं अपनी बात लोगों तक नहीं पहुँचा सकूंगा। तथापि मैं चाहूँगा कि कार्यकर्त्ता इन स्थानो पर मुझसे मिले, पिछले ६ महीनेके दौरोके परिणामोंको इकट्ठा करें और कामकी भावी रूपरेखापर विचार-विनिमय करें। अगर मुझे यह ठोस कार्य करना है तो थैली लेने और सभाओंमें भाषण देनेके लिए जगह-जगह मुझे न ले जाया जाये। प्रान्तोमें अपने मुकामके दौरान मेरे कही जानेके बारेमें कोई कार्यक्रम न बने। एक सार्वजनिक सभा और जहाँ ठीक माना जाये वहाँ एक महिला-सभाके अलावा कोई दूसरा कार्यक्रम न हो। मै यथासम्भव ज्यादा-से-ज्यादा हरिजन और सनातनियोंके सम्पर्कमें आना चाहूँगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २९-५-१९३४

१. उमादेवी बजाज।
२. ८-६-१९३४को **हरिजन**में छपी "साप्ताहिक चिट्ठी" से।

३५. पत्र : वसुमती पण्डितको

२८ मई, १९३४

चि० वसुमती,

अब तो तुझे मेरे पत्र नियमसे मिल रहे होंगे। इस पदयात्रामें तो जितनी बहनें होती, सभी समा सकती थी। हां, सभी इसे बर्दाश्त कर सकती या नहीं, यह बड़ा सवाल है। मीरा शायद इस पत्रके साथ ही पहुँचेगी; सो तुझे सफरका विवरण बतायेगी। तू वहाँ अपनी व्याधियोंसे मुक्त हो सके, तो मानूंगा कि तुझे पूरी यात्राका फल मिल गया।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९३८७) से। सी० डब्ल्यू० ६३२ से भी; सौजन्य : वसुमती पण्डित।

३६. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

२८ मई, १९३४

भाई घनश्यामदास,

तुमारा प्लान पढ गया हूं। छै सफापर गवा रह गया है। भूलसे छूट गया है न?

योजना कुछ मैंचीसी लगती है। लेकिन मुझे जो बाधा आती है वह तो यह है कि उसमें प्रतिवर्षका परिणाम नहिं बताया गया है। रशियाकी योजनाकी विशेषता तो यह है न कि उसमें प्रतिवर्षका परिणाम बताया गया है और अंतमें उसकी स्वावलबिता कागद पर तो सिद्ध की गई है। ऐसा कोई प्रयत्न इस योजनामें नहिं पाता हूं।

. . .[1]के बारेमें मेरा खत मिला होगा। . . .[2]ने कल खत लिखा उसमे ऐसा है कि. . .[3] मेरे पास आ रहा है। आयेगा तो अच्छा ही है। . . .[4] व्याकुलचित है इसमें शक नहिं है। तुमारी तबीयत ठीक होगी।

१. से ४. नाम छोड दिये गये हैं।

मुझे तो यात्रा बहुत अच्छी लगती है। शरीरमें थकान होनेके कारण देहातोंमें घूम नहिं सकता हूं इतना दुःख रहता है सही।

वापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

कलकत्तेकी थैली यहां किसी मुकामपर मिलनी चाहिये। यात्रामें दूसरे प्रान्तोका अनुसंधान नहिं पाता हूँ।

सी० डब्ल्यू० ७९६१ से; सौजन्य : घनश्यामदास विड़ला।

३७. पत्र : अमतुस्सलामको

२८ मई, १९३४

प्यारी वेटी अमतुल सलाम,

तुम सच कहती हो कि मेरे नजदीक अमीर और लिखे-पढ़े लोग रह सकते हैं। अमीरको फकीर वनाने है और लिखे-पढ़ोके हाथमें झाड़ू रखना है। तुमको साथ क्यों रखूं? ज्यादा फकीर वनानेके लिए? या तुम्हारे हाथमें झाड़ू रखने के लिए? पटनामें क्या था? तुम्हारे भाषण करने थे?[1] तुम्हारे सेवा करनी हो तो शान्त होना होगा। तुम्हारा तार मिल गया था। क्यों आपरेशन मौकूफ किया गया? तुम्हारे खतसे पता लगेगा। हां, अच्छा तो होगा अगर अम्माजानकी वात मानकर शादी कर लेती। कुमारिका रहनेके वास्ते तुम्हारेमें जो एकाग्रता चाहिये सो कहां है? हर किस्मके खयाल आते रहते हैं। कोई एक चीज पर दिल नही लगता। कुमारिका रहना है तो बिलकुल शान्त हो जाओ। हिन्दी कव सीख लेगी? गुजराती भी अव तो जानना चाहिये। वोल, अव क्या करेगी? मै १४ तारीखको वम्बई पहुँचूंगा, १८ तक रहूँगा। वाद पूना। पूनामें ६ दिन रहूँगा। पीछे अहमदावाद। अच्छी हो जाओ। नादानीकी वात छोड़ दो।

वापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०६) से।

१. अमतुस्सलामकी बड़ी इच्छा थी कि वह गांधीजीके साथ रहे। उसने छींटा-कशी करते हुए लिखा था कि उस-सरीखी अपढ़के लिए उनके पास जगह कहाँ।

३८. एम० आर० मसानीके समाजवादी कार्यक्रम पर विचार

[२९ मई, १९३४][1]

मैं कांग्रेसमें समाजवादी दलके अभ्युदयका स्वागत करता हूँ। परन्तु मैं यह नहीं कह सकता कि जो कार्यक्रम इस छपी हुई पुस्तिकामें दिया गया है, मैं उसे पसन्द करता हूँ। मुझे ऐसा लगता है कि यह भारतीय परिस्थितियोंको ध्यानमें रखे विना बनाया गया है। इसके बहुत-से प्रस्तावोंमें अन्तर्निहित कुछ धारणाएँ मुझे पसन्द नहीं हैं। उनसे यह ध्वनित होता है कि कुछ वर्गों और जनतामें, मजदूरों और पूँजी-पतियोंके बीच ऐसा एक विरोध है ही कि वे आपसी हितके लिए कभी काम नहीं कर सकते। मेरा निजी दीर्घ अनुभव इसके विपरीत है। जरूरत इस बातकी है कि मजदूर और कारीगर अपने अधिकारोंको जानें और उन्हें यह भी मालूम हो कि वे किस तरह अपने अधिकारोंको दृढ़तासे पेश करें।[2]

"भारतीय नरेशोंका शासन समाप्त करना" उस अधिकारकी बात करना है जो दलके पास है ही नहीं या अगर है भी तो उतना भी जितना पुर्तगाली और फ्रांसीसी भारत कहे जानेवाले प्रदेशसे, पुर्तगाली और फ्रांसीसी शासन समाप्त करनेका अधिकार। यह बात दुर्भाग्यपूर्ण मानी जा सकती है, परन्तु भारतका यह विभाजन एक ऐसा तथ्य है जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। इसलिए निश्चित रूपसे जिसे ब्रिटिश भारत कहते हैं, उसपर ध्यान केन्द्रित करना ही हमारे लिए काफी होगा। किसी भी दलके कार्यक्षेत्रके लिए यह भू-भाग काफी बड़ा है। ब्रिटिश भारतमें किसी भी दलकी सफल गतिविधियोंका भारतके दूसरे भागोंपर असर पड़े बिना नहीं रहेगा। सिद्धान्ततः भी मैं राजाओंका शासन समाप्त करनेके पक्षमें नहीं हूँ। बल्कि मैं जनतन्त्रकी सच्ची भावनाके अनुरूप उनमें सुधार और संशोधन करनेकी बातमें विश्वास रखता हूँ।

"प्रगतिशील और प्रबुद्ध दलके नाते विदेशी सरकार द्वारा भारतके लिए लिये गये तथाकथित सरकारी कर्जेको अमान्य करना" एक अत्यन्त अस्पष्ट एवं अति-व्याप्तिपूर्ण वक्तव्य है। कांग्रेसने एकमात्र वास्तविक एवं राजनीतिक दृष्टिसे सम्यक् प्रस्ताव रखा है। उसने कहा है कि इससे पहले कि भारतकी भावी स्वतन्त्र सरकार इसके किसी भी अंशका भार लेना स्वीकार करे, यह तथाकथित सारा सरकारी ऋण एक निष्पक्ष अधिकरणके सुपुर्द किया जाये।

"उत्पादन, वितरण और विनिमयके सब साधनोंका उत्तरोत्तर राष्ट्रीयकरण" इतना अतिव्याप्तिपूर्ण है कि इसे स्वीकार नहीं किया जा सकता। रवीन्द्रनाथ ठाकुर

१. देखिए अगला शीर्षक।

२. यह अनुच्छेद एम० आर० मसानीको लिखे गांधीजीके १४ जून, १९३४ के पत्रमें भी है।

साहित्य-सृजनके आश्चर्यजनक साधन है। मुझे नही मालूम कि क्या वह अपना रॉष्ट्रीयकरण स्वीकार करेंगे।

जहाँतक "विदेशी व्यापारपर सरकारके एकाधिकार" का सम्बन्ध है क्या सरकारके पास जो अधिकार होगे उनसे उसे सन्तोष नही होगा? क्या सरकारको बिना यह सोचे-समझे कि ऐसे प्रयोगकी आवश्यकता है या नही इन अधिकारोका तत्काल प्रयोग करना ही चाहिए?

"किसानों और मजदूरो पर जो कर्ज है उसको रद्द कर देना" एक ऐसा प्रस्ताव है जिससे कर्ज लेनेवाले स्वयं सहमत नही होगे। क्योकि ऐसा करना आत्मविनाशका सूचक होगा। जरूरी यह है कि कर्जोकी जाँच की जाये। मुझे मालूम है कि उनमें कुछ कर्जे जाँच करने पर गलत साबित हो जायेंगे।

मुझे चाहिए कि मै लोगोंको मितव्ययिताकी आदत डालना सिखाऊँ। यदि मै उन्हे यह सोचने दूँ कि बुढ़ापा, बीमारी; दुर्घटना और इस तरहकी दूसरी चीजोके बारेमे निरोधक उपाय अपनानेकी दृष्टिसे उनका कोई दायित्व नही है, तो क्या उन्हें अपाहिज बनानेका दोष मुझे नही लगेगा?

"हड़ताल करनेका अधिकार", इस वाक्यांशको मै नही समझ पाया हूँ। यह उन सभीका अधिकार है जो हड़तालके कारण आनेवाले खतरे उठानेके लिए तैयार है।

"राज्यसे अपनी देख-रेख एवं भरण-पोषण प्राप्त करनेके बच्चोके अधिकार" का अर्थ क्या यही है कि माता-पिता अपने बच्चोकी देख-रेख एवं भरण-पोषणके उत्तरदायित्वसे मुक्त हो जाते है?

"जमीदारीकी समाप्ति" का स्पष्टत: अर्थ यह है कि धारा १३ में जमीदारी और ताल्लुकेदारीके भू-खण्डोंको छीन लिया जाये। मै जमीदारी उन्मूलनके पक्षमें नही, अपितु जमीदारो और काश्तकारोके सम्बन्धको न्यायोचित तरीकेसे विनियमित करनेके पक्षमें हूँ।

यदि आप सारी धार्मिक स्थायी निधियोंको व्यवस्थित और नियन्त्रित करें तो आप "धार्मिक विषयोके राजनीतिमें सम्मिलित किये जानेका" विरोध कैसे कर सकते है? वास्तवमे हम धर्मके मामलेमे पूरी तरह निरपेक्ष रहना चाहते है। परन्तु जब राज्यमें किसी एक धर्मको माननेवाले किसी तरहका कोई आन्तरिक सुधार चाहें, जिसके बिना उनके लिए उन्नति करना असम्भव हो, तो राज्यकी ओरसे सहायता अनिवार्य हो जायेगी।

आपके छपे हुए कार्यक्रमपर सरसरी दृष्टि डालने पर ये कुछ विचार मेरे मनमें आते हैं।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४८८३) से; सौजन्य: एम० आर० मसानी। जी० एन० ४१२५ से भी।

३९. पत्र : एम० आर० मसानीको

(मुकाम) केन्द्रपाड़ा
२९ मई, १९३४

प्रिय मसानी,

यह रहा मेरा उन सवालोका[1] उत्तर जिन्हें तुम मेरे पास छोड़ गये थे। तुम्हें इसमें अपने सारे सवालोके जवाब मिल जायेंगे। अगर तुम्हारा कार्यक्रम अच्छा होता तो प्रथम अखिल भारतीय कांग्रेस समाजवादी सम्मेलनमें[2] स्वीकार किये गये प्रस्तावोंके विरुद्ध मैं कुछ न कहता। लेकिन दिये गये कारणोंसे वह मुझे ऐसा नही लगता। प्रस्ताव शायद शब्दाम्डबरपूर्ण है, शब्द-बाहुल्य तो उसमें है ही। जरूरत पड़ने पर मुझे लिखनेमें सकोच न करना।

तुम्हारा,
मो० क० गांधी

श्री एम० आर० मसानी
मार्फत "द सन"
१३९ मीडोस स्ट्रीट
पो० बा० नं० ६२, फोर्ट, बम्बई

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४८८३)से; सौजन्य : एम० आर० मसानी। जी० एन० ४१२५ से भी।

४०. भाषण : केन्द्रपाड़ामें

२९ मई, १९३४

मैं हरिजन भाइयोके मनसे सब तरहका हीन-भाव मिटा देने पर तुला हुआ हूँ। हरिजन सुधार आन्दोलनके विरोधियो द्वारा इसी हीन-भावका फायदा उठाया जाता है और इसी हीन-भावके कारण हरिजन समाजमें अपने अपमानजनक और बिलकुल अनुचित दर्जेको चुपचाप स्वीकार करते रहते हैं।

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२. आचार्य नरेन्द्रदेवकी अध्यक्षतामें ११ मईको पटनामें हुआ था।

आगे बोलते हुए गांधीजीने अपने श्रोताओंसे कहा कि अपने प्रतिदिनके जीवनमें आपका इस प्रकार आचरण आवश्यक है जिससे कि आप अपने तथाकथित सवर्ण साथियोंके साथ बराबरीके व्यवहारके पात्र बन सकें। गांधीजीने कहा कि इसके लिए यह जरूरी है कि हरिजन मुर्दार-मांस खाना बन्द कर दें और अस्वच्छता और शराबखोरीको पूरी तरह छोड़ दें।

महात्माजीके शिविरमें आज एक मर्मस्पर्शी दृश्य उपस्थित हुआ। एक आश्रम-वासी महिला अपने किसी निकट सम्बन्धीकी मृत्युका समाचार पाकर रोने लगी। गांधीजीने उसे सान्त्वना दी और कहा कि मृत्युपर विजय पानेका सबसे अच्छा उपाय उसपर ध्यान न देना ही है। उन्होंने खादी-प्रतिष्ठानके श्रीयुत सतीशचन्द्र दासगुप्तका उदाहरण देते हुए कहा कि उन्होंने अपने पुत्रकी मृत्युका समाचार सुननेपर भी क्षण-भरके लिए भी चरखा कातना नहीं छोड़ा था। उन्होंने कहा कि यह सच्ची वीरताका उदाहरण है और मैं चाहता हूँ कि राष्ट्रका प्रत्येक सेवक इस उदाहरणका अनुसरण करे।

[अंग्रेजीसे]
अमृतबाजार पत्रिका, २९-५-१९३४

४१. भेंट: एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको

२९ मई, १९३४

एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिने एक भेंटमें गांधीजीसे पूछा, "क्या आपने बंगालका दौरा निश्चित रूपसे रद्द कर दिया है? श्री गांधीने कहा:

बंगालका दौरा मैंने रद्द नहीं किया है। मैंने यह मामला बंगाल-मंडल पर ही छोड़ दिया है और उनके सामने अपनी कठिनाइयाँ रख दी हैं। उन्होंने पहले मुझे जिलोंका दौरा करनेसे मना किया। यद्यपि मेरा खयाल सिर्फ कलकत्ता जानेका नहीं था, तो भी मैंने कहा था कि यदि कभी जरूरी हुआ तो मैं कुछ दिनोंके लिए कलकत्ता चला जाऊँगा। बंगाल-मंडलका भी यही मत था और उन्होंने निर्णय किया कि यदि मैं बंगाल जाऊँ तो मुझे वहाँ तीन महीनेके लिए जाना चाहिए। क्योंकि यह सम्भव नहीं था, इसलिए कलकत्तेका कार्यक्रम रद्द कर दिया गया। मैं निश्चय ही तीन या तीनसे भी ज्यादा महीनोंके लिए बंगाल जाना चाहूँगा। परन्तु नहीं मालूम ऐसा अवसर मुझे अपने जीवन-कालमें मिलेगा या नहीं।

उनसे एक अन्य प्रश्न पूछा गया: "क्या पूना-समझौतेपर बंगालके हिन्दू नेताओंसे बातचीत करनेका आपका इरादा है और क्या पूना-समझौतेपर अब भी बातचीत की जा सकती है और उसमें संशोधन हो सकता है? श्री गांधीने कहा:

पूना-समझौतेपर बंगालके हिन्दू नेताओंसे बातचीत करनेके लिए मैं हमेशा तैयार हूँ। सारे दल सहमत हों तो सब कुछ हो सकता है। जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, ऐसा कोई काम नहीं हो सकता जो हरिजनोंके प्रति न्यायसंगत न हो।

उनसे पूछा गया, यदि अछूत मन्दिरोंमें प्रवेश करनेके अधिकारके लिए सत्याग्रह शुरू कर दें तो क्या आप उसका समर्थन करेंगे। क्या अछूतोंको मन्दिरोंमें पूजा करनेका पूरा अधिकार है? गांधीजीने कहा:

मेरा यह विश्वास अवश्य है कि हरिजनोको मन्दिरोमें पूजा करनेका उतना ही अधिकार है जितना अन्य हिन्दुओको। लेकिन मै अधिकार जतानेके लिए ताकत इस्तेमाल करनेके हकमें नही हो सकता। सत्याग्रहके बहुत-से अर्थ लगाये जाने लगे है। इसलिए मैं जानना चाहूँगा कि जो सत्याग्रह किया जानेवाला है वह किस किस्मका होगा। सुधारक रूढिवादी लोगोको अपनी आपत्तियाँ हटानेके लिए मनानेका भरसक प्रयास कर रहे है। ऐसी स्थितिमें हरिजनो द्वारा सत्याग्रह किया जाना किसी भी हालतमें सही नही माना जायेगा।

यह पूछे जानेपर कि क्या आप पुरीके जगन्नाथ-मन्दिरमें अछूतोंके प्रवेशके सम्बन्धमें उनका नेतृत्व करेंगे, श्री गांधीने उत्तर दिया:

सालो पहले जैसे पुरीका मन्दिर हरिजनोके लिए खुला था, वैसे ही अब भी हरिजनोके लिए खोल देनेका महत्त्व मैं समझता हूँ। मेरे पास इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है कि जबतक हरिजनोने इसके लिए अधिकार जताना शुरू नही किया था, तबतक वह मन्दिर उनके लिए खुला था। परन्तु मैं मन्दिरको खुलवानेके सम्बन्धमे यह कहनेके अलावा कोई नेतृत्व नही करूँगा कि इसके लिए जनमत तैयार किया जाये।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ३०-५-१९३४

४२. पत्र : चारु प्रभा सेनगुप्तको

३० मई, १९३४

प्रिय चारु प्रभा,

तुम्हारा पत्र मिला। बेशक तुम जिस मुकाम पर चाहो मुझसे आ मिलो। मेरा कार्यक्रम[1] तो तुम जानती हो न? ६ तारीखको मैं भद्रक पहुँच रहा हूँ।

सस्नेह।

बापू

श्री चारु प्रभा सेन
राजबाड़ी (बंगाल)

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १४९२) से; सौजन्य: ए० के० सेन। जी० एन० ८७०६ से भी।

१. जिस पोस्टकार्डपर यह पत्र है, उसके पीछे किन्हीं अन्य सज्जनके अक्षरोंमें ४ जूनसे १२ जून तकके १३ मुकाम सूचित किये गये है।

४३. पत्र: वल्लभभाई पटेलको

वेरीमूल, (उत्कल)
३० मई, १९३४

भाई वल्लभभाई,

यद्यपि आज बुधवार है, इस बार आपका पत्र अभी तक नहीं मिला।

नये जहाजमे बनते ही दरार पड़ गई है। चलेगा तो जरूर, मगर दरारवाला जहाज किनारे पहुँच जाये तब ही। चौकड़ी[1] फिर बम्बईमें १५ तारीखको मिलेगी।

राजेन्द्रबाबूके बड़े भाई महेन्द्रबाबू काफी बीमार हैं। शायद ही बचें। यदि वे चल दिये तो राजेन्द्रबाबू पर एकदम भारी जिम्मेदारी आ पड़ेगी। राजेन्द्र बाबूको लिखिये।

सेरेसोल, अगाथा और म्यूरियल १५ तारीखको रवाना हो रहे हैं। तीनोंने काफी अनुभव ले लिया। सेरेसोल फिर अक्तूबरमें लौट आयेंगे। दूसरे साथियोंको लायेंगे। बिहारका काम ठीक चल रहा है। जमनालालजी अच्छी देखरेख रखते हैं। वे म्यूरियलको लेकर . . .[2] के पास गये हैं। अनन्तपुर होकर वर्धा जायेंगे।

बापाकी जगह अब मलकानी है। देवदास पटनामें था। काफी तगड़ा हो गया है। विवाह और दिल्ली उसके लिए अनुकूल सिद्ध हुए हैं। रामदास जैसा था वैसा ही; कुछ बेहतर ही है।

मणि (जेलमें) काफी कड़ी परीक्षामेंसे गुजर रही दीखती है। काकाकी भी परीक्षा हो रही है। वे बीमार थे। अब कुछ ठीक हैं, ऐसा तार आया था।

सुशीला, प्रभावती और ओम पत्र लिखती रहती है, इसलिए छुटपुट खबरें तो आपको मिलती ही होगी। ऐसा कह सकते है कि यहाँकी गर्मी अहमदाबादको भी मात देनेवाली है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो : २ – सरदार वल्लभभाईने, पृ० १०४

१. कांग्रेस संसदीय बोर्डके पण्डित मदनमोहन मालवीय, डॉ० अन्सारी, डॉ० विधानचन्द्र राय और श्री भुलाभाई देसाई।

२. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिया गया है।

४४. भेंट : उत्कलके कार्यकर्त्ताओंसे

३० मई, १९३४

यह पूछे जानेपर कि क्या स्वराज्य संसदीय बोर्डके गठनसे, जिसमें उत्कलका प्रतिनिधित्व नहीं है, आप सन्तुष्ट हैं, महात्मा गांधीने कहा :

मेरा इससे कोई खास सम्बन्ध नहीं है, और न बोर्डके पदाधिकारियोंके चुनावसे ही। मेरे बारेमें दी गई प्रेसकी तत्सम्बन्धी सूचना भ्रामक है। इसकी सारी जिम्मेदारी केवल मालवीयजी और डॉ० अंसारीने अपने ऊपर ले रखी है।

उत्कलके लोगोंमें बोर्डमें उनके प्रतिनिधित्वकी सम्बन्धी उपेक्षाके कारण जो असंतोष है, उनके बारेमें उन्होंने कहा :

मैं तो इस विचारधाराका हूँ कि जो लोग रचनात्मक कार्य कर सकते हैं उन्हे बोर्डमें प्रतिनिधित्वके लिए परेशान नहीं होना चाहिए। परन्तु अगर आप इसे बहुत ज्यादा महत्त्व देते हैं तो आपको दृढताके साथ लिखना चाहिए कि कमसे-कम एक स्थान पानेका तो आपको अधिकार है ही।

आगे उन्होंने उत्कलके कार्यकर्त्ताओंको सुझाया कि मेरी सेवाओंको ऐसे कार्योंमें लगानेके बदले आपको उनका उपयोग बाढ़-समस्याको सुलझानेमें करना चाहिए, जिसके बारेमें मैं दिन-रात सोचा करता हूँ और वह अधिक उपयोगी भी है। बाँधोंकी मरम्मत, जिसपर सरकारने रोक लगा दी है, सबसे बड़ी समस्या है। इसके बारेमें उत्कल के लोगोंके हर प्रतिनिधिको सोचना चाहिए। इसके हल के लिए मैं एक कुशल इंजीनियरको जाँच-पड़तालके लिए लिख रहा हूँ। मुझे विश्वास है कि अगर कोई हल सुझाया जा सके तो सरकार उसकी उपेक्षा नहीं करेगी।

[अंग्रेजीसे]
अमृतबाजार पत्रिका, १-६-१९३४

४५. पत्र : जमनालाल बजाजको

३१ मई, १९३४

चि० जमनालाल,

द्वारकानाथ पर बोझ बढ़ गया है। उससे सब समझ लीजिए और उसका बोझ हल्का कीजिए। मनोहर और केशूकी बाबत वे जो कहें सो सुनकर तथा गहरेमें उतरकर जो उचित हो सो कीजिए। मनोहर एकाएक बगीचेमें रहने क्यों चले गये? इस बातकी भी जाँच कीजिए कि शर्मा क्या बहुत बोझ अपने सिर ले लेते हैं। बम्बईमें इस विषयमें बात करनेका समय निकालना ही पड़ेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९३५) से।

४६. पत्र : हरिभाऊ उपाध्यायको

३१ मई, १९३४

भाई हरिभाऊ,

आपके पुत्रके देहान्तकी खबर अभी-अभी मिली। इस राजमार्गसे तो सबको देर या सबेर जाना ही है। किन्तु यदि आप दोनोंको इसका शोकका मनाना ही हो तो पूर्ण संयमका पालन करके मनाइए। इतना याद रहे, कि सविनय अवज्ञाके जो कठोर नियम हैं, अब उनका पालन अधिक सावधानीके साथ करना होगा।

आपका पत्र मिला था। उसका अर्थ यही है न कि मुझे भी सविनय अवज्ञा आन्दोलन बन्द करके प्रेमका प्रदर्शन करना चाहिए? जरूरत मालूम पड़े तो यह भी करूँ। किन्तु मैं इसकी जरूरत नहीं देखता। सरकारी पक्षको दुःख हुआ है। उसका कारण सविनय अवज्ञा नहीं है, वरन् उसके नामपर जो अविनय हुई है, वह है। हिंसावादियोंके लिए प्रेम-प्रदर्शनका सवाल नहीं था, न अब है। उन्होंने हमारी अहिंसा नहीं देखी, हमारी सूक्ष्म हिंसा देख ली, और निष्कर्ष यह निकाला कि हमारी सूक्ष्म हिंसा हमारी कायरताके कारण है; और इसलिए उनकी बहादुरीकी हिंसा ही इससे अच्छी। इस प्रकार, हमारी अवज्ञाके विनयहीन होनेसे दोनों पक्षोंमेंसे एक भी उसे ठीक समझ नहीं सका। समझ गये न?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ६०७९ से); सौजन्य : हरिभाऊ उपाध्याय।

४७. पत्र : हीरालाल शर्माको

३१ मई, १९३४

भाई शर्मा,

आस्ते चलना। द्वारकानाथजी कहते है बहुत बोज उठाते हो। शायद सुरेन्द्रके खतमें भी कुछ ऐसी शिकायत थी। यथाशक्ति सेवा लेने करनेमें सबको और सर्व प्रकारसे लाभ है। मुझे लिखा करो। खानेमें दूध इ० की जरूर रहे इतना लेनेका धर्म समजो।

द्रौपदीदेवीने अब तक मेरे पत्रका उत्तर नहिं दिया है।

बापूके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० ६८ और ६९ के मध्य की प्रतिकृति से।

४८. पत्र : अमतुस्सलामको

३१ मई, १९३४

प्यारी बेटी अमतुलसलाम,

तुम्हारा खत मिला। अस्पतालमें गई और आपरेशन नही हुआ वह कैसे? मै जून माह १४ को बम्बई पहुँचता हूं। कैसा अच्छा होगा अगर आपरेशन हो जाये! मेरे साथ चलनेके बारेमें तुमको लिख चुका हूं। आपरेशनसे इतना क्यों डरती हो? खुदा पे इतना एतबार नही है?

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०७) से।

४९. असममें कुली-समस्या

असममें मेरे दौरेके दौरान एक पत्रलेखकने अपने उद्गार उपरोक्त शीर्षकसे मेरे पास भेजे थे। नीचेका अंश मैंने उसी पत्रसे लिया है।[1]

पत्र-लेखककी ज्यादातर बातोंकी पुष्टि मेरे अनुभवसे होती है। यह 'कुली' शब्द ही एक बिलकुल असंगतिपूर्ण शब्द है और यह हमें दक्षिण आफ्रिकाकी स्थितिका स्मरण कराता है। वहाँ इस शब्दका अर्थ श्रमिक या बोझा ढोनेवाला व्यक्ति नहीं रह गया है, बल्कि इसका प्रयोग उसकी राष्ट्रीयताका बोध करानेके लिए किया जाने लगा है और यह एक कलंकसूचक शब्द बन गया। भारतीय व्यापारी, वकील या डाक्टर कुली व्यापारी, कुली वकील आदि कहलाने लगा। इसी तरह असममें जो भारतीय दूसरे प्रान्तोंसे चाय बागानोंमें काम करनेके लिए आता है, मजदूरके रूपमें उसका ठेका समाप्त होने पर भी तथा मजदूरी पेशा छोड़कर जमीन का मालिक बन जाने पर भी वह कुली ही कहलाता है। परिश्रमी होनेकी वजहसे वह सारे असममें फैल गया है; तो भी वह समाजसे बाहर समाजच्युत होकर रहता है। वहाँकी आत्मघाती नीति ही ऐसी है, जिसकी वजहसे उसे इस तरह रहना पड रहा है। असमसे बाहर तो उसे निकाला नही जा सकता। उसकी बहुत ज्यादा उपेक्षा की गई है जिससे उसकी जबर्दस्त आर्थिक हानि हुई है। अगर इनकी अच्छी देखभाल की गई होती तो वे आज प्रथम श्रेणीके लोगोके समान होते। असमके पढ़े-लिखे लोगोंका यह कर्त्तव्य है कि वे इस समस्याका अध्ययन करें और सभी सम्बन्धित लोगोके हितके लिए इसे सुलझाएँ। धनकी इसमें उतनी जरूरत नही है जितनी कि बुद्धि और परिश्रम की।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १-६-१९३४

१. यहाँ नहीं दिया गया है। पत्र-लेखकने तथाकथित कुलियों तथा दलितवर्गों द्वारा झेले जा रहे असम्मान और उसे दूर करनेकी जरूरतकी ओर गांधीजीका ध्यान खींचा था। उनके जीवनस्तरको उठाने तथा समाजमें उन्हें मान्यता दिलानेके लिए एक कार्य-योजना लागू करवानेको उसने अनुरोध किया था।

५०. अस्पृश्यता जिस रूपमें आज है

'हरिजन' के सम्पादकने मेरे पास एक सज्जनका पत्र भेजा है। पत्र-लेखकने अपना नाम व पता दिया है, लेकिन वह उसे पाठकोके प्रति प्रकट नहीं करना चाहता। वह लिखता है:

> **९ मार्चके 'हरिजन'में मैंने देखा कि गांधीजीने अपने भाषणमें यह कहा है कि 'अस्पृश्यताके समर्थनमें कोई शास्त्रीय प्रमाण नहीं है'। महात्माजीके इस आन्दोलनका समर्थन करनेवाले सबसे धुरन्धर पण्डितोंमें एक हैं, काशी-हिन्दू विश्वविद्यालयके महामहोपाध्याय श्री प्रमथनाथ तर्कभूषण। गत वर्ष उन्होंने गांधीजीको अस्पृश्यता-निवारणके पक्षमें जो पत्र लिखा था, वह उन्होंने प्रकाशित कर दिया है। तर्कभूषणजीने उस पत्रमें लिखा है कि अस्पृश्यताके समर्थक श्लोक शास्त्रोंमें मिलते तो हैं, पर ऐसे भी श्लोक मौजूद हैं जिनमें कहा गया है कि मन्त्र-दीक्षा और भगवद्भक्तिके द्वारा अस्पृश्य जन भी शुद्ध हो सकते हैं। इस तरह तर्कभूषणजीके कथनानुसार तो जिन चांडालोंको मन्त्र-दीक्षा नहीं दी गई और जो भगवानके भक्त नहीं हैं, वे शास्त्रीय दृष्टिसे अस्पृश्य हैं। इसलिए गांधीजीके इस मतका समर्थन तर्कभूषणजी नहीं कर रहे हैं कि 'अस्पृश्यताके समर्थनमें कोई शास्त्रीय प्रमाण नहीं है।'**
>
> **क्या आप कृपाकर बतायेंगे कि किन पण्डितोंने गांधीजीसे यह कह दिया है कि अस्पृश्यताके समर्थनमें कोई शास्त्रीय प्रमाण नहीं है?**
>
> **गांधीजीने पहले खुद ही लिखा था कि सनातनियोंने ऐसे अनेक श्लोक उन्हें बताये हैं जिनसे अस्पृश्यताका समर्थन होता है, पर उन श्लोकोंको प्रामाणिक इसलिए नहीं मानते कि वे सदाचारके मूल सिद्धान्तोंके प्रतिकूल हैं।**
>
> **अब गांधीजीके इस हालके वक्तव्यका, कि अस्पृश्यताके समर्थनमें कोई शास्त्रीय प्रमाण नहीं है, उनके उस पहले कथनके साथ कोई मेल नहीं बैठता, कि अस्पृश्यताके समर्थनमें श्लोक तो हैं, पर सदाचारके प्रतिकूल होनेके कारण वे उनकी प्रामाणिकता स्वीकार नहीं करते।**
>
> **इस प्रत्यक्ष असंगतिके सम्बन्धमें क्या आप कृपाकर 'हरिजन'के स्तम्भोंमें कुछ स्पष्टीकरण करेंगे?**

मैंने ९ मार्चके 'हरिजन'से उद्धरणकी जाँच नही की है। लेकिन यह तो सभी जानते हैं कि आजकल अस्पृश्यताके विषयमें जब भी मैं बोलता हूँ, तो मेरा मतलब अस्पृश्यताके उस रूपसे होता है जिस रूपमें कि वह आज बरती जाती है अथवा

उसका जो अर्थ हम आज समझते हैं। जो बात मैंने हजारों सभाओंमें कही है, वही फिर कहता हूँ कि आज हम जिस अस्पृश्यताका पालन कर रहे हैं, उसके समर्थनमें कोई शास्त्रीय प्रमाण नही है। महामहोपाध्याय श्री प्रमथनाथ तर्कभूषणने मुझे जो पत्र लिखा था, उसका मुझे भली भाँति स्मरण है। इस अमिट अस्पृश्यता सिद्धान्तके खण्डन में उन्होंने बड़ा ही प्रबल तर्क दिया है। उनका वह पत्र मेरे कथनका इस अर्थमें समर्थन करता है कि कोई भी अस्पृश्य सदाके लिए अस्पृश्य नही वना रह सकता। एक बार यह मानते ही कि केवल द्वादशाक्षर (ॐ नमो भगवते वासुदेवाय) मन्त्रका उच्चारण करने से कोई भी अस्पृश्य 'स्पृश्य' हो सकता है, अस्पृश्यताका गढ़ ढह जाता है। अपने पक्षके समर्थनमे मैं सनातनियोका भी नाम इसलिए लेता हूँ कि जैसी अस्पृश्यता आज मानी या वरती जाती है, उसके समर्थनमें सनातनियोंने अवतक एक भी शास्त्रीय वचन उपस्थित नही किया। अब जनगणनाका गोरखधन्धा लीजिए। जननणनाके कागजोंमे एकवार जो जातियाँ अस्पृश्य शुमार कर ली जाती हैं, दूसरी बार वे ही स्पृश्य मान ली जाती है और दूसरी कुछ जातियाँ अस्पृश्य गिन ली जाती हैं। निश्चय ही शास्त्रोमें ऐसा कोई प्रमाण नही है जिससे लोगों पर अस्पृश्यताकी छाप लगा देनेवाले जनगणनाके इन आँकड़ोंको हम स्वीकार कर लें। और आज हम जिस अस्पृश्यताका पालन कर रहे है उसका सम्बन्ध तो सिर्फ उन्ही करोड़ो नर-नारियोसे है जो जनगणनाके कागजोमें अस्पृश्य दर्ज कर लिये गये हैं। इसी प्रकार उन बेचारोंके साथ उनके प्रान्तों या जिलोंमें जैसा वरताव किया जाता है, उसके लिए भी शास्त्रोंमें कोई आधार नही है। मैंने यह अवश्य कहा है कि सनातनियोंने जिस अस्पृश्यताका वर्णन किया है, उसके समर्थनमें प्रस्तुत किये गये शास्त्रवचन हिन्दूधर्मके मूल सिद्धान्तोके विरोधी हैं। इसलिए खुद शास्त्रोंके ही वताये हुए शास्त्रार्थके नियमोके अनुसार, ऐसे वचनोंको अप्रामाणिक मानकर ग्रहण नही करना चाहिए। इसलिए जब मैं यह कहता हूँ कि जो अस्पृश्यता आज वरती जाती है उसके समर्थनमे कोई शास्त्रीय प्रमाण नही है, तो उससे मेरे किसी लेख या कथनमें कोई असंगति नही आती। हाँ, स्वच्छताके लिए एक तरहकी अस्थायी अस्पृश्यता माननेके प्रमाण शास्त्रोमें काफी मिलते है। पर यह अस्पृश्यता वह अस्पृश्यता नही है जो वुद्धि या सदाचारकी विरोधी हो। मै जिस अस्पृश्यताके खिलाफ लड़ रहा हूँ, वह तो अन्तरकी वह कलंक-कालिमा है जो जन्मके साथ ही लगी आती है और लाख धोओ, पर छूटती नही।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १-६-१९३४

५१. पत्र : तारा जसवानीको

१ जून, १९३४

चि० तारा,

तीन वरसमे पत्र लिखती है, इसके लिए क्या तुझे धन्यवाद दूं? इतने वरस बाद पत्र लिखा, लेकिन अपनी सेवाका हिसाव तो दिया ही नही। जिस प्रयोजनको लेकर मै यह यात्रा कर रहा हूँ, उस हरिजन-सेवाके लिये तूने कुछ पैसा इकट्ठा किया है क्या? न किया हो, तो अव करना और उसमें अपना दान मिला कर भेजना। मैं कलकत्ता न जाऊँ, तो उससे यह काम रह नही जाना चाहिए।

वापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८७८५)।

५२. एक पत्रका अंश[1]

[२ जून, १९३४से पूर्व]

आपको मन छोटा क्यो करना चाहिए? आप राजा जनकके दृष्टान्तका अनुकरण क्यों नही कर सकते? उनकी राजधानी भस्म हो गई, मगर वे तटस्थ वृत्ति वनाये रहे। वे जो करना था सो सव कर चुके थे। क्या आपसे कर्त्तव्यमे कोई कसर रह गई है? अगर नही रह गई, तो आप चिन्ता क्यो करते हैं। भगवानको, जिसके इंगित पर सव चल रहा है, अपनी मर्जी पूरी करने दीजिए। अगर आपसे कही त्रुटि हुई हो, तो भी चिन्ताकी क्या वात है? कहानीकी लैसीकी तरह "पुन. उद्योग करो।"

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५४१) से; सौजन्य: क० मा० मुन्शी।

५३. भाषण: सार्वजनिक सभा, जाजपुरमें

२ जून; १९३४

आपने मुझे जो मानपत्र दिया है, उसमें यह स्मरण दिलाया है कि यह क्षेत्र एक तीर्थक्षेत्र है। कितना अच्छा होता यदि आप इसके साथ-साथ यह भी कह सकते कि इस तीर्थक्षेत्रके सव मन्दिर हरिजनोके लिए खुल गये है! मैंने अनेक बार कहा है कि जिस मन्दिरमें हरिजनोको प्रवेशका अधिकार नही, उस मन्दिर मे मूर्ति तो है, पर वहाँ भगवानकी प्रतिष्ठा नहीं हुई है।

१. यह सन्देश क० मा० मुन्शीके नाम चन्द्रशंकर शुक्लके २ जून, १९३४के पत्रमें भेजा गया था। सन्देश किसके लिए था, यह स्पष्ट नहीं है।

भगवानको हम पतित-पावन कहते हैं, दरिद्रनारायण कहते हैं, दयानिधि कहते हैं, करुणासागर कहते हैं। भगवानके ऐसे हजारों विशेषण हैं जिनसे हम सिद्ध कर सकते हैं कि भगवान किसी एक खास कौमके नहीं हैं। न ब्राह्मणके हैं, न क्षत्रियके हैं, किन्तु वे सबके हैं। पर हम तो अपने अभिमानमें डूबकर यों कहते हैं कि 'भगवान केवल हमारे लिए हैं, दूसरोंके लिए नहीं।' जो ऐसा मानते हैं, उन्हें मैंने यह चीख-चीखकर सुना दिया है कि अगर शास्त्रमें कुछ सत्य है, शास्त्रके सिद्धांतोंमें कुछ सत्य है, तो जिस मन्दिरमें हरिजनोंको जानेका अधिकार नहीं है, उस मन्दिरमें भगवान नहीं है, वहाँ सिर्फ पाषाण है।

जो बात सामान्य बुद्धि समझ लेती है, उसे हम न समझें और ऊँच-नीचके भावको अपने दिलोंमें रखकर हरिजनोंका बहिष्कार करें, तो हिन्दू-धर्म और हिन्दू-जाति जीवित नहीं रह सकती।

मानपत्रमें आपने जो लिखा है, उससे तो यह ध्वनि निकलती है कि अस्पृश्यताको समाप्त करनेके लिए प्रचण्ड प्रचार किया जा रहा है, पर इस युगमें अस्पृश्यता निर्मूल नहीं हो सकती। जिस प्रकार मनुष्य आँखोंसे देख लेता है, उसी प्रकार मैं प्रत्यक्ष देख रहा हूँ कि अस्पृश्यता, हम अच्छा कहें या न कहें, नष्ट होनेको ही है। काल-चक्रकी गतिको कोई भी मनुष्य आजतक रोकनेमें समर्थ नहीं हुआ है। अगर हम अपनी इच्छासे हरिजन भाइयोंको अपना लेंगे, जितने अधिकार हमारे हैं वे सब उन्हें दे देंगे, तो ईश्वरके दरबारमें, ईश्वरके खातेमें हमारा यह पुण्यकार्य माना जायेगा। हमारी अनिच्छासे अस्पृश्यताके मिटनेका जो परिणाम होगा तथा हमारी इच्छासे उसके मिटनेका जो परिणाम निकलेगा, इन दो बातोंको मैं बता देता हूँ। हमारी अनिच्छासे अस्पृश्यताके मिटनेका अर्थ है हिन्दू-धर्मका मिट जाना। हिन्दू-धर्मके मिट जानेसे कोई अछूत तो नहीं रह सकता, पर यह मानवताके लिए कल्याणकारी नहीं होगा। किन्तु हिन्दू-धर्मावलम्बियोंकी इच्छासे, सवर्ण हिन्दुओंके पश्चात्तापसे, उनकी आत्मशुद्धिसे अस्पृश्यताका मिटना गौरवकी बात होगी, पुण्यकी बात होगी, और हिन्दूधर्मका जहाँ आज लोप हो रहा है वहाँ उसका पुनरुद्धार होगा, उन्नति होगी। हिन्दूजातिकी उन्नतिसे भारतमें और, केवल भारतवर्षमें ही क्यों, सारे जगतमें भ्रातृभाव और मैत्रीभाव पैदा हो जायेगा। आपके सामने मैंने दो मार्ग रख दिये हैं — एक उन्नतिका, दूसरा अवनतिका। अब यह निश्चित करना आपका कर्त्तव्य है कि आपको किस मार्गसे जाना चाहिए।

एक मुसलमान भाईने मुझे एक खत भेजा है। वे चाहते हैं कि उसका जवाब मैं यहीं दे दूँ। उनके खतका आशय यह है कि आजतक मैंने जो-जो प्रयत्न किये हैं उनमें मुझे निष्फलता ही हासिल हुई है। वे लिखते हैं, "तो आपने क्यों खामखाँ यह एक और काम हाथमें ले लिया है?" उदाहरणके लिए वे कहते हैं — "आपने हिन्दू-मुसलमान ऐक्यके लिए भारी प्रयत्न किया, मगर उसका कोई फल नहीं हुआ, वैमनस्य ही कुछ और बढ़ गया।" इसके उत्तरमें मैं इतना ही कहना चाहता हूँ कि मैं यह स्वीकार नहीं करता कि मुझे अपने प्रयत्नोंमें निष्फलता मिली है, खासकर हिन्दू-मुसलमानोंके ऐक्यके प्रयत्नमें। मेरा यह अडिग विश्वास है कि जो कुछ भी

प्रयत्न हिन्दू-मुसलमानोंकी एकताके लिए किया गया है–यद्यपि आजके राजनीतिक वातावरणके कारण उनमें वैमनस्य कुछ बढ़ गया प्रतीत होता है–उससे एकता बढ़ी ही है। मेरा यह भी अडिग विश्वास है कि हिन्दू और मुसलमानोंकी एकताका प्रयत्न इतिहासमें लिखा जायेगा कि यह बड़ा अच्छा था और ऐसा ही करना चाहिए था। लेकिन हम मान भी लें कि मेरे सारे प्रयत्न निष्फल ही गये हैं, तो भी मुझे पछतावा नहीं है, क्योंकि मैंने एक सत्यके पुजारीकी हैसियतसे ही अपने जीवनमें ये सारे प्रयोग किये हैं। इसलिए मेरे दिलमें इनके लिए कोई पश्चात्ताप नहीं है।

हरिजन सेवक, १५-६-१९३४

५४. एक पत्र[1]

[३ जून, १९३४से पूर्व]

अगर गाँवोंमें मेरी नित्यकी इस पदयात्राको आप लोग सारे भारतके गाँवोंकी पदयात्रा मान लें तो इस आन्दोलनमें सभी प्रान्तोंका प्रत्यक्ष सहयोग सुलभ हो जाये। गाँव-गाँवमें लोग दल बनाकर पदयात्रा करें और समानता तथा भाईचारेका सन्देश दें, क्योंकि आखिर अस्पृश्यताके उन्मूलनका अर्थ यही तो है। ऐसा मानकर कि मैं स्वयं उनके साथ-साथ यात्रा कर रहा हूँ ये दल सवर्ण हिन्दुओंके सामने ऊँच-नीचके भेदभाव और अस्पृश्यताकी हानि स्नेहपूर्वक रखें और उसके पश्चात्तापके रूपमें उनसे धन इकट्ठा करके मेरे पास भेजें। अगर साथ, एक जैसा मैंने निरूपित किया है, काम शुरू हो जाये तो लोगोंमें कैसी जागृति फैल जाये!

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ३-६-१९३४

५५. एक पत्र

[३ जून, १९३४से पूर्व]

इस बातकी मुझे खुशी है कि आप, चाहे पाँच दिनोंके लिए ही क्यों न हो, बंगालमें पदयात्रा करने जा रहे हैं। इसकी प्रतिक्रिया अच्छी हुई तो यात्रा सफल कहलायेगी। दौरेमें धन-संग्रहका उद्देश्य तो आप लोगोंको समझायेंगे ही। उन्हें यह भी समझायें कि उड़ीसामें मेरा दौरा करना ज्यादा जरूरी था और यह भी बतायें कि उड़ीसाके मेरे दौरेको सारे भारतका दौरा समझा जाये। जब भी मुझे मौका मिला, निश्चय मानिये, मैं बंगालमें तीन महीने अथवा उससे भी अधिक समयतक दौरा करूँगा।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ३-६-१९३४

१. साधन-सूत्रमें कहा गया था कि यह और अगले शीर्षकका अंश डॉ० वि० च० राय और सतीशचन्द्र दास गुप्त द्वारा एक वक्तव्यमें उद्धृत किया गया था।

५६. पत्र : कोतवालको

३ जून, १९३४

भाई कोतवाल,

आपका पत्र मिला।

आपकी खुराककी बात समझा। जेलमें जाना पड़े, तो भोजनमें फल की माँग करनेमें मैं कोई हर्ज नही देखता। लेकिन उसके लिए, मुझे लगता है, अनशन नही किया जा सकता। आपने व्रत नहीं लिया है, अब व्रत लें भी नहीं सकते। तो जिससे हमारा काम चल सकता हो, वह यदि सम्मानपूर्वक दें, तो उसीको लेकर सन्तोष करना चाहिए। जेलमें पहुँचकर हम अपना शरीर जेलरको सौंप देते हैं।

जेलमें आपने जो उद्धरण आदि इकट्ठे किये थे, उनके सम्बन्धमें आप इंडिया ऑफिस तक लिखा-पढ़ी कर सकते है, और चाहे तो कानूनी कार्रवाई भी कर सकते हैं।

आँखकी रोशनीके लिए नाक पर शल्यक्रिया करवानेकी जबतक खास ही जरूरत ही न मालूम पड़े, तबतक न करवाना ही बुद्धिमानी होगी।

देशी राज्योंके बारेमें आप जो प्रस्ताव पेश करना चाहते हैं, उसमें मुझे तो बहुत दोष दिखाई देता है। उस प्रस्तावकी तहमे मैं तो विचारशून्यता अथवा मोह ही देखता हूँ। सो मैं तो उस प्रस्तावके पेश करनेकी सलाह नहीं दूंगा।

दूसरा प्रस्ताव पहले प्रस्ताव जितना दोषयुक्त नही हैं, किन्तु दोष तो उसमें भी काफी मात्रामें है। यह प्रान्त कैसे बना, इसके इतिहासका आपको ज्ञान नही है। जनसंख्या जितनी आप गिनते है, उतनी मानी ही नहीं जा सकती। अजमेर-मारवाड़को जितने प्रतिनिधि दिये गये हैं, मेरी दृष्टिमें तो वे भी अधिक हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३६११) से।

५७. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

४ जून, १९३४

चि० अमला,

पत्र लिखकर तुमने अच्छा ही किया। तुम जसी हो मैं तुम्हें वैसा ही जानना चाहता हूँ, न कि उस रूपमें जिसकी सम्भावना है। तुम्हारे दोपोके वावजूद, मैं तुम्हे प्यार करूँगा। तुम्हारे मुझसे डरनेका कोई कारण नही है। मैं तुमसे घृणा करता हूँ, यह विचार तुम अपने दिमागसे विलकुल निकाल दो। घृणा मैं संसारमें किसीसे नही करता। तुमने ऐसा कुछ नहीं किया जिससे मैं घृणा करूँ। इसके विपरीत, तुमने ऐसा वहुत-कुछ किया है, जिसके कारण मैं तुम्हे प्यार करूँ। इसलिए तुम्हें अपनी विचारशक्ति नही खोनी चाहिए।

मीराके नाम लिखा तुम्हारा पत्र मैंने पढ़ा है। मेरा खयाल है तुम्हें किसी ठण्डी जगह चले जाना चाहिए। मैं आसानीसे तुम्हें कही न कहीं भेज सकता हूँ। जर्मन दवाओंके कड़वे घूँट पीनेकी क्या जरूरत है? अहमदावादमें वहुत-से योग्य चिकित्सक हैं। परीक्षितलालसे कहो। वह तुम्हे किसी एकके पास ले जायेगा। इन मामलोंमें तुम्हें स्वस्थचित्त रहना चाहिए। अगर तुम वीमार होती रहीं और तुम्हारा शरीर कमजोर रहा तो यह मेरे लिए वहुत वड़ी चिन्ताका कारण वन जायेगा।

तुम मीरा जैसी क्यो वनना चाहती हो? वह सर्वगुणसम्पन्न नही है। सर्वगुण-सम्पन्न कोई नही है। ईश्वरने तुम्हें कुछ दिया है, उसीके अनुरूप नेक वननेकी तुम्हे कोशिश करनी चाहिए। कोई दो आदमी संसारमें एक-जैसे नही होते। लेकिन वनना चाहें तो नेक सभी वन सकते हैं।

जल्दी ही हम लोग मिलेंगे। मैं चाहूँगा कि मुलाकात होनेके समय तक तुम भली-चंगी हो जाओ। और अगर अपनी वीमारीके वारेमें न सोचो और ठीक होनेके लिए आवश्यक उपाय करो तो तुम स्वस्थ हो जाओगी।

कुछ पत्र मैं सम्वन्धित लोगोंको देनेके लिए संलग्न कर रहा हूँ।

सस्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगलके कागजात; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

५८. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

४ जून, १९३४

'सिविल रेजिस्टेंस' शब्द-प्रयोग अधिक व्यापक है, साथ ही उसमें आदरका भाव भी मिला हुआ है। 'सिविल डिसओबीडिएन्स,' 'सिविल रेजिस्टेंसमें' निहित वृत्ति की सही अभिव्यक्ति नही है। 'सिविल डिसओबीडिएन्स' शब्द-प्रयोग भी एक मनोदशाको सूचित कर सकता है। यह शब्द-प्रयोग पहले-पहल थोरोने किया था; मुझे वह अच्छा नही लगा, और मै जो सब कहना चाहता था, वह उसमें समाता भी नही था। आखिर खोजबीन करते मुझे 'सिविल रेजिस्टेंस' शब्द-प्रयोग सूझा। 'पेसिव रेजिस्टेंस' प्रचलित प्रयोग था। मेरा विरोध अथवा मेरा बल 'पेसिव' नही था, 'एक्टिव' था। पर 'एक्टिव' का अर्थ हिंसक भी हो सकता है। 'सिविल' केवल अहिंसामूलक विशेषण है, इसलिए मैंने उसे 'रेजिस्टेंस' के साथ जोड़ दिया।

दाडी-कूचके समय जो प्रतिज्ञा की गई थी, उसका यह अर्थ तो था ही नही कि स्वराज्य न मिलने तक जेलमें ही रहा जाये। फिर जेलमें रहना हमारे हाथमे भी तो नही होता।

यरवदा-समझौतेके अनुसार परिनिर्णय[1] में परिवर्तन करना जिस प्रकार सरकारका कर्त्तव्य था, उसी प्रकार जनताको भी तो हरिजनोंके प्रति अपना ऋण चुकाना था। यह शर्त सरकार देख पाई थी, इसलिए उसके निहितार्थ द्वारा वह बाध्य थी कि उस शर्तका पालन करनेकी मुझे पूरी सुविधा दे। मेरे इसी प्रकारके तर्कको स्वीकार करके सरकारने पहली कैदमें मुझे छूट दी थी। वह पत्र-व्यवहार प्रकाशित हो चुका है, अब वे उससे विमुख कैसे हो सकते है?

जमनालालजीकी नियुक्तिमें मेरा हाथ नही है, किन्तु वह हुई ठीक है। सचिव का स्थान रिक्त रखा गया है, क्योंकि एक सचिव बाहर है। अगर दोनोमेंसे एक भी बाहर न होता, तो वह जगह भी भरनी पड़ती। ऐसे मामलोंमें सिद्धान्त नही होता। हाँ, शिष्टाचारकी मर्यादा होती है। खजान्ची और अध्यक्ष एक ही व्यक्ति हो तो उसमें असंगत क्या है?

संसदीय बोर्डके मामलेमें तुम जैसा कहते हो, वैसा ही है। पुरोहित ब्याह करा देता है, किन्तु क्या उसे वर-वधूका घर भी चलाना चाहिए? हम जैसे है, वैसे दिखाई देते रहें, तो किसी दिन जैसे होना चाहिए, वैसे हो भी जायेंगे।

अब पत्र १४वीं[2] को न? फिर भी कुछ हुआ, तो लिखूँगा अथवा लिखाऊँगा।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृष्ठ १४६-७

१. साम्प्रदायिक-परिनिर्णयमें।
२. उस तिथिको गांधीजी बम्बई पहुँचनेवाले थे।

५९. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

४ जून, १९३४

मुझे जो सीमित छूट[1] दी गई थी, उसकी सूचना यद्यपि सुपरिटेन्डेंटने मुझे जवानी दी थी, तथापि वह टेलीफोनसे भेजा हुआ सन्देश था, जो उसने मुझे पढ़कर सुनाया था। उस समय तो मैंने स्वीकार कर लिया, किन्तु उसके जानेके बाद आधा घन्टा भी नही बीता होगा कि मैंने पत्र[2] लिखा और सरकारको भेज दिया।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृष्ठ १३२

६०. एक पत्रका अंश[3]

[५ जून, १९३४से पूर्व]

बंगालको तो तीन महीने देना चाहूंगा। मगर वह मेरे दूसरे जन्ममें ही हो सकता है।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५४२) से; सौजन्य: क० मा० मुन्शी

६१. पत्र : बलवन्तसिंहको

४ जून, १९३४

भाई बलवन्तसिंह,

'भाई' अथवा 'चि' अथवा और कोई विशेषणसे कुछ फरक नहि पड़ता जबतक भाव एक है। मुझे जिसका ठीक परिचय नहि है जिसकी उमर इत्यादि नहि जानता हूं उसको प्राय. 'भाई' लिखा करता हूँ। तुमको सुरेन्द्र अपने साथ रखे तो मुझे अच्छा लगेगा। नारणदास राजकोट है। वह कहे ऐसे करो।

बापुके आशीर्वाद

जी० एन० १८७१ की फोटो-नकल से

१. हरिजन-कार्य करनेके लिए।

२. देखिए खण्ड ५५, पृ० ३७४।

३. यह सन्देश क० मा० मुन्शीके नाम चन्द्रशंकर शुक्लके पत्रमें भेजा गया था—सन्देश किसके लिए था, यह स्पष्ट नहीं है।

६२. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

४ जून, १९३४

चि० ब्रजकृष्ण,

तुमारा खत मिला है। मुझे लगता है कि तुमारे घर काममें लग जाना चाहीये। जो कमाई हो सके वह करनी चाहिये और जब स्वतन्त्रतया कुटुंब मोह छूट जाय, धन लोभ भी मिट जाय और ब्रह्मचर्य स्वयंसिद्ध हो जाय तब सेवा क्षेत्रमें उतरना। मेरे अथवा किसी ओरके कहनेसे त्याग करनेकी बात निरर्थक समजो। तुमारी शक्तिका नाप तुमारी पास ही हो सकता है। तुमारे मोहकी बात तुम ही जान सकते हैं। जबतक तुमको सच्चा नाप न मिले तबतक कौटुंबिक संबंध और पेशा कायम रखना धर्म समजा जाय। कौटुंबिक संबंध कोई पाप नहिं है। धनोपार्जन भी पाप नहिं है। कौटुंबिक संबंधको मर्यादित करनेमे भी सेवा तो है ही। जो मनुष्य अपने क्षेत्रमें रहता हुआ सत्यादिका पालन करता है वह भी सेवा करता है। जो सेवा क्षेत्रमें पड़कर सूक्ष्म विषय, स्वार्थ इ० सेवता हैं वह सेवा नहिं करता, नुकसान करता है, दंभी बनता है। ऐसा कहना कि धनोपार्जनमें सत्यका पालन होता ही नहिं बड़ी भ्रमणा है। धनोपार्जन करते हुए सत्य पर कायम रहनेवाले लोग आज मौजूद है। तुमारे लिये आज यही कर्तव्य मुझे तो लगता है। प्रथम कार्य शरीर बिलकुल अच्छा करनेका है।

मेरे पास यात्रामें आना तो बेकार है। लेकिन जब पुना जाऊं तब अथवा अमदाबाद आना है तो आना। मेरी सलाह है नहिं आना। कार्यमें रत हो जाना बहतर है।

बापुके आशीर्वाद

जी० एन० २४१२की फोटो-नकल से।

६३. पत्र : रामेश्वरदास पोद्दारको

४ जून, १९३४

चि० रामेश्वरदास,

जमनालालजीकी कैदमें हो, रहो और जैसे वह कहे ऐसा ही करो। कन्वोरा[1] डाकसे या कोई आने जानेवालेके साथ भेजा जाय।

बापुके आशीर्वाद

जी० एन० १६८ की फोटो-नकल से।

१. एक प्रकारका आभूषण।

६४. पत्र : अमतुस्सलामको

४ जून, १९३४

प्यारी बेटी अमतुलसलाम,

तुम्हारा खत और डॉक्टरका तार साथ पहुँचा। आपरेशन हो गया सो बहुत अच्छा हुआ। मेरे बम्बई पहुँचनेपर तो फिरती हो जायेगी। फिकर किसी चीजकी मत करो। चन्द्रकान्ता[1] और राजे[2]को खत लिखता हूँ। अच्छा हुआ दोनो वहाँ है।

बापूकी दुआ

उर्दू जी० एन० ३०८की फोटो-नकल से।

६५. तार : राजेन्द्रप्रसादको[3]

[५ जून, १९३४ या उससे पूर्व][4]

तार अभी अभी मिला। उनकी विधवा और भागवती[5]से कहिए होनहार पर दुःख न करें। परिवारका मुख्य आधार आपने खो दिया है, तो भी आपने कुछ नही खोया है। ईश्वर सदा आपका सहायक था और है। महेन्द्रबाबू भगवानके निमित्त थे। घनश्यामदास बिड़ला और कुमारी हैरिसन यही हैं। वे तथा दूसरे लोग शोक भेजनेमें मेरे साथ शामिल हैं।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ५-६-१९३४

१. और २. कानपुरके प्रसिद्ध कांग्रेसी डॉ० जवाहरलाल रोहतगीकी पुत्री और पुत्र, जो किंग एडवर्ड मेमोरियल अस्पतालमें हाउस-सर्जन थे। इसी अस्पतालमें अमतुस्सलामका ऑपरेशन हुआ था।

३. राजेन्द्रबाबूके उस तारके उत्तरमें जिसमें उन्होंने अपने बड़े भाई महेन्द्रप्रसादकी मृत्युकी सूचना दी थी।

४. तार "भद्रक, ५ जून, १९३४" की तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

५. राजेन्द्रप्रसादकी बहन।

६६. पत्र : नारणदास गांधीको

५ जून, १९३४

चि० नारणदास,

तुम घूम-फिर आये यह अच्छा किया। रुखीके बारेमें समझ गया। शहरी जीवन बितानेका इसके सिवा और कोई अर्थ ही नही निकल पाता। रुखी अपना मार्ग सरल बना सकती थी; किन्तु उसमें इतना साहस नही था। इसमें उसका कोई दोष नहीं है। प्रकृतिके अनुसार ही सब व्यवहार करते हैं। उसीके अधीन रहकर जो परिवर्तन किये जा सकते हैं, करते रहते हैं। इससे अधिक करनेका प्रयत्न करते है तो हानि ही होती है।

प्रभुदास जो चाहता था, सो उसे मिल गया है। यदि वह स्वास्थ्यको सँभालकर चलता रहा तो मार्ग तय कर लेगा।

वेलाबहन अपनी इच्छाके अनुसार चढ़-उतर सकती है। उसे कोई खतरा नही है। प्रेमा मेरे रवाना होनेके बाद छूटेगी तो मेरे पास पहुँचेगी न? लीलावती कब छूटेगी! मुझे यह अवश्य लगने लगा है कि अब आनन्दी इत्यादि का बोझ[1] अनसूया-बहनके सिरसे उतार लेना चाहिए। कहा जा सकता है कि कनुने अपनी उपयोगिता सिद्ध कर दी। मैंने अमलाको चिट्ठी लिखी है। लगता है तुम अमीनासे नही मिले। अमतुस्सलामका बम्बईमें अर्शका आपरेशन हो गया है। वह किंग एडवर्ड [मेमोरियल] अस्पतालमें है, उसे लिखना। बुनकरोंको सूत नहीं मिलता, यह दुःखकी बात है।

गोशालाके बारेमें विचार कर लेना। यह काम पीछे न रह जाये। टाइटसको लिखना कि वह अवसर न चूके। वह अपनी इच्छाके अनुसार गोशालासे दूर न रहे। छगनलालके नाम लिखा पत्र इसीके साथ है।

चिमनलाल कहाँ है? जब मैं अहमदाबाद आऊँगा, उस समय तो तुम वहाँ रहोगे न? यदि जमनादासकी तबीयत नही सुधरती तो मैं उसका इस्तीफा देना ठीक मान लूंगा। किन्तु उसके बाद पाठशाला कौन चलायेगा? जमनादास तो मुझे एकाध बार ही लिखता है। देखना, वह कोई निर्णय जल्दबाजीमें न कर बैठे।

यह अच्छी बात है कि पुरुषोत्तम वर्धा जाना चाहता है। यहाँ वर्षा हो चुकी है, और इसलिए पदयात्राके योग्य मौसम नही रहा। सोच रहा हूँ कि शेष दिनोमें क्या करना चाहिए।

१. आश्रम बन्द कर दिये जानेके बाद छोटी-छोटी बालिकाओंकी जिम्मेदारी अनसूयाबहनको सौंप दी गई थी।

यह तय हो गया है कि आज और पदयात्रा की जाये और भद्रक पहुँचें, वहाँ से शुक्रवारको वर्धाके लिए रवाना हो जायें; तथा वर्धासे निकलकर बम्बई।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (एम० एम० यू०/१) की माइक्रोफिल्मसे। सी० डब्ल्यू० ८४०१ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

६७. पत्र : द्वारकानाथको

५ [जून][1], १९३४

चि० द्वारकानाथ,

यहाँ बरसात शुरू हो गई है, इसीलिए पदयात्रा करना असम्भव हो गया है। अतः तीन दिन भद्रकमें बितानेके बाद वहाँ आना तय किया है। आशा है, शुक्रवारको भद्रकसे रवाना होकर शनिवारको वहाँ पहुँचूंगा। वहाँसे बुधवारको रवाना होऊँगा। साथमें दसेक व्यक्ति होंगे। जमनालालजी तथा रामदासको अलगसे नही लिख रहा। विद्यासे कहना कि उसका पत्र मिला है। ठीक है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०८७) से।

६८. पत्र : कान्ति गांधीको

५ जून, १९३४

चि० कान्ति,

तू मुझे बिलकुल पत्र न लिखे, यह बात कैसे चल सकेगी? तू क्या कर रहा है, क्या पढ़ रहा है, कैसे रह रहा है, यह सब मुझे लिखेगा नही? वहाँसे तो तुझे हर हफ्ते एक सुन्दर पत्र मुझे लिखना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७२८५) से; सौजन्य : कान्ति गांधी।

१. साधन-सूत्रमें पढा नहीं जाता, तथापि सन्दर्भसे स्पष्ट है कि यह पत्र जूनमें ही लिखा गया था। देखिए पिछला शीर्षक भी।

६९. पत्र : केशवजी रावचन्द और कानजी मूलजी सिक्काको

५ जून, १९३४

भाई केशवजी रावचन्द तथा कानजी मूलजी सिक्का,

मेरा कलकत्ता आना तो रुक गया। लेकिन फिर भी कलकत्तेके गुजराती भाई-बहनोंसे थैली पानेकी आशा तो करता ही हूँ। मारवाड़ी भाई-बहनोंसे कमसे कम २०,००० रुपयेकी बात पक्की हुई है। हो सकता है २५,००० रुपये भी मिल जायें। गुजराती भाई-बहनोंकी ओरसे जो हो जाये, उसे प्राप्त करनेके लिए भाई वालजीभाई देसाईको भेज रहा हूँ। मुझे शुक्रवारकी ट्रेनसे वर्धा जाना है। अतः जो इकट्ठा हो सके, वह कीजिए और वालजीभाईके साथ भेज दीजिए।

मोहनदास गांधीके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४६६) से; सौजन्य: वा० गो० देसाई।

७०. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

गरदपुर, (उत्कल)
७ जून, १९३४

भाई वल्लभभाई,

इस बार आपका पत्र अभीतक नहीं आया। मेरे पत्र तो नियमपूर्वक गये ही हैं। यहाँ वर्षा आरम्भ हो गई है, इसलिए सब काम रुक गया है। अब प्रातःकालीन प्रार्थनाका समय हो रहा है। यह लिख रहा हूँ, इतनेमें सतीशबाबू अपने दस आदमियोंकी टोलीके साथ भद्रक स्टेशनसे दो मील पैदल और सामान उठाकर यहाँ आ पहुँचे हैं। कीचड़के कारण आनेमें पौने दो घंटे लगे।

प्रार्थनाके बाद यह फिरसे लिख रहा हूँ।

सतीशबाबू बंगालमें पदयात्रा कर रहे हैं। पदयात्राका फल बताना अभी मुश्किल है। मुझे तो पूरा सन्तोष है। और सब फीका लगता है।

हैरिसन बम्बई गई है। उससे फिर बम्बईमें मिलूँगा। बहुत भली स्त्री है। चौबीसों घंटे यही विचार करती रहती है। म्यूरियल जमनालालजीके साथ काफी घूमी। वह भी बम्बईमें मिलेगी।

प्रवासक्रम तो आपको भेजा ही है। विश्वास रखिये कि जो हो रहा है सो ठीक हो रहा है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृष्ठ १०५

७१. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

७ जून, १९३४

यहाँ बरसात शुरू हो गई है, इसलिए पदयात्रा करना असम्भव हो गया है। अत. भद्रकमें तीन दिन बिता रहा हूँ। कल (शुक्रवारको) यहाँसे रवाना होकर वर्धा जाऊँगा और चार रोज वहाँ ठहर कर निश्चित तारीखको बम्बई पहुँचूँगा।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृष्ठ १४६

७२. भाषण : गरदपुर आश्रम, भद्रकमें

[७ जून, १९३४][1]

भाइयो और बहनो,

यह तय हुआ था कि आज सुबह ९ बजे आम सड़कपर सभा की जाये। लेकिन मुझे सूचित किया गया कि पुलिस-अधीक्षकसे इजाजत लिये बगैर आम सड़कपर सभा नही की जा सकती। यह हमारी गलती थी कि हमने सभाके लिए इजाजत नही ली। पुलिस-अधीक्षक इस वक्त यहाँ नही हैं। वे बालासोरमें रहते हैं। उनके जो मातहत अधिकारी यहाँ हैं, उन्हें इजाजत देनेका अधिकार नही है। अतः मैं सभा-स्थल तक नही जा सकता था और इसलिए आप सबको मैंने इस जगह बुलाया है। मैं जानता हूँ, यहाँ सभा करनेसे कानून नही टूटेगा। मेरी इच्छा कानून भंग करनेकी और आम सडकपर सभा करनेकी नही है। मेरा आपसे यह कहना है कि आप सभी लोगोको अस्पृश्यताका त्याग कर देना चाहिए। हम सभी एक परमेश्वरके पुत्र है, फिर हम हरिजनोसे अलग क्यो रहें? हमको चाहिए कि हम उन्हें वे सारी सुविधाएँ प्रदान करें जिनका उपभोग सवर्ण हिन्दू करते हैं। हमें ऊँच-नीचका किसी प्रकारका भेदभाव नही रखना चाहिए। दूसरी बात जो मुझे कहनी है वह यह है कि हम अकर्मण्य हो गये हैं। अकर्मण्यता खत्म कर दी जानी चाहिए। अगर हम अकर्म-

१. अमृतबाजार पत्रिका, ८-६-१९३४ से।

ण्यताका अन्त नहीं करेंगे तो भूखों मरेंगे। इसलिए कुछ काम अवश्य किया जाना चाहिए। अगर और कोई काम न हो तो चरखा ही चलाना चाहिए, ताकि कुछ-न-कुछ कमाया जा सके। अगर और कोई काम करनेसे किसीको और अधिक पैसे मिलते हो तो उसे उसीमें जुट जाना चाहिए। तीसरी बात यह कि नशीली वस्तुओको त्याग देना चाहिए, क्योकि नशीली वस्तुएँ हमें हानि पहुँचाती हैं। मेरी बात अगर आपने समझ ली है तो अब हरिजनोकी सेवाके लिए आप जो-कुछ दे सके, दें।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ७-६-१९३४

७३. भाषण : हरिजन कार्यकर्त्ताओंके समक्ष, भद्रकमें[1]

७ जून, १९३४

इस पदयात्रामें जो लोग हमारे साथ रहे है, उन्हे अवश्य मालूम हो गया होगा कि सच्चा कार्यक्षेत्र तो हमारे लिए गाँवोंमें ही है। हरिजनोका बहुत बड़ा भाग गाँवोंमें रहता है। देहातोमें अस्पृश्यताने बड़ी मजबूतीसे जड़ जमा रखी है। और दरिद्रता भी सबसे ज्यादा हमारे गाँवोमें ही है। मेरे कहनेका मतलब यह नही है कि शहरोंकी उपेक्षा की जाये, पर संघका यह कर्त्तव्य होना चाहिए कि वह अच्छेसे-अच्छे सेवकोंको हरिजनो तथा सवर्णो दोनोंकी ही सेवाके लिए गाँवोमें भेजे। हरिजनोकी सेवा तो इस प्रकार, कि उनके लिए शिक्षाका प्रबन्ध करें, स्वच्छ जल उपलब्ध करायें, मन्दिरोमे प्रवेश करायें, उनकी आर्थिक स्थितिको सुधारें और उनकी बुरी आदतोंको छुड़ायें जैसे मुर्दार मांसका खाना और मादक चीजोंका सेवन करना शराब आदिका पीना; और उन्हें सफाईकी आदत डलवायें। सवर्णोंके साथ मित्रतापूर्ण सम्पर्क स्थापित करें तथा हरिजन-सेवामें उनका जितना सहयोग प्राप्त हो सके, प्राप्त करें। इन सब बातोमें जोर-जबरदस्तीसे काम नही लेना चाहिए। काम सच्चा होना चाहिए, दिखावटी नहीं। और निजी शुद्ध चरित्र तो सर्वप्रथम होना चाहिए। जिन सेवकोका चरित्र निष्कलंक न हो और जो सब प्रकारके कष्ट सहनेको तैयार न हो, वे हरिजन-सेवासे दूर ही रहें, खासकर गाँवोंमें। इसलिए कार्यकर्त्ताओके चुननेमें संघको बहुत ही अधिक सावधान रहनेकी जरूरत है।[2]

उड़ीसामें सर्वत्र हर वर्गके लोगोंने, जिनमें स्त्रियाँ भी थीं, हरिजन-उद्धार कार्यके प्रति जो उत्साह दिखाया, गांधीजी ने उसपर सन्तोष व्यक्त किया। महात्माजी ने कहा :

१. यह "साप्ताहिक चिट्ठी", से उद्धृत है।

२. आगेका अंश बॉम्बे क्रॉनिकल, ७-६-१९३४से है।

मैं पहलेसे ज्यादा आश्वस्त होकर लौट रहा हूँ कि हरिजन-कार्य पदयात्रा द्वारा कही ज्यादा अच्छी तरहसे होता है।

श्रोताओंमें से एकके इस प्रश्नका उल्लेख करते हुए कहा कि क्या सविनय अवज्ञा मुल्तवी करनेकाअर्थ उसकी असफलता लगाया जाये, गांधीजीने कहा:

सत्याग्रहीके शब्दकोशमे 'असफलता' जैसा कोई शब्द नही है। वह तो हर कदमपर मिले अनुभवके अनुसार अपने-आपको तैयार कर लेता है। सत्याग्रहकी प्रगति एक पर्वतारोहीकी प्रगतिके समान है, जिसे आगे बढते समय ऊँचे चढ़नेसे पूर्व कई बार पीछे नीचे कदम रखना होता है।

एक और प्रश्नका कि सविनय अवज्ञाको मात्र अपने-आप तक सीमित रखकर आप कैसे स्वराज्य प्राप्तिकी आशा करते हैं, जवाब देते हुए गांधीजी ने कहा:

प्रतीक्षा करें और देखें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १५-६-१९३४; बॉम्बे क्रॉनिकल, ७-६-१९३४ भी।

७४. टिप्पणी

प्रायश्चित्त उपवासकी मर्यादाएँ

पाठकोको याद होगा कि कुछ दिन हुए श्री सीताराम शास्त्रीने अपने एक मित्रकी कमजोरीपर बतौर प्रायश्चित्तके बिना शर्त उपवास शुरू किया था। उनके एक मित्रने अपना एक मन्दिर हरिजनोके लिए खोलनेका वचन दिया था। पर बादको वे अपने मित्रोके दबावमें पडकर अपने उस वचनसे हट गये। शास्त्रीजीने इस उपवासकी, जब मुझसे चर्चा की, तो मैंने उनसे कहा कि इस सम्बन्धमें मेरी जो दलील है उसे मैं सक्षेपमें 'हरिजन' मे दे दूँगा।

सराहनीय तो वही उपवास है जो आध्यात्मिक उद्देश्यको लेकर उचित परिस्थितियोमें किया जाता है। उपवास अपना स्वार्थ साधनेके लिए नही होना चाहिए। उसमें कोई हिंसा जैसी बात न हो। उदाहरणके लिए, किसी सनातनीकी धर्मश्रद्धा मन्दिर खोलनेके विरुद्ध है — यह जानते हुए भी यदि कोई उस सनातनीके खिलाफ अनशन करता है, तो उसका वह अनशन हिंसामें आ जाता है। सीताराम शास्त्रीको जिस प्रसंगके विरुद्ध उपवास करना पड़ा, वह दूसरे ढंगका है। उनके सामने तो यह सवाल था कि जबकि उनके एक प्रगाढ स्नेहीने अपना वचन-भंग कर दिया है, तो उस स्थितिमें उनका क्या कर्त्तव्य है। ऐसा वचन-भंग हुआ हो या होनेकी आशंका हो, तो साधारण रीतिसे तो उसका इलाज उपवाससे होता है। जिनका यह विश्वास है कि अस्पृश्यता-जैसे सामाजिक या धार्मिक पापके विरुद्ध अहिंसाका युद्ध चलानेमें उपवासका उपयोग धर्मसंगत है, उनके लिए उपवास कर्त्तव्यरूप नही तो कमसे-कम

वांछनीय तो समझा ही जाता है। पर हमें तो भीरु ही नहीं, बल्कि एक तरहसे निर्वीर्य समाजसे निबटना है। इसलिए वचन-भंगका भी उपचार हमें शान्तिसे धीरे-धीरे करना होगा — खासकर तब जबकि वचन व्यक्तिगत विषयमें नहीं, बल्कि किसी सामाजिक विषयमें दिया गया हो। अन्धविश्वास हमारे रोम-रोममें पैठ गया है। अस्पृश्यता खुद एक ऐसा बहिष्कार है जिसमें तेज-से-तेज जहर भरा हुआ है। इसने हमारे मनमें काल्पनिक बहिष्कारका काल्पनिक भय भर दिया है। ऐसी भयभीत अवस्थामें सामाजिक बहिष्कारकी महज धमकीसे ही वह मनुष्य अपने वचनसे मुकर सकता है या उसे तोड़नेको तैयार हो सकता है, जो अपनी जातिसे बाहर रहनेकी कभी कल्पना भी नही कर सकता। ऐसे प्रसंगपर उपवास एक बहुत सख्त उपचार साबित होता है। समझदारीका रास्ता तो यह है कि ऐसे आदमियोंसे कोई वचन लेना ही नही चाहिए और यदि वे वचन दे चुके हों, तो उसको कोई महत्त्व नही देना चाहिए। ऐसे मनुष्योके साथ नम्रता और मुलामियतसे ही पेश आना चाहिए। उपवास-जैसे तेज उपचारसे उन मनुष्योकी शक्ति बढ़नेके बजाय शायद और भी क्षीण हो जाती है और इससे जिस सुधारके लिए उपवास किया जाता है, उस सुधारको ही हानि पहुँचती है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ८-६-१९३४

७५. एक सावधान कतैया

एक हरिजन-सेवक, जो एक हरिजन पाठशालामें काम करते हैं और अन्य कई बातोके अलावा अपने विद्यार्थियो एवं उनके अभिभावकोंमें हाथ-कताईका प्रसार करनेका प्रयत्न कर रहे हैं, लिखते हैं:

> राष्ट्रीय सप्ताहमें मैंने पहलेकी अपेक्षा अधिक परिश्रम और कहीं अधिक सावधानीसे कताईका कार्य किया। मेरी गतिका औसत ३०० गज प्रति घंटा था। ४० तोले रूईसे मैंने १६ नम्बरका ३७ तोला सूत काता। कुल सूत ९,७०० तार था — एक तार ४ फुटके बराबर होता है। रूईको साफ करने और धुनने-में मेरे ढाई तोले खराब हो गये और कातनेमें आधा तोला। यह खराब भाग मैंने रख छोड़ा है। इसका उपयोग मैं तकिया भरने या ऐसे ही किसी काममें करना चाहता हूँ। मैंने कई कातनेवालोंको देखा है कि कभी-कभी इतना हिस्सा रद्दी कर देते हैं जिसका दाम कुल रूईकी कताईसे मिली मजदूरीके बराबर होता है। आपको यह भी याद रखना चाहिए, कि मैं केवल फुर्सतके समय ही कातता हूँ। इतने समयमें ही मैं अपनी निजी आवश्यकतासे कहीं अधिक सूत तैयार कर लेता हूँ। बचे हुए सूतको बेचकर उसकी आयको अपने निरीक्षणमें चलनेवाली हरिजन पाठशालामें लगाऊँगा। मेरा सूत इतना अच्छा और मजबूत समझा जाता है कि बुनकर उसे दूसरे किसी सूतपर तरजीह देते हैं।

मैं इस कर्तव्यको जानता हूँ। आज वह जो-कुछ बन सका है, अपनी सच्चाई और लगनसे ही बन सका है। वह साधारण कर्तव्योंसे कुछ अच्छा नहीं था, किन्तु आज स्वेच्छासे कातनेवालोंमें बहुत ही थोड़े ऐसे निकलेंगे जो इस हरिजन-सेवकके जैसा लेखा-जोखा दिखा सकें। उड़ीसाके गाँवोंमें भ्रमण करते हुए, लोगोंसे बात करते और उनके घनिष्ठ परिचयमें आते हुए, मैं नित्य ही हाथ-कताईकी असीम सम्भावनाओंके दर्शन करता हूँ। गरीब ग्रामवासियोंमें जो आलस्य आ गया है, वह बड़ी दुर्भाग्यपूर्ण बात है। मैं देखता हूँ कि सैकड़ों और अकसर हजारों आदमी बेकार, बिना किसी कामके, सारे दिन मेरे चारों ओर घूमते रहते हैं। जो लोग हमारे चारों ओर चक्कर लगाते रहते हैं, किसी प्रकार अच्छी हालतमें नहीं हैं। उनका भोजन बहुत ही निम्न-कोटिका है। दूध-घी तो शायद ही उन्हें मिलता हो। उबले चावल, दाल और तेल ही मुख्यतया उनका भोजन है। मुझे ये लोग महत्वाकांक्षासे हीन और आशारहित प्रतीत होते हैं। इतनेपर भी वे अपने जीवनमें एक उच्च संस्कृतिको प्रकाशित करते हैं जिसकी ओर आकर्षित हुए बिना हम नहीं रह सकते। किन्तु यदि वे अपने प्रत्येक बेकार घंटेका लाभदायक उपयोग करनेको प्रेरित नहीं किये जा सके, तो यह संस्कृति उनके किसी काम न आयेगी। मैं तो मजबूर होकर इसी नतीजेपर पहुँचता हूँ कि इन लाखों लोगोंको इनके बेकार घंटोंमें देनेके लिए चरखेके अलावा और कोई चीज नहीं हैं। निश्चय ही कोई उद्योग, जो लाखोंको काम देता है, लाभदायक धन्धा है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ८-६-१९३४

७६. तार: आनन्द तो० हिंगोरानीको

भद्रक
८ जून, १९३४

आनन्द
द्वारा केवलरमानी
इरीगेशन
जहनिया

तुम वर्धा या बम्बई आकर साथ हो सकते हो। विद्याका[1] दो हफ्तोंके लिए वर्धा आना बेकार है।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म से; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार तथा आनन्द तो० हिंगोरानी।

१. आनन्द हिंगोरानीकी पत्नी।

७७. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको[1]

८ जून, १९३४

आपका ४ तारीखका पुर्जा मिला।

आपने यहाँकी बातोंके बारेमें पूछा है। मैं आपको प्रबन्ध-मण्डलकी नीतिकी यथावत् रिपोर्ट देकर ही सन्तोष करूँगा, क्योंकि मैं आशा करता हूँ कि किये गये कामकी विस्तृत रिपोर्ट प्यारेलाल और अन्य लोगों द्वारा समय-समयपर मिलती रहती होगी।

आपके दलके लिए आपसे मैंने खर्च माँगा, उसका लाभप्रद असर हुआ और लोग बिहार केन्द्रीय राहत-समितिके खातेमें कुछ डालते हुए ज्यादा सावधानी बरतने लगे हैं। लेकिन अभी तक राहत कार्य और पुनर्निर्माण कार्यको एक समझनेकी प्रवृत्ति है। वे, पहले जिला बोर्डोसे तथा सरकारी व अन्य स्रोतोंसे यथासम्भव राशि पानेका प्रयत्न किये बिना, हमारे कोषमें से पुल — यहाँ तक कि पक्के पुल — बनवाना चाहते हैं। जो कुएँ खोदे गये हैं, वे भी अधिक दिखते हैं, और अभीतक बिना मजदूरीके पैसा पानेकी बात भी लोगोके मनसे पूरी तरह हटी नहीं है। मुझे लगता है कि बहुत-सा राहत-कार्य राजनीतिक उद्देश्योंसे किया जा रहा है, खास कर अ० भा० कां० कमेटीके निर्णयोके बादसे। समितिको चलानेवाले लोगोंका बिहार केन्द्रीय राहत-समितिकी ओर निष्पक्ष और शुद्ध ध्यान नही है, और चूँकि उद्देश्य मिश्रित है, काम वैसा नही हो रहा है जैसा कि होना चाहिए। कामके भारको देखते हुए मध्यम श्रेणीकी राहत देना ही सही कदम है।

एक संस्थाके रूपमे हमारी कमजोरी यह है कि जिलोंमें जो देखभाल करनेवाले अधिकारी हैं, उनका पूरा नियन्त्रण है और उन्हें ही निर्णयका हक है। यह सच है कि प्रबन्ध-समिति पूरी गम्भीरतासे बजट निश्चित करती है। लेकिन नेकदिलीके कारण अध्यक्षको जब प्रबन्ध-समितिसे सलाह लिये बिना देखरेख करनेवाले अधिकारियों के नाम कोरे चैक जारी करनेके लिए राजी कर लिया जाता है, तो बजट एक ढकोसला बनकर रह जाता है और उसका कोई लाभ नही होता। जो काम हुआ है उससे केवल यह झलकता है कि हर जिलेमें एक ही आदमीने सोच-विचारकर या बिना सोचे-विचारे काम किया है। आपत्कालमें तानाशाही ढंगकी ताकत अच्छी होती है, लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि रचनात्मक कार्यमें समन्वय रखनेके लिए कार्यकारिणीका कुछ नियन्त्रण होना महत्त्वपूर्ण है। आज तो लेखा-विभाग एक रस्मअदाई जैसी चीज है और वह साधारणतया कार्यकारिणीके निर्णयके आधीन

१. जी० एन० रजिस्टरके आधार पर।

होता है; जब कि जाँच विभाग सही राय लिखकर दे देनेवाली एक संस्था बनकर रह जाता है।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१०५)।

७८. भेंट: एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको

बालासोर
८ जून, १९३४

एसोसिएटेड प्रेसको दी गई भेंटमें श्री गांधीने कहा कि यदि मुझमें शक्ति होती तो मैंने अपनी बम्बई यात्राके दौरान इसका उपयोग मजदूरोंकी हड़तालका फैसला करानेके लिए अवश्य किया होता। परन्तु मुझे मालूम है कि मेरे पास ऐसी कोई शक्ति नहीं है। उड़ीसाकी पदयात्राकी समाप्तिपर अपना मत प्रकट करते हुए उन्होंने कहा:

मैंने उडीसाको देशके सूबोमें से सबसे ज्यादा गरीब माना है। यात्राके दौरान मै जिन गाँवोमे गया, उन्हे नजदीकसे देखकर मेरी यह धारणा और भी दृढ हो गई। काम न मिलनेसे लोगोमें भयावह बेकारी फैली हुई है। गाँवोमें सभी जगह मैंने हरिजनोमें स्वच्छतासे रहनेकी आदत देखी। कुछ गाँवोमें तो उनके घर अन्य गाँववालोके घरोकी बनिस्बत निस्सन्देह ज्यादा साफ थे। सामाजिक पाबन्दियोके बावजूद, वे मुझे प्रतिभामें भी दूसरोकी अपेक्षा किसी तरह कम नही लगे।

इस यात्राकी सुखद स्मृतियाँ मेरे साथ है। यदि उपयुक्त अवसर आया तो मै फिर वहाँ इससे भी लम्बा दौरा करूँगा। उडीसाके सहयोगियोने सहनशीलताकी बड़ी शक्ति दिखाई। उनकी संगठनकी योग्यता भी कम न थी। दो बार रातमें आँधियाँ आईं। स्वयंसेवकोने आपत्कालका सामना किया और हमने आम तौरपर वे रातें भी आरामसे गुजारी।

हमारे दलमें रमादेवी[1] के आश्रमकी लड़कियाँ थी। नंगे पैर चलनेकी उनकी शक्ति पर मुझे आश्चर्य हुआ। हर सुबह, जैसे ही हम अपने उद्दिष्ट स्थानपर पहुँचते, वे लड़कियाँ हरिजन घरोमे चली जाती और वे जो कुछ देखती या करती उसकी रिपोर्ट मुझे देती थी। थकावट क्या होती है, यह कभी उन्होने जाना ही नही। उनमें से कुछ-एक यद्यपि ऐशो-आराममें पली थी, फिर भी उन्होने यात्राकी सभी कठिनाइयाँ सहन की। यह कोई आसान काम नही था। यदि उसी लगन एवं उत्साहसे काम होता रहे जो यात्रा के दौरान दिखाया गया था, और यदि कार्यकर्त्ता शहरोकी अपेक्षा गाँवोमें हरिजन-सेवा पर अधिक ध्यान दें तो परिणाम आश्चर्यजनक होगा। मुझे इसमें सन्देह नही कि सवर्ण हिन्दू मानसिक रूपसे तैयार है। परन्तु उन्हें कार्यमे प्रवृत्त

१. गोपबन्धु बाबूकी पत्नी, हरिजन-सेवक-संघकी सचिव।

करनेके लिए उनके साथ सम्पर्क रहना चाहिए और यह सम्पर्क गाँवोंमें काम करनेवाले शुद्ध मनवाले कार्यकर्त्ताओं द्वारा ही रखा जा सकता है। यह सम्पर्क अनियमित रूपसे नही, नियमित रूपसे रहना चाहिए।

अन्तमें श्री गांधीने कहा कि सिवाय बंगालके और कहीं पदयात्राएँ नहीं की गईं। गांधीजी ने कहा — मेरी रायमें ये यात्राएँ अनुभव बढ़नेके साथ ज्यादा लोकप्रिय हो जायेंगी।[1]

कांग्रेस-संगठनोंपर से प्रतिबन्ध हटानेके बारेमें जारी की गई सरकारी विज्ञप्ति पर फिलहाल किसी तरहकी टिप्पणी करनेसे गांधीजी ने इनकार कर दिया।

यह कहे जाने पर कि इस मामलेमें सारा देश उनके नेतृत्वकी प्रतीक्षा कर रहा है, उन्होंने मुस्कुराते हुए उत्तर दिया, देशको ज्ञात होना चाहिए कि उनका नेतृत्व क्या है।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ९-६-१९३४; बॉम्बे क्रॉनिकल, ९-६-१९३४ भी

७९. भाषण: बालासोरमें

[८ जून, १९३४][2]

श्री गांधी लगभग १५ मिनट तक बोले। अपनी पदयात्राको समाप्त करनेकी वजह बताते हुए उन्होंने अपना भाषण आरम्भ किया और कहा कि दो रातोंकी मूसलाधार वर्षासे वे बिलकुल सराबोर हो गये थे और फिर तुरंगा नामक स्थानपर भी दिन-भर वर्षा होती रही, इसलिए उन्हें अपनी पदयात्रा समाप्त करनी पड़ी। इसके बाद उन्होंने अस्पृश्यताकी बात करते हुए कहा, हम सब एक ही परमेश्वरके पुत्र हैं। वह अपने पुत्रोंमें किसी तरहका भेद नहीं रखता, इसलिए अगर हम भेद करें तो यह हमारे लिए पाप होगा। हिन्दुओंकी विभिन्न जातियों, सवर्ण हिन्दुओं और हरिजनों तथा हिन्दुओं और गैर-हिन्दुओंके बीच किसी तरहका भेदभाव नहीं होना चाहिए, क्योंकि सभी भाई-भाई हैं। इस भेदभावको दूर न करना पाप है। जो धर्म ऐसे भेदभावोंको नष्ट नहीं करता, उसका इस पापके फलस्वरूप नष्ट हो जाना अवश्यम्भावी है। श्रोताओंसे उन्होंने अस्पृश्यताको त्याग देनेका निवेदन किया।

इसके बाद उन्होंने मादक द्रव्योंकी चर्चा की और कहा कि इनके सेवनसे व्यक्तिकी बुद्धि जड़ हो जाती है और यह पागलपन तकका कारण बन सकता है। श्रोताओंको उन्होंने सभी प्रकारके नशे त्यागनेके लिए प्रेरित किया।

१. आगेका अंश बॉम्बे क्रॉनिकलसे लिया गया है।

२. हरिजन, १५-६-१९३४ में छपी "साप्ताहिक चिट्ठी" से।

अन्तमें उन्होंने कहा कि हरएकको कुछ-न-कुछ काम करना चाहिए, क्योंकि बेकार रहना तो हमेशा ही बुरी बात है। श्रोताओंसे उन्होंने कहा कि अगर उनके पास और कोई काम न हो तो वे चरखा चलायें। इससे उड़ीसाकी गरीबीका अन्त हो सकता है।

इसके बाद उन्होंने हरिजन कोषके लिए चन्दा माँगा।

अंग्रेजीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० १०६१९) से; सौजन्य : उड़ीसा सरकार।

८०. पत्र : तारा जसवानीको

९ जून, १९३४

चि० तारा,

यह पत्र मैं चलती ट्रेनमें लिख रहा हूँ। ५० रुपये मिले। वहाँ जो हो सके, सो करना। सुशीलाबहनने तेरी बात सुनाई थी, सुनकर प्रसन्न हुआ। जब इच्छा हो लिखती रहना।

नटवरलाल रंगून चले ही गये होंगे।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती ताराबहन
मार्फत, मैसर्स कान्तिलाल मोहनलाल एण्ड कम्पनी
३७, बरटोला स्ट्रीट
कलकत्ता

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८७८६) से।

८१. भाषण : कपड़ा मिलके मजदूरोंके बीच, नागपुरमें

९ जून, १९३४

वर्धा जाते हुए महात्मा गांधी मेलसे यहाँ पहुँचे। रेलवे स्टेशनपर कपड़ा मिलके मजदूरोंने (जो हड़ताल पर थे) बड़ी तादादमें उनका स्वागत किया।

एकत्रित लोगोंके बीच बोलते हुए गांधीजी ने कहा कि मैंने मजदूर-नेताओंको कल मुलाकातके लिए वर्धामें आमन्त्रित किया है। मैं तभी उनसे हालातकी जानकारी प्राप्त करूँगा और उन्हें अपनी सलाह दूँगा। मुझे आशा है कि वह उनके लिए हितकर होगी।

गांधीजी ने आश्वासन देते हुए कहा कि आप लोग तो आजके मजदूर हैं, मैं तो पिछले २० बरसोंसे मजदूर हूँ। यद्यपि मैंने वकीलकी हैसियतसे काम किया है, पर हमेशा मै मजदूरोंमें रहा हूँ और मैंने उनकी ही तरह जीवन-यापन किया है।

गांधीजीको ५० रुपये चन्दा स्टेशनपर प्राप्त हुआ।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ११-६-१९३४

८२. महागुजरातसे

पदयात्राके प्रति नापसन्दगी किसीने व्यक्त नही की है, फिर भी सभी प्रान्तोंमे थोड़ी-बहुत खिन्नता तो है ही। सबको लगता है कि मै एक शहरसे दूसरे शहर (किसी वाहन द्वारा) यात्रा करूँ। मेरा मन अब रेल और मोटरकी सवारीसे बिलकुल ऊब गया है। इस समय हम एक खेतमें पड़े है। ऊपर आकाश है, नीचे धरती। हम सब मिलकर कोई पचास व्यक्ति होगे। इससे ज्यादा ही होंगे, कम नही। रेल-मोटरसे इतनी दूर कि उनकी आहट तक न आये। गाँववालोके निकट सम्पर्कमें आना, गाँवके हरिजनोसे पहचान करना, यह कोई मामूली बात नही है। हमारे रसोईघरमें रोज गाँवके हरिजन भोजन करते है। रोज रातको मैजिक लालटेनके साथ गोपबन्धु बाबूके व्याख्यान होते है। रोज हमारी लड़कियाँ हरिजन-बस्तीमें जाती है। आगे-आगे रमादेवीके आश्रमकी पाँच लड़कियाँ चलती है। उन्हें कोई सुविधा नही चाहिए। सवेरे तीन बजे अपने-आप उठ जाती है और चल पड़ती है। सारा दिन मेहनत करती है। यदि इस प्रकार जीवन विताया जाये, तो मुझे लगता है, जल्दी ही अस्पृश्यताका नामोनिशान मिट जाये। लेकिन यह हिसाब यदि गलत भी सिद्ध हो जाये, तो भी इस प्रवृत्तिके विषयमें यह तो कहा ही जा सकता है कि 'इसमें अभिक्रमका नाश नही है, प्रत्यवाय होगा नही, तथा इसका अल्प पालन भी मनुष्यका महान् पापसे उद्धार कर सकता है।'[1]

मैंने अपना प्रत्यक्ष अनुभव कहा है। किन्तु दूसरे प्रान्तोके साथी इसपर क्यों विश्वास करेंगे? 'यथापिण्डे तथा ब्रह्माण्डे' यह महावाक्य कैसे उनके गले उतरेगा? बंगालने कड़वा घूंट पिया। उसने अपने सब दिन उड़ीसाको दे दिये। और अब सुनता हूँ, बंगालमें साथी अनेक स्थानोमें पदयात्राका आयोजन कर रहे है। ऐसा और भी कही हो रहा है, अभी सुना नही। क्यो नही हो रहा? सद्भावपूर्वक, त्यागवृत्तिके साथ यदि पदयात्रा हो, तो अस्पृश्यता कितने दिन टिक सकती है? किन्तु यह विश्वास साथियोंमें पैदा कैसे किया जाये?

अतः अब दूसरे प्रान्तोंमें किसी तरह घूमना ही होगा। एक जगह पर जमकर बैठ जानेकी बात भी कठिन मालूम होती है, फिर भी साथियोंको इतनी तकलीफ

१. भगवद्गीता, अध्याय २, श्लोक ४०।

तो गवारा करनी ही चाहिए। जहाँ मैं बैठ जाऊँ, वहाँ प्रान्तके सब लोग आवें, मिलें-जुले, विचार-विनिमय करें, और अपने-अपने स्थानकी प्रायश्चित्त-थैली लायें। मुझे बहुतोसे तांबेके पैसे चाहिए, कुछ थोड़ोके रुपये नही। रुपयोंसे अस्पृश्यता नही जायेगी। धनसे कभी हृदय पिघले हो, मैं नही जानता। किन्तु प्रत्येक व्यक्तिका पैसा यदि उसके हृदय-परिवर्तनका सूचक हो, तो इससे हरिजनोंका काम नही बनेगा, इससे तो उनका काम बनेगा जो अपने-आपको सवर्ण मानते है। अतः गुजरात, काठियावाड़ और कच्छसे मैं यह आशा करता हूँ कि वे

१. यह पहचाने कि यह प्रवृत्ति शुद्ध धार्मिक प्रवृत्ति है;

२. लोगोके बीच जायें और उन्हे अस्पृश्यता-निवारणका सन्देश दें; विरोध को सहन करें;

३. व्यक्तिसे दान लें, यदि वह प्रायश्चित्तके रूपमें दे तो — मेरे लिए नही;

४. मनका मैल धोकर, स्वार्थको छोड़कर और राग-द्वेषसे ऊपर उठकर मुझसे मिलने आएँ;

५. अहमदाबादमें भी मुझे यहाँ-वहाँ घुमानेका आग्रह न रखें। जहाँ बैठना चाहूँ, वहाँ बैठने दें। काठियावाडसे दुःखभरा तार आया है। वे दो दिन काठियावाड़के लिए माँगते है। उनकी माँगमें सार है। क्या किया जाये, यह अभी इस समय तक तो नही सूझा। किन्तु इसके प्रकाशित होते तक कुछ निर्णय हो जायेगा। मन तो, जहाँ हूँ, वही घूमते रहनेको कहता है। किन्तु मै जानता हूँ, मन जो कहे हमेशा वही करना कर्त्तव्य होता है, ऐसी बात नही है। मनका विरोध भी करना पड़ता है। मीराबाईके शब्दोमें, 'काचे तांतणे मने हरजीये बाधी, जेम ताणे तेम तेमनी रे।'

हरिने मुझे कच्चे धागेसे बाँध रखा है। जितना ही वे मुझे खीचते हैं, उतनी ही मैं उनकी होती जाती हूँ।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, १०-६-१९३४

८३. सन्देश : अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध-प्रतिरोधकोंको

वर्धाके पते पर
१० जून, १९३४

प्रिय मित्र,

पत्रके लिए आपको धन्यवाद। शान्ति और अहिंसामें आस्था रखनेवालोंको तुरन्त ठोस परिणामोंकी अपेक्षा नहीं करनी चाहिए। असीम धैर्य ही अहिंसाका गुण है; अधीरता हिंसाका। वे यह भी समझ लें कि अहिंसा कोई निष्क्रिय स्थिति नहीं है। इसपर ध्यान केन्द्रित करनेसे दुनियाकी ज्यादासे-ज्यादा क्रियाशील ताकतें खुलकर खेलने लगती हैं।

हृदयसे आपका

अंग्रेजीकी फोटो-नक़ल (जी० एन० ९७५१)से। सी० डब्ल्यू० ६२८५से भी; सौजन्य : मीराबहन।

८४. पत्र : क० मा० मुन्शीको

१० जून, १९३४

भाई मुन्शी,

देखूंगा, आप इतने सारे वकील कितना क्या उगाहते हैं।

स्वदेशीके सम्बन्धमें जो बैठक तय की है, उसका समय संसदीय बोर्डके समयके साथ टकरायेगा तो नहीं? मैं सभी विरोधोंका उत्तर देने तथा अपनी योजना बतानेके लिए तैयार रहूँगा। किन्तु मेरा कहना सबके गले उतरेगा या नहीं, यह तो भगवान जानें।

सत्यको ध्यानमें रखकर ढेर-सारा पैसा कमाइए, परन्तु अपने ऊपर उसे खर्च कीजिए कंजूसकी तरह।

बापूके आशीर्वाद

श्री क० मा० मुंशी
रिज रोड, मलाबार हिल,
बम्बई

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५४३)से; सौजन्य : क० मा० मुंशी।

८५. पत्र : परीक्षितलाल एल० मजमूदारको

११ जून, १९३४[1]

भाई परीक्षितलाल,

आपको पीटा गया,[1] इसके लिए बधाई। [इस घटनाके सम्बन्धमें] अधिकारियों को लिखते रहिए। क्या बड़ौदा और नवसारीमें इसके निमित्त सभा नहीं हो सकती? यह भार आपको नहीं, हरिजनोंको पड़ी है। अतः जो उपाय किये जा सकते हों, उन्हें करनेमें बिलकुल मत हिचकिचाइए।

भावनगरकी बात समझा। उसे पूरे दो दिन मिलने चाहिए। इसके बिना काम पूरा नहीं होगा। अहमदाबादमें तो सब समय मोटरका उपयोग होगा ही। मोटरके सर्वथा त्यागकी स्थितितक मैं अभी नहीं पहुँचा हूँ। किन्तु आपको यह डर लगा था, यह पढ़कर मुझे अच्छा लगा।

बापूके आशीर्वाद

श्रीयुत परीक्षितलाल मजमूदार
हरिजन-आश्रम
साबरमती

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४००१)से। सी० डब्ल्यू० ११५से भी; सौजन्य : परीक्षितलाल एल० मजमूदार।

८६. पत्र : व्रजकृष्ण चाँदीवालाको

११ जून, १९३४

चि० व्रजकृष्ण,

तुमारा खत मिला।

तुमको मैं हरिजन शाला दूं? रु० २५ दर माह मिलेगा। तुमको चर्खा काम के लिये उसी दर माहसे किसी देहातमें भेजुं? चर्खा शास्त्रका अभ्यास करेगा? तुमको साबरमती हरिजन आश्रममें दस रुपयेके दरमाहसे भेज सकता हूं। वहां जानेकी

१. परीक्षितलाल हरिजन सेवक संघकी गुजरात शाखाके सचिव थे। बड़ौदा राज्यके एक गाँवमें रास्तेकी प्याऊसे उन्होंने पानी पिया और उन्हें हरिजन समझकर पीटा गया।

हिम्मत है? इन बातोंमें मेरे विचार सख्त होते जाते हैं और किसी तरहसे अस्पृश्यता न मिटेगी, न चर्खा बनेगा, और क्या लिखूं? सोचो और लिखो।

बापूके आशीर्वाद

जी० एन० २४१३की फोटो-नकलसे।

८७. पत्र : नारणदास गांधीको

वर्धा
१२ जून, १९३४

चि० नारणदास,

तुम्हारे सब पत्र मिल गये हैं। किन्तु मुझे जवाब देनेकी फुर्सत कहाँसे मिलती! आज तो मैं १ बजे उठकर लिखने बैठ गया हूँ।

तुमने वहाँ ठीक काम हाथमें ले रखा है। यहाँ ऐसी नैतिक समस्याएँ खड़ी हो गई हैं कि तुम्हारी बड़ी जरूरत महसूस हो रही है। फिर भी तुमने मेरी सम्मति से वहाँका काम हाथमें लिया है, इसलिए फिलहाल तो क्या कर सकता हूँ। वहाँका तुम्हारा प्रयोग चलते रहने देना चाहिए। मुझे यह बात गड़ती है कि वह स्थान राजकोट है। तुम्हें इसमें कोई परेशानी नहीं हो रही है इसलिए निश्चिन्त हूँ। मेरे विश्वासका आधार तुम्हीं हो।

मैं माने ले रहा हूँ कि तुम अहमदाबाद या भावनगरमें मुझसे मिलोगे। क्या तुम प्रेमा अथवा गंगाबहनको वहाँ रखना चाहोगे।

. . .[1] फिर फिसल गया और सो भी बुरी तरह। अब उसे यहाँसे जाना ही पड़ेगा। आज अन्तिम निर्णय हो जायेगा। विनोबा सात दिनका उपवास कर रहे हैं। यह तय हुआ है कि अब विनोबा यहीं रहेंगे। किन्तु इतना ही बस नहीं है। उनके पास तुम्हारे जैसा कोई व्यक्ति होना चाहिए। क्या तुम मुझे कोई नाम सुझा सकते हो?

अब जमनादासके बारेमें। उसकी शिकायत बिल्कुल गलत है; किन्तु अविश्वासका क्या इलाज हो सकता है? उसने जब कभी कुछ पूछा है या मदद माँगी है, उसे जवाब दिया गया है और मदद पहुँचाई गई है। बिना पूछे भी उसे मार्गदर्शन देनेकी कोशिश करता रहा हूँ। यदि तुम कहो कि मैंने तुम्हारी परवाह नहीं की तो जमनादास भी ऐसा कह सकता है। जब किसीके कामके विषयमें मुझे कोई सन्देह न हो और सलाह देनेकी जरूरत न लगे तो निरर्थक क्यों लिखता रहूँ। जब कभी भी उसने चाहा है मैंने उसे दौरोंमें साथ रखा है; किन्तु वह कुछ सीख ही न पाये तो मैं क्या कर सकता हूँ? जो मेरे साथ यात्राओंमें इस तरह अनियमित होता रहे, उसे मैं क्या काम दे सकता हूँ?

१. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिया गया है।

इस समय तो इतने अधिक लोग मेरे साथ हैं कि उनमें और किसीको जोड़ना एक समस्या ही है। इन सबकी मुझे जरूरत तो नहीं है। अगर जमनादास भी इन्हींमें आकर मिल जायें तो वह एक और अतिरिक्त व्यक्ति हो जायेगा। मैं तो अपने काममें ही लगा रहूँगा। परिस्थिति ही ऐसी है। अगर तुम उसे समझ सको तो उसे भी समझाना। यदि मेरे कहनेसे समझ जाये तो मैं उसका मार्गदर्शन करनेके लिए तैयार हूँ। मैं तो उसे कोई गांव सौंप दे सकता हूँ। क्या वह फिनिक्स जा सकेगा? क्या तुम्हारे साथ रहकर ही वह कोई काम नहीं कर सकता? तुमने पाठशालाका काम ठीक जमा दिया है। अब वह उस कामको अपने हाथमें क्यों नहीं ले लेता? अथवा वह अपने शरीरको सुधारनेके लिए ही कहीं क्यों नहीं चला जाता? वह अल्मोड़ा जानेको तैयार है? क्या वह अपने मनको ठीक समझ रहा है? क्या वह विवाह करना चाहता है? यह सब उसे पढ़नेके लिए दे देना।

मैं शर्माके विषयमें सोचता रहा हूँ। उसने रामदासके लिए सब कुछ छोड़ दिया है। वह रामदासको फिनिक्स ले जाना चाहता है। अभीतक निश्चित कुछ नहीं हुआ है, आज हो जायेगा। जमना पर मेरा एक पत्र उधार है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८८०२ से भी, सौजन्य : नारणदास गांधी।

८८. पत्र : एम० आर० मसानीको

१८ जून, १९३४

प्रिय मसानी,

जिन मसविदोंको तुम मेरे पास छोड़ गये थे, मैंने उन्हें पढ़ लिया है। कांग्रेस समाजवादी दलके कार्यक्रमको भी मैंने पढ़ लिया है।

कांग्रेसमें समाजवादी दलके गठनका मैं स्वागत करता हूँ। लेकिन छपी हुई पुस्तिकामें जो कार्यक्रम छपे हैं, मुझे वे पसन्द हैं, मैं ऐसा नहीं कह सकता। मुझे ऐसा लगता है कि इसमें भारतीय परिस्थितियोंको नजरन्दाज किया गया है और इसके बहुत-सारे प्रस्तावोंमें निहित यह धारणा कि वर्गों और जन-साधारणके बीच अथवा मजदूरों और पूँजीपतियोंके बीच संघर्ष अनिवार्य है और वे पारस्परिक हितके लिए काम कभी नहीं कर सकते, मुझे ठीक नहीं लगती। मेरा खुदका एक लम्बे अरसेका अनुभव निस्सन्देह इसके प्रतिकूल है। जरूरी यह है कि मजदूर अथवा कर्मचारीगण अपने अधिकारोंको जानें और यह भी जानें कि उनपर उन्हें किस तरह कायम रहना चाहिए। और चूँकि हर अधिकारके साथ सदा ही अनुकूल कर्त्तव्य जुड़ा हुआ है, इसलिए मेरी रायमें जो अधिघोषणा कर्त्तव्य पूरा करनेकी आवश्यकता पर बल नहीं देती और यह नहीं बताती कि कर्त्तव्य क्या है, वह अधूरी है।

आप अभी यह तो नहीं चाहेंगे कि मैं आपके कार्यक्रमकी हर धाराकी जांच करूँ, फिर भी अगर आप बहुत इच्छुक हैं और मेरी सुविधाके बारेमें विचार करना आपको बुरा न लगे तो मैं आपको और जिसे आप चाहें उसे एक निश्चित समय दूँगा और तब आपके सारे कार्यक्रम पर सविस्तार आपसे बात कर सकूँगा।

आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४१२६)से। सी० डब्ल्यू० ४८८४ से भी; सौजन्य: एम० आर० मसानी।

८९. पत्र: प्रभाशंकर पट्टणीको

बम्बई[1]
१४ जून, १९३४

सुज्ञ भाईश्री,

आपके दोनों पत्र मिले। आपकी सुविधा और आपकी इच्छामें ही मेरी इच्छा है। आपकी अड़चनें मैं समझ गया हूँ। आप तो सब-कुछ स्वागत-समितिको सौंप दीजिए, और उसके अनुकूल बने रहनेके लिए जितना उचित हो, मात्र उतना करके सन्तोष कीजिए। अपने प्रेमका प्रदर्शन करनेकी शक्ति व्यक्तिमें हमेशा एक-सी नहीं रहती। बाकी मिलने पर।

आपका,
मोहनदास

गुजरातीकी फोटो-नकलसे। (जी० एन० ५९३३)से। सी० डब्ल्यू० ३२४९से भी; सौजन्य: महेश: पी० पट्टणी।

१. साधन-सूत्रमें यह गांधीजीकी हस्तलिपिमें नहीं है।

९०. भेंट : हरिजन सेवक संघके सदस्योंको[1]

वम्बई,
१४ जून, १९३४

गांधीजी वम्बई पहुँचते ही सबसे पहले प्रान्तीय हरिजन सेवक संघके सदस्यों से मिले। सदस्योंका परिचय करानेके वाद संघके अध्यक्ष सेठ मथुरादासजीने संघका संक्षिप्त कार्य-विवरण गांधीजीको सुनाया। छात्रवृत्तियोंपर संघ काफी पैसा खर्च कर रहा है। करीव २०० हरिजन कुटुम्बोंके रहने लायक तीन चालोंका संचालन भी कर रहा है। संघ और क्या काम करे, इस प्रश्नके उत्तरमें गांधीजीने कहा कि हमारे कार्यक्रममें मन्दिर-प्रवेशका प्रश्न तो एक महत्त्वकी चीज है ही। इसके साथ ही मैं यह भी चाहता हूँ कि आप लोग सवर्ण हिन्दुओंके वीच ऐसी जागृति पैदा करें कि वे हमारे कार्यक्षेत्र तथा अस्पृश्यताकी बुराई दूर करनेकी आवश्यकताका अनुभव करने लगें। यह काम शुद्ध प्रामाणिक स्वयंसेवक ही कर सकते हैं। दूसरी चीज है रचनात्मक कार्यका विस्तार। अच्छा हो, यदि संघकी ओर से एक सुन्दर भोजनालय खोला जाये, जहाँ जाते हुए हरिजनोंको लगे कि वे विना रोक-टोक वहाँ भोजन करने जा सकते हैं। एक सुव्यवस्थित भोजनालय हरिजनोंके लिए संस्कृतिका सुन्दर केन्द्र वन सकता है। और लोग यह भी देख सकते हैं कि हरिजनोंकी खानेकी आदतें उतनी ही साफ हैं जितनी कि सामान्य सवर्ण हिन्दुओंकी। यह सच है कि कुछ हरिजनोंके कपड़े साफ नहीं रहते। परन्तु जिस प्रकार सवर्ण हिन्दुओंमें ऐसे गंदे कपड़े पहननेवाले कम ही लोग भोजनालयोंमें जाते हैं, उसी तरह भविष्यमें ऐसे हरिजन भी इन जगहोंमें नहीं जायेंगे। ये जो दो वातें कही हैं ये उदाहरणके तौर पर वताई हैं। वम्वईके हरिजनोंकी अगर आप लोग पूरी जनगणना कर डालें और अस्पृश्यताकी वदौलत उनको जो असुविधाएँ और अभाव हैं, उनकी एक सूची वना लें, तो आप एक निश्चित कार्यक्रम तैयार कर सकते हैं। मुझे आशा है कि कई वातोंमें, जिनमें निगम ही प्रभावी मदद दे सकता है, वम्वई-निगमसे भी सहायता लेनेका आप उद्योग करेंगे।[2]

थोड़ी वातचीतके वाद महात्मा गांधीने वम्वई वोर्डके इस कामकी सराहना की कि उसने नगर-सुधार न्यासके तीन चाल किराये पर ले लिये और उन्हें हरिजनोंके

१. यह तथा अगला शीर्षक "साप्ताहिक चिट्ठी" से लिये गये हैं।

२. सेठ मथुरादास, दहनुकर, अवन्तिका वाई गोखले, हंसा मेहता, वी० एल० मेहता, पी० वाल्, नारायण काजूलकर, डॉ० सोलंकी, एस० के० वोले, जे० के० मेहता, और के० एल० झवेरी।

३. आगेका अंश वॉम्बे क्रॉनिकल, से है।

इस्तेमालके लिए दे दिया। उन्होंने यह इच्छा भी व्यक्त की कि स्थानीय बोर्ड हिन्दू मकान-मालिकों पर प्रभाव डाले कि वे अपने मकान हरिजनोंको किरायेपर दें और होटलोंके हिन्दू मालिकोंको समझाकर आग्रह करें कि वे हरिजनों पर लगे प्रतिबन्ध हटा लें। महात्माजीने बोर्डसे कहा कि हिन्दुओंसे आग्रह करें कि वे हरिजनोंको घरेलू नौकर और कार्यालयोंमें कर्मचारी नियुक्त करें। उन्होंने बोर्डको इस तथ्यसे अवगत कराया कि यद्यपि किसी भी जगह अस्पृश्यता-निवारणके कार्यके प्रति विरोध नहीं है फिर भी हर जगह उदासीनता और सुस्ती है। उन्होंने कहा कि मैं चाहता हूँ कि हरिजन-संघ इस सुस्तीके विरुद्ध संघर्ष करे। उन्होंने एकत्रित धनके विनियोजनके सम्बन्धमें सहानुभूतिपूर्वक विचार करने और उसके बारेमें बोर्डसे सिफारिश करनेका वायदा किया।[1]

एक प्रश्नके उत्तरमें गांधीजीने कहा कि हरिजन-कार्यका राजनीतिसे कोई वास्ता नहीं है। संघ इस कामको शुद्ध धार्मिक और सामाजिक दृष्टिकोणसे करता है। इसलिए संघ हर किसीके लिए खुला है। उन्होंने कहा, मैं तो चाहूँगा कि यदि वे आयें तो सभी पद गैर-कांग्रेसीजन ग्रहण करें। कांग्रेसी लोग उनके अधीन काम करनेमें गर्वका अनुभव करें। हिन्दू-धर्ममें सुधारका यह शक्तिशाली कार्य किसी एक दल या गुटकी बपौती नहीं हो सकता। उन्होंने कहा कि मुझे यह कह सकनेकी खुशी है कि मेरे दौरेमें मैंने कई जगहों पर देखा है कि सरकार गैर-कांग्रेसी लोगोंके अधीन बिना किसी शिकायतके काम कर रही है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-६-१९३४; तथा बॉम्बे क्रॉनिकल, १५-६-१९३४

९१. भेंट: गांधी सेवा सेनाके सदस्योंको

बम्बई
१४ जून, १९३४

कार्यक्रममें दूसरी बात श्रीमती गोसीबहन कैप्टेनके नेतृत्वमें आई बम्बईकी जनसेविकाओंसे मुलाकात थी। इनके सेवा-कार्यका पता बहुत कम लोगोंको होगा। पर गोसीबहनने अपने कार्य-विवरणका पारायण करनेमें गांधीजी का समय नष्ट नहीं किया। वे तो गांधीजी से इस विषयपर दो-चार शब्द कहलवाना चाहती थीं कि जिन सेविकाओंमें उदासीनताकी वृत्ति है, वे क्या करें। इससे गांधीजीको मूल बुराई दूर करनेकी जरूरत पर बोलनेका अवसर मिला। उन्होंने पूछा, कमजोर शरीरवाली क्या करें? गांधीजी ने

१. बम्बई प्रान्तीय बोर्डने गांधीजी से प्रार्थना की कि वे केन्द्रीय बोर्डसे उसे यह अनुमति दिला दें कि वह बम्बईमें इकट्ठे हुए कोषमें से ५० के बजाय ७५ फीसदी रख ले।

कहा कि एक काम है, जिसे वे आसानीसे कर सकती हैं। एक-आध हरिजन-बालक या बालिका अपने यहाँ रखकर उससे सेवा करा सकती हैं। हृदय-परिवर्तन और सेवा-भावनाकी इच्छा भर हो, सेवाका क्षेत्र तो हम सबके लिए असीम है। और जहाँ घरके बड़े-बूढ़े इस सुधारके विरोधी हों, वहाँ बहनें क्या करें? इसमें सन्देह नहीं कि उनके मार्गमें काफी कठिनाई है। परन्तु ऐसेमें ही सेवा करनेका अवसर भी तो अच्छा मिलता है। सबसे पहले उन्हे नम्रता तथा दृढ़तापूर्वक अपने बड़े-बूढ़ोंको अपने पक्षमें करना चाहिए। अपने विश्वासकी खातिर जो भी कष्ट उन्हें झेलने पड़ें, उनके लिए उन्हें हमेशा तैयार रहना चाहिए। सुधारके हर कदममें आचरण बहुत बड़ी चीज है। सुधारकोंका शुद्ध हृदय ही दूसरोंके हृदयको पिघला सकेगा।[1]

महात्मा गांधीने अपने भाषणके दौरान महिलाओंको हरिजन-उद्धार कार्यमें अधिकाधिक दिलचस्पी लेनेको कहा और हरिजन स्त्रियोंमें स्वास्थ्य, सफाई आदिके सम्बन्धमें ज्ञानका प्रचार करनेकी सलाह दी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-६-१९३४; तथा बॉम्बे क्रॉनिकल, १५-६-१९३४

९२. टिप्पणियाँ

जे० के० कूप-निधि[2]

ठक्करबापाने जो अपील की है, मैं उसकी महत्ता पर आसानीसे जोर दे सकता हूँ। यह अपील हरिजनके पिछले अंकमें प्रकाशित हुई थी। उसमें हरिजनोंके लिए कुएँ बनवानेके लिए चन्दे माँगे गये थे। पुरी और कटकके जिलोंमें से गुजरते हुए मैंने लगभग सब जगह पानीकी कमी देखी। जब सब जगह पानीकी कमी हो तो पाठक कल्पना कर सकते हैं कि हरिजनोंकी क्या दुर्दशा होगी। यह ऐसा दान है जिसके लिए सभी सनातनी सुधारक और दूसरे लोग चन्दा संग्रह करके दे सकते हैं। यह स्मरण रखा जाये कि जहाँ हम तर्क-विहीन पूर्वग्रहके कारण हरिजनोंको जीवनकी एक मूलभूत आवश्यकता [पानी]का उपयोग करनेसे रोकते हैं, वहाँ हरिजनोंके उपयोगके लिए बनाये गये हर एक कुएँसे हरिजनोंका ही दुःख दूर नहीं होगा, बल्कि पानीकी सामान्य कमी भी पूरी होगी। हरिजनोंके लिए बनाये गये सब कुएँ उन लोगोंके लिए भी जो उनका उपयोग करना चाहेंगे, उपलब्ध होंगे। इसलिए

१. आगेका अंश बॉम्बे क्रॉनिकल, से है।

२. एक सज्जनने, जो गुमनाम रहना चाहते थे, जून, १९३३ में २५,००० रु० की रकम दानमें दी थी। इस रकमका भुगतान २००० रु० की मासिक किश्तों द्वारा होना था और इसका उपयोग सारे देशमें हरिजनोंके लिए कुएँ बनवानेके लिए किया जाना था। इस रकमकी पूरी अदायगी हो चुकनेके बाद इसका यह नामकरण दिया गया था।

मुझे आशा है कि ठक्कर बापा द्वारा की गई अपीलको मानकर लोग उस निधिमें उदारतापूर्वक दान देंगे।

सही कदम

जो वर्ग 'दलित' कहे जाते थे, वे अबसे 'हरिजन' कहे जायेंगे और 'अपराधशील कबीले 'बनजारे कबीले' कहे जायेंगे — यह घोषणा करनेके लिए मध्य-प्रान्तकी सरकार बधाईकी पात्र है। 'दलित वर्ग' और 'अपराधशील कबीले' ये दोनो नाम निश्चय ही अपमानजनक थे। हम आशा करते हैं कि बाकी सरकारें भी मध्यप्रान्त द्वारा प्रस्तुत किये गये उदाहरणका अनुसरण करेंगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १५-६-१९३४

९३. हरिजन बनाम अहरिजन

हरिजन-कार्यकर्त्ताओंकी बैठकमें उस दिन एक प्रश्न यह भी आया था कि "हरिजनोंमें रचनात्मक कार्य करनेकी अपेक्षा क्या यह अधिक अच्छा न होगा कि उनके अन्दर उनकी मौजूदा अवस्थाके प्रति इतना अधिक असन्तोष पैदा कर दिया जाये कि वे उसे सुधारनेके लिए खुद अपने पैरों पर खड़े हो सकें? आपकी यह सवर्णोंके हृदय-परिवर्तनवाली बात तो व्यर्थ-सी लगती है।" चूंकि यह महत्त्वका प्रश्न है, इसलिए इसके उत्तरमें मैंने उस बैठकमें जो कहा था, उसका आशय दे देना मैं उचित समझता हूँ। प्रश्नमें आन्दोलनके क्षेत्रके प्रति अज्ञान भरा है। हरिजनोंमें असन्तोष पैदा कर देनेसे तत्काल तो उनका कष्ट दूर होनेका नही। इससे तो हिन्दू-समाजके अन्दर आज जो विकृत फूट मौजूद है वह और भी स्थायी हो जायेगी। इस आन्दोलनका उद्देश्य तो यह है कि हिन्दू-समाजके अन्दर सवर्णों और हरिजनोंके बीच जो नितान्त कृत्रिम भेद आज दिखाई देता है, वह समाप्त कर दिया जाये और हरिजन जिस न्यायके पानेके हकदार हैं, सवर्ण लोग वह न्याय उन्हे दे दें। इस तरह देखा जाये तो यह आन्दोलन प्रायश्चित्त और भूल-सुधारका ही एक आन्दोलन है। इसलिए एक ओर तो सुधारकोंको हरिजनोंके अन्दर रचनात्मक कार्य करना है, और दूसरी ओर धीरजसे, दलीलसे और सबसे अधिक अपने शुद्ध चरित्र-बलसे सवर्णोंका हृदय-परिवर्तन करना है। सुधारकोंमें यदि नम्रता, सहनशीलता और धैर्य होगा तो जिस अस्पृश्यता-निवारणकी बातको आज हमारे सनातनी भाई ताना दे-देकर घृणित और अधार्मिक कह रहे हैं, उसीको कल वे 'धर्मका सारतत्व' समझने लगेंगे। मनु महाराजने धर्मकी व्याख्या करते हुए क्या यह नहीं कहा है कि

विद्वद्‌भिः सेवितः सद्‌भिर्नित्यमद्वेषरागिभिः।
हृदयेनाभ्यनुज्ञातो यो धर्मस्तं निबोधत॥

"सामान्य रीतिसे जिसका परिपालन विद्वान्, सज्जन और रागद्वेषसे रहित मनुष्य करते हैं और जिसका अनुभव हृदयमें होता है, उसीको 'धर्म' समझना चाहिए।" इसलिए यदि मनु महाराजके बताये गुण सुधारकोमे होगे, तो इसमे सन्देह नही कि सनातनियोका हृदय पिघलेगा। और उनका हृदय-परिवर्तन हो या न हो, पर दलित लोगोकी इस प्रकार जो सेवा सुधारक करेंगे, उससे मानवोन्नति तो वस्तुतः होगी ही और वह कार्य स्वयं ही उस जन-सेवाका पुरस्कार होगा। ईश्वरकी सनातन जीवन-पुस्तकमें उस सेवाका अवश्य ही प्रतिष्ठापूर्ण उल्लेख रहेगा।

एक और प्रश्न था। वह यह कि "क्या आपका यह ख्याल नही है कि भूखसे मरते लाखो-करोडो किसानोका सवाल हरिजन-सेवासे कही अधिक महत्त्वका है? इसलिए क्या आप किसानोके संघ सगठित नही करेंगे, जिनमे, जहांतक उनकी आर्थिक स्थितिका सम्बन्ध है, हरिजन भी आ जायेंगे?"

ऐसा होता तो अच्छा ही था। किन्तु बदकिस्मतीसे यह जरूरी नहीं है कि किसानोकी आर्थिक स्थितिके सुधारके साथ-साथ हरिजनोकी आर्थिक स्थिति भी सुधर जाये। जो किसान हरिजन नही है, वह जितना चाहे या उसे जितना अवसर मिले उतना ऊँचा उठ सकता है, पर बेचारा दलित हरिजन ऐसा नही कर सकता। सवर्ण किसानकी तरह न तो भूमिपर ही उसका कोई अधिकार है और न उसे वह आजादीके साथ काममें ही ला सकता है। उसे हलवाहे भी मिलनेके नहीं। बहुत-सी जगहोंमे तो यह देखा गया है कि वह बेचारा आवश्यक बीज तक नही खरीद सकता। थोडी देरके लिए यह मान भी लिया जाये कि ठीक अहरिजन किसानकी तरह हरिजन किसान भी अपनी आर्थिक अवस्था सुधार सकता है, तब भी अनगिनत सामाजिक असुविधाओका शिकार तो वह पहले जैसा रहेगा ही। उसकी आर्थिक अवस्थाके सुधरते ही ये सब सामाजिक अत्याचार उसे और भी अधिक सालने लगेंगे। अत्याचारोका तभीतक उसे उतना अधिक भान नहीं है जबतक कि वह कगाल है। इसी कारण हरिजनोकी सेवाके लिए एक खास सघ बनानेकी जरूरत आ पड़ी, क्योंकि उनके अभाव और कष्ट भी खास और निराले ढंगके हैं। समाजके इस निम्नतम वर्गकी यदि यथेष्ट उन्नति हो गई, तो निश्चय ही उसके परिणामस्वरूप हमारा सारा समाज उन्नत हो जायेगा। इसके अलावा, साधारण किसानकी कोई उपेक्षा तो की नही जा रही है। अखिल भारतीय चरखासंघ किसानोकी आर्थिक अवस्थाको उन्नत करनेमें पूरी तरह से लगा ही हुआ है। यह सघ बराबर किसानोमे यह भाव पैदा कर रहा है कि कताई-बुनाईके गृह-उद्योगसे उनकी खेती-बारीकी साधारण आमदनीमें अवश्य ही खासी वृद्धि हो सकती है और इस तरह दुर्भिक्षके मुखमें पड़नेसे वे खुद अपने-आपको बचा सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १५-६-१९३४

९४. भाषण : महिलाओंके समक्ष, बम्बईमें[1]

१५ जून, १९३४

गांधीजी ने भाषण आरम्भ करते हुए श्रोताओंसे पूछा कि क्या मेरी आवाज साफ सुनाई दे रही है और पीछे बैठी महिलाओंने प्रसन्नतापूर्वक जवाब दिया कि वे ठीक-ठीक सुन पा रही हैं। . . .

भाषण देते हुए गांधीजी ने कहा — मेरे लिए यह प्रसन्नताकी बात है कि पुरुषोंकी सभामें भाषण देनेसे पहले मैं स्त्रियोंकी सभामें भाषण दे रहा हूँ। जो श्रद्धा और भक्ति स्त्रियोंमें है वह पुरुषोंमें कहाँ! इस दृष्टिसे वे पुरुषोंसे बढ़-चढ़कर हैं। (अस्पृश्यताके विरुद्ध) मैंने जो यह लड़ाई छेड़ी है, यदि इसमें मुझे बहनोंका पूरा सहारा मिल जाये, तो मै यह कह सकता हूँ कि मैंने आधीसे अधिक लड़ाई जीत ली। मुझे आशा है कि बम्बईकी बहनें इस अवसरको हाथसे नहीं जाने देंगी। समाजमें स्त्रियोंका महत्त्वपूर्ण स्थान है और इसलिए अगर कहीं वे सुधारका रास्ता रोककर खड़ी हो गईं तो यह दुःखकी बात होगी।

अस्पृश्यताका मूल उद्गम धर्ममें नहीं है। उच्चताके झूठे अहंकारने ही अस्पृश्यताको जन्म दिया है। अपनेसे दुर्बलोंको हम पैरों तले दबाये रहें, इसी मनोवृत्तिसे अस्पृश्यता पैदा हुई है। यह लम्बी अवधिसे इसीलिए चली आ रही है क्योंकि हरिजनोंके साथ कोई सम्पर्क नहीं रखा गया और उन्हें बुरीसे-बुरी बस्तियोंमें सड़ाया गया। हमारे समाजमें अगर वे सब लोगोंके साथ आजादीसे मिलने-जुलने लग जायें और बिलकुल बराबरीकी हैसियतसे सब काम-धन्धे करने लगें, तो कुछ ही दिनोंमें हमें यह देखकर अचरज होगा कि क्या ये वही तिरस्कृत हरिजन हैं!

सुधारकका काम इसलिए और कठिन हो गया है कि अस्पृश्यताको हमने धर्मका एक अंग मान लिया है। त्याग जरूरी है, बिना त्यागके सेवा असम्भव है। अतः अस्पृश्यताके इस पुरातन कलंकको धो-मिटानेके लिए जितना भी त्याग किया जाये थोड़ा है।

कोषके लिए अपील करते हुए गांधीजी ने इस बातको जनताके मनसे निकालनेका प्रयत्न किया कि वे हमेशा पैसा ही इकट्ठा करते रहते हैं। उन्होंने कहा कि मैं बम्बईकी महिलाओंसे हरिजन-कार्यके लिए सहायता माँगने आया हूँ — उस कार्यके लिए जो मुझे किसी भी अन्य चीजसे ज्यादा प्रिय है। पैसा देनेसे पहले लोगोंको ऐसा

१. पहला तथा अन्तिम अनुच्छेद बॉम्बे क्रॉनिकलसे है।

लगना चाहिए कि वे उस कामके लिए दे रहे हैं जो उन्होंने किया है या जिसके किये जानेमें उनकी सहमति रही है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-६-१९३४; तथा बॉम्बे क्रॉनिकल, १६-६-१९३४ भी

९५. भेंट : डॉ० भीमराव अम्बेडकरको

बम्बई
१६ जून, १९३४

उसी दिन तीसरे पहर डॉ० अम्बेडकरने डॉ० सोलंकी तथा अपने अन्य मित्रोंके साथ[1] गांधीजी से मुलाकात की। जब गांधीजी ने डॉ० अम्बेडकरसे हरिजन-सेवक संघके कार्यकी आलोचना करनेके लिए कहा, तो उन्होंने एक सलाह तो यह दी कि संघको शिक्षा और दवा-दारू पर इतना अधिक पैसा नहीं खर्च करना चाहिए, क्योंकि सरकार भी यह काम कर रही है और इस तरह इन कार्योंके प्रयासोंमें दोहराव होनेका खतरा है। फिर शिक्षासे मुख्य लाभ तो व्यक्तिको ही होता है। समाजको उस व्यक्तिकी शिक्षासे क्या लाभ होगा, यह तो उस शिक्षित व्यक्तिके समाजके प्रति रुखपर निर्भर करता है। इससे उनकी रायमें संघको अभी अपनी सारी शक्ति हरिजनोंको कुछ नागरिक अधिकार दिलानेमें ही लगानी चाहिए। वे अधिकार यही हैं, जैसे, सार्वजनिक कुँओंसे पानी भर सकना, सार्वजनिक पाठशालाओंमें उनके बच्चोंका बिना किसी भेदभावके दाखिला आदि। गाँवोंमें हरिजनोंके साथ जो बुरे सलूक होते रहते हैं, उनपर भी डॉक्टर साहबने गांधीजीका ध्यान आकर्षित किया। गांधीजी ने कहा कि संघका तो यह कर्त्तव्य ही है कि वह ऐसे मामलोंको अपने हाथोंमें ले। संघने ऐसे अनेक मामले हाथमें लिये भी हैं और उसे इस कार्यमें थोड़ी-बहुत सफलता भी मिली है। पर यदि भविष्यमें डॉक्टर अम्बेडकर हरिजनोंके साथ इस तरहके हर सलूकके बारेमें पूरे तथ्य मुझे लिख भेजें तो अच्छा हो। गाँवोंका दौरा करते समय मैंने देखा कि ठीक दिशामें परिवर्तन हो रहे हैं, लेकिन अगर मुझे डॉ० साहबका अमूल्य सहयोग मिला तो इस दिशामें प्रगति और भी तेजीसे होगी। जहाँतक शिक्षाका सम्बन्ध है, मैं नहीं समझता कि कुछ अधिक किया जा रहा है। वास्तवमें संघ जितना जरूरी है उतना नहीं कर पाता, क्योंकि सही ढंगके शिक्षक शीघ्र सुलभ नहीं होते।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-६-१९३४

१. जी० वी० नायक, अमृतराव खाम्बे और बाबूराव गायकवाड़।

९६. भाषण: कांग्रेस संसदीय बोर्डकी बैठक, बम्बईमें

१६ जून, १९३४

उनके साथ विचार विमर्शके बाद[1] बोर्डके समक्ष गांधीजी ने एक भाषण दिया जिसे उनके अत्यन्त प्रभावशाली और गम्भीर भाषणोंमेंसे एक बताया गया है। भाषणका खास मतलब यह था कि मुसलमानोंके प्रति कांग्रेसका वही रुख है जो हिन्दुओं, सिखों तथा अन्य दूसरी जातियोंके प्रति है। और इसलिए, ऐसा कुछ नहीं किया जाना चाहिए जिससे मुसलमान यह महसूस करें कि कांग्रेस अपनी बातसे हट गई है।

मुसलमानोंने साम्प्रदायिक समझौतेको बहुमतसे स्वीकार कर लिया है। उनका यह कर्त्तव्य है कि साम्प्रदायिक समझौतेको वे एक ऐसे स्वैच्छिक समझौतेका रूप दें जिससे सभी जातियाँ सन्तुष्ट हों। समझौतेमें फेरबदलके लिए उन्हें तीसरे पक्षके पास नहीं जाना चाहिए। तथापि, जबतक स्वैच्छिक समझौता नहीं हो जाता, साम्प्रदायिक समझौतेके प्रति मुसलमानोंका जो रुख है, उसके अनुकूल रुख न अपनाकर कांग्रेसमें उनके विश्वासको डिगाना उनके साथ विश्वासघात करना होगा।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १७-६-१९३४

१. श्री मदनमोहन मालवीयके साथ, जो श्री एम० एस० अणे और कुछ दूसरे लोगोंके साथ इस बात पर जोर दे रहे थे कि संसदीय बोर्ड, जिसकी बैठक १५, १६ जूनको मणि भवनमें हुई थी, साम्प्रदायिक समझौतेको अमान्य कर दें। राष्ट्रवादी मुसलमान रांची कांग्रेसके उस दृष्टिकोणका समर्थन कर रहे थे जिसमें कहा गया था कि जबतक हिन्दुओं, मुसलमानों और सिखोंमें कोई समझौता नहीं हो जाता साम्प्रदायिक समझौतेको न स्वीकार किया जाये न अस्वीकार। इसपर बोर्डने गांधीजीकी राय चाही थी। संसदीय बोर्डके आग्रह पर १७ जूनको मणि भवनमें कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठक हुई, जिसमें गांधीजीके दृष्टिकोणको मंजूर किया गया। कार्य-समितिके प्रस्तावके लिए देखिए परिशिष्ट २।

९७. भाषण : आजाद मैदान, बम्बईमें[1]

१६ जून, १९३४

आज तो सारे ही दिन मेहकी झड़ी लगी रही। ऐसी वर्षामें भी आप लोगोंने यहाँ आनेका कष्ट किया, इसके लिए मैं आपका आभारी हूँ। हमारा यह सौभाग्य ही समझना चाहिए जो ठीक इस वक्त मेह रुक गया है। इस बीच मैं थोड़ेमें अपना वक्तव्य दिये देता हूँ।

बम्बई आते हुए मुझे बहुत हिचक हो रही थी। एक तो यहाँ मिलोंके मजदूरोंकी हड़ताल चल रही है। मैं खुद अपनेको मजदूर कहता हूँ। जब मैं दक्षिण आफ्रिकामें था, तभीसे मैं मजदूरकी तरह जीवन बितानेका यथाशक्ति प्रयत्न कर रहा हूँ, और इसमें मुझे काफी सफलता भी मिली है। इसलिए मजदूरोंके प्रति उनकी विपत्तिमें मेरी कितनी गहरी सहानुभूति होगी, यह आप सहज ही समझ सकते हैं। फिर मजदूरोंमें हरिजन भी बहुत हैं, उनमें उनके प्रति मेरी सहानुभूति और भी बढ़ जाती है। मैं मानता हूँ कि मिल-मालिकों और मजदूरोंके बीचका झगड़ा निपटानेकी कुछ शक्ति मुझमें है। पर मुझे दुःख है कि कुछ कारणोंसे, जिनकी तफसीलमें मैं जाना नहीं चाहता, इस विषयमें मैं अपनी उस शक्तिका अभी प्रयोग नहीं कर सकता। यहाँके मजदूरोंसे मेरा कोई सीधा सम्पर्क नहीं है, और उनके नेताओंसे तो शायद और भी कम है। फिर यहाँका रोजगार मंदीसे अभीतक उबरा नहीं है और हाल ही में आप लोगोंने बिहारके भूकम्प-पीड़ितोंके कष्ट-निवारणके लिए भी खासी रकम दी है।

आपकी इस ३९,००० रुपयेकी थैलीको, जो अध्यक्षके कथनानुसार, ५०,००० रुपये तक की हो सकती है, मैं बहुत अधिक नहीं मानता। आपने तो हमेशा ही मेरे ऊपर अपने प्रेम और पैसेकी वर्षा की है। पर पहलेके और इस दानमें भारी अन्तर है। हरिजनोंके प्रति जो अन्याय किया गया है, उसके प्रायश्चित्तस्वरूप आप लोग यह पैसा दे रहे हैं। अगर यह दान इस तरहके प्रायश्चित्तका प्रतीक नहीं है, तो मेरी दृष्टिमें इसका कोई मूल्य नहीं है। और यदि यह प्रायश्चित्त है, तो अपनी शक्तिके अनुसार आपको अधिकसे-अधिक पैसा देना चाहिए। जब मैंने अनशन किया,[2] तभीसे एक सज्जनने अपने भोजनकी कुछ जरूरी चीजोंका त्याग कर दिया

१. यह "ऐट दि मैदान" शीर्षकसे वालजी गोविन्दजी देसाईकी इस प्रस्तावनात्मक टिप्पणीके साथ प्रकाशित हुआ था: "वर्षा होते हुए भी गांधीजी १६ तारीखको बिलकुल ठीक समय पर सार्वजनिक सभामें भाषण देने आ गये। सेठ मथुरादास (विशनजी, हरिजन सेवक संघके अध्यक्ष) सभाके अध्यक्ष थे। गांधीजीके भाषणका यह सार है।"

२. ८ से २९ मई तक, जो "अपने तथा अपने सहयोगियोंकी शुद्धिके लिए" किया गया था; देखिए खण्ड ५५, पृष्ठ ७४-६।

है, और इस तरह प्रतिमास सवा दो रुपये बचाकर वे मेरे पास भेज देते हैं। कोई धनाढ्य भाई २,००० रुपये मुझे दे, तो भी उसकी अपेक्षा ये दो रुपये मेरी दृष्टिमें अधिक मूल्यवान हैं। ईमानदारीसे कमाई हुई और शुद्ध हृदयसे दानमें दी गई एक कौड़ी भी अमूल्य रत्न है।

मेरा ऐसा विश्वास है कि यदि समय रहते हमने अस्पृश्यताको निर्मूल न किया, तो हमारा कही नामोनिशान भी न रहेगा। अस्पृश्यता-जैसा घोर पाप कोई दूसरा है ही नही, क्योकि इसका प्रयोग धर्मके नामपर किया जाता है। हम निर्बल हैं इसलिए हमारा पतन हो, यह एक बात है। किन्तु यह बिलकुल दूसरी बात है कि हम गढ़ेमें गिरते हुए भी इस भ्रममें रहें कि हमारा उत्थान हो रहा है। हमारे जो भाई हर तरहसे हमारे ही जैसे मनुष्य है, हम उन्हे जन्मसे अस्पृश्य माननेकी धृष्टता कैसे करते है? आपने सुना ही होगा कि बड़ौदा राज्में उस दिन हमारे अविश्रान्त हरिजन-सेवक श्री परीक्षितलाल मजमूदारको एक हिन्दू सिपाहीने खूब पीटा, और सिर्फ इ। अपराध पर कि वहाँकी प्याऊके लोटेसे पानी पीकर वे हरिजन-बस्तीमें गये थे।[1] इससे क्या प्रकट होता है? यही न कि हरिजन और अहरिजनके बीच पहचान नही हो सकती? और यह भी प्रकट होता है कि आपका हरिजन होना ही गुनाह है। फिर आप न्यायकी आशा नहीं कर सकते। आपको अपनी प्यास बुझानेका भी हक नहीं है। अगर किसी राजनीतिक कार्यकर्त्तापर पुलिसकी लाठी पड़ी होती, तो आज कितना हो-हल्ला मच जाता। पर श्री परीक्षितलाल पर जो मार पड़ी है, उसके विरूद्ध न यहाँ हम लोगोने और न बड़ौदा राज्यवालोंने ही कोई आवाज उठायी है।

यह लांछन लगाना व्यर्थ है कि हरिजन मुर्दार मांस खाते है, दारू पीते है और गन्दे ढंगसे रहते हैं। उन्हें हम बुरी तरहसे ठुकराते रहेंगे, उन्हें छूना भी पाप समझेंगे, तो उनसे हम और आशा ही क्या कर सकते है? हमने उन्हें ऐसी जगहोंमें रख छोड़ा है जहाँ जानवर भी रहना पसन्द न करेंगे—और फिर हम इसपर आश्चर्य प्रकट करते हैं कि ये लोग कितने गन्दे ढंगसे रहते है! पर वे लोग अगर अपनी बुरी आदतें छोड़ दें, तो क्या हम उन्हें अपनानेको तैयार है? सच बात तो यह है कि हमें उनके साथ गुजर करनी है; हमें उन्हें ऊँचा उठानेका प्रयत्न करना चाहिए। आपकी इस बम्बई नगरपालिकाके मुलाजिम हरिजनोंकी नरक-जैसी बस्तियाँ देखकर मेरा दिल रो उठा। बम्बई एक सुन्दर नगरी कही जाती है। पर इसकी सुन्दरता कहाँ है—मलाबार हिलमें या महालक्ष्मीकी कचरा पट्टीमें? मैं कहता हूँ कि इन हरिजनोंके रहनेकी ठीक-ठीक व्यवस्था करके ही आप रिजपर शान्तिसे रह सकेंगे। हरिजनोंके लिए अच्छे मकान बनवानेमें खर्च ही कितना होगा? जिस नगरीकी नगरपालिकाकी आमदनी करोड़ोंकी है और जहाँके नागरिकोने मुझे एक ही महीनेमें ४३ लाख रुपये दिये, उसके लिए क्या यह कोई बड़ी बात है? मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि बम्बईके इन रुग्ण स्थलोंको एक बार आप जरूर देखें और

१. देखिए पृ० ७२ भी।

नगरपालिकासे इस बातका आग्रह करें कि वह उनकी हालत तुरन्त ठीक करे। गन्दी नालीके पास एक दिन भी रहना आपको कैसा लगेगा?

अगर आप वालपाखाडी जायें, तो आप देखेंगे कि श्री पुरुषोत्तमदास श्री मोरारजी सेठ और श्री सुपारीवाला जैसे थोड़े-से सेवक भी कितना सुधार कर सकते हैं। उनका काम भी परिपूर्ण नहीं है; पर अन्यत्र उतना भी नहीं है, इसलिए वही हमें बहुत बड़ा लगता है। कार्यकर्त्ताओंकी आलोचना करना — जैसे कि यह कहना कि प्रान्तीय बोर्डके सदस्य सारे दिन आराम कुर्सियाँ तोड़ा करते हैं, इन्हें आफिससे निकाल देना चाहिए — बड़ा आसान है। दूसरोंकी आलोचना करना हमें बहुत प्रिय है, पर हमें अपनी संस्थाओंसे काम कराना नहीं आता। संस्थाओंको हम अपनी सेवाएँ अर्पित नहीं करते; और जबतक हम स्वयं संस्थाओंमें सेवा करनेको तैयार न हों, तबतक हमें दूसरोंकी ध्वंसात्मक आलोचना करनेका कोई अधिकार नहीं है। मैं यह मानता हूँ कि संघके कार्यमें सुधारकी अभी काफी गुंजाइश है, किन्तु कार्यकर्त्ता अपनी शक्तिके अनुसार ईमानदारीसे काम कर रहे हैं। हमें उनके कामकी कद्र करनी चाहिए, और तब कार्यकी नई-नई दिशाओंके बारेमें सलाह देनी चाहिए, जैसे कि एक ऐसे भोजनालयकी स्थापना हो, जहाँ हरिजन अन्य नागरिकोंके साथ सम्मान-पूर्वक भोजन कर सकें। यहाँ मैं यह बता दूँ कि लोगोंका भोजनके लिए इस तरह एक पंक्तिमें बैठना अन्तर्जातीय भोज नहीं है। इसलिए मुझे आशा है कि आप सब लोग संघको अपना सहयोग देंगे और इस तरह उसकी उपयोगिता बढ़ायेंगे। यह आप भूलकर भी न कहें कि हममें सेवा करनेकी क्षमता नहीं है। इस ध्येयसे अगर आपको प्रेम है, तो सब-कुछ आसान हो जायेगा।[1]

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २९-६-१९३४

९८. तार: पुरुषोत्तमदास टण्डनको[2]

[१६ जून, १९३४ या उसके पश्चात्][3]

आपके दृष्टिकोणको समझते हुए अगर कांग्रेसके लोग आपको चुनते हैं तो पद स्वीकार करनेमें कोई कानूनी बाधा नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २६-६-१९३४

१. सभा समाप्त होने पर गांधीजीने कई चीजोंकी, जो उन्हें भेंट की गई थीं, नीलामी की।

२ और ३. पुरुषोत्तमदास टण्डनके १६ जून, १९३४के तारके उत्तरमें जो इस तरह था: "कार्य-समितिके प्रस्तावके सम्बन्धमें जिसमें उम्मीद की गई है कि कांग्रेसके कार्यकर्त्ता संसदीय बोर्डको सहायता पहुँचायेंगे, कृपया तार द्वारा अपना विचार भेजें कि क्या वे कांग्रेसी जो चुनावोंमें भाग लेनेसे इनकार करते हैं कांग्रेस कार्यकारिणीमें रह सकते हैं।"

९९. तार : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

[१७ जून, १९३४ या उससे पूर्व][1]

अभी अभी दुखद समाचार[2] पढ़ा। ईश्वरकी यही इच्छा थी। मुझे मालूम है आप साहसके साथ इस क्षतिको बर्दाश्त करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १८-६-१९३४

१००. पत्र : अमतुस्सलामको

१७ जून, १९३४

चि० अमतुलसलाम,

तू जरा शान्तिसे काम ले। सम्भव हुआ तो मैं तुझे जरूर पूना ले जाऊँगा। लेकिन तुझे धीरज रखना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०९) से।

१०१. भेंट : अ० भा० स्वदेशी लीग, बम्बईके शिष्टमंडलको[3]

बम्बई

[१७ जून, १९३४][4]

मार्गदर्शन पानेके विचारसे पिछले कुछ महीनोंमें कई स्वदेशी कार्यकर्त्ताओंने गांधीजीसे 'स्वदेशी'की एक व्यापक व्याख्या करनेको कहा है। एक सर्वथा पूर्ण व्याख्या प्रस्तुत करनेका प्रयास करते हुए और सुदूर दक्षिणके साथी कार्यकर्त्ताओंके साथ विचार-विमर्श करते हुए, गांधीजीको लगा कि इस तरहकी व्याख्या प्रायः असम्भव है; क्योंकि स्वदेशीकी भावना रोज विकसित और परिवर्तित हो रही है। फिर भी अखिल भारतीय स्वदेशी लीग और उस-जैसे अन्य संगठनोंके मार्गदर्शनके लिए उन्होंने निम्नलिखित व्यावहारिक सूत्र सुझाया :

१. यह तार "कोयम्बटूर, १७ जून, १९३४", तिथि-पंक्ति देकर छपा था।

२. वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री की पत्नी की मृत्युका।

३. शिष्टमंडलमें लालूभाई सामलदास, क० मा० मुंशी, श्रीमती रायजी, जे० ए० डी० नौरोजी, एस० ए० बरेलवी, वैकुण्ठ एल० मेहता, बी० जी० खेर, मगनलाल, पुरुषोत्तमदास और धीरजलाल मोदी थे।

४. बॉम्बे क्रॉनिकल से।

"अखिल भारतीय स्वदेशी लीगके उद्देश्योके लिए 'स्वदेशी' में वे सभी उपयोगी वस्तुएँ आ जाती है जो भारतमे लघु-उद्योगो द्वारा तैयार की जा रही हैं। इन उद्योगोकी सहायताके लिए लोकशिक्षण जरूरी है। लघु-उद्योग कीमतोके नियमन तथा श्रमिकोकी मजदूरी और उनके कल्याणके मामलोमे अखिल भारतीय स्वदेशी लीगका मार्गदर्शन स्वीकार करेंगे। स्वदेशीमें, इसलिए वे वस्तुएँ शामिल नही होगी जो बडे और सगठित उद्योगो द्वारा तैयार की जा रही है। उन उद्योगोको अखिल भारतीय स्वदेशी लीगकी मददकी जरूरत नही है। वे सरकारसे सहायता प्राप्त कर सकते है और करते भी है।"

जैसा कि स्पष्ट वता दिया गया है, मेरा यह सूत्र स्वदेशी लीगके मार्गदर्शनके लिए है। इसका आशय स्वदेशीके पूरे क्षेत्रको समेटना नहीं है। यह केवल लीगको यह सुझाव देनेके लिए है कि उसे अपना कार्यक्षेत्र लघु-उद्योगो, विशेषकर गृह-उद्योगोके प्रोत्साहन और प्रचार तक सीमित रखना चाहिए और बड़े व संगठित उद्योगोको उससे बाहर रखना चाहिए। यह सुझाव देनेमे आशय बडे उद्योगोकी अवज्ञा करना या उन उद्योगोसे देशको जो लाभ हुआ है और जो आगे हो सकता है, उसकी उपेक्षा करना नहीं है। परन्तु स्वदेशी लीग जैसी संस्थाको अपनी ओर से उन उद्योगों का विज्ञापन-एजेंट नहीं बनना चाहिए; वह अबतक यही भूमिका निभाती रही है। उनके पास पर्याप्त साधन है; वे अपनी फिक्र आप कर सकते है। देशमे पर्याप्त स्वदेशीकी भावना पैदा हो गई है और स्वदेशी सगठनोकी कोशिशोके बिना भी, उन्हे उस भावनासे सहायता मिलती रहती है। इन संगठनोको यदि उपयोगी बनना है, तो इन्हे अपना ध्यान संघर्षरत उद्योगोपर ही केन्द्रित करना होगा। बड़े और संगठित उद्योगोके मालके प्रचारकी कोशिशोका परिणाम तो केवल यही हो सकता है कि कीमते और बढ जाये। यह ग्राहकके साथ अन्याय होगा। एक सफल व्यावसायिक सगठनकी सहायताके लिए किसी लोक हितकारी सगठनका स्थापित किया जाना — वेकारका ही श्रम है। हमे इस कामना और विश्वासमे पड़कर आत्मवंचना नही करनी चाहिए और यह नहीं सोचना चाहिए कि उन उद्योगोकी वृद्धि और प्रगतिमें हमारी कोशिशोसे वड़ी सहायता मिली है। यह एक सस्ती आत्मतुष्टि होगी, जो तथ्योसे सही सिद्ध नहीं होती। १९२० मे फजलभाईके साथ हुई एक बातचीत मुझे याद आ रही है। मै तब स्वदेशी आन्दोलन शुरू करने ही जा रहा था। उन्होने अपने खास अन्दाजमें मुझसे कहा था, "यदि आप काग्रेसवाले हमारे विज्ञापन-एजेंट बन जाते है, तो इससे इसके सिवा देशकी और कुछ भलाई नही होनी है कि हमारे मालपर लाभ बढ जायेगा और हमारी चीजोंकी कीमतें चढ़ जायेगी।" उनकी दलीलमें वजन था। परन्तु जब मैने उन्हें यह बताया कि हमारा उद्देश्य हाथकी कती और हाथकी बुनी खादीको प्रोत्साहन देना है जिसकी शोचनीय ढगसे उपेक्षा होती आई है और जिसे लाखो भूखे बेरोजगार लोगोंकी सेवाके लिए पुनरुज्जीवित करना आवश्यक है, तो वे चुप रह गये। लेकिन केवल खद्दर ही इस तरहका सघर्षरत उद्योग नही है। इसलिए मै आपके आगे यह सुझाव रखता हूँ कि आप अपना ध्यान और

अपनी कोशिशें छोटे पैमानेके उन सभी असंगठित लघु-उद्योगों पर केन्द्रित करें जिन्हें आज जनताके समर्थनकी जरूरत है। उनके लिए यदि कोशिश नहीं की गई तो वे नष्ट हो सकते हैं। बड़े उद्योग, जिनके मालसे बाजार अटे है, इनमें से कुछको पीछे धकेलते चले जा रहे है। आपकी सहायताकी वस्तुतः इन्हींको जरूरत है।

चीनी उद्योगको लीजिए। कपड़ेके बाद चीनी-उत्पादन ही देशका सबसे बड़ा उद्योग है। इसे हमारी सहायताकी कोई जरूरत नहीं है। चीनीके कारखानोकी संख्या तेजीसे बढ़ रही है। इस उद्योगके विकासमें लोक संस्थाओंका कोई योग नही रहा है। अपने विकासके लिए यह अनुकूल कानूनका ऋणी है। यह उद्योग आज इतना फल-फूल रहा है और फैल रहा है कि खाँडका उत्पादन अतीतकी चीज बनता जा रहा है। निश्चित रूपसे पौष्टिक गुणोंमें खाँड मिलकी चीनीसे कहीं अच्छी है। इस बहुमूल्य कुटीर-उद्योगको ही आपकी सहायताकी जरूरत है। [चीनी-उद्योगको नहीं।] इसी एक क्षेत्रमें शोध और ठोस सहायताकी बड़ी गुंजाइश है। हमें इसे जिन्दा रखनेके तरीके और उपाय खोजने है। मेरा जो आशय है, यह उसका केवल एक उदाहरण है। मुझे इसमें जरा भी सन्देह नही है कि लघु-उद्योगोंकी सहायता करना राष्ट्रीय सम्पदाको बढ़ाना है। मुझे इसमें भी कोई सन्देह नही है कि इन गृह-उद्योगोंको प्रोत्साहन देना और फिरसे जिन्दा करना ही सच्चा स्वदेशी आन्दोलन है। लाखों मूक लोगोंकी केवल इसी तरह सहायता की जा सकती है। इससे लोगोंकी रचनात्मक क्षमताओं और सूझ-बूझको भी अवसर मिलता है। देशके हजारों नवयुवक, जो आज बेकार हैं, इससे उपयोगी धन्धोंमें लग सकते हैं। आज जो शक्ति व्यर्थ नष्ट हो रही है, वह सब इस तरह काममें लगाई जा सकती है। मै यह नही चाहता कि जो लोग अधिक लाभदायक धन्धोंमें लगे हैं वे उन्हें छोड़कर लघु-उद्योगोंमें आयें, चरखेके बारेमें भी मेरा यही रुख था। जो लोग बेकारी और गरीबीसे पीड़ित हैं, केवल उन्हीसे मैं यह कहूँगा कि वे इनमेंसे कुछ उद्योगोंको अपनायें और अपने अल्प साधनोंमें थोड़ी वृद्धि करें।

इस तरह आप यह देखेंगे कि [लीगकी] गतिविधिमें जो परिवर्तन मैंने सुझाया है, उसका बड़े उद्योगोंके हितोंसे किसी भी तरह कोई टकराव नहीं है। मैं केवल इतना ही कहना चाहता हूँ कि आप अपने राष्ट्रीय सेवकोंके साथ अच्छा व्यवहार करें, अपनी गतिविधियोंको लघु-उद्योगों तक सीमित रखें और बड़े उद्योगोंको स्वयं अपनी मदद करने दें, जैसा कि वे कर ही रहे हैं। मेरी यह धारणा है कि लघु-उद्योग बड़े उद्योगोंकी जगह नही लेंगे, बल्कि उनके पूरक होंगे। जहाँतक बड़े उद्योगों का सवाल है, मै उनके मालिकोंको भी इस बातके लिए प्रेरित करना चाहता हूँ कि वे इस कार्यमें, जो विशुद्ध लोकोपकारी कार्य है, दिलचस्पी लें। मैं मिल-मालिकोंका भी हितैषी हूँ और वे मेरे इस कथनकी पुष्टि करेंगे कि जब भी मुझे उनकी सहायताका अवसर मिला है, मै पीछे नहीं रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २६-७-१९३४; **बॉम्बे क्रॉनिकल**, १८-६-१९३४ भी

१०२. पत्र : मदनमोहन मालवीयको[1]

१८ जून, १९३४

भाई साहब,

जमनालालजीसे आजकी बात सुनकर मुझको बड़ा दुःख हुआ। जो आपने जीवन-भरमें कभी नही किया वह आप आज कैसे करेंगे? हो ही नही सकता। इस्तीफा देनेकी बात छोड़ें। भाईकी सुनें। कोई बुरा परिणाम नही हो सकता है। आप पूना चले। वहाँ हम बातें करेंगे।

आपका,
मोहनदास

रिमिनिसेन्सेस ऑफ गांधीजी, पृ० २०९

१०३. पत्र : एम० एस० अणेको

१८ जून, १९३४

प्रिय बापूजी अणे,[2]

आप इस्तीफा नही दे सकते। मुझसे सही ढंगसे लड़ाई लड़े बिना तो बिलकुल ही नही दे सकते। मैं आपको यह प्रमाणित करनेकी जिम्मेदारी लेता हूँ कि दोनों समितियोंमें रहकर भी आप अपने सिद्धान्तोको कोई हानि नही पहुँचायेंगे।[3]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
रिमिनिसेन्सेस ऑफ गांधीजी, पृ० २०९

१. ऐसी सूचना मिली थी कि कार्य-समितिके साम्प्रदायिक परिनिर्णय सम्बन्धी प्रस्तावके विरोधमें एम० एस० अणे और मदनमोहन मालवीय कांग्रेससे इस्तीफा देना चाहते हैं। इस सम्बन्धमें मौलाना आजाद, डॉ० बी० सी० राय और जमनालाल बजाज गांधीजीसे सुबह मिले (देखिए परिशिष्ट-२)। गांधीजीने, जो मौन व्रत रखे हुए थे, उन्हें यह और अगला पत्र दिया कि ये मदनमोहन मालवीय और एम० एस० अणेको दे दिये जायें।

२. लोकनायक बापूजी अणेके लोकप्रिय नामसे प्रसिद्ध।

३. देखिए पिछला शीर्षक भी।

१०४. मौनवारकी टिप्पणियाँ[1]

१८ जून, १९३४

यह दुःखदायी है। परन्तु यदि ऐसा होता ही है तो इसे सहन कर लिया जाना चाहिए। कांग्रेस इस धक्केको बर्दाश्त कर लेगी।

मेरे मनमें यह बात साफ है कि चुनावोंका सामना करना ही चाहिए। कांग्रेस जैसा बड़ा संगठन यह बर्दाश्त नहीं कर सकता कि मात्र व्यक्तिगत लिहाजों से ही इसके भाग्यका निर्णय हो। यदि हम दृढ़तासे, शान्ति और ईमानदारीसे अपने कामको विनियमित करें तो मुझे किन्हीं बुरे परिणामोंकी प्रत्याशा नहीं है।

मुझे निश्चय है कि अब और कुछ नहीं किया जा सकता। यदि हम इस वक्त अपने कदम पीछे हटा लें तो इससे देशकी कितनी ज्यादा हानि होगी यह मैं अनुमान नही कर सकता। यह जो भी कुछ है, इस स्थितिपर हम रुक नही सकते।[2]

आप, संसदीय बोर्डके सदस्य, जो यहाँ बम्बईमें हैं, एक बार फिर मिल लें और यदि आप इस निर्णयपर पहुँचें कि यदि दो इस्तीफे बरकरार रहें तो चुनावका काम आगे नही चलाया जा सकता तो आप उसके मुताबिक कार्य-समितिको सलाह दें। मैंने आपको जो राय बताई है वह मेरी पक्की राय है। परन्तु इसका कोई महत्त्व नही है, क्योंकि चुनाव मुझे नहीं कराने है।

[अंग्रेजीसे]

रिमिनिसेन्सेस ऑफ गांधीजी, पृ० २०९–१०

१०५. पत्र : जमनाबहन गांधीको

१८ जून, १९३४

चि० जमना,

तुम्हारा पत्र मिला है। पिछला नही मिला था। वैसे पृथुराज कहता तो है कि वह पत्र मेरे पास रखा गया था। तुम्हारा काम कैसा चल रहा है, यह तुमने नही लिखा। और अधिक इस समय नही लिखा जा सकता।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८८५) से; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१. साधन-सूत्रके अनुसार ये तब लिखी गईं जब अबुल कलाम आजाद, डॉ० बी० सी० राय और जमनालाल बजाजने दिनके लगभग १०-३० बजे गांधीजीको बताया कि अणे और मदनमोहन मालवीय अपने इस्तीफे वापस लेनेके लिए तैयार नहीं हैं। देखिए पिछले दो शीर्षक भी।

२. चन्द्रशंकर शुक्लके अनुसार अगला अनुच्छेद तब लिखा गया जब "भुलाभाई देसाईने, जो अभी-अभी अन्दर आये थे, अन्य तीनों नेताओंका जोरदार समर्थन किया"।

१०६. पत्र : नारणदास गांधीको

बम्बई
१८ जून, १९३४

चि० नारणदास,

तुम्हारे पत्र मिल गये हैं। तुरन्त जवाब देनेका समय ही कहाँ है?

केशुके प्रति जमनालालका असन्तोष बढ़ता जा रहा है। वह अभीतक यहाँ नही पहुँचा है। कहा नही जा सकता कि वह क्या करेगा। सन्तोकको जितना बताना जरूरी समझो बता देना। समय मिलनेपर अधिक लिखूंगा।

वर्धा इत्यादिके विषयमें जब कही आओगे, तब बात करूँगा। जमनादासके नाम लिखी चिट्ठी साथमें है। यह खोज निकालना कठिन है कि उसे किस प्रकार सन्तुष्ट किया जाये। तुम उसे साथ ला सको तो लेते आना। वह तुम्हारी बात सुनेगा।

डॉक्टर शर्मासे उसके पूना पहुँचनेपर और बात करूँगा। अमतुस्सलामके अर्शका ऑपरेशन हो गया है। डाक्टर मेहताके अस्पतालमें है। मै अमीना और कुरैशीसे मिल लिया हूँ। कुरैशी अहमदाबाद आयेगा।

मै मथुरादास सेठसे कहूँगा अथवा उन्हें बादमें लिखूंगा। मणिलालकी ओरसे शुल्क नही मिलेगा। डाक बन्द होनेका समय हो रहा है, इसलिए अब अधिक नही लिखता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू० १) से। सी० डब्ल्यू० ८४०३ भी; सौजन्य: नारणदास गांधीसे।

१०७. पत्र : विद्या आर० पटेलको

१८ जून, १९३४

चि० विद्या,

आशा है तू अपने वचनका पालन कर रही होगी। रोना नही चाहिए, हँसते रहना चाहिए, काम खूब करना चाहिए, और ब्याहकी चिन्ता नही करनी चाहिए। ब्याह तब होगा जब भगवान् योग्य वर भेजेंगे। जो कार्यमें दत्तचित्त रहता है, उसके मनमें और विचार कभी आ सकते है? मुझे लिखती रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५८६) से; सौजन्य: रवीन्द्र आर० पटेल।

१०८. तार: हीरालाल शर्माको[1]

पूना
२० जून, १९३४

शर्मा
मार्फत "श्री"
बम्बई

पाँच बजे सुबह पर्णकुटीमें।

बापू

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, १९३२–४८, पृष्ठ ७३ के सामनेकी प्रतिकृतिसे।

१०९. पत्र: मीराबहनको[2]

२० जून, १९३४

चि० मीरा,

कैसा वियोग था वह! बड़ा उदास कर देनेवाला वियोग था। लेकिन मैं जानता हूँ कि मुझपर इससे अधिक गहरे, मूल्यवान और निःस्वार्थ स्नेहकी वर्षा कभी कोई नही करेगा। मैं उसी स्नेहसे परेशान हो गया हूँ। लेकिन यह तो उसका अस्थिर पहलू है। भगवान तुम्हारी रक्षा करें और तुम्हारे प्रयत्नको सफल करें। जबतक जरूरी हो तुम वहाँ ठहरना और जितनी जल्दी हो सके लौट आना।

ऋषि और उनकी बहन[3]को मेरा प्यार पहुँचा देना। एफी[4]से मिलना न भूलना। उसे और दूसरे सब भाई-बहनोंको मेरा प्यार।

१. हीरालाल शर्मा रामदासके इलाजके बारेमें बातचीत करनेके लिए २१ जून, १९३४ को गांधीजीसे मिलना चाहते थे।

२. 'बापूके पत्र: मीराके नाम' में मीराबहन लिखती हैं: "मैं मध्य भारत तथा दक्षिण भारतके सारे दौरेमें बराबर बापूके साथ रही। जब मैं फिर उत्तरमें बम्बई तक आई तो मुझे आंतरिक प्रेरणा हुई कि मैं इंग्लैंड जाऊँ और बापू तथा उनके सन्देशके बारेमें लोगोंको खासकर मेहनतकश लोगोंको बताऊँ। मैं सीधे बापूके पास गई और उन्हें यह बताया। उन्होंने कहा कि मुझे जाना चाहिए और पाँच दिनके अन्दर मैं जहाज पर यूरोपके लिए चल पड़ी। यह पत्र उनसे अलग होनेके बाद लिखा गया बापूका पहला पत्र है।"

३. रोमाँ रोलाँ और मैडेलिन रोलाँ।

४. एफी० परिस्टोंची।

आशा है तुम्हारी चीजें समयपर पहुँच गई होंगी।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२८६) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७५२ से भी।

११०. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

२१ जून, १९३४

चि० व्रजकृष्ण,

तुमारा खत आज प्रात.कालको ही पढ सका। अवश्य कृष्ण नायरके साथ आश्रममें रहो। काम कामको सिखाता है। इस बखत विनोबाके पास जानेकी कोई आवश्यकता नहिं है। और लिखनेका समय नहिं है। तुमारा शरीर अच्छा है?

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४१४) से।

१११. भाषण : महिला आश्रम, पूनामें[1]

२१ जून, १९३४

आश्रममें गांधीजी को हरिजन कन्याओंने हार पहनाये। कन्याओंको सम्बोधित करते हुए गांधीजी ने कहा कि प्रोफेसर कर्वेके साथ और भारतकी महिलाओंके लिए वे जो महान कार्य कर रहे हैं उससे उनका पहला परिचय स्व० श्री गोखलेके माध्यमसे हुआ था। श्री गोखले चाहते थे कि मैं स्वयं देख लूं कि महिलाओंकी उन्नतिके लिए एक आदमी कितना कुछ काम कर सकता है। तबसे इस लम्बी अवधिके दौरान मुझे कई कठिनाइयोंका सामना करना पड़ा है। परिणामस्वरूप मैं आपके पास बीस साल बाद आ सका हूँ, और वह भी अचानक ही। जो काम तत्काल किया जाना चाहिए, उसके लिए भी मेरे पास वक्त नहीं है। परन्तु फिर भी मुझे प्रसन्नता है कि मैं आपके बीचमें हूँ। मुझे आशा है, जब आप बड़ी होंगी तब आप अपने जीवनको इस तरह नियमित रखेंगी कि कर्वेने आपके हितके लिए जो त्याग किये हैं आप उनकी पात्र बन सकें। जब आपके सामने ऐसा उदाहरण है तो आप सुखोपभोग और प्रलोभनोंके प्रति लगावका जीवन नहीं बिता सकतीं। संस्कृतमें

१. यह और अगला शीर्षक "साप्ताहिक चिट्ठी" से उद्धृत हैं।

एक पुरानी सूक्ति है कि यदि मनुष्य ज्ञान द्वारा तुच्छ स्वार्थसे मुक्ति नहीं पाता तो वह ज्ञान नहीं है। इसलिए मैं आशा करूँगा कि आप अपनी हीन भाग्यवाली बहनोंकी सेवामें अपने-आपको लगायेंगी।

मुझे यह देखकर दुःख हुआ है कि महिला विश्व विद्यालय जैसी राष्ट्रीय संस्थामें हिन्दी अनिवार्य न होकर एक ऐच्छिक विषय है। मैं सुझाव दूँगा कि अंग्रेजी ऐच्छिक और हिन्दी अनिवार्य विषय बना दिया जाये, क्योंकि अंग्रेजी तो सभी लड़कियाँ प्रचलित फैशनके कारण अनिवार्य रूपसे पढ़ेंगी ही और उतनी आसानीसे वे हिन्दी नहीं पढ़ेंगी। जब मैं विद्यार्थी था तब मेरे मुख्याध्यापकने शारीरिक शिक्षा, जो उन दिनों प्रिय नहीं थी, अनिवार्य बना दी थी। व्यायामशालासे एक दिनकी अनुपस्थिति पर एक आना जुर्माना निश्चित था। एक दिन मुझे भी वह जुर्माना देना पड़ा था।[1] वही नियम हिन्दीपर भी लागू कर दिया जाना चाहिए। हिन्दीका अध्ययन यद्यपि आवश्यक है परन्तु वह अभी प्रिय नहीं हुई है। राष्ट्रीय भाषाके व्यावहारिक ज्ञानके बिना आप सही ढंगसे राष्ट्रकी सेवा नहीं कर सकतीं। आप हिन्दीमें आसानीसे निपुणता प्राप्त कर सकती हैं, क्योंकि वह मराठी और उत्तरी भारतकी दूसरी भाषाओंसे बहुत-कुछ मिलती-जुलती है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ६-७-१९३४

११२. भाषण : छात्रोंके समक्ष, पूनामें[2]

२१ जून, १९३४

छात्रोंको गांधीजी ने उन हरिजन बस्तियोंके बारेमें बताया जिनका उन्होंने निरीक्षण किया था और राय दी कि छात्र झाड़, टोकरियाँ और फावड़े लेकर वहाँ जायें और उन स्थानोंकी भली-भाँति सफाई करें। इसके बाद वे बस्तियोंका नक्शा बना सकेंगे और हरिजनोंकी आबादीकी गणना कर सकेंगे। जहाँ कहीं जरूरी हो, दीवारोंको ऊँची करके व उनके घरोंको सुधार कर भी वे हरिजनोंकी मदद कर सकते हैं। वे बच्चों और जवानोंको अक्षर और अंक सिखानेकी बातको बहुत महत्व न दें, बल्कि पहले उन्हें स्वास्थ्य, सफाई और शराबसे परहेज आदि बातें समझाकर उन्हें शिक्षा दें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ६-७-१९३४

१. देखिए खण्ड ३९ पृ० १६।
२. अपने स्वागत-भाषणमें छात्रोंने हरिजनोंकी सेवा करने की इच्छा प्रगटकी थी और गांधीजीसे अनुरोध किया था कि वे इस बारेमें उनका मार्गदर्शन करें।

११३. पत्र : मीराबहनको

२२ जून, १९३४

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र और पोस्टकार्ड मिल गये। ईश्वर तुम्हे सुखी रखे। मैं लगातार मुलाकातियोंसे घिरा रहता हूँ। तुमपर प्रभुकी छाया बनी रहे।

हम सबकी ओरसे प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२८७) से, सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७५३ से भी।

११४. पत्र : राजेन्द्र प्रसादको

२२ जून, १९३४

भाई राजेन्द्रप्रसाद,

जीरादेईसे तुमारा खत मिल गया था। नित्य तुमारा स्मरण होता है। अब तो शांत होगे। कौटुंबिक कार्य[1] में कितना समय देना होगा। खर्चके बारेमें क्या होगा, जनार्दन[2] अब कहा रहेगा। इस बारेमें लिखे। रिलीफका कार्य चलता होगा।

बापुके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ९७१६ से; सौजन्य: डॉ० राजेन्द्र प्रसाद।

१. कौटुंबिक कार्योंकी जिम्मेदारी राजेन्द्र प्रसादके बड़े भाई महेन्द्र प्रसादपर थी, जिनकी इसी महीने मृत्यु हो गई थी; देखिए "तार: राजेन्द्र प्रसादको", पृ० ५७।

२. महेन्द्र प्रसादके पुत्र।

११५. भेंट : राष्ट्रीय शिक्षा-कार्यकर्त्ताओंको[1]

पूना
२२ जून, १९३४

अपनी बातचीतके दौरान श्री गांधीने कहा कि जिन संस्थानोंपर सरकार ने रोक लगा दी है, उन्हें सरकारसे निवेदन करके अथवा अन्य किसी तरीकेसे रोकको हटवानेकी कोशिश नहीं करनी चाहिए। आगे उन्होंने इस बातपर जोर दिया कि नगरपालिका और स्थानीय संस्थाएँ चूँकि अर्ध-सरकारी हैं, इसलिए राष्ट्रीय शिक्षाके लिए ऐसे निकायोंसे मदद नहीं लेनी चाहिए।

यह पूछा गया कि कांग्रेस संगठनके माध्यमसे राष्ट्रीय शिक्षाका लाभ उठानेवाले हरिजनोंको क्या सरकारी विद्यालयोंमें शिक्षा प्राप्त करनी चाहिए। श्री गांधीने कहा कि जबतक हरिजनोंको हम अपने समाजका अंग नहीं मान लेते, राष्ट्रीय शिक्षाके अपने नियमोंको हम उनके ऊपर लागू नहीं कर सकते। शिक्षा प्राप्त करनेके लिए वे हर उपाय काममें ला सकते हैं, फिर चाहे वह राष्ट्रीय स्कूलसे प्राप्त करनी हो चाहे सरकारी स्कूलसे।

सवाल पूछा गया कि क्या राष्ट्रीय शिक्षाका उद्देश्य राष्ट्रीय विचारोंके आत्म-निर्भर कार्यकर्त्ता तैयार करना न होकर गाँवोंमें कार्य करनेवाले कार्यकर्त्ता तैयार करना होना चाहिए। गांधीजी ने कहा कि कार्यकर्त्ताओंका ध्यान शहरी कार्यकर्त्ता तैयार करनेकी बजाय गाँवोंमें काम करनेवाले कार्यकर्त्ता तैयार करनेकी ओर खींचना चाहिए। राष्ट्रीय शिक्षाका मुख्य उद्देश्य यही होना चाहिए। गांधीजी ने कहा कि राष्ट्रीय शिक्षा प्रणालीमें प्राथमिक शिक्षाकी नितान्त आवश्यकता है। अखिल भारतीय राष्ट्रीय शिक्षा बोर्डका आदर्श उन्होंने मंजूर कर लिया, लेकिन कहा कि अभी इसकी आजमाइशके लिए उपयुक्त समय नहीं आया है। लेकिन इसकी उपयोगिताको कार्यकर्ता ही सिद्ध कर सकते हैं। वही इस तरहका प्रस्ताव कार्यकारिणी समितिकी अगली बैठकमें रख सकते हैं। श्री गांधीने कहा कि जनशिक्षाको राष्ट्रीय शिक्षाका अंग मान लेनेकी जरूरत है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २३-६-१९३४

१. यह भेंट तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठमें आयोजित की गई थी; उस समय कार्यकर्त्ताओंने गांधीजीके समक्ष एक प्रश्नमाला रखी थी।

११६. भाषण : बारह वफातके जलसेमें[1]

पूना
२३ जून, १९३४

मुसलमानोंसे मेरी दोस्ती हाल ही की नही है। वह पचास साल पहले, जब मैं नौजवान था, शुरू हुई थी। दक्षिण आफ्रिकाकी मेरी पहली यात्रा वहाँकी एक मुस्लिम फर्मके मामलोंके ही सिलसिलेमे थी। वहाँ कई सालतक मुझे मुस्लिम मित्रोंके घनिष्ठ सम्पर्कमें आनेका सौभाग्य मिला। भारतमे भी, आप जानते ही है, अली बन्धुओं और मुझमे कितना गहरा सहयोग था। यद्यपि मौलाना शौकत अली और मैं अब एक-दूसरेसे अलग हो गये लगते है, फिर भी वे यह जानते है कि मैं हमेशा उनकी मुठ्ठीमें हूँ।

मुसलमानोंके साथ अपने सम्बन्ध इस तरहके होनेके कारण, पैगम्बरके जीवनका अध्ययन मुझे अपना कर्त्तव्य लगा। दक्षिण आफ्रिकामे मैंने उनके अध्ययनकी कोशिश की, पर मेरा ज्ञान तब काफी नही था। भारतमे कारावासके समय मुझे वह सौभाग्य प्राप्त हुआ और मौलाना शिबली रचित पैगम्बरकी जीवनी पढनेका मुझे मौका मिला। स्वर्गीय हकीम अजमल खाने मेरी प्रार्थनापर उसे भेजनेकी कृपा की थी। साथ ही मैंने पैगम्बरके साथियोंपर भी पुस्तकें पढी। इस्लाम और पैगम्बरपर मैंने अंग्रेजीमे पुस्तकें पढी है।

इस अध्ययनमे मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा कि मेरे लिए केवल 'वेद' और 'गीता' ही नही, बल्कि 'कुरान' और 'बाइबिल' भी पवित्र ग्रन्थ है। हजरत मुहम्मद एक महान पैगम्बर थे और ईसा मसीह भी एक महान पैगम्बर थे। अपने अध्ययनसे मेरी धारणा यह बनी है कि पैगम्बरको सत्यकी तलाश थी। उन्हे ईश्वरका भय था। उसमे, मुझे मालूम है, मैं आपको कोई नई बात नही बता रहा हूँ। मैं तो सिर्फ यह बता रहा हूँ कि उनके जीवनसे मैं किस तरह प्रभावित हुआ। उन्होंने अपार कष्ट सहे। वे बहादुर थे और अल्लाहके सिवा और किसीसे नही डरते थे। परिणामोंकी परवाह किये बिना, उन्होंने वही किया जिसे वे ठीक समझते थे। उनकी कथनी और करनीमे कभी भेद नही रहा। वे जैसा सोचते थे वैसा ही करते थे। यदि उनके विचारोंमे कोई परिवर्तन आता था तो वे, इस बातका खयाल किये बिना कि उसकी उन्हे क्या कीमत चुकानी होगी और जन-साधारण उसका समर्थन करेंगे या विरोध, अगले ही दिन उस परिवर्तनके अनुरूप कार्य करने लगते थे।

पैगम्बर एक फकीर थे। उन्होंने सर्वस्वका त्याग किया था। यदि वे चाहते तो सम्पत्तिशाली हो सकते थे। उन्होंने और उनके परिवार व साथियोंने स्वेच्छासे

१. अंजुमन-ए-फिदा-ए-इस्लामके तत्वावधानमें हुआ था और गांधीजी वहाँ हिन्दीमें बोले थे।

जो कष्ट सहे, जब मैं उनके बारेमें पढ़ता हूँ तो मेरी आँखोसे आनन्दाश्रु बहने लगते है; आपके भी बहने लगेंगे। जिनका मन बराबर अल्लाहपर टिका था, जो हमेशा खुदासे डरते रहे और जिनके हृदयमें मानव जातिके लिए अपार दया थी, मेरे-जैसा सत्यका अन्वेषी उनका आदर किये बिना भला कैसे रह सकता है?

आप सब कुरान पढ़ते है। पर जो-कुछ आप पढ़ते हैं उसमें से अमलमें कितना लाते है? आप शायद इसका मुँहतोड़ जवाब यह दें कि यदि आप कुरानके आदेशोके अनुसार नही रहते है तो हिन्दू ही गीताके आदेशोके अनुसार कहाँ व्यवहार करते हैं, और आपका यह कहना सही होगा। पर इससे निष्कर्ष केवल यह निकलता है कि यदि दोनों सम्प्रदाय अपने-अपने धर्मके उपदेशोंका अनुकरण करें, तो साम्प्रदायिक झगड़े अतीतकी चीज हो जायें। लेकिन इस समय ऐसा लगता है कि दोनो सम्प्रदायोके कुछ लोगोने अपनी समझको धता बता दी है और वे एक-दूसरे पर कीचड़ उछालनेमें लगे है। एक भी मुसलमान यदि इस सभाके कारण परिस्थितिको ठीक-ठीक समझने लगता है और छिद्रान्वेषणकी बजाय अपने सम्प्रदायके साथ-साथ अन्य सम्प्रदायोंसे भी प्रेम करने लगता है, तो यहाँ मेरा भाषण देना बेकार नही जायेगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २९-६-१९३४

११७. पत्र : चारु प्रभा सेनगुप्तको

२४ जून, १९३४

चि० चारु प्रभा,

जहाँ जगह अच्छी लगे तुम्हें वही रहना चाहिए। तुम्हारे पुत्रने जो निर्णय लिया है वह बहुत अक्लमन्दीका है। अपने स्वयंके परिश्रमपर जीना ही इज्जतके साथ जीना है। यही हमारा आदर्श है और होना चाहिए। हम तो इसके अधिकसे-अधिक करीव पहुँचनेकी कोशिश ही कर सकते है।

स्नेह।

बापू

श्री चारु प्रभा सेन
राजवाड़ी, बंगाल

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८७०७) से। सी० डब्ल्यू० १४९३ से भी; सौजन्य: ए० के० सेन।

११८. पत्र : बेचरदास जे० दोषीको

२४ जून, १९३४

भाई बेचरदास,

आपका पिछला कार्ड मिलनेकी मुझे याद नही। दिल्लीमें मेरे रहनेकी कोई बात नही है। लेकिन मैं वहाँ होकर निकलूं, तो अवश्य मिल जाइए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १३४१) से।

११९. पत्र : नारणदास गांधीको

[२४ जून, १९३४][1]

चि० नारणदास,

यदि माताजी और पिताजी मुझसे वढवाणमें आकर मिल सकें तो मुझे बहुत अच्छा लगेगा, किन्तु मैं वहां रातको पहुँचूंगा। उन्हें इतनी तकलीफ क्यों दी जाये? मुझे उनका आशीर्वाद मिलता रहता है; मैं इनसे सन्तुष्ट हूँ। उनका प्रेम यदि उन्हें वढवाण खींचकर ले आये तो आने देना।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८४०४ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१२०. पत्र : कृष्णदास जाजूको

२४ जून, १९३४

भाई जाजू जी,

आपका मधुर पत्र मिला है।

कोर्टशिपमें मानसिक व्यभिचार अनिवार्य है। इससे बचनेके कारण और व्यभिचारमय स्थितिमें अयोग्य पसंदगीके भयसे मुक्त होनेके कारण मैंने मात-पितापर प्राथमिक शोध और पसंदगीका बोज रखा है। अबतक इसमें कोई बाधा पैदा नहिं हुई है। मेरे दो लड़के तीस वर्षके नजदीक आकर विवाहित हुए। दोनोंके लिये वधुकी

१. यह संदेश २४ जून, १९३४ को प्रभावती द्वारा नारणदास गांधीको लिखे पत्रमें भेजा गया था।

पहली पसदगी मेरी थी। देवदासके बारेमें देवदासकी थी सही, लेकिन जैसे देवदासमें यह बात पैदा हुई ऐसे हि उसने किसीके पूछनेके पहले ही मुझे और राजगोपालाचारी को कह दिया और हमको संतुष्ट करनेकी नीतिमय चेष्टा की और सफल हुआ। बात बढ़नेके बाद विवाहमें कोर्टशिपका भय रहता है। ऐसा तो धर्म मात्रमें है। धर्म नाम ही उसका है जिसमे मनुष्यको प्रतिक्षण पाप अथवा पुण्यके बीचमें एक ही पसंदगी करना पड़ता है। तुमारे प्रश्नके गर्भमें प्रश्न लड़के लड़कीकी एक साथ शिक्षा-का उपस्थित होता है। मिश्रित शिक्षाके बारेमें मुझे संदेह है। मैं कोई निश्चय नहिं कर सका हूं। हमारा प्रयोगका यह तो आरंभ काल ही है, उसमें भूल होवेगी। अपूर्णता है ही। तो भी प्रयोग करने योग्य है। सर्वांशमे लाभ ही प्रतीत होता है। कटु अनुभव भी काफी हो रहे हैं। और भी इस बारेमें पूछना है तो पूछीये।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३१४८) से

१२१. भाषण: जिला स्थानीय बोर्ड, पूनामें[1]

२४ जून, १९३४

गांधीजी ने बोर्डको हरिजन-सेवाके कामके लिए बधाई दी[2] और कहा, "मुझे विश्वास है कि अगर स्थानीय बोर्ड और नगरपलिकाएँ सन्तोषजनक रीतिसे अपना कर्त्तव्य पालन करने लगें, तो हरिजनोंका आर्थिक संकट थोड़े ही दिनोंमें दूर हो जाये और हरिजन-बस्तियोंमें सफाई की भी हालत सुधर जाये। बोर्डोंको यह देखते रहना चाहिए कि प्रारम्भिक पाठशालाओंमें हरिजन बच्चोंको ठीक तरहसे शिक्षा दी जाती है या नहीं। शिक्षासे मेरा मतलब यहाँ अक्षरों-अंकोंकी ही पढ़ाईसे नहीं है। हरिजन बालकोंको सबसे पहली शिक्षा तो यह मिलनी चाहिए कि वे स्वच्छतासे रहना सीखें और अपने कपड़े साफ रखें। हरिजन छात्रोंकी शिक्षा-संस्कृतिपर जो शिक्षक अधिक ध्यान दें, उन्हें इनाम इत्यादि देकर प्रोत्साहित करना चाहिए। एक बात और है कि अकसर सार्वजनिक कुँओंसे पानी भरनेकी हरिजनोंको इजाजत नहीं दी जाती, यद्यपि इसका कानूनी हक उन्हें हासिल है। जहाँ ऐसी बात देखनेमें आये, वहाँ बोर्डोंको अधिकारवंचित [हरिजनोंकी हर तरहसे सहायता करनी चाहिए। पर इस बीच इस बातका खयाल रखा जाये कि वे बेचारे प्यासे न मरें। अगर कुछ अड़चन हो, तो उनकी बस्तियोंमें खासतौरपर कुँए खुदवा दिये जायें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ६-७-१९३४

१. यह तथा अगले दो शीर्षक 'साप्ताहिक पत्र' से लिये गये हैं।

२. जिला स्थानीय बोर्डने गांधीजीको मानपत्र भेंट किया था, जिसमें बोर्ड द्वारा की गई हरिजन-सेवाका विवरण था।

१२२. भेंट : हरिजन-सेवकोंको

पूना
२४ जून, १९३४

उस दिन गांधीजी ने १००से ऊपर हरिजन-सेवकोंके साथ डेढ़ घंटेतक बातचीत की। उनके सभी प्रकारके प्रश्नोंके उत्तर गांधीजी ने हमेशाकी तरह बड़े धीरजसे दिये। कार्यकर्त्ता गाँवोंमें जाकर डेरा डाल दें और वहाँ सवर्ण हिन्दू तथा हरिजन दोनोंके ही बीचमें सेवा-कार्य करें, इसी बातपर गांधीजी ने सबसे अधिक जोर दिया।

एक हरिजन भाईने पूछा कि क्या आज, जबकि इस हत्यारी बेकारीके मारे सारे देशमें बी० ए०, एम० ए० पास लोगोंकी मिट्टी पलीद हो रही है, हरिजनोंको कालेजकी पढ़ाईके लिए प्रोत्साहन देना उचित है, और क्या यह अधिक अच्छा न होगा, कि उन्हें औद्योगिक शिक्षा दी जाये? गांधीजी ने जवाब दिया कि जबतक यह औद्योगिक शिक्षा सवर्ण हिन्दुओंको पूरी तरह जँच न जाये, तबतक यह आशा करना कठिन ही है कि हरिजन इसे ग्रहण करेंगे। हो सकता है कि सवर्णोंके लिए विश्वविद्यालयोंकी पढ़ाई लाभदायक न भी हो, पर हरिजनोंके लिए तो वह कामकी चीज है। मैं बहुत दिनोंतक समझता रहा कि डाक्टर अम्बेडकर ब्राह्मण हैं। प्रतिभा और योग्यतामें वे किसी सवर्ण हिन्दूसे कम नहीं हैं। हरिजनोंको तो इस उच्च शिक्षासे लाभ ही है। औद्योगिक शिक्षामें मैं खुद पूरा विश्वास करता हूँ और मैं चाहता हूँ कि जितने ज्यादा हरिजन विद्यार्थी उद्योग-धन्धेकी शिक्षापर ध्यान दें उतना ही अच्छा। पर हरिजन-सेवक संघ हरिजनोंको इसके लिए मजबूर नहीं कर सकता। उसे तो दोनों ही प्रकारकी शिक्षाके लिए हरिजनोंको प्रोत्साहित करना पड़ रहा है। औद्योगिक शिक्षाका उपदेश तो हरिजनोंमें खुद हरिजन ही करें। मैं आशा करता हूँ कि हमारे हरिजन भाई बुकर टी० वाशिंगटन[1] की जीवनी और उनकी रचनाओंको पढ़ेंगे तथा उनसे शिक्षा ग्रहण करेंगे। वाशिंगटनकी मैं संसारके महापुरुषोंमें गणना करता हूँ।

हरिजन-बस्तियोंके बारेमें गांधीजी ने कहा कि देहातोंमें यह प्रश्न नहीं है; वहाँ उनके मकान बुरे नहीं हैं। रही शहरोंकी हरिजन-बस्तियोंकी बात, सो उनका सुधार नगर-पालिकाओंको करना चाहिए। हरिजन-सेवकसंघ इतना बड़ा काम अपने हाथमें नहीं

१. १८५६-१९१५; अमेरिकी नीग्रो शिक्षक, जिन्होंने जीवनके प्रारम्भिक दिन दासतामें बिताये थे। उन्होंने नीग्रो लोगोंको उद्योग-धन्धोंमें प्रशिक्षित करनेके लिए एक संस्थान बनाया था।

ले सकता। नगरपालिकाएँ अगर अपने कर्त्तव्य–पालनपर-उचित ध्यान दें, तो यह सवाल थोड़े ही पैसेमें हल हो सकता है।

जब सार्वजनिक कुँओंसे पानी भरनेके हकके बारेमें गांधीजी से पूछा गया, तो उन्होंने जवाब दिया कि जरूरत पड़े तो इसमें पुलिसकी मदद लें और अदालतमें जा कर कानूनी कार्रवाई भी करें।

[अंग्रेजीसे।]
हरिजन, ६-७-१९३४

१२३. भाषण : सार्वजनिक सभा, पूनामें

२४ जून, १९३४

शामकी सार्वजनिक सभा एक देखनेकी चीज थी। महाराष्ट्रके विभिन्न जिलोंके प्रतिनिधि-मंडल अपनी-अपनी थैली गांधीजीको भेंट करने वहाँ आये हुए थे। विरोधी सनातनी जनोंके प्रतिनिधिस्वरूप, पूनाके पुराने जनसेवक श्री शंकरराव लवाटे भी आये थे। गांधीजी ने श्री लवाटेसे बोलनेको कहा। श्रीयुत लवाटेने कहा कि मैं और मेरे सनातनी मित्र अस्पृश्यता दूर करनेके लिए गांधीजीसे कम इच्छुक नहीं हैं। पर हमारा एतराज तो उस बिलपर है जिसके सरकारी और दूसरे सम्प्रदायोंके वोटोंकी मददसे पास हो जानेसे सारी हिन्दू-जातिपर बुरा असर पड़नेकी आशंका है।

गांधीजी ने श्री लवाटेको उनकी शिष्टता और अत्यधिक विनयशीलतापर धन्यवाद दिया और कहा, जब लवाटेजी बोल रहे थे, तब लोगोंको इस तरह अधीर नहीं हो जाना चाहिए था। मुझे अधीरता प्रकट करनेका दुःख है। शिष्टताका तो यह तकाजा है कि जब कोई भाषण दे रहा हो, तो हमें धीरज और शान्तिके साथ उसकी बात सुननी चाहिए और बोलते समय बीचमें टोकना नहीं चाहिए। श्री लवाटे एक मँजे हुए सार्वजनिक कार्यकर्त्ता हैं। १९१५में जब मैं पूना आया, तो मुझे बतलाया गया था कि अगर पूनामें कोई सच्चा जनसेवक है तो वह श्री लवाटे हैं। जब मैंने उनके दर्शन किये, तो मेरी आँखोंके आगे प्राचीन कालके ऋषियोंका चित्र आ गया। उनके मद्य-निषेध सम्बन्धी महान कार्यको कौन नहीं जानता? मेरी तो उनके प्रति पहले ही जैसी श्रद्धा है, यद्यपि आज वे मेरे विरोधमें खड़े हैं। मैं इतना मूर्ख नहीं हूँ कि श्री लवाटे-जैसे सत्पुरुषोंके विचारोंकी उपेक्षा कर दूँ। पर मुझे भय है कि श्री लवाटेको कुछ भ्रम हो गया है। अपनी इस यात्रामें मैंने कहीं भी मन्दिर-प्रवेश बिलके पक्षमें वोट नहीं माँगे। मैंने तो इस बिलकी चर्चा भी बहुत कम की है। मेरा विश्वास है कि बिलके इस बखेड़ेको तो हमें कानूनके जानकारोंपर ही छोड़ देना चाहिए। मेरा यह निश्चित मत है कि बिलको पास कराना आप सबका कर्त्तव्य है, क्योंकि जबतक मन्दिरोंके द्वार हरिजनोंके लिए नहीं खुलते, तबतक यह

नहीं कहा जा सकता कि अस्पृश्यता जड़-मूलसे मिट गई। पर मैं यह हरगिज नहीं चाहता कि असेम्बलीके हिन्दू सदस्योंके बहुमतके बिना इस बिलको कानूनी रूप दे दिया जाये। मुसलमानों या ईसाइयोंके वोटोंसे बिलका पास करा लेना तो साफ ही हिंसा है। श्री लवाटे तथा दूसरे सनातनी मित्रोंको मैं विश्वास दिलाता हूँ कि उनका यह भय सर्वथा निराधार है। अगर पूनाके सनातनी इस आन्दोलनमें मेरा हाथ बँटायेंगे तो मुझे सचमुच प्रसन्नता होगी। मैंने सुना है कि गाँवोंके सवर्ण हिन्दू हरिजनों को मुर्दार मांस खाने और उनकी मर्जीके विरुद्ध उनसे मरे हुए ढोर उठवानेके लिए मजबूर कर रहे हैं, और अगर वे कभी अपने अधिकारके बलपर सार्वजनिक कुँओंसे पानी खींचनेका साहस करते हैं, तो सवर्णोंके हाथों सताये जाते हैं। क्यों न हम सब ऐसे अत्याचारका मुकाबला मिलकर करें? ऐसी अस्पृश्यताके समर्थनमें तो एक भी शास्त्रीने कोई श्लोक मुझे नहीं बताया है। मैंने शास्त्रोंको जैसा-कुछ समझा है, उसके अनुसार शास्त्रोंके माननेका मैं दावा करता हूँ। सत्यको जिस रूपमें मैंने पहचाना है, उसके लिए प्राणतक दे देनेका साहस मुझमें आये, यही सदैव ईश्वरसे माँगता रहता हूँ। यही कारण है कि मैं अपनेको सनातनी कहा करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ६-७-१९३४

१२४. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

"पर्णकुटी", पूना
[२५ जून, १९३४ से पूर्व][1]

भाई वल्लभभाई,

बहुत कोशिश की, मगर पिछले हफ्ते-भर लिख न सका। इस आशासे कि लिखूँगा ही, लड़कियोंके पत्र भी रोक रखे।

आज भी मुश्किलसे लिख रहा हूँ। वक्त हो तो पन्ने-पर-पन्ने भर दूं। परन्तु अब तो मैं जितना भी लिखूं, उसीसे सन्तोष कीजिए।

चन्दूभाईके लिए जो-कुछ हो सकेगा, करता ही रहूँगा। कसर नहीं रख छोडूंगा। गुजरातका दौरा करना आवश्यक था, इसलिए वहाँ जा रहा हूँ। जाऊँ तो हरिजन-चन्दा करना ही पड़ेगा। मैंने जो निर्णय दिया सो तो आपने देखा ही होगा। अभी तो जो हो उसे देखते ही रहना है। अच्छा-बुरा तो कौन जानता है? हम जो करें तो अच्छा समझकर करें, इतनी ही आशा रखी जा सकती है। मेरा विश्वास है कि सब-कुछ अच्छा ही हो रहा है।

१. साधन-सूत्रमें "२७ जून" है, परन्तु गांधीजी २५ को पूनासे रवाना हो गये थे।

सुनता हूँ कि आपका स्वास्थ्य आजकल अच्छा नही रहता। जो हो सके कीजिए और स्वास्थ्य सुधारिए। डाक्टरोको बुलवाना जरूरी हो तो जरूर बुलवाइए। माँगे बिना माँ भी रोटी नही देती। आपसे जो माँगा जा सके माँग लीजिए। और नाक को ठीक कर लीजिए।

इस बार जो प्रस्ताव पास हुआ है, वह शायद आपको तो अच्छा नहीं लगा होगा। मैं मानता हूँ कि उसका फल अच्छा ही होगा। बड़े भाई[1] मिल गये। अब जो हो जाये सो सही। वायुमण्डलमें इतनी नई गर्द छा गई है कि उसका पार पानेमे कोई समर्थ नही है। हम अपने वश-भर करके सन्तोष मानें। वहाँ बैठे हुए बाहरकी चिन्ता करना व्यर्थ है, हानिकर है; इसपर पूर्ण विश्वास रखकर निश्चिंत रहिए।

खुर्शेदबहन और दूसरी दोनों यही है। खुर्शेदबहनने (जेलमें) काफी कष्ट सहन किया है। अब तबीयत अच्छी है। उसे सीमा प्रान्त जानेकी लौ लगी है।

परीक्षितको पीटा गया, यह मेरे लिए साधारण बात नही है। और यह बात मुझे उससे भी ज्यादा भयानक प्रतीत होती है कि इसके खिलाफ लगभग कोई आन्दोलन नही हुआ।

बा मेरे पास आ गई है। ठीक है। सुखी हैं।

कान्ति देवदासके पास है। पढ़ता है। उसकी आकांक्षाएँ महान है।

बेलाबहन और आनन्दी मेरे साथ है। मेरा दल अब बहुत बड़ा हो गया है। सोचूंगा उसमें क्या कटौती की जा सकती है। बावला जीवणजीके साथ है।

. . .[2] निकम्मा साबित हुआ। उसने फिर पहले-जैसी ही भूल की है। लेकिन भूलका महत्त्व समझा हो, ऐसा नही जान पड़ता। अब मैंने उसे राजकोट जानेकी सलाह दी है। नारणदास अब वही रहेंगे। . . .[3] वहाँ जाकर रहे और जो हो सके करे। जमनालालजीका विश्वास खो बैठा है। ऐसा नही दिखता कि उसने हिसाब तक ठीक रखा हो।

राधा (गांधी) प्रोफेसर कर्वेकी पाठशालामें भरती हो गई है। मुझे तो इसका कुछ पता नही था। उसने अपने-आप ही सब प्रबन्ध कर लिया। कल मिली थी। मैं उससे ज्यादा देर तक तो नही मिल सका। यहाँ भी समय कम मिलता है।

स्वामी यही है। राजाजी हैं। जमनालालजी कल ही बम्बई गये। . . .[4] काफी बीमारी भोगकर आबूसे आये हैं। मेरे साथ व्यवस्था-सम्बन्धी बातें करनी है। स्वामी को वापस बिहार जाना ही है।

मीराबहनके बारेमें तो आपने पढ़ा ही होगा। इससे अधिक कुछ भी नही है। एकाएक उसके मनमें आया कि उसे खुद जाकर कुछ-न-कुछ करना चाहिए। मैंने हाँ कहा और वह चली गई।[5] मेरे सामने उसका व्यक्तित्व बिलकुल दब गया था।

१. पण्डित मदनमोहन मालवीय।

२, ३, ४. साधन-सूत्रमें नाम नहीं दिये गये हैं।

५. देखिए पृ० ९४।

अब पहले की अपनी कुछ स्वतन्त्रता प्राप्त कर लें तो अच्छा है। दो-चार महीनेके लिए ही गई है। मैक्सवेल[1] से केवल साधारण कैदियोंकी हालतके बारेमें बात करने गई थी, अपने अनुभव बतानेके लिए।

अम्बालाल साराभाईसे मिला था। सरला देवीको काफी लाभ हुआ है।

आज बस इतना ही। यह सबेरे 'पर्णकुटी'में लिखा था। अब भांभुरड़ा[2] जाना है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृष्ठ १०६-८

१२५. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

[२५ जून या उसके पूर्व][3] १९३४

चि० मणिलाल तथा सुशीला,

बा के इतने लम्बे पत्रके बाद अब मैं और क्या लिखूँ? अरुणकुमार नाम तुम दोनोंको अच्छा लगा, तो मुझे भी अच्छा लगा समझो। नानाभाईने जो लम्बी फेह-रिस्त भेजी है, उसमें से मुझे गोविन्द ज्यादा पसन्द है। ज्यादा लिखनेकी फुरसत भी नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्चः]

तुम दोनोंके एक प्रश्नका उत्तर देना रह गया। मेरे कहनेका आशय यह था कि सविनय अवज्ञा आन्दोलन भी मुल्तवी कर दिया गया है; अतः उसके फिर शुरू होनेसे पहले उसकी पूरी तैयारी कर लो। त्याग, सादगी, संयम आदिका अभ्यास करो, तभी उसमें अपनी आहुति दे सकोगे।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८२१)से।

१. बम्बई सरकारके तत्कालीन गृह-सचिव।

२. पूनाका एक मोहल्ला जो अब शिवाजीनगर नामसे प्रख्यात है।

३. देखिए "पत्र : नानाभाई आई० मशरूवालाको", पृ० १०८।

१२६. पत्र : प्रेमी जयरामदासको

२५ जून, १९३४

प्रिय प्रेमी,

परीक्षा पास कर लेनेपर अगर तुम्हें बधाइयाँ चाहिए तो मैं तुम्हें बधाई देता हूँ। क्या कारण है कि तुम मुझसे केवल स्टेशनपर ही मिलोगी? पिताजी मेरे साथ कराची जायेंगे, यह तो तय है। फिर तुम क्यों नहीं चलतीं? तुम्हारी हिन्दीका क्या हाल है?

सस्नेह।

बापू

श्री प्रेमीबहन जयरामदास
मार्केट रोड, हैदराबाद
सिन्ध

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९२४७) से; सौजन्य: जयरामदास दौलतराम।

१२७. पत्र : नानाभाई आई० मशरूवालाको

२५ जून, १९३४

भाई नानाभाई,

आपका पत्र मिला था। आपने जो नाम भेजे हैं, उनमें से मैंने गोविन्द पसन्द किया है। किन्तु इस सम्बन्धमें मेरा कोई आग्रह नहीं हो सकता। मैंने मणिलाल और सुशीलाको लिखा है और यह सुझाव दिया है।

आप चंगे हो रहे हैं, यह सुनूँ तो अच्छा लगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६९१) से। सी० डब्ल्यू० ४३३६ से भी; सौजन्य: कनुभाई ना० मशरूवाला।

१२८. पत्र : रैहाना तैयबजीको

२५ जून, १९३४

चि० रैहाना,

आज मैं बड़ी जल्दीमें हूँ, और इसलिए गुजरातीमें लिख रहा हूँ। तेरे पत्रमें से एक अंश मैंने 'हरिजन' में लिया है। अबतक हरिवदन, हमीदाका मानसिक असन्तुलन समाप्त हो गया होगा। जेल उन लोगोंके लिए नहीं है जो उसे आनन्द मनानेकी जगह बना लेते हैं। बाहर रहकर भी हमें वैसा ही जीवन बिताना चाहिए और अपना सारा समय रचनात्मक काममें तन्मय होकर लगाना चाहिए। आशा है तू प्रसन्न होगी। अम्माजान और अब्बाजानको मेरे आदाब। 'सरोज'[1] रोज मिलती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६४९) से।

१२९. वक्तव्य : बम दुर्घटनापर

पूना
२५ जून, १९३४

अपने जीवनमें मैं इतनी बार बाल-बाल बचा हूँ कि इस ताजा घटनासे मुझे कोई आश्चर्य नहीं हुआ।[2] ईश्वरको धन्यवाद देना चाहिए कि बमने किसीकी जान नहीं गई। और मुझे आशा है कि जो व्यक्ति कमोबेश जख्मी हुए हैं उन्हें शीघ्र अस्पतालसे छुट्टी मिल जायेगी।[3]

मैं विश्वास ही नहीं कर सकता कि कोई भी समझदार सनातनी आज शामकी नामसझीकी इस घटनाको कभी प्रोत्साहन दे सकता है। परन्तु मैं चाहूँगा कि सनातनी मित्र उन वक्ताओं और लेखकोंकी भाषा पर नियन्त्रण रखें जो उनकी ओरसे

१. सरोज नानावटी, काका कालेलकरकी निजी सचिव।

२. एक कार पर यह मानकर कि उसमें गांधीजी म्यूनिसिपल हॉल जा रहे हैं, बम फेंका गया था। शाम ७-३० पर गांधीजी जब वहाँ पहुँचे तो जो-कुछ हुआ था उसकी उन्हें कोई जानकारी नहीं थी। इस घटनाकी सूचना मिलनेपर वे शान्त ही रहे और इस सुझावसे उन्होंने सहमति प्रकट की कि जो कार्यक्रम है वह चलना चाहिए। अतः उन्हें अभिनन्दन-पत्र भेंट किया गया और ८-३० पर वे हॉलसे चल दिये। यह तब "भगवानने फिर कृपा की" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

३. यह अनुच्छेद हिन्दू, २६-६-१९३४ से लिया गया है।

बोलनेका दावा करते हैं। यह घटना शोचनीय है; किन्तु इससे हरिजन-ध्येय निश्चय ही आगे बढ़ेगा। यह बात आसानीसे समझी जा सकती है कि जो लोग किसी ध्येय पर जमे होते हैं उनकी शहादतसे वह ध्येय फूलता-फलता है। शहादतके लिए मैं बेचैन नही हूँ। पर यदि करोड़ो हिन्दुओकी तरह जिस धर्ममें मेरी आस्था है उसकी रक्षाके लिए मुझे अपना जो कर्त्तव्य सर्वोच्च लगता है, उसका पालन करते हुए मुझे शहादत मिलती है, तो मैं उसके लिए सुपात्र ही ठहरूँगा और भावी इतिहासकार यह कह सकेगा कि हरिजनोके आगे की गई मेरी यह प्रतिज्ञा कि यदि जरूरत पड़ी तो मैं अस्पृश्यताको मिटानेकी कोशिशमें अपनी जान भी दे दूँगा, अक्षरशः पूरी हुई।

मेरे इस पार्थिव जीवनका जितना कुछ भाग अभी शेष है, उसपर जिन्हे ईर्ष्या हो उन्हे यह समझ लेना चाहिए कि मेरे शरीरको खत्म करना तो बड़ा ही आसान काम है। मगर मेरे जीवनको, जिसे वे पाप-पूर्ण समझते हैं, समाप्त करनेके लिए बहुत-से निर्दोष जीवनोको संकटमें डालनेकी क्या जरूरत है? यदि वह बम मुझपर और मेरे साथके लोगोपर गिरा होता, जिनमें मेरी पत्नी और बेटियो-जैसी प्रिय वे तीन लड़कियाँ थी जिन्हे उनके माता-पिताने मेरे सुपुर्द किया है, तो दुनिया हमारे बारेमें क्या कहती? मुझे यकीन है कि बम फेंकनेवालेका इरादा उन्हें नुकसान पहुँचानेका तो हो ही नही सकता था।

बम फेंकनेवाले उस अज्ञात व्यक्तिपर मुझे बड़ा तरस आता है। यदि मेरा बस चलता और बम फेंकनेवालेको मैं जानता होता, तो मैं निश्चय ही उसे छोड़ देनेके लिए ही कहता। दक्षिण आफ्रिकामें जो लोग मुझपर हमला करनेमें सफल हुए थे, उनके लिए मैंने ऐसा ही किया था।[1] सुधारकोको बम फेंकनेवालेपर या जो लोग उसके पीछे हैं उनपर क्रोध नही करना चाहिए। मैं तो उनसे यह अपेक्षा रखता हूँ कि वे अस्पृश्यताकी इस घातक बुराईको मिटानेकी कोशिशें अब दुगनी कर दें।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २९-६-१९३४

१३०. डॉ० दिनशा मेहताके लिए धन-संग्रहकी अपील

२६ जून, १९३४

मुझे अपने २१ दिनके उपवास[2] की अवधिमें तथा उसके बाद श्री दिनशा मेहता और उनके कर्मचारियोकी अत्यन्त हार्दिक सेवा प्राप्त हुई है। यह सब स्वेच्छासे किया हुआ श्रम था। मैं मानता हूँ कि वे अपने पेशेको सच्चे दिलसे चाहनेवाले व्यक्ति है। उन्हे प्राकृतिक चिकित्साकी धुन है। चूँकि मैं खुद रोग-निवारणके प्राकृतिक और सादे उपायोमें विश्वास करता हूँ, मुझे उनके प्रयोगोमें गहरी दिलचस्पी है। वे

१. देखिए खण्ड ८, पृ० ९०-४।

२. ८ से २८ मई, १९३३ तक, देखिए खण्ड ५५।

इस समय आर्थिक कठिनाईमें हैं। जो मित्र अबतक उदारतापूर्वक उन्हें मदद करता रहा है वह और ज्यादा समयतक वैसा नहीं कर सकता। उनका कम-से-कम खर्च प्रति मास ३,००० रु० है। उन्हें आजकल इसकी आधी रकमका घाटा है। इसलिए वे धन-संग्रहके लिए सार्वजनिक अपील करना चाहते हैं। यदि मिलनेवाली मदद काफी बड़ी हुई तो वे उस धनका उपयोग स्थायी निधिकी तरह करेंगे। वे हिसाब-किताब रखते हैं जिसकी जाँच की जा सकती है।

मैं खुशीसे इस अपीलका अनुमोदन करता हूँ और आशा करता हूँ कि इसे सफलता मिलेगी।

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी।

१३१. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस आफ इंडियाके प्रतिनिधिको[1]

बम्बई
२६ जून, १९३४

कोई मेरे प्रति चाहे-जैसी हिंसा करनेका इरादा क्यों न करे, जिस कार्यको मैं सर्वथा उचित समझता हूँ, उसे करनेसे वह मुझे रोक नहीं सकती।

कल रात पूनामें हुई बमकी घटनासे वह जरा भी विचलित नहीं थे और एसोसिएटेड प्रेससे अपनी भेंटमें वे अपने स्वाभाविक ढंगसे, बीच-बीचमें मजाक करते हुए, बातें करते रहे। उन्होंने आगे कहा :

अस्पृश्यताके मामलेमें जो-कुछ हो रहा है, वह आखिर इतिहासकी पुनरावृत्ति है। कोई भी सुधार, जिसे सुधार कहा जा सके, अभीतक ऐसा नहीं हुआ है जिसमें सुधारकको अपने ध्येयके लिए अपने प्राणोंकी बाजी न लगानी पड़ी हो। अस्पृश्यताका दानव यदि एक व्यक्तिकी बलि लेता है तो यह समझना चाहिए कि वह आसानीसे सन्तुष्ट हो गया। युगोंसे चली आती एक बुराई, जिसे एक गुण कहकर रखा गया है, पर्याप्त बलिदानके बिना नहीं हटाई जा सकती। मेरा ईश्वरकी सर्वशक्तिमत्तामें विश्वास है। जबतक वह इस ध्येयके लिए मुझे इस शरीरमें रखना चाहता है, तबतक सभी तरहकी क्षतिसे वह मेरी रक्षा करेगा। और जब उसके लिए इसका कोई उपयोग नहीं रहेगा, तो पार्थिव शक्तिकी कैसी भी सुरक्षाका कोई लाभ नहीं हो सकेगा।

प्र० : आपको अभिनन्दन-पत्र भेंट करनेके विचारका सनातनियोंने जो विरोध किया और बम फेंकनेकी जो यह घटना हुई, आपके खयालमें क्या ये इस बातके संकेत हैं कि सनातनी हिंसापर आमादा हैं?

१. पूनासे अहमदाबाद जाते हुए एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाका प्रतिनिधि गांधीजीसे प्रातःकाल बम्बईमें मिला था।

गांधीजी: एक व्यक्ति अपनेको सनातनी कहकर हिंसा करना चाहता था, इससे मैं यह नही कहूँगा कि सनातनी हिंसापर आमादा हैं। अभीतक मै यह माननेको तैयार नही हूँ कि सचमुच सनातनियोंने मेरी गतिविधियोका विरोध करनेके लिए कोई हिंसक संगठन बनाया है।

प्र०: पूना, बिहार और उड़ीसामें हुई कार्रवाइयाँ, आपके ख्यालमें, क्या इस बातका संकेत है कि आपके अस्पृश्यता-निवारक आन्दोलनका सनातनियोंकी ओरसे जो विरोध है, वह हिंसाका रूप धारण कर रहा है?

गांधीजी: मै यह माननेको बिलकुल तैयार हूँ कि पूनामें और अन्यत्र जो कार्रवाइयाँ हुई है, उनका असर जल्दी ही भड़क उठनेवाले कुछ युवकोपर यह पड़ा है कि वे मेरे विरुद्ध हो गये है। १९१५ में जब मैं भारत लौटा था तो मैंने यह भविष्यवाणी की थी कि यदि इस देशमें किसी भी ध्येयकी आड़में बमको जगह मिल गई, तो वह केवल उस ध्येयतक ही सीमित नही रहेगा। मेरी वह भविष्यवाणी अनेक बार सच सिद्ध हो चुकी है। इस समय मैं आपसे यह सोचनेके लिए भी कहूँगा कि यदि हम विचार और वाणीमें हिंसाका अनुसरण करते हैं, तो किसी-न-किसी दिन वह अवश्य ठोस रूप भी ग्रहण करेगी, और जिसे अच्छा ध्येय कहा जाता है, केवल उसी तक सीमित नही रह सकेगी।

यह कहना बिलकुल गलत है कि यदि उद्देश्य पवित्र है तो हर तरहके साधन न्यायोचित हैं। पवित्र उद्देश्यकी प्राप्तिके लिए साधन भी पवित्र होने चाहिए। मुझ पर चाहे-जैसा हमला करनेका इरादा क्यों न किया जाये, जिस कार्यको मैं सर्वथा उचित समझता हूँ, वह मुझे उससे रोक नही सकता।[1]

साम्प्रदायिक समझौते और उसके बादकी घटनाओंपर कार्य-समितिका जो प्रस्ताव है, उसके प्रति आपकी प्रतिक्रिया क्या है, इस प्रश्नका उत्तर देते हुए उन्होंने कहा:

कांग्रेस-कार्यकर्त्ताओंमें फूट पड़नेकी मुझे कोई आशंका नही है।

इस गूढ़ वाक्यके सिवाय राजनैतिक परिस्थितिपर किसी और बहसमें पड़ने से गांधीजी ने इनकार कर दिया।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २६-६-१९३४; **हरिजनबन्धु**, १-७-१९३४ भी

१. यह अनुच्छेद **हरिजनबन्धु**, १-७-१९३४ से अनूदित है।

१३२. भाषण : बड़ौदामें[1]

भारी भीड़के समक्ष बोलते हुए गांधीजी ने बड़ौदाकी जनताको हरिजन-कार्यके लिए १,००० रुपयेकी थैली देने पर धन्यवाद दिया। उन्होंने कहा :

गुजरातके दु.खी किसानोके लिए डॉ० चन्दूलाल देसाई तथा अन्य लोगोने जिस कोषका आरम्भ किया है, मै चाहूँगा कि बड़ौदाके लोग सबसे पहले उसमें चन्दा दे और फिर अस्पृश्यताके कलंकको मिटाना अपना अनिवार्य कर्त्तव्य मानकर हरिजन-कोषके लिए चन्दा दें। मै यहाँ रुक नही सकता। इसका मुझे दु.ख है। मै थका हूँ और क्लान्त हूँ। महाराजा साहब गायकवाड़ने हरिजनोकी प्रगतिके लिए काफी-कुछ किया है। ऐसी हालतमे यह बड़ौदाके लोगोके लिए कलंककी बात है कि गुजरात हरिजन सेवक संघके मन्त्री श्री परीक्षितलाल मजमूदारके साथ राज्यके एक छोटे-से गाँवकी पुलिसने अनुचित व्यवहार किया। यहाँ उपस्थित सभी लोगोसे मै निवेदन करूँगा कि वे अस्पृश्यताके कलंकको खत्म करें।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २८-६-१९३४

१३३. सन्देश : पंजाबको

[२७ जून, १९३४ से पूर्व][2]

आशा है, हरिजन-कोषके लिए पंजाबके लोग उदारतापूर्वक चन्दा देंगे।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २९-६-१९३४

१. सभाका आयोजन स्थानीय हरिजन-सेवक संघ द्वारा स्टेशनपर ही किया गया था।
२. यह संदेश "लाहौर, २७ जून, १९३४" की तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत छपा था।

१३४. बातचीत : हरिजन-सेवकोंसे[1]

अहमदाबाद
२७ जून, १९३४

हर कार्यकर्त्ताने अपने-अपने जिलेमें अभीतक किये गये कार्यको गांधीजी के सामने रखा। हरिजन-कार्य करनेमें, खासकर गाँवोंमें, जो नाना प्रकारकी दिक्कतें रास्तेमें रोड़ा बनकर आती हैं, गांधीजी को उन्होंने उनसे भी अवगत कराया। उन्होंने उन्हें यह भी बताया कि हरिजनोंके लिए कुएँ खोदना एक बहुत बड़ी समस्या है और सुझाव दिया कि इस कार्यके लिए विशेष धन एकत्र करना चाहिए।

कुएँ खोदनेके लिए विशेष कोष एकत्र किया जाये, गांधीजी को यह बात पसन्द नहीं आई। उन्होंने कहा, कुएँके लिए दिये गये हर प्रार्थना-पत्रको बारीकीसे देखना चाहिए, क्योंकि उन्हें पानी तथा यथासम्भव अन्य सभी सुविधाएँ प्रदान करना हमारा कर्त्तव्य है। सनातनियोंसे किसी भी रूपमें कोई भी सहायता मिले तो स्वीकार की जानी चाहिए। हरिजनोंको आत्मनिर्भर कैसे बनाया जाये, यही देखना कार्यकर्त्ताओंका मुख्य कर्त्तव्य होना चाहिए। गांधीजी ने कहा कि उन्हें गाँवोंमें काम करना चाहिए। नित्य प्रचार-कार्यसे उनके रास्तेके सारे रोड़े दूर हो जायेंगे।

एक सवालके जवाबमें गांधीजी ने कहा कि अगर किसी खास गाँवमें हरिजन-कार्य हरिजन-सेवक संघ अथवा इसके सदस्यों द्वारा सक्रियताके साथ न किया गया हो, तो उन्हें स्वयं वह कार्य करना चाहिए। जैसे, अगर नगरपालिका अपना कार्य ठीक-ठीक नहीं करती तो सरकार उसके कार्यको करती है।

सुधारकोंकी संख्या रोज बढ रही है और हरिजनोंके प्रति अपने व्यवहारमें लोगोंका हृदय-परिवर्तन भी हो रहा है।

श्रीयुत परीक्षितलाल मजमूदारने . . . बताया कि हरिजनोंके लिए कुओंकी व्यवस्था करनेमें उन्हें किन कठिनाइयोंका सामना करना पड़ रहा है तथा चन्दा इकट्ठा करनेमें क्या-क्या समस्याएँ हैं।

गांधीजी ने कहा कि यदि वे सच्ची लगनसे काम कर रहे हैं तो वे आसानीसे चन्दा प्राप्त कर सकते हैं।

श्रीयुत ठक्कर बापाके इस सवालका जवाब देते हुए कि हरिजनोंके लिए अलग कुओंकी व्यवस्था करनेका अर्थ कुछ लोग अस्पृश्यताको जारी रखना लगाते हैं, गांधीजी

१. गुजरात और काठियावाड़के।

ने कहा कि यह जरूरी ही हो, ऐसा नहीं है, लेकिन किसी भी हालतमें पानीके अभावमें हरिजनोंको मरने नहीं दिया जा सकता।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २८-६-१९३४

१३५. भाषण : महिलाओंकी सभा, अहमदाबादमें[1]

२७ जून, १९३४

मैं इसे एक शुभ लक्षण मानता हूँ कि अहमदाबादमें आनेके बाद हरिजन-सेवा का मेरा सार्वजनिक कार्य बहनोंसे शुरू हो रहा है। अनेक स्थानोंपर बहनोंकी सभाओंमें, तथा कई स्थानोंपर पुरुषोंकी सभाओंमें भी यह बात कहना उचित मालूम हुआ और तब मैंने कहा कि धर्मकी रक्षा हिन्दुस्तानमें ही नहीं बल्कि सारे संसारमें स्त्रियोंके हाथों ही होती आई है और आगे भी होगी। यह रक्षा स्त्रियोंने बड़ी-बड़ी पुस्तकें लिखकर या भाषण देकर की है, यह मेरे कहनेका आशय नहीं था, न आज है। यह रक्षा उन्होंने अपने आचरणसे की है। किसी भी धर्मका प्रचार भाषणों अथवा पुस्तकोंसे नहीं हुआ। कुछ पुस्तकोंको हम धर्म-ग्रन्थ मानते हैं, किन्तु वे भी सत्पुरुषों अथवा सत्स्त्रियोंके आचार-विचारका प्रचार हैं। जिसके पीछे शुद्ध आचरण नहीं है, ऐसे सुन्दरसे-सुन्दर विचारोंकी माला भी धर्मग्रन्थ नहीं होती। वह धर्मग्रन्थों की शान्ति नहीं दे सकती। जो हमेशा झूठ बोलता है, ऐसा मनुष्य यदि 'सच बोलो' कहे, तो उसके कहनेका प्रभाव नहीं पड़ता, फिर चाहे यह किसीको मालूम न हो कि वह झूठ बोलता है। किन्तु जो मनुष्य अपने सदाचरणके हेतु जूझता है, वह यदि न बोले, तब भी उसका आचरण फलदायक होता है। जीवन्त बीज धरतीमें डाला जाये और धरती ठीक हो, तो वह बीज अवश्य फूट निकलेगा। ठीक यही बात पुस्तकमें कहे हुए वचनोंके बारेमें है। ऐसा समझकर ही मैंने कहा है कि धर्मकी रक्षा स्त्रियोंके ही हाथों अधिकसे-अधिक हुई है। स्त्रीमें त्यागकी, सहनेकी, धैर्यकी जो शक्ति है, वह पुरुषमें नहीं दिखाई देती। इसके कारण अनेक हैं। उनमें जानेकी यहाँ जरूरत नहीं है। किन्तु जो बात मैंने कही है, उसे संसार मानता है। इसलिए मुझे आनन्द हो रहा है कि मेरे यहाँके कामका आरम्भ इस सम्मेलनसे हुआ है।

यदि आप लोगोंके मनमें इस विचारका उदय हुआ हो कि अस्पृश्यता सामाजिक पाप है, तो इस पापसे मुक्त होनेका भगीरथ-प्रयत्न करना चाहिए। मुझ-जैसे व्यक्ति घूमें-फिरें, पैसे इकट्ठे करें, यह काफी नहीं है। मेरे इस प्रयत्नके पीछे आशा यह है कि मैं स्त्रीके हृदयको छू सकूँ। यह हो जाये, तभी मेरा काम सब प्रकारसे पूरा होगा। पुरुषके हृदयको छू सकूँ, तो काम थोड़ा-थोड़ा होगा। बम्बईमें मैं लेडी लक्ष्मीबाईसे मिलने गया था। अब उनसे समवेदनामें मैं क्या कहता? अतः मैंने तो एक ही मुद्दे

१. यह सभा सात महिला-मण्डलोंके तत्त्वावधानमें कृष्ण थियेटरमें हुई थी।

पर जोर देते हुए बात शुरू की। मैंने उनसे कहा "आप इस तरह घरके कोनेमें बैठकर शोक करना छोड़िए और बाहर निकलिए। घरके कोनेमें बैठकर वैधव्य भोगना आपको शोभा नहीं देगा। यह तब शोभा देगा जब आप बाहर निकलकर हरिजन-सेवा करेंगी।

लक्ष्मीबाईने अस्पृश्यता-निवारणका काम किया। उन्होंने बताया "आपका पुरुष-वर्ग चाहे जो कहे, किन्तु यदि स्त्रियाँ ठान लें तो आप पुरुष क्या कर सकते हैं?" मैंने कान पकड़ा। मुझे इसका अनुभव है। उन्होंने यह भी कहा, "आपके — अर्थात् अपने पति अथवा पिताके — वचन हम न मानें तो आप क्या करेंगे? हम स्त्रियाँ तो बस एक 'ना' कह देना जानती हैं। और फिर आप २४ घंटे घरमें बैठे थोड़े ही रह सकते हैं। आप कुछ करनेको कहकर चले जायें और हम न करें तो उसकी आपको क्या खबर होगी?" उन्होंने जो बात कही, वह बिलकुल सच है। इसीसे मैंने कहा है कि स्त्रियोंके हृदयोंको छू सकूँ, तभी मेरा काम होगा। पुरुष मुझसे कहते हैं, "हम अस्पृश्यताका पालन नही करते। किन्तु क्या आप हमारे घरमें किलकिल शुरू कराना चाहते हैं? हम तो कह दें कि हरिजनको घरमें रखेंगे, किन्तु जिन्हें २४ घंटे घरमें रहना है, वे यदि न रखें, तो हम क्या करें?" इसलिए यदि बहनें समझ जायें कि अस्पृश्यता पाप है और उसे निकाल बाहर करना है, तो पुरुष उससे चिपके नहीं रहेंगे। यह पुरुषकी शक्तिके बाहरकी बात है, यह अनेक पुरुषोंका अनुभव है।

अतः मुझे बहनोंके मनमें यह बात बैठानी है कि आपके पास चाहे जितने ब्राह्मण आयें, ज्योतिषी आयें, किन्तु इतनी बात आप याद रखेंगी। अगर आप-सब माता हैं, तो बेटे-बेटेमें भेद नहीं करेंगी, बल्कि उलटे नादान, मूर्ख, अपंग बेटेपर अधिक प्रेम उँड़ेलेंगी। मैंने ऐसी कोई माता नहीं देखी जिसने अपने मूर्ख बेटेको फेंक दिया हो अथवा जो अपने बुद्धिमान बेटेपर अधिक ध्यान देती हो। अगर ऐसी कोई माता हो, तो आप उसकी निन्दा करेंगी। मेरा मन तो जरूर निन्दा करेगा। माताका प्रेम तो अपंग बालकपर अधिक होता है। हम स्त्री-पुरुष, जो मिट्टीके पुतले हैं, जब अपनी सन्तानके साथ इस न्यायके अनुसार आचरण करते हैं और अपने अपंग बेटेकी ओर अधिक ध्यान देते हैं, तब ईश्वर, जिसने हमें पैदा किया है, जो हमारा पिता है, पिताओंका भी पिता है, जो संसारका पिता है, जो प्राणि-मात्रका सिरजनहार है, वह इससे भिन्न न्यायका बरताव कैसे करेगा? हरिजनोंका बहिष्कार किया जाये, कुओं-तालाबोंसे उन्हें पानी न लेने दिया जाये, उन्हें मन्दिरोंमें न जाने दिया जाये और चले जायें तो मन्दिर अपवित्र हो जायें, वे फल अथवा रोटीको छू लें तो उन्हें फेंक देना पड़े — ऐसा विधान ईश्वरने रचा होगा, यह मेरी बुद्धि स्वीकार नही करती। यह भ्रम है। इस्लाम अथवा ईसाई धर्ममें हम यह नहीं देखते। हिन्दू-धर्मने ही मनुष्योंको पशुकी अपेक्षा भी नीच समझनेका इजारा लिया है। गाय-भैंसोको तो हम अच्छा पानी और अच्छा दाना देते हैं, किन्तु इन्हें जूठन देते हैं, और वह भी छू जानेके डरसे ऊँचेसे छोड़ देते हैं। ऐसा करते हमें शर्म भी नहीं आती। हम मान लेते हैं कि ये लोग इसीके लिए जन्मे हैं।

यह इतनी मोटी बात है कि यदि हम इसे समझना चाहें, तो समझ सकते हैं। जो अपने-आपको सनातनी मानते हैं, वे तो हमें पाँव भी नहीं धरने देते। वे कहते हैं कि ये अस्पृश्य जन्मसे ही अस्पृश्य हैं और इन्हें छूनेसे पाप लगता है। मैं यह नहीं कहता कि यह बात संसारमें और कहीं नहीं है। अमेरिकामें भी ऐसा है, लेकिन वहाँ इसे धर्मका चोला नहीं पहनाया गया है। मेरी शिकायत हिन्दू भाइयों और बहनोंसे यह है कि हम अस्पृश्यताका आचरण धर्मके नामपर करते हैं। 'हरिजनको छूना अधर्म है', यदि आप ऐसा कहें तो मैं पूछूंगा, यह बात आप कहाँसे ले आये? कोई शास्त्री मुझे ऐसा नहीं मिला, जिसने कहा हो कि आजकी अस्पृश्यताका विधान शास्त्रमें है। मैंने अनेक शास्त्र भली-भाँति पढ़े हैं और पाया है कि आजकी अस्पृश्यताका उल्लेख शास्त्रोंमें नहीं है। थोड़ी अस्पृश्यता है, किन्तु उसमें अभी मुझे नहीं जाना है। मैं तो कहता हूँ कि आजकी अस्पृश्यताको मिटाओ। यह तो अधर्म ही है, धर्म नहीं है। इतना हम समझ जायें, तो जो सुधार हम करना चाहते हैं, वे झपाटेसे हो जायें।

इन सब बातोंकी चर्चा मैंने आपको यह बतानेके लिए की है कि मैं आपसे चाहता क्या हूँ। आप सब इस विषयका अध्ययन कीजिए। आपकी शक्तिसे जो बाहर न हो, सो कीजिए। इतना करनेकी तो सबमें शक्ति है कि जब मौका आये, हरिजनोंकी सेवा करें। उनके लिए पैसा दें। इतना ही नहीं, वरन् वे अस्पृश्य नहीं हैं, हमारे-जैसे ही हैं; ऐसा मानें। वे जन्मसे अस्पृश्य होते तो उनके दो आँखोंकी जगह तीन आँखें होतीं अथवा एक आँख होती। दो कानोंकी जगह एक कान होता। अथवा ऐसा ही कोई चिह्न ईश्वरने उन्हें दिया होता। परन्तु ऐसा कोई चिह्न ईश्वरने उन्हें नहीं दिया। यहाँ कोई हरिजन बालिका हो, तो हम एकाएक उसे पहचान भी नहीं सकेंगे।

जो अस्पृश्यताको पाप न समझते हों, वे एक कौड़ी भी इस थैलीमें न दें। जो उसे पाप समझते हों, वे यथाशक्ति देकर प्रायश्चित्त करें। हमें पता तो चलेगा कि अमुक बहनने पैसा दिया और भविष्यमें हम उस बहनसे कुछ और सेवा लेंगे। आपने एक पैसा दिया, तो यह सहृदयता हुई। आपने साथ दिया, यह कहो तो भी ठीक है। फिर जब आप अपनी पड़ोसिनोंके पास जायें और उनमें से कोई गाली दे, तू-तू मैं-मैं करे तो उसे सहन कीजिए और उनसे कहिए कि आप जो करती हैं, वह धर्म नहीं, अधर्म है।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १५-७-१९३४

१३६. पत्र : गुलाबचन्द जैनको

२८ जून, १९३४

भाई गुलाबचन्द,

तुमने लिखा है, सच्च है। उपाय तो वही है कि जो कानून तोडते हैं वह खादी पहने अथवा कानून रद्द कर दिया जाय।

मो० क० गांधी

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७७४२) से

१३७. बातचीत : गुजरात स्वदेशी संघके कार्यकर्त्ताओंसे[1]

अहमदाबाद
२८ जून, १९३४

इस संस्था (अखिल भारतीय स्वदेशी संघ)के लिए स्वदेशीमें वे उपयोगी वस्तुएँ आयेंगी जो पूरी तरह इस देशमें तैयार हुई हों, और ऐसे छोटे-छोटे उद्योगोंसे तैयार हुई हो जिनके अस्तित्वको बनाये रखनेके लिए उनके प्रति जनतामें लगातार रुचि पैदा करते रहनेकी जरूरत है। इनमें वे सब उद्योग आ जायेंगे जो अपने तैयार मालकी कीमत तथा अपने अधीन काम करनेवाले मजदूरोंकी मजदूरी और उनके कल्याणके मामलेमें इस संस्थाके बोर्ड द्वारा जारी किये गये निर्देशोंको स्वीकार करेंगे। अतः इस स्वदेशी में वे वस्तुएँ नहीं आयेंगी जो उन बड़े और सुव्यवस्थित उद्योगों द्वारा तैयार की गई होंगी जो इस स्थितिमें हैं कि अपनी देखभाल स्वयं कर सकते हैं और जो बिना सार्वजनिक सहायताके जब चाहे राज्यका संरक्षण प्राप्त कर सकते हैं।[2]

अपनी परिभाषाको समझाते हुए गांधीजी ने कहा कि उनकी परिभाषा ऐसी है कि इसमें परिवर्तनकी गुंजाइश है ही नहीं। उन्होंने कहा कि स्वदेशीका आन्दोलन

१. हरिजन आश्रम (सत्याग्रह आश्रम), साबरमतीमें।

२. कुछ कार्यकर्त्ताओंको यह परिभाषा बिलकुल अव्यावहारिक लगी, और गुजरात स्वदेशी संघने इसमें एक तबदीली सुझाई: "वे माल जो पूरी तरह भारतमें तैयार किये गये हों तथा जहाँतक सम्भव हो भारतमें उपलब्ध वस्तुओंसे तैयार हुए हों, जो किसी भी व्यवस्थापिकाके निर्देशनमें ७५ प्रतिशत भारतीय मजदूरों व पूँजीसे तैयार कराये गये हों, स्वदेशी माने जायें। लेकिन तैयार मालोंमें सूती कपड़ा, रेशमी तथा ऊनी कपड़ा तो अवश्य ही भारतमें बना होना चाहिए।" देखिए पृ० ८८-९० भी।

इस वक्त जिस पद्धतिसे चलाया जा रहा है, उसी की वजहसे हम बड़े उत्पादकोंके स्वैच्छिक एजेंट बन गये हैं और इसका नतीजा यह हुआ है कि वे कुटीर-उद्योगोंकी उपेक्षा कर रहे हैं।

इसलिए, गांधीजी ने कहा, मेरी समझमें बड़े-बड़े उद्योगोंको हमारे किसी प्रोत्साहनकी जरूरत नहीं है और मेरी परिभाषामें विचारका आधार बेरोजगारी खत्म करना है।

कच्चा माल जो भारतमें प्राप्त नहीं किया जा सकता, उसे विदेशोंसे मंगाना चाहिए या नहीं, इस सवालका स्वीकारात्मक जवाब देते हुए गांधीजी ने कहा कि जो कच्चामाल भारतमें उपलब्ध नहीं है, उसे विदेशोंसे मंगानेके लिए मैं जरूर कहूँगा।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ३०-६-१९३४

१३८. पत्र : मीराबहनको

२९ जून, १९३४

चि० मीरा,

तुम्हें गाड़ी-भर प्यार भेजनेके सिवाय मुझे और कुछ नहीं लिखना है। मुझे तुम्हें यह बतलाते हुए खेद होता है कि बूटो अभी-अभी फटी बांसुरीकी तरह निकम्मा साबित हुआ है।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२८८) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७५४ से भी

१३९. भाषण : मिल-मजदूरोंकी सभा, अहमदाबादमें

२९ जून, १९३४

मैं आज बहुत समयके बाद आप सबसे इतनी बड़ी संख्यामें मिल सका हूँ। इसके लिए मैं भगवानका आभार मानता हूँ और अपने-आपको भाग्यशाली समझता हूँ। आपने मानपत्र पढकर सुनाया और ५००१ रुपयेकी थैली हरिजन-सेवाके लिए दी, इसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। आपने जो [मानपत्रमें] लिखा है कि आप लोग अन्य हरिजनोंकी अपेक्षा अधिक सुखी हैं, यह बिलकुल ठीक है। आपके पास थोड़ा पैसा है और आपको अक्षरज्ञान आदिकी सुविधा दिनों-दिन अधिक मिलती जा रही है। ऐसे हरिजन भी हैं जो इस कोषमें पैसा देनेवाले हरिजनोंकी अपेक्षा

नीचे समझे जाते हैं। इस प्रकार अस्पृश्यताके भीतर एक और अस्पृश्यता उत्पन्न हो गई है। यह पैसा आप लोगोंने इस पापके प्रायश्चित्तस्वरूप दिया है। यह पाप आप लोगोंने स्वीकार कर लिया, इसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। किन्तु आप यह न मान बैठें कि हमने प्रायश्चित्त किया, थैली भेंट की, अतः अब हमें अपनेको ऊँचा और अन्य हरिजनोंको नीचा माननेका अधिकार प्राप्त हो गया। कितने ही लोग इसी प्रकार अपने पापका प्रायश्चित्त करते देखे जाते हैं। भगवानके दर्शन किये, पैसा-सुपारी-अक्षत चढ़ाये और प्रायश्चित्त किया कि बस पाप करनेका अधिकार मिल गया — ऐसा माननेवाले अनेकों पड़े हैं। जैसे रोज कपड़े मैले होते हैं और रोज धोये जाते हैं, वैसे ही रोज पाप करें और रोज प्रायश्चित्त करें — ऐसा मानकर चलनेवाले भी बहुत हैं। इस प्रकार पाप करनेकी छूट पानेके लिए अगर आपने यह रुपया दिया हो तो यह गलत है। जो प्रायश्चित्त करता है, वह दूसरेको नीचा नहीं समझता। इसके लिए मैं आपको सीधा-सा गुर बताता हूँ। हम अपने-आपको सबसे नीचा मानें। हमसे नीचा कोई नहीं हो सकता। अपनेको किसीसे ऊँचा मानें, तो हमारा पतन अवश्यम्भावी है; तब हम नहीं कह सकेंगे कि हमने अस्पृश्यताको दूर कर दिया। जिन्होंने पैसा दिया है, वे पूरा प्रायश्चित्त करें और ढेड़, भंगी, चमार आदि उप-जातियोंके बीचका भेदभाव मिटा दें। इस भेदभावके लिए भी जिम्मेदार सवर्ण हिन्दू ही हैं, जो अपने-आपको ऊँचा मानते हैं। उन्हींने यह अस्पृश्यता सिखाई है, जो अब घर-घरमें फैल गई है। यह ऊँच-नीचका भेदभाव मिटा देंगे, तभी जाति-जातिके बीच तथा विभिन्न धर्मियोंके बीच जो कटुता है, उसे दूर कर सकेंगे। हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाईके बीच जो कटुता है, उसका कारण कुछ और नहीं बल्कि इनके बीच व्याप्त ऊँच-नीचका भाव व अनन्यताकी भावना है। पेड़के पत्ते अलग-अलग होते हुए भी एक ही हैं। उनमें भेद नहीं है। इसी प्रकार हमारे विचार तथा धर्म भिन्न हो, तिस पर भी यदि हममें भेदभाव, भिन्नता, ऊँच-नीचके भाव न हों, तो मात्र मत-मतान्तर होनेमें कोई हर्ज नहीं। बस, समझदारीकी यही एक घूँट आपके गले उतारनेके लिए अस्पृश्यता-निवारणका अभियान छेड़ा गया है।

यहाँ श्रमिक-संघके कार्यकर्त्ता आपके लिए भी जी-तोड़ परिश्रम कर रहे हैं। रात-दिन वे आपके सुखका विचार करते हैं। अहमदाबादमें जो अनेक कार्यक्रम देखता हूँ, वे मैं अन्य स्थानोंमें नहीं देखता। यह ठीक है, कि अन्य स्थानोंमें मैं रहा भी नहीं। अन्य स्थानोंमें तो गया कि भागा। आपके कार्यक्रमोंमें मैं जैसा डूब गया हूँ, वैसा और दूसरोंमें नहीं। आपके कार्यक्रमके विषयमें मुझे जानकारी है, हो सकता है, इसलिए ही वह मुझे बड़ा लगता हो। मैं समझता हूँ, अहमदाबादमें मजदूरोंके कल्याणका जो कार्यक्रम है, वह सर्वोत्तम है। किन्तु क्या आप उससे फायदा उठाते हैं? अगर नहीं उठाते, तो करा-धरा सब मिट्टी है। मैं अभी कल्याणग्राम देखकर लौटा हूँ। वहाँके घर सुन्दर और स्वच्छ हैं। आँगन और गलियाँ भी स्वच्छ हैं। उनसे अधिक स्वच्छ घरमें मैं नहीं रहा, न रहता हूँ। उससे अधिक की आशा मैंने की भी नहीं थी। [लेकिन यदि आपको परवाह नहीं है तो] इस सबपर आप पानी फेर सकते हैं। अच्छे घरमें रहते हुए भी यदि हम अपने

शरीरको बिगाड़ें, तो शरीररूपी घरमें जिस जीवको चौबीसों घंटे रहना है, वह तो बर्बाद हो ही जायेगा। तब ईंटके अच्छे मकानोका क्या उपयोग? एक झगड़ा मेरे और आपके बीच बहुत समयसे चला आ रहा है, वह है शराब छोड़नेका। फिर भी अभी आप सबने शराब छोडी नही है। यहाँकी शराबकी दूकानके इतिहासकी छानबीन की जाये, तो मालूम होगा कि उसमें जानेवाले ज्यादातर मजदूर हैं। मजदूर इतना अधिक पैसा बहाते हैं कि उन्हें आर्थिक कठिनाइयोका सामना करना पड़ता है, पैसा खर्च करके पागल बनते हैं। शराब पीनेवाला पागल हो जाता है, दीवाना हो जाता है। आप अपनी इस आदतको सुधारिए।

अनेक हरिजन मुर्दार-माँस खाते हैं। यहाँ तो ऐसा करनेका कोई कारण नही बताया जा सकता। आपको खानेके लिए यहाँ घी, दूध, साग सब मिलता है। फिर भी आप मुर्दार-माँस खायें, यह कैसी शर्मकी बात है? संसारमे कही भी मुर्दार-माँस खानेवाला सभ्य जातियोमें शामिल नही माना जाता। आप तो सभ्य माने जाते हैं फिर आप यह जगलीपन कैसे करते है? पैसा उड़ाना ठीक नही है। अपने बच्चोको पढाना चाहिए। आप लोगोको बहुत आगे जाना है। आपको और आपके बच्चोको भोजन लेना चाहिए। बच्चोका काम दूधके बिना नही चलता। उन्हें आटेकी राब देकर ही सन्तोष नही करना चाहिए। बच्चे उस तरह पनप ही नही सकते। जहाँ पैसेका उपयोग करना चाहिए, वहाँ कीजिए। इसका पुरस्कार आपको मिलेगा। बालक हृष्ट-पुष्ट होंगे, चंगे होंगे, अधिक कमायेंगे, वे सुखी होंगे और आप सुखी होंगे। इस प्रकार आप संसारके और भारतके धनमें वृद्धि करेंगे। यदि आप अनेक प्रकारकी वस्तुओका निर्माण करें, तो किसकी मजाल है कि हरिजन कहकर, अस्पृश्य मानकर आपका अपमान करे। मैंने पहले भी कहा है कि हरिजन सचमुच हरिके जन बन जायें, जैसा नाम है वैसे गुन प्राप्त कर ले, तो सारे दु:ख दूर हो जायें। मुझ-जैसेको तो हरिजन बननेके लिए योग्यता प्राप्त करनी पडेगी। सवर्ण हिन्दू भी हरिजन बनें। इस शुद्धि-यज्ञमें सवर्णोको अपना सुधार कर लेना है। उन्हे प्रायश्चित्त करना है। आपको भी कोषमें पैसा देना है, अपने दोष दूर करने है। अपने घर साफ-स्वच्छ रखिए, धूप और प्रकाश सबके मन और शरीरके लिए जरूरी है। आप हवाको गन्दा न करें। घर, आँगन, गलियाँ स्वच्छ रखें। घरोके सामने आपने पेड़ रोपे हैं, यह देखकर मुझे आनन्द हुआ। अन्तत: ये घर आपके ही हैं। ज्यो-ज्यो आप किराया देते जाते हैं, त्यो-त्यो घरपर आपका अधिकार बढता जाता है। आप पैसा बचायेंगे और किराया देते जायेंगे, तो एक अवधिके बाद घर आपका हो जायेगा — ऐसी योजना है।

आपने मुझे हाथका लिखा मानपत्र दिया, इसके लिए मैं आपको बधाई देता हूँ। एक और छपा हुआ पर्चा यहाँ बाँटा गया है, उसे आप जरूर पढ़िए। उसमें कम्युनिस्ट भाइयोने मेरी आलोचना की है। मैं इतना ही कह सकता हूँ कि उसमें जो बातें लिखी गई है, वे नासमझीके कारण लिखी गई हैं। जिन भाइयोके लिए वह लिखा गया है, वे यदि उसे ध्यानसे पढ़ें, तो देखेंगे कि उसमें जो लिखा गया है, वह सही नही है। उसमे कहा गया है कि मैं पूंजीपतियोंका साथी हूँ। पूंजीपति मजदूरोका

शोषण करें, यह मेरे कार्यक्रममें नही है। दक्षिण आफ्रिकासे ही मै मजदूर हो गया हूँ . . .[१]

इन भाईका पहला प्रश्न है कि बम्बई, शोलापुर, कानपुर तथा दूसरे स्थानों पर जब मजदूर कष्ट भोग रहे थे, तब मैंने क्या किया। बम्बईमें मजदूरोंपर गोलीबार हुआ, तब मैंने क्या किया। इसका जवाब मुझे देना चाहिए। मै परमेश्वर नही हूँ, आप ही जैसा मजदूर हूँ। आप मुझसे पूछते है कि मैंने क्या किया। तो मै कहता हूँ कि मेरे पास जितनी शक्ति थी, उसमे से मैंने मजदूरोंको उनका हिस्सा दिया। मेरी शक्ति मनुष्यकी शक्ति थी। अधिक हो, तो उसका उपयोग करनेके लिए मै तैयार हूँ। जिस समयकी बात ये भाई कर रहे है, उस समय जो भाई मेरे पास आये थे, उन्हें मैंने समझाया था और उनकी जरूरतें मालूम की थीं। आखिर मुझे मालूम तो होना चाहिए कि पैसा काहेके लिए चाहिए। मै तो जो सलाह दे सकता हूँ वही दूँगा। मेरे पास सत्ता इतनी ही है कि मै जो करना तय कर लूँ, वह करूँ। हड़ताल क्यों हुई है, यह मुझे देखना चाहिए। मजदूर यदि अपनी भूलके कारण कष्ट भोग रहे हों, तो इसका उपाय यही है कि वे अपनी भूल सुधारें। जीवन-भर मैंने बिना समझे कुछ नही किया। मेरे पास अपना पैसा नही है। मुझे तो पैसा किसीसे माँगना होगा। इसलिए मुझे समझना चाहिए कि पैसा काहेके लिए चाहिए। जहाँ-जहाँ मजदूर हैं, वहाँ-वहाँ सब जगह मैंने उनतक पहुँचनेका प्रयत्न किया है। जो मजदूर मुझसे मिले है, उनसे मैंने बात की है। नागपुरमें जब हड़ताल जारी थी, तब वहाँ भी मजदूर-नेता मुझसे मिले थे।

सरकारने इस सम्बन्धमे जो कुछ किया, उसकी बाबत मैंने क्या किया, यह भी इन भाईने पूछा है। सरकारकी कार्रवाइयोंपर मै बोलता ही नही हूँ। मैं अपनी यह प्रतिज्ञा भंग करूँ, यह तो आपकी भी इच्छा नही होगी। मैंने अपने लिए इस वर्ष हरिजन-सेवाका कार्यक्रम खोज लिया है। इसलिए हरिजन-सेवाके विषयपर बोलता हूँ, वह भी सरकारकी नीतिकी आलोचना किये बिना। मैंने जो प्रतिज्ञा की है, उसका पालन मुझे अवश्य करना चाहिए। यह प्रतिज्ञा सरकारके सामने नही की गई, आप सबके सामने भी नही की गई, यह प्रतिज्ञा भगवानके सामने की गई है। मै जेलमें बैठे हुए आदमीके समान हूँ। अतः मै एक ही काम कर सकता हूँ, अन्यथा मुझे मौन रहना चाहिए। जो काम मै जेलमें बैठकर कर सकता था, वही आज मैं बाहर रहकर कर रहा हूँ। अतः सरकारकी नीतिके बारेमें बोलनेकी मेरी इच्छा नही है। बोलूँ, तो मेरी प्रतिज्ञा भंग हो जायेगी।

हरिजनोंकी सेवासे मुझे इतना समय ही नहीं मिलता कि मैं अखबार पढ़ूँ या अन्य आन्दोलनोंका अध्ययन करूँ। कम्युनिस्टोंसे मेरा झगड़ा नही है, मतभेद हो

१. इस बीच उपरोक्त पर्चेके लेखक बोलनेके लिए आये। गांधीजी ने उन्हें बोलने दिया। उन्होंने कहा, "मजदूरोंके लिए गांधीजी ने क्या किया है? बम्बई, शोलापुर, कानपुर वगैरहमें जब मजदूरोंकी हड़ताल हुई थी, तब गांधीजी ने मजदूरोंकी क्या मदद की? गांधीजी हरिजनोंको मजदूरोंसे अलग करना चाहते हैं।"

सकता है। फिर भी मेरी इच्छा होती है कि अपना मत मैं उन्हें समझाऊँ और उन्हे अपने साथ मिलाऊँ। जहाँ मतभेद हो, वहाँ मैं उनके मतको बर्दाश्त करूँ, वे मेरे मतको करें। शायद किसी दिन वे मुझे समझ सकेगे। मैं पचास बरससे मजदूरोकी सेवा करता आ रहा हूँ। उसमे मेरी एक ही भावना रही है। मै पूँजीपतियोंके साथ बैठता हूँ, उनसे मित्रता रखता हूँ, तथापि काम मैं मजदूरोका करता हूँ। मेरी मान्यता है कि पूँजीपतियोका अन्त कर देनेसे मजदूरोका भला नही होगा। जो पूँजीपति करते हैं, वह मजदूरोसे कराऊँ, यह मेरी मंशा नही है। एक दृष्टिसे मजदूर भी पूँजीपति हैं। पैसा ही पूँजी है, मेहनत पूँजी नही है, ऐसा मजदूर क्यो मानते हैं? पूँजी मजदूरोके द्वारा ही उत्पन्न होती है। सहाराके मरुस्थलमें पैसेकी कीमत नही होती। वहाँ मजदूरोके बिना मनुष्य पानी प्राप्त नही कर सकता। वहाँ मजदूर पूँजीपति है। मजदूरोमे संगठन तथा समझदारी हो तो वे पैसेवालोके समान ही पूँजीपति हैं। एककी पूँजी मजदूरी है, दूसरेकी पैसा। लोगोंको पूँजीका उपयोग करना तथा संग्रह करना नही आता। कई जगह बिखरा हुआ करोड रुपया भी पूँजी नही होता। उसे एकत्र करके समझदारीसे उसका उपयोग किया जाये, तभी वह पूँजी होता है। यही हाल मजदूरीका है। एक लाख मजदूरोका समझदारीके साथ किया गया संगठन पैसोकी पूँजीकी अपेक्षा भी अधिक काम दे सकता है। जो यह समझता है, वह पैसा-रूपी पूँजीसे द्वेष नही करेगा। वह उसका सदुपयोग करायेगा। अभी पूँजी-पूँजीमें द्वन्द्व हो रहा है। मजदूर और धनी दोनो ही पूँजीपति हैं। किन्तु वे लोग संगठन करते हैं, और आप लोग नही कर सकते। उन लोगोमे चतुराई तथा बुद्धि है। मजदूरोमे संगठन और स्वार्थ-त्याग बढेगा, तभी उनकी शक्ति भी बढेगी। आप अपनी शक्ति नही जानते, इसलिए आप दबाये जाते हैं। इससे मजदूरोका नुकसान होता है, संसारका भी नुकसान होता है।

मैं मजदूरोंका भला चाहता हूँ। किन्तु मेरी मान्यता है कि पूँजीपतियोंका अन्त करके मजदूरोके हाथ कुछ नही लग सकता।

पूँजीपतियोका अन्त हुआ, तो हमारा भी अन्त हो जायेगा। दोनोका समन्वय होना चाहिए। सोने-चाँदीकी ईंटे तो हमें भी चाहिए, केवल उनका सदुपयोग करना हमें आना चाहिए। पूँजीके सदुपयोग तथा दुरुपयोगके बीच यह विवाद है। पूँजीका सदुपयोग हम सीखें तो दोनोका कल्याण हो। अपनी यह मान्यता मै बदल सकूँ, ऐसी बात नही है, क्योकि यह मान्यता पचास वर्षोंके अनुभवपर आधारित है। इसके बाद आपको जो उचित और अपने हितमें लगे, वह आप कर सकते हैं।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, १५-७-१९३४

१४०. भाषण : ज्योति संघ[1] के सदस्योंके समक्ष, अहमदाबादमें

२९ जून, १९३४

संघकी छोटी लड़कियाँ क्या करें, इस प्रश्नके जवाबमें गांधीजी ने सलाह दी कि गुजरात कॉटन मिलके मजदूरोंकी चालमें जाकर उन्हें यह देखना चाहिए कि गरीब मजदूर वहाँ किस तरहका जीवन बिता रहे हैं। उन्हें हरिजनोंकी दशासे परिचित होना चाहिए और कमसे-कम जबतक हरिजनोंको पेट भर खाना और अच्छे कपड़े प्राप्त न होने लगें, तबतकके लिए लड़कियाँ मिठाइयों और टीमटामकी वस्तुओंका त्याग कर दें। इन छोटी-छोटी बालिकाओंको उस काली अँधेरी दुनियामें मशालें बन कर जाना होगा।

गांधीजी ने कहा कि मैं ज्योति संघकी बहनोंको सुझाव दूँगा कि उन्हें केवल खादी पहननी चाहिए। सच्चा स्वदेशी वस्त्र केवल खादी ही है। लाखों मनुष्योंके हाथकी बनी चीजोंका ही व्यवहार करना चाहिए, न कि आधे दर्जन करोड़पतियोंके कारखानोंमें बनी चीजोंका। उन्हें चरखा भी चलाना चाहिए। नित्य अगर हमारी लाखों लड़कियाँ नित्य सिर्फ आध घंटा ही सूत काता करें तो वे राष्ट्रकी सम्पत्तिको काफी बढ़ा सकती हैं। इसमें दूसरोंकी बाट नहीं जोहनी चाहिए कि जब वे कातने लगेंगी तब हम कातेंगी। नहीं, वे स्वयं ही इसे आरम्भ कर दें, इस विश्वासके साथ कि बादमें हजारों-लाखों बहनें सूत कातने लगेंगी।

हरिजन-समाजके निम्नतम वर्गके लोग हैं, या यों कहें कि वे समाजकी नींव हैं। और यदि उनकी उपेक्षा की जाती है तो समाज ताशके पत्तोंसे बने घरकी तरह ढह जायेगा। लेकिन यदि नींवकी सही सार-सम्हाल की गई तो उसके ऊपर की इमारतके बारेमें चिन्ता नहीं करनी पड़ेगी।

गांधीजी ने कहा, "यह देखकर मुझे बड़ी खुशी हुई कि इस संघको मुख्यतया महिलाएँ ही चला रही हैं। यह उनकी इस इच्छाका प्रमाण है कि वे स्त्रियोंके लिए निम्न या दासताकी स्थिति स्वीकार नहीं करना चाहती। मैं आशा करता हूँ कि आप लोगोंका यह इरादा न होगा कि पश्चिमी देशोंकी तरह भारतकी स्त्रियाँ भी पुरुषोंसे बिलकुल ही स्वतन्त्र होकर रहें। यह चीज भारतीय संस्कृतिके अनुकूल नहीं है। यदि यह चीज हमारे भारतमें लाई गई, तो निश्चय ही इससे बेहिसाब हानि पहुँचेगी।

१. स्त्रियोंकी मृदुला साराभाई द्वारा स्थापित संस्था। इसे मुख्यतया महिलाएँ ही चलाती थीं। सार्वजनिक सेवामें स्त्रियाँ रस लें और अपनी आजीविका किसी उद्योग-धन्धेको सीख कर चला सकें, इसी उद्देश्यको सामने रखकर ज्योति संघकी स्थापना हुई थी। यह 'साप्ताहिक पत्र' से लिया गया है।

समाजमें पुरुष और स्त्री दोनों ही एक-दूसरेके अर्धांग हैं। स्त्री शारीरिक बलमें पुरुष की बराबरी नहीं कर सकती, पर आध्यात्मिक बल उसमें पुरुषसे अधिक है। पुरुष भले ही अपने पाशविक बलपर गर्व किया करे, पर स्त्री अपनी शारीरिक निर्बलता की चिन्तामें न पड़े। स्वस्थ सुदृढ़ शरीर और महान आत्माका संयोग नहीं मिलता। इतनी ही बात है न कि स्त्रियाँ शरीरसे कमजोर होंगी तो वे आधी रातको बाहर कहीं अकेली न निकल सकेंगी? अगर सीताके समान उनके अन्दर सतीत्वकी ज्वाला जल रही होगी, तो वे निर्भय होकर चाहे जहाँ अकेली जा सकती हैं। अगर आप लोगोंको मेरी यह बात जँच गई है, तो शरीरको शक्तिशाली बनानेकी अपेक्षा आप आत्माको अधिक बलवान बनानेका प्रयत्न करें। कटार या तमंचा चलानेका अभ्यास करनेकी अपेक्षा आप साहस और आत्मबल बढ़ानेका प्रयत्न करें। तमंचा और कटार तो शत्रुके हाथों छिन सकते हैं। इस पृथ्वी पर किसीमें भी किसीको दबानेकी ताकत नहीं है। मनुष्य स्वयं ही अपना मित्र है और स्वयं ही अपना शत्रु। मेरे इस कथन का यह मतलब नहीं कि आप व्यायाम न करें। व्यायाम अवश्य करें; मेरा तात्पर्य तो यह है कि बिना चरित्रबलके व्यायामसे उपार्जित बल व्यर्थ है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १३-७-१९३४

१४१. भाषण : सार्वजनिक सभा, अहमदाबादमें

२९ जून, १९३४

आप लोग लगभग ३२ हजार रुपया हरिजन-सेवाके लिए अहमदाबादसे इकट्ठा कर पाये; और आपने उसमेंसे २५ हजारकी हुंडी दी है। गुजरातके दूसरे भागोंसे पैसा मिल गया है, जिसका हिसाब मैंने सुना। बलुभाईकी शालासे १,२८९ पैसे मिले हैं, यह भी सुना। इस पैसेकी विशेषता यह है कि एक छात्राने पूर्ण स्वतन्त्रता व्यक्त करते हुए कहा, "मैं एक पाई भी नही दूंगी।" इस बहनकी निन्दा अथवा आलोचना किसीने नही की है। मेरी इच्छा है कि इस बहनको धन्यवाद भेजूं। इस थैलीमें मुझे एक भी पैसा ऐसे लोगोसे नही चाहिए जो अस्पृश्यताको पाप समझकर उसके निवारणकी इच्छा न रखते हो। अस्पृश्यता-निवारणका अर्थ है सवर्ण हिन्दूका हृदय-परिवर्तन। यदि हम यह परिवर्तन यही बैठे-बैठे केवल भगवानकी प्रार्थना करनेसे करा सके, तो एक भी पैसेकी जरूरत न पड़े। जरूरतपर पैसा घर बैठे आकर मिलना चाहिए, ऐसा प्रकृतिका अथवा ईश्वरका विधान है। इसके लिए इतना सारा प्रयत्न करना पड़ता है, और मुझ-जैसेको बुढ़ापेमें एक जगहसे दूसरी जगह घूमना पड़ता है, इसका अर्थ यह है कि मेरी प्रार्थना करनेकी शक्ति ओछी है। मेरी प्रार्थना करनेकी शक्ति, अर्थात् आत्मशुद्धि इतनी (पर्याप्त) होती, तो घर बैठे सवर्ण हिन्दूका हृदय-

परिवर्तन कराया जा सकता। किन्तु वह पूर्णताकी स्थिति है। हम मनुष्य सब अपूर्ण ठहरे, इसलिए हमें अपनी शक्तिके अनुसार प्रयत्न करना पड़ता है। इस प्रयत्नमें ही पूर्णतातक पहुँचनेकी सम्भावना निहित है। इस स्थितितक पहुँचनेके लिए उत्सुक होकर भी हम इसे प्राप्त नही कर सकते, इसीसे घूम-फिरकर, भाषण देकर, आपकी धर्मदृष्टिको जाग्रत करके, जो प्रभाव आप लोगोके हृदयपर पड़ सके, वह प्रभाव डालने का प्रयत्न करना ही मेरे हाथमें है। इस प्रभावके अन्तर्गत या प्रायश्चित्तके रूपमें जो पैसा दिया गया होगा, वही पैसा फल-फूल सकता है। सवर्ण हिन्दुओने मेरी राजनीतिक सेवाओका खयाल करके अथवा माँगनेवालेकी शर्ममें पड़कर यदि पैसा दिया हो, तो वह निरर्थक है। इस प्रकार दिये गये लाख रुपये भी फलितार्थ नही हो सकेंगे। इसीलिए उस बालिकाने पैसे नही दिए, तो मैंने उसे धन्यवाद भेजा। इसीलिए जिन्होने पैसे नही भेजे, उन्हें धन्यवाद। हृदयमें अस्पृश्यताको सँजोये रखकर भी जो पैसा देंगे, वे मुझे धोखा देगे। पैसा देनेवालेसे मैं तदनुकूल कामकी आशा रखता हूँ। किन्तु यदि वह सहयोग न मिले तो कितने दुःखकी बात होगी?

यह बात मुझे किसानोके लिए उगाहे जा रहे कोषकी ओर ले आती है। यह प्रश्न जब मेरे सामने आया, तब मैंने कहला भेजा कि गुजरात तो मुझे आना ही चाहिए, और आऊँ तो हरिजन-कोषका काम भी आरम्भ करना जरूरी होगा। जो प्रायश्चित्तके रूपमें देंगे, उन्हीसे इस कोषके लिए पैसा लिया जायेगा। प्रायश्चित्त करनेवालोके समक्ष यदि दूसरे कर्त्तव्य आ पड़ें, तो उनका निर्वाह तो वे करेंगे ही। किसानोके लिए तत्काल पैसा चाहिए, यह दायित्व सदा नही बना रहेगा। यह आपत्धर्म है। तात्कालिक धर्म है। इसमें जितना दिया जा सके उतना देकर, तब हरिजन-कोषके लिए दो। उतनेसे मेरा पेट भर जायेगा। इस तरह इकट्ठा हुए पैसोके रुपये बनाये जायें, तो सरलतासे बन जायेंगे। ऐसा कोष इस ३२ हजार रुपयेसे भी अधिक मूल्यवान सिद्ध हो सकता है। प्रायश्चित्तके रूपमे दिया गया हो, तो करोड़ रुपया भी सार्थक है और करोड़ पाइयाँ भी। अन्य किसी रूपमें दिया गया हो, तो एक अरब-रुपया भी किसी कामका नही।

क्या अहमदाबादसे मैं शिकायत न करूँ? अहमदाबादमें मैं आकर बस गया हूँ। अहमदाबादके नागरिकोसे मैंने प्रेमके घूँट पाये है। इसलिए आप जो करेंगे, वह मुझे तो कम ही लगेगा। अहमदाबादके मिल-मालिक यदि निश्चय कर ले कि गुजरातमें जो काम सामने आयेगा उसके लिए हमने जिम्मा ले रखा है; उचित काम अथवा संस्थाके लिए कोई माँगने आये, तो उसे हम उदार भावसे देंगे ही, तो कितना अच्छा हो? यह पैसा वे काहेमें से देंगे? उन्होने जो कमाया है, उसीमें से एक भाग देना है। यदि वे ऐसा निश्चय कर ले, तो हमे कभी अड़चन न हो। अनेक कोष शुरू होते है, उन सबके लिए कहाँसे दें — ये शब्द धनिकोंके मुँहसे निकलना ही नही चाहिए। वह शुभ दिन आये, तब बात बने। इस थैलीमें मिल-मालिकोने कितना दिया है, मुझे नही मालूम। मुझे मिल-मालिकोंकी निन्दा नही करनी। वे देते है, किन्तु मेरी इच्छा उनके पाससे अधिक निकलवानेकी है। बम्बई आज उतनी उन्नति

पर नही है, किन्तु फिर भी वह अपने यशको उज्वल बनाये हुए है। जिसे और कही से पैसा नही मिलता, उसे बम्बईसे मिलता है। इसके लिए मुख्य कारण तो पारसी कौम है। अहमदाबाद अपनी ऐसी साख क्यो नही बनाता? सत्पात्रके लिए उसकी थैली क्यो नही खुलती? यह पैसा भगवान देते है, यह मैं मिल-मालिको और धनिकोको याद दिलाना चाहता हूँ।

कल दो-तीन बातें हरिजनवासमें जाकर मैं देख आया हूँ, जिन्हे कहे बिना काम नही चलेगा। वहाँ मैंने क्या देखा? एक ओर अहमदाबादके प्रयत्नके फल-स्वरूप 'प्रीतमपाड़ा'-जैसी चाल देखी, और दूसरी ओर गन्दी बस्तियाँ देखी, जो बम्बई और पूनाकी गन्दी बस्तियोको भी मात कर दे। अहमदाबादमें इतना काम होता है, फिर भी यह परिस्थिति बनी रहे, यह कैसी बात है। अहमदाबाद तो सरदारका अहमदाबाद है। सरदारके अहमदाबादमें यह सब कैसे निभ सकता है? यह मिल-मालिकोके अधिकारकी बात है। मजदूरोकी जो चाल मैंने देखी, उसमे मनुष्य टिक ही नही सकता। फिर भी मजदूर उसमे कैसे रहते है? वे मनुष्योकी तरह नही रहते, जानवरोकी तरह रहते है। और वह भी अपना स्वास्थ्य खोकर। जो अपना स्वास्थ्य खोकर जीता है, वह मनुष्यकी तरह नही जीता। जो मनुष्यकी तरह जीता है, वह अपने मन और आत्माका विकास करता है। ये हरिजन यह विकास नही करते। मिल-मालिकोसे, म्यूनिसिपैलिटीसे, तथा नागरिकोसे मेरी प्रार्थना है कि इस स्थितिको वे एक क्षण भी बर्दाश्त न करे। आप कहेगे कि यह कहना सरल है, किन्तु करना कठिन है। आधुनिक इतिहासके पन्नोसे यह दिखाया जा सकता है कि मनुष्यके प्रयत्नसे क्या नही हो सकता। सब उदाहरण मैं नही दे सकता, किन्तु एक तो देना ही चाहिए। दक्षिण आफ्रिकाके जोहानेसबर्ग शहरमे जिस बस्तीमे हमारे लोग रहते थे, वहाँ प्लेग फैल गया। फौरन बस्तीमे ताले डाल दिये गये, पुलिसका पहरा हो गया, लोगोको तेरह मील दूर ले जाया गया। वहाँ सुन्दर जमीन पर दो-एक दिनमें तम्बुओका गाँव बनाया, और उसमे उन लोगोको बसा दिया। उस बस्तीकी स्थिति इस चालसे अच्छी थी। फिर भी मैंने उसका वर्णन करते हुए उसे बीमारीका घर या नरक नाम दिया था। यदि वह बीमारीका घर नरक था तो कल जो मैंने देखा, वह महानरक है। उस बस्तीसे वे लोगोको तेरह मील दूर ले गये, वहाँ दूकानें खोली, और सुविधाएँ भी प्रदान की तथा पुरानी बस्तीकी सब चीजें जलाकर उसे नेस्तनाबूद कर दिया। जिनकी चीजे जलाईं, उन्हे हर्जाना दिया गया। हर्जाना जो दिया गया, वह कम था, यह भी मेरी एक शिकायत थी। आप ऐसा न कहे, कि जोहानेसबर्ग तो सोनेकी खदान है। कहाँ जोहानेसबर्ग और कहाँ अहमदाबाद? अहमदाबादमें इतनी मिले है। जिस चालकी बात मैं कर रहा हूँ, वह मिलकी ही है। उसमें खर्च किये गये रुपयोका फल मिलेगा। हमारा निश्चय होना चाहिए कि जिन हरिजनोकी मेहनतके बलपर हम लोग अच्छे मकानोमें, महलोमे भोग-विलासके साथ स्वच्छतासे रह सकते है, उनके लिए झोपडी नही कमसे-कम ऐसा घर हो जिसमे हवा हो, उजाला हो। इतना तो हम करें ही। इतने नागरिक यदि ऐसा

निश्चय करें, तो यह काम एक हफ्तेमें हो जाये। कैसे होगा, यह मैंने बताया। यहाँ इतने सारे स्वयंसेवक है, सेविकाएँ है। डॉक्टर हरिप्रसाद जैसे डॉक्टर अहमदावादके सुधारके लिए जूझते रहे है। वे इस समय ऊटकमंडमें है, वहाँ भी वे यही सब विचार कर रहे है। यह बलुभाईने आपको बताया। मुझे भी उन्होंने लिखा है, "मै इस समय वहाँ नही हूँ, इसका मुझे दु:ख होता है। फिर भी इतना काम तो मैं करूँगा।" अब वे सेनिटरी कमेटीके अध्यक्ष हो गये है, इसलिए उनसे काम लेनेका मुझे अधिकार है। इतने सब अनुकूल संयोग होते हुए भी यदि हम हरिजनोको अच्छी स्थितिमे न रख सके, तो यह अहमदावादके माथे बड़ा कलंक होगा। पहले १९१५ में मिस्टर यूबेंकके साथ मै यह चाल देखने गया था। उस समयकी अपेक्षा अब बहुत सुधार हो गया है। किन्तु यह सुधार समुद्रमें बूँदके समान है। अहमदावादमें एक भी व्यक्ति ऐसा नही होना चाहिए जो अस्वास्थ्यकर स्थितिमे रहकर अपना स्वास्थ्य खोये। समाजके दलिततम वर्गतक यदि हम पहुँच गये, तो दूसरोंतक भी पहुँच ही जायेंगे।

यहाँ धुरन्धर माने जानेवाले अनेक सनातनी है। सनातनियोमें कोई ऐसा नही होगा जो यह कहे कि यह काम करनेमें उसे संकोच होता है। जो सनातनी अस्पृश्यताको पाप नही मानते, उनसे मैं इस थैलीमें पैसे नही माँगता। किन्तु हरिजनोके घरोंके लिए भी उनसे पैसे नहीं लूँगा, यह बात नही है। पारसी, मुसलमान, ईसाइयोंसे लेता हूँ, तो उनसे क्यों न लूँ? जो प्रायश्चित्तके रूपमें नही देना चाहते, उन हिन्दुओसे इस थैलीके लिए कुछ नही लूँगा, किन्तु हरिजनोंकी चाले तो बनवा दो। शास्त्र ऐसा नहीं कहता कि हरिजनोंको हम जानवरोके समान रखें। आज हम जिस अस्पृश्यताका पालन कर रहे हैं, उसके लिए शास्त्रमें प्रमाण नहीं है। एक प्रकारकी अस्पृश्यताको तो सारा संसार मानता है। गन्दे आदमीको हम नहीं छूते। लेकिन हमने तो ६ करोड़ लोगोंको गुलाम बना रखा है। उन्हें जन्मसे अस्पृश्य मान लिया है। इसके लिए शास्त्रमें प्रमाण कहाँ है? हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, पारसी सबका यह समग्र धर्म है कि एक भी मनुष्य अहमदावादमें ऐसा न हो जिसे लाचार होकर अस्वास्थ्यकर स्थितिमें रहना पड़े। मैंने जो जगहें देखी हैं, उन्हें आप भी जाकर देख आइए। वहाँ आपको नाक बन्द करनी पड़ेगी। वहाँ आपको प्रत्यक्ष प्रमाण मिल जायेगा कि हरिजन कैसी दयनीय स्थितिमें रहते हैं। यह सब हमसे कैसे बर्दाश्त होता है, समझमें नहीं आता। इस बातके पीछे आप लट्ठ लेकर पिल जाइए और तत्काल इसे समाप्त कर डालिए।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १५-७-१९३४

१४२. पत्र: एस्थर मेननको

३० जून, १९३४

मेरी प्यारी बच्ची,

यद्यपि मैं भोर दो बजे अक्सर उठ जाता हूँ, पर पत्र-व्यवहारके काममे नही जुटता। तुम्हारे जन्म-दिनपर अपना प्यार-भरा एक पत्र भेजनेके लिए मुझे थोडा-सा समय मिल गया है। मैं जानता हूँ, मुझे बच्चोंको पेटी-चरखा भेजना है। उन्हे मेरा प्यार और चुम्बन कहना। मीरा एकाएक भावनामे आकर चली गई।

सस्नेह।

बापू

श्री एस्थर् मेनन
वौर्न ऐंड
कोदाईकनाल (दक्षिण भारत)

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (नं० १२९) से; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार। माई डियर चाइल्ड, पृ० १०६ से भी।

१४३. भाषण: कांग्रेस-समाजवादियोंकी सभा,[1] अहमदाबादमें

३० जून, १९३४

गांधीजी से पूछा गया कि समाजवादी दलके कार्यक्रमका विरोध करते हुए भी आपने कांग्रेसके अन्दर उसके गठनका स्वागत क्यो किया। गांधीजी ने बताया कि जाँच-पड़तालसे मुझे कार्यक्रममें कुछ अंश ऐसे दिखे जिनमें परिवर्तनकी जरूरत थी।

वर्ग-संघर्षके बारेमें सवाल किये जानेपर उन्होने इस बातपर अपनी सहमति प्रकट की कि आज समाजमें वर्ग-संघर्ष तो चल ही रहा है। किन्तु यदि वर्ग-संघर्ष में हिंसा भी आती हो, तो निश्चय ही यह कांग्रेस-सिद्धान्तके प्रतिकूल है।

समाजवादियोंने अपने ऊपर लगाये गये आरोपोंका खण्डन करते हुए कहा कि जो भी हो, हमने अहिंसाको एक राजनीतिक आवश्यकता मानकर स्वीकार किया है।

१. हरिजन आश्रम, साबरमतीमें।

गांधीजी ने कहा कि मैं ऐसे वर्ग-संघर्षका विरोधी नहीं हूँ जिसका दृष्टिकोण अहिंसावादी है। उन्होंने कहा कि मैं ऐसे संघर्षमें भाग ले रहे कांग्रेसियोंका साथ दूँगा।

जहाँतक सर्वविदित गांधी-जवाहर पत्राचार[1] का सवाल है, हममें परस्पर भारी मतभेद है। निहित-स्वार्थोको समाप्त करनेके विचारसे मेरी कुछ हदतक सहमतिका यह अर्थ नहीं है कि मैं सम्पत्तिको जब्त कर लेनेके पक्षमें हूँ।

कार्यकारिणी समितिके हालके बम्बई-प्रस्तावके बारेमें गांधीजी ने कहा कि यह उन समाजवादियोंपर लागू नहीं होता जो नेकनीयत और अहिंसावादी हैं, बल्कि उनपर लागू होता है जो वर्तमान पूँजीवादी व्यवस्था और सम्पत्तिको हिंसाके द्वारा खत्म करनेकी बात करते हैं।

गांधीजी ने यह स्वीकार किया कि राज्यको बुद्धिमत्ताके साथ और उचित ढंगसे सम्पत्तिके उपयोगपर नियन्त्रण रखना चाहिए। उन्होंने कहा कि ऐसे राज्यकी कल्पना की जा सकती है जिसमें इस तरहकी मुनाफाखोरी और विषमताके लिए कोई जगह न हो। उनका काम जनताको शिक्षित करना और उसे एक सूत्रमें बाँधना है। अगर इससे जनतामें अपने कर्त्तव्यों, अधिकारों तथा सुविधाओंके बारेमें जागृति होती है, अगर इससे जनवर्ग संगठित होता है और जिस समाजवादको मैं लाना चाहता हूँ, उसे लानेके लिए वह राज्यकी जिम्मेदारी लेता है तो उसका पक्ष लेनेमें मुझे बिलकुल संकोच नहीं होगा। इस तरहकी निष्पत्तिका मैं स्वागत करूँगा।

गांधीजी ने सच्चे लोकतन्त्रमें, जो क्रियाशील बालिग-मताधिकार द्वारा निर्मित हो, अपनी निष्ठा व्यक्त की।

कांग्रेस-समाजवादी यदि शक्ति समेटकर कांग्रेसकी बागडोर अपने हाथमें ले लें तो मुझे निश्चय ही बड़ी खुशी होगी।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १-७-१९३४

१. देखिए खण्ड ५५, पृ० ४४६-५० और परिशिष्ट १४।

१४४. पत्र : एस० डी० सकलातवालाको

भावनगर
१ जुलाई, १९३४

प्रिय श्री सकलातवाला,

गत १९ तारीखके तुम्हारे तत्काल पत्रोत्तरके लिए धन्यवाद। निरन्तर कार्यभारके कारण पत्रकी पहुँच स्वीकार करनेमें देर हुई है। जिन परिस्थितियोका उल्लेख तुमने किया है, उनमें मैं फिलहाल और अधिक सूचनाके लिए तुम्हे कष्ट नही दूंगा।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

श्री एस० डी० सकलातवाला
मैसर्स टाटा एण्ड सन्स
बॉम्बे हाउस
बम्बई फोर्ट

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

१४५. बातचीत : काठियावाड़ी युवकोंसे[1]

भावनगर
१ जुलाई, १९३४

गांधीजी से जब यह प्रश्न किया गया कि आप हरिजन-आश्रममें क्यों नहीं ठहरे हैं, तो उन्होंने जवाब दिया कि मैं फिलहाल सवर्ण हिन्दुओंका हृदय-परिवर्तन करनेके लिए प्रवास कर रहा हूँ, इसलिए मेरा यह कर्त्तव्य हो जाता है कि मैं न केवल उनका निमन्त्रण स्वीकार करूँ, बल्कि कोशिश भी करूँ कि वे मुझे अपने यहाँ टिकायें।

एक युवकने गांधीजी से पूछा कि अपने हरिजन-यात्रामें आप इतना बड़ा दल लेकर चल रहे हैं यह कहाँ तक उचित है? गांधीजी तो एक-एक पाईका हिसाब रखनेवाले ठहरे और रुपयोंका तो और भी ज्यादा ध्यानपूर्वक रखते हैं। जब वे

१. यह और अगला शीर्षक "साप्ताहिक चिट्ठी"से लिये गये हैं।

चिट्ठियाँ पढ़कर रद्दीकी टोकरीमें डालने लगते हैं, तब उनकी आलपिनें बड़े ध्यानसे निकाल लेते हैं और उनमें जो कोरा कागज रहता है, उसे भी बड़ी सावधानीसे रख लेते हैं। फिर जब बड़ी-बड़ी रकमोंको खर्च करनेका सवाल दरपेश हो, तब तो वे और भी बारीकीसे काम लेते हैं। उन्होंने इस प्रश्नका जवाब देते हुए कहा कि कुछ लोग तो अपने खर्चेसे मेरे साथ यात्रा कर रहे हैं, और बाकी लोगोंका यात्रा-व्यय मेरे एक मित्र दे रहे हैं। हरिजन-कोषसे यह पैसा खर्च नहीं हो रहा है। मैं जन्मजात शिक्षक हूँ, इसलिए मेरे कुछ मित्र जनसेवाका कार्य सीखनेके लिए मेरे साथ रहते हैं। कुछ मेरे निजी काममें मदद देनेके लिए मेरे साथ हैं तो कुछ ऐसे भी हैं जिन्हें आप चाहें तो 'अजागल-स्तन' कह सकते हैं। लेकिन मैं तो उनसे भी काम निकालनेका प्रयत्न कर रहा हूँ। मैं एक काठियावाड़ी बनिया ठहरा, इससे यह देखते रहना तो मेरा काम ही है कि एक पाई भी बेकार तो खर्च नहीं हो रही है।

इस प्रश्नका उत्तर देते हुए कि क्या उनकी दशा एक परास्त सेनापति-जैसी नहीं है, गांधीजीने कहा कि मैं तो जानता ही नहीं कि परास्त होना क्या चीज है।

एक और सवाल यह किया गया कि क्या आप बेगार प्रथाके विरुद्ध हैं, और यदि हैं तो उसे नेस्तनाबूद करनेके लिए क्या करना चाहिए? गांधीजी ने कहा कि मेरा तो सारा जीवन ही बेगारके खिलाफ लड़नेमें बीता है — पहले अपने ही कुटुम्बमें इसके विरुद्ध लड़ा, फिर दक्षिण आफ्रिकामें और उसके बाद अपनी मातृभूमिमें। अगर गरीबोंसे बेगार ली जाये तो जनसेवकोंको चाहिए कि वे खुद-ही बेगारको अपने ऊपर ले लें।

एक और प्रश्न परिवार-नियोजनके उन कृत्रिम उपायोंके बारेमें किया गया जो भारतमें चल पड़े हैं। गांधीजी ने कहा कि देशका स्वास्थ्य वैसे ही अर्धनष्ट है और यदि ऐसे गलत उपाय अपनाये गये तो पूरी तरह नष्ट हो जायेगा।

अगर धर्मका खात्मा कर दिया जाये तो क्या इससे हमारी कुछ हानि होगी, एक नवयुवकने पूछा। गांधीजी ने इसके उत्तरमें कहा, धर्मकी ही नींवपर तो दुनिया की यह गढ़ी खड़ी हुई है। नींव ही अगर खोदकर फेंक दी जाये तो उस इमारतके जमींदोज होनेमें सन्देह ही क्या है?

अन्तिम प्रश्न यह था कि क्या देशी रियासतोंको समाप्त नहीं कर देना चाहिए। गांधीजी ने कहा, एक सत्याग्रहीकी हैसियतसे मैं उन्हें नष्ट नहीं करना चाहता, मैं तो इन रियासतोंको लोक-सेवाके साधन बना देनेके पक्षमें हूँ। देशी रियासतोंमें स्वतःकोई ऐसी अन्दरूनी बुराई नहीं है।[1]

१. इससे आगेका अंश बॉम्बे क्रॉनिकलसे लिया गया है।

अन्य प्रश्नोंका उत्तर देते हुए गांधीजी ने कहा कि मैंने ऐसी संस्थाएँ खोली हैं जहाँ युवक काम कर सकते हैं। यदि वे अपनेको मरने दें तो उसमें मेरा दोष नहीं है। काठियावाड़ी युवक केवल बात करना चाहते हैं, ठोस काम नहीं करना चाहते। यदि वे मेरे खादी और अस्पृश्यता सम्बन्धी कार्यक्रमसे सन्तुष्ट नहीं हैं तो वे कोई नया कार्यक्रम और नई संस्थाएँ शुरू कर सकते हैं।

मैं एक अहिंसात्मक युद्ध लड़ना चाहता हूँ। यदि आपकी इसमें दिलचस्पी है, तो मेरे साथ काम कीजिए या फिर स्वयं अपने लिए नया कार्यक्रम खोजिए।

अन्य प्रश्नोंका उत्तर देते हुए गांधीजी ने कहा कि मैं ऐसा कभी नहीं मानता कि मैं अपने संघर्षमें परास्त हो गया। क्या आपने कभी परास्त व्यक्तिका इस तरह स्वागत होते और वृद्धावस्थामें उसे इतने उत्साहसे हरिजन-कार्यके लिए यात्रा करते देखा-सुना है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २०-७-१९३४; बॉम्बे क्रॉनिकल, ३-७-१९३४ भी

१४६. भाषण : भावनगरकी हरिजन-सभामें

१ जुलाई, १९३४

दोपहर बाद गांधीजी ने वाँकरवास देखा। वाँकरवास रुवापाड़ीके निकट है। यह शहरसे दूर है इसलिए वाँकर लोग[1] पुलिस संरक्षणका समुचित लाभ नहीं उठा पाते तथा रोजीपर जानेमें और शहरसे सम्बन्धित कार्यके लिए आने-जानेमें इन्हें ऐसी असुविधाओंका सामना करना पड़ता है जो शोचनीय है। बहुत दिनोंसे इस बस्तीको ऐसे स्थानपर ले जानेकी बात सोची जा रही है जहाँ इन्हें अधिक सुविधाएँ मिल सकें। उम्मीद है कि यह मामला निपट जायेगा और जल्दी ही बस्ती यहाँसे किसी दूसरी जगह ले जाई जायेगी। वाँकर लोगोंको अपने निवासकी जमीनपर स्वामित्वका अधिकार मिलना चाहिए, इससे इन्हें बार-बार एक जगहसे दूसरी जगह न जाना पड़े। हरिजनोंके मकान अगर अच्छी बस्तीमें बनाये जायें तो ज्यों-ज्यों वे सवर्णोंके सन्निकट आते जायेंगे, वे सफाईके तौर-तरीके सीखते जायेंगे। लेकिन हरिजनोंका भी अपने प्रति एक कर्त्तव्य है। अगर वे शराब पीना और मुर्दार मांस खाना छोड़ दें तथा स्वयं अपनेको और अपने अड़ोस-पड़ोसको साफ-सुथरा रखें, तो दूसरी जातियोंसे उन्हें अलग रखनेवाली दीवारको तोड़नेमें सुधारकोंको मदद मिलेगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २०-७-१९३४

१. बुनकर।

१४७. भाषण : भावनगरकी सार्वजनिक सभामें[1]

१ जुलाई, १९३४

आपने काठियावाड़की ओरसे हरिजन-सेवाके लिए जो थैली दी है, उसके लिए मैं धन्यवाद देता हूँ। हरिजन-सेवाके प्रति और काठियावाड़के प्रति आपके भीतर आत्मविश्वासकी इतनी कमी है कि आपने यहाँ से २५,००० रुपये देनेका जो संकल्प किया था, आपके मनमें उसे पूरा कर सकनेका भी भरोसा नही था और आपने सोचा था कि अगर इतना इकट्ठा न हो सका तो आप कुछ लोग मिलकर तीन-चार हजार रुपया अपनी तरफसे डालकर उसकी पूर्ति कर देंगे। किन्तु जब तीस हजार रुपया इकट्ठा होनेकी बात कही गई तो आप लोग बहुत खुश हुए और आप लोगोंने तालियाँ बजाई। मुझे ऐसा नहीं लगा कि यह कोई बड़ी रकम हुई। जब काठियावाड़के विभिन्न शहरोंसे प्राप्त धनके आँकडे पढे जा रहे थे तब आप लोगोंको लगा होगा कि अरे, इन शहरोंसे इतना ही मिला! वांकानेरसे सिर्फ २०३ रुपये? और वह भी सब लोगोंसे कहाँ मिला है? यह तो दो-तीन व्यक्तियोंने ही दे दिया है। यही बात मोरवी के बारेमें है। यहाँ काठियावाड़मे इतने सारे पहली पंक्तिके राज्य है; दूसरे भी बहुत-से राज्य हैं। काठियावाडकी जनता कंगाल थोड़े ही है। वह साहसी भी है और देशमें जगह-जगह बसी हुई है। किन्तु लेनेवाले सकुचाते हुए जाते है तो देने-वालेको भी लगता है, किसलिए दें। खुश होकर पैसा दें, ऐसे लोग थोड़े ही मिलते हैं। कहाँ हरिजन-सेवाका जबर्दस्त काम और कहाँ तीस हजार रुपयोंकी रकम। पर यह सच है कि लाखों रुपये भी काठियावाड दे डालता, तो भी उससे अस्पृश्यता थोडे ही दूर हो जाती। इस राक्षसका नाश तो जब सवर्ण हिन्दुओका दिल पिघलेगा, तभी होगा। अस्पृश्यता तो रावणरूप है। पर जिसे यह रामरूप प्रतीत होती हो, वह इसकी पूजा करेगा ही। अस्पृश्यताका जो पुजारी हो और उसका हृदय पलटे, तभी इसका तत्क्षण नाश होगा। नाश तो इसका होना ही है। गैर-राजीसे हुआ, तो उस नाशका यश न तो हिन्दू-धर्मको मिलेगा, न हिन्दू-धर्मावलम्बियोको। जिस दिन हरिजनोंमें इतनी जागृति आ जायेगी कि वे अपनी मौजूदा स्थितिको सहन न कर सकेंगे, उस दिन अस्पृश्यता एक क्षण भी नही टिक सकती। पर ऐसी दशामें अस्पृश्यता-नाशका श्रेय हमें मिलनेका नहीं। इसीलिए हमें भगीरथ-प्रयत्न करना है। जो लोग इस सत्यानाशी चीजको रामरूप समझकर पूज रहे हैं, उन्हें अनुनय-विनय करके मनाना है कि यह अस्पृश्यता राम नहीं, रावण है। अगर हम इतना कर सकें तो हम अपने लक्ष्यकी ओर बढ़ेंगे।

१. यह "अस्पृश्यताकी मर्यादा" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

हर जगह मैं सनातनी भाइयोंसे मिलता हूँ, उन्हें अपनी बात समझानेका प्रयत्न करता हूँ। भावनगरमें भी सनातनी हैं। होने ही चाहिए। क्या कोई भी जगह ऐसी हो सकती है जहाँ सनातनी न हों। यहाँ सनातनी भाइयोंकी ओरसे एक पत्र निकला था। उसके कुछ लेख मेरे पास भी भेजे गये थे। इसलिए यहाँके सनातनी भाइयोंके बारेमें मुझे मालूम था। सनातनी भाइयोंसे मैं हमेशा ही यह कहता आया हूँ कि जो-कुछ मैं कहता हूँ, उसपर कुछ विचार तो करो। मैं इस विषयको आगे लूँगा। अभी मैं सुधारकोंके सामने सनातनियोंकी बात रखूँगा। अगर वे अपनेको रूढ़िपालन करनेवालोंसे श्रेष्ठ समझते हैं और मानते हैं कि हम उनसे पहले चेत गये हैं, तो वे उनका मन नहीं जीत पायेंगे। मैं यह इसलिए कहता हूँ कि सनातनियोंकी यह शिकायत मेरे पास आई है, कि 'हम तुम्हारे पास किसलिए आयें? आते हैं, तो सुधारकों के अखबार हमारी खिल्ली उड़ाते हैं। हम कहते कुछ हैं और वे छापते कुछ हैं। अगर नहीं आते हैं तो बदनामी करते हैं और कहते हैं कि सनातनियोंके पास कुछ कहनेको है ही नहीं। देखिए, इसीलिए तो वे नहीं आये। सभी अखबार तो ऐसा नहीं करते; पर हो सकता है कि कुछएक अखबार ऐसा करते हों। यह सही है कि कुछ अखबार इन सनातनी भाइयोंकी निन्दा करते हैं। मनुस्मृतिके दो-चार श्लोक सुनाकर ही यदि सुधारक यह कहें कि हमने सनातनियोंको हरा दिया तो विजय इस भाँति नहीं मिलने की। ज्यों-ज्यों इस विषयकी महत्ताका हमें ज्ञान होता जाता है, त्यों-त्यों हम लोगोंमें नम्रता आनी चाहिए। सनातनियोंके प्रति हमारा आदर-भाव भी बढ़ना चाहिए। आप कहेंगे, आदर-भाव किसलिए? उनमें अनेक तो पाखण्डी हैं और धर्मके नामपर वे पाखण्डका व्यापार करते रहते हैं। इस बातकी चर्चा मैं कर चुका हूँ। पाखण्ड तो संसारमें रहेगा ही। मैं नहीं मानता और सुधारक भी यह नहीं मानते कि सारे सनातनी पाखण्डी हैं। सनातनियोंमें कितने ही ऐसे हैं जो शुद्ध हृदयसे मानते हैं कि आज जो अस्पृश्यता बरती जा रही है वह बराबर ऐसी ही बनी रहनी चाहिए, नहीं तो समाजमें वर्णसंकरता पैदा हो जायेगी। सदियोंसे चली आई प्रथाको तुरन्त छोड़ देना कठिन है। वे लोग अस्पृश्यताको धर्म मानकर उसका पालन कर रहे हैं। इसलिए मैं सुधारकोंसे प्रार्थना करता हूँ कि वे सनातनियोंकी निन्दा न करें, उन्हें तर्कसे, विनय और मर्यादापूर्वक अपनी बात समझायें।

मैं सनातनियोंसे एक सीधी-सी बात यह कहता हूँ कि आधुनिक अस्पृश्यताके लिए हिन्दू-धर्मशास्त्रमें कहीं भी स्थान नहीं है। अस्पृश्यताका आज जो रूप हमारे बीच रूढ़ है, उसका तो किसी शास्त्रमें समर्थन नहीं मिलता। 'आजके रूपमें रूढ़' मेरे इस शब्द-समूहको बहुत-से सनातनी भाई भूल ही जाते हैं। धुरन्धर माने जानेवाले बड़े-बड़े शास्त्रियोंके साथ इस विषयपर चर्चा करते समय उन्होंने मुझसे अपना अभिप्राय स्पष्ट करनेको कहा, तो मैंने कहा कि एक प्रकारकी अस्पृश्यताके लिए तो सारे ही संसारमें स्थान है, वह तो सर्वत्र ही मानी जाती है और मानी जानी चाहिए। गन्दे आदमीको हम कब छूते हैं। जिसके मुँहसे शराबकी दुर्गन्ध आ रही हो उससे अलग ही रहते हैं, उसे कैसे छू सकते हैं? उसे छूने जायें तो उसके मुँहकी दुर्गन्ध

हमें चार हाथ दूर पटक देगी। ऐसी अस्पृश्यता तो माँ-बेटेके बीचमें भी होती है। पर यह आजकी अस्पृश्यता तो बीस ही नही, बल्कि सहस्र भुजाओंवाली राक्षसी है। इस अस्पृश्यताने पाँच-छः करोड मनुष्योको हमसे दूर फेंक दिया है। यह आजकी अस्पृश्यता आखिर क्या है, आप यदि यह पूछें और यहाँकी म्युनिसिपैलिटीके प्रमुख और पट्टणी साहब माफ करें तो मैं बताता हूँ, भावनगरमें जो यह भंगियोंकी बस्ती है, यही 'आजकी अस्पृश्यता' है। तीन बरस पहले इस बस्तीको मिटाकर हरिजनोंके लिए नये घर बनानेकी बात तय हुई थी। मगर वह हुआ नही। पट्टणी साहबने आज नगरपालिकासे इस बस्तीको मिटाकर नयी बस्ती बनानेको कहा है और ३०,००० रुपये भी इसके लिए दे दिये हैं। नगरपालिकाने यह बात स्वीकार की है। इसलिए अब मुझे उनकी आलोचना नही करनी चाहिए। 'आजकी अस्पृश्यता' का दर्शन करना हो, तो कल सबेरे ही आप उस बस्तीमे चले जाये। फिर यहाँके जुलाहोंकी बस्ती भी देखें। देखें, वे बेचारे किस तरह वहाँ गुजर कर रहे हैं। ये सब जन्मसे ही अस्पृश्य है और मरते दमतक अस्पृश्य ही रहेंगे। यहाँ कोई बुनकर पढना चाहे तो वह पढ सकता है, स्कूल-कालेजमें दाखिल हो सकता है। राज्य अथवा हरिजन-सेवक संघ उसे निःशुल्क शिक्षा दिला सकता है। फिर पढ-लिख चुकनेके बाद राज्यमें वह न्यायाधीशका पद भी पा सकता है। लेकिन फिर भी वह रहता अस्पृश्य ही हैं। हम उस बुनकर न्यायाधीशसे अपना न्याय तो करा सकते है, पर उसे छूकर हमें नहाना तो पड़ेगा ही। ऐसा अंधेर अस्पृश्यताके नामपर हम छः करोड़ मनुष्योके प्रति करते चले जा रहे हैं। आजकी अस्पृश्यताके आपको और भी दर्शन कराऊँ? अस्पृश्य कौन है, मनुस्मृतिमें इसका प्रमाण नहीं मिलता। तो फिर कहें कि सरकारकी जनगणनाके आँकडे ही मनुस्मृति है। आप तो यह निश्चय कर चुके है कि अस्पृश्य को तो जीवन-भर अस्पृश्य ही रहना है; उसमें रत्ती-भर भी फेरफार नहीं हो सकता। किन्तु जनगणना-रिपोर्टोंका कहना है कि फेरफार होता है। हर दस बरसमें जब जन-गणना होती है, तब कितनी ही अस्पृश्य जातियाँ उस गणना-रोगसे भर जाती है, और कितनी ही नयी पैदा हो जाती हैं। मगर हमने तो जिन्हें एक बार अस्पृश्य कह दिया सो कह दिया। यह है हमारी आजकी अस्पृश्यता!

यहाँ सभामें अनेक सनातनी भाई होंगे। वे बतायें कि इस अस्पृश्यताके समर्थनमें है कोई शास्त्रका प्रमाण? वे न जानते हों तो वे शास्त्रियोंसे जाकर पूछे और कोई प्रमाण दिखाये। यह मैं अभिमानके साथ नहीं कह रहा हूँ। मैंने शास्त्रोका थोडा-सा अध्ययन किया है। पर उनमें जो प्रमाण आये हैं, वे मुझे कुछ जँचे नही। मै कोई विद्वान नही हूँ, संस्कृतका ज्ञान मेरा बहुत ही अल्प है, मुझे अर्थ समझनेमें टीका और भाषान्तरकी सहायता लेनी पडती है। इस लिए मेरा यह दावा नही है कि मै शास्त्र-पारगामी हूँ। मैं शास्त्रार्थ नही कर सकता। जब-जब शास्त्रार्थ करनेका प्रस्ताव मेरे सामने आया, मैंने कह दिया कि मै तो एक साधारण आदमी हूँ, मै शास्त्रार्थ करना क्या जानूँ। मुझेतो अपनी बात आप लोगोंको समझानी-भर है। मैं तो सत्यका पुजारी होनेका दावा करता हूँ। सत्यका शोध करते-करते ही यह चोला छोड़ूँ, यही मेरी इच्छा है, और

यही प्रभुसे प्रार्थना है कि वह मुझ निर्बलको सत्य-शोधनका बल दे। ऐसा मनुष्य आपको आज यह सन्देश दे रहा है कि इस आजकी अस्पृश्यताके लिए आपके पास कोई शास्त्रीय प्रमाण नहीं है। इससे विरुद्ध यदि कोई मुझे बता सके और वह मुझे सत्य जँचे तो उसे मैं अवश्य स्वीकार कर लूँगा। यह मैं अनेक बार लिख चुका हूँ कि मैं शास्त्रका अर्थ कैसे करता हूँ। अध्यापक यदि विद्यार्थीकी, और ज्ञानी यदि जिज्ञासुकी सीमाएँ न जानता हो, तो उन दोनोंके बीच हृदयका सम्बन्ध नहीं बनता। इसीसे उन्हें मेरी सीमाएँ जान लेनी चाहिए।

सुधारकोंको सनातनियोंके प्रति कैसी शिष्टता और नम्रताके साथ पेश आना चाहिए, यह मैं बतला चुका हूँ। सनातनियोंसे भी कह दिया है कि जो कार्य आज मैं कर रहा हूँ, उसे अच्छी तरह समझ लें। मन्दिर-प्रवेशकी बातने भी एक हव्वेका रूप धारण कर लिया है। लेकिन मैंने एक भी मन्दिर बिना जनताकी मरजीके नहीं खोला है, और वह जनता कौन — मन्दिरमें जानेवाली। आर्यसमाजी, हरिजन या मन्दिरमें विश्वास न करनेवाले व्यक्तिका मत मन्दिर-प्रवेशके विषयमें कभी नहीं लिया गया। मन्दिरमें श्रद्धापूर्वक देव-दर्शनार्थ जानेवालोंके ही मत गिने गये हैं, और जब उनकी सम्मति मिल गई, तभी वह मन्दिर हरिजनोंके लिए खोला गया है। इसी रीतिसे मैंने अनेक मन्दिर खोले हैं। और, इस तरह मन्दिर खोलनेमें मैं कोई दोष नहीं देखता। मन्दिरमें जानेवाले दर्शनार्थियोंकी इच्छाके विरुद्ध, जहाँतक मेरी चलती है, कोई मन्दिर खुलता ही नहीं। और आज तो सुधारकोंमें मेरी चलती ही है। अब एसेम्बलीमें मन्दिर-प्रवेश-सम्बन्धी जो बिल पेश हुआ है, उसे भी यदि वहाँके हिन्दू सदस्य स्वीकार करनेको तैयार न हों, तो वह मेरे कामका नहीं है। मुझे जबरदस्ती यह बिल पास नहीं कराना है। मैं अपनेको सनातनी हिन्दू मानता हूँ। मुझे इस मर्यादाके अन्दर रहकर ही बिलको पास कराना है। इस बिलके सम्बन्धमें इन सभाओं इत्यादिमें मैं कहीं भी मत-संग्रह नहीं करता, क्योंकि शास्त्र व कानूनकी बात पेचीदा है। इसे साधारण जनता समझ नहीं सकती। यह तो वकीलों और शास्त्रियोंका ही काम है। यह एक अटपटी-सी बात है। मैं मानता हूँ कि ऐसी अटपटी बातोंको सरल करके साधारण जनताको समझानेकी शक्ति मुझमें है। किन्तु मेरी वह शक्ति इस बिलके सम्बन्धमें लागू नहीं होती। इसीलिए मैंने इस बिलके गुण या दोषके सम्बन्धमें किसी जगह सभाओंमें लोगोंके मत नहीं लिये। किन्तु बिल आवश्यक है या नहीं, सो तो सामान्य मनुष्य कह ही सकता है। बम्बईमें सन् १९३२के सितम्बरमें हिन्दू-समाजके प्रतिनिधियों ने हिन्दू जनताके नामपर यह प्रतिज्ञा की थी कि अबसे हिन्दू-समाजमें अस्पृश्यता न मानी जायेगी। प्रतिज्ञामें यह भी कहा गया था कि कुएँ, धर्मशालाएँ और तमाम सार्वजनिक संस्थाओंमें प्रवेश करने और उन्हें काममें लानेका हरिजनोंको उतना ही अधिकार है जितना कि सवर्ण हिन्दुओंको है। यह बात भी उस प्रतिज्ञा-पत्रमें थी कि हरिजनोंको सार्वजनिक मन्दिरोंमें भी जानेका हक है, और जब हमारे हाथमें अपने देशकी सत्ता आ जायेगी, तब हम इसका कानून बना देंगे; और अगर आज कानून बनवा सकेंगे, तो बनवा देंगे। कानूनका उल्लेख उसमें आया है, क्योंकि मौजूदा

कानूनको बदले बिना प्रगतिका होना सम्भव नहीं। रास्तेमें जो पहाड़ अड़ा हुआ है, उसे तो दूर करना ही होगा। फिर भी इस बिलके सम्बन्धमें जो शंका है उसे मैं दूर कर देना चाहता हूँ। बिलके बारेमें मेरे ऊपर एक इलजाम लगाया गया है, और आप जानते हैं उस इलजामका लगानेवाला कौन है? लवाटे जैसा जन-सेवक और योगी। बरसोंसे लवाटेजी जनता-जनार्दनकी सेवा करते आ रहे हैं। हाँ, तो उन्होंने पूनाकी सार्वजनिक सभामें उस दिन कहा कि गांधी तो मुसलमानों और ईसाइयोंका मत लेकर बिल पास कराना चाहता है। इस बातपर मुझे हँसी आई कि लवाटे जैसा मनुष्य ऐसा क्यों मान रहा है। उनसे तो जो लोगोंने कहा था, वही उन्होंने मान लिया था। मैंने उनकी आँखें खोलते हुए कहा कि जैसा आप मानते हैं वैसी कोई बात नहीं है। बिलके बारेमें जो मर्यादा बाँध दी गई है, वह 'हरिजन'[1] में कई बार प्रकाशित हो चुकी है।

अन्तमें एक बात और। आपने कहा है कि हमने इतना काम किया है। पर यह कार्य तो पहाड़के आगे राई-जैसा है। इसमें गर्व करनेकी कोई बात नहीं है। आप अपने कामके लिए धन्यवाद चाहते हैं, तो मैं धन्यवाद देनेको तैयार हूँ, पर संकोचके साथ। आप लोगोंने यह भगीरथ-कार्य नहीं किया है। काठियावाड़ी-जैसे साहसी मनुष्य इस काममें ढिलाई क्यों दिखायें? हिम्मतवर काठियावाड़ी अस्पृश्यताका पालन तो नहीं करते। फिर भी वे इस कामके प्रति उदासीन-से क्यों हैं? आज मैंने एक स्त्रीको एक बैसाखीके सहारे चलते देखा और सबब पूछा तो उसने बताया कि उसके पाँवमें सड़न पैदा हो गई थी। उसे कटवाना जरूरी हो गया था। अगर पाँव न काटा जाता तो विष सारे शरीरमें फैल जाता और उसे जानसे हाथ धोना पड़ता। हिन्दू-समाजरूपी शरीरमें अस्पृश्यता एक सड़ा हुआ अंग है। उसे दूर करनेका इलाज न किया गया, तो समाजका शरीर ठूँठ हो जायेगा। ठूँठा समाज फिर कैसे चल सकता है, कैसे प्रगति कर सकता है? उस अवस्थामें तो उसका नाश हो गया समझो। धर्मका अंग-भंग करके क्या हम उसे चला सकते हैं? धर्मका तो प्रत्येक अंग उसका अविभाज्य अंग होता है। मेहराबमें से एक ईंट निकाल ली जाये, तो मेहराब ढह जाती है। इसी प्रकार धर्मके एक अंगका विच्छेद हो गया, एक ईंट निकाल ली गई, -तो धर्मकी सारी इमारत भर्राकर ढह गई समझिए। इस तरह वह टिकने की नहीं। दूसरी बातोंमें पड़कर हम इतने अन्धे हो गये हैं कि यह देखते ही नहीं कि हिन्दू-समाज कितना पिछड़ा पड़ा है। मेरे-जैसा आँखवाला तो हिन्दू-समाजकी यह हालत देख रहा है। इसका अर्थ कोई यह न समझे कि हिन्दू मुसलमानोंसे आगे बढ़ जायें, उनसे अधिक शक्तिशाली हो जायें। मैं हर्गिज यह नहीं चाहता। मैं सैकड़ों बार यह कह चुका हूँ कि हिन्दू अगर अपनी इतनी आत्म-शुद्धि कर लेंगे तो हमारी सारी मनोकामनाएँ पूरी हो जायेंगी, और हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, पारसी आदि सभी सम्प्रदायोंके बीच आज जो वैमनस्य मौजूद है

१. देखिए खण्ड ५७, पृष्ठ ३६३-६७

उसे भी हम दूर कर सकेंगे। यह कितनी सुन्दर बात है। यह पोषक है, नाशक नही। पर यह तभी हो सकता है जब हमारे हरिजन-सेवक शुद्ध चरित्रवान होंगे। उनका हृदय शुद्ध न होगा, वे नि:स्वार्थ न होंगे, तो वे धर्मकी सेवा कर ही नही सकते। यदि काठियावाडमें ऐसे सेवक तैयार हो जाये तो यहाँ जो अस्पृश्यताका बाघ या दानव फूल-फल रहा है, वह अवश्य नष्ट हो जायेगा।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, ८-७-१९३४

१४८. पत्र : न० चि० केलकरको[1]

२ जुलाई, १९३४

प्रिय श्री केल्कर,[2]

आपके पिछले २२ जूनके पत्रका जवाब देनेमें देर लगनेका कारण है, मेरे पास समयकी असाधारण कमी और अधिक काम।

आपके उठाये गये मुद्दोपर सीधी बात करने के बजाय मैं भारतीय रियासतोंके सम्बन्धमें अपनी नीतिकी व्याख्या करना चाहता हूँ।

रियासतोंके मामलोंमें हस्तक्षेप न करनेकी जो नीति कांग्रेसने अपनाई है, वह बुद्धिमत्तापूर्ण है और ठीक है।

ब्रिटिश कानूनके अधीन ये रियासतें स्वतन्त्र इकाइयाँ हैं। भारतका जो हिस्सा ब्रिटिश कहा जाता है, वह जिस प्रकार अफगानिस्तान या श्रीलंकाकी नीतिका स्वरूप निर्धारित नहीं कर सकता, उसी तरह उसे रियासतोंकी नीति निर्धारित करनेका भी अधिकार नहीं है।

अच्छा होता यदि बात अन्यथा होती; लेकिन मैं इस मामलेमें अपनी अक्षमता को स्वीकार करता हूँ। भारतका रियासतोंवाला हिस्सा निस्सन्देह भौगोलिक भारतका अविभाज्य अंग है, लेकिन उससे हमारी स्थिति जहाँकी-तहाँ बनी रहती है। भारतके पुर्तगाली और फ्रांसीसी हिस्से भी भौगोलिक भारतके अविभाज्य अंग हैं, लेकिन हम वहाँ के घटनाचक्रको कोई रूप देनेमें असमर्थ हैं। हम रियासतोंसे कांग्रेसके सदस्य बनाते हैं। हमें उनसे पर्याप्त सहायता मिलती है।

परिस्थितिको न समझ सकनेके कारण या इच्छाके अभावके कारण हम हस्तक्षेप नही करते, यह बात नही है। यह हमारी लाचारी है।

मेरा दृढ मत है कि कांग्रेसकी ओरसे हस्तक्षेपकी कोई कोशिश करनेसे रियासतोंके लोगोंके हितोंको नुकसान ही पहुँच सकता है।

१. श्री केल्करके २२ जून, १९३४के पत्रके उत्तरमें; देखिए परिशिष्ट १ ।

२. अखिल भारतीय देशी राज्य प्रजा परिषदके अध्यक्ष।

फिर भी रियासतोंसे किसी विशेष नीतिको अपनानेका आग्रह करलेसे हमें कोई रोक नही सकता।

मेरा तो ऐसा विचार है कि ब्रिटिश-भारतमें हम जो-कुछ भी हासिल कर सकते है, उसका रियासतोपर असर पड़ेगा ही।

मै चाहूँगा कि रियासतें अपनी जनताको स्वायत्तता प्रदान करें और मैं चाहूँगा कि राजालोग अपने-आपको उन लोगोंका न्यासी समझें जिनपर वे शासन करते हैं और वास्तवमें उनके न्यासी बनें। अपने लिए वे आयका एक निश्चित न्यूनतम भाग लेते रहे। मैं उनका पद समाप्त करना नही चाहता। मै व्यक्तियो तथा समाजोंके हृदय-परिवर्तनमें विश्वास करता हूँ।

मैंने गोलमेज-सम्मेलनमें जो-कुछ कहा, वह एक तरहसे राजाओंके प्रति अपील थी। निश्चय ही उसका यह अर्थ नही था कि वे अपीलपर ध्यान दें या न दें, कांग्रेस संघमें शामिल होगी ही। मेरे पास काग्रेसको किसी ऐसे बन्धनमें बाँधनेका कोई अधिकार नही था। काग्रेसका संघमे शामिल होना राजाओंके रुखके अलावा कई अन्य परिस्थितियोंपर भी निर्भर था। यदि कभी संघ बना तो वह निश्चय ही पारस्परिक सामंजस्यपर आधारित होगा।

आशा है कि मैंने आपके उठाये सभी मुद्दोंका जवाब दे दिया है। यदि ऐसा न हुआ हो, तो कृपया मुझे फिर लिखियेगा। मैंने यह पत्र कामके भारी दबावके बीच लिखा है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री न० चि० केलकर
'केसरी' आफिस
पूना सिटी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ३११८) से; सौजन्य: काशीनाथ न० केलकर।

१४९. पत्र : डी० वी० गोखलेको

२ जुलाई, १९३४

प्रिय श्री गोखले,

आपके पत्रके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। मुझे पूरी आशा है कि भोपटकर[1] के हल्के-बड़े घाव भर गये होंगे।

आपका,
मो० क० गांधी

श्री डी० वी० गोखले
५६८, नारायण पेठ
पूना-२.

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१०५) से। सी० डब्ल्यू० ९७१३ से भी।

१५०. पत्र : ए० एस० एम० मोफ़ाखेरको

वर्धा
२ जुलाई, १९३४

प्रिय मित्र,

अत्यधिक कार्यभारके कारण आपके गत १७ तारीखके पत्रका उत्तर मैं इससे पहले नहीं दे पाया।

संस्थाके नियम मैंने ध्यानपूर्वक पढ़े हैं। इस आन्दोलनकी सफलताके बारेमें मुझे भारी सन्देह है। आतंकवादियोंपर इनका कोई असर नहीं पड़ेगा, न उनपर ही जिनकी उनसे मूक सहानुभूति है। अहिंसाके सामान्य सिद्धान्त उन्हें बिलकुल प्रभावित नहीं करते। आतंकवादके कारण की खोज किये बिना और उसका सामना किये बिना हमें सफलताकी आशा नहीं करनी चाहिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री ए० एस० एम० मोफाखेर, बी० एल०
बी० ए० टी० बी० हेडक्वार्टर्स
२१ टाँटी बगान रोड
कलकत्ता

अंग्रेजीकी नकलसे . प्यारेलालके कागजात, सौजन्य . प्यारेलाल।

[1] लक्ष्मण बलवन्त भोपटकर, पूनाके एक वकील तथा नगरपालिकाके सदस्य, जिन्हें २५ जून, १९३४को पूनामें बम-विस्फोटमें चोट आ गई थी। देखिए पृष्ठ १०९-१०।

१५१. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

भावनगर
२ जुलाई, १९३४

भाई वल्लभभाई,

आपके पत्रमें पहले-पहल काट-छाँट देखी। यह आपसे जो लोग मिले उनके नामोंमे है।

आज तार आया है कि साबरमती जेलकी बहनें छूट गई हैं। इसलिए मणि भी छूट गई होगी। कुछ पुरुष भी वहाँसे छूटे हैं। कुछ बाकी भी हैं।

मुझपर हुए हमले के बारेमें क्या लिखूं? ऐसा कुछ किसी-न-किसी कारण तो होना ही था। ठीक है कि हरिजन-सेवाके कारण ही हुआ। जो तरीका किसी एक कामके लिए इस्तेमाल किया जा सकता है, वह किसी दूसरे अप्रत्याशित कामके लिए भी इस्तेमाल किया जा सकता है। ईश्वरेच्छाके बिना कही कुछ होता है?

यह पत्र भावनगरसे लिख रहा हूँ। यहाँका हाल तो आप जानते ही है। काम करनेवाले मिल-जुलकर काम नही कर सकते, यह बड़ी दिक्कत है। चन्दा तो काफी हो जायेगा। ३०,००० रुपये।

दुर्गा वगैरह कल मिलने आ रही हैं।

मैं नही समझता कि किसानोंको कोई नुकसान होगा। आप बिलकुल चिन्ता न करें।

समय बहुत कम मिलता है, इसलिए लम्बे पत्र नहीं लिखता। औरोंसे लिखनेको कह रखा है।

अमतुस्सलामके अर्शका ऑपरेशन होनेकी बात लिख चुका हूँ न? अब तो वह अस्पतालसे आ गई है। मेहरअली[1] अस्पतालमें है। आपकी तबीयत कैसी है?

रामदास बड़ा दु:ख भोग रहा है। उसे दवा वगैरहके लिए खूब रुपया चाहिए। इतनी रकमका दान भी कैसे लिया जाये? निर्दय होकर आज लिख दिया है कि हर महीने सौ से ज्यादा तो हरगिज नहीं लिया जा सकता; फिर चाहे मरे या जिये। केशु अभी राजकोटमें है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–२ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १०८–९

१. यूसुफ मेहरअली, बम्बईके एक समाजवादी नेता।

१५२. पत्र : वसुमती पण्डितको

२ जुलाई, १९३४

चि० वसुमती,

तेरा पत्र मिला। स्याहीके बारेमें पूछताछ करूँगा। अभी मिली नहीं है। वैसे स्याही तो कोई भी आदमी बना सकता है, लेकिन अच्छी स्याही बनानेमें बड़ी अड़चनें हैं। बिरला ही कोई सफल होता है। परीक्षितलालसे सलाह करके जब चाहे हरिजन आश्रम चली जाना। लेकिन अक्तूबरके महीनेकी याद रखना, और अक्तूबरके अन्तिम सप्ताहमें भी मत जाना।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती वसुमतीबहन
दौलतराम काशीराम कम्पनी
खान मोहम्मद कासमभाई माला
करेलवाड़ी, ठाकुरद्वार, बम्बई

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९३८८) से। सी० डब्ल्यू० ६३३ से भी; सौजन्य: वसुमती पण्डित।

१५३. पत्र : हीरालाल शर्माको

२ जुलाई, १९३४

चि० शर्मा,

तुमारा स्वच्छ पत्र मिला है। खुर्जा जानेमें मुझे कोई एतराज नहि है। अब मैं समझा तुमारा रामदाससे कहना कि खर्च तुम दोगे। इसका अर्थ यही था न कि उस खर्चकी जिम्मेवारी मैंने अपने सिफर्द ले ली है? यदि यह था तो ठीक ही था। इसमे एक बात भी और है कि खर्चकी मर्यादा होनी चाहीये। जो रामदासने लिखा है उससे मैं यह पाता हूं कि माहवार खर्च कम से कम ३०० होगा। मेरी दृष्टिसे यह खर्च बहुत है। अंतमे जो कुछ लेना है वह तो जमनालालजीसे है। उन पर अथवा किसी पर इतना बोज मै कैसे डालुं? इससे बेहतर यह है कि रामदास द० आ० चला जाय। वहा उसका शरीर किसी हालतमें अच्छा हो जायेगा। तुमारे लिए पासपोर्ट मिले तो तुमारे भी जाना। नैसर्गिक उपचारोमे यह भी समझा जाये कि गरीब भी इसे कर सके। यह सब लिखते हुए मुझे बहुत दु.ख होता है लेकिन धर्म मुझे लाचार बना देता है। रामदासके साथ तुमारा प्रेम तुमारी भी परीक्षा कर रहा है। मेरी तो हो ही रही है।

मेरा अभिप्राय ऐसा बन रहा है कि तुमारे वर्धामें ही रहना और खर्चको परिमित करके उसीमें सब-कुछ करना। रामदास और निर्मलाके निमित रु० १००से अधिक नहि तुमारे भी इतना ही। इतनेमे जो-कुछ शक्य है वह किया जाये। तुमारे मोहके वश होकर कुछ भी नहि करना। रामदासके बारेमे जब निश्चित हो जायगा तब वह दुरस्त हो जायगा। रामदासकी ही स्थितिके दूसरे इसी तरह अच्छे हुए है। रामदास भी हो जायगा। इसमे तुमारे निश्चय और निर्णयकी आवश्यकता रहती है क्योंकि रामदासका तुम पर विश्वास बढ़ता जा रहा है।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, (१९३२-४८), पृ० ७६ और ७७ के बीचकी प्रतिकृति से।

हरिजन-यात्राके दौरान गुजरातमें, जून १९३४

हरिजन बच्चोंके साथ, भावनगर, जुलाई, १९३४

१५४. पत्र : यू० राजगोपाल कृष्णैयाको

२ जुलाई, १९३४

भाई कृष्णय्या,

तुम्हारे प्रश्नके उत्तर ये हैं :

१. धर्म, अर्थका ऐक्य व्यक्तिके लिये, समाजके लिये, और देशके लिए सभवित है, इसमें सदेह नही। कब होगा यह कहना अशक्य सा है।

२. फल त्यागके बारेमें जो कुछ मैंने लिखा है वह अनुभवसिद्ध है और वह कोई एक ही वक्तका अनुभव नही है, बहुत मौके पर यही अनुभव हुआ है। बडे परिश्रमसे भूखो रहता हुआ किसान भी आत्मज्ञान पा सकता है। अनुभवी लोग तो यो कहते है कि जिसके पास काफी धन है, शरीर बल है, बुद्धि बल है उसके लिये आत्मज्ञान अशक्य नही तो दुर्लभ तो है ही।

३. इस जगतमें एक सर्वव्यापी चेतनमय शक्ति है। जिसको हम ईश्वर कहते है। उसकी प्रार्थना आवश्यक है। वो शक्ति हमारी सब इच्छा पूरी नही करती है, लेकिन इसकी भी हमें चिन्ता नही करनी चाहिये।

४. गीताका अर्थ दिल चाहे ऐसा नही हो सकता। व्याकरण आदिके अनुसार ही हो सकता है।

५. ईश्वर रूप होनेका अर्थ स्पष्ट है, जैसे पुत्र पिता रूप बनना चाहता हैं उसके सिवा समाधान नही होता है।

मोहनदास गांधी

सी० डब्ल्यू० ९२३८ से; सौजन्य : यू० राजगोपाल कृष्णैया।

१५५. भाषण : सार्वजनिक सभा, भावनगरमें[1]

३ जुलाई, १९३४

काठियावाड़के लिए उसकी सीमामें विदेशी वस्त्रोंका आना लज्जाकी बात है। आप मनसे अगर काम करें तो न केवल काठियावाड़ बल्कि सारे भारतको खादी दे सकते हैं। यह लज्जाकी बात है कि कपास पैदा करनेकी उत्कृष्ट सुविधाओंके बावजूद, आप लोग अपने कपड़ोंके लिए दो करोड़ रुपये विदेशोंको देते हैं।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ४-७-१९३४

१५६. भाषण : राज्य-गोशाला, भावनगरमें[2]

३ जुलाई, १९३४

अपने पुराने दोस्त स्वामी आनन्दके साथ मुझे राज्य-गोशाला देखनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। भावनगर छोड़नेसे पहले मैं उसके सम्बन्धमें कुछ शब्द ही कह सकूँगा। गोशालामें 'गिर' पशुओंकी अच्छी संख्या है। उनमें चार सालका एक बैल भी है जिसके बारेमें महाराजासाहबका कहना है कि इतना अच्छा पशु उन्हें काठियावाड़में देखनेको नहीं मिला। राजासाहब पशुओंके अच्छे पारखी हैं। इस फार्मका खर्च राज्य वहन कर रहा है। यह बहुत बड़ी सेवा है। लेकिन मुझे उम्मीद है कि राज्य इतनेसे ही सन्तोष नहीं मान लेगा। हर गाँवमें एक-एक साँड देकर, और वहाँके दूसरे सभी बछड़ोंको बधिया करके, और जहाँ कहीं लोग धर्मार्थ साँड छोड़ते है वहाँ उन्हें यह समझाकर कि वह एक अच्छी नस्लका पशु होना चाहिए, और यदि न हो तो उसे साँड नहीं बनाना चाहिए, वह गाँवोंमें पशु-विकासकी अपनी नीतिपर अमल करेगा तथा इस कार्यको पूरा करेगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २०-७-१९३४

१. बैठक सुबह हुई थी। काठियावाड़के खादी-विभागके रामजीभाईने काठियावाड़में खादी-प्रगतिके बारेमें रिपोर्ट पेश की थी।

२. यह भाषण "साप्ताहिक चिट्ठी" से उद्धृत है।

१५७. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

५ जुलाई, १९३४

चि० अमला,

यह महज तुम्हे अपना प्यार भेजनेके लिए लिख रहा हूँ। मुझे आशा है तुम अच्छी और खुश होगी।

सस्नेह।

श्री अमलाबहन, हरिजन आश्रम, साबरमती

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगलके कागजात; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

१५८. भाषण : महिलाओंकी सभा, अजमेरमें[1]

५ जुलाई, १९३४

४ जुलाईकी रातको गांधीजी अजमेर पहुँचे। दूसरे दिन सवेरे सबसे पहले महिलाओंकी सभामें भाषण देते हुए गांधीजी ने कहा, "मैं आप लोगोंके आगे कोई खास दलील नहीं रखना चाहता। इस बातसे कौन इनकार कर सकता है कि हम सभी इस संसारमें प्रेमके बन्धनसे बँधे हुए हैं; प्रेमका कानून हमारे ऊपर शासन कर रहा है। गोसाईं तुलसीदासने दयाको धर्मका मूल कहा है। चूँकि अस्पृश्यता प्रेम और दयाकी भावनाके विपरीत है, इसलिए अब इस पापका अन्त होना ही चाहिए। एक ओर तो हम प्रेमभावका दावा करें और दूसरी ओर अपने ही लाखों-करोड़ों भाइयोंको गन्दीसे-गन्दी जगहोंमें रखें, उन्हें कुओंसे पानी न भरने दें, पशुओंके गँदले हौजोंसे उन्हें पानी पीनेको मजबूर करें, और अगर वे बेचारे सार्वजनिक कुओंपर हक समझ कर पानी भरने जाय तो उनपर आक्रमण कर बैठें! ये बातें भला एकसाथ कैसे हो सकती हैं? इसी तरह जब सवर्णोंके गन्दे बच्चे खासी अच्छी संख्यामें सार्वजनिक स्कूलोंमें जा सकते हैं, तब हरिजन बच्चोंको, उनके सफाईसे रहते हुए भी, सार्वजनिक स्कूलोंसे अलग रखना कहाँतक उचित है, कहाँतक न्यायसंगत है? दूसरोंको अपनेसे

१. यह तथा अगले दो शीर्षक "साप्ताहिक चिट्ठी" से उद्धृत है।

नीच समझना एक प्रकारका अभिमान है, जिसे तुलसीदासजी ने सब पापोंका मूल कहा है। विनाशसे पहले मनमें अभिमान ही होता है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २०-७-१९३४

१५९. भेंट : हरिजन-सेवकोंसे

अजमेर,
५ जुलाई, १९३४

हरिजन-सेवकोंसे बातचीत करते हुए गांधीजी ने हरिजन-सेवाकी शर्तोंको सावधानीसे समझाया और कहा — मैं चाहता हूँ कि पूरी सच्चाई और ईमानदारीके साथ हमारे सेवक हरिजनोंकी सेवा करें। सेवाका फल सेवा ही है। स्वार्थ या किसी राजनीतिक उद्देश्यका तो इसमें लेश भी नहीं होना चाहिए। हमारा मुख्य लक्ष्य तो हिन्दू-धर्मकी शुद्धि है। इसलिए उन लोगोंके लिए इस हरिजन-प्रवृत्तिमें कोई स्थान नहीं हो सकता जो इसमें राजनीतिक दृष्टिसे भाग लेना चाहते हैं। ऐसोंको तो तुरन्त ही इस आन्दोलनसे अलग हो जाना चाहिए, क्योंकि उनका इसमें बना रहना हरिजन-कार्यको भारी हानि पहुँचा सकता है। अगर इस प्रवृत्तिके पीछे हमारा कोई राजनीतिक उद्देश्य हुआ, तब हम सवर्ण हिन्दुओंका हृदय कभी नहीं पलट सकते। इस आन्दोलनमें तो केवल उन्हींको भाग लेना चाहिए जो सत्य और अहिंसाका सिद्धान्त स्वीकार कर चुके हों, और जिनका यह विश्वास हो कि मन्दिर हिन्दू-धर्मका एक अविच्छिन्न अंग है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २०-७-१९३४

१६०. भाषण : सार्वजनिक सभा, अजमेरमें

५ जुलाई, १९३४

गांधीजी ने कहा, काली झंडीवालोंको साथ लेकर पण्डित लालनाथको सभामें आने और हमारे आन्दोलनके विरुद्ध प्रदर्शन करनेका पूरा अधिकार था।[1] जिस किसीने पण्डितजी पर यह हमला किया है उसने बहुत-बड़ी अशिष्टता की है। काली झंडियाँ क्या बिगाड़ सकती थीं, परन्तु पण्डित लालनाथपर जो यह वार हुआ है, उससे निश्चय ही हरिजन-कार्यको क्षति पहुँची है। जिस किसीने पण्डितजी पर यह वार किया

१. लालनाथ गांधीजी से शामको मिले थे और सभामें बोलनेकी इजाजत उनसे ले ली थी। वे गांधीजी के पहुँचनेसे पहले पहुँच गये थे और काले झंडोंका प्रदर्शन किया था जिससे झगड़ा हो गया और सनातनी नेतापर हमला किया गया।

है उसने ईश्वर तथा मनुष्य दोनोंकी ही दृष्टिमें एक भारी गुनाह किया है। सनातनियों तथा सुधारकोंके बीच पहले भी अकसर मारपीट हुई है। पर अजमेरका यह हमला योंही क्षमा नहीं किया जा सकता; क्योंकि मैंने लालनाथजी की रक्षाका सारा भार अपने ऊपर लिया था। हिंसापूर्ण तरीकोंसे अस्पृश्यताका यह काला दाग कदापि नहीं मिट सकता। वे तो उल्टे हमें ही भारी पड़ेंगे। मै सोचूंगा कि इस पाप-कृत्यका प्रायश्चित्त मुझे कैसे करना चाहिए[1] ताकि लोगोंको मालूम हो सके कि किन शर्तों पर उनका सहयोग लेना चाहता हूँ। सुधारकोंको दूसरोंपर हमला नहीं करना चाहिए, बल्कि बिना प्रतिरोधके हमले सहने चाहिए। इसी तरह हृदय-परिवर्तन हो सकता है और अस्पृश्यता समाप्त हो सकती है। मेरा विश्वास है कि हिंसासे, असत्यसे या क्रोधसे न तो धर्मकी सेवा ही हो सकती है, न उसकी रक्षा ही। धर्मरक्षा या धर्मकी सेवा तो आत्मत्याग तथा कष्टसहन और आत्म-संयमके द्वारा ही हो सकती है। मैं तो राजनीतिक क्षेत्रमें भी हिंसाको बर्दाश्त नहीं कर सकता, फिर यह तो धर्मक्षेत्र है।

गांधीजी ने इसके बाद पण्डित लालनाथजीसे बोलनेके लिए कहा और श्रोताओंसे धैर्यपूर्वक सुननेको कहा। पण्डितजी दो ही मिनिट बोले थे कि लोगोंने टोका-टोकी शुरू कर दी। इसपर गांधीजी ने कहा, "यह तो आप लोगोंकी बहुत ही जबर्दस्त अशिष्टता है। एक तो पहले ही उनपर वार करके अविनयका काम किया गया और अब उनकी बात सुननेसे इनकार करते हुए आप दूसरी अशिष्टता कर रहे हैं। अगर आप पण्डित लालनाथकी बात सुननेको तैयार नहीं तो इसका यह मतलब हुआ कि आप मेरी भी बात नहीं सुनना चाहते। मुझसे कभी कोई भूल नहीं हुई, यह दावा मैंने कभी नहीं किया। मैंने तो अपने जीवनमें की हुई हिमालय-जैसी भारी-भारी भूलोंको कबूल कर लिया है। अगर मैं मुक्त-कण्ठसे यह कह सकता हूँ कि अस्पृश्यता एक पाप है, तो लालनाथजीको भी यह कहनेका उतना ही अधिकार है कि उनकी रायमें अस्पृश्यता-निवारणका यह आन्दोलन एक अधार्मिक आन्दोलन है। आप जो यह 'शर्म शर्म' की आवाज उठा रहे हैं, तो यह शर्मकी बात पण्डितजी के लिए नहीं, बल्कि आपके लिए है। असहिष्णुता एक प्रकारकी हिंसा है। जो मनुष्य अपने विरोधियोंकी बात नहीं सुनना चाहता, वह कदापि सच्चे धर्माचरणका पात्र नहीं कहा जा सकता। हरिजन-सेवा एक धार्मिक प्रवृत्ति है। इसमें असहिष्णुता या हिंसाके लिए स्थान नहीं है। मान लीजिए कि कोई मुझपर ही हमला कर बैठे, वह हमला घातक किस्मका भी हो तो क्या आप आपेसे बाहर हो जायेंगे और पागलकी तरह हिंसा करनेपर उतारू हो जायेंगे? अगर ऐसा है तो मैंने व्यर्थ ही आपके आगे अपना जीवन बिताया। ऐसा करके तो आप इतने विशाल आन्दोलनको ही खत्म

१. गांधीजी ने ७ अगस्तसे उपवासका निश्चय किया; देखिए "वक्तव्य : उपवासपर", ६-८-१९३४।

कर देंगे। पर यदि आपने संयमसे काम लिया तो मेरे शरीरान्तके साथ-साथ इस अस्पृश्यताका अन्त भी निश्चित समझिए।"

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २०-७-१९३४

१६१. पत्र : मीराबहनको

अजमेर
५ जुलाई, १९३४

चि० मीरा,

मेरे पास अब भी समय कम है और काम ज्यादा। इसलिए, तुम मुझसे लम्बे पत्रकी उम्मीद नहीं कर सकती। चन्द्रशंकर तुम्हें विस्तारसे लिख रहा है। आज जो दु:खद घटना घटी,[1] उसके बारेमें वह तुम्हें बतायेगा।

जेल्के बरताव सम्बन्धी बहुत-से वक्तव्य मेरे पास हैं, लेकिन उन्हें मैं [दोबारा] देख नहीं पाया हूँ। इसीसे मैक्सवेल्के पास भेजनेमें देर हो रही है।

सस्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२८९) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७५५ से भी।

१६२. पत्र : जी० जी० जोगको

[६ जुलाई, १९३४ या उससे पूर्व][2]

समाचारपत्रों[3] में खादी-हुण्डी और गांधी-थैलीको लेकर जो विवाद उठा है, उसके बारेमें श्री जी० जी० जोग[4] से चल रहे पत्र-व्यवहारके दौरान गांधीजी कहते हैं कि मेरी समझमें मैं पूरे तथ्यों तथा स्थानीय परिस्थितियोंकी जानकारी बगैर कोई वक्तव्य जारी नहीं कर सकता।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. यह पत्र "कानपुर, ६ जुलाई, १९३४" की तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

३. गांधीजी के कानपुर दौरेका हवाला देते हुए बहुत-से समाचारपत्रोंने कहा कि ज्यों ही यह आशंका हुई कि खादी-हुण्डी बेचनेसे हरिजन-कोषके लिए चन्दा इकट्ठा करनेके कार्यमें बाधा पहुँचेगी, कानपुरके कार्यकर्त्ताओंने अखिल भारतीय चरखा संघके इस कार्यका विरोध किया।

४. कानपुरके एक प्रसिद्ध कांग्रेसी कार्यकर्त्ता।

तथ्योंका खुलासा करते हुए आपने जो वक्तव्य[1] दिया है, लगता है वह काफी है। अखबारोंमें जो-कुछ छपता है, कभी-कभी उसपर ध्यान देना उपयोगी हो सकता है।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ८-७-१९३४

१६३. पत्र : ना० र० मलकानीको

६ जुलाई, १९३४

प्रिय मलकानी,

मुझे माफ कर देना। मैं जमनालालजी से तो मिला, पर तुम्हारे बारेमें बिलकुल भूल गया। अब मुझे उनको लिखना पड़ेगा। मैं लिख रहा हूँ।

मैं जे० के० कोषके बारेमें लिखनेकी उम्मीद रखता हूँ।

ठक्कर बापाके तार अथवा पत्रका, वह जो भी रहा हो, बुरा मानना भूल है। अगर उन्होंने ऐसा सोचा कि तुम और वे कार्यालयसे एकसाथ छुट्टी नहीं ले सकते, तो बिना किसी गलतफहमीके खतरेके वैसा सोचनेका उन्हें अधिकार तो होना ही चाहिए। इसमें हुक्म चलानेकी तो कोई बात ही नहीं है। चूँकि सिवा सिंधके वे मेरे साथ यात्रा करेंगे, इसलिए तुम्हारा मेरे साथ रहना अपने-आप सम्भव नहीं है। पंजाब, संयुक्त प्रान्त या बंगालमें उनकी उपस्थिति जरूरी है। उनके बिना गुजरातमें मेरा काम चल ही नहीं सकता था। काठियावाड़में भी उनका रहना उतना ही जरूरी था। हम कार्यकर्त्ताओंको मोटे चमड़ेका बनना चाहिए।

सस्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९०६) से।

१. साधन-सूत्रमें बताया गया है कि संयुक्त प्रान्त कांग्रेसके सचिव डी० मजूमदारके अनुसार कानपुर चरखा-संघ द्वारा एक वक्तव्य प्रसारित किया गया था जो इस तरह था: "... खादी-कार्य हरिजन-कार्यका विरोधी नहीं है।... खादी-हुण्डीके माध्यमसे खादी-बिक्रीकी व्यवस्था करनेपर कोष-वृद्धिका सवाल कतई पैदा नहीं होता। चरखा संघने कानपुरके निवासियोंसे किसी तरहके चन्देके लिये अपील नहीं की है। उन्होंने बस खादी खरीदने और गांधीजी के प्रति आदर व्यक्त करनेको कहा है...।"

१६४. पत्र : महादेव देसाईको

अजमेर,
६ जुलाई, १९३४

चि० महादेव,

आज मै २.३० पर उठा। डायरी लिखनेके बाद ही मै यह पत्र लिख रहा हूँ। मै अबतक काफी थक गया हूँ। तर्क-वितर्क और सभाएँ मुझे अच्छी नही लगती। हर वक्त महसूस होता है कि नीद पूरी नही हो पाई। पत्र बहुत सारे इकट्ठे हो गये है। जितना हो सकता है देख लेता हूँ।

दुर्गा और अन्य बहनें आकर भावनगरमे मिली। वह और वेलाबहन तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही है। इसलिए, यह ज्यादा अच्छा होगा कि मेरे पास आनेसे पहले वहाँ जाकर उनसे मिल लो। बबलू दिहनमें है। उन सबके बारेमें क्या किया जा सकता है, नही समझ पाता। लेकिन तुम निर्णय मुझसे मिलनेके बाद ही लेना।

चूंकि कुछ ही दिनोंमें अब हमारी मुलाकात होगी, इसलिए और अधिक नही लिखता। चन्द्रशंकरने तुम्हें जो-कुछ लिखा है, वह काफी है।

रवाना होनेके बाद अपने स्वास्थ्यका खयाल रखना।

बापूके आशीर्वाद

[अंग्रेजीसे]
महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य : नारायण देसाई।

१६५. भाषण : हैदराबादमें[1]

७ जुलाई, १९३४

मै देखता हूँ यहाँ महिलाएँ अधिक है और मै जानता हूँ ये धार्मिक है। आपसे मेरा यह कहना है कि अगर आप अपने धर्मकी रक्षा करना चाहती है तो आपको अस्पृश्यताका त्याग कर देना चाहिए। आपको चाहिए कि आप अपनी बुद्धिको निर्मल बना डाले और सभी मनुष्योंको समान समझें। अगर ऐसा नही हुआ तो वह पाप होगा और उससे धर्मपर आँच आयेगी।

१. होमस्टीड हॉलमें, जहाँ मुख्यतया महिलाएँ ही थीं। बाकी लोग हॉलके बाहर थे। जयरामदास दौलतरामने ३,१८८ रुपयेकी एक थैली भेंट की। भीड़-भाड़ और शोरगुलकी वजहसे गांधीजी की आवाज हॉलके बाहरके लोग नहीं सुन पाये।

मिरानी[1]में एक महिलासे मुझे सोनेकी एक चूडी प्राप्त हुई थी। अब आप भी आभूषण और धन देकर आन्दोलनके प्रति अपना स्नेह व्यक्त करें। मैं अपना काम कर चुका, अब आप अपना करें।[1]

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, ८-७-१९३४

१६६. भाषण : कराची नगरपालिकाके अभिनन्दन-पत्र[2] के उत्तरमें

[७ जुलाई, १९३४][1]

महात्माजीने यहाँ अपने भाषणोंमें कराची शहरको हिन्दुओं और मुसलमानोंमें मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध बनाये रखनेके लिए तथा हरिजनोंके उत्थानार्थ काफी-कुछ काम करनेके लिए धन्यवाद दिया। लेकिन उन्होंने यह आशा भी व्यक्त की कि कराची नगरपालिका हरिजनोंके लिए और भी जितना अधिक कर सकती है, करेगी और इस तरह भारतकी दूसरी नगरपालिकाओंके लिए एक मिसाल कायम करेगी। उन्होंने यह भी कहा कि हरिजनोंके लिए बनवाये गये घर, जिनमें कुछ हरिजन रह भी रहे हैं, अस्वास्थ्यकर हैं। यह स्थिति सन्तोषजनक नहीं है। उन्होंने नगरपालिकाके सदस्यों तथा आम जनतासे आग्रह किया कि वे कराचीमें किसी भी हरिजनको ऐसे घरोंमें न रहने दें जो उन्हे स्वयं अपने लिए सन्तोषजनक न लगें।

उन्होंने यह भी आग्रह किया कि लोग ऊँच-नीच अस्पृश्यता-स्पृश्यताके भेदको खत्म कर दें। वे यह भी भूल जायें कि वे हिन्दू या मुसलमान, ईसाई या पारसी आदि हैं। जबतक ऐसा नहीं होता भारतका कल्याण सम्भव नहीं है। इसमें केवल भारतका ही नहीं, बल्कि सम्पूर्ण विश्वका लाभ है।

महात्मा गांधीने इस बातपर भी जोर दिया कि अस्पृश्यता-निवारण जैसा नेक कार्य जोर-जबर्दस्तीसे न किया जाये। इसके लिए आत्मशुद्धि और प्रायश्चित्त जरूरी हैं। उन्होंने हरिजन-कार्यकर्त्ताओंसे कहा कि इस विषयमें उन्हे अपनी जिम्मेदारी महसूस करनी चाहिए। उन्होंने यह भी कहा कि लोगोंको उन सनातनियोंके प्रति भी जो उनसे मतभेद रखते हैं, आदर की भावना रखनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १३-७-१९३४

१. गांधीजी हैदराबाद स्टेशनसे पाँच मील दूर स्थित मिरानीमें उतरे थे।
२. कराचीके महापौर जमशेद मेहताने भेंट किया था।
३. यह भाषण २७-७-१९३४ के हरिजनमें प्रकाशित "साप्ताहिक चिट्ठी" से उद्धृत है।

१६७. पत्र : बालूकाका कानिटकरको

८ जुलाई, १९३४

प्रिय बालूकाका,

तुम्हारा पत्र मैं पढ़ गया हूँ। मैं सविनय अवज्ञाकी बात करने नहीं जा रहा हूँ। मैं उस रचनात्मक कार्यक्रमकी बातचीतमें लगा हूँ जो तुम्हें बहुत पसन्द है। इसलिए तुम भी उससे अलग हटकर अपनी पूरी शक्तिके साथ इस काममें जुट जाओ।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

श्री बालूकाका कानिटकर
३४१, सदाशिव पेठ
पूना शहर-२

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६२) से; सौजन्य : जी० एन० कानिटकर।

१६८. पत्र : अमतुस्सलामको

८ जुलाई, १९३४

प्यारी बेटी अमतुलसलाम,[1]

तेरा खत मिला है। मेरे पास अच्छी होनेके लिए नहीं आना चाहिए। लेकिन अच्छी हो जानेके बाद जरूर आ सकती है। डाक्टर क्या कहते हैं सो लिखना। घूमने-फिरने लगो और खाना खा सको, तब आना। जल्दसे-जल्द आना हो तो कानपुर आ सकती हो। लेकिन बेहतर यह है कि तू ५ तारीखको वर्धा पहुँच जा। मैं कानपुर २३ को, बनारस २६को और वर्धा ५ तारीखको पहुँचूंगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३१०) से।

१. साधन-सूत्रमें सम्बोधन उर्दूमें है।

१६९. भाषण : कांग्रेस-कार्यकर्त्ताओंके समक्ष, कराचीमें

८ जुलाई, १९३४

रविवारको सुबह खालिकदीन हॉलमें महात्मा गांधीने सिंधके कांग्रेसियोंसे घुल-मिलकर बातें कीं। समाजवादियों द्वारा लगाये गये अभियोगोंका भी उसमें उन्होंने जिक्र किया। समाजवादियोंने यह अभियोग लगाया था कि कार्यकारिणी समितिका कार्यक्रम ढीला-ढाला और प्रभावहीन है। गांधीजी ने इसका खंडन किया। उन्होंने कहा कि खादी, हिन्दू-मुस्लिम एकता, अस्पृश्यता और किसानोंको पुनर्गठित करनेका काम काफी तेजीसे चल रहा है। अगर कार्यकर्त्ता तेजीसे काम करे तो सविनय प्रतिरोध और जेल जानेकी जरूरत रहे ही नहीं। उन्होंने लोगोंको सलाह दी कि उस कार्यक्रममें फेर-बदल न करें जो काफी तेज गतिसे चल रहा है और यथार्थतः समाजवादी है।

साम्प्रदायिक समझौतेके बारेमें बोलते हुए उन्होंने कहा कि कांग्रेस न मुसलमानोंकी इच्छानुरूप इसे स्वीकार कर सकती थी और न हिन्दुओं और सिखोंके कहनेपर अस्वीकार। अतः उनकी समझसे कार्यकारिणी समितिका प्रस्ताव ही सबसे अधिक बुद्धि-मत्तापूर्ण है।

[अंग्रेजीसे]
ट्रिब्यून, ११-७-१९३४

१७०. भाषण : सिंधके हरिजन-सेवकोंके बीच, कराचीमें[1]

८ जुलाई, १९३४

इस महीनेकी ८ तारीखको कराचीमें गांधीजी सिंधके उन हरिजन-सेवकोंसे मिले जिन्होंने शिकायत की थी कि हरिजनोंको रुपये उधार देनेवाले काबुली उनके साथ क्रूरताका बरताव करते हैं। मूल और सूदके सम्बन्धमें उनकी बेहिसाब माँगोंको स्वीकार कर लेनेपर भी वे पैसा चुकता लेनेसे इनकार करते हैं। गांधीजी ने सलाह दी कि उधार देनेवाले इन काबुलियोंसे निपटनेके लिए उन्हें पहले ईश्वरमें आस्था रखनेवाले किसी मुसलमानके पास जाना चाहिए। लेकिन इससे भी पहले हरिजनोंको यह समझाना चाहिए कि वे अनुपयोगी कार्योंके लिए कर्ज लेना बिलकुल बन्द कर

१. यह भाषण "साप्ताहिक चिट्ठी" से उद्धृत है।

दें तथा शराब और जुआ जैसे व्यसनोंमें न फँसें। और अगर कर्ज लेते ही हैं तो ज्यादा-से-ज्यादा छः प्रतिशत सूदपर लें। थारपारकरमें तकरीबन ५,००० भील और मेघवाड मूल निवासी तथा जिलेके अन्य ऐसे किसान हैं जो बड़ी तेजीके साथ अपनी जमीनोंसे हाथ धोते जा रहे हैं और इनकी स्थिति भूमिहीन खेतिहरों जैसी हो गई है। इन्हें वैधानिक संरक्षणकी नितान्त आवश्यकता है। गांधीजी ने कहा कि संरक्षणका कानून बनवानेकी कोशिश तो की जाये, लेकिन तबतक कर्मठ कार्यकर्त्ताओंको चाहिए कि वे इन पिछड़े लोगोंके बीच जाकर काम करें और अपने जीवनको इनकी सेवामें समर्पित कर दें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २७-७-१९३४

१७१. भाषण: व्यापारियोंके बीच, करांचीमें[1]

८ जुलाई, १९३४

अध्यक्ष महोदयने जो यह कहा कि आजकल मेरे पास ऐसे कामोंके लिए जिनका सीधा सम्बन्ध हरिजन-सेवासे नहीं है, बहुत कम समय रहता है, अथवा कहिए कि बिलकुल नहीं रहता, सो बिलकुल सच है। यह भी सच है कि इतना दौरा करनेके बाद तथा उत्कलमें पदयात्राके अनुभवोंके बाद अब मुझे कुछ मानसिक थकावट लगने लगी है। अब तो मन यही इच्छा करता है कि यह जुलाईका महीना जल्दी निर्विघ्न समाप्त हो जाये तो मैं थोड़ा मानसिक विश्राम ले सकूँ। मेरी ऐसी दशामें जब अध्यक्ष महोदयने मुझे यहाँ आनेके लिए निमन्त्रण दिया, तब उसे स्वीकार करनेकी मेरी इच्छा नहीं थी। किन्तु मैंने देखा कि इस मण्डलके अध्यक्ष महोदय ही हरिजन-सेवक संघके भी अध्यक्ष हैं और हरिजन-सेवक संघका काम बड़ी अच्छी तरहसे चलाते हैं, तब मैं उनके निमन्त्रणकी उपेक्षा नहीं कर सका।

यों तो, क्या हिन्दुस्तानके व्यापारी, क्या अन्य धनिक, सबके साथ मेरा परिचय हमेशासे रहा है। उनकी ओरसे मुझे आर्थिक सहायता भी हिन्दुस्तानके गरीबोंके लिए, हरिजनोंके लिए तथा अन्य लोगोंके लिए भी मिलती रही है। किन्तु यह बात भी मैं इस समय स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि यद्यपि मैं राजाओंके साथ, अधिकारियोंके साथ, व्यापारियोंके साथ, धनिकोंके साथ उठता-बैठता हूँ, तथापि मैं यह कभी नहीं भूलता कि मैं मजदूर हूँ और मजदूरोंका प्रतिनिधि हूँ। भगवानसे भी मेरी यही प्रार्थना है कि यह जो मेरा प्रतिनिधित्व है, इसे मैं किसी प्रकारसे लज्जित न करूँ, और इस वर्गसे अपने लिए एक भी वस्तु न माँगूं। मुझे विश्वास है कि पचास वर्षका अपना सार्वजनिक जीवन मैंने इसी प्रकार बिताया है।

१. यह भाषण "करांचीके व्यापारियोंसे" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

मैं यह भी जानता हूँ कि व्यापारी, धनिक और राजा-महाराजा, ये भी हिन्दुस्तानके अभिन्न अंग हैं। मेरा कर्त्तव्य यह नहीं है कि मैं इनमें से किसी अंगका नाश करके दरिद्रनारायणकी सेवा करूँ। इतने वर्षोंके अनुभवसे मेरा यह विश्वास बढता जाता है कि यदि इन वर्गोंका नाश सम्भव हो, तब भी इनके नाशसे दरिद्रनारायणको कोई फायदा नहीं होगा। जो बात मैं चाहता हूँ और जो बात मेरी कल्पनामें, मेरे सपनों में रमा करती है, वह तो यह है कि मैं वर्गोंका समन्वय करानेके प्रयत्नमें जितना भाग ले सकूँ, लूँ। मेरी शक्तिका जितना व्यय इसमें हो सके, उतना व्यय करूँ। मेरा यह भी अनुभव है कि ऐसा करनेसे दरिद्रनारायणका आजतक मेरे हाथों कोई नुकसान नहीं हुआ है। मैंने देखा है कि जब मैं गरीबोंमें जाकर खडा होता हूँ, तो वे मुझे अपने-जैसा ही मान लेते हैं और मुझपर अपना प्रेम बरसाते हैं। आज भी उनका जो काम मैं कर सकूँगा, करूँगा।

इस इमारत[1]की नींवका शिलान्यास करके मैंने यह मान लिया है कि मैं जब आपके पास दरिद्रनारायणके लिए उचित सहायता माँगने आऊँगा, तब आप मुझे खाली हाथ नहीं लौटायेंगे। मैं मान लेता हूँ कि हिन्दुस्तानके व्यापारियोंके प्रतिनिधि आप लोग कोई गन्दा व्यापार नहीं करेंगे, दरिद्रनारायणको लूटेंगे नहीं, दरिद्रनारायणके अधिकारोंका आपके हाथों अतिक्रमण नहीं होगा। मैं आशा करता हूँ कि आप ऐसे व्यापारमें हाथ नहीं डालेंगे जिससे दरिद्रनारायणको नुकसान हो। मैं जानता हूँ कि हिन्दुस्तानमें सभी व्यापारी इस प्रकार काम नहीं करते। मैं यह भी जानता हूँ कि सभी धनिक अपने धनको गरीबोंकी अमानत मानकर उसका व्यय नहीं करते। यह जानते हुए भी, मुझे विश्वास है कि ऐसे धनिकोंकी संख्या बढती जा रही है जो अपने धनके ट्रस्टी बनना चाहते हैं, इसके लिए आवश्यक प्रयत्न करते हैं और सफलता भी प्राप्त करते हैं। इस धनिक समाजके प्रति यदि हम अच्छा व्यवहार करेंगे तो जो आशाएँ हम उनसे करते हैं, उन्हें वे फलीभूत करेंगे। जो बात आज परमार्थ इन्हें नहीं सिखा सकेगा, वही कल स्वार्थ सिखायेगा। अनुभव तो यह है कि व्यापार में स्वार्थ और परमार्थ दोनोंका समुच्चय हो सकता है। सच्चा अर्थ वही होता है जिसमें परमार्थ निहित रहता है। संसारके सब धर्म यही सिखाते हैं। धर्मकी उत्पत्ति भी यही सिखानेके लिए हुई है कि संसार-चक्रमें घूमते हुए हम मनुष्य एक-दूसरेको सेवासे सन्तुष्ट करें तथा ऐसी सेवा करते हुए उसीमें से अपनी भोगेच्छाको संयममें रखकर तृप्त करें। किसी धर्ममें मैंने ऐसा कहा गया नहीं देखा कि ईश्वरने मनुष्यको स्वार्थी बनकर अपनी भोगेच्छाको तृप्त करनेका अधिकार दिया है। इतिहासमें भी यही दिखाई देता है कि जो व्यक्ति अथवा समाज अपनी भोग-लालसाका पोषण करनेके लिए जीता है, उसका नाश हो जाता है। उसकी याद भी संसार नहीं रखता। संसार तो उन्हींकी स्मृतिको स्थायी बनाये रहता है, उन्हींका गुणगान करता है, वे ही अमर होते हैं जो अपना जीवन पारमार्थिक कार्योंमें व्यतीत करते हैं।

१. कराची इंडियन मर्चेन्ट्स एसोसिएशनकी इमारत।

अन्तमें भगवानसे मेरी प्रार्थना है कि इस व्यापारी मण्डलके द्वारा ऐसे भव्य कार्य हमेशा होते रहें जिनमें हिन्दुस्तानी मात्रका भला हो — केवल हिन्दू-मुसलमानका ही नहीं, वरन् सारे हिन्दुस्तानका, जिसमें दरिद्रनारायण तथा अन्य दूसरे भी आ जाते हैं। आपने प्रतिज्ञा की है कि जो अपनेको हिन्दुस्तानी कहते हैं तथा हिन्दुस्तानको अपने देशके रूपमें अपनाते हैं, उन सभीके लिए आपका यह मण्डल खुला हुआ है। मुझे आशा है कि यह सुन्दर शहर, जो नन्हा-सा है किन्तु दूसरा बम्बई हुआ जा रहा है, जिसके बारेमें आशा की जाती है कि कुछ समय बाद बम्बईका मुकाबला करेगा, इसमें आप लोगोंके बीच द्वेष और शत्रुताको स्थान नहीं होगा। होड़ कोई बुरी चीज नहीं है। व्यापारकी जड़ ही इसमें है। होड़ करके आगे बढ़ना ठीक है, किन्तु उसमें द्वेष और झगड़ा नहीं होना चाहिए। इसको बरतनेमें यदि आपको सफलता मिले, तो मुझे विश्वास है कि आपका यह मण्डल हिन्दुस्तानके लिए आदर्श संस्था बन सकेगा।

आपने स्वयं अपने मेयरका उल्लेख करते हुए यह कहा है कि इनकी मेहनतके फलस्वरूप आपको जमीन मिलती है तथा और भी सहायता इनकी ओरसे मिलती रहती है। ये धनाढ्य माता-पिताके पुत्र हैं, किन्तु बाहरसे यदि कोई व्यक्ति कराची आकर इन्हें देखता है, तो वह इन्हें धनिकके रूपमें नहीं, वरन् फकीरके रूपमें पहचानता है। नगरपालिओंके इतिहासमें मैंने ऐसा कहीं नहीं देखा कि एक बरसके बाद दूसरे बरस हरबार एक ही मनुष्यको चुनकर मेयर बनाया जाता हो। जहाँकी नगरपालिकाका मेयर फकीर हो, उस शहरकी इस संस्थासे यदि मैं बड़ी-बड़ी आशा करूँ तो यह कोई बड़ी बात नहीं है।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २९-७-१९३४

१७२. भाषण : सार्वजनिक सभा, कराचीमें

८ जुलाई, १९३४

शामकी सार्वजनिक सभामें ३०,०००के लगभग लोग गांधीजी का भाषण सुनने आये थे, जिनमें करीब ५,००० महिलाएँ थीं। लेकिन उन्हें निराश होना पड़ा, क्योंकि लाउडस्पीकरोंने अपना काम नहीं किया। स्वामी कृष्णानन्दजी[1] ने लाउडस्पीकरोंकी बहुत कुछ क्षतिपूर्ति कर दी। गांधीजी ने उन हरिजन-बस्तियोंका उल्लेख करते हुए जिनका उन्होंने निरीक्षण किया था, कहा, रणछोड़ लाइन्सकी चालें देखकर मुझे बड़ी मर्मवेदना हुई है। मैं आशा करता हूँ कि कराचीकी नगरपालिका अपने सुन्दर नगरकी इस बदसूरती को नहीं रहने देगी। तीन और भी ऐसी ही बस्तियाँ हैं जिनका सुधार तुरन्त होना चाहिए। इस नगरके लिए क्या यह बदनामीकी बात नहीं है कि सम्भ्रान्त नागरिक

१. कराची जिला कांग्रेस कमेटीके सचिव।

जहाँ एक क्षण भी खुशीसे रहना पसन्द न करें, वहाँ कराचीके एक भी हरिजनको रहनको मजबूर किए जायें? इसलिए नागरिकोंका यह फर्ज है कि नगरपालिकाका ध्यान नगरपर लगे इस कलंककी ओर तबतक बराबर दिलाते रहें जबतक कि सभी हरिजन भाइयोंके लिए समुचित प्रबन्ध न हो जाये।[1]

हरिजन-कार्यके लिए ऐसे सच्चे कार्यकर्त्ताओंके दलकी जरूरत है जो प्रार्थना और शुचितासे लैस हों। जाति-पाँतिका कोई भेदभाव कभी नहीं होना चाहिए। मैं विभिन्न सम्प्रदायोंमें एकता चाहता हूँ और इसीमें भारतकी मुक्ति निहित है। गांधीजी ने जनतासे अपील की कि सनातनियोंके विरुद्ध मनमें कोई शिकायत न रखें। प्रेम और अनुरोधके बलके सिवा अपने मतमें परिवर्तित करनेके लिए उनके प्रति किसी और बलका प्रयोग न करें। उन्होंने अनुशासनविहीन भीड़में लम्बा भाषण दे सकनेमें अपनी असमर्थता व्यक्त की।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २७-७-१९३४; **ट्रिब्यून**, ११-७-१९३४ भी।

१७३. तार: घनश्यामदास बिड़लाको

घनश्यामदास बिड़ला
नई दिल्ली

कराची
९ जुलाई, १९३४

परेशान होनेकी कोई बात नहीं है। हर तरहकी सावधानी बरत रहा हूँ। लालनाथके घायल हो जानेकी वजहसे वर्धा पहुँचनेके बाद पाँच या छह अगस्तसे एक सप्ताहका उपवास करनेका विचार है। इसे बिलकुल जरूरी समझिए। इसकी घोषणा करना चाहता हूँ। स्वीकृतिका तार दें।[2]

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ७९६२) से; सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला।

१. यह अनुच्छेद "साप्ताहिक चिट्ठी" से उद्धृत है। आगेका अंश **ट्रिब्यून**, ११-७-१९३४ से लिया गया है। ९-७-१९३४ के **बॉम्बे क्रॉनिकल**में रिपोर्ट थी: "... छोटे बच्चेको फुसलाकर आगे बुलाकर गांधीजी ने उसके गलेसे गहने उतार लिये। वे एक बुढ़ियासे अपनी अँगूठी देनेके लिए कहते रहे। नीलामकी एक चीजकी १५ रुपये बोली लगी थी। दाम चुकानेके लिए बोली लगानेवालेने जब ५० रु० का नोट दिया... गांधीजी ने शेष रुपये लौटानेसे साफ इनकार कर दिया; जनता इसपर बड़ी खुश हुई।

२. घनश्यामदासका जवाबी तार यों था: "मेरा अपना विचार है कि इतने लम्बे उपवासकी जरूरत नहीं है। इससे देशको अनावश्यक धक्का लगेगा, और मैं यह आशा करता हूँ कि लालनाथकी इच्छा नहीं है। कृपया इसे लालनाथको दिखा दें। आशा है, आप उपवासकी अवधि घटानेको राजी हो जायेंगे। यह कदम जरा ज्यादा ही उग्र है। यों अन्तिम निर्णय तो आपके ही विवेकपर निर्भर करेगा।" (बिड़ला कागजात)

१७४. पत्र : ना० र० मलकानीको

९ जुलाई, १९३४

प्रिय मलकानी,

तुम्हारा पत्र मिला। अगर तुम यह समझते हो कि बूटोकी मदद करना जरूरी हो गया है तो निश्चय ही उसकी मदद कर सकते हो। अपने दोस्तोसे उसे पैसा मिलता नही दीखता। क्या जाने, तुमसे उसने यह कहा है या नही कि वह जगह-जगहसे अपने दोस्तोंसे पैसे लेता रहा है। उसने जो-कुछ किया है लगता है उसका उसे अफसोस नही है। जो भी हो उसकी मदद करना कोई नैतिक दायित्व नही है। अगर सम्मानके साथ वह जीविकोपार्जन नहीं कर सकता तो उसे भारतसे चले जानेके लिए कहना चाहिए। लेकिन तुम अपना दृष्टिकोण इससे अलग बना सकते हो और फिर तदनुसार अमल कर सकते हो। मैं तुम्हारी उदारताके आड़े नही आऊँगा।

ठक्करबापाके फैसले[1] को अगर तुम बुरा नही मानते तो उनके आचार-व्यवहारको भी बुरा नहीं मानना चाहिए। तुम्हारे और मेरे लिए बस इतना ही जानना काफी है कि उनका हृदय महान है और वे हमेशा अच्छीसे-अच्छी बातें सोचते हैं। तुम्हारा अथवा उनका केन्द्रमें रहना उन्होने जरूरी माना था।

हम लोग मिलेंगे तो जल्द ही, पर कुछ ही मिनटोके लिए।

सस्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९०७) से।

१७५. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

९ जुलाई, १९३४

चि० अमला,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हें इतनी पतली चमड़ीकी तो कतई नहीं बनना चाहिए। एक निरा छोकरा जो-कुछ कहता है उसपर तुम्हें ध्यान ही नहीं देना चाहिए। वह जो चाहे कहे। तुम्हें तो जो बात बेकार है उसे सामान्य ढंगसे नजरअन्दाज कर देनी चाहिए और जो हितकारी है उसे ले लेना चाहिए। पुरातन एक अच्छा युवक है। वह जो-कुछ कहे उसके सही अंशपर तुम्हें ध्यान देना चाहिए।[2] तुम्हारे स्वभावमें

१. देखिए पृ० १५१।

२. देखिए अगला शीर्षक।

एक ऐसी बात है जो निश्चय ही गलत है, जैसे अपनी इच्छाओंको बच्चोंपर थोपना। तुम उनसे वही करा सकती हो जिसे वे स्वेच्छासे करते हैं। दस सालकी तुम्हारी गलत आदतें किसीके आदेश-भरसे समाप्त नहीं हो सकतीं। पर तुम बच्चोंपर अपनी बातें न थोपो और मैं भी तुम्हारे ऊपर कोई चीज नहीं थोपूँगा। तुम्हारा जीवन अगर वहाँ कष्टमय हो तो मुझे बताना कि मैं तुम्हारे लिए क्या करूँ। कुछ तो तुम्हें तय करना ही है। अच्छी तरह सोचो और मुझे बताओ।

सस्नेह।

बापू

[पुनश्च :]

हाँ, पिछले चार दिनोंसे मैं दूध ले रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

१७६. पत्र : पुरातन जे० बुचको

९ जुलाई, १९३४

चि० पुरातन,

अमलाबहनके पत्रमें लज्जाजनक ऐसा क्या है? जहाँ आवश्यकता आ पड़े, वहाँ सुधारना चाहिए। जहाँ हस्तक्षेप करना कर्त्तव्य हो, हस्तक्षेप करना चाहिए। यदि तुम्हें विश्वास हो गया है कि वह भली स्त्री है, तो उसकी भूलोंको क्षमा करके उसकी सेवाका उपयोग करो। उसमें अनेक सद्गुण हैं, उनका उपयोग करो। वह थोड़ी मूर्ख तो है ही। मूर्ख न होती तो मुझसे चिपटी न रहती, क्योंकि मेरे बहुत प्रहार उसे सहने पड़े हैं।

मुझे ब्यौरेवार पत्र लिखना।

तोतारामजीका क्या हाल है? हरिप्रसाद चला गया क्या? वहाँका वातावरण दूषित न होने पाये, इसके लिए जो बने सो करते रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१७०) से।

१७७. पत्र : फूलचन्द क० शाहको

९ जुलाई, १९३४

भाई फूलचन्द,

आपने अच्छी याद दिलाई। मैं तो भूल ही गया था, और यह बात रह जाती। अब आज ही लिखे देता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मिस्त्रीको अलगसे उत्तर नहीं देता।

श्रीयुत फूलचन्द कस्तूरचन्द शाह
केलवाणी मण्डल
वढवान सिटी

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१९६) से। सी० डब्ल्यू० २८४९ से भी; सौजन्य : फूलचन्द कस्तूरचन्द शाह।

१७८. पत्र : कान्ति गांधीको

९ जुलाई, १९३४

चि० कान्ति,

तेरे दो पत्र मिले। तेरे अध्ययनको आगे बढ़ानेमें जो मदद मुझसे हो सके, वह मैं जरूर करना चाहूँगा। किन्तु मद्राससे राजाजी क्या करते हैं, इसकी प्रतीक्षा करना उचित होगा। आखिर, बनारसमें तो उनसे भेंट होगी ही; तब बात करूँगा। आज भी लिख तो देता ही हूँ। तू जामियामें भरती होना चाहे तो वह भी हो सकता है। वहाँ तुझे अपने विषय मिल जायेंगे, और तू मुसलमान विद्यार्थियोंके सम्पर्कमें भी आयेगा। यों तू काशीमें भी रह सकता है। वहाँ आनन्दशंकरभाई[1] हैं, 'सुन्दरम'[2] है, नागरदास हैं; और भी अनेक हैं। और साधनोका तो वहाँ अन्त नही

१. आनन्दशंकर बापूभाई ध्रुव (१८६९-१९४२), संस्कृतके विद्वान और गुजराती लेखक; बनारस हिन्दू-विश्वविद्यालयके उप-कुलपति।

२. त्रिभुवन पुरुषोत्तमदास लुहार, गुजराती कवि।

है। कमसे-कम ये दो संस्थान तो मेरी नजरमें हैं। यदि तुझे राजकोटमें नारणदासके अधीन रहना हो तो वह भी हो सकता है। मुझे तेरे बारेमें डर नहीं है। मैं तुझे निरा बालक नहीं समझता। मेरे साथ चर्चा करना हो तो तू दिल्लीसे कुछ स्टेशनों तक मेरे साथ चल सकता है। बात करनेका वह शायद सबसे अच्छा मौका होगा। मगर हो सकता है कि दिल्लीसे कोई दूसरा गाहक साथ हो जाये, जिससे बात करना पड़े। सोचकर देखना। बा तो तेरी चिन्ता करती ही है।

और हाँ, रामदास सचमुच बीमार है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७२८६) से; सौजन्य: कान्ति गांधी।

१७९. पत्र : रैहाना तैयबजीको

९ जुलाई, १९३४

प्यारी बेटी रैहाना,[1]

तेरा पत्र मिला। डाह्याभाईको जवाब लिख दिया है। डाह्याभाई तेरा भाई है, तब फिर अगर मैं मेहसाना जाकर भी उससे न मिलता तो मेरा पितापन न खतरेमें पड़ जाता? हमीदाका खत इसके साथ है। वह तू पढ़ेगी ही, इसलिए उसके बारेमें कुछ नहीं लिखता।

तू मेहसाना नहीं आ सकी, इसका मुझे अफसोस हुआ। लेकिन न आनेका तेरा कारण ठीक था।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६४८) से।

१८०. पत्र : रमादेवी चौधरीको

९ जुलाई, १९३४

चि० रमादेवी,

तुमारा खत मिला है। ग्रामकी प्रवृत्तिके बारेमें जो योजना भेजी है वह अच्छी है। इसका अमल किया जाय तो अच्छा होगा। लड़की, मां और बड़ी बहनोंके लिए इतना ही कह दूं।[2] प्रथम तालीम शारीरिक ज्ञानकी, बादमें शारीरिक श्रमकी, पीछे

१. साधन-सूत्रमें सम्बोधन उर्दू लिपिमें है।

२. सम्भवत: रमादेवी, उनकी पुत्री और अन्य महिलाएँ जो हरिजन-उत्थानके लिए काम कर रही थीं।

गृह उद्योग की, पीछे हिन्दी अक्षर ज्ञानकी और मातृभाषा आवश्यक नहिं है। अन्न-पूर्णा[1] आदि अच्छी होगी।

बापुके आशीर्वाद

श्रीमती रमादेवी[2]
चांदनी चौक[3]
कटक (उड़ीसा)[4]

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २७८८) से।

१८१. वक्तव्य : उपवासके सम्बन्धमें[5]

[१० जुलाई, १९३४][6]

अजमेरमें जो दुर्भाग्यपूर्ण घटना घटी थी और जिसमे पण्डित लालनाथके सिरपर चोट लगी, उसकी मैंने जाँच की। उस जाँचसे पता चलता है कि काले झण्डेके प्रदर्शनसे वे लोग उत्तेजित हो गये जिन्होने जुलूसवालोंको देखा और पण्डित लालनाथके अनुसार जनताने, जिसमे स्वयंसेवक भी शामिल थे, झण्डे छीन लिये और उन्हें पैरों तले कुचला। संघर्ष शुरू हो गया जिसमें पण्डित लालनाथको उक्त चोट लगी। सौभाग्यसे किसी अन्य प्रदर्शनकारीको कोई खास चोट नही पहुँची। लेकिन इस तथ्यसे अपराध और वड़ा हो जाता है कि जिन लोगोंकी देखरेखमें स्वयंसेवक थे, उन्हें स्पष्ट हिदायत थी कि वे इस बातका ध्यान रखें कि काले झण्डोंके प्रदर्शनकारी जनताके हमलेसे पूरी तरह सुरक्षित रखे जायें। बचावमें यह कहना कि पण्डित लालनाथ और उनका दल नियत समयसे काफी पहले आ गया, कोई उचित जवाब नही है। मेरी रायमे प्रदर्शनकारियोंकी सुरक्षाके लिए सभी स्थलोपर जिम्मेदार व्यक्ति तैनात किये जाने चाहिए थे और सभा-स्थलपर चारों ओर ऐसे नोटिस लगाये जाने चाहिए थे जिनमें जनताको किसी भी प्रकारसे किसी भी रूपमें छेड़छाड़ न करनेकी चेतावनी दी गई होती।

यह सावधानी नही बरती गई और पण्डित लालनाथको दिया गया यह वचन कि वे तथा उनका दल जब प्रदर्शन करेगा, तो मारपीटसे बचा रहेगा, तोड़ दिया गया। यह वचन मैंने दिया था और इस तरहके पूर्ण विश्वाससे दिया गया था कि स्वयंसेवकोंका कप्तान ऐसा करनेको इच्छुक था और वचन पूरा करनेमें समर्थ था। मुझे इसमें कोई सन्देह नही कि वह उस वचनमें स्वेच्छापूर्वक भागीदार था। यह वचन

१. रमादेवीकी पुत्री।
२, ३ और ४. रोमन लिपिमें हैं।
५. यह "गांधीजीका आगामी उपवास", शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।
६. एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाने इसी तारीखको कराचीसे यह वक्तव्य जारी किया था।

नही निभाया जा सका, यह बिलकुल साफ है। लेकिन इस विषयमें कोई सन्देह नही हो सकता कि अन्तिम जिम्मेदारी मेरी है। वास्तवमें किसी वचनकी जरूरत नही थी। शुद्ध धार्मिक आन्दोलन होनेका दावा करनेवाले आन्दोलनमे उससे सहानुभूति रखनेवाली जनतासे अहिंसाकी अपेक्षा रखकर चला जाता है। मैंने वचनका जो उल्लेख किया है, वह अपराधको और बड़ा बनाकर व्यक्त करनेके लिए किया है और मेरे लिये सार्वजनिक प्रायश्चित्त करनेकी और ज्यादा जरूरत जतानेके लिए किया है। पण्डित लालनाथने मुझे बराबर आगाह किया था कि आन्दोलनके लिए मेरे आग्रहका परिणाम होगा, सहानुभूति रखनेवाली जनताकी ओरसे व्यापक हिंसा। मैं उनकी आशंकासे सहमत नही हुआ और न अब हूँ; हालाँकि अब वे काले झण्डोंके प्रदर्शन-कारियोंके साथ हुई हिंसाकी वारदातोंके कुछ-एक मामले दिखा भी सकते है।

फिर भी मेरे लिए इस तथ्यपर जोर देना जरूरी है कि आन्दोलनमे, जो कि शुद्ध धार्मिक है, किसी भी तरहकी हिंसाकी गुजाइश नही है। उत्तेजनाओंके बावजूद सुधारक यदि विरोधियोंकी विवेक-बुद्धिको जाग्रत करें और उनका हृदय-स्पर्श करें, तभी आन्दोलन सफल हो सकता है। यह काम सुधारकोंकी सच्चाई और तपस्याके द्वारा ही सम्भव है। मैंने हृदयको काफी टटोलनेके बाद अपने लिए सात दिनके उपवासका फैसला किया है। उपवास ७ अगस्तको दोपहरसे शुरू होगा, यानी मेरे वर्धा पहुँचनेके दो दिन बाद। आशा है कि मैं आगामी ५ अगस्तको वर्धा पहुँच जाऊँगा। पण्डित लालनाथ तथा जिन सनातनियोंका वे प्रतिनिधित्व करते है, उनके प्रति मेरी यह न्यूनतम देनदारी है। ईश्वरने चाहा तो हरिजन-कार्य-सम्बन्धी दौरा आगामी २ अगस्तको बनारसमें समाप्त हो जायेगा। शायद दौरेकी समाप्तिका [illegible] एक प्रायश्चित्तरूप उपवाससे होना समुचित ही है। ईश्वर करे कि इससे मेरी तथा मेरे सहयोगियोंकी कर्त्तव्यकी दृष्टिसे अनजाने कृत और अकृत सभी प्रकारकी त्रुटियाँ धुल जायें। उपवासके साथ ही आन्दोलन समाप्त नहीं हो जायेगा। इस उपवाससे पाँच करोड़ प्राणियोंपर धर्मके पवित्र नामपर लादे गये दासत्वसे उद्धारके लिए चल रहे संघर्षमे एक नया और स्वच्छ अध्याय शुरू हो! यह उन लोगोंके लिए जो आन्दोलनमे शरीक है या जो इसमे शामिल होंगे, इस बातकी चेतावनी हो कि उन्हे इसमें साफ दिलसे और मन-वचन-कर्मसे हिंसा तथा असत्यसे रहित रहकर भाग लेना चाहिए। मैं आशा करता हूँ कि कोई भी मेरे साथ उपवास करनेका लोभ नही करेगा। इस बातमें अनुकरण करनेकी अपेक्षा, अधिकसे-अधिक त्याग करनेसे ही उद्देश्यको अधिक लाभ पहुँचेगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १३-७-१९३४

१८२. तार: नटराजनको

१० जुलाई, १९३४

नटराजन
बान्द्रा (बम्बई)

तारके लिए धन्यवाद। वक्तव्य[1] पढ़ो। प्रश्न इतना गम्भीर है कि अजमेर-सम्बन्धी कर्त्तव्यकी उपेक्षाको अनदेखा नहीं किया जा सकता।

गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल कागजात; सौजन्य: प्यारेलाल।

१८३. तार: घनश्यामदास बिड़लाको

१० जुलाई, १९३४

घनश्यामदास बिड़ला
नई दिल्ली

तुम्हारा और देवदासका तार[2] मिला। वक्तव्य पढ़ो। मामलेको देखते हुए सात दिनसे कममें काम नहीं चलेगा। यहाँ मित्र सहमत हैं।

बापू

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल कागजात; सौजन्य: प्यारेलाल।

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२. घनश्यामदास बिड़लाके तारके लिए, देखिए पृ० १५९।

१८४. तार: मथुरादास त्रिकमजीको

करांची
१० जुलाई, १९३४

निर्णय लिया जा चुका है। अनिवार्य था। मेरा वक्तव्य[1] पढ़ो।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृ० १४७

१८५. पत्र: मीराबहनको

१० जुलाई, १९३४

चि० मीरा,

आगामी उपवासके मर्मको तुम समझोगी। इन घटनाके लिए प्रायश्चित्त करना इसलिए जरूरी है कि इससे साफ वचन-भंग हुआ है।[2] गुरुजनके वचनको भंग करने-जैसी गम्भीर बात इस धरतीपर और कोई नहीं है। अगर मेरी क्षमता अधिक होती तो मैं और लम्बा उपवास करता। तुम बिलकुल परेशान न होना। तुम्हें बिना विचलित हुए अपने पूर्वनियोजित कार्य[3]को करते रहना चाहिए। अन्य मित्रोंको भी इसे पढ़ाना।

सभीको प्यार।

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२९०) से। जी० एन० ९७५६ से भी; सौजन्य: मीराबहन।

१. देखिए पृ० १६४-६५।

२. देखिए भाषण: "सार्वजनिक सभा, अजमेरमें", पृ० १४८-५० और "वक्तव्य: उपवासके सम्बन्धमें", पृ० १६४-६५।

३. देखिए पा० टि० २, पृ० ९४।

१८६. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

१० जुलाई, १९३४

राजाजी भुलाभाईके साथ एक ही मंचपर खड़े हों, इसमें मैं तो कुछ अनुचित नहीं देखता। यह सब करते हुए भी, उचित यही है कि वे बोर्डमें न हों तथा असेम्बलीमें न जायें। जो कट्टर असहयोगी नहीं हैं, मैं तो उन्हें भी असेम्बलीमें जानेसे रोकूँगा। असेम्बलीमें जानेके इच्छुक तो बहुत अधिक होंगे। वे सबके-सब जायें ही, यह कोई शोभनीय नहीं होगा। और सब तो जा भी नहीं सकेंगे।

राजाजी और राजेन्द्रबाबूके बारेमें यह मान लेना चाहिए, कि जब वे बोर्डमें अथवा असेम्बलीमें जाना उचित समझेंगे, तब जायेंगे। उन्हें इसकी आजादी है ही। इसके विपरीत तुझ-जैसे, जो बिलकुल अस्पष्ट रहना चाहते हैं, उन्हें भी वैसा करनेकी आजादी है। इसमें किसीकी किसी भी प्रकारकी निन्दा होगी ही नहीं। और होती हो तो हो। यह युग ऐसा है जिसमें डरको छोड़ देना चाहिए। यह युग सामने बैठकर एक-दूसरेको देखनेका नहीं है। मेरे बौद्धिक प्रयोग जबतक जिसे रुचें, तबतक वह उनके अनुसार आचरण करे। मेरे आध्यात्मिक प्रयोगोंमें श्रद्धाकी आवश्यकता होती है, जबतक श्रद्धा हो उनका अनुसरण करे। जबरदस्ती अपने हृदयको या बुद्धिको मेरे पीछे घसीटना गलत है।

मेरे आगामी उपवासकी खबर तू अखबारमें पढ़ेगा, इसलिए सब नहीं लिखता। उसकी आवश्यकता स्वयंसिद्ध लगनी चाहिए।

तेरा तार मिला। मेरी तबीयत ठीक रहेगी। अगर मुझपर रोज कामका बहुत बोझ न पड़ा तो इसे पार कर जाऊँगा। जब भोजनका समय आ गया है, तो क्या कलेवा करने बैठूं?[1] आस्था रख।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृ० १४८-४९

१. एक गुजराती कहावत जिसका अर्थ है: "जब मैं लक्ष्यपर पहुँच गया हूँ, फिर पीछे क्यों लौटूँ?"

१८७. भेंट : हरिजन नेताओंको[1]

करावी,
१० जुलाई, १९३४

कुछ प्रमुख हरिजन १० तारीखको सुबह-सुबह गांधीजी से मिले। अपनी शिकायतों को उन्होंने उनके सामने रखा और बहुत-से मामलोंपर उनकी राय जाननी चाही। नगरपालिका और अन्य चुनावोंके बारेमें गांधीजी ने कहा कि इन चुनावोंमें हरिजनोंको आपसमें कभी नहीं लड़ना चाहिए। जितनी जगहें हों, हरिजनोंको आपसमें विचार-विमर्श करके उतने ही योग्य उम्मीदवारोंका चयन करना चाहिए तथा उनको निर्विरोध चुनकर आना चाहिए। इन जगहोंपर चुनावको सेवाके लिए प्राप्त शुभ अवसर न मानकर सुख-सुविधाजनक माना गया तो यह अहितकर होगा।

हरिजनोंने नौकरियोंमें कुछ निश्चित प्रतिशत जगहें सुरक्षित करनेकी माँग पेश की। गांधीजी ने कहा कि आप लोगोंको यह सुनकर आश्चर्य होगा कि सरकारी नौकरियोंकी संख्या भारत-भरमें मुश्किलसे कुछ लाख है। इनमें से कुछ प्रतिशत सुरक्षित करनेपर कितने हरिजनोंको रखा जा सकता है? और फिर पाँच करोड़ हरिजनोंका क्या होगा? अतः उन्होंने सुझाया कि वे कुछ प्रतिशतकी बात न करें और अपनी ओर ध्यान केन्द्रित करानेके लिए योग्यतापर भरोसा रखें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २७-७-१९३४

१८८. भाषण : दयाराम जेठामल सिंध कॉलेज, करावीमें[2]

१० जुलाई, १९३४

आपका और मेरा यह परिचय नया नहीं है। क्या सिंधके और क्या हिन्दुस्तान के अन्य प्रान्तोंके विद्यार्थियोंके साथ तो मेरा परिचय सदैव अत्यन्त प्रगाढ़ रहा है। दक्षिण आफ्रिका से जब मैं अपने देश वापस आया, तबसे यह परिचय चला आ रहा है। अतः मेरे मनमें यह विश्वास बैठ गया है, जो मेरे अनुभवोंपर आधारित है, कि विद्यार्थियोंके हृदयमें मेरे लिये कुछ-न-कुछ स्थान है। जब मुझसे कोई पूछता है कि "तुम्हारे कितने बेटा-बेटी हैं?" तब मैं कहता हूँ कि "असंख्य हैं, और इनमें

१. यह "साप्ताहिक चिट्ठी" से उद्धृत है।
२. यह "भाषण : करावीके विद्यार्थियोंके समक्ष" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

निरन्तर वृद्धि होती जाती है, कमी नहीं होती। इनमें से कुछ मर जाते हैं; किन्तु मरनेवालोंकी अपेक्षा और अधिक नये जन्म ले लेते हैं। कोई धोखा दे जाता है, कोई भाग भी जाता है। किन्तु जो भाग जाते हैं, धोखा दे जाते हैं अथवा मर जाते हैं, उनका जोड़ लगाऊँ और जो नये जन्म लेते हैं, उनकी गिनती करूँ, तो नये जन्म लेनेवालोंकी संख्या ज्यादा रहती है। ये बेटा-बेटी एक जन्म तो अपनी माताके उदरसे लेते हैं, और दूसरा जन्म, मुझपर विश्वास करके मेरे पास आकर अपने जीवनमें जो परिवर्तन शुरू करते हैं, उसके द्वारा लेते हैं।"

इसीलिए मैं आपके निमन्त्रणकी उपेक्षा नहीं कर सका। आपको जानना चाहिए कि इस समय मेरी शारीरिक तथा मानसिक स्थिति ऐसी है कि मुझे कोई भी निमन्त्रण स्वीकार नहीं करना चाहिए। इस शहरमें एक लड़की मृत्यु-शय्यापर पड़ी है। उसकी इच्छा थी कि मैं उसके पास जाऊँ। उसकी दादी मुझे बुलानेके लिए आई। मुझे कहना पड़ा कि "तुम्हारी लड़कीको देखने जाऊँ तो मेरे कितने बेटा-बेटी बीमार हैं, उन सबको देखने कैसे जा सकता हूँ? एकको देखने जाऊँ, तो दूसरेको कैसे ना कहूँ?" इस धर्मसंकटका निराकरण मैं अभीतक नहीं कर पाया। मैंने अपने हृदयको कठोर करके सोचा कि मैं जाकर कौन उसे बचा सकूँगा, इससे न जाऊँ यही अच्छा है। रोगीकी सेवा-शुश्रूषा करनेकी मेरी आदत है, फिर भी मैं इस कड़वे निर्णयका घूँट पी गया और अपने हृदयको कठोर बना लिया। उस लड़कीको देखने जानेमें मुझे धर्मसंकट लगा तो आपके यहाँ आनेमें भी मुझे धर्मसंकट लग रहा था। आज जगह-जगह जाना मेरी शारीरिक और मानसिक शक्तिके बाहरकी बात हो गई है। सामान्यतः पैसा मुझे लालचमें फँसा लेता है, किन्तु अब पैसेके लालचसे भी मैं बहुत-कुछ मुक्त हो गया हूँ। पैसा मिले या न मिले, इस मामलेमें मैं उदासीन हो गया हूँ। पैसा न मिले, तब भी मैं यह काम तो करूँगा ही। क्योंकि आखिर यह सारा कारबार मैं नहीं भगवान चलाते हैं। करोड़ों सवर्ण हिन्दुओंके हृदयमें परिवर्तन लानेकी शक्ति एक मनुष्यमें नहीं है। आत्मशुद्धि अथवा तपस्या करके यह शक्ति उस मनुष्यमें नहीं आ सकती। वह आत्मशुद्धि अथवा तपस्या करता है, तो वह भगवानके हाथमें निमित्तरूप हो जाता है। इससे अधिक वह कुछ नहीं कर सकता। इसका अनुभव मुझे प्रतिदिन ही नहीं प्रतिक्षण हो रहा है, और इससे मेरा हृदय अधिकाधिक नम्र बनता जा रहा है। मेरी भाषामें तथा मेरे कार्यमें नम्रता है या नहीं, यह तो संसार जाने। किन्तु मेरे हृदयमें नम्रता भरी है और वह बढ़ती ही जाती है; क्योंकि अपनी मानसिक, शारीरिक और आत्मिक शक्तिकी मर्यादा मैं जानता हूँ, और देख रहा हूँ।

इस प्रस्तावनाके बाद मैं छात्रों और छात्राओंसे कहना चाहूँगा कि पहली बात जो सीखनेकी है, वह है नम्रता। जिसमें नम्रताका प्रवेश नहीं होता, वह विद्याका पूरा सदुपयोग नहीं कर सकता। भले ही फिर उसने डबल फर्स्ट अथवा पहला नम्बर लिया हो। परीक्षा पास करके ही जीवन-सरिता नहीं पार हो जाती। इससे अच्छी नौकरी मिल जायेगी, विवाह-सम्बन्ध अच्छी जगह हो जायेगा, यह सम्भव है। किन्तु यदि विद्याका सदुपयोग करना हो, विद्या-धनको सेवाके लिए ही खर्च करना

हो, तो नम्रताकी मात्रा दिन-प्रतिदिन बढ़नी चाहिए। और ऐसा बिना सेवाके नहीं हो सकता। बी० ए० ऑनर्स अथवा इंजीनियरिंगकी डिग्री प्राप्त अनेक विद्यार्थियोको मैं जानता हूँ। गाँवके लोग इनकी ओर देखते भी नही। वे कहते है कि हमें इससे क्या? क्या आप हमारे दु:खमे हिस्सा बँटानेवाले है? कोई व्यक्ति गाँवमें गया हो और उसके पास बडी भारी परीक्षाका प्रमाणपत्र हो, तो इसीलिए उसने गाँववालो का अधिक प्रेम प्राप्त किया हो, ऐसा हिन्दुस्तानके सात लाख गाँवोमें कही किसीने नही देखा। मनुष्यको अपनी बौद्धिक शक्ति तथा आध्यात्मिक शक्तिका उपयोग आजीविकाके लिए, शरीरके पोषणके लिए नही करना चाहिए। इसके लिए भगवानने हाथ-पाँव दिये हैं। इनसे साधारण काम करके रोटी कमाना चाहिए। विद्या क्या हजारो रुपये कमानेके लिए प्राप्त की जाती है? प्राचीन युगकी बात देखें, तो वकील भी तब पैसा लिये बिना मुफ्त काम करते थे। यह आज भी इस बातसे स्पष्ट है कि बैरिस्टर अपनी फीसके लिए दावा नही कर सकता, क्योंकि यह काम सेवाका काम माना जाता है। यही बात वैद्यके बारेमें भी है। विद्या-धन सेवाके लिए ही है, यह मैं किस छात्रको, किस छात्राको बता सकता हूँ? और वह भी सिंधमें? यहाँ तो साहबोकी और पारसियोकी नकल करनेका प्रयत्न हो रहा है। मैं पहली बार सिंधमें आया, तब यहाँकी लडकियोंको देखकर सोचने लगा कि इतनी ज्यादा पारसी लड़कियाँ यहाँ कहाँ से आ गईं। बादमे मुझे मालूम हुआ कि ये तो आमिल वर्गकी लडकियाँ हैं। दक्षिण आफ्रिकामें मेरा सिंधियोसे परिचय हुआ था, किन्तु वे लोग स्त्रियोको साथ नही लाते थे, इसलिए सिंधी स्त्रियोसे परिचय नही हो सका था। सिंधमें आया, तभी मैंने सिंधी स्त्रियोको देखा। 'भाईबन्ध' नाम मैं जानता था, किन्तु 'आमिल' नामसे डर गया। मुझे लगा, ये लोग न जाने कैसे होगें। फिर आमिल लोगोको देखा, तो अंग्रेजों-जैसे लगे। कोई यह समझ सकता है कि ऐसा कहनेमें अंग्रेजकी निन्दा होती है। अंग्रेज तो अंग्रेज-जैसा होता है और उसको वह शोभा भी देता है। दूसरे उस-जैसे बनने जायें तो — जैसाकि ईसपकी नीतिकथाओमें पढ़ा था — कौआ मोरकी चाल चलने गया तो उसकी जैसी दुर्गति हुई थी, वैसी ही दुर्गति उनकी होगी। कौआ अपने स्थानपर अच्छा ही है, किन्तु जब वह स्थान-भ्रष्ट होकर दूसरेकी नकल करेगा, तब भोंडा लगेगा। इस प्रकार हम अपने हिन्दुस्तानकी रहन-सहनकी मर्यादामें रहें, तो कितना अच्छा हो। दादाभाईने नही, लॉर्ड कर्जनने कहा था, हिन्दुस्तानमें प्रतिव्यक्ति औसत वार्षिक आय ४० रुपया है। इस औसतमें करोड़पतिका धन भी आ जाता है। इसमें से तीन करोडके पास तो कुछ भी नही है। वे भिक्षापर जीते है, और जो रोटीका टुकड़ा उन्हे मिल जाता है, वही खाते है। ऐसे गरीब देशमें हमें कैसा रहना चाहिए? हम अपनी औसत आयका हिसाब लगाकर देखें तो हमें मालूम होगा कि हमें अंग्रेजोके समान नही रहना है। हमें समझना चाहिए कि हम खादी पहनकर ही भले लग सकते हैं। यहाँ यदि लड़कियोको रेशमी साडी और लेस चाहिए तो उन्हें लडकोके मनसे चलना पड़ेगा। यहाँ तो लड़का तभी किसी लडकीसे विवाह करना स्वीकार करता है, जब उसे हजारो रुपये मिलें। और फिर वे उन रुपयोसे डिग्री लेने ऑक्सफोर्ड जाते हैं।

आपने हरिजन-सेवाके लिए पैसोंकी थैलीके लिए मुझे यहाँ बुलाया। इसीमें आपकी प्रतिज्ञा आ गई कि आप हरिजन-सेवा करेंगे। अगर ऐसा न हो, अगर आप पैसा देकर ही मुक्त होना चाहते हों, तो आपका पैसा बेकार है। यह काम सिर्फ पैसेसे नहीं हो सकता। पैसेके साथ दिल भी होना चाहिए। अगर दिल तैयार न हो, तो अकेले पैसेसे काम नहीं चलता। आपने हरिजन-सेवाकी प्रतिज्ञा की है? प्रतिज्ञा अगर की है तो आपको क्या करना चाहिए, यह मैं आपको बताऊँगा। आप नम्र बनें, सादे बनें और हरिजन बालकोंके पास जाकर उन्हें अपनायें। उनके शरीरपर, नाकमें, मुँहपर मैल जमा रहता है और उनसे बास आती है। उनके पास तो हमें सादे कपड़ोंमें ही जाना चाहिए। हिन्दुस्तानमें और वह भी हरिजनोंके बीच काम करना हो तो नम्रतासे, बिना विद्याका घमंड किये, सादगीसे जायें, तभी काम बनेगा। कराचीकी सात-आठ हरिजन-बस्तियाँ मैंने देखीं। उनमें से दो-तीन जगहें अच्छी थीं। उनके लिए मैं कराचीके निवासियोंको मुबारकबाद देता हूँ। लेकिन दो-तीन जगहें ऐसी है जहाँ आप रह नही सकते। वहाँके झोंपड़े गिरने-गिरनेको हो रहे हैं। उनमें उजाला नही है, धूप नही हैं, सूर्यके दर्शन दुर्लभ हैं। निवासी बड़ा शारीरिक कष्ट भोग रहे हैं। इन लोगोंने आकर मुझसे कहा कि हम लोगोके लिए रहनेका ठीक सुभीता करवा दीजिए। ऐसे लोगोमें आप लोग जायें तो बहुत काम कर सकते हैं। अपना अध्ययन छोड़कर जाइये, ऐसा मैं नही कहता। अध्ययनसे बचे हुए समयमें यह काम कीजिए। लाहौरके फोरमैन क्रिश्चियन कॉलेजके प्रिंसिपल डॉ० दत्त मुझे लिखते हैं कि उनके कॉलेजके कितने ही लड़के हर रोज हरिजनोंकी सेवा करने जाते हैं। आगरा कॉलेजके विद्यार्थियोके कामका विवरण पढ़कर मैं खुश हो गया। उस कॉलेजके प्रिंसिपल भी वह काम करते हैं और मुझे कामका ब्यौरा भेजते हैं। देहरादूनके कॉलेजके विद्यार्थी अपनी छुट्टीका समय इस काममें लगाते हैं। इन लड़कोंने मुझसे पूछा कि जूठनका प्रश्न एक बड़ी समस्या है, इसका क्या किया जाये? मैंने उन्हें लिखा[1] कि भंगियोंको जूठन देना पाप है, यह प्रथा बन्द होनी ही चाहिए। उन्होंने कहा जब हमने जूठन देना बन्द कर दिया, तब भंगी कहने आये कि हमें तो जूठन चाहिए ही। हमारा काम सिर्फ पैसेसे नहीं चलेगा। ऐसी हालतमें भी हमें उनकी सेवा तो करनी ही है।

यह सेवा किस प्रकार हो सकती है? जिसका हृदय पवित्र हो और जिसमें श्रद्धा हो, वही यह काम कर सकता है। हरिजनोंको उनकी आर्थिक स्थितिसे परिचित करा देनेसे ही यह काम नही होगा। डॉक्टर अम्बेडकर इतने होशियार और चतुर बैरिस्टर हैं कि बड़े-बड़ोंको लज्जित कर देते हैं। अपनी तीव्र बुद्धिसे वे दूसरोंके हृदयको छू सकते हैं। उनमें त्यागवृत्ति भी जबर्दस्त है। वे अपने काममें व्यस्त हैं। सादगीसे रहते हैं। योग्यता ऐसी है कि चाहें तो हर महीने हजार दो हजार रुपया कमा सकते हैं। यूरोपमें रहना चाहें तो वहाँ भी रह सकते हैं। किन्तु वहाँ रहना उन्हें पसन्द नहीं है। वे तो हरिजनोके हितका ही विचार करते रहते हैं। ऐसे मनुष्यकी भी

१. देखिए खण्ड ५४, पृ० २८७-८९।

आज समाजमें क्या दशा है? उनका कहना है कि "मैं धारासभामें उपस्थित होनेके लिए पूना जाता हूँ तो मुझे तो होटलमें ही रहना पड़ता है और भत्तेमें मिलनेवाले सब रुपये खर्च कर देने पड़ते हैं, जबकि मेरे दूसरे मित्र मित्रोंके घर रहकर यह पैसा बचा सकते हैं। पूनामें एक भी हिन्दू-घर ऐसा नहीं है जो मुझे अपने साथी अथवा मित्रकी तरह अपनाये।" अब कहिए, यह किसके लिए शर्मकी बात है। जिसे यह सब सहन करना पड़ता है, उसका हृदय-स्पर्श कैसे किया जा सकता है? दूसरी ओर रहा शंकराचार्यके हृदयको स्पर्श करना। दो व्यक्ति दो छोरपर हैं। इनका मिलन कैसे कराया जा सकता है? इन दोके बीचमें हम लोग हैं। हम विद्यासे इनपर क्या प्रभाव डाल सकते हैं? डॉक्टर अम्बेडकर यदि कहें कि "तुम दगाबाज हो, मैं तो मारपीट करके काम करूँगा", तो मैं क्या करूँगा? मुझे सिर झुकाना पड़ेगा और कहना पड़ेगा कि "मेरी गर्दनपर आप अपनी तलवार चलाइए। मेरे पूर्वजोंने जो अपराध किया है, उसका प्रायश्चित्त मुझे करना ही चाहिए।" दूसरी ओर, क्या मैं शंकराचार्यके सामने जाकर वेदपाठ करूँगा? वे कहेंगे कि "तुम्हें वेदपाठ करनेका अधिकार नहीं है।" किन्तु वे यह थोड़े ही कह सकते हैं कि तुम्हें त्यागका अधिकार नहीं है, नम्रताका पालन करनेका अधिकार नहीं है। अतः हम दोनोंको अपने त्याग और अपनी सहनशक्तिसे ही जीत सकते हैं।

आपने मुझसे स्वर्गीय विट्ठलभाईके चित्रका उद्घाटन कराया है। किन्तु इससे आपको क्या लाभ हुआ? प्रिंसिपल महोदयने कहा कि विट्ठलभाई हिन्दुस्तानके एक बहुत महान सेवक थे। इस बातमें कोई सन्देह नहीं है। उन्होंने बम्बईके नगरनिगममें, धारासभामें तथा बड़ी धारासभामें जो काम किया, उससे कोई इनकार नहीं कर सकता। उनका साहस, उनकी शक्ति, उनका त्याग किसीसे कम नहीं था। बड़ी धारासभामें भी वे ऋषिवत् शोभा देते थे। सादगीमें उनसे कोई बढ़ नहीं सकता था। वे विद्वान थे, बड़े बैरिस्टर थे। उन्होंने घूस खाई होती तो दस-बीस लाख रुपये जमा कर लिये होते। किन्तु उनके पास पैसा अधिक नहीं था। बड़ी धारा-सभाके अध्यक्ष होनेके नाते उन्हें जो वेतन मिलता था, उसका अधिकांश वे मुझे भेज देते थे। वह अब अच्छी खासी रकम हो गई है और उसका ब्याज आता है, जो इकट्ठा हो रहा है। उस पैसेका क्या उपयोग किया जाये, यह मैं अभीतक तय नहीं कर पाया। ऐसे व्यक्तिके चित्रका उद्घाटन आप लोगोंने कराया है। इतना करके ही आप यह नहीं कह सकते कि आपने विट्ठलभाईके प्रति अपना ऋण अदा कर दिया। विट्ठलभाई हरिजनोंको अपनाते थे और उनसे मिलते-जुलते थे। गोधरामें पहली बार जब हरिजन-सभा हुई, तब वे हरिजन-बस्तीमें आये थे। मैंने उन्हें एकाएक पहचाना नहीं, क्योंकि वे संन्यासीके-से वेशमें थे। उनमें ऐसा घमंड नहीं था कि मैं तो बैरिस्टर हूँ, इसलिए हरिजन-बस्तीमें नहीं जाऊँगा।

मैंने आप लोगोंको हरिजन-सेवाकी शर्तें बताईं, और विद्या-धनके सदुपयोगका ढंग बताया। और बताया कि आप लोगोंको देन-लेनके [दहेजके] बुरे रिवाजसे बचना चाहिए। सिंधमें जबतक एक भी जवान इस बुरे रिवाजको स्वीकार करता

है, तबतक मैं कहूँगा कि सिंधमें कितने ही प्रगतिशील युवक और युवतियाँ क्यों न हो जायें, सब बेकार है। आखिर धूल धूल ही है।[1] दरिद्रनारायणकी सेवा करनी हो तो आपको खादी पहननी चाहिए। भगवान आप लोगोंको सद्बुद्धि दें और आप हिन्दुस्तानके उत्तम सेवक बनें।[2]

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २२-७-१९३४

१८९. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

कराची
११ जुलाई, १९३४

भाई वल्लभभाई,

आजकल जिस दिन सोचता हूँ उसी दिन पत्र नही लिख पाता। यह पत्र शुरू किया था ५.३० बजे सवेरेका नाश्ता करके। इतनेमें एक पारसी महिला अपनी १५ वर्षकी लड़कीको लेकर आ गई। वह टेनिसमें सारे भारतमें पहले नम्बर आई है, परन्तु उसे वैराग्य हो गया है। उसका सारा ध्यान धर्ममें है। इसलिए आग्रहपूर्वक मिलने आई। हरिजनोंके लिए दस रुपये दिये और हस्ताक्षर लेकर गई है।

मेरे उपवासकी खबर सुनकर आप दुःखी न हों। ऐसा करना अनिवार्य हो गया है। लोगोंकी भारी भीड़ जमा हो जाती है। सनातनी दंगेपर उतारू हैं। लोग इसे सहन नही करते। इसलिए झगड़ा होता ही है। लोग कहनेसे चेतते ही नही। उपवाससे ही हजारों को सन्देश पहुँचाया जा सकता है। पहलेसे भी ज्यादा सख्यामें लोग इकट्ठा होते हैं। इसलिए उनसे निपटना बहुत कठिन हो जाता है। सात दिन आसानीसे निकल जायेंगे। चिन्ता बिलकुल न करें। मेरा शरीर अच्छा ही है। इतने बोझके बावजूद खूनका दबाव १५० के आसपास रहता है। यह अच्छा ही माना जायेगा। वजन १०४ है। शेष दौरा निर्विघ्न समाप्त हो जाये तो समझो गंगा नहाये। अगस्तका महीना उपवास और उपवास-निवारणमें बीत जायेगा। बादकी भगवान जाने।

आपके स्वास्थ्यके बारेमें पूरी जानकारी चाहिए। डाह्याभाईको लिख रहा हूँ।[3]

मणिके छूटनेकी खबर कल मिली। महादेव और प्यारेलाल लाहौरसे साथ हो लेंगे। साथी बढ़ेंगे। काकासाहब हैदराबादसे साथ हुए हैं। इस समय ये तीनो साथ हों, यह ठीक है। नरहरि नही आयेंगे। एक जगह जमकर बैठ सकूँ तो सबसे मिल सकता हूँ। ईश्वरको जो करना होगा सो करेगा।

१. एक गुजराती कहावत जिसका अर्थ है: "कोई भी सुधार नहीं होगा।"

२. गांधीजी के भाषणके अन्तमें कालेजकी छात्राओंने सोनेकी चूड़ियाँ और अँगूठियाँ दीं। उन्हें नीलाम किया गया, जिससे काफी बड़ी रकम प्राप्त हुई।

३. देखिए अगला शीर्षक।

बा की तबीयत अच्छी रहती है। उसे जैसी खुराक चाहिए, जुटा लेती है। ठक्करबापा तो काफी देखभाल रखनेवाले हैं न?

रामदासका कष्ट मानसिक है और मन स्थितिका असर शरीरपर पड़े बिना नही रहता। इस समय वह . . .[1] की सलाहपर चल रहा है। शरीर काफी कृश हो गया है। सन्तान भी तीन हैं, यह चिन्ता भी उसे सताती है। होनी होकर रहेगी। देवदासकी लक्ष्मी ठीक-ठाक है।

. . .[2] वगैराके साथ खूब बातें की। अभी कोई बात उनके गले नही उतर सकती। नई हवामें नशेका कोई पार नही। यह नशा उतरेगा तभी ठिकाने आयेंगे। स्वामी वीरमगाँवसे अलग हो गये हैं। अब उपनगरमें रचनात्मक कार्य करनेमे जुटेंगे।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुनापत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० ११०-११

१९०. पत्र : डाह्याभाई पटेलको

कराची
११ जुलाई, १९३४

चि० डाह्याभाई,

वल्लभभाईकी तबीयत[3] के ब्यौरेवार समाचार मुझे लौटती डाकसे भेजो।

मणिबहनसे कहना कि मुझे ब्यौरेवार पत्र लिखे। अपने स्वास्थ्यके[4] पूरे समाचार दे। महादेव तो खबर लायेंगे ही।[5]

तुम्हारा काम ठीक चलता होगा।

बापूके आशीर्वाद

डाह्याभाई वल्लभभाई पटेल
रामनिवास, पारेख स्ट्रीट, बम्बई ४

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहन पटेलने, पृ० १६०

१ और २. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिये गये हैं।
३. १४-७-१९३४ को वल्लभभाई पटेलको नासिक जेलसे स्वास्थ्यके कारण छोड़ दिया गया था।
४. मणिबहन पटेल ८-७-१९३४ को बेलगाम जेलसे छूटी थीं।
५. महादेव देसाई ९-७-१९३४ को बेलगाम जेलसे छूटे थे।

१९१. पत्र : क० मा० मुन्शीको

११ जुलाई, १९३४

भाईश्री मुन्शी,

आपका पत्र[1] मिला। आपका लेख[2] इस हलचलमें जितने ध्यानसे पढ़ सकता था, पढ़ गया। अन्तिम अनुच्छेद शान्तिको भंग करता-जैसा लगा। इसलिए उसे निकालकर दो नये वाक्योंसे लेखका उपसंहार किया है। [नये वाक्य हैं:]

यह उद्देश्य संसदीय प्रयत्नोंसे प्राप्त किया जा सकता है या नहीं, यह देखना बाकी है। इसकी सफलता बहुत हदतक मतदाताओंके निर्णयपर निर्भर होगी।[3]

यदि इतना रद्दोबदल आपको पसन्द आये तो करके लेखका उपयोग कीजिये।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५४६) से; सौजन्य: क० मा० मुन्शी। **पिलग्रिमेज टु फ्रीडम**, पृ० ३७६ से भी।

१. दिनांक ७ जुलाई, १९३४ का।

२. जिसका शीर्षक था: 'हमारा उद्देश्य: संविधान सभा'। लेखके अन्तिम दो अनुच्छेद इस प्रकार थे: "संविधान सभाकी, इस प्रकार, आधुनिक राजनीतिक जीवनमें महत्त्वपूर्ण भूमिका होगी। कांग्रेस इस तरहकी सभाके पक्षमें है, क्योंकि केवल यही भारतकी स्वतन्त्रताका प्रतीक और उसके लोगोंके लिए शक्तिका स्रोत हो सकती है। इसके द्वारा भारतको एक जन-निर्वाचित राष्ट्रका गौरव प्राप्त करने, आत्मनिर्णयकी अपनी इच्छा पूरी करने, अपनी आत्माको खोजने और उसे मूल सिद्धान्तोंमें अभिव्यक्त करनेकी आशा है।

"कांग्रेसके सदस्य धारासभाका आगामी चुनाव संविधान सभाके प्रश्नपर लड़ेंगे। वे साइमन-कमीशनसे, जो अपना शासन स्वयं करनेकी हमारी योग्यताका निर्णायक बननेका ढकोसला करता है, कोई वास्ता नहीं रखेंगे। वे उन गोलमेज कान्फ्रेंसोंसे भी कोई वास्ता नहीं रखेंगे, जहाँ सरकार द्वारा मनोनीत सदस्य देशभक्तों-जैसी भाषा बोलते हैं और चाटुकारोंके चरण-चिह्नोंपर चलते हैं। संविधान सभाके प्रश्नपर जनमतको शिक्षित करना उनका उद्देश्य होगा। और धारासभामें वे केवल ऐसी स्थिति उत्पन्न करनेका प्रयत्न करेंगे जिसके द्वारा आगे चलकर संविधान सभा एक प्रत्यक्ष तथ्य हो जाये। इस उद्देश्यतक पहुँचनेका मार्ग जरूरी नहीं कि खून-खच्चरका मार्ग ही हो। वह मार्ग बहुधा दृढ़-संकल्प-युक्त रक्तहीन संघर्षका होता है और दो राष्ट्रोंकी, जो एक-दूसरेका सम्मान करना सीख गये हैं, पारस्परिक सन्धिमें समाप्त होता है।"

३. ये दो वाक्य **पिलग्रिमेज टु फ्रीडम**से लिये गये हैं।

१९२. भेंट : सिंधके पत्रकारोंको[1]

करांची
११ जुलाई, १९३४

आरम्भमें ही श्री पुनियाने[2] कहा कि अपना नया उपवास शुरू करनेके आपने जो कारण दिये हैं वे कुछ जमते नहीं हैं और हमें यह समझ नहीं आता कि हरि-जन-कार्यके लिए एक कष्टसाध्य दौरा पूरा करते ही आपको एक और अग्निपरीक्षा में से क्यों गुजरना चाहिए। गांधीजी ने इसके जवाबमें कहा :

यह आन्दोलन बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। उपवास-जैसी किसी सख्त कार्रवाईके बिना परिस्थितिका सामना नहीं किया जा सकता। जन-मानसको आप भाषणों या लेखोंसे नहीं, बल्कि किसी ऐसी चीजसे ही प्रभावित कर सकते हैं जिसे जन-साधारण खूब अच्छी तरह समझता हो। वह चीज है कष्ट, और उसकी सर्वाधिक मान्य पद्धति है उपवास। यहाँ और दक्षिण आफ्रिकामें मेरा अनुभव बार-बार यह रहा है कि यदि अच्छी तरह प्रयुक्त किया जाये तो उपवास सबसे अचूक इलाज है। मैंने अपना भाग्य जन-साधारणके साथ जोड़ दिया है, और मुझे सदा उनसे और उनके जरिए काम लेना है। वे केवल एक ही भाषा समझते हैं — हृदयकी भाषा और उपवास जब बिलकुल निःस्वार्थ होता है तो वह हृदयकी भाषा होती है।

गांधीजी को यह खबर दी गई कि उनके संकल्पित उपवाससे बम्बईके कांग्रेसी क्षेत्र बहुत ही चिन्तित हैं और कांग्रेसी मित्रोंकी यह राय है कि इससे उनके स्वास्थ्यपर जो दबाव पड़ेगा वह बहुत अधिक होगा। गांधीजी ने मुस्कुराते हुए जवाब दिया :

मुझे ऐसा कोई डर नहीं है। जहाँतक शरीरकी बात है, एक थका देनेवाली यात्राके बाद उपवाससे यात्रीको केवल लाभ ही होता है।

पर उसमें खतरा भी है।

बेशक, मैं खतरा मोल ले रहा हूँ। मैं यह उपवास शारीरिक लाभके लिए नहीं कर रहा हूँ। जहाँतक शरीरका सवाल है, उसके लिए कुछ खतरा है, क्योंकि मेरे शरीरको लंघन-चिकित्साकी जरूरत नहीं है। हर उपवासमें कुछ-न-कुछ खतरा तो होता ही है, अन्यथा उसका कोई अर्थ ही नहीं रहता। उसमें शारीरिक यन्त्रणा होनी ही चाहिए।

१. साधन-सूत्रके अनुसार यह सिंध आब्जर्वरसे लिया गया था।
२. सिंध आब्जर्वरके सम्पादक और सिंध पत्रकार संघके अध्यक्ष।

यह फैसला अब बदला नहीं जा सकता। अजमेरकी सभामें मैंने यह घोषणा[1] की थी कि मैं किसी तरहका प्रायश्चित्त करूँगा। वह घोषणा बहुत पहले कार्यान्वित होनी चाहिए थी। मैंने स्वयं और मित्रोंके साथ इसपर विचार किया और तब मैं इस सुचिन्तित निष्कर्षपर पहुँचा कि उपवास ही एक ऐसा प्रायश्चित्त है जो मुझे करना चाहिए। तब सवाल यह आया कि वह कबतक चले। मैं तो इससे और लम्बा उपवास ही करता। पर मैं बिना जरूरत विक्षोभ पैदा करना नहीं चाहता, इसीलिए मैंने अधिकतम अवधि नहीं रखी है। जो मित्र भौतिक रूपसे इस समय मेरे निकटमें हैं, वे इस उपवासकी आवश्यकताको समझ गये हैं।

क्या उनमें कस्तूरबा भी शामिल हैं?

हाँ, यह मेरा दुर्लभ सौभाग्य रहा है कि इस तरहके सभी मामलोंमें उसने मुझे कभी परेशान नहीं किया। कभी मुझसे बहस नहीं की और स्वयं व्यथित होते हुए भी मुझे अपने रास्ते जाने दिया। इसीलिए, यद्यपि वह मेरी धर्मपत्नी है, पर मुझे यह कहनेमें कोई संकोच नहीं होता कि इस दृष्टिसे वह मेरे सम्पर्कमें आई सबसे बहादुर औरतोंमें से है।

श्री पुन्नियाने तब सिंधको अलग करने के सवालपर, जिसे लेकर इस प्रान्तके लोग बहुत ही उत्तेजित हैं, गांधीजी से उनके विचार पूछे।

गांधीजी ने एक अर्थपूर्ण हँसीके साथ और अपने सिरको थोड़ा हिलाते हुए कहा :

अब आप मुझे मेरी सीमासे बाहर खींचनेकी कोशिश कर रहे हैं। इस सवालका जवाब ३ अगस्तसे पहले नहीं दिया जायेगा।

पर आप राजनैतिक विचार-विमर्शमें भाग लेते रहे हैं।

हाँ, लेकिन वह सार्वजनिक उपयोगके लिए नहीं था। मुझे खुशी है कि अब इस बातका जिक्र आया है; और इस तरह मुझे इस बातपर खेद प्रकट करनेका मौका मिला है कि कांग्रेसकी खालिकदीन हॉलमें हुई सभामें जिन युवा पत्रकारोंको उपस्थित होनेकी अनुमति दे दी गई थी, उन्होंने विश्वासघात किया है। मैंने उनसे यह कह दिया था कि [मीटिंगकी] कार्रवाईकी कोई रिपोर्ट नहीं देनी है। अनधिकृत वक्तव्योंकी रिपोर्ट देना, मेरे खयालमें, विश्वासघात ही है और मैं ऐसा महसूस करता हूँ कि जिन्होंने अपना वचन तोड़ा है, उन्होंने पत्रकारिताके मूल शिष्टाचारका उल्लंघन किया है, जो बहुत ही अनुचित है। पत्रकारिताके बारेमें मेरी काफी ऊँची धारणा है।

हरिजन-आन्दोलनने क्या समाजको राष्ट्रीय राजनीतिसे भटका नहीं दिया है?

नहीं, लेशमात्र भी नहीं। कुछ लोगोंने जन-मानसको सच्ची राजनीतिसे भटकानेके लिए इस आन्दोलनको एक आड़ बनाया है। जैसाकि सभीको मालूम है, मेरा विश्वास सत्यको अलग-अलग खण्डोंमें विभाजित करनेमें नहीं है। राजनीति, धर्म, सामाजिक सुधार, आर्थिक उन्नति — ये सब एक ही इकाईके अंग हैं।

१. देखिए पृ० १४८-५०।

जिन आलोचकोंका यह विचार है कि कौंसिल-प्रवेश दुर्बलताके प्रति एक रियायत है और गांधीजी की इस तरहके कार्यक्रममें कोई हार्दिक आस्था नहीं है, उन्हें उत्तर देते हुए महात्माजी ने कहा :

मुझमें इस तरहकी कोई अहंमन्यता नही है। यह दुर्बलताके प्रति रियायत नही है। यह ठोस तथ्योके प्रति रियायत है। यह अलग बात है कि स्वराज्यकी दृष्टिसे कौसिल-कार्यक्रममें मेरी अपनी कोई आस्था नही है। कौंसिल-प्रवेशमें जिनकी आस्था है, उन्हें मेरा कोई कार्य यदि अपनी आस्थानुसार काम करनेसे रोकता है, तो यह मेरे लिए दुःखकी बात है। इसलिए जिन काग्रेसियोकी कौसिल प्रवेश-कार्यक्रममें आस्था है, उनकी अपनी नीतिके अनुसरणमें सहायता करना मेरे लिए खुशीकी बात है।

बातचीत फिर साम्प्रदायिक समझौतेकी ओर मुड़ गई। यह पूछनेपर कि कांग्रेस कार्यकारिणी समितिकी बनारसकी बैठकमें आपका रुख क्या रहेगा, गांधीजी ने कहा :

पडित मालवीय, बापूजी अणे और कुछ अन्य लोग कार्यकारिणी समितिके प्रस्ताव पर खिन्न है। जहाँतक मेरा सवाल है, मुझे कोई ऐसी चीज दिखाई नही दी है जिससे मै अपना दृष्टिकोण बदलूं। कार्यकारिणी समितिके प्रस्तावको मै सही मानता हूँ और अपने इस विश्वासपर दृढ रहते हुए, मै पण्डितजी और अन्य मित्रोका बहुमूल्य सहयोग अपने साथ रखनेके लिए किसी भी दूरीतक जा सकूंगा। कार्यकारिणी समितिके प्रस्तावपर मै जितना सोचता हूँ, उतना ही मेरा यह विचार पक्का होता जाता है कि काग्रेसके लिए केवल यही एक रुख सही और सम्भव है।

श्री पुन्नियाने कहा कि उपवासका यह बम देशपर उस समय पड़ा है जब उसे पहले ही से यह डर है कि यदि पण्डित जवाहरलाल नेहरू, खान अब्दुल गफ्फार खाँ और सरदार वल्लभभाई पटेलको रिहा नहीं किया गया, तो ३ अगस्तके बाद आप फिर जेल जा सकते हैं। जनता आपसे यह आश्वासन चाहती है कि आप फिर जेल नहीं जायेंगे, क्योंकि बहुत-सारे महत्त्वपूर्ण राष्ट्रीय कार्योपर ध्यान देनेकी जरूरत है।

मै पूरी ईमानदारीसे यह कहता हूँ कि यह चीज मेरे हाथमें बिलकुल नही है। इससे मेरा मतलब यह नही है कि यह चीज सरकारके हाथमें है, यद्यपि कुछ हदतक ऐसा कहना सच होगा। परन्तु, इस समय मै जो कहना चाहता हूँ, वह यह है कि यह चीज निश्चित रूपसे ईश्वरके हाथमें है। उपवास और उसके समाप्त होने पर पुनः स्वास्थ्य-लाभके बाद मुझे क्या करना चाहिए, इसकी अभी मेरे मनमें कोई निश्चित धारणा नही है। मै जब आपसे यह कहता हूँ कि मै अपनी अन्तरात्माकी आवाजसे ही निर्देशित होऊँगा तो आपको मेरी बातपर पूरी तरह यकीन करना चाहिए।

एक पत्रकारके प्रश्नके उत्तरमें उन्होंने कहा :

सिंधके दौरेसे मुझे बड़ी खुशी हुई है। पर यदि मै ज्यादा धन इकट्ठा कर पाता तो मुझे और ज्यादा खुशी होती।[1]

१. इससे आगेका अंश ट्रिब्यून, १३-७-१९३४ से लिया गया है, जिसमें बताया गया था कि भेंट-स्थलपर ही तीस रुपये एकत्र किये गये और गांधीजी को दे दिये गये।

आपको जो थोड़ा-बहुत मिलता है, मैं उससे आपको वंचित करना नहीं चाहता हूँ। इसलिए आप कमसे-कम मुझे अपनी पेंसिलें ही दे दीजिए।

[अंग्रेजीसे]

ट्रिब्यून, १३-७-१९३४ और १५-७-१९३४

१९३. भाषण : पारसियोंकी सभा, कराचीमें[1]

११ जुलाई, १९३४

आपके यहाँ आता हूँ तो मुझे कभी ऐसा लगता ही नही कि मै मेहमान हूँ। पारसियोंमें जाता हूँ तो मुझे यही लगता है कि अपने कुटुम्बियोमें जा रहा हूँ। पारसियोके साथ मेरा यह निकट-सम्बन्ध बहुत समयसे चला आ रहा है। यह सम्बन्ध मैंने ही स्थापित किया हो, ऐसा नही है। अपने बड़े-बूढ़ोसे यह मुझे विरासतमें मिला है। कई पारसी मेरे पूज्य पिताके अन्तरंग मित्र थे। आपसे मैंने रुपया लिया है, किन्तु वह तो आप सारे संसारको देते हैं। संसारमें प्रथम श्रेणीके दानियों के रूपमें आपकी ख्याति है। यह प्रमाण-पत्र आपको किसी पारसीने नही, एक अंग्रेजी-लेखकने दिया है। आप सदा इस प्रमाण-पत्रकी सार्थकता सिद्ध करते आये हैं। किन्तु मुझे तो आपने पैसेसे कुछ अधिक दिया है, मैंने आपका प्रेम पाया है। पारसियोके हृदयमें मेरे लिए हमेशा स्थान है, यह मैंने मान लिया है। झूठ-मूठ भी मुझे पारसी सभा अथवा परिवारमें बुलाया जाये, तब भी मैं जाऊँगा। आपसे सार्वजनिक सेवा ज़ब भी लेना चाहूँगा, ले सकूँगा, ऐसा मुझे विश्वास रहा है। इसलिए इस बार भी मेरे लिए आपके निमन्त्रण की उपेक्षा कर सकना सम्भव नहीं था। भाई सिधवा[2]ने आपको बताया कि मेरी शारीरिक तथा मानसिक स्थिति ऐसी नही है कि सभा-समाजो में जाऊँ। मुझे कही जाना अच्छा नही लगता। घरमें बैठकर काम करना अच्छा लगता है। पैदल चलनेका मौका आये, तो गाँवोमें घूम-घूमकर हरिजन-सेवाकी बातें तथा सन्देश फैलाते हुए मुझे सन्तोष होता है। किन्तु आपके निमन्त्रणकी अवहेलना मैं नही कर सका।

इतना कहकर अब मै आपसे जो काम कराना चाहता हूँ, उसपर आऊँ। इसका थोड़ा-बहुत परिचय अध्यक्ष महोदयने आपको दिया है। यहाँ जो कार्यक्रम चल रहे हैं, उनमें से दो ही को चुनकर उन्होंने उनका विवेचन किया। उन्होने बताया कि मैं आपसे खादी और मद्यनिषेध, ये दो ही काम चाहता हूँ। ये दोनों बातें आपके समझ लेने योग्य हैं। आपको दानमें पैसा देनेकी आदत पड़ी है, तो वह तो आप देंगे ही। किन्तु जिस बातकी आदत पड़ जाती है, वह फिर गुण नही मानी जाती।

१. यह सभा "जहाँगीर राजकोटवाला गार्डेन्स"में हुई थी और यह भाषण "कराचीके पारसियोंसे" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

२. आर० के० सिधवा, पारसी राजकीय मंडलके सचिव। उन्होंने मंडलके कार्योंका ब्यौरा दिया।

कोई मनुष्य रोज सच बोले, तो उसकी यह बात उसका गुण नही होती, स्वभाव होता है। पैसा देना, यह तो आपका स्वभाव हो गया है। इससे अधिक कुछ करें, तो विशेष माना जाये। इसलिए पिछली बार जब मैं आपके पास आया था, तब मैंने आपसे कहा था कि यदि सच्चा दान करना हो तो आपको अपने शौक बदलने चाहिए। समूचे संसारमें आपकी जनसंख्या कुल एक लाख है। सभी हिन्दुस्तानमें हैं, और उनमें से भी अधिकांश बम्बई और गुजरातमें है। करोड़ों रुपयोंका व्यापार करनेवाले आप लोग स्वभावतः शहरोमें बसे हुए हैं। बम्बई और कराची में आपका प्रभाव अधिक देखनेमें आता है। किन्तु गाँवोमें? वहाँ आपकी छाप नही दिखाई देती; न दिखना स्वाभाविक है। सात लाख गाँवोमें पारसी जायें तो खो जायें, क्योकि अनुपात प्रति सात गाँव एक पारसी पडेगा। फिर, स्त्री-पुरुष और बालक मिलकर आपकी जनसंख्या एक लाखकी है। अतः आप लोग गाँव-गाँव नही जा सकते, किन्तु गाँवमें अपना प्रभाव तो फैला सकते हैं।

गाँवके लोग जो खादी तैयार करते हैं, वह हिन्दुओ और मुसलमानोके लिए ही नही, पारसियोके लिए भी तैयार करते हैं। अतः आप खादीका प्रयोग करके गाँवके साथ सम्बन्ध स्थापित कर सकते हैं, उनके ऊपर प्रभाव डाल सकते हैं। आपको मालूम है कि उत्कलमें भाई-बहन चार-पाँच मील चलकर एक पैसेका चावल लेने अथवा काम पानेके लिए आते हैं। आप जरा सोचकर देखें कि उनकी क्या स्थिति होगी। आज उत्कलसे मेरे पास एक पत्र आया है, जिसमें लिखा है कि खादी का काम तो यहाँ बहुत हो सकता है, किन्तु काम करनेवाले कहाँ से लाये जायें। और वह खादी लेगा कौन? मेरे पास तो यह धोती है, उत्कलके उन लोगोके पास तो धोती भी नही है। वे जो पहनते हैं, उसे तो धोती भी नही कहा जा सकता, वह तो चिंदी होती है। वे लोग स्नान भी क्वचित् ही कर सकते हैं। स्नान करके बदलनेके लिए कपड़ा चाहिए न? उन्होने तो जो एक लंगोटी पहन ली सो पहन ली। लाखों लोग ऐसी हालतमें हैं। उन्हें मैं एक पैसेका काम दे सकूँ, तो उन्हें कुछ तो मिले। उत्कलमें मुझसे दस हजार बुनकरोके प्रतिनिधियोने भेंट की थी। उन्होने मुझसे कहा कि हम लोग कपडा बुनते है, पर उसे कोई लेता नही। ये बुनकर मिल का सूत बुनते थे। मुझे उनसे कहना पड़ा कि आप हाथके सूतकी खादी बुनें, तो मैं तुम्हारा ग्राहक हो जाऊँगा। दूसरी बात मैंने उनसे यह कही कि आपको स्वयम् ही कातना होगा। जहाँ ऐसी दीन स्थिति तथा भुखमरी है कि लोग एक पैसेकी मजदूरी अथवा दान लेने निकल पड़ते हैं, वहाँ आप क्या दान देंगे? नकद पैसेसे उनकी भूख नही मिटेगी, साथ ही वे अपाहिज हो जायेंगे। जिसके हाथ-पाँव चलते हैं, उसे दानमें पैसा देना उचित नही हो सकता। उसे तो काम ही दिया जाना चाहिए। अतः उनसे कहा गया कि काम करो और दाम लो, और उससे सस्ते भावके चावल ले जाओ। यह चावल हम उन्हें कुछ घाटा उठाकर देते हैं। हम इतना कर सकते हैं और इतना किया गया है। अनेक लोगोने भिक्षा नही ली, काम ही लिया। ऐसा शुद्ध दान मैं आपसे माँगता हूँ। आपने पैसे तो दिये और देंगे भी,

किन्तु इससे मेरा पेट नहीं भरेगा। मेरा पेट तो तभी भरेगा जब आप दरिद्रनारायण का पेट भरेंगे। वे आपके पास भिक्षा माँगने नहीं आयेंगे, उन्हें तो आप काम दीजिए।

करोड़ों आदमियोंको क्या काम दिया जा सकता है? उनके लिए तो कोई घरेलू उद्योग चाहिए और यह उद्योग चरखेका ही है। करोड़ों आदमी जो खादी पैदा करें, वह आप ले, तो काम बन सकता है। यहाँके खादीभण्डारमें जाकर देखें तो वहाँ आपको जैसी चाहिए वैसी रंगीन और महीन खादी मिल सकेगी। कोई पारसी बहन ऐसा नहीं कह सकती कि जैसी हमें चाहिए और शोभा दे, वैसी खादी नहीं मिलती। आप शायद भूल गये हों, अथवा न जानते हो तो मैं आपको बता दूं कि बम्बईमें ७५ पारसी बहनें खादीपर कशीदेका काम करके अपना गुजारा करती हैं। दादाभाईकी नातिनें इन बहनोंसे यह काम कराती हैं। मीठूबहन पेटिट भी ऐसा ही काम कराती हैं। वे तो गाँवोंमें भी पहुँच गई हैं। बम्बईमें यह काम करनेवाली पारसी बहनें इस कामसे एक, दो, तीन रुपयेतक कमा लेती हैं।

वे खादीपर डिजाइन छापना आदि काम करती हैं और उसे ऐसा बना देती हैं कि शौकीन-से-शौकीन स्त्रियोंको भी पसन्द आ जाये। आप इनकी मदद कर सकती हैं। खादीके बारेमें बोलते हुए भाई सिधवाने बताया कि आप बहनें विदेशी कपड़ा नहीं लेतीं, देशी मिलका लेती हैं। इससे तो आप करोड़पतियोंका घर भरती हैं। मैं आपके पास करोड़पतियोंके लिए भिक्षा माँगने नहीं आया। मैं तो आपके पास दरिद्रनारायणका प्रतिनिधि बनकर आपसे दान माँगने आया हूँ और वह दान भी पैसेका नहीं। आप इन गरीबोंकी कारीगरीकी कद्र करें और इनकी बुनी हुई खादी पहनकर शोभित हों।

दूसरी बात भाई सिधवाने शराबकी बताई। आपके मंडलका विवरण मेरे हाथमें आया तो मैंने देखा कि आप लोगोंमें शराब ८० फी सदी बन्द हो गई है। तब तो मेरा मन नाच उठा। लेकिन अब सुनता हूँ ८० फी सदी का अर्थ यह है कि विवाह और नवजोत[1] के अवसरोंपर शराब बन्द हो गई है। मैंने आशा की थी कि घरमें भी बन्द हो गई होगी। घरमें न बन्द हुई हो तो मुझे यह सन्तोष नहीं होगा कि जितना हुआ उतना ठीक है। शराबका दोष घरमें से निकल जाये, तभी कहा जायेगा कि काम पूरा हुआ। अनेक पारसी मुझसे कहते हैं कि ताड़ीमें नुकसान नहीं होता, फायदा होता है। कुछ ऐसा भी कहते हैं कि व्हिस्कीमें अधिक अलकोहल होती है, जबकि बियरमें कम होती है, और ताजी हो, तब तो और भी कम। इस तरह बियर पीनेवाले भी अपने मनको धोखेमें रखते हैं। व्हिस्की और बियर, दोनोंके पीनेवालोंको मैंने नशेमें धुत देखा है। ताड़ी न पीनेवाले रोगी हो जाते हैं और ताड़ी पीनेवालोंको डॉक्टरके यहाँ नहीं जाना पड़ता, ऐसा थोड़े ही है। ताड़ी पीनेवाले अनेक पारसी मित्रोंके यहाँ मैंने दवाकी शीशियोंका ढेर देखा है। अतः मैं पारसियोंसे प्रार्थना करता हूँ, और जबतक जिन्दा रहूँगा करता रहूँगा, कि आप लोग

१. पारसियोंका धार्मिक संस्कार जिसमें लड़के या लड़कीको जनेऊ दिया जाता है।

इस बुराईको छोड़ दीजिए। यदि सामान्य पारसी शराब छोड़ दें तो जो पारसी भाई शराबके धन्धेसे जीविका प्राप्त करते हैं, वे भी समझ जायेंगे। आप लोगोमें साहस है। जब आप यह समझ जायेंगे कि यह धन्धा करने योग्य नही है तो दूसरा धन्धा करेंगे। पारसी कौममें अन्वेषणकी शक्ति, साहस अथवा पुरुषार्थ नही है, यह मेरा मन स्वीकार नहीं करता। दूसरे जहाँ रास्ता नही निकाल सकते, वहाँ आप निकाल सकते है।

आपने हरिजन-सेवाके लिए ३५२ रुपये मुझे दिये है। एक तरह से इस कामके लिए आपसे पैसा माँगनेका मुझे अधिकार नही है। सभी बातोमें मै आपसे पैसा माँगता हूँ। किन्तु इस कामके लिए, जो केवल हिन्दुओंका है, आपसे पैसा लेता हूँ, तो इसका अर्थ दूसरा है। इस कार्यक्रमका सीधा अर्थ है पाँच करोड़ मनुष्योकी अस्पृश्यता मिटाना। हिन्दू-धर्ममें यह सड़ाँध इतनी फैल गई है कि औरोको भी इसकी छूत लग गई है और अस्पृश्यता व्यापक हो गई है। कई समझदार पारसी मेरे पास आते है और मुझसे कहते है कि ऊँच-नीचके भेद तो चले ही आ रहे है, अतः यह काम आप मत कीजिए। तब मैं उनसे कहता हूँ, "आप ऐसे वेदान्ती कबसे बन गये? आपने हिन्दू-शास्त्र कब पढ़ लिये?। कुछ शास्त्र पढे होगे। पारसी भी [हिन्दू] ज्योतिषीके पास जाते है। सम्भव है, उन पंडितोने उन्हें कुछ बताया हो। उसीसे इन भाइयोने मान लिया कि ऊँच-नीचके भेद तो अनादि कालसे चले आ रहे है। अस्पृश्यता जरथुस्त पैगम्बरकी कही हुई बात थोड़े ही है। ऊँच-नीचकी भावना एक आसुरी चीज है; यह ईश्वरीय वस्तु हो ही नही सकती। हिन्दू-धर्ममें धर्मके नाम पर यह ढोंग चलता आ रहा है और यह सब धर्मोमें प्रवेश कर गया है। इन्ही धर्मोमें हिन्दुस्तानके बाहर इसकी गन्ध भी नही होती। किन्तु यहाँ आते ही यह उनमें प्रवेश कर जाता है। ऐसा यह एक अन्धा कुँआ है। अस्पृश्यता मिटानेका दूसरा और व्यापक अर्थ है, संसारमें भ्रातृभाव फैलाना और सब धर्मोका एकीकरण करना। यह नहीं कि धर्मोका बहुवचन मिटाकर एकवचन कर दिया जाये। जैसे मनुष्योके नाम अलग, चेहरे अलग, वैसे ही धर्म भी अलग-अलग है। किन्तु जैसे नाम और रूप अलग होते हुए भी मनुष्य मनुष्यके रूपमें एक ही है, जैसे पेड़के पत्ते अलग-अलग होते हुए भी पत्तेके रूपमें एक ही है, उसी प्रकार धर्म भी अलग-अलग होते हुए भी एक है। सबके प्रति समान भाव रखना चाहिए। मैंने इस कार्यक्रमके बड़े भव्य परिणामकी कल्पना की है। अन्यथा इस कामके लिए अपना जीवन अर्पित करनेको मै तैयार न होता। मै ऐसा मूर्ख या पागल नही हूँ कि व्यर्थके कामके लिए जीवन अर्पित करनेको तैयार हो जाऊँ, ६५ वर्षकी उम्रमें गाँव-गाँव घूमूँ, और दो-दो पैसे एक-एक पैसेकी भीख माँगूँ। यह जो काम मैंने उठाया है, इसमें पाँच करोड लोगोकी मुक्तिके लिए सवर्ण हिन्दुओके हृदयोंको, जो पत्थर-जैसे कठोर हो गये है, पिघलाना है। जो ये पिघलें, तो अस्पृश्यता, जिसकी जड़ें गहरी पैठी हुई है और जिसका प्रभाव व्यापक हो गया है, मिट जाये। ऐसे व्यापक कामके लिए आपसे पैसा लेते हुए मुझे संकोच नही होता, न शर्म आती है।

अस्पृश्यता-निवारणका आपके लिए क्या अर्थ है, यह मैंने आपको बताया। आपके दिये हुए पैसे तो मैं ले ही जा रहा हूँ। किन्तु साथ ही पारसी भाई-बहनोंके हृदय भी ले जाना चाहता हूँ और आपके आशीर्वाद भी चाहता हूँ कि भगवान इस काममें जल्दी ही सफलता प्रदान करे।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २२-७-१९३४

१९४. पत्र : मीराबहनको

१२ जुलाई, १९३४

चि० मीरा,

पत्र चलती गाड़ीमें लिख रहा हूँ।

आशा है, उनके महाजनके नामका अधिकार-पत्र तुम्हें मिल गया होगा। वह कितनी राशिका था, यह मुझे नहीं मालूम। यथासमय अपनी जरूरत मुझे बताती रहना।

कमसे-कम अगस्त-भर तो मैं खाली हूँ ही। आगेके बारेमें अभी कुछ साफ नहीं है और इसके लिए मैं परेशान भी नहीं हूँ। आगे क्या करना है, ईश्वर सुझायेगा ही। २५ अगस्तको एन्ड्रयूज आनेवाले हैं।

अपना स्वास्थ्य ठीक रखना। तुम्हारे इंग्लैंडके दौरेका अगर कोई प्रत्यक्ष परिणाम सामने नहीं आया, तो यह न समझना कि मैं चिन्ता करूँगा। तुम जो अनुभव प्राप्त करोगी, मेरे लिए वही परिणाम काफी है। अतः काम न सधे तो अपनेसे अथवा आसपासके लोगोंसे खिन्न मत होना।

मैं बिलकुल ठीक हूँ। थकान है; लेकिन और कोई खास बात नहीं है।

सस्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६१९१) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७५७ से भी।

१९५. भेंट : 'ट्रिब्यून' के प्रतिनिधिको[1]

१२ जुलाई, १९३४

महात्माजी बहुत थक गये थे। वे पहले भेंट देते हुए हिचकिचा रहे थे। उन्होंने कहा कि मैं ज्यादा दौरा करनेसे थक-सा गया हूँ और इस वजहसे मेरा दिमाग काम नहीं कर रहा है। लेकिन पंजाबके लोगोंको सन्देश देनेके लिए जब आग्रह किया गया तो उन्होंने कहा :

मै चाहता हूँ कि मुझे कुछ बोलना न पडे, क्योकि लाहौरमें मुझे काफी तकलीफ हुई। सभी स्टेशनोपर भयानक शोरगुलसे मेरा स्वागत हुआ। उससे मेरी धमनियाँ झनझना रही है और वे यह बोझ उठानेके काबिल नही रही है। फिर मैं जिस आवश्यक भाईचारेके सन्देशका प्रचार करनेका प्रयत्न कर रहा हूँ, यह शोरगुल उसके उपयुक्त नही है। मै उस सन्देशके उपयुक्त वातावरणका प्यासा हूँ।

[अंग्रेजीसे]
ट्रिब्यून, १४-७-१९३४

१९६. तार : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको

[१३ जुलाई, १९३४ से पूर्व][2]

आपका तार मिला। बड़ी कृपा की। कलकत्ता जाना निहायत जरूरी है। मित्रगण घरेलू झगडेको निपटानेके लिए उत्सुक है। सभी तारीखोंमें व्यस्त हूँ। क्षमाप्रार्थी हूँ।

गांधी

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १४-७-१९३४

१. विशेष संवाददातासे गांधीजी की मुलाकात गाडीमें हुई थी; वह समस्तासे लाहौरतक उनके साथ आया था।

२. रवीन्द्रनाथ ठाकुरको मिलनेपर तार अखबारमें "शान्ति निकेतन, १३ जुलाई, १९३४" तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

१९७. पत्र : उत्तमचन्द शाहको

१३ जुलाई, १९३४

चि० उत्तमचन्द,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम या अन्य साथी कुछ भी करें, उसकी आलोचना करने को मेरा मन इस समय नहीं होता। ये सब जिस प्रकार बिखर गये हैं, शायद इसी प्रकार इन्हें सचमुच एकत्र होना है, होंगे। जो ईमानदारीसे एक कौड़ी भी कमायेगा, वह अवश्य ही इस प्रकार सेवा करेगा। तुम तो निश्चिन्त होकर वहाँ रहो, और अपना स्वास्थ्य सुधारो। समय आये, तब आ जाना। मेरे उपवासकी चिन्ता क्यों करते हो?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४४२) से।

१९८. भेंट : प्रान्तके कांग्रेसी नेताओंको

लाहौर
१३ जुलाई, १९३४

प्रान्तके कांग्रेसी नेता गांधीजी से मिले। इन नेताओंमें अम्बालाके लाला दुनीचन्द, रायजादा हंसराज और लाला श्यामलाल भी शामिल थे। अनेक सवालोंके साथ पुनर्गठनकी नई योजनामें अवांछनीय तत्त्वोंको कांग्रेससे अलग कर देनेके सवालपर भी बातचीत हुई। गांधीजी ने ऐसे तत्त्वोंकी मौजूदगीको स्वीकार तो किया, लेकिन कांग्रेसके वर्तमान संविधानके अधीन इन अवांछनीय तत्त्वोंको कांग्रेसके सदस्य बननेसे कैसे रोका जाये, यह उनकी समझमें नहीं आया। उनकी समझमें एक ही रास्ता ऐसा है जिससे इन तत्त्वोंपर नियन्त्रण रखा जा सकता है और वह है कांग्रेसके अन्दर अच्छे तत्त्वोंको शक्तिशाली बनाना।

इसी बीच गांधीजी ने बताया कि पण्डित जवाहरलाल नेहरूके अनुरोधपर एक ऐसा नियम बनाया गया था जिससे कांग्रेस-अनुशासनके विरुद्ध काम करनेपर पदाधिकारीको कांग्रेससे हटाया जा सके।

इसके बाद कांग्रेसके कार्यकर्त्ताओं और नेताओंके बीच सहयोगकी कमीके बारेमें बातचीत हुई। गांधीजी ने कहा कि यह कमी तभी दूर हो सकती है जब कांग्रेसके कार्यकर्त्ताओंका आचरण बहुत ऊँचा हो और उनमें सेवाकी नेक भावनाका विकास हो।

इसके बाद गांधीजी से पूछा गया कि कांग्रेसके लिए शक्ति, प्रभाव और प्रतिष्ठा किस तरह अर्जित की जा सकती है, जिससे वह देशमें प्रतिक्रियावादी और विरोधी ताकतोंसे टक्कर ले सके। यह सुझाव दिया गया था कि अगर देश उच्च कोटिके लोगोंको संविधान-सभामें भजता है तो कांग्रेसको विशेष प्रतिष्ठा प्राप्त होगी और इसका प्रभाव बढ़ेगा। गांधीजी ने इसे माना, लेकिन उन्होंने इस बातपर ज्यादा जोर दिया कि परिषदमें कांग्रेसको अपनी सेवा और कार्यके बल-बूतेपर प्रभाव और प्रतिष्ठा अर्जित करनी चाहिए।

इसके बाद हर प्रान्तके लिए भारी संख्यामें वैतनिक कार्यकर्त्ता नियुक्त करनेके बारेमें सवाल पूछा गया। गांधीजी इस प्रस्तावसे सहमत थे कि कांग्रेसके कार्यको चलानेके लिए हर प्रान्तमें भारी संख्यामें वैतनिक कार्यकर्त्ता रखे जाने चाहिए। कहा गया कि कुछ हदतक कांग्रेसके अखिल भारतीय और प्रान्तीय संगठनोंमें पहलेसे ही वैतनिक लोग मौजूद हैं, वैसे इनकी संख्या थोड़ी ही है। गांधीजी से निवेदन किया गया कि वैतनिक कार्यकर्त्ताओंके बारेमें जनतामें जो गलतफहमी है, वे उसे दूर करें। गांधीजी ने कहा कि यद्यपि वे इस विषयपर पहले लिख चुके हैं, तो भी पुनः लिखेंगे।

साम्प्रदायिक निर्णयका सवाल भी उठा। यह सुझाया गया कि अगर साम्प्रदायिक निर्णय एक निष्पादित तथ्य बन गया और इसपर आधारित विधेयकने संवैधानिक कानूनका रूप ले लिया, तो भविष्यकी किसी भी राष्ट्रीय सरकारके लिए, तबतक इसके जो दुष्परिणाम हो चुकेंगे, उन्हें मिटाना बहुत मुश्किल हो जायेगा। गांधीजी ने कहा कि साम्प्रदायिक निर्णयको कार्यान्वित करनेपर जो बुराइयाँ होंगी, उनका उन्हें एहसास है। पर जबतक सभी सम्बन्धित दल एक मान्य योजनापर सहमत नहीं होते, इस समस्याका समाधान उनकी समझसे परे है।

[अंग्रेजीसे]
ट्रिब्यून, १५-७-१९३४

१९९. भेंट : हरिजन-शिष्टमण्डलको

लाहौर
१३ जुलाई, १९३४

हरिजन-शिष्टमण्डल आज दोपहर बाद महात्माजी से मिला। शिष्टमण्डलको उन्होंने बताया कि वे मजदूरोंके लिए दिल्लीमें एक गृह-निर्माणकी योजनाको पुख्ता करनेमें लगे हैं।

सुझाव दिया गया था कि हरिजन संघको चाहिए कि वह पंजाब भूमि स्वामित्व हस्तान्तरण-अधिनियमको समाप्त करनेके लिए आन्दोलन करे। इस सुझावके सन्दर्भमें गांधीजी ने कहा कि चूंकि हरिजन संघ अराजनैतिक समाज-सुधार संस्था है,

इसलिए वह इस तरहका कोई काम नहीं कर सकता और इस तरहके राजनैतिक मामलोंमें वह सरकारसे नहीं झगड़ेगा।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १४-७-१९३४

२००. भाषण: विद्यार्थियोंकी सभा, लाहौरमें[1]

१३ जुलाई, १९३४

आपने मुझे जो मानपत्र और थैली दी, उसके लिए मैं आप सभीका आभारी हूँ। जिस बातका मुझे डर था, वही हुआ। यह सभा केवल विद्यार्थियोके लिए बुलाई गई थी, परन्तु आम जनता भी इसमें आई है। यह उचित नही है। कल भी जब मैंने बहुत भीड़-भाड़ देखी तो मुझे डर हो गया था कि मेरी कार रास्तेमें ही खराब हो जायेगी। जिस कामके लिए पन्द्रह मिनट ही काफी थे उसीपर आपने मेरा सवा घंटा बरबाद किया। इसलिए आगेसे जिनके लिए सभा बुलाई जाये, केवल वे ही लोग उसमें आयें। हरिजन-सेवा धार्मिक कार्य है, अतः केवल तपस्या द्वारा ही इसे पूरा किया जा सकता है। यह कार्य केवल शान्त वातावरणमें ही किया जा सकता है। शायद पंजाबमें मेरा यह आखिरी दौरा है, क्योकि मै यहाँ फिर नही आ सकूँगा। अतः अपनी इस यात्रामें मै आपको जितना प्रभावित कर सकूँ, करना चाहूँगा। मैं उन सभी विद्यार्थियोको धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने हरिजन-सेवाके कार्यमें रुचि दिखाई है।[2]

आप लोगोंने दोनो मानपत्रोमें नम्रतापूर्वक जो अपनी त्रुटियाँ स्वीकार की है, इसके लिए मै आपको जितना धन्यवाद दूँ उतना कम है। ज्ञान प्राप्त करनेके लिए भी अपने अज्ञानका भान होना चाहिए और उसे नम्रतापूर्वक स्वीकार करना चाहिए। आज जो कार्यक्रम चल रहा है, उसकी मर्यादाको, उसकी शर्तोको आप समझें। इस कार्यक्रममें यहाँके कॉलेजके पर्याप्त विद्यार्थी भाग लेते हैं; इसके लिए मै उन्हें धन्यवाद देता हूँ और आशा करता हूँ कि वे और अधिक भाग लेगे। जैसाकि मैंने कराचीके विद्यार्थियोसे कहा था,[3] यह काम त्यागसे, तपस्यासे, तथा कष्ट भोगकर ही हो सकता है, और उसे भी मुख्यत. शहरोंमें नही, गाँवोमें करना है। आपने कहा कि आप हरिजनोंको अपनाना चाहते हैं, तथा हरिजनोके प्रति भेदभाव नही रखते। यदि यह सच है तो आप हरिजनोके प्रति अपने धर्मका पालन करें। इतना ही काफी नही है कि स्कूल और कॉलेजमें आप हरिजन लड़कोंके साथ समानताका व्यवहार करें। आपका कर्तव्य तो यह है कि आप गाँवोंमें हरिजनोके पास जायें, उन्हें अपनायें और उनके साथ स्नेहका सम्बन्ध जोड़ें। वहाँ जायेंगे तो आपको मालूम होगा कि

१. यह भाषण 'सेवार्थ विद्या' शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

२. यह अनुच्छेद **हरिजन-सेवक**, २०-७-१९३४ से लिया गया है।

३. देखिए पृ० १६९-७४।

उन लोगोंको शौचाचारके नियमोका ज्ञान कम है। उनमें से कितने ही शराब पीते हैं, मुर्दार-माँस खाते हैं। उनके पास जाकर उन्हे समझाना होगा। यह कैसे हो सकता है? साहब बनकर जानेसे नही होगा। इसके लिए तो सादगीसे, नम्रता धारण करके जाना होगा। इस काममें कॉलेजमें मिलनेवाली शिक्षाका उपयोग बहुत कम है। उनके पास तो आप शिष्टता, धार्मिकता, सत्यशीलता तथा ब्रह्मचर्यकी सुगन्ध लेकर जायेंगे, तो उनपर अधिक प्रभाव डाल सकेंगे। उनपर हुक्म चलाने अथवा अपना बड़प्पन दिखानेसे काम नही बनेगा। उनके सेवक, उनके खिदमतगार बनकर और मैंने जो शर्तें बताई हैं, उनके पालनसे ही काम बन सकेगा। इसके लिए आप अपने अध्ययनसे बचा हुआ समय दें, तब भी कोई हर्ज नही।

अस्पृश्यताका अन्त नही हुआ, तो एक दिन हिन्दू-धर्म और हिन्दू-जातिका नाम-भर शेष रह जायेगा। यह अधर्म, यह कलंक, यह जहर इतना जबर्दस्त है और इतने समयसे चला आ रहा है कि हम इसका जहरीला असर देख भी नही पाते, और यह हमें खाये जा रहा है। मेरे-जैसा मनुष्य बिना चश्मेकी आँखोसे देखता है कि हिन्दू-धर्मका नाश अब हुआ, तब हुआ। यह जहर हरिजनोतक ही सीमित नही है। छ: करोड़ लोगोपर तो इसका प्रभाव पड़ा ही है, सवर्ण हिन्दुओंमें भी यह फैल गया है। यह दूसरी जातियोंमें — मुसलमान, ईसाई आदि जो हमारे सम्पर्कमें आते हैं — उनमें भी फैल जाता है। ऊँच-नीचका यह भाव मिटाना हमारे लिए बड़ी और आवश्यक बात है।

यदि हम यह काम करना चाहे तो इसके लिए दो शर्तें हैं। आपने मुझे बताया कि आप आरामसे रहते हैं, दिन-रात इम्तिहानकी फिक्र करते हैं, किन्तु इस सबसे जो मिलता है, उससे आपको सन्तोष नही है और आप इस स्थितिको सुधारना चाहते हैं। मै आपसे यह नही कहता कि आप यह सब स्वीकार करते है तो स्कूल और कॉलेज खाली कर दीजिए। स्कूल अथवा कॉलेजमें रहकर भी, जो शिक्षा वहाँ नही मिलती, सो लीजिए और वहाँकी शिक्षाको अधिक पूर्ण बनाइए। आज इनमें रहकर विद्यार्थीका मस्तिष्क तेजस्वी नही रहता, और वह अनुकरण ही कर पाता है। इसके विपरीत, उसमें मौलिक चिन्तन करनेकी शक्ति आनी चाहिए। हम संसारमें पैदा हुए हैं तो सुख-भोगके लिए नही, वरन् त्यागके लिए, संयमके लिए। शिक्षाका उद्देश्य भी यही है कि हम ईश्वरको पहचानें, आदर्शकी दिशामें आगे बढ़ें और ईश्वरके निकट जायें। ईश्वरका कठोर नियम है कि जिसे ईश्वरके निकट जाना हो, उसे संसारका त्याग करके संसारमें रहना चाहिए? ऐसा ईशोपनिषद्का पहला मन्त्र सिखाता है। यह बात कठिन है, किन्तु सरल भी है। जीवन सेवाके लिए है, यह मान लें तो यह बात सरल हो जाती है। हम जो विद्या प्राप्त कर रहे हैं, वह भोगके लिए अथवा कमाईके लिए नही है, वह मुक्तिके लिए है। अन्धकारसे, भोगसे, स्वेच्छाचारसे बचनेके लिए विद्याकी आवश्यकता मानी गई है। यह हम समझ लें तो जो ज्ञान हमें प्राप्त होता है, उसका सदुपयोग हो। इतना समझेंगे तो आप इम्तिहानकी फिक्र नहीं करेंगे। पास हो गये तो ठीक। न हुए, तो निराश नही होगे।

आपने अपने मानपत्रमें कहा है कि आप ऐश-आराममें पड़े हैं। आपने खादीका त्याग किया है, यह भी इसमें आ जाता है। पंजाबमें, जहाँ खादी सरलतासे उत्पन्न होती है, आपने खादीका त्याग किया है। इसका अर्थ यह है कि आपने दरिद्र-नारायणका त्याग किया है, ग्रामोका त्याग किया है, ग्रामवासियोंका त्याग किया है। खादी गाँववाले तैयार करते हैं। जो करोड़ों बेकारीमें पड़े हैं और जिन्हें दूसरे कोई उद्यम नही मिलते, उन्हें इसमे से दो पैसा मिल जाता है। ऐसी खादीका त्याग करके आप लोगोने मेरी दृष्टिमें बड़ा अपराध किया है। गाँवके लोगोके पैसेसे आप लोग पढ़ते हैं। आपकी शिक्षापर जो खर्च होता है, वह आपमेंसे कोई विद्यार्थी नही देता। जितनी फीस आप देते है उससे बहुत अधिक आपकी शिक्षापर खर्च होता है, और वह पैसा गाँवोंसे आता है। गाँववालोंके पैसेसे आप विद्या प्राप्त करते है। इसके बदलेमें आप उन्हे क्या देते है? कुछ नही। तो कम-से-कम इतना तो आप कीजिए ही कि कपड़े खादीके ही पहनिए। इतनी तो दरिद्रनारायणकी सेवा कीजिए। खादीको छोड़कर कोई और कपडा पहनना और उसे स्वदेशी कहना, यह पाखण्ड है। उसे स्वदेशी कहकर आप अपने-आपको तथा संसारको धोखा देते है। इस धोखाधड़ीसे बचिए।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २९-७-१९३४

२०१. तार: वल्लभभाई पटेलको[1]

बम्बई
[१४ जुलाई, १९३४]

डॉक्टरसे जाँच करा लो और इलाज करानेके बाद कानपुर या बनारसमें मुझसे मिलो।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १५-७-१९३४

१. वल्लभभाई पटेलको स्वास्थ्यके आधार पर नासिक जेलसे १४ जुलाई, १९३४को रिहा किया गया था।

२०२. तार: घनश्यामदास बिड़लाको[1]

लाहौर
१४ जुलाई, १९३४

डॉक्टरोंकी सलाहपर चल रहा हूँ।

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ७९६४) से, सौजन्य. घनश्यामदास बिडला

२०३. पत्र: मार्गरेट स्पीगलको

१४ जुलाई, १९३४

चि० अमला,

इसका मुझे दु:ख है कि साबरमतीमें तुम्हे अब शान्ति नही मिल रही है। क्या तुम बता सकती हो कि तुम क्या करना चाहती हो? अपमानकी जिन्दगी जीना सबके लिए कष्टकर है।[2] इसलिए मैं चाहूँगा कि तुम अपनी इच्छाके अनुकूल अपने जीवनका निर्माण करो। मुझे तो यही उम्मीद थी कि साबरमतीमें तुम खुश रहोगी। तुम इस बातको जान लो कि जबतक कुछ लम्बे अर्सेतक के लिए मैं एक स्थानपर नही ठहरता, तुम्हारा मेरे साथ रहना नही हो सकता। और वर्धामें तो तुम किसी भी हालतमें खुश नही रहोगी। तुम इस बातको भी निश्चय मानो कि तुम्हें मैं अपनेसे दूर नही रखना चाहता। मै तो, जहाँतक मुझसे बन पडता है, तुम्हे खुश रखना चाहता हूँ।

मेरे उपवासको लेकर घबराना नही। यह बिलकुल ठीक रहेगा। तुम इसको और इसके मर्मको आसानीसे नही समझ सकती। धीरे-धीरे समझमें आ जायेगा।

सस्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

१. घनश्यामदास बिड़लाके तारके उत्तरमें, जो उसी दिन मिला था और इस तरह था: "अत्यन्त विनीत भावसे निवेदन करता हूँ कि डॉक्टरोंके सुझावके खिलाफ अपने स्वास्थ्यसे खिलवाड़ न करें।

२. देखिए अगला शीर्षक।

२०४. पत्र : परीक्षितलाल एल० मजमूदारको

१४ जुलाई, १९३४

भाई परीक्षितलाल,

बुधाभाई [और] जुठाभाई क्या किसी काममें बहुत व्यस्त हो गये हैं? अमला बहनकी जो अड़चनें[1] हों, बने तो उन्हें दूर करना। वह तंग करती हो, तो मुझे बताना। उस छोकरीको आश्रमसे अलग कर दिया होगा। रमाबहन अभी तो है न?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०२४) से।

२०५. पत्र : रमाबहन जोशीको

१४ जुलाई, १९३४

चि० रमा,

अभी मैं किसी बहनको वहाँ[2] रहनेके लिए राजी नहीं कर सका। यो मेरा प्रयत्न जारी है। कोई न आये, तबतक कर्त्तव्य समझकर वहीं जमी रहना। महादेव आज यहाँ पहुँचेगा, उसके आनेके बाद और भी खबर मिलेगी।

तुम्हें चाहिए कि पत्र लिखती रहो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३६५) से।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. वर्धा कन्या आश्रममें।

२०६. पत्र : वसुमती पण्डितको

१४ जुलाई, १९३४

चि० वसुमती,

तेरा पत्र मिला। तेरे यहाँ आनेकी जरूरत तो मैं नहीं देखता। फिर भी, तुझसे न रहा जाये, तो चली आना। हरिजन आश्रममें रहनेका मन न हो, तब भी मुझे लगता है वहाँका अनुभव होना अच्छा रहेगा। किन्तु इसके लिए मेरा कोई आग्रह नहीं है। आग्रह तो यही है कि जो मनको पसन्द हो, वह करना चाहिए, और एक बार पसन्द कर लेनेके बाद फिर उसमें जुटे रहना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४०३) से। सी० डब्ल्यू० ६४९ से भी; सौजन्य : वसुमती पण्डित।

२०७. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

१४ जुलाई, १९३४

भाई घनश्यामदास,

खत मिला है। रामनारायणके बारेमें जो कुछ किया है उसमें रोष बिलकुल नहिं है। इस बारेमें उपवास बिलकुल आवश्यक है ऐसा मुझे पूर्ण विश्वास है। न करना केवल दौर्बल्यकी निशानी होगी। उपवासके सिवा जनताको बतानेका और कोई रास्ता है ही नहिं। लोगोमें कितनी हिंसा भरी है उसका मैं तो प्रतिक्षण प्रत्यक्ष अनुभव पा रहा हूँ।

तार मिला है। उत्तर दिया है।[1] मैं बड़ी सावधानीसे चल रहा हूं। डाक्तरोंको पूर्ण विश्वास है कि मुझको किसी प्रकारकी व्याधि नहिं है। न वे मुझको रोकना चाहते है।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

डॉ० बिधानके इस्तीफा स्वीकार भले किया जाय। सतीश बाबुको लिखें। यदि कलकत्ता आनेमें असुविधा है तो नहिं आना। स्टेशनपर तो मिलेंगे ही।

सी० डब्ल्यू० ७९६५ से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला।

१. देखिए पृ० १९१।

२०८. भाषण: छात्राओंकी सभा, लाहौरमें

१४ जुलाई, १९३४

आपने हरिजन-सेवाके लिए मुझे जो थैलियाँ दी हैं उनके लिए मै आपका आभार मानता हूँ। मुझे एक बहनने सूतका एक हार[1] भी दिया है। इस हारको देखकर मुझे दु ख हुआ है। जिस बहनने यह हार बनाया है, उसे सूत-शास्त्र का जैसे कुछ भी ज्ञान नही है। यह सूत किसी काममें नही लाया जा सकता। जो सूत काता जाये उसकी तुरन्त ही अंटी बना लेनी चाहिए। जैसी दयनीय दशा इस सूतकी है, ठीक वैसी ही हमारी भी है। उसके लिए हम खुद ही जिम्मेवार है। आत्मा ही आत्माका बन्धु है और आत्मा ही आत्माका शत्रु है। यह बात लडकियों, स्त्रियो और पुरुषोंपर समान रूपसे लागू होती है। मैंने अपने दौरोंमें लाखों लड़कियोका परिचय पाया है। उन सबके विचारसे मै पुरुष नही, बल्कि स्त्री ही हूँ। जब मै दक्षिण आफ्रिकामें था, तभी समझ गया था कि मैं स्त्री जातिकी सेवा न करूँगा, तो मेरा सारा काम अधूरा ही रह जायेगा। और शायद यही कारण है कि जब मै किसी महिला-समाजमें जाता हूँ, तो वहाँकी महिलाएँ समझती है कि उनके बीच जैसे कोई उनका मित्र आ गया है। मै अपनेको हजारो लड़कियोका पिता मानता हूँ। लड़कियोके माता-पिता बननेका प्रयत्न मेरा सदा-से ही रहा है। इसी नाते आपसे मै यहाँ एक बात कहूँगा। पंजाबी लड़कियोंमें टीमटामका फैशन बहुत बढ़ रहा है। विलासिता यहाँ बहुत देखनेमें आती है। यद्यपि यह बात सबपर लागू नही होती, तो भी बहुतोंपर तो लागू होती ही है। हमारी सभ्यता भी इस विलासको बढ़ानेमें सहायक रही है। हमारा देश इस सत्यानाशी फैशनसे दिन-दिन कंगाल होता जा रहा है। यदि हम सभी भोग-विलासमें पड़ गये तो हमारा नाश हो जायेगा। इतिहाससे पता चलता है कि भोगमें डूबी हुई जातियाँ नष्ट हो जाती है। भोगमें डूबकर उबरना कठिन ही है। इससे मेरी विनय है कि आप फैशनको त्याग दें, भोग-विलासमें न पड़े। दुर्भाग्यसे हमारे स्कूल-कालेजोंमे पढाये जानेवाले साहित्यकी भी प्रवृत्ति कुछ ऐसी ही हो रही है। पर यह अच्छी बात है कि यह साहित्य करोड़ोतक नही पहुँच सकता, चन्द हजार लोगोंतक ही इसकी पहुँच है। जिस तरह पानीकी सहज गति नीचेकी ओर ही होती है, उसी तरह भोग-विलासको अपनानेवाले भी अधोगतिको ही प्राप्त होते हैं। हमें पता नही चलता और यह भोग हमें भीतर-ही-भीतर खोखला कर डालता है। आप इस आत्मघाती विलाससे बचना चाहें तो अभी समय है, शीघ्र बच जायें, आपसे मेरी यही प्रार्थना है।

१. यह सूतकी कुकड़ियोंमें धागा पिरोकर बनाया गया था।

अब हरिजन-सेवाके विषयमें। मैंने विद्यार्थियोंसे भी कहा था[1] और आपसे भी वही बात कहता हूँ कि अध्ययनसे बचा हुआ समय आप हरिजन-सेवामें ही लगायें। इससे बहुत कुछ काम बन सकता है। अस्पृश्यता-निवारणके कार्यमें आप बहुत कुछ सहायता दे सकती हैं। खद्दरको तो आप अवश्य अपनायें। साथ ही सूत-शास्त्रका भी भली-भाँति अभ्यास कर लें। आजसे दस बरस पहले जब मैं पंजाब आया था, तो यहाँ मैंने अच्छे चरखे देखे थे। पर आज तो वे चरखे अच्छी हालतमें नहीं हैं। उडीसा प्रान्त पंजाबसे बहुत दरिद्र है सही, पर वहाँकी संस्कृति यहाँसे बढ़कर है। आप उडीसा-जैसे निर्धन प्रान्तकी सेवा करना चाहे, तो चरखा चलायें। इस प्रकार आपका खाली समय भी कट जायेगा और विलास-पाशसे भी आप मुक्त हो जायेंगी। जो समय बचे, उसमें अवश्य आप हरिजनोंकी सेवा करें और चरखा चलायें। आपके शरीरपर तो सदा खादी ही रहनी चाहिए।[2]

अन्तमें महात्माजीने कहा कि जिनके शरीरपर आभूषण हैं वे उन्हें हरिजन-कार्यके लिए दे डालें। मैं यह जानता हूँ कि पंजाबकी लड़कियाँ आभूषणोंकी ज्यादा शौकीन नहीं हैं। आभूषण मैं भारतके दूसरे हिस्सोंसे भी ले सकता हूँ। लेकिन जो अपने आभूषण देना चाहती हों वे उन्हें मेरे पास भेज दें और जो रुपये-पैसे दे सकती हों उन्हें हरिजन-थैलीके लिए रुपये-पैसे भी देने चाहिए।

हरिजनसेवक, २७-७-१९३४

२०९. भाषण : महिलाओंकी सभा, लाहौरमें

१४ जुलाई, १९३४

अपने भाषणमें महात्माजी ने महिलाओंसे प्राप्त अभिनन्दन-पत्रों और थैलियों[3] के लिए उन्हें धन्यवाद दिया। महिलाओंसे उन्होंने कहा कि आप लोग अस्पृश्यताके अभिशापको मिटा दें, वरना हिन्दू-धर्म मिट जायेगा। उन्होंने कहा कि भारतकी महिलाओंने इस देशके धर्मकी सदैव रक्षा की है और वह हर कुरबानीके लिए तैयार रही हैं।

इसके बाद महात्माजी ने महिलाओंको अस्पृश्यताका अर्थ समझाया। उन्होंने कहा कि महिलाएँ अभीतक ऊँच-नीचकी भावनाको अपने अन्दर पोषण दे रही हैं। इस भावनाका अन्त होना ही चाहिए। इस भावनाका अन्त जबतक नहीं होगा अस्पृश्यता नहीं मिट सकती। धर्मका अर्थ तुलसीदासने हमें दो शब्दोंमें समझाया है और वह

१. देखिए पृ० १८८-९०।

२. इसके बादका अंश *ट्रिब्यून*, १६-७-१९३४ से लिया गया है।

३. राष्ट्रीय स्त्री समाजकी सदस्याओं तथा लाहौरके अन्य महिला-संगठनों द्वारा प्रदत्त।

इस तरह है: 'दया धर्मको मूल है, पाप मूल अभिमान' अर्थात दया सभी धर्मोंका मूल है और अभिमान हमारे मनमें ऊँच-नीचकी भावनाको जगाता है। जब अभिमान चला गया और उसकी जगह दयाने ले ली तब हम निरभिमान और सच्चे धार्मिक बन गये।

अन्तमें महात्माजी ने महिलाओंसे कहा कि वे अपने आभूषण उन्हें सौंप दें और 'हरिजनोंके कल्याणार्थ उन्हें चन्दा दें। महिलाओंसे उन्होंने यह भी कहा कि वे सादगीसे रहने और दरिद्रनारायणकी सेवा करनेकी आदत डालें, क्योंकि इसीमें उनका हित है।

एक बार फिर महात्माजी ने महिलाओंको धन्यवाद दिया और लगातार हो रहे शोरगुलके बीच अपना भाषण समाप्त किया।

[अंग्रेजीसे]
ट्रिब्यून; १६-७-१९३४

२१०. पत्र: डॉ० विधान चन्द्र रायको

१५ जुलाई, १९३४

प्रिय डॉ० विधान,

तुम्हारा पत्र मिला।

गवर्नर[1] से मिलनेके लिए मैं अपने-आपको तैयार रखूंगा। 'स्टेट्समैन' के सम्पादकसे भी मिलना चाहूँगा। अतः मैं तुमसे कहूँगा कि उनके लिए भी कुछ समय सुरक्षित रखना।

मैं समझता हूँ, एक आम सभा पुरुषोंके लिए और एक स्त्रियोंके लिए जरूरी होगी। और फिर एक और कक्ष[2] का शिलान्यास या उद्घाटन भी तो है?

मेरे साथ कोई गड़बड़ी नहीं है, लेकिन मुझे अतिशय मानसिक और शारीरिक थकानका भान रहता है। जब भी मौका मिले, मुझे सोनेमें मजा आता है। लेकिन मैं चिन्तित नहीं हूँ। तुम इस कायाका एक-एक कल-पुर्जा दुरुस्त कर देना, और मुझसे जो चाहो या जिनकी जरूरत हो वे सब काम लेना।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

डॉ० विधान चन्द्र राय
कलकत्ता

अंग्रेजीसेकी नकलसे: प्यारेलाल कागजात; सौजन्य: प्यारेलाल।

१. बंगालके आतंकवादके बारेमें चर्चाके निमित्त।
२. चित्तरंजन सेवा सदन, कलकत्ताका शिशु-कक्ष।

२११. पत्र : विद्या रा० पटेलको

१५ जुलाई, १९३४

चि० विद्या,

तेरा पत्र मिला। तू बेकार घबराती है। तेरे पत्र चाहे जो पढ़े, इससे क्या? तुझे ऐसा कुछ थोड़े-ही लिखना है, जिसके लिए तुझे शर्मिन्दा होना पड़े। अपने पत्र बडे-बूढ़े, अभिभावक अथवा शिक्षक पढ़ें, तो प्रसन्न होना चाहिए। हाँ, यह देखना चाहिए कि चुपचाप चोरीसे बिना बताये कोई न पढ़े। तूने मना किया है, इसलिए अब तेरे पत्र भाईको नही भेजूंगा, लेकिन तुझे यह मनाहीका हुक्म वापिस ले लेना चाहिए।

अब तो कुछ दिन बाद भेंट होगी। तू वहाँसे ऊब मत जाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५८७) से; सौजन्य : रवीन्द्र रा० पटेल।

२१२. भेंट : अकाली और खालसा दरबार शिष्टमण्डलको[1]

लाहौर,
१५ जुलाई, १९३४

गांधीजी ने शिष्टमण्डलसे मास्टर तारा सिंहके सिख-राजनीतिसे अवकाश लेनेका कारण पूछा। सरदार मंगलसिंह ने सारांशमें हकीकत बयान की।

इसके बाद शिष्टमंडलके लोगोंने साम्प्रदायिक समझौतेके मामलेमें कांग्रेसकी ढुलमुल नीतिको अपने लिए अमान्य कहते हुए अपनी मनोभावना व्यक्त की और कहा कि सिखोंने इसके सामने न झुकनेकी प्रतिज्ञा ले रखी है। इसलिए, हर मामले में कांग्रेसका साथ देते हुए भी, वे संविधान सभामें व साम्प्रदायिक समझौतेके विरुद्ध अथवा यो कहें कि सिखोंके अधिकारकी रक्षाके लिए संघर्ष करते रहनेकी बातपर दृढ़ हैं। महात्माजी को उन्होंने सूचित किया कि विधानसभाके आनेवाले चुनावमें खालसा दरबारने अपना उम्मीदवार खुद खड़ा करनेका फैसला किया है।

१. साधन-सूत्रमें बताया गया है कि "शिष्टमण्डलमें ५० के लगभग सिख प्रतिनिधि थे जो सिखोंके सभी प्रगतिशील वर्गोंका प्रतिनिधित्व कर रहे थे"। विशेष निमन्त्रणपर शार्दूलसिंह वीर भी आये थे। ये लोग गांधीजी से सुबह ९-४५ पर मिले थे।

बड़े ध्यानसे गांधीजी ने सिखोंकी बात सुनी। उत्तरमें कांग्रेसकी स्थितिको समझाते हुए उन्होंने कहा कि श्वेतपत्रको ठुकरानेका अर्थ है साम्प्रदायिक समझौतेको ठुकराना और उसे समाप्त करना। उन्होंने कहा कि ऐसा कोई संविधान कांग्रेस स्वीकार नहीं करेगी जिससे सिख सन्तुष्ट न हों। इसी तरह वह मुसलमानोंकी इच्छाका अनादर भी नहीं कर सकती और न वह उस चीजको ही स्वीकार कर सकती है जिसे हिन्दुओं और सिखोंने अस्वीकार कर दिया हो। इसलिए अगर सिखोंमें से किसीको कांग्रेसका उम्मीदवार नहीं बनाया गया तो जो कांग्रेसी मतदाता हैं, उसकी आत्मा मत देनेमें संकोच करेगी और वह मतदानमें भाग नहीं लेगा। लेकिन इसकी जगह अगर कोई निर्विवाद उम्मीदवार किसी प्रतिक्रियावादीका मुकाबला करता है तो वह उस घोर प्रतिक्रियावादीको हरानेके लिए स्वतन्त्र रूपसे अपने मतका प्रयोग करेगा।

शिष्टमण्डलके लोगोंने अब गांधीजी का ध्यान ऐसे आदेशोंको जारी करने की जरूरतकी ओर खींचा जिनसे अस्पृश्यता-विरोधी कार्यकर्त्ता अपनेको हरिजन-कल्याण-कार्यतक ही सीमित रखें और इसे धर्म-परिवर्तनके प्रचारका रूप न दें। उन्होंने कहा कि इसकी जरूरत इसलिए पड़ी क्योंकि पंजाबमें तथाकथित अस्पृश्य ऐसे हैं जो सिख-धर्मके अनुयायी हैं।

गांधीजी ने कहा कि सिखोंके खिलाफ मुझे बहुत सारी शिकायतें प्राप्त हुई हैं जिनमें कहा गया है कि वे हिन्दु-हरिजनोंको हिन्दू-धर्म छोड़कर सिख-धर्म अपनानेके लिए कह रहे हैं। अगर यह सच है तो निःसन्देह निन्दनीय है। जहाँतक मेरी बात है, मैं धर्म-परिवर्तनके प्रचारमें विश्वास नहीं रखता और इसे हरिजन-सेवक संघकी योजनाके अन्तर्गत भी नहीं मानता।

[अंग्रेजीसे]
ट्रिब्यून; १८-७-१९३४

२१३. भेंट: पंजाबके हिन्दू और सिख शिष्टमण्डलको[1]

१५ जुलाई, १९३४

खबर है कि महात्मा गांधीने इस बातको मान लिया है कि साम्प्रदायिक निर्णयमें हिन्दुओं और सिखोंके साथ अन्याय हुआ है। लेकिन वे उस व्यावहारिक योजनाकी तलाशमें हैं जिससे साम्प्रदायिक निर्णय समाप्त किया जा सके या उसमें सुधार लाया जा सके। कांग्रेसकी वर्तमान नीति इन हालातमें कुछ अपरिहार्य-सी हो गई है। सभी सम्प्रदायों द्वारा मान्य किसी भी समझौतेको स्वीकार करनेके लिए वह बाध्य है; भले ही वह राष्ट्रीय आदर्शसे कुछ कम क्यों न हो।

१. साधन-सूत्रके अनुसार, साम्प्रदायिक निर्णयके सम्बन्धमें कांग्रेसकी ढुलमुल नीतिके खिलाफ पंजाबके हिन्दुओं और सिखोंका विरोध व्यक्त करनेके लिए शिष्टमण्डल गांधीजी से तीसरे पहर मिला था। शिष्टमण्डलका नेतृत्व राजा नरेन्द्रनाथ कर रहे थे।

महात्मा गांधीने शिष्टमण्डलको आश्वासन दिया कि वह इस मामलेको लेकर दिन-रात चिन्तित रहते हैं और इस नतीजेपर पहुँचे हैं कि श्वेतपत्रको समाप्त करके ही निर्णयमें सुधार लाया जा सकता है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १६-७-१९३४

२१४. भाषण : सार्वजनिक सभा, लाहौरमें[1]

१५ जुलाई, १९३४

पहली बार जब मैं पंजाब आया और उसके बाद जब भी आया हूँ, पंजाबियोंने मेरे ऊपर हमेशा स्नेहकी वर्षा की है। हमेशा वे हजारोंकी तादादमें मुझसे मिले हैं। लेकिन इस बार तो उनकी संख्या पहलेसे इतनी अधिक है, कि डी० ए० वी० कालेज छात्रावासमें इस अपार भीड़को बैठनेके लिए जगह नहीं मिल रही है। इतने लोगोंको आया देखकर मुझे बड़ा सन्तोष हुआ है क्योंकि आज मैं यहाँ किसी राजनीतिक उद्देश्यको लेकर नहीं आया हूँ, बल्कि एक ऐसे विशुद्ध धार्मिक कार्यको लेकर आया हूँ जिसके लिए मैं विशुद्ध धार्मिक भावनासे कार्य करता आ रहा हूँ। सभामें एकत्र अपार भीड़ मेरी समझसे देश तथा हिन्दू-धर्म दोनोंके लिए एक शुभ लक्षण है। हमारी मुसीबतोंका कोई अन्त नहीं है, लेकिन यह विशाल सभा जिसके सामने मैं भाषण दे रहा हूँ, अस्पृश्यताको समूल नष्ट कर देगी। इसके प्रति मेरे मनमें जो शक था, इस विशाल सभाको देखकर मिट गया। इस यात्राके दौरान प्रातःकालीन प्रार्थनामें मैंने हजारोंको भाग लेते देखा। आज प्रातःकालीन प्रार्थनामें मैंने जो दृश्य देखा वह किसीके भी हृदयको पिघला देनेवाला तथा नास्तिकको भी आस्थावान बना देनेवाला था। लोगोंकी संख्या १०,०००के लगभग थी, फिर भी वहाँ जबर्दस्त शान्ति छाई हुई थी। तकरीबन ३५ मिनट वे ध्यानमग्न बैठे रहे और मैं तो यही मानता हूँ कि इन क्षणोंमें उनके दिमागमें बस ईश्वर ही विराजमान था। इन सारे अनुभवोंसे ईश्वरमें मेरी आस्था और गहरी हो गई है, और मुझे लगता है कि मैं उसके हाथका बस एक यन्त्र मात्र हूँ। अस्पृश्यताके, जो सैकड़ों बरसोंसे हिन्दू-समाज पर छाई हुई है, अन्तके लिए लगता है ईश्वरने अपना फरमान जारी कर दिया है। लगता है वह सवर्ण हिन्दुओंके दिलोंमें आमूल परिवर्तन ला रहा है। यह विशाल सभा इस परिवर्तनका एक प्रमाण है।

इस आन्दोलनका उद्देश्य न तो किसी सम्प्रदायपर विजय हासिल करना है न हिन्दुओंकी संख्यामें वृद्धि करना। यह तो बस आत्मशुद्धिका और हिन्दू-धर्मको

१. साधन-सूत्रमें बताया गया है कि यह गांधीजी के भाषणका संक्षेप है जिसे ट्रिब्यूनके प्रतिनिधिने गांधीजीके सचिवसे प्राप्त किया था। सभामें गांधीजीका भाषण बहुत ज्यादा भीड़ और शोरके कारण सुनाई नहीं दिया था।

अस्पृश्यताके कलंकसे मुक्त करनेका आन्दोलन है। मैं देखता हूँ कि आप शान्तिसे बैठ नही पा रहे हैं और शायद मेरे इन कुछ मिनटोंके दर्शनसे सन्तुष्ट नही हैं। जो भी हो, मेरा आपसे यह कहना है कि मैं उसी साधारण मिट्टीका बना हूँ जिसके आप बने हैं और सिर्फ मेरे दर्शनसे आपको कुछ नही मिलनेवाला है। जो कुछ मैं कहता हूँ उसके अनुरूप अगर आप आचरण करें, तब आपको बहुत लाभ होगा।

जो आवाज मैंने एक हजार मंचोसे बुलन्द की है उसे फिरसे दोहराता हूँ कि अगर अस्पृश्यताको हमने नही मिटाया तो हिन्दू-धर्म और हिन्दू दोनों मिट जायेंगे।

[अंग्रेजीसे]
ट्रिब्यून, १८-७-१९३४

२१५. पत्र : मौलाना अबुल कलाम आज़ादको

१६ जुलाई, १९३४

प्रिय मौलाना साहेब,

आपका पत्र मिला। यह तो ठीक ही है कि कलकत्तेके अपने मुकाममें मैं खुशीसे गवर्नरसे मिलूंगा और जो हो सकेगा करूँगा। दो दिन पहले डॉ० विधानका खत मेरे पास आया था।

उपवास [का दिन] तो आना ही था। भगवानकी इच्छा ही ऐसी थी। जबतक वह मुझसे सेवा कराना चाहता है, मेरा बाल भी बाँका नही होगा।

मैं १९के सवेरे वहाँ पहुँचूंगा।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

मौलाना अबुल कलाम आज़ाद
१९–ए, बालीगंज सर्कुलर रोड
कलकत्ता

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

२१६. पत्र : कलकत्ताके बिशपको

लाहौर
१६ जुलाई, १९३४

प्रिय मित्र,

आपके कृपापत्रके लिए धन्यवाद। जबतक भगवानकी इच्छा है कि मैं जीवित रहूँ, तबतक मेरा कोई कुछ भी नही बिगाड सकता। यह विश्वास मेरे मनमें जड पकड़ गया है।

चाहे मैंने सरकारका विरोध किया हो या चाहे जनताकी इच्छाका, मैंने भगवानके मार्गदर्शनमें विश्वास किया है।

आखिर कल मैं कलकत्ता जा ही रहा हूँ। मुझे मालूम है, आपका वहाँ न होना मुझे खटकेगा।

मैं हूँ,
हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

दि मेट्रोपॉलिटन बिशप ऑफ कलकत्ता
दि चर्च इम्पीरियल क्लब
७५ विक्टोरिया स्ट्रीट
वेस्टमिन्स्टर, लन्दन, एस० डब्ल्यू० १

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

२१७. पत्र : दिलीप कुमार रायको

१६ जुलाई, १९३४

प्रिय दिलीप,

तुम्हारा पत्र और संलग्न सामग्री मिली। पत्र मेरे हाथमें कल ही आया। यह पहले बम्बई गया और वहाँ गलतीसे कुछ दिन मेरे एक सहायकके यहाँ पड़ा रहा।

मेरी कठिनाई मौलिक है। मैं यह नही मानता कि मेरी वर्तमान कर्मशीलता मेरी आत्मानुभूतिमें अथवा मेरे भगवानमें लीन हो जानेमें मेरी कर्म-विरतिकी अपेक्षा कम सहायक है। संन्यास समस्त शारीरिक क्रियाओंका बन्द हो जाना थोड़े ही है। मेरे लिए उसका अर्थ है, उन सब शारीरिक अथवा मानसिक क्रियाओंका बन्द हो

जाना जो स्वार्थमय है। अगर मुझे विश्वास दिलाया जा सकता कि अकर्म मेरे लिए बेहतर मार्ग है, तो मैं वह मार्ग तत्काल अपना लेता।

मैं कविताका पारखी नहीं हूँ। तब, तुम्हारी कविताओंपर मेरी कोई भी राय किस कामकी होगी? सचमुच, मैं कोई राय नहीं दे सकता। लेकिन हाँ, अब महादेव फुरसतमें है। वह स्वयं भी कवि है। और जब मैं उसे सारी बात समझा दूंगा, तो वह अपनी राय देगा, इसमें मुझे कोई सन्देह नहीं है।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

श्री दिलीपकुमार राय
श्री अरविन्द आश्रम
पांडिचेरी

अंग्रेजीको नकलसे: प्यारेलाल कागजात; सौजन्य: प्यारेलाल।

२१८. पत्र: वल्लभभाई पटेलको

लाहौर
१६ जुलाई, १९३४

भाई वल्लभभाई,

आपका छूटना मेरी कल्पनासे परे था। सरकार और हम आपसमें एक-दूसरेसे सलाह-मशविरा किये बिना जैसा सूझता है वैसा किये जा रहे हैं। यह ठीक भी है। दोनों [के उद्देश्य] का पता लग जायेगा। आप सब कुछ समझ लीजिए, फिर काजीकी हैसियतसे आपकी राय मांगूंगा। भले ही प्रकट रूपसे आपकी वफादारी साथीके नाते ही हो, पर 'हाँ' में 'हाँ' मिलानेकी जो आदत पड़ गई है, वह कोई दो-चार वर्षकी जेलसे थोड़े ही मिटनेवाली है?

आप नाकका पूरा इलाज करानेके बाद ही आयेंगे, यह मुझे पसन्द है। बनारस में आपकी उपस्थिति चाहिए तो सही, परन्तु नाककी दशाके कारण यदि आप न आ सके तो आपके बिना काम चला लेंगे।

. . .[1] के यहां जाना अनिवार्य था। हमारे कार्यकर्त्ताओंकी भी यह इच्छा थी। यों मेरे जानेसे उसे कुछ मिल नहीं जायेगा। वैसे अजमेरका और दूसरे स्थानोंका वातावरण आजकल हिंसासे भरा है। इसकी भनक वहाँ भी आपके कानोंमें पड़ेगी।

लालनाथ इन सबमें अच्छा आदमी मालूम हुआ है। वह बहादुर भी है। दिये हुए वचनोंका उसने पालन किया है। वैसे मेरी निन्दा तो करता ही है। यह हक तो

१. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिया गया है।

सभीको है। उसे पहली ही बार नही मारा गया है। उसके साथियोने भी मार खाई है। उसने कभी पुलिसको शिकायत नही की। ये लोग ज्यादातर पुलिसका संरक्षण भी नही चाहते। अपने आदमियोपर वह अच्छा काबू रखता है। हमारे आदमियोपर कड़ा अंकुश न रखा होता, तो वे बहुत घायल होते और हमारा काम रुक जाता। आज ही एक आदमी लिखता है कि लालनाथके विरुद्ध लोगोको भड़कानेमें उसका हाथ था। वह प्रायश्चित्त चाहता है। यह आदमी हमारा बढ़िया कार्यकर्त्ता है, लेखक है, कवि है। अब कहिए क्या उपवास करनेकी घोषणा करके मैंने ठीक नही किया? ऐसे मामलेमे किससे सलाह-मशविरा करूँ? कहाँ करूँ? किसीको साँप काट ले तो जानकार हकीम औरोसे सलाह लेने बैठे या समझमे आये सो दवा शुरू कर दे? साथियोसे पूछे बिना ऐसे कदम उठानेकी मुझे कोई प्रसन्नता तो नही थी, परन्तु मै लाचार हो गया था, निर्णय करनेसे पहले सलाह-मशविरा करनेका घनश्यामदासने तार भेजा था, इसलिए उन्हे लिखा।[1] उन्होंने अन्तिम निर्णय मुझपर छोडा। देवदासने चार दिनका उपवास सुझाया। जयरामदास[2]ने यह कदम जरूरी माना और कहा कि करना ही है तो सातमे कम हरगिज नही। बापा[3]ने विरोध नही किया। चन्द्रशंकर बेचारा क्या विरोध करता? काका[4] तो विरोध कर ही नही सकता था। ऐसे उपवासोके बिना यह भगीरथ-कार्य पूरा नही हो सकता। जनतामे जागृति अपार है।

लाहौरमें और अन्यत्र लोगोंकी ऐसी भीड़ देखता हूँ जैसी पहले कभी नही देखी।

एक बात जरूर गले उतरती है। रेल और मोटर मुझसे छुडवा दीजिए, एक जगह पड़ा रहने दीजिए और पैदल यात्रा करने दीजिए — यदि मैं बाहर रहूँ, तो। अगस्ततक तो सहज हूँ ही।[5] बादकी राम जाने।

एन्ड्र्यूज २५ अगस्तको यहाँ पहुँचेंगे। स्वामीने आपको बहुत-कुछ मालूम होगा। चन्द्रशंकर लिखेंगे।

मै कलकत्ते जा रहा हूँ, समझो केवल घरकी सफाई करने। परन्तु डॉ० विधान रायका पत्र आया है कि मुझे बहुत करके गवर्नरसे मिलना पड़ेगा। यह बात तो थी ही। अगाथा वगैराने इसके लिए बहुत दबाव डाला था। अब बात पक्की हो गई दिखती है। विषय तो केवल बगालका आतंकवाद है। मिलेंगे तब अधिक और और अब तो महादेव है, इसलिए आपको इच्छित वस्तु मिलती ही रहेगी।

१. देखिए, पृ० १९३।
२. जयरामदास दौलतराम।
३. अ० वि० ठक्कर।
४. द० बा० कालेलकर।
५. गांधीजी, ७ से एक सप्ताहका उपवास करनेवाले थे; देखिए पृ० १६४-६५।

मणि[1] की तबीयत खूब अच्छी हो जानी चाहिए। इस बार वह (जेलमें) काफी कमजोर हुई लगती है। फिर भी ऊपरसे अपनेको स्वस्थ दिखानेका प्रयत्न करती है। आज उसे अलग पत्र नहीं लिख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
श्रीराम मैंशन
सैंडहर्स्ट रोड, बम्बई

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो: २: सरदार वल्लभभाईने, पृ० ११२-४

२१९. पत्र: पद्माको

[१६ जुलाई, १९३४][2]

चि० पद्मा,

तू कैसी लड़की है? बिना कारण पत्र लिखनेमें आलस्य करती है, और मुझसे पत्रोंकी आशा रखती है। मैं तो फिर भी अवश्य लिखता, किन्तु समय कहाँ है? आज तेरा पत्र मिला, सो जवाब लिख रहा हूँ। गर्मीमें भी शरीरको सँभालकर रखा, यह अच्छा किया। अपनी लिखावट बिगाड़ मत लेना। . . .[3]

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१४८) से। सी० डब्ल्यू० ३५०४ से भी; सौजन्य: प्रभुदास गांधी।

२२०. पत्र: डाह्याभाई म० पटेलको

१६ जुलाई, १९३४

भाई डाह्याभाई,

भद्दे नामोंके सम्बन्धमें आपका लेख मिला था। इस विषयपर लिखनेका मेरा विचार तो है, किन्तु इस समय तो एक क्षणकी भी फुर्सत मिलती नहीं, इसलिए न तो 'हरिजनबन्धु' के लिए न 'हरिजन' के लिए ही कुछ लिख पाता हूँ। किन्तु भद्दे नामोंके विषयमें तो लिखूँगा ही। आप स्वयं कातते तो होंगे ही।

बापूके आशीर्वाद

श्रीयुत डाह्याभाई मनोरदास पटेल
धोलका

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २७०४) से; सौजन्य: डाह्याभाई म० पटेल।

१. मणिबहन पटेल।
२. जी० एन० रजिस्टरसे।
३. शेष पत्र पढ़ा नहीं जा सका।

२२१. पत्र : गोपबन्धु चौधरीको

१६ जुलाई, १९३४

भाई गोपबन्धु बाबू,

आपके पत्र मिले हैं। देहातमें जानेका संकल्प कर लिया सो अच्छा है। कार्य-कर्त्ताओंके बारेमें सब नहि पढ़ सका हूँ। पढ़नेके बाद फिर लिखुगा।

बापुके आशीर्वाद

श्री गोपबन्धु चौधरी[1]
चादनी चौक[2]
कटक[3]

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २७८१) से।

२२२. पत्र : राजकुमारी अमृतकौरको

१७ जुलाई, १९३४

प्रिय बहन,

बिहारके भूचाल-पीडितो के सहायतार्थ ग्रेट-ब्रिटेनके भारतीय चिकित्सक-संघकी ओरसे पौंड ५४-४-३ का जो चैक तुमने अपने पत्रके साथ भेजा है उसके लिए मैं तुम्हें धन्यवाद देता हूँ। चैक मैं राजेन्द्रबाबूके पास भेज रहा हूँ; साथ ही उन्हे यह हिदायत दे रहा हूँ कि वे इसकी प्राप्ति-स्वीकृति डॉ० भण्डारीको भेज दें।

तुम्हे मेरी कितनी चिन्ता है, मैं इसे जानता हूँ। ईश्वर जबतक मुझे निमित्त बनाकर रखना चाहता है, तबतक वह मेरी देखभाल करता रहेगा। लाहौरमें हमारे मिलनेकी मुझे पूरी आशा थी। किसी-न-किसी दिन कही-न-कही हम जरूर मिलेगे।

तुम्हारा,
मो० क० गांधी

श्री राजकुमारी अमृतकौर
मैनर विला
शिमला

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६३१९)से। सी० डब्ल्यू० ३५१० से भी; सौजन्य : राजकुमारी अमृतकौर।

१. २ और ३. रोमन लिपिमें हैं।

२२३. पत्र : जमनालाल बजाजको

१७ जुलाई, १९३४

चि० जमनालाल,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे ऊपर एक ओर तो जिम्मेदारियाँ और दूसरी तरफ कानकी बीमारी। इन दोनोंकी सोचकर मैं घबरा जाता हूँ। अब वल्लभभाई छूट गये हैं, इसलिए एकाध महीनेमें भार कुछ हल्का होगा। जितना हो सके उतना करके निश्चिंत रहो तो बहुत है। बिहारका जो हो सके सो करना। वैसे कितनी ही बातें तो यों ही चलेगी। मैं मिलूँगा तब अधिक खुलासा करूँगा। महेन्द्रबाबूके मामलेमें तो तुम्ही जो कर सकोगे वो ठीक होगा। वह मेरी समझसे परे है। बिहारका हिसाब समझमें आयेगा।

आश्रमकी निन्दावाला लेख भेजा था सो पढ़ गया। उसका कोई जवाब नही दिया जा सकता। हम आश्रमको सुरक्षित रखें तो कुशल ही है। इसका निपटारा कर लेंगे। गंगाबहन और प्रेमाको भले ही लिखो। वे शायद ही आयें। और उसे अब नये ढंगके रस पैदा हुए हैं। बहुत खींच-तान करनेमें कोई सार नही है। ब्यूटोके पत्र आते रहते हैं। वह तुमसे मिलनेके लिए व्याकुल है।

मैं ठीक हूँ। मेरे उपवाससे डरना नही। यह तो स्पष्ट है कि इसके बिना नही सरेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९३६) से।

२२४. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

१७ जुलाई, १९३४

चि० मणिलाल व सुशीला,

मेरे अगस्तमें होनेवाले उपवासके बारेमें चिन्ता मत करो। भगवान पार लगायेंगे। मुझपर कोई आक्रमण किया जा सकता है, इसकी भी चिन्ता मत करो। यह सब ऐसे ही चलता आया है, तिसपर भी इतने वर्ष निकल गये हैं। और जबतक भगवानकी इच्छा होगी, तबतक और भी निकलते रहेंगे। किन्तु यदि भगवानकी इच्छा कुछ और हुई तो जमुहाई लेनेमें भी प्राण निकल सकते हैं।

रामदासकी तबीयत ठीक नही रहती। वहाँ जाये तो ठीक हो जायेगा। क्या उसके लिए और एक साथी वैद्यके लिए वहाँ आनेकी अनुमति मिल सकती है? मिले, तो भेज देना। उसके साथीका नाम रघुनन्दन शर्मा है।

मैं यह पत्र लाहौरसे लिख रहा हूँ। आज यहाँसे रवाना होना है। देवदास यहीं है। महादेव छूट गये हैं, इसलिए वह, प्यारेलाल और काकासाहेब भी यहाँ मेरे साथ हैं। इस प्रकार एक कौटुम्बिक मेला ही हो गया है।

मैं ठीक हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८२२)से।

२२५. भाषण : प्रार्थना-सभा, लाहौरमें[1]

१७ जुलाई, १९३४

मैं चाहता हूँ कि जैसा आप मेरे साथ इन चन्द दिनोंमें करते रहे हैं, दिनका काम तड़के प्रार्थनाके बाद शुरू करनेकी जो रीति अब शुरू की है, इसे आप जारी रखें। आप प्रार्थना या तो निजी तौरपर अपने-अपने घरोंमें कर सकते हैं या अपने मुहल्लोंमें किसी केन्द्रीय स्थानपर सामूहिक रूपसे कर सकते हैं। प्रार्थनाका महत्त्व बढ़ा-चढ़ाकर बताना असम्भव है। जब कोई व्यक्ति श्रद्धापूर्वक प्रार्थनाके उपरान्त दिनका काम शुरू करता है, तो उसके दिनका सारा काम एक शुद्ध और प्रार्थना-युक्त भावनासे प्रेरित रहता है! प्रार्थनाके लिए उपयुक्त समय तड़केका है। इस समय सूर्य, जो ईश्वरीय प्रकाशोंमें सबसे ज्यादा प्रखर है, हमारे सभी कामोंमें उसके साक्षी रूपमें प्रकट होता है।

मैं आपको ईश्वरके सच्चे उपासकके एक-दो लक्षण बताता हूँ। एक तो है, पीड़ित तथा दलित लोगोंके प्रति मैत्री तथा भ्रातृत्वकी भावना। यह भावना हरिजनको मित्र बनानेसे अधिक अच्छी किसी भी ढंगसे व्यक्त नहीं हो सकती और इसे करनेका सबसे अच्छा ढग यही है कि आप उसकी पीठका बोझ उतार डालें, ताकि वह बोझ ढोनेवाला पशु और पददलित जीव न रहे। हमने उसे युगोंसे ऐसा ही बना रखा है। अगर हम उसका बोझ हल्का कर दें तो वह खुली साँस ले सकेगा और आजादीसे घूम-फिर सकेगा।

दूसरा लक्षण है, दरिद्रनारायणकी सेवा, भारतके उन लाखों भूखे लोगोंकी सेवा जिनमें निश्चय ही हरिजन भी शामिल हैं। लेकिन जहाँ गरीब-से-गरीब व्यक्ति, यदि वह हरिजन नहीं है तो, जहाँ चाहे स्वतन्त्रतापूर्वक घूम-फिर सकता है, वहाँ अमीर-से अमीर हरिजन हिन्दू मन्दिरमें नहीं जा सकता और सार्वजनिक कुएँका प्रयोग नहीं कर सकता। इसलिए जहाँ अस्पृश्यता-निवारणका काम हरिजनोंकी सेवा है, वहाँ गरीबकी सेवा यह है कि उसके लिए धन्धा खोजा जाये और उसकी थोड़ी-सी आय में कुछ और जोड़ा जाये। इसे करनेका सबसे अच्छा तरीका यह है कि लोग आदतन

१. साधन-सूत्रमें बताया गया है कि यह "महादेव देसाई द्वारा किया गया अनुवाद" था।

खादी पहनने लगें और नित्य कताई-यज्ञ करें। यदि पंजाबकी सारी औरतें दृढ़ निश्चय कर लें कि अपना खाली समय कताईमें लगायेंगी, तो मुझे विश्वास है कि वे न केवल सारे पंजाबको कपड़ा सुलभ कर सकेंगी, बल्कि बाहर अन्य प्रान्तोंको भी कपड़ा भेज सकेंगी।

यदि आप ये दो काम करते हैं, तो मैं बिना संकोच कहूँगा कि आप दिनोंदिन ईश्वरके समीप पहुँचते जा रहे हैं। शर्त इतनी ही है कि आप जो-कुछ करें वह दिखावे या आत्म-प्रकाशन के लिए न हो, बल्कि सेवाभावसे और इन्सानियतके नाते किया गया हो। एक तीसरी चीज भी है जिसे मैं भगवानके उपासकका लक्षण घोषित करूँगा और वह है, मौन भाव। मैं जहाँ भी जाता हूँ, सभाओंका शोर-शराबा मुझे खटकता है। आप सबको हर तरहके हल्ले-गुल्लेसे बचाना चाहिए और सुव्यवस्था तथा अनुशासनकी भावना पनपने देनी चाहिए। प्रार्थनाके अनेको निहितार्थोंमें से ये तीन ऐसी बातें हैं जिन्हें मैं चाहता हूँ कि आप ध्यानमें रखें।

[अंग्रेजीसे]
ट्रिब्यून, १९-७-१९३४

२२६. बातचीत : स्वयंसेवकोंके साथ[1]

१७ जुलाई, १९३४

एक संक्षिप्त भाषणमें गांधीजी ने कहा कि स्वयंसेवक जहाँ भी जाता है, अपने निजी आरामकी व्यवस्था करनेमें काफी समय लगा देता है। इसके बजाय स्वयंसेवकों को चाहिए कि वे अपना सामान्य कर्त्तव्य और वह सेवा-कार्य जिसे करनेकी उन्होंने शपथ ली है, ध्यान से करें।

पूछे जानेपर गांधीजी ने कहा कि मुझे स्वयंसेवकोंके सैनिक प्रशिक्षण लेनेपर कोई आपत्ति नहीं है; लेकिन उन्हें हिंसासे दूर रहना चाहिए। उन्होंने स्वयंसेवकोंसे कहा कि यदि भीड़ महिलाओंपर हमला कर दे तब भी हिंसाका प्रयोग न करें। उन्होंने कहा कि मेरी समझमें महिलाएँ लाचार अबलाएँ नहीं हैं; वे अपनी देखभाल करनेमें स्वयं काफी समर्थ हैं।[2]

[अंग्रेजीसे]
ट्रिब्यून, १९-७-१९३४

१. गांधीजी स्वयंसेवकोंसे प्रातः लाजपत राय भवनमें मिले थे।

२. रिपोर्टका अंतिम अंश था: "जो महिला स्वयंसेविकाएँ वहाँ मौजूद थीं, उन्होंने गांधीजी के विचारोंका अनुमोदन किया और सभा समाप्त हो गई।"

२२७. बातचीत : सीमान्तके नेताओंके साथ[1]

१७ जुलाई, १९३४

गांधीजी ने सलाह दी है कि कांग्रेसके निर्णयपर अमल करते हुए कानूनको स्वेच्छासे पूरी तरह माना जाये।

समझा जाता है कि सीमान्तके नेता ऐसा कोई काम नहीं करना चाहते जिससे गांधीजी के हाथ कमजोर हों और कांग्रेसकी प्रतिष्ठाको धक्का लगे। उन्होंने कानूनको मानते रहनेका वचन दिया है।[2]

शिष्टमण्डलने महात्माजी के प्रति सीमान्तके लोगोका स्नेह और आदर जताया। महात्माजी ने भी सीमान्तके पठानोके प्रति अपनी स्नेह-भावना व्यक्त की।

महात्मा गांधीने सीमान्तका दौरा करनेकी इच्छा व्यक्त की और शिष्टमण्डलको बताया :

मैं सीमान्त गाधीको दिलसे उतना ही प्यार करता हूँ जितना कि देवदासको।

अन्तमें गांधीजी ने उनके जरिए सीमान्तके लोगोके प्रति प्रेमका सन्देश भेजा और कहा कि मैं उन्हे अपने जीवनमें कभी नहीं भूल सकता और उनकी विशेष कठिनाइयाँ और परेशानियाँ हमेशा मेरे ध्यानमें रहती हैं।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १८-७-१९६४; बॉम्बे क्रॉनिकल, १८-७-१९३४ भी

२२८. भाषण : पंजाबके राष्ट्रवादी कार्यकर्त्ताओंके समक्ष, लाहौरमें

१७ जुलाई, १९३४

गांधीजी ने कहा कि जेल जानेकी अपेक्षा अपने रचनात्मक कार्यकी योजना पूरी करना कहीं कठिन काम है। मैंने खुद देखा है कि जेल जाना और वहाँ अपनी पुस्तकें पढ़ते व बकरीका दूध पीते हुए शान्तिसे समय बिताना थका देनेवाले भारी

१. साधन-सूत्रमें बताया गया था कि सीमान्त प्रांतके कांग्रेसियोंने, जो पेशावर, बन्नू, कोहाट, और हजारा जिलोंका प्रतिनिधित्व कर रहे थे, सुबह गांधीजी से भेंटकी। इनका नेतृत्व सीमान्त कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष, पीर शहंशाह कर रहे थे।

२. इससे आगेका अंश बॉम्बे क्रॉनिकलसे लिया गया है।

कार्यक्रमको देशमें पूरा करनेसे आसान है। गांधीजी ने मजाकके लहजेमें कहा कि श्रीमती गांधीने मुझे सुझाव दिया है कि बाहर रहकर जबर्दस्त कार्यक्रमका भार उठानेसे यह अच्छा है कि मैं जेल चला जाऊँ और वहाँ आरामसे समय बिताऊँ।

महात्मा गांधीने यह भी कहा कि हमें अपना कार्यक्रम अभी पूरा करना है। यह सोचना गलत होगा कि पहले स्वराज्य हासिल कर लें फिर उसे पूरा कर लेंगे। उन्होंने कार्यकर्त्ताओंको सलाह दी कि वे आपसमें काम बाँट लें और उसे ईमानदारी से पूरा करें। सत्यको अपना सिद्धान्त मानें तो काम आगे बढ़ेगा ही। यह शान्तिका समय है और हम लोगोंमें शान्तिका सन्देश ही पहुँचाये। अपने आनेपर लाहौरमें किये गये स्वागतका उल्लेख करते हुए गांधीजी ने कहा कि लोग मेरे पैर छूना चाहते थे; उससे मेरे शरीरको थोड़ी तकलीफ पहुँची। यदि कोई शोर न हो तो मैं हजारों लोगोंकी भीड़से भी अच्छी तरह मिल सकता हूँ। स्वराज्य शोर मचानेसे नहीं हासिल किया जा सकता।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १८-७-१९३४

२२९. भाषण : खादी-कार्यकर्त्ताओंके समक्ष, लाहौरमें

१७ जुलाई, १९३४

खादी-कार्यकर्त्ताओंके समक्ष भाषण करते हुए गांधीजी ने खादीको 'अन्नपूर्णा' बताया। उन्होंने कहा कि यदि किसान कताई करने लगें तो वे रोटी या चावलके साथ अपने लिए मक्खन भी जुटा सकते हैं। अन्य कुटीर उद्योग बहुत हुआ तो हजारों लोगोंका परिपालन कर सकते है, जब कि खादी करोड़ों लोगोंके लिए एक अनिवार्य कुटीर उद्योग है। खादीसे मांग और पूर्तिमें अपने-आप सामंजस्य पैदा होगा, क्योंकि किसान खास करके अपने और अपने पड़ौसियोंके लिए ही खादी तैयार करेंगे और एक जगहसे दूसरी जगह पहुँचानेका काम नाममात्र को होगा। उन्होंने कहा कि मैंने पता लगा लिया है कि यदि बुनकरोंके परिवार अपने बुननेके लिए खुद सूत कातें तो प्रथम श्रेणीकी सस्ती खादी मिल सकती है। फिर यदि कोई कपास उत्पादक बिना मूल्य कपड़ा चाहे तो उसे केवल इतना ही करना पड़ेगा कि कपास चुननेसे लेकर बुनाईतक की सारी प्रक्रिया स्वयं ही कर ले। इससे बुनकरों के मुँहसे रोटी नहीं छिनेगी, क्योंकि यदि सारा भारत खादी अपनायेगा तो जितने बुनकर अभी हैं, उससे दुगने बुनकरोंकी जरूरत होगी। केवल खादी ही स्वदेशी कपड़ा है। खादीके साथ-साथ भारतीय मिलोंके बने कपड़ेको स्वदेशी बताना कोरी बकवास है।[1]

१. आगेका अंश खादी जगतसे लिया गया है।

अभीतक मैं बहुत नरम रहा हूँ, लेकिन अबसे मुझे सख्त होना पड़ेगा। चरखा संघमें मैंने उन लोगोंको भी भर्ती किया जो कातना नहीं जानते थे, क्योंकि मैंने सोचा था कि इन्हीं लोगोंमें अच्छे कार्यकर्ता मिलेंगे। मैं अब इस नतीजेपर पहुँचा हूँ कि ढिलाई काफी हो चुकी है। चरखा संघके प्रत्येक कार्यकर्त्ताको रुईकी सफाई, धुनाई और कताई सीखकर दक्ष बनना होगा। उसे अच्छी तरहसे बुनाई भी आनी चाहिए। इससे आम तौरपर ग्राम-सुधारके हमारे कार्यमें सुविधा होगी और स्वतंत्रता जल्दी आयेगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३-८-१९३४; *खादी जगत*, मई, १९४७ भी।

२३०. भेंट: पत्रकारोंको

लाहौर
१७ जुलाई, १९३४

वहाँ बीस और तीसके बीच पत्रकार रहे होंगे। वे गांधीजी से एक सन्देश चाहते थे। परन्तु उन्होंने कहा कि मैं चीजें मुफ्त नहीं देता और चाहता हूँ कि आप लोग सन्देशके बदले हरिजन-कोषमें दान दें। इसपर उन्हें एक अँगूठी दी गई, फिर कुछ रुपये आये, कुछ पैसे आये; कुल १६ रुपये इकट्ठे हुए . . .।

गांधीजी ने कहा कि . . . यदि वे वस्तुतः सन्देश चाहते हैं तो उन्हें पूरे पचास रुपये देने चाहिए।

वहाँ उपस्थित एक पत्रके कर्मचारीने तब यह जिम्मेदारी ली कि वह बाकी रकम इकट्ठा करेगा और शामको उनके पास भेज देगा।

इसपर गांधीजी ने जवाब दिया कि ठीक है, मेरा कारोबार उधारपर भी चलता है; इस आधारपर मैं सन्देश दूँगा . . .।

लाहौर रेलवे स्टेशनपर मेरा असाधारण उत्साहके साथ अभिनन्दन किया गया और पंजाबकी पाँच दिनकी मेरी यात्रामें वह उत्साह बराबर बना रहा। इससे बहुत खुशी होती है और उत्साह भी मिलता है।

मेरी बड़ी इच्छा है कि लोगोंका यह सब उत्साह एक ठोस और अविरत रचनात्मक कार्यकी ओर मुड़ जाये। पंजाबके नेताओंका यह कर्तव्य है कि वे इस उत्साहको, जो बेकार जा रहा है, कार्यमें लगायें। यह बड़े हर्षकी बात है कि अमीर और गरीब, सभी हरिजन-थैली कोषमें रकम देनेके लिए स्वेच्छासे आगे आये हैं। मुझे यह इस बातका निश्चित संकेत लगता है कि दान देनेवालोंका यह विश्वास है कि हिन्दू-धर्मसे अस्पृश्यताका अभिशाप मिटना चाहिए।

प्रातःकालकी सामूहिक प्रार्थनाओंका जिक्र करते हुए महात्मा गांधीने कहा कि उनमें पूर्ण शान्ति रहती थी और भारी संख्यामें उपस्थित लोग बड़ी श्रद्धा और एकाग्रताके साथ प्रार्थनामें भाग लेते थे — जिस समय भजन गाये जाते थे तब तो यह चीज और भी स्पष्ट हो जाती थी। उन्हें यह आत्मशुद्धिके इस आन्दोलनमें उनके हार्दिक सहयोगका निश्चित संकेत लगा।

अन्तमें महात्मा गांधीने कहा कि जिस चीजसे उन्हें सबसे अधिक दुःख हुआ है, वह है लाहौरके हरिजनोंकी दशा। उनके खयालसे वह यह प्रमाणित करती है कि नगरपालिका अपने सबसे योग्य कर्मचारियों और नागरिकोंकी कितनी निर्ममतासे उपेक्षा कर रही है। महात्मा गांधीने खास तौरसे हरिजन-बस्तियोंकी रोशनी और सफाईकी व्यवस्थाओं और उनमें नलके पानी की कमीका जिक्र किया।

मैं यह जानता हूँ कि भारत-भरमें नगरपालिकाओंकी वित्तीय स्थिति बहुत खराब है। परन्तु उसका असर निश्चय ही इन सबसे योग्य और उपयोगी कर्मचारियों और नागरिकोंपर नहीं पड़ना चाहिए। अतः मुझे आशा है कि पानी, रोशनी और सफाईकी सुविधाओंकी कमी की शिकायतोंपर तुरन्त ध्यान दिया जायेगा। नगर-पालिकाके आगे चाहे कैसी भी कठिनाइयाँ हों, पर लोकहितके इस आवश्यक कार्यकी उपेक्षा नहीं होनी चाहिए।

इन लोगोंके रहन-सहनके ढंग, इनकी कामकी परिस्थितियों और आर्थिक स्थितिके बारेमें मैं बहुत-कुछ कह सकता हूँ। पर इस सन्देशको मैं अनावश्यक रूप से लम्बा करना नहीं चाहता। मैं केवल यही चाहता हूँ कि जो शिकायत सबसे तीव्र है और जो तुरन्त दूर की जा सकती है, जनता और नगरपालिका उसपर ध्यान दें।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १८-७-१९३४

२३१. भाषण: गुलाबदेवी तपेदिक अस्पताल, लाहौरमें[1]

१७ जुलाई, १९३४

महात्मा गांधीने कहा कि आप लोगोंने यह समारोह[2] सम्पन्न करनेके लिए मुझे आमन्त्रित किया, इसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। उन्होंने कहा कि स्वर्गीय लालाजी इस अस्पतालका उद्घाटन-समारोह मेरे ही हाथों सम्पन्न कराना चाहते थे, यह मेरे लिए कोई आश्चर्यकी बात नहीं है, क्योंकि उनके साथ मेरे घनिष्ठ सम्बन्ध थे। मैं लाहौर आ सका और इस अस्पतालके उद्घाटन-समारोहमें भाग ले सका, इसकी मुझे बड़ी प्रसन्नता है।

१. इसका पहला और अन्तिम अनुच्छेद ट्रिब्यूनसे लिया गया है। यह तथा अगला शीर्षक "साप्ताहिक चिट्ठी" से उद्धृत हैं।

२. गुलाबदेवीके चित्रका अनावरण तथा अस्पतालका उद्घाटन।

गांधीजी ने कहा कि इस समारोहसे मुझे देशबन्धु दासकी याद आ रही है। उन्होंने भी अपनी वसीयतमें कलकत्तेमें स्त्रियोंके लिए एक अस्पताल खोलनेकी इच्छा जाहिर की थी। चित्तरंजन सेवा-सदन अब डॉ० विधानचन्द्र रायके उत्साहप्रद संरक्षण में एक विकासशील संस्थान है। यह एक विचित्र संयोग है कि भारतके ये दोनों महान नेता अपने हृदयमें समाज-सेवा, विशेषकर स्त्रियोंकी सेवाकी कामना सँजोये हुए थे। जबतक हमारी स्त्रियाँ पुरुषोंके साथ कन्धेसे-कन्धा मिलाकर चलनेके योग्य नहीं होतीं, तबतक यह राष्ट्र महानता प्राप्त नहीं कर सकेगा। हमारे अधिकतम नेता हृदयसे समाजसेवी रहे हैं, केवल जरूरतने ही उन्हे राजनीतिज्ञ बना दिया था। समाज-सुधार के वे जबर्दस्त प्रतिपादक थे। सभी लोग यह जानते हैं कि लालाजी एक महान सामाजिक कार्यकर्त्ता थे, और यदि उनकी अपनी पसन्दकी बात होती, तो वे समाज-सेवाको ही अपने जीवनका ध्येय चुनते। परन्तु कोई भी सच्चा जनसेवक आज राज-नीतिकी उपेक्षा नहीं कर सकता। यह चीज ध्यान देने लायक है कि चित्तरंजन दास और लालाजी की अन्तिम इच्छाएँ समाज-सेवापर ही केन्द्रित थीं।

लालाजी से जिनका परिचय रहा है उन्हें यह जानकार कोई आश्चर्य नहीं होगा कि उनकी इच्छा यहाँ हरिजन स्त्रियोंको प्राथमिकता दी जानेकी थी। लालाजी से बड़ा हरिजन-सेवक कोई नहीं रहा है।

गांधीजी ने कहा, तपेदिकके अस्पताल, दुर्भाग्यसे बहुत ही जरूरी हैं; पर मुझे विश्वास है कि यहांके चिकित्सक इस भयानक व्याधिकी रोकथामपर भी उसके इलाज जितना ही ध्यान देंगे। भारत-जैसे देशमें, जहां निरन्तर धूप खिलती हो, तपेदिककी व्यापकता कुछ समझमें नहीं आती। इसकी छानबीन होनी चाहिए। अस्पतालके चिकित्सक वर्गको अपने रोगियोंमें तपेदिकके कारणोंके अध्ययनका और उसकी रोकथामके उपायोंको खोजनेका अपूर्व अवसर मिलेगा।

अन्तमें, गांधीजी ने इस अस्पतालकी स्थापनामें सहायता देनेवाले सभी लोगोंको बधाई दी और यह आशा व्यक्त की कि वे इसकी धनसे सहायता करते रहेंगे।[1]

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३-८-१९३४

१. महात्मा गांधीने तब तालियोंकी गड़गड़ाहटके बीच पहले अस्पतालका उद्घाटन किया और फिर उसकी कुछ इमारतोंका निरीक्षण किया।

२३२. भाषण : माडल टाउन[1], लाहौरमें

१७ जुलाई, १९३४

अभिनन्दन-पत्रमें शहरका जो सुन्दर नक्शा खींचा गया था, उसका उल्लेख करते हुए गांधीजी ने कहा कि मुझे खेद है कि यह नक्शा वास्तविकतासे मेल नहीं खाता। एक आदर्श शहर (माडल टाउन)ने भी यदि हरिजनोंको, जो समाजके लिए वही काम करते हैं जो माँ अपने बच्चोंके लिए करती है, अलग रखनेकी पुरानी और बुरी परम्पराका दास-भावसे पालन किया, तो वह शहर माडल टाउन कहलाने योग्य नहीं है। फिर मैंने यह भी सुना है कि हरिजन बुरे मकानोंमें रहते हैं और पानीके लिए बड़ी कठिनाईका सामना करना पड़ता है। मैं विश्वास करता हूँ कि माडल टाउनके सज्जन पुरुष इस शिकायतकी जाँच करेंगे और हरिजनोंके साथ बराबरीका व्यवहार करनेके अपने वायदेको पूरा करेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३-८-१९३४

२३३. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको

लाहौर
१७ जुलाई, १९३४

गांधीजी से पूछा गया कि चूंकि पण्डित लालनाथने आपसे अपने फैसलेपर फिर से विचार करनेकी अपील की है, और राजपूताना हरिजन बोर्डके मंत्रीने भी हाल ही में एक बयान दिया है, तो क्या अब इस बातकी कोई आशा की जा सकती है कि आप ७ अगस्तसे शुरू होनेवाले सात दिनके अपने घोषित उपवासको रद कर देंगे। इसपर महात्मा गांधीने कहा :

इसकी कोई सम्भावना नही है।

आगे जब उनसे यह पूछा गया कि क्या राजपूताना हरिजन बोर्डके मंत्रीकी इच्छाके अनुसार आप मंत्रीके लिए भी कोई पश्चात्ताप निर्धारित कर रहे हैं, तो महात्मा

१. साधन-सूत्रमें बताया गया था कि कलकत्ताके लिए लाहौरसे रवाना होनेसे ठीक पहले गांधीजी लाहौरके इस उप-नगरकी एक सभामें शामिल हुए और वहाँके नागरिकोंने उन्हें एक अभिनन्दन-पत्र तथा एक थैली भेंट की।

गांधीने जवाब दिया कि मंत्रीके लिए पहलेसे ज्यादा सतर्कताके सिवा और कोई पश्चात्ताप आवश्यक नहीं है।

अगला प्रश्न यह था कि यह उपवास क्योंकि हरिजन-कार्यके लिए आपके लगातार दौरेके बाद ही होना है, तो क्या, आपके खयालमें, इस उपवाससे आपके स्वास्थ्यपर अत्यधिक दबाव नहीं पड़ेगा। महात्मा गांधी ने जवाब दिया कि मुझे किसी स्थायी क्षतिकी आशंका नहीं है।

यह पूछनेपर कि हिन्दू महासभा और कांग्रेसके बीच चुनाव संघर्ष रोकने और पंडित मदनमोहन मालवीय और श्री अणेको कांग्रेस संसदीय बोर्डमें बनाये रखनेकी क्या कोई सम्भावना है, महात्मा गांधीने कहा:

मैं केवल यही कह सकता हूँ कि मैं फूटको रोकनेकी कोशिश करूँगा।

हरिजन-कार्यके लिए अपने इस दौरे और उपवासके बादके अपने कार्यक्रमके सम्बन्धमें महात्मा गांधीने अभी कुछ नहीं सोचा था।

अन्तिम प्रश्न हरिजन-कोषको खर्च करनेके तरीकेके बारेमें था। महात्माजी ने कहा कि तीन-चौथाई रकम उसी स्थानको लौटा दी जायेगी जहाँसे कि वह आई है, पर शर्त यही है कि उसका वहाँ सदुपयोग होना चाहिए। शेष रचनात्मक कार्यके लिए इस्तेमाल की जायेगी।

[अंग्रेजीसे]
ट्रिब्यून, १९-७-१९३४

२३४. भेंट: एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको[1]

१८ जुलाई, १९३४

पण्डित जवाहरलाल नेहरूकी रिहाई न होनेके बारेमें ब्रिटिश हाउस ऑफ कॉमन्स में दिये गये सर सैम्युअल होरके जवाबके सन्दर्भमें गांधीजी ने कहा:

इस प्रश्नको हरिजन-कार्य सम्बन्धी दौरा पूरा हो जानेतकके लिए टालनेका कोई कारण नही है।

वे पहलेसे ही इसपर विचार कर रहे थे।

यह पूछे जानेपर कि जिस स्वयंसेवकने पण्डित लालनाथको अजमेरमें पीटा था और जिसने एक समाचारपत्रको लिखे गये पत्रमें अपना अपराध स्वीकार कर लिया है, उसके लिए आप क्या प्रायश्चित्त सुझाते हैं, गांधीजी ने कहा कि उसे अपना दिमाग दुरुस्त करना चाहिए।

१. कलकत्ता जाते हुए नई दिल्ली स्टेशनपर।

डॉक्टर आलमके कार्य-समितिसे इस्तीफेके बारेमें एक अन्य प्रश्नका उत्तर देते हुए उन्होंने कहा कि यह इस्तीफा घरेलू कारणोंसे दिया गया है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल १९-७-१९३४

२३५. पत्र : मीराबहनको

१९ जुलाई, १९३४

चि० मीरा,

यह पत्र भी चलती गाड़ीमें लिख रहा हूँ। मुझसे[1] तुम्हें लम्बे और जानकारी-भरे पत्रोंकी आशा नहीं रखनी चाहिए। मेरे लिए तुम्हें हर सप्ताह अपना प्यार भेज देना काफी है। बाकीका काम चन्द्रशंकर अच्छी तरह कर लेते हैं। और अब महादेव और वल्लभभाई भी छूट गये हैं। प्यारेलाल और महादेव मेरे साथ हैं, काका भी हैं। जयरामदास भी छूट गये, मगर मेरे साथ नहीं हैं। अब तो मुख्य व्यक्तियोंमें जवाहरलाल और अब्दुल गफ्फार खाँ ही रह गये हैं।

यह गाड़ी मुझे कलकत्ता ले जा रही है। सम्भव है, गवर्नरसे मेरी मुलाकात हो और मूर से तो होगी ही।

आनेवाले उपवाससे तुम्हें अशान्ति नहीं होनी चाहिए। तुम्हें यह जानकर आश्चर्य होगा कि उपवासकी खबरसे उन आदमियोंके नाम प्रकट हो गये हैं जिन्होंने काली झण्डियोंके प्रदर्शनपर हमला करनेमें भाग लिया था।

मैं पहले ही पूछ चुका हूँ कि वह अधिकार-पत्र तुम्हारे पास है या नहीं जिसका मैंने वायदा किया था।[2]

सस्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२९२) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७५८ से भी।

१. साधन-सूत्रमें 'मुझसे' की जगह 'तुमसे' है।

२. देखिए पृ० १८४।

२३६. पत्र : नारणदास गांधीको

१९ जुलाई, १९३४

चि० नारणदास,

तुम्हारे दोनो पत्र मिल गये हैं। तुम्हारा यह विचार कि गोशालाको स्वतन्त्र रूपसे चलाना चाहिए, मालूम हुआ। यदि ऐसा मान ले तो उसके लिए ट्रस्टी कौन लोग होंगे? शंकरलाल[1], अम्बालालभाई,[2] रणछोडभाई[3] और टाइटस? मैंने उन लोगों के नाम छोड़ दिये हैं जिनके किसी भी समय गिरफ्तार हो जानेकी सम्भावना है। यदि चाहो तो चिमनलाल[4] को भी रख सकते हैं।

अमलाबहनके बारेमें कुछ समझ नही पाता। क्या तुम उसे राजकोटमें रखने के लिए तैयार हो? वर्धामें भी वह नही टिक सकती। यह भार किसके ऊपर डालूं? आखिर मैं वर्धामें कितने दिनतक रह सकता हूँ? अगर मैं गिरफ्तार न किया गया तो उडीसा अथवा बंगाल या सरहदी सूबेमें रहूँगा। मुझे रोजमर्राके काममें अब मत गिनना।

आशा है, वहाँ सब ठीक चल रहा होगा। केशुका क्या हाल है। जमनादासकी तबीयत सुधरी? सन्तोक, केशु, राधा इतने लोगोंका खर्च निकालना है। यह तुम्हें देखना है कि इन्हें कितना दिया जाये। जो ठीक लगे सो रकम निश्चित करना। राधाको निश्चिन्त कर दो। सन्तोक वहाँ कुछ काम करे, या तो बच्चोंको पढानेका या दूसरा जो सम्भव हो। वह स्वयं कहाँ रहती है? केशु कहाँ रहता है? यह बोझ तुम्हारे ऊपर डाल रहा हूँ। पर लाचार हूँ। मैं यहाँ बैठकर निर्णय नही ले पाता। तुम तटस्थ भावसे दृढतापूर्वक न्याय कर पाओगे। मुझसे कुछ पूछना पड़े तो पूछ लेना।

कुसुमका क्या हाल है? प्रेमाकी कोई चिट्ठी ही नही है। यह एक विचित्र बात है। सुशीला मुझे अपने विषयमें लिखने वाली थी, इसलिए उसे नही लिखा।

यह कलकत्ता जाते हुए रेलगाड़ीमे लिख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

१. शंकरलाल बैंकर।
२. अम्बालाल साराभाई।
३. रणछोड़लाल अमृतलाल।
४. चिमनलाल शाह।

[पुनश्चः]

तुम यह मान सकते हो कि आश्रमकी खादी चर्खा संघको दे दी गई है। शंकरलालको ऐसा बता देना।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८४०५से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

२३७. पत्र: प्रेमाबहन कंटकको

१९ जुलाई, १९३४

चि० प्रेमा,

तूने पत्र लिखनेका वचन दिया था, फिर भी नहीं लिखा। यह दुःखकी बात है। मैंने आशा रखी थी कि तू भविष्यमें क्या करना चाहती है इस बारेमें कुछ लिखेगी। क्या यह आशा बनाये रखूं?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३५८)से। सी० डब्ल्यू० ६७९५से भी; सौजन्य: प्रेमाबहन कंटक।

२३८. पत्र: लीलावती आसरको

१९ जुलाई, १९३४

चि० लीलावती,

तेरा पत्र मिला था। तू मेरे साथ रहनेका मोह छोड़ दे। समझ ले कि मैं किसी कामका नहीं हूँ। आश्रम टूटा तो समझ ले कि टूट ही गया। मुझे तो अब यहाँ-वहाँ भटकना है अथवा जेलमें रहना है। उपवासके लिए वर्धामें रहना पड़ेगा। उस समय तू आकर क्या करेगी? वहाँ तू काममें संलग्न है ही, और ठीक व्यवस्थित हो गई है। वहीं रहकर जो सीख सके सो सीख और सिखा सके सो सिखा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९५७४) से। सी० डब्ल्यू० ६५४६ से भी; सौजन्य: लीलावती आसर।

२३९. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

कलकत्ता
१९ जुलाई, १९३४

मेरे लिए यह बड़े खेदकी बात रही कि मैं हावड़ा स्टेशनपर नहीं उतर सका। मैं यह नहीं जानता था कि जनता मेरे हावड़ा स्टेशनपर उतरनेकी आशा कर रही है। वास्तवमें मुझे बर्दवान स्टेशनसे ही लिवा ले जानेकी बात थी; लेकिन अन्तमें मुझे बैलूर स्टेशनसे लिवा ले जाया गया। इस सबमें रेलवे अधिकारियोंके शिष्ट व्यवहारके लिए धन्यवाद। यदि मुझे यह मालूम होता कि जनता हावड़ा स्टेशनपर मेरी प्रतीक्षा कर रही है, तो मैं वहाँ पहुँचनेका आग्रह करता।

मुझे यह जानकर भी दुःख हुआ कि कुछ लोग इस आशंकासे गिरफ्तार कर लिये गये हैं कि कहीं ये मुझे चोट न पहुँचायें या गड़बड़ी न मचायें। मैं पुलिस अधिकारियोंसे अनुरोध करूँगा कि उन्हें रिहा कर दे। मेरा जीवन जनताकी धरोहर है और उसकी सेवामें अर्पित है और जबसे मैंने सार्वजनिक जीवनमें कदम रखा है, तभीसे वह जनताके लिए रहा है। मैं अच्छी तरहसे समझता हूँ कि पुलिसको अपना कर्तव्य पालन करना है। तथापि मैं पुलिससे कहूँगा कि यदि किसी प्रकार सम्भव हो तो उन लोगोंको जो गिरफ्तार किये गये हैं, रिहा कर दें।

[अंग्रेजीसे]
अमृतबाजार पत्रिका, २०-७-१९३४

२४०. पदयात्राकी प्रशंसा

उडीसाकी उन धीमी परन्तु नियमित, सफल और शान्त पदयात्राओंसे साथी कार्यकर्त्ताओंने मुझे फिर रेल और मोटरकारमें घसीट लिया है। अतः ऐसेमें इस आशयके विचारों को प्राप्त कर, जैसेकि नीचे दिये गये हैं, बड़ी खुशी होती है :

> आपकी तीर्थयात्राओंसे मेरा मन गाने लगता है। जिनके लिए आप यह यज्ञ कर रहे हैं, यह उनके अनुरूप ही है। गर्वोक्तिके लिए क्षमा करें, पर इसके विचारसे ही मैं अपनेको आलोकित अनुभव करने लगता हूँ। हरिजन-कार्यके लिए आपका मोटरकारमें दौड़ना न जाने क्यों मुझे विचित्र और बेतुका लगा।

१. साधन-सूत्रमें बताया गया था कि गांधीजी ने यह वक्तव्य "कलकत्ता पहुँचनेके तुरन्त बाद" दिया।

मैं इसे पूर्णतया एक आध्यात्मिक समस्या मानता हूँ ,और एक सच्चे तीर्थकी तरह आपका इसकी ओर पैदल बढ़ना, उत्कृष्ट संगीत या सांध्य छटाकी तरह मेरे मनको अभिभूत कर देता है। मुझे लगता है कि दरिद्रनारायणके पास ऐसे ही पहुँचना चाहिए। क्षमा करें, मेरे ये शब्द एक संगीतकारका वैसा ही स्वतःस्फूर्त उद्गार है, जैसाकि भावातिरेकमें पूरी तरह सुरमें मिले तम्बूरे पेर निकलता है। लोग कहते हैं, "पर पैदल वे कितने गाँवोंमें जा सकते है ?" मेरा हृदय कहता है, "हाँ, पर वे कितनी आत्माओंको छुएँगे।" आत्माएँ, निश्चय ही, गाँवोंसे अधिक महत्त्व रखती हैं और एक तीर्थयात्री हजार प्रचारकोंके बराबर है।

मेरी बड़ी इच्छा है कि साथी कार्यकर्ता हरिजन-कार्यके लिए पदयात्राओंकी खूबी और आवश्यकताको समझें। तूफानी दौरेसे आप लोगोंके हृदयोंको नहीं छू सकेंगे। उनके साथ तो आपका शान्त, व्यक्तिगत और घनिष्ठ सम्पर्क होना चाहिए। मोटरकारों और रेलोंकी तूफानी यात्रा कुछ समयके लिए आदमीको स्तब्ध कर देती है और उसमें साफ-साफ सोचनेकी शक्ति नही रहती। पिछली यात्राके धक्केसे वह प्रकृतिस्थ भी नही हो पाता कि उसे दूसरी यात्राके लिए तैयार होना पड़ता है। इस तरह इनसे यात्री या उसकी यात्राके शिकार किसीको भी प्रकृतिस्थ होनेका अवसर ही नही मिल पाता। मैं जानता हूँ कि वर्तमान कार्यक्रममें कोई बड़ा परिवर्तन नही हो सकता। पर भावी कार्यक्रमके लिए उपरोक्त विचारोंकी कद्र करनी चाहिए और शेष सप्ताहोंके कार्यक्रमको ऐसा रूप देना चाहिए कि भागादौड़ी न करनेके विचारसे उसका तालमेल बैठ सके। मैं जितनी देर मुख्य स्थानोंपर रुकूँ उसमें यथासम्भव कम-से-कम आना-जाना हो। मेरी उपस्थितिका लाभ अन्य कार्योंके लिए नही उठाना चाहिए; फिर चाहे वे कार्य कितने ही सराहनीय क्यों न हों। मेरा मन, जहाँतक सम्भव हो, हरिजन-कार्यपर ही केन्द्रित रहने देना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २०-७-१९३४

२४१. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

२० जुलाई, १९३४

चि० अमला,

तुम्हारा पत्र मिला। मेरे उपवासके बारेमें तुम नाहक ही चिन्तित हो उठी हो। कोई और चिन्तित नहीं है। सात दिनका उपवास मेरी जान नहीं ले सकता। लेकिन यदि मेरा अन्त ही आनेको है तो उपवास हो या न हो, अन्त आयेगा ही। इसलिए मैं तुमसे कहूँगा कि मेरे बारेमें सब चिन्ता त्याग दो।

तुम्हारा वर्धा आनेकी इच्छा करना कर्तव्यकी ओर सरासर उपेक्षा व्यक्त करता है। जब तुम मेरा काम कर रही हो, तो तुम मेरे साथ रह रही हो, फिर चाहे तुम शरीरसे मुझसे मीलों दूर ही क्यों न हो। और यदि तुम मेरा काम न कर रही हो तो चाहे मेरे साथ सशरीर एक ही स्थानपर हो, मेरे साथ नहीं रह रही हो। जब भगवान चाहेगा तुम शरीरसे भी मेरे पास रह सकोगी। लेकिन जैसा मैंने कहा है, यदि तुम आश्रममें नहीं रह सकती तो फिर तुम जैसा चाहो करो। उस हालतमें इजाजतका कोई सवाल ही नहीं है। मैं अपनी प्रकृतिको नहीं दबा सकता और जो असम्भव है, नहीं कर सकता। क्या तुम राजकोट जाकर नारणदासके पास रहोगी? द्वारकानाथ अभी वर्धासे बाहर नहीं गये हैं। मैं बिल्कुल ठीक हूँ। रक्तचाप सामान्य है।

सस्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

२४२. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

२० जुलाई, १९३४

चि० अम्बुजम,

तुमारे दो खत मिले है।

मेरे उपवासकी चिंता मत करो। ईश्वर उसे निर्विघ्न समाप्त करेगा। जहां तक इस शरीरसे कुछ भी सेवा लेना चाहता है कोई हानि नहीं हो सकती है।

पतिके साथ बिलकुल नहि रह सकती है तो मातपितासे कह दो। जैसा वे कहें वह शान्तिसे सुनो-सहन करो। यदि कुम्बकोनम जा सकती है तो अवश्य जाकर उनके साथ रहो। जो चीजके लिये मन तैयार नहि है उसको बलात्कारसे करनेमें लाभ नहि पर हानि है। क्योंकि मन ही आत्माके बंधन मोक्षका कारण है। ऐसे गीता माता कहती है और वही अनुभव सबका है। क्या करती है मुझे अवश्य लिखा करो।

भगवान तुमको शांति देवे।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५९६)से; सौजन्य: एस० अम्बुजम्माल।

२४३. बातचीत: पीड़ित वर्गोंके प्रतिनिधियोंके साथ[1]

[२१ जुलाई, १९३४ या उससे पूर्व][2]

गांधीजी ने बिना किसी कठिनाईके यह स्पष्ट कर दिया कि 'पीड़ित वर्ग' नाममें जो एक दुर्गन्ध है, वह 'हरिजन' नाममें निश्चित रूपसे नहीं है। पर उन्होंने उन्हें यह विश्वास दिलाया कि प्रेममें रखे गये किसी नामको भी उसे पसन्द न करने-वालोंपर वे कदापि थोपना नहीं चाहेंगे। शिकायतोंमें एक शिकायत यह थी कि हरिजन बोर्डमें उन्हें आधीसे ज्यादा सीटें नहीं दी गई हैं। गांधीजी ने उन्हें विस्तार से समझाया कि सवर्ण हिन्दुओंके संगठनने अपने आगे जो कार्य रखा है, उसका स्वरूप पश्चात्तापका है और कहा कि हरिजनोंको पश्चात्तापके इस कार्यमें किसी भी तरह भाग लेनेको नहीं कहा गया है। बेहतर यह होगा कि वे हरिजन सेवक संघ

१. यह महादेव देसाई द्वारा लिखित "कलकत्तेमें तीन दिन" से उद्धृत है।

२. गांधीजी २१ जुलाई, १९३४को कलकत्तेसे कानपुरके लिए चल पड़े थे।

बोर्डके कार्यकी जांच और समीक्षाके लिए उसे सलाह देने और मार्गदर्शन करने के लिए एक स्वतन्त्र सलाहकार बोर्ड बनायें। यह उनका विशेषाधिकार ही नहीं बल्कि कर्त्तव्य भी है। उनका दूसरा कर्त्तव्य, जिसे वे सवर्ण सुधारकोंसे कहीं ज्यादा कारगर ढंगसे निभा सकते हैं, भीतरी सुधार करना है, अर्थात् जो हरिजन मरे हुए पशुओंका मांस खाते हैं और मद्यपान आदिके आदी हैं, उनकी इन आदतोंको छुड़ाना। अन्तमें उन्होंने उनसे अनुरोध किया कि यद्यपि उन्हें इसका पूरा अधिकार है, फिर भी वे अधीर न हों, क्योंकि पिछले दो वर्षोंमें सवर्ण हिन्दुओंकी मनोवृत्तिमें आश्चर्यजनक परिवर्तन हुआ है। मानसिक परिवर्तनसे पहले की गई कार्रवाई यान्त्रिक और निष्फल हो सकती है। पर यदि वह मन और हृदयके परिवर्तनका परिणाम हो तो उसमें ऐसी शक्ति होती है कि सभी उसके ताप और आलोकका अनुभव कर पाते हैं।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १०-८-१९३४

२४४. भाषण : चित्तरंजन सेवा-सदन, कलकत्तामें

२१ जुलाई, १९३४

एक राष्ट्रके रूपमें, हम भारतीयोंमें आत्मविश्वासका अभाव है। हमारे आलोचक अक्सर हमारे बारेमें यह कहते हैं कि हम लोगोंमें रचनात्मक योग्यताओंकी कमी है और हम बड़ी सार्वजनिक संस्थाओंका सफलतासे संचालन और प्रबन्ध नहीं कर पाते। सेवा-सदनने डॉ० विधानचन्द्र राय और सर नीलरत्न सरकारके सुयोग्य मार्गदर्शनमें लगातार जो प्रगति की है, वह इस आरोपका बहुत ही करारा जवाब है।

अभी उस दिन मुझे लाहौरके गुलाबदेवी धर्मार्थ अस्पतालका उद्घाटन करनेके लिए आमन्त्रित किया गया था।[1] उस अवसरपर मेरे मनमें जो विचार उठा, मैं उसे आपके सम्मुख रखना चाहता हूँ। क्या यह आश्चर्यकी बात नहीं है कि स्वर्गीय लाला लाजपतराय और स्वर्गीय देशबन्धु दास, जो अपने समयके सबसे प्रमुख राजनैतिक नेता थे और जिनका सारा जीवन राजनैतिक संघर्षमें बीता, दोनोंने ही अपनी मृत्युके समय अपनी सारी सम्पत्ति राजनैतिक उद्देश्यके लिए नहीं बल्कि विशुद्ध परोपकारी और लोकहितकारी उद्देश्यके लिए दान की। यह एक ऐसी घटना है जो हमारे आलोचकोंके लिए विचारणीय है और उन्हें इसका सार समझना चाहिए। इससे यह जाहिर होता है कि हमारी प्रतिभा मुख्य रूपसे सेवा और लोकहितकी दिशामें काम करती है। बाह्य परिस्थितियोंके कारण हम राजनीतिमें आनेको बाध्य हो जाते हैं और परिणामस्वरूप रचनात्मक कार्यकी हमारी आन्तरिक प्रेरणा दब जाती है और पूरी नहीं हो पाती। स्वर्गीय लोकमान्य तिलकको भी इसीका दुःख रहा।

१. देखिए पृ० २१२-१३ ।

जैसाकि सारे संसारको ज्ञात है, उन्हें दो बार जेल जाना पड़ा और दोनो अवसरो पर उन्होंने अपने समय और प्रतिभाका उपयोग कोई राजनैतिक रचना लिखनेमें नही बल्कि धार्मिक और वैज्ञानिक रचनाएँ लिखनेमें किया। एक बार सुप्रतिष्ठित 'गीता रहस्य' लिखा और दूसरी बार वेदोकी प्राचीनतापर वह स्मरणीय ग्रन्थ लिखा जो अब विश्व-भरमें प्रसिद्ध हो गया है। जो बात मैं पहले भी कह चुका हूँ उसे यदि आप दोहरानेकी अनुमति दें तो, इससे भी यही सिद्ध होता है कि यद्यपि आज राजनीति हमारे समूचे जीवनपर छाई लगती है, पर हमारी आत्मा जिस आदर्शके लिए लालायित है, वह सेवा ही है। हमारी आन्तरिक प्रवृत्ति, धर्मके सीमित या संकीर्ण अर्थमें नही बल्कि अधिकस-अधिक व्यापक अर्थमें धार्मिक है और यदि कभी हम राजनीतिमें व्यस्त होनेको बाध्य होते है, तो उसका भी उद्देश्य अपनी रचनात्मक प्रतिभाको कार्यक्षम बनानेके लिए अपना मार्ग प्रशस्त करना होता है।

आपको मालूम ही है कि देशबन्धु और मै परस्पर कितने घनिष्ठ हो गये थे, खासकर उनके अन्तिम दिनोंमे जबकि हम दार्जिलिंगमें एक-साथ ठहरे हुए थे। हमने मिलकर रचनात्मक कार्यक्रमकी योजना बनाई थी और मै उसे प्रयोगमें लानेमें उनके पूर्ण सहयोगकी आशा कर रहा था। परन्तु ईश्वरकी इच्छा कुछ और थी। उस भेंटके बाद एक सप्ताहके अन्दर ही देशबन्धु स्वर्ग सिधार गये। जो हम दोनोका समान आदर्श था उसके लिए कुछ भी कर सकनेपर मुझे सदा बड़ी प्रसन्नता होती है। इसलिए डॉ० विधानचन्द्र रायसे जब इस समारोह[1] का निमन्त्रण मिला तो मैंने उसका सहर्ष लाभ उठाया। आप लोगोंसे मेरी यह अपील है कि इस संस्थाकी आप जितनी भी सहायता कर सकते हैं करें। स्वर्गीय देशबन्धुकी स्मृतिमें कमसे-कम इतना तो आपका फर्ज है ही।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, २२-७-१९३४

२४५. बातचीत : विद्यार्थियोंके साथ

[२१ जुलाई, १९३४][2]

प्रश्न : यह मानते हुए कि स्वतन्त्रता-प्राप्तिका एकमात्र साधन जनक्रान्ति है, क्या आप यह विश्वास रखते हैं कि ऐसी क्रान्तिके दौरान, सभी सम्भव उत्तेजनाओंके बावजूद, जनता विचार और कर्मसे सर्वथा अहिंसक रह सकती है और रहेगी? अहिंसा का यह स्तर प्रप्त करना एक व्यक्तिके लिए तो सम्भव है। लेकिन क्या आप समझते हैं कि जनताके लिए कर्ममें अहिंसाके इस स्तरतक पहुँच सकना सम्भव है?

१. सेवा-सदनके बाल-कक्षकी आधार-शिला रखनेका।

२. अमृतबाजार पत्रिका, २२-७-१९३४ से। साधन-सूत्रमें "१८ जुलाई, १९३४" है, जो कि गलत है।

गाधीजी . इस समय आपका यह प्रश्न करना विचित्र है, क्योंकि हमारे अहिंसात्मक संघर्षका पूरा दौर इस बातका प्रमाण है कि जहाँ-कही हिंसा भड़की है, जनसमूहकी ओरसे नही, बल्कि यदि मै कहूँ तो वर्गोकी ओरसे भड़की है, यानी वह बुद्धिजीवियो द्वारा करवाई गई है। हिंसात्मक संघर्षमे भी यद्यपि कभी-कभी व्यक्ति अपनेपर काबू खो देता है और सब-कुछ भूल जाता है, फिर भी संघर्परत जन-समूह वैसा करनेकी हिम्मत नही करता और वैसा करता भी नही है। जन-समूह केवल आदेश मिलनेपर ही हथियारोका प्रयोग करता है और आदेशानुसार ही हिंसाग्निको रोकता है, भले ही बदला लेने और जवाबी चोट करनेकी व्यक्तिगत भावना कितनी ही प्रबल क्यो न हो। यदि अहिंसाके अधीन जन-समूह अनुशासन-बद्ध हो, तो कोई ऐसा कारण नही है कि वह उस अनुशासनका प्रदर्शन न कर पाये जो आम तौरपर एक सुसचालित युद्धमे लड़नेवाली फौज प्रदर्शित करती है। इसके अलावा अहिंसात्मक सेनापतिको एक विशेष सुविधा यह भी प्राप्त है कि उसे संघर्षको सफलतापूर्वक चलानेके लिए हजारो नेताओकी जरूरत नही है। अहिंसाके सन्देशके प्रसारणके लिए इतने सारे लोगोकी जरूरत नही है। कुछ सच्चे पुरुष व महिलाओने यदि अहिंसाकी भावनाको ग्रहण कर लिया है, तो उनका दृष्टान्त अन्ततोगत्वा समस्त जन-समूहको प्रभावित अवश्य करेगा। मैंने आन्दोलनके प्रारम्भमे ठीक इसी चीजका अनुभव किया। मैंने पाया कि लोग वास्तवमे ऐसा विश्वास करते है कि मै अहिंसाका उपदेश तो देता हूँ, किन्तु दिलसे हिंसाका समर्थन करता हूँ। उन्हे इसी ढगसे नेताओके वचन समझने और पढनेका प्रशिक्षण दिया गया था। लेकिन जब उन्होंने यह जान लिया कि मै जो-कुछ कहता हूँ, मेरा अभिप्राय भी वही होता है, तो उन्होंने अत्यन्त कठिन परिस्थितियोंमें सचमुच अहिंसाका पालन किया। चौरी-चौराकी कोई पुनरावृत्ति नही हुई। जहाँतक विचारोमे भी अहिंसाकी बात है, उसका तो केवल ईश्वर ही निर्णायक है। लेकिन इतना निश्चित है कि कर्ममे अहिंसा तबतक कायम नही रखी जा सकती जबतक कि वह विचारोमे भी उसके साथ-साथ न चल रही हो।

क्या आपके खयालसे आपके आदर्शोंकी प्राप्तिके लिए शोषको और शोषितोमें कुछ भी सहयोग सम्भव है? क्या आप समझते हैं कि वह समय आ गया है जब कांग्रेसको पूंजीपतियों और जमींदारोंके हितोंकी परवाह न करके जन-साधारणके अधिकारोके लिए कोई निश्चित रवैया अख्तियार कर लेना चाहिए? क्या आपका यह विचार नहीं है कि किसी राष्ट्रवादी कार्यक्रमके आधारपर जन-साधारणको कारगर रूपमें संगठित करना सम्भव नहीं है और कार्यकर्त्ताओके पास इसके सिवा कोई विकल्प नहीं है कि वे शोषित किसानो और मजदूरोंके पक्षमें पूंजीपतियों और जमींदारोके विरुद्ध खड़े हो जायें? क्या आप नहीं मानते कि वर्गयुद्ध अनिवार्य है और वर्गहितोको विशाल मानवताकी खातिर नष्ट हो जाना चाहिए?

मैंने कभी नही कहा कि जबतक शोषण और शोषणकी इच्छा बनी हुई है तबतक शोषको और शोषितोमें सहयोग होना चाहिए। इतनी ही बात है कि मै यह नही मानता कि तमाम पूंजीपति और जमीदार जन्मजात आवश्यकताके कारण

शोषक ही है या उनके और जन-साधारणके हितोंमें कोई बुनियादी या अमिट विरोध है। शोषणमात्रका आधार शोषितोंका सहयोग है, भले वह खुशीसे दिया गया हो या मजबूरीसे। हमें यह स्वीकार करना कितना ही बुरा लगता हो, परन्तु यह सत्य है कि यदि लोग शोषकोंकी आज्ञाका पालन करनेसे इनकार कर दें तो शोषण नही होगा। परन्तु स्वार्थ बीचमें आ जाता है और जो जंजीरें हमें बाँधे हुए होती है, हम उन्हींसे चिपटे रहते हैं। ऐसा बन्द होना चाहिए। जरूरत इस बातकी नही है कि जमीदारों और पूँजीपतियोंको मिटा दिया जाये, बल्कि जरूरत इस बातकी है कि उनके और जन-साधारणके मौजूदा सम्बन्धोंका रूप बिलकुल बदलकर अधिक कल्याण-कारी और शुद्ध बना दिया जाये। आप पूछते है कि 'क्या कांग्रेसके लिए पूँजीपतियो और जमीदारोंके हितोंके विरुद्ध जन-साधारणके अधिकारोंके लिए खड़े हो जानेका समय नही आ गया है?' मेरा उत्तर है कि जबसे कांग्रेस मैदानमें आई है, भले ही उसमें बहुमत नरम दलवालोंका रहा हो चाहे गरम दलवालोंका, तबसे उसने हमेशा इसके सिवा और कुछ नही किया है। श्री ए० ओ० ह्यूमके नेतृत्वमें अपने जन्मसे ही कांग्रेसने आम जनताका प्रतिनिधित्व करनेकी कोशिश की है। सच तो यह है कि उसकी शुरूआत ही इस तरहसे हुई; और उसके लगभग आधी शताब्दीके इतिहासका अध्ययन करनेसे पूरी तरह साबित हो जाता है कि कांग्रेस बराबर आम जनताका प्रतिनिधित्व करनेमें प्रगतिशील रही है।

आप पूछते है, क्या कांग्रेसके लिए पूँजीपतियो और जमीदारोंके हितोंकी परवाह न करके जन-साधारणके हकोंके पक्षमें कोई निश्चित रवैया अख्तियार कर लेनेका समय नही आ गया है? मेरा उत्तर है, नहीं। यदि हम जन-साधारणके हितैषी कहे जानेवाले ऐसे रवैये अख्तियार करेंगे, तो केवल अपनी और उनकी कब्र ही खोदेंगे। स्व० सर सुरेन्द्रनाथकी तरह मैं तो जमीदारों और पूँजीपतियोंको जन-साधारणकी सेवाके लिए इस्तेमाल करना पसन्द करूँगा। हमे पूँजीपतियोंके लिए गरीबोंके हितोंका बलिदान नही करना चाहिए। हमें उनके हाथोंमें नही खेलना चाहिए। हमे उस हदतक उनपर भरोसा रखना चाहिए जिस हदतक वे जन-साधारणकी सेवाके लिए अपना लाभ छोड़ सकें। क्या आपके विचारसे कथित भाग्यशाली वर्ग राष्ट्रीय भावनाओंसे सर्वथा विहीन है? ऐसा सोचना उनके साथ घोर अन्याय और जन-साधारणका अपकार होगा। क्या शासक उनका शोषण नही करते? वे उच्च भावनाओंके असरसे अछूते नही हैं। यह मेरा हमेशाका अनुभव है कि प्रेमपूर्ण बातका उनपर जरूर असर होता है। यदि हम उनका विश्वास प्राप्त कर ले और उन्हें निश्चिन्त होने दें, तो हम देखेंगे कि वे क्रमशः जन-साधारणको अपनी दौलतमें हिस्सेदार बनानेके विरुद्ध नही है। इसके सिवा, हम जन-साधारणके साथ-साथ अपने-आपसे भी तो पूछें कि क्या हमने अपने और उमड़ती करोड़ों जनताके बीचकी खाई पाट ली है? काँचके घरोंमें रहनेवाले हम लोगोंको पत्थर तो नही फेंकने चाहिए। हम कहाँतक गरीबोंके जीवनमें शरीक होते है? मै अपने लिए तो स्वीकार करता हूँ कि यह अभीतक एक आकांक्षा ही है। हमने खुद रहन-सहनकी वे आदतें पूरी तरह नही

छोड़ी है जिनके लिए पूँजीपति बदनाम है। वर्ग-युद्धका विचार मुझे नही जँचता। भारतमें वर्ग-युद्ध अनिवार्य नही है, इतना ही नही यदि हम अहिंसाका सन्देश समझ लें तो हम उससे बच सकते हैं। जो वर्ग-युद्धके अनिवार्य होनेकी बातें करते हैं, उन्होंने या तो अहिंसाके फलितार्थ समझे ही नही या केवल ऊपरसे समझे हैं।

धनवान स्वयं गरीब हुए बिना गरीबोंकी सहायता कैसे कर सकते हैं? धन या पूँजीवाद ऐसी प्रणाली है जो अपनी स्थिति और प्रतिष्ठा बनाये रखनेके लिए पूँजी और श्रमके बीच जबर्दस्त अन्तर बराबर कायम रखनेकी कोशिश करती है। इसलिए क्या इन दोनोंमें से किसी एकके हितोंको भारी हानि पहुँचाये बिना कोई समझौता कराना सम्भव है?

धनवान अपने धनका उपयोग स्वार्थपूर्ण सुखोंके लिए न करके गरीबोंके हित-साधनके लिए कर सकते हैं। यदि वे ऐसा करें तो गरीबों और अमीरोंके बीच आज जो अमिट खाई है वह नही रहेगी। वर्ग-विभाजन तो रहेगा, मगर वह साधारण होगा, बहुत भारी नही होगा। हमें पश्चिमसे आये हुए पथभ्रष्ट करनेवाले शब्दों और नारोंके वशीभूत नही हो जाना चाहिए। क्या हमारी अपनी विशिष्ट प्राच्य परम्पराएँ नही हैं? क्या पूँजी और श्रमके प्रश्नका हम अपना हल निकालनेमें समर्थ नही हैं? वर्णाश्रम धर्मकी प्रणाली यदि ऊँच-नीच और पूँजी व श्रमके अन्तरको दूर करके उनका सुमेल साधनेका साधन नही है तो और क्या है? इस विषयमें पश्चिमसे आनेवाली हर चीजपर हिंसाका रंग चढ़ा होता है। मुझे उसपर इसलिए आपत्ति होती है कि इस मार्गके अन्तमें जो सर्वनाश है, उसे मैं देख चुका हूँ। आजकल पश्चिममें भी अधिक विचारशील लोगोंको उस अन्धकूपके प्रति चिन्ता हो रही है जिसकी ओर उनकी प्रणाली दौड़ी चली जा रही है। और मेरा पश्चिममें जो भी प्रभाव है, वह ऐसा हल निकालनेके मेरे सतत प्रयत्नके कारण है जिससे हिंसा और शोषणके कुचक्रसे निकलनेकी आशा होती है। मैंने पाश्चात्य समाज-व्यवस्थाका सहानुभूतिपूर्वक अध्ययन किया है और मुझे पता चला है कि पश्चिमकी आत्मामें जो बेचैनी भरी है, उसकी जड़में सत्यकी अविश्रान्त खोज है। मैं इस वृत्तिकी कद्र करता हूँ। हम वैज्ञानिक अनुसन्धानकी उस वृत्तिसे अपनी प्राच्य संस्थाओंका अध्ययन करें, तो संसारने जिस समाजवाद और साम्यवादके सपने अभीतक देखे हैं, उससे अधिक सच्चे समाजवाद और साम्यवादका हम विकास कर लेंगे। यह मान लेना बेशक गलत बात है कि जन-साधारणकी दरिद्रताके प्रश्नके बारेमें पाश्चात्य समाजवाद या साम्यवाद अन्तिम हल है।

हम ठीक-ठीक और स्पष्ट रूपसे जानना चाहते हैं कि अहिंसासे आपका क्या अभिप्राय है। यदि अहिंसासे आपका अभिप्राय व्यक्तिगत घृणाका अभाव है तो हमें इसपर कोई आपत्ति नहीं है। हमें आपत्ति तो तब होती है जब आप अहिंसाका अर्थ किसीको न मारना बताते हैं। युद्ध व्यक्तिगत आधारपर नहीं लड़े जाते, बल्कि

राष्ट्रीय सम्मानकी अथवा हितोंकी रक्षाके लिए लड़े जाते हैं। विवाद नैतिक तथा शारीरिक दोनों ही ताकतोंके अधिकतम प्रयोग द्वारा सुलझाये गये हैं। जब हमारे राष्ट्रीय आदर्शकी विजयके लिए सब लोग सफलतापूर्वक शारीरिक शक्तिका प्रयोग कर सकते हैं और जब वह सबसे छोटा रास्ता है, तो आप उसपर आपत्ति क्यों करते हैं? इसके अलावा, संसार अभी भी इतना आगे नहीं बढ़ पाया है कि नैतिक आग्रहकी कद्र कर सके।

मेरी अहिंसा नैतिक बलके अलावा अन्य सभी बलोके प्रयोगको अस्वीकार नही करती। पर यह कहना कि राष्ट्रीय समस्याओंके समाधानके लिए विश्वमें शारीरिक शक्तिका प्रयोग होता रहा है या आज हो रहा है, एक बात है और यह कहना कि उसका प्रयोग होते रहना चाहिए, दूसरी बात है। हम अन्धाधुन्ध पश्चिमकी नकल नही कर सकते। पश्चिममें यदि कुछ चीजें की जाती हैं तो उनके पास उनके प्रतिकार भी है; हमारे पास नही है। उदाहरणके लिए, सन्तति-निरोधको ही लीजिए। यह पद्धति वहाँ ठीक तरह लागू होती दिख सकती है, परन्तु यदि हम उस पद्धतिको, जैसीकि वह पश्चिममें प्रतिपादित की जा रही है, अपना ले, तो दस वर्षमें भारतमें नपुंसकोंकी एक नस्ल पैदा हो जायेगी। इसी प्रकार यदि हम पश्चिमकी तरह हिंसाको अपनाते है तो शीघ्र ही हम दिवालिया हो जायेंगे, जैसेकि पश्चिम तेजीसे होता जा रहा है। अभी उस दिन मेरी एक यूरोपीय मित्रसे बात हो रही थी। वे सभ्यताके इस रूपसे भयभीत थे कि पश्चिमके अत्यन्त उद्योगसम्पन्न राष्ट्रो द्वारा विश्वकी अश्वेत नस्लोका बड़े पैमानेपर शोषण हो रहा है। अहिंसाका सिद्धान्त आज परीक्षाके दौरमें से गुजर रहा है। आत्मिक शक्तियो और पाशविक शक्तिके वीच जिन्दगी और मौतका संघर्ष चल रहा है। इसलिए संकटकी इस घडीमें हमें परीक्षासे नही कतराना चाहिए।

बंगालके नजरबन्द युवकों और युवतियोंके सिलसिलेमें कांग्रेसने क्या किया है या उसे क्या करना चाहिए?

मेरे पास जो समाधान है, वह मैंने आपको बता दिया है। काग्रेस-संगठनको यदि हम अहिंसात्मक रीतिसे और ईमानदारीसे चलायें, तो उसमें आज जो भ्रष्टाचार है' हम उसे उससे मुक्त कर सकेंगे। वह भ्रष्टाचारसे बुरी तरह ग्रस्त है, और मुझे खेदके साथ यह स्वीकार करना पड़ता है कि बंगाल इस मामलेमें सबसे बड़ा पापी है। मै आपसे वादा करता हूँ कि इन नजरबन्दोमें से हरएक रिहा कर दिया जायेगा। पर हमें मन, वचन और कर्मसे सच्चा अहिंसक होना होगा।

अपने समाजके उन सभी तत्वोंको, जिनका किसी-न-किसी तरह शोषण या दमन होता है, हम हरिजन मानते हैं। आपका सत्याग्रह-आन्दोलन सदा उनके लिए है जो पददलित हैं। फिर एक पृथक् हरिजन-आन्दोलनकी क्या जरूरत है?

मै जो आन्दोलन चला रहा हूँ, यह एक पृथक हरिजन-आन्दोलन नही है। यह विश्वव्यापी महत्त्व रखता है।

क्या भारतके युवकोंके लिए सामाजिक व्यवस्थाको बदलनेका समय आ गया है? यह कार्य स्वराज्यके लिए होनेवाले राजनैतिक प्रयत्नसे पहले होना चाहिए या पीछे?

सामाजिक व्यवस्थाको बदलना और राजनैतिक स्वराज्यके लिए संघर्ष, दोनों ही साथ-साथ चलने चाहिए। यहाँ पहले, पीछे या दोनोंको अलग-अलग खण्डोंमें बाँटनेका तो सवाल ही पैदा नहीं होता। परन्तु नई सामाजिक व्यवस्था जबर्दस्ती नहीं लादी जा सकती। वह इलाज बीमारीसे भी खराब रहेगा। मैं सुधारके लिए उतावला हूँ। मैं सामाजिक व्यवस्थामें व्यापक और आमूल परिवर्तन लाना चाहता हूँ। पर वह आंगिक विकास होना चाहिए, जबर्दस्ती और ऊपरसे थोपी हुई चीज नहीं होनी चाहिए।

कुछ नकली राष्ट्रवादी मुसलमानोंको अवैध और अयुक्तियुक्त रियायतें देकर, जिससे उनकी कभी न शान्त होनेवाली भूख और बढ़ती ही जाती है, उन्हें कांग्रेसके अन्दर रखनेकी कोशिशसे आखिर क्या फायदा है?

यदि राष्ट्रवादी मुसलमान नकली राष्ट्रवादी हैं, तो हम भी नकली राष्ट्रवादी हैं। इसलिए वह शब्द हमें अपने कोशसे निकाल देना चाहिए। 'अयुक्तियुक्त रियायत' से आपका क्या मतलब है, मुझे नहीं मालूम। पर आप मुझे कभी किसी अवैध रियायतका समर्थन करते नहीं पायेंगे। हमारे बीच यह एक समान आधार है।

खिलाफतके प्रश्नको कांग्रेस-मंचपर लानेके कारण क्या कांग्रेस-दल साम्प्रदायिक सम्बन्धोंकी कटुताके लिए उत्तरदायी नहीं है?

कांग्रेसका खिलाफत-आन्दोलनमें भाग लेना साम्प्रदायिक सम्बन्धोंमें कटुता पैदा होनेके लिए उत्तरदायी है, यह कहना ऐतिहासिक दृष्टिसे सच नहीं है। वास्तविकता इससे बिलकुल उल्टी है, और मेरी मान्यता सदा यही रहेगी कि कांग्रेसका अपने मुसलमान देशवासियोंकी खिलाफतकी लड़ाईमें उनका साथ देना ठीक ही था।

[अंग्रेजीसे]

टु दि स्टूडेंट्स, पृ० २०८-९

२४६. भाषण : टाउनहॉल, कलकत्तामें[1]

२१ जुलाई, १९३४

अभिनन्दनका हिन्दीमें उत्तर देते हुए गांधीजी ने इस बातपर खेद प्रकट किया कि उन्हें बंगला भाषा नहीं आती। इस सुन्दर और मधुर भाषाको, जिसकी गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुरकी रचनाओंसे इतनी श्रीवृद्धि हुई है, सीखनेकी उनके मनमें बड़ी साध रही है।

उन्हें वह अवसर याद आया जब देशबन्धु चित्तरंजन दासके हाथों उन्हें एक और नागरिक अभिनन्दन-पत्र प्राप्त हुआ था। देशप्रिय यतीन्द्रमोहन सेनगुप्तके साथ, जिन्हें वे अब अपने निकट नहीं पा रहे थे, अपने घनिष्ठ और अन्तरंग सहयोगका भी उन्होंने मार्मिक शब्दोंमें उल्लेख किया।

अभिनन्दनमें उनकी प्रशंसामें जो-कुछ कहा गया था, उसे महात्माजी ने उनका आशीर्वाद माना और कहा मै हैरान हूँ कि उत्तरमें क्या कहूँ। मैं तो ईश्वरसे केवल यह हार्दिक प्रार्थना ही कर सकता हूँ कि यह बृहत् नगर निगम एक आदर्श निकाय बन जाये और ऐसा उदाहरण रखे जिसके अनुकरणसे अन्य म्युनिसिपल संस्थाएँ भी लाभ उठा सकें।

कलकत्तेको, जिसमें सुन्दर उद्यान, बड़ी-बड़ी सड़कें और आलीशान इमारतें हैं, महलोंकी नगरी कहना ठीक ही है। पर इस हकीकतको नजरन्दाज नहीं किया जा सकता कि तस्वीरका एक दूसरा पहलू भी है। एक ओर जहाँ ये शानदार चीजें हैं, जिन-पर यह नगर गर्व कर सकता है, वहाँ दूसरी ओर हरिजन जिन बस्तियोंमें रहते हैं उनकी दशा दयनीय है। इस विरोधाभाससे मुझे बहुत दुःख पहुँचता है। सुबह मुझे कुछ हरिजन-बस्तियोंमें जानेका अवसर मिला था और जिस अभागी स्थितिमें वे लोग रह रहे हैं — न हवा है, न रोशनी है, न पीनेको पर्याप्त पानी है — उसे देख कर मुझे बड़ी पीड़ा हुई। मैं तो स्वयं अपनी मर्जीसे हरिजन बन गया हूँ और यदि मैं कहूँ कि मुझे खुद उस जगह बेचैनी लगी थी तो यह कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि इस बड़े शहरकी सफाई और सेहतकी जिम्मेदारी शहरके इन भंगियों और जमादारोंपर ही हैं। नगर निगमके सदस्योंसे मेरी प्रार्थना है कि उन्हें हर साल कुछ रकम इन लोगोंकी विभिन्न शिकायतोंको दूर करनेके लिए

१. नगर निगमकी ओरसे महापौर नलिनीरंजन सरकारने तीसरे पहर अभिनन्दन-पत्र भेंट किया था, जो सफेद खद्दरपर बंगलामें छपा था।

निकालनी चाहिए। मानवता और न्यायके नामपर मेरी उनसे अपील है कि वे अपना कुछ समय और ध्यान इस महान ध्येयपर लगायें।

अन्तमें, गांधीजी ने कहा कि अखबारोंमें महापौरके चुनाव सम्बन्धी विवादपर जो बड़ी-बड़ी सुर्खियां छपी हैं उनपर मेरा ध्यान आकर्षित किया गया है। मुझे आशा है कि इस तरहकी चीज फिर नहीं होगी। उन्होंने निगमके सदस्योंसे अपील की कि वे ऐसी कोशिश करें जिससे निगमके सभी विभाग, जाति, रंग और धर्मके भेदभावके बिना, नगरके हितोंके समान उद्देश्यके लिए एक होकर कार्य कर सकें। उन्होने आशा प्रकट की कि यह बृहत् निकाय इस ढंगसे काम करेगा जिससे सारा हिन्दुस्तान इस पर गर्व अनुभव करेगा और इसे सराहेगा।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, २२-७-१९३४

२४७. भाषण : सार्वजनिक सभा, कलकत्तामें[1]

२१ जुलाई, १९३४

गांधीजी ने शुरूमें कलकत्तेमें ज्यादा समयतक न रह सकनेके लिए खेद प्रकट किया। उन्हें हरिजन-कार्यके सिलसिलेमें रातको ही बंगालसे रवाना हो जाना था। उन्होंने आगे कहा कि यहां इतने सारे लोगोंकी उपस्थितिसे स्पष्ट है कि बंगालके लोग हरिजनोंके प्रति अपने कार्यको नहीं भूलेंगे। वे उसे भूल ही नहीं सकते। उन्होंने कहा कि इस महान कार्यके लिए कलकत्तेमें उन्होंने अभीतक ६५,००० रुपये इकट्ठे किये हैं और आशा व्यक्त की कि रातको इस शहरसे रवाना होनेसे पहले उन्हे और भी दान मिलेगा। उन्हें यह जानकर खुशी हुई कि बंगाल बस सिंडीकेट तक ने ५०१ रुपये दान देकर अपनेको इस ध्येयसे जोड़ दिया है। हरिजन-कार्य एक ऐसा कर्त्तव्य है जो सभी वर्गों, अपनेको सनातनी कहनेवाले लोगोतकके लिए प्रिय हुए बिना नहीं रह सकता। मानवताको छोड़े बिना इस कार्यकी उपेक्षा नहीं की जा सकती।

अपना भाषण जारी रखते हुए उन्होंने कहा कि कुछ मजदूरोने, जो यहाँ भारी संख्यामें एकत्रित हैं, मुझसे पूछा है कि उनकी भलाईके लिए मेरे पास क्या कार्यक्रम है। मैं अपना जीवन हरिजनोंकी सेवाके लिए समर्पित कर चुका हूँ और इस तरह मजदूरोंकी सेवा भी कर रहा हूँ।

मैं चरखेके प्रचारका काम कर रहा हूँ। यह एक ऐसा कार्य है जिसका लाभ लाखों गरीब हरिजनोंको मिलेगा। मैं इन गरीब मजदूरोंके हितके लिए काम कर

१. सभा देशबन्धु पार्कमें हुई थी और गांधीजी हिन्दीमें बोले थे।

रहा हूँ, इसलिए मैं खुद एक मजदूरकी तरह रहता हूँ और मैंने गरीबोंको गले लगाया है। उन्होंने कहा, उनकी खुशीको मैं अपनी खुशी और उनके दुःखको अपना दुःख मानता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, २२-७-१९३४

२४८. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको[1]

२१ जुलाई, १९३४

आपसी मतभेदोंको मिटानेके लिए जब मैंने तीन दिनके लिए कलकत्ते जाना स्वीकार किया, तो डॉ० विधानचन्द्र रायने पत्र लिखकर मुझसे पूछा कि सभी कार्य-कर्त्ताओंको एक जगह कैसे इकट्ठा किया जा सकता है और क्या मौलाना अबुल कलाम आजादको एक ऐसा तटस्थ पक्ष माना जा सकता है जो कार्यकर्त्ताओंके नाम निमन्त्रणपत्र जारी कर सके। मैंने तुरन्त लिखा कि मौलाना साहब निमन्त्रणपत्र जारी करनेके लिए उपयुक्त रहेंगे, और उन्होंने निमन्त्रण जारी कर दिये।

वहाँ पहुँचनेपर मैंने इस बातको लेकर कुछ असन्तोष देखा कि काफी निमन्त्रण-पत्र भेजे नहीं गये हैं। मौलाना साहब इसके लिए तैयार थे कि जैसे ही उन्हें नाम मिलेंगे वे और निमन्त्रण-पत्र भेज देंगे। नाम उन्हें दिये तो गये लेकिन वे इतने ज्यादा थे कि मीटिंगके लिए समय रहते कार्ड भेजे नहीं जा सकते थे। इसलिए मैंने यह सुझाव रखा कि यदि जाँच करनेवाले कार्यकर्त्ताओंकी शिनाख्त कर दें तो उन्हें बिना कार्डके मीटिंगमें आने दिया जाये। यह बयान देना मेरे लिए जरूरी हो गया ताकि कार्यकर्त्ताओंको एक जगह इकट्ठा करनेके सिलसिलेमें जो-कुछ हुआ है, वह स्पष्ट किया जा सके।

विभिन्न गुटोंके साथ मैंने पूरी तरह और खुलकर विचार-विमर्श किया, और उसके फलस्वरूप मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा कि यदि दलगत भावनासे बचना है तो कांग्रेस-संगठनको वोटोंकी हेराफेरीसे, जिसमें वोटका खरीदनातक आ जाता है, मुक्त करना होगा।

इस तरहकी हेराफेरीसे बचना बहुत ही आवश्यक है, खासकर बंगालमें, जहाँ दलगत भावना बहुत तीव्र है। मुझे यह कहते हुए खुशी होती है कि ४८ जिलोंमें से २२ ने, अपने प्रतिनिधियोंके जरिए, मुझे यह यकीन दिलाया है कि वे मेरे सुझावका समर्थन करते हैं और यह भी यकीन दिलाया है कि वे निर्विरोध चुनाव करायेंगे। यदि पूर्वोक्त जिलोंके प्रतिनिधि अपने वादे पूरे कर सकें, तो भविष्यके लिए यह एक शुभ लक्षण होगा और इतने सारे जिलोंके उदाहरणका दूसरोंपर भी अवश्य प्रभाव पड़ेगा।

१. कलकत्तासे गांधीजी कानपुर जा रहे थे और एसोसिएटेड प्रेसका एक प्रतिनिधि आसनसोल तक उनके साथ गया था।

हर हालतमे, बंगालके कांग्रेस-संगठनको सभी अवांछनीय तत्त्वोसे मुक्त करनेका मेरे पास कोई ऐसा नुस्खा नही है जो मैं सुझा सकूं। जबतक कांग्रेसियोंकी भारी बहुसंख्या पूरी ईमानदारीसे कांग्रेसका काम करनेका संकल्प न कर ले, तबतक बंगालके कांग्रेस-संगठन या किसी भी कांग्रेस-संगठनको चलाना सम्भव नही होगा। यह बात भूलनी नही चाहिए कि मेरे सुझावका अर्थ किसी भी तरहसे या किसी भी रूपमे चुनाव-बोर्डका अतिलंघन नही है। उसके अन्तिम निर्णायक तो श्री एम० एस० अणे है। निर्विरोध चुनाव करनेवाले जिलोंसे मिले पत्रोंकी भी उन्हे जांच करनी होगी। उस बोर्डको उस तरहके निर्विरोध चुनावोंकी घोषणा करनी होगी, और यदि दुर्भाग्यसे चुनाव लड़े ही गये तो उक्त बोर्ड ही उनका नियमन करेगा।

इसलिए, यह आशा की जाती है कि सभी कांग्रेसी, चाहे वे किसी भी पक्षके क्यों न हों, मेरे सुझावपर ध्यान देंगे। मुझे यकीन है कि कांग्रेस-संगठनमे जबतक शुद्धि और ईमानदारी नही होगी, तबतक बंगालको उन बहुत-सी विशेष बुराइयोंसे, जिनका वह आज शिकार है, मुक्त नही किया जा सकेगा।

अन्तमे, मैं यह कहना चाहूंगा कि मेरी सलाहका परिणाम कुछ भी क्यों न निकले, परन्तु कार्यकर्त्ताओंने हर जगह विनम्रता दिखाई और जो-कुछ मैंने उनसे कहा, उसे उन्होंने बहुत ही ध्यानसे सुना।'

एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिने जब उनसे बंगालमें हरिजन-आन्दोलनकी प्रगति के बारेमें पूछा, तो महात्मा गांधीने कहा कि जबतक मैं परिस्थितिका और भी अच्छी तरह अध्ययन न कर लूं, इस प्रश्नका उत्तर नहीं दे सकता। फिर भी, प्रान्तने हरिजन-कोषमें जिस उदारतासे दान दिया है, उसपर उन्होंने बहुत सन्तोष प्रकट किया।

पण्डित जवाहरलाल नेहरूकी रिहाई और बंगालके नजरबन्दोंके सवालपर कुछ भी कहनेसे उन्होंने इनकार कर दिया।

[अंग्रेजीसे]

स्टेट्समैन, २२-७-१९३४, अमृतबाजार पत्रिका, २२-७-१९३४ भी

१. इससे आगेका अंश अमृतबाजार पत्रिकासे लिया गया है।

२४९. पत्र : सनातनियोंको

[२२ जुलाई, १९३४][1]

बनारसके एक कट्टर सनातनीके पत्रके जवाबमें महात्मा गांधी कहते हैं कि मैं अस्पृश्यताके विषयमें शास्त्रोंकी सही व्याख्या मिल सकनेकी दृष्टिसे पण्डितोंकी चर्चा सुनने को हमेशा तैयार हूँ। फिर भी यदि अध्यक्षका निर्णय मुझे ठीक नहीं जँचेगा, तो मैं उसे स्वीकार करनेको बाध्य नहीं होऊँगा।[2]

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, २४-७-१९३४

२५०. उत्तर : कानपुरके नागरिक अभिनन्दनोंका[3]

२२ जुलाई, १९३४

म्यूनिस्पल और जिला बोर्डों द्वारा भेंट किये गये अभिनन्दन-पत्रोंका उत्तर देते हुए, गांधीजी ने म्यूनिस्पल-बोर्डको हरिजन-उद्धारके उसके शानदार कामके लिए धन्यवाद दिया। बोर्डके सदस्योंसे उन्होंने अपील की कि वे उस योजनाको यथासम्भव जल्दीसे-जल्दी पूरा करें। उन्होंने कहा कि कानपुर-जैसी बड़ी नगर-पालिकाके लिए थोड़े समयमें ही साफ-सुथरे मकान बनाना कोई कठिन काम नहीं है। उन्हें आशा थी कि इन मकानोंको वे खुब देख सकेंगे। उन्होंने इस बातका जिक्र किया कि वे जब भागलपुर नगरपालिकामें गये थे तो वहाँ भी उन्होंने बोर्डको यही सलाह दी थी कि वह कार्यको शीघ्र पूरा करे और उसने वह बात तुरन्त मान ली थी। उन्हें आशा थी कि कानपुर म्यूनिस्पल बोर्ड भी उनकी सलाहपर अमल करेगा। उन्होंने बताया कि बहुत-से ऐसे काम हैं जो वे बिना किसी खास कठिनाईके कर सकते हैं। उनकी (हरिजनोंकी) शिकायतें कोई ऐसी नहीं हैं जिनके लिए बजटमें लाखों रुपयोंकी जरूरत हो। जो लोग उच्च वर्गके कहलाते हैं वे तो अपना काम बहुत तरीकोंसे करा सकते हैं। पर बेचारे हरिजन अपनी शिकायतें कैसे दूर करवायें? महात्माजी को यह देखकर प्रसन्नता हुई कि कानपुर नगरपालिकाके सदस्य, जिनमें हिन्दू,

१. "बनारस, २२ जुलाई", १९३४ की तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत प्रकाशित।

२. सनातनियोंके साथ विचार-विमर्शके लिए, देखिए पृ० २४७-५०।

३. "साप्ताहिक चिट्ठी" में वालजी गो० देसाईने स्पष्ट किया था कि "डॉ० जवाहरलालके बंगले पर, जहाँ गांधीजी ठहरे थे", नागरिक अभिनन्दन किया गया था।

मुस्लिम और अन्य सभी सम्प्रदायोंके लोग हैं, हरिजनोंसे एक-जैसा प्रेम करते हैं। जैसा कि वे कह चुके हैं, वे इन बोर्डोंमें हिन्दू, मुस्लिम या किसी अन्य सम्प्रदायके व्यक्ति की हैसियतसे नहीं हैं, बल्कि जन-सेवकोंकी हैसियत से हैं। कानपुर-नगरपालिकाने हरिजनोंके कल्याणके लिए जो सच्चा और ठोस काम किया, उसके लिए उन्होंने एक बार फिर आभार प्रकट किया।

जिला-बोर्डके अभिनन्दन-पत्रका उल्लेख करते हुए उन्होंने खास तौरपर दो मुद्दोंकी चर्चा की। अभिनन्दन-पत्रमें कहा गया था कि जिला-बोर्डने यह निश्चय किया है कि उसके सभी विद्यालयोंमें छात्रोंको बिना किसी प्रतिबंधके दाखिला मिलना चाहिए। उन्होंने कहा: लेकिन यह तो बहुत-से अन्य नियमोंकी तरह एक नियम ही है। उनकी सलाह बोर्डको यह है कि वह यह भी देखे कि इस नियमका पालन होता है या नहीं; क्योंकि यह बात सभी जानते हैं कि अकसर नियमोंमें एक बात होती है, और जो-कुछ किया जाता है, वह उसमें बिलकुल भिन्न होता है। उन्होंने बताया कि उन्होंने कुओंपर ऐसे साइनबोर्ड देखे हैं जिनमें यह लिखा होता है कि इन कुओंका हरिजन भी उपयोग कर सकते हैं, पर यदि कोई हरिजन उनका उपयोग करता है तो तथाकथित सवर्ण हिन्दू उसे पीटते हैं।

हमें यह महसूस करना चाहिए कि हरिजन भी मनुष्य हैं, पशु नहीं हैं। हमारे सभी धर्मशास्त्र यह कहते हैं कि जो कोई प्यासेको पानी पिलाता है उसे उसका कई गुना पुण्य मिलता है।

जिला-बोर्डके बालिका विद्यालयोंमें कताईकी शिक्षा की व्यवस्थाका जिक्र करते हुए गांधीजी ने कहा कि खादीमें उनका विश्वास सदा की तरह अडिग है। हरिजन-कार्यसे उसका गहरा सम्बन्ध है, क्योंकि खादीके द्वारा आप सैकड़ों हरिजन-स्त्रियों और बुनकरोंकी सेवा करते हैं। जो धन्धे ये लोग चुन सकते हैं, वे बेहद थोड़े हैं। इसलिए यदि कताई या बुनाईका काम नहीं मिलेगा तो वे भूखों मर जायेंगे। इस तरह, वस्तुतः इनसे मुस्लिम औरतों और मर्दोंकी भी सेवा होती है। वे औरतें पर्दा करती हैं, इसलिए यदि उन्हें कताईका काम न दिया जायेगा तो बेचारी प्रतिदिन कुछ पैसे नहीं कमा सकेंगी। भारतके लाखों अधभूखे लोगोंमें जो हजारों कताई करनेवाले हैं, उन्हें भी शामिल करना चाहिए। खादी इस तरह मनुष्यका सम्मान करती है; इसलिए दरिद्रनारायणका कोई भी प्रेमी खादीकी उपेक्षा नहीं कर सकता। जो एक गज भी खादी खरीदता है, वह निश्चय ही यह मान सकता है कि वह हरिजन हिन्दू, मुस्लिम या सवर्ण हिन्दू किसी-न-किसी गरीबकी ठोस सहायता कर रहा है।[1]

अन्तमें उन्होंने दोनों बोर्डोंको उनके अभिनन्दन-पत्रके लिए धन्यवाद ।

[अंग्रेजीसे]
लीडर, २६-७-१९३४; हरिजन, १०-८-१९३४ भी

१. यह अनुच्छेद हरिजनसे लिया गया है।

२५१. भाषण : सार्वजनिक सभा, कानपुरमें[1]

२२ जुलाई, १९३४

आपने मुझे जो यह ११,००० रु०की थैली दी है, इसके लिए मैं आपका आभारी हूँ। लेकिन मैं कहूँगा कि आपके कानपुर शहरको मैं एक उदार नगरके रूपमें जानता हूँ। मैं समझता हूँ कि जो हरिजन-कार्य हमारे सामने है उसकी महत्ताको अगर आपने महसूस किया होता, तो इससे कई गुना अधिक धन आप मुझे देते।

मुझे मालूम है कि कानपुरमें कुछ ऐसे लोग हैं जो मेरी हरिजन-प्रवृत्तिको पुण्य-कार्य नही, बल्कि पाप-कार्य समझते हैं। उनकी तरफसे जनतामें बहुत भारी संख्यामें पर्चे बाँटे गये हैं। मुझे यह देखकर दुःख हुआ कि वे पर्चे सरासर असत्य, हानिकारक, अर्धसत्य, अत्युक्ति और तोड़-मरोड़कर बनाई हुई बातोंसे भरे हुए है। उन्होंने मेरे बारेमें समझकर ऐसा नही लिखा, यह मैं मान लेता हूँ। उदाहरणके लिए, यह कहा जाता है कि एक जगह निर्दयतापूर्वक सनातनियोंको कत्ल कर दिया गया। मगर मैं इस विषयमें कुछ भी नही जानता। अगर मुझे इसका पता होता, तो यह कहनेकी जरूरत नही है कि मैं इसके विरुद्ध जरूर कड़ी कार्रवाई करता। यह कितने अफसोसकी बात है कि ऐसी-ऐसी मिथ्या बातोंका प्रचार सनातनधर्म के नामपर किया जाता है। मैं सनातनियोसे प्रार्थना करता हूँ कि वे इस मिथ्या प्रचारकी हीन प्रवृत्तिको रोके।

अगर आपने इस हरिजन-आन्दोलनका दूरगामी महत्त्व समझा होता तो आपने मुझे हजारोंकी जगह लाखों रुपये दिये होते। पर कोष-संग्रह तो अस्पृश्यताका अन्त नहीं कर सकता; चाहे वह कितना ही बड़ा क्यो न हो। यह तो तभी हो सकता है, जब सवर्ण हिन्दुओके हृदय परिवर्तित हो जायें। यदि दान हृदय-परिवर्तनका परिचायक होता है तो उसका महत्त्व सैकड़ो गुना बढ जाता है। यह तो आत्मशुद्धिकी प्रवृत्ति है। संख्यासे इस प्रवृत्तिका कोई मतलब नही। हरिजन-आन्दोलन मुसलमानोके खिलाफ लड़नेके लिए नहीं खड़ा किया गया है। हमें हरिजनोमें से गुंडोंको तैयार नही करना है। हमें तो उन्हें योग्य नागरिक बनाना है। अगर हमे कामयाबी मिली तो इससे हमें और सारी दुनियाको लाभ पहुँचेगा। धर्मके नामपर अपने पाँच करोड़ भाइयोके प्रति हम जो अत्याचार कर रहे हैं, उसके लिए अगर दुनिया हमसे और हमारे धर्मसे घृणा करे तो यह उचित ही है।

काली झण्डियाँ दिखलानेवालोंके प्रति मेरा उतना ही आदर-भाव है, जितना कि सुधारकोंके प्रति। और अगर सम्भव होता तो मैं उनकी बात मान लेता, और

१. साधन-सूत्रके अनुसार यह "गांधीजी के भाषणका सार" है। यह "कानपुर भाषण" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

जैसा वे चाहते हैं, खुशीसे करता। पर सत्यकी मुझे जैसी प्रतीति होती है, उसके अनुकूल आचरण करना ही मैं अपना धर्म समझता हूँ। असंख्य काली झण्डियाँ या बम या रिवाल्वर मुझे सत्यके पथपर अपने कर्त्तव्य-पालनसे नही डिगा सकते। मैं भी तो आखिर एक अपूर्ण मनुष्य ही हूँ। मैं कोई तपस्वी नही हूँ कि एक ही फूंक हिमालयपर बैठकर मार दूँ तो अस्पृश्यता उड़ जाये। जो लोग मेरी बात सुनना चाहते हैं, मैं तो सिर्फ उन्हे ही सुना सकता हूँ। और इसी कारण मैं जगह-जगह घूम रहा था, और अब इस लगातार लम्बी यात्राकी थकान दूर करनेके लिए मैं कही बैठकर आराम करना चाहता हूँ।

जो सनातनी धर्मका इजारा लेकर बैठ गये है, उनसे मैं यह कह देना चाहता हूँ कि जिन शास्त्रोको वे मानते हैं, मैं भी उन्हीको मानता हूँ। पर हमारा मतभेद तो शास्त्रोकी व्याख्यापर है। शास्त्र कहते है कि जब अर्थका विरोध हो, तो अपने विवेकको प्रमाण मानो। और मैं ठीक यही कर रहा हूँ। अगर वे मुझे यह समझा दें कि मैं गलती कर रहा हूँ तो मैं उनका गुलाम बन जाऊँगा। परन्तु, जबतक ऐसा नहीं होता, तबतक तो मैं आखिरी दमतक यही कहता रहूँगा कि यदि हमने अस्पृश्यताके कलंकको न धो डाला, तो हिन्दू-जाति और हिन्दू-धर्मका दुनियासे लोप हो जायेगा।

अब, हरिजन-आन्दोलनके सम्बन्धमे मुझे कुछ बातें स्पष्ट कर देनी चाहिए। ऊँच-नीचके भावतक ही यह आन्दोलन सीमित है, रोटी-बेटी सम्बन्धसे इसका कोई वास्ता नही। मैं मुसलमानो और भंगियोंके साथ खाता हूँ, पर यह तो मेरा व्यक्तिगत मामला है। मैं तो अपनेको भंगी मानता हूँ, यह मेरे लिए कोई शर्मकी बात नही है। बल्कि मैं समझता हूँ कि मेरा यह काम शास्त्रसंगत ही है। लेकिन इस बातका आन्दोलनसे कोई सम्बन्ध नही है। रोटी-बेटीकी बात व्यक्तिगत मामला है, रोटी-बेटी सम्बन्धके संयमका प्रचार करनेकी न तो आवश्यकता है और न इसके लिए मेरे पास समय है। मैं तो सिर्फ धर्मका तत्त्व ही लोगोंके सामने उनके ग्रहण करनेकी दृष्टिसे रख रहा हूँ। इस आन्दोलनका तो यही उद्देश्य है कि जो सामाजिक, नागरिक और धार्मिक हक दूसरे सवर्ण हिन्दुओको प्राप्त है, वे सब हरिजनोको भी मिलने चाहिए।

मन्दिर-प्रवेशके विषयमे यह बात है कि जबतक किसी मन्दिरमे पूजा करनेवाले सवर्ण हिन्दुओकी पूर्ण सहमति नही होती, तबतक वह मन्दिर हरिजनोके लिए नही खोला जाता है। मन्दिर तो हमारे प्रायश्चित्तस्वरूप ही खुलने चाहिए। एक पाई भी इस हरिजन-कोषसे मन्दिरोके बनानेमे खर्च नही की जाती है। हमारा सतत प्रयत्न तो यह है कि इस कोषका पैसा जिस तरह हो सके, अधिकसे-अधिक हरिजनोकी ही जेबमे जाये।

चूँकि मेरी यह हरिजन-यात्रा है, इसलिए खादीके विषयमें मैं अकसर चर्चा नही किया करता, फिर भी उसमें मेरा विश्वास तो उतना ही है। आपको यह नही भूल जाना चाहिए कि खादीसे हजारों हरिजन कतैयो और बुनकरोको काम मिलता है। इसलिए खादीको तो आप कभी भी गौण वस्तु न समझे।

इतनी शान्तिपूर्वक आप लोगोंने मेरी बात सुनी है, इसके लिए मैं आप लोगोंको धन्यवाद देता हूँ। लेकिन एक बातको मैं नजरन्दाज नहीं कर सकता और वह यह कि यहाँ हम काफी पुलिसकी छत्रछायामें इकट्ठे हुए हैं जैसाकि हम देख ही रहे हैं। मैं बहुत चाहता हूँ कि पुलिस यहाँ न रहे, पर उसे भी तो अपना फर्ज अदा करना है। सुधारकों और सनातनियोंको तो इसपर शर्म आनी चाहिए कि मेरी रक्षा अथवा आपके बीच मेरी उपस्थितिके दौरान शान्ति कायम रखनेके लिए पुलिसकी जरूरत पड़ती है। सुधारकों और सनातनियोंको अपनेपर स्वयं लगाये जानेवाले अनुशासनके महत्त्वको महसूस करना चाहिए, ताकि पुलिस द्वारा संरक्षण बिलकुल अनावश्यक हो जाये। खैर, पुलिसकी उपस्थित चाहे मुझे अच्छी न लगे, पर मैं यह जरूर कहूँगा कि पुलिसने मेरी इस कठिन यात्रामें प्रशंसनीय व्यवहार किया है। इसी तरह रेलके अधिकारियोंने समय-समयपर मुझे जो सुविधाएँ दी हैं, उनके लिए मैं उनकी भी सराहना करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३-८-१९३४

२५२. पत्र : ना० र० मलकानीको

२३ जुलाई, १९३४

प्रिय मलकानी,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारा सुझाव पढ़ा। उसपर बनारसमें बातचीत होगी। तुमने मुझे अपना मताधिकार-सम्बन्धी प्रस्ताव नहीं भेजा है, हालाँकि अपने पत्रमें उसका उल्लेख किया है।

कुछ दिन पहले जमनालालजीने लिखा था, लेकिन मैं तुम्हें बताना भूल गया कि वे संघका पूरा संविधान दोहरा रहे हैं और उनका खयाल है कि तुम्हें संघमें नहीं लिया जा सकता। अधिक बनारसमें मिलनेपर।

तुम्हारा,
बापू

प्रोफेसर मलकानी
बिड़ला मिल्स
दिल्ली।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९०८) से।

२५३. पत्र : सुलोचना ए० शाहको

२३ जुलाई, १९३४

चि० सुलोचना,

तेरा पत्र मिला। अच्छा है। उत्तर देनेमें थोडी ढील हुई, लेकिन आज भी लिख पा रहा हूँ, इसे बडी बात समझना। तूने जेलमें अपना स्वास्थ्य बनाये रखा, वजन कायम रखा, इस बातकी तारीफ करनी पडेगी। अध्ययन भी, कहना चाहिए, ठीक किया। क्या पढा, क्या सोचा-विचारा, यह सब आगेके पत्रमें लिखना।

अब तुझे क्या करना चाहिए, यह तू खुद क्यों नहीं सोचती? न सोच सके तो जैसा नारणदास कहे, वैसा कर। वे तुझे ज्यादा जानते हैं।

प्रेमाबहन अभीतक तो वर्धा नहीं गई। ऐसा नहीं लगता कि उसने कोई निश्चय कर लिया है। लीलावती और सिद्धिमती राजकोटमें है।

कुसुमकी इच्छा विवाह करनेकी हो तो उसे कर ही लेना चाहिए। न हो, तो किसी सेवा-कार्यमें जुट जाना चाहिए। उसे समझ लेना चाहिए कि यदि मनमें विकार उत्पन्न होते ही रहते हों, तो उन्हें छिपाना पाप है। उन्हें रोक सके तो अच्छा है, किन्तु यदि रोकनेमें असमर्थ हो तो फिर चाहे जितना कष्ट भोगना पडे, विवाह कर लेना चाहिए।

गुलाबसे तो अब थोडे दिनोंमें मिलूँगा, तब पत्र लिखनेको कहूँगा। वह पत्र नहीं लिखती, यह आश्चर्यकी बात है।

तेरे हस्ताक्षरोंमें अभी सुधारकी गुंजाइश है। अक्षर थोडे बडे लिखे, तो अच्छा रहेगा।

बा मेरे साथ है। महादेवभाई, प्यारेलाल, वालजीभाई और चन्द्रशंकर भी हैं। बाकी दूसरोंको तू शायद पहचानती नहीं। इसे तो लम्बा पत्र मानेगी न?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७५१) से।

२५४. पत्र : परीक्षितलाल एल० मजमूदारको

२३ जुलाई, १९३४

भाई परीक्षितलाल,

आपका पत्र मिला। तार भी मिला था। लगता है, अमलाबहनने आपको बड़ा कष्ट दिया। उसे फिर आपके पास नही भेजूंगा। वह कल यहाँ पहुँच गई है। अर्ध-विक्षिप्त-सी लगती है। वह क्या करना चाहती है, खुद नही जानती। मेरे पास ही रहेगी, बस इसी बातपर अड़ी हुई है।

आपको चोट लगनेसे जो दर्द था, उसका क्या हाल है?

उस आदमीको बरखास्त करने या तनज्जुल करनेकी जो खबर थी, वह सच निकली या झूठ? बड़ौदा राज्यने कुछ किया या नही?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०२३) से।

२५५. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

२३ जुलाई, १९३४

चि० मणिलाल व सुशीला,

तुम दोनोंके पत्र मिले। वेस्टवाली बात समझ गया। अगर वह नही लिखता है, तो किस्सा खत्म हुआ। दूसरा कोई तेरा चार्ज न सँभाले, तबतक तेरा वही रहना उचित होगा। जबतक अपना खर्च चला सकते हो, तबतक वही रहो; इसमें मुझे कोई हर्ज नही दिखाई देता।

फुटबॉलमें भी झगड़ा होने लगा? ठीक है। जो उचित समझो, सो अवश्य करते रहना। यहाँसे तेरा मार्गदर्शन करनेकी मेरी जरा भी इच्छा नही है, और न मैं तेरे व्यवहारकी आलोचना करना चाहता हूँ। तू बिलकुल स्वतन्त्र हो जाये, यही मेरी इच्छा है। रोज सवेरे उठकर 'बापू क्या सोचेंगे' ऐसा सोचना पड़े, यह तो गलत है। तुझे जो अच्छा और सच्चा लगे, वही तू करे, तो मुझे ठीक लगेगा। इसीमें तुम दोनोंकी उन्नति निहित है। मैं नही रहूँगा, तब तुम्हारा मार्गदर्शन कौन करेगा? सच्चा मार्गदर्शक तो ईश्वर ही है, अतः रोज उसकी आराधना करनी चाहिए। रोज उससे प्रार्थना करनी चाहिए कि तेरी इच्छा ही मेरी इच्छा हो जाये। ऐसा

करनेसे हृदयमे स्थित हमारा स्वामी हमारा मार्गदर्शन अवश्य करेगा ही, ऐसा विश्वास रखकर कर्म करना चाहिए।

सुशीलाके प्रश्नका उत्तर इसमें आ जाता है, सोरावजीके प्रति शिष्टताका व्यवहार बनाये रखना ही काफी होगा। इससे अधिक करने जाओ तो सम्भव है तुम्हें अपनी स्थितिसे नीचे उतरना पड़े।

रामदास और डॉ० शर्माके पासपोर्टके बारेमें कुछ किया होगा।

मामा[1]को तुम लोग हर महीने पाँच या दस रुपया दोगे क्या? मैंने उन्हे जमनालालजीसे ५०० रुपये दिलाये हैं। इसमें तुम, देवदास और लक्ष्मी भी थोडा जोड़ दो तो मुझे अच्छा लगे। अगर दो तो जमनालालजी की मार्फत नियमपूर्वक देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८३४) से।

२५६. पत्र : शान्तिलाल जे० मेहताको

२३ जुलाई, १९३४

चि० शान्ति,

मेरी इच्छा है कि तू ठीक तरहसे व्यवस्थित हो जाये।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८२३) से।

२५७. पत्र : कान्ति गांधीको

२३ जुलाई, १९३४

चि० कान्ति,

तेरा पत्र मिला।

तेरा विश्लेषण ठीक है। जब लोग अपेक्षाके अनुरूप नही निकलते तो मैं निराश नही होता, क्योंकि उसमें किसीका दोष नही होता। मेरा भी नही होता। मुझे अच्छा लगा, वह मैंने दिया, और तुम सबको जो अच्छा लगा, वह तुमने लिया। जहाँ सब अपूर्ण हैं, वहाँ ऐसा ही होता है। बीसेक वर्षकी उम्रमें मैंने पढा था· "लाखों निराशाओंमे अमर आशा छिपी रहती है", याद कर लिया था और गाया था। उस गजलने[2] मुझे बहुत आश्वासन दिया था। अब तो उसके सहारेकी भी जरूरत नही पडती। निराशाएँ गिननेका समय कहाँ है?

१. माधवदास कापड़िया, कस्तूरबा गांधीके भाई।

२. कवि मणिभाई नभुभाई द्विवेदीकी गजल।

रजत सीप महँ भास जिमि, यथा भानुकर बारि।
जदपि मृषा तिहुँकाल मँह, भ्रम न सके कोऊ टारि।।[१]

हम तुम बालको भूल करता देखें, इससे बाल विचारेको क्या?

इसका अर्थ समझता है न? न समझे, तो देवदाससे पूछना। दोहा तुलसीदासका है। मुझपर इस दोहेका बहुत प्रभाव हुआ है। भ्रम भी जबतक सत्य लगता है, तबतक मनुष्यको उससे चिपटे ही रहना पड़ता है। इसीलिए संसारको भ्रम-जाल, माया आदि विशेषण दिये गये है। तू जितना तुझसे बने, उतना करे, तो मुझे 'सन्तोष होगा। मैंने मिस्टर कजिसको नही लिखा, क्योंकि समय नही निकाल पाया। किन्तु अब जब राजाजी निश्चयपूर्वक लिख रहे है तो बनारसमें उनसे भेंट होनेतक राह देखता हूँ।

वर्धा आनेकी तेरी उत्कट इच्छा हो तो आ जाना, नही तो कौटुम्बिक मिलन-यात्रा समाप्त कर लेनेके बाद दक्षिण चले जाना।

हरिलालका त्याग मैंने नही किया, न उसकी आशा ही छोड़ी है। रियायत न करनेमें ही उसका हित है। ढील देना, यानी जो उसकी इच्छा हो, वही करना। जो मार्ग इस समय अपनाया गया है, उसके बारेमे मुझे सोलह आने सन्देह है। वह बहादुर था, किन्तु मित्रोने उसे पुरुषार्थहीन बना दिया है। अब उसका ध्यान पेटेंट दवाओंके धन्धेकी ओर गया है। किन्तु तुम सबको यदि यही उपाय ठीक लगा हो तो मुझे उसकी आलोचना नही करनी चाहिए। जिसे जो ठीक लगे, वही उसका कर्त्तव्य है। मुझे लिखते रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७२८७) से; सौजन्य: कान्ति गांधी।

२५८. पत्र: नरहरि द्वा० परीखको

२३ जुलाई, १९३४

चि० नरहरि,

तुम्हें अब लिखूँ-अब लिखूँ ही करता रहा, लेकिन लिख नही सका। वैसे यह बात भी सच है कि महादेव छूट गये है, इसलिए मैंने सोचा यदि अब न लिखूँ, तो भी कोई हर्ज नही। तुम वर्धा नही जा सकते, यह सुनकर यदि मैंने निराशा व्यक्त की थी तो क्यों की थी, अब याद नही है। वैसे वहाँ जाना तुम्हें पसन्द नही होगा, यह डर मुझे था। यह डर मैंने जमनालालजी को बताया भी था। तुम जो कारण बता रहे हो, वे सब ठीक है। विद्यापीठवाला कारण ठीक नही है। हो भी, तो

१. रामचरित मानस, बालकाण्ड, ११७: "सीप चाँदी-जैसी लगती है। सूर्यकी किरण पानी-जैसी लगती है। यद्यपि यह बात तीनों कालोंमें झूठ है, भ्रम है। फिर भी इस भ्रमको कोई मिटा नहीं सकता।"

उसपर काबू पाया जा सकता है। किन्तु स्वभाव-सम्बन्धी सब कारण इतने ठोस है कि अन्य कारणोंकी जरूरत ही नहीं है। वर्धा सँभालना कोई मामूली बात नहीं है। उसे सँभालनेके लिए कोई परिपक्व स्त्री चाहिए। प्रेमा शायद ऐसी स्त्री है। गंगाबहनकी उस बातमें रुचि नहीं है। प्रेमा इस समय कहाँ है, मालूम नहीं। जानेसे पहले मुझसे मिल गई थी, बस इतना मालूम है। उसे छोड़कर और कोई स्त्री अपने मण्डलमें मेरी नजरमें तो नहीं है। तुम्हारे ध्यानमें कोई है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९०६२) से।

२५९. पत्र : मणिबहन पटेलको

कानपुर
२३ जुलाई, १९३४

चि० मणि,

तू बिलकुल नियमपूर्वक लिखती रहती है। इसी तरह लिखती रहना। मेरे पत्रोंकी आशा न रखना। महादेव यहाँ है, इसलिए मैं कुछ पत्र लिखनेसे बच जाता हूँ। अब सरकारको भी लिखनेकी जरूरत नहीं रहती। तेरी तरह मैं भी मानता हूँ कि तेरे लिए वहाँ रहना ही सबसे अच्छी औषधि है।

शायद अब तो जल्दी ही मिलेंगे।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :][1]

गायका पत्र तेरे ही नाम भेज रहा हूँ, उसे बापूको तुरन्त पहुँचा देना। तूने भास्करवाली बात कहकर बापूको काफी भड़का दिया। ऐसे तो मैंने कई लोगोंके साथ बातें की थी। परन्तु मैं अकेला कहाँ हूँ? मेरे साथ और कोई नहीं तो बेला-बहन और दो लड़कियाँ तो है ही। इसलिए हमारी समस्या इतनी आसान नहीं है। वर्धामें सब-कुछ निश्चित होगा, ऐसी आशा रखें।

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहन पटेलने, पृ० ११७

१. मूल गुजरातीमें आदरवाचक बहुवचनके प्रयोगसे ऐसा लगता है कि 'पुनश्च' महादेव देसाई द्वारा लिखा गया है।

२६०. पत्र : ब्रजकृष्ण चांदीवालाको

२३ जुलाई, १९३४

चि० ब्रजकृष्ण,

तुमारे दोनो खत मिले है।

मेरे शरीरके निकट जो नहिं रहते हैं अथवा मेरे शरीरकी सेवा नहिं करते है वे सब साथी पापी है ऐसा क्यों मानते है। विनोवा हमेशा दूर रहे हैं उसने क्या पाप किया होगा? इस मोहको निकालो।

दूसरे खतमें जो तीनों मोह वताये है सो ठीक है। ये तीनो मोह मीटाना होगा यदि आश्रमको सुशोभित करना है तो [और] मेरी शुद्ध सेवा करनी है तो।

तुमने सव कुछ छोडा है तो व्यक्तिगत सेवाके लिये भाईओं से लेना अनुचित मानो। तुमारे खानेके लिये जो कुछ मिले उसमें से जो वचे वह सव आश्रममें दे सकते हैं निजी मित्रोसे अथवा संवंधीओसे कभी नहिं। दामोदरदासको कुछ भी देना मित्र द्रोह है। उसकी मूर्छा टूटेगी नहि। उसका कर्तव्य नम्र वन कर मजदूरी करने का है। ऐसा न करे तो अपनी इच्छापूर्वक जीवन व्यतीत करे और पेट भरे। तुमारी आर्थिक मददसे वह गिरता जाता है आगे नहिं वढ़ता है यह मेरा निदान है।

अव यह स्पष्ट हुआ? नहिं तो दुवारा पूछो।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

खानगी पत्र लिखनेकी क्या आवश्यकता? यहां कौन हैं जिसके तुमारे पत्र देखनेसे तुमारा अथवा किसीका अनिष्ट हो सकता है?

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४१५) से।

२६१. पत्र : छगनलाल जोशीको

कानपुर
२४ जुलाई, १९३४

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। रमाके वहाँ जानेकी खबर मुझे मिल गई थी। वह मेरा समय बचानेके विचारसे पत्र नही लिखती, यह तो बहाना ही है। पत्र लिखनेमे लापरवाहीकी उसकी आदत बहुत पुरानी है। इसलिए तुम आसानीसे इसे ठीक मत मान लेना। कुछ आदतें स्वभाव बन जाती है। रमाकी यह आदत ऐसी ही कुछ है। देवदासके बारेमें भी यही बात है। अलबत्ता देवदास बहाने नही बनाता। वह जानता है कि ऐसे बहाने मेरे सामने नही चलते। रमाको इसका उतना भान नही है। तुम काममें जुटे ही रहना। उपवासके बारेमे कुछ भी मत सोचना।

बापूके आशीर्वाद

श्रीयुत छगनलाल जोशी
श्री दक्षिणामूर्ति भवन
भावनगर
काठियावाड़

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५२०) से।

२६२. भाषण : तिलक हॉल, कानपुरके उद्‌घाटन-समारोहमें[1]

२४ जुलाई, १९३४

आज प्रातः आपने मुझे इस पवित्र समारोहको सम्पन्न करनेके लिए बुलाया, इसके लिए मैं आपका आभारी हूँ। आज बहुत सवेरे जब मैंने सुना कि मुझे यहाँ आना है, तो मुझे २० साल पहलेका वह दिन याद आ गया जब मैं पहले-पहल एक अजनबीकी तरह कानपुर आया था। स्वर्गीय बाबू गणेशशंकर विद्यार्थीने तब मुझे अपने प्रेसमें, जो उनका घर भी था, ठहराया था। उस समय और किसी व्यक्तिकी इतनी हिम्मत नही थी कि वह मुझे अपने घरपर ठहराता। वे उन दिनो

१. गांधीजी कानपुरमें निर्मित तिलक हॉलका उद्‌घाटन करने गये थे। यह भाषण उसी समय दिया गया था, जो "गांधीजी के भाषणका अधिकृत अनुवाद" के रूपमें प्रकाशित हुआ था।

नौजवान थे और मेरा उनसे कोई परिचय नही था। देशके अधिकांश लोगोंके लिए मै तब एक अजनबी था। मेरे वारेमें थोड़ी-बहुत जो जानकारी थी, वह दक्षिण आफ्रिकाकी मेरी सेवाओंको लेकर थी। न तो लोगोंको और न सरकारको ही यह मालूम था कि मुझे यहाँ क्या करना है। मै खुद नही जानता था कि मेरे भाग्यमें क्या है या राष्ट्रीय मामलोंमें मुझे क्या भूमिका अदा करनी है। सौभाग्यसे तिलक महाराज भी उसी दिन इस नगरमे पधारे और उनका बड़े उत्साहसे स्वागत किया गया। इस नगरके साथ मेरे मनमें गणेशशंकरजी की स्मृति जुड़ी हुई है। वादमें मैं उन्हे और भी निकटसे जान पाया और मैंने देखा कि वे एक सरल, निर्भीक, सच्चे और निःस्वार्थ देशसेवक थे। उन्होंने देशकी, और विशेष रूपसे इस नगरकी, विभिन्न क्षेत्रोंमें जो सेवा की, उसके वारेमें आप मुझसे कही अधिक जानते है। वे हिन्दीके प्रेमी थे। उनका स्थापित किया पत्र 'प्रताप' उनके उस प्रेमका सजीव स्मारक है। जैसाकि हम सवको विदित है, उनके उस सेवारत जीवनका अन्त उनके वलिदानसे हुआ। उनकी मृत्युके वाद इस नगरकी अपनी इस पहली यात्रामें उनका अभाव मुझे कितना खटक रहा है, यह मै वता नहीं सकता।

अपनी प्रकाण्ड विद्वत्ता, महान त्याग और आजीवन सेवाके कारण, तिलकका लोगोंके हृदयमें एक अद्वितीय स्थान वन गया है। उन्होंने ही स्वराज्यके मन्त्रसे इस राष्ट्रमें जीवन फूंका और उसकी प्राप्तिके लिए अपना पूरा जीवन अर्पित कर दिया। परन्तु जिस चीजकी ओर आज मैं आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ, वह है धर्मके मामलेमें उनका उदार दृष्टिकोण। वे एक जीवन्त सनातनी थे। शास्त्रोंका उन्हें जितना ज्ञान था उससे अधिक या गहन ज्ञानका न तो उनके जीवन-कालमें कोई दावा कर सकता था और न आज ही कर सकता है। उनकी सर्वश्रेष्ठ कृति—'गीता रहस्य' एक अद्वितीय ग्रन्थ है, जो दीर्घकालतक अद्वितीय रहेगा। 'गीता' और वेदोंसे उत्पन्न प्रश्नोंकी उनसे अधिक विस्तृत शोध आजतक किसीने नहीं की है। गहन अध्ययन और शोधके वाद ही उन्होंने यह घोषणा की थी कि अस्पृश्यता जिस रूपमें आज प्रचलित है, उसके लिए शास्त्रोंमें कोई विधान नहीं है। मैं यह वात प्रामाणिक तौरपर कह सकता हूँ कि उन्होंने अपने जीवनमें ऊँच-नीचका भेद विलकुल मिटा दिया था। जन्मपर आधारित अस्पृश्यतामें उनका कतई विश्वास नही था और तथाकथित अस्पृश्योंके साथ मुक्त भावसे मिलने-जुलनेमें उन्हें कभी कोई संकोच नही होता था। आज की तरह, उन दिनों भी मैं अस्पृश्यता-निवारणका कार्य करता था। मुझे याद है, इस विषयपर मेरी उनसे वहुत वार वातचीत हुई थी और मैं यह वात प्रामाणिक तौरपर कह सकता हूँ कि वे सम्पूर्ण हृदयसे मेरे साथ थे और हिन्दू-धर्मसे अस्पृश्यताको मिटानेकी उत्कट इच्छा रखते थे। उनकी रायका उल्लेख आज संगत होगा, क्योंकि कुछ क्षेत्रोंमें इन दिनों यह कहा जा रहा है कि अस्पृश्यता-निवारक आन्दोलन धर्मके लिए विनाशकारी है।

जीवनके अन्य क्षेत्रोंमें भी उनका दृष्टिकोण उदार था और मै आपको उसके अनेक संस्मरण सुना सकता हूँ। जनताके राजनैतिक जीवनके विकासमें उनकी जो देन है,

वह अनुपम है। परन्तु मेरा ऐसा विश्वास है कि 'गीता रहस्य' उनका कहीं अधिक स्थायी स्मारक सिद्ध होगा। स्वराज्यकी लड़ाईके सफलतापूर्वक समाप्त हो जानेके बाद भी वह जीवित रहेगा। अपने निर्मल पवित्र जीवन और 'गीता' की अपनी महान टीकाके कारण, उनकी याद सदा ताजा रहेगी। अपने इस श्रद्धेय महान नेताकी स्मृतिके प्रति हमारा यह कर्तव्य है कि स्वराज्यकी जिस इमारतकी नींव उन्होंने रखी है, उसे पूरा करनेके लिए हम निरन्तर प्रयत्नशील रहें। यह हॉल उस कार्यको यथाशक्ति पूरा करनेकी हमारी उत्कट इच्छाका एक बाह्य प्रतीक बनना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

लीडर, २९-७-१९३४

२६३. बातचीत : सनातनियोंके साथ[1]

कानपुर

[२४ जुलाई, १९३४][2]

प्रश्न : आपके इस मन्दिर-प्रवेश आन्दोलनसे हरिजनोंको क्या आर्थिक लाभ पहुँचेगा? क्या आपको विश्वास है, हरिजन मन्दिरोंमें जाना चाहते हैं?

गांधीजी : यहाँ हरिजनोंके आर्थिक लाभकी बात नहीं है। यह तो उन सवर्ण हिन्दुओंके आध्यात्मिक लाभके लिए है जो हरिजनोंके कर्जदार हैं और जिन्हें अपनी आत्मशुद्धि करनी है। अगर अस्पृश्यता पाप है और हरिजन वैसे ही हिन्दू हैं जैसे कि हम सब लोग, तो उनका भी शेष हिन्दुओंकी तरह मन्दिरोंमें जानेका वैसा ही अधिकार है। यह तो एक अलग ही सवाल है कि हरिजनोंको मन्दिर-प्रवेशसे कोई लाभ पहुँचेगा या नहीं अथवा उसमें उनकी मुक्ति हो जायेगी या वे खुद मन्दिरोंमें जानेके इच्छुक हैं या नहीं। प्रश्न तो यह है कि जो मन्दिरमें जाना चाहता है, बशर्ते कि उन सब नियमोंका वह पालन करता है जिनका कि तमाम दूसरे हिन्दू करते हैं, तो उसका मन्दिरमें जानेका हक होना चाहिए, फिर भले ही वह पतित या पापी हो। हम सब लोग मन्दिरोंमें अपने पाप धोनेके लिए ही तो जाते हैं। पुण्यात्माको मन्दिरमें जानेकी आवश्यकता ही क्या? सनातनियोंको तो इतना ही देखना चाहिए कि मन्दिरमें जानेवाला हिन्दू बाह्य शौचके सब नियमोंका पालन कर रहा है या नहीं।

१. महादेव देसाईके "कुछ भ्रान्तियाँ" से उद्धृत, जिसमें वे कहते हैं : "स्वागत-आयोजकोंने खास तौरपर सनातनियोंके लिए कुछ समय नियत किया था. . . उसमें कोई विपक्षी पंडित नहीं था। लेकिन एक नवयुवकने (बादमें मुझे पता चला कि वह तेल-विक्रेता था) प्रश्नोंकी झड़ी लगा दी. . . जो स्वभावतः किसी बड़े विद्वानने लिख दिये थे और उन भ्रांतियोंको व्यक्त करते थे जो अब भी सनातनियोंके मनमें हैं।"

२. लीडरके अनुसार।

पर हमारे शास्त्र तो अस्पृश्योंके मन्दिर-प्रवेशके विरुद्ध हैं। तो आप साफ-साफ यह क्यों नहीं कह देते कि आप अपना एक नया ही धर्मशास्त्र रचना चाहते हैं?

नहीं, यह बात तो नहीं है। मैं उन्ही शास्त्रोंको मानता हूँ जिनको कि आप सब मानते हैं। शास्त्र तो वही है, पर अर्थ मैं भिन्न करता हूँ। मैं स्वयं कोई शास्त्री तो नही हूँ, किन्तु यदि पंडितों और शास्त्रियोंका कोई ऐसा वर्ग है जो अस्पृश्यताको शास्त्रविहित मानता है, तो ठीक वैसा ही उनका एक दूसरा प्रबल वर्ग भी है जिसकी निश्चय ही यह मान्यता है कि वर्तमान अस्पृश्यताके लिए हमारे शास्त्रोंमें कोई प्रमाण नही है।

पर यदि आप अस्पृश्यताको नष्ट कर देंगे, तो अस्पृश्य लोग हमारे धन्धोंको हथिया लेंगे। उदाहरणार्थ, वे मिठाई इत्यादिकी दूकानें रखने लगेंगे। फिर तो हमारी खान-पान-सम्बन्धी सारी मर्यादा नष्ट ही समझिए।

आप यहाँ भूलते हैं। हरिजन-आन्दोलनका तो खान-पानके प्रश्नसे कोई सम्बन्ध ही नही है। वह तो केवल वर्तमान अस्पृश्यताको नष्ट करना चाहता है। आज गैर-हिन्दुओं और अब्राह्मणोकी सैकड़ों दूकानें मौजूद हैं। हिन्दुओं और ब्राह्मणोंको कौन मजबूर करता है कि वे उन दूकानोंसे सौदा खरीदें ही? ऐसे कितने ही कट्टर ब्राह्मण हैं जो किसीके भी हाथका बना भोजन छूतेतक नही। उनकी उस मर्यादामें कौन हाथ लगाना चाहेगा?

पर आप यह क्यों बार-बार कहते हैं कि अस्पृश्यता पाप है, जबकि हमारी सगी माताओं, बहनों और पुत्रियोंके भी साथ, मासमें चार दिन, अस्पृश्योंकी तरह बरताव किया जाता है?

आपको यह जानना चाहिए कि किसी-न-किसी प्रकारकी अस्पृश्यताको न केवल हम हिन्दू ही, बल्कि पारसी, मुसलमान, ईसाई आदि सभी धर्म-मजहबोंके लोग मानते हैं। पर क्या हम अपनी माताओं और बहनोंको सदा ही अस्पृश्य समझते रहते हैं —मासके शेष २६ दिनोंमें भी क्या? और उनके मासिक-धर्मके समय भी, क्या हम उनका अस्पृश्योंका-सा तिरस्कार करते हैं? क्या उनके आगे अपनी बची-खुची जूठन दूरसे डाल दिया करते हैं? क्या उन दिनों हम उन्हें घरसे बाहर रखते हैं? ईश्वरके लिए यह न भूल जाइए कि आप जिन्हें अछूत कहते हैं उनके साथ आप ऐसा अपमानजनक और अत्याचारपूर्ण व्यवहार करते हैं जैसाकि आप किसी दूसरेके साथ करनेका कभी साहस न करेंगे।

हमें उन अपमानों और अत्याचारोंका पता नहीं। वे सब बातें हमारे यहाँ नहीं हैं। अच्छा हो कि आप उन्हीं प्रान्तोंका दौरा करें जहाँ अछूतोंके साथ ऐसे अत्याचारपूर्ण व्यवहार किये जाते हों।

तो क्या आप मेरा साथ देंगे?

हम क्यों साथ देने चले। हमारे लिए यह काफी है कि हम दोषी नहीं हैं। हम लोग बराबर अछूतोंको अपने जाति-भोजोंमें न्योतते हैं।

हाँ, दूरसे उनके आगे अपनी जूठन फेंकनेके लिए — क्या यह बात गलत है?

लेकिन आप सुधारक लोग तो अपनी जूठन भी उन्हें नहीं देते। अपने सुधारके जोशमें आकर आप उन बेचारोंको भूखों मार रहे हैं। हम उन्हें भूखों तो नहीं मारते। अस्पृश्यता हम अवश्य मानते हैं, पर इतनी सहानुभूति तो हमारी उनके साथ है ही। यह आप हमेशा कहते हैं कि हरिजन-आन्दोलनका रोटी-बेटीके प्रश्नसे कोई सम्बन्ध नहीं है। पर जरा यह तो बतलाइए कि आपने अपने बेटे देवदासका विवाह एक ब्राह्मण कन्याके साथ क्यों किया?

भाई, यह प्रश्न तो अलग ही है। हरिजन-आन्दोलनके साथ इस प्रश्नका कुछ भी वास्ता नहीं है, तथापि मैं जवाब दूंगा। देवदास-लक्ष्मीके विवाहको तो मैंने हरिजन-आन्दोलनके नेताकी हैसियतसे नहीं, बल्कि एक हिन्दू सुधारककी हैसियतसे होने दिया। मुझे तो वर्णाश्रम धर्मको उसकी प्राचीन उन्नत अवस्थापर पहुँचाना है। वर्णाश्रम धर्ममें मनुष्यकी मानसिक, बौद्धिक और शारीरिक शक्तिके अनुसार विभिन्न वर्णोंके कर्त्तव्य बताये गये हैं। इस व्यवस्थाका खान-पान या ब्याह-शादीके प्रश्नसे कुछ भी सम्बन्ध नहीं है। मेरे पुत्रके विवाहका प्रश्न इस प्रसंगमें आता ही नहीं। पर आप पूछते हैं, तो इस विषयमें मेरे जो विचार है बतला देता हूँ। ऐसे विवाहोंमें इन दो-तीन बातोंका मैं विचार करता हूँ। (१) वर्णाश्रम धर्मका लोप हो गया है, इसलिए जो वर्णोंमें विश्वास करते हों, उनका यह कर्त्तव्य है कि वे अपना व्यवहार शुद्ध और संयमपूर्ण रखकर वर्णोंको पुनः स्थापित करें। जब उन दोनोंने एक-दूसरेके प्रति अपने आकर्षणकी बात मुझे बतला दी, तो मैंने उन दोनोंपर पाँच वर्षकी कैद लगा दी और उनसे कहा कि पाँच वर्षकी मर्यादा पालो। इस अवधिमें तुम दोनों एक-दूसरेसे मिलने, बातचीत करने और चिट्ठी-पत्र लिखनेतकका भी सम्बन्ध न रखो। और इस प्रकार अपने लगावका खरापन सिद्ध करो। इस कैदको दोनोंने खुशीसे स्वीकार कर लिया, और मर्यादाकी अवधि समाप्त हो जानेके बाद उन्होंने मेरी सम्मति माँगी। बिना हमारा आशीर्वाद पाये वे विवाह करनेको तैयार नहीं थे। (२) यह मान लिया जाये कि वर्ण आज भी मौजूद है तो भी महाभारतादि ग्रन्थोंमें अन्तर्वर्ण विवाहके काफी दृष्टान्त मिलते हैं। (३) विवाहादिके जो नियम बनाये गये, वे उस समयकी आवश्यकताको देखते हुए उसी कालके लिए बनाये गये थे। मुख्य नियम तो आत्म-संयमका है।

फिर यह भी ध्यानमें रखना चाहिए कि हमारी स्मृतियोंमें आज जो परस्पर विरोधी सैकड़ों वाक्य मिलते हैं, वे सभी प्रमाणरूप नहीं माने जा सकते। हमें उनको सत्य और अहिंसाकी कसौटीपर कसना होगा। उदाहरणके लिए, मनुस्मृतिमें ऐसी बातें हैं जो सत्य और अहिंसामें विश्वास रखनेवाला कभी नहीं लिख सकता था, और वे बातें उस महान ग्रन्थकी उन अच्छी बातोंके साथ हैं जो किसी भी जातिके आध्यात्मिक ज्ञानके लिए गौरवमयी है। मैं उन बातोंको क्षेपक मानकर निकाल दूंगा, जैसेकि तुलसीकृत रामायणमें कितने ही क्षेपक लोगोंने जोड़ दिये हैं। मनुस्मृति-जैसे प्राचीन ग्रन्थोंमें ऐसा घोटाला हुआ हो तो इसमें अचरज ही क्या? मुझे मनु महाराजकी

सनातनधर्मकी यह व्याख्या यथार्थ जान पड़ती है और इसी कसौटीपर हमें उन सब वचनोंको कसना चाहिए :

> विद्वद्भिः सेवितः सद्भिः नित्यमद्वेषरागिभिः।
> हृदयेनाभ्यनुज्ञातः एष धर्मः सनातनः॥

वह धर्म सनातन है जिसका रागद्वेषसे मुक्त विद्वान् संत सदैव पालन करते है और जो हृदयको ठीक लगता है, न्याय-बुद्धिको ठीक लगता है।

खान-पानमें मैं जिस आचारका पालन करता हूँ, वह किसीसे छिपा नही है। मैं शुद्ध भोजन चाहे जिस मनुष्यके हाथका ग्रहण कर लेता हूँ। किन्तु यह सारा प्रश्न तो व्यक्तिगत है, सामाजिक नही। मैं इस विषयमें सुधार करने नही चला हूँ, क्योंकि मैं जानता हूँ कि यह तो स्वयं निपट जायेगा। इसलिए मैं सार्वजनिक रूपसे अपने विचार हवामें नही उछालता। मेरी अपनी बहन हरिजनोंके हाथका ही नही, अन्य हिन्दुओंके हाथका भी नही खाती है। पर मैं उनके साथ किसी प्रकारका आग्रह नही करता। मेरे लिए तो इतना ही काफी है कि वे अस्पृश्यताको नही मानती और किसी मनुष्यको जन्मसे अस्पृश्य नही मानती।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २४-८-१९३४

२६४. भाषण : संयुक्त प्रान्तके हरिजन-सेवकोंके समक्ष, कानपुरमें[1]

[२४ जुलाई, १९३४][2]

नगरपालिकाएँ आमतौरसे लापरवाही दिखा रही हैं, इस शिकायतके सम्बन्धमें गांधीजी ने कहा कि इस अवस्थामें आप लोगोंको चाहिए कि अपने सदस्योंसे सीधा सम्पर्क करके उन्हें गहरी नींदसे जगायें, और मतदाताओंके बीच ऐसी जागृति पैदा कर दें, कि वे खुद अपने चुने हुए सदस्योंको कर्तव्यशील रख सकें। यह जानकर मुझे खुशी हुई है कि कानपुर नगरपालिकाके गैर-हिन्दू सदस्योंने हरिजन मुलाजिमोंके उद्धार कार्यमें हिन्दुओंको दिलसे सहयोग दिया है। मुझे विश्वास है कि दूसरी नगरपालिकाओंके मुसलमान सदस्य भी इसी तरह हरिजन-कार्यके प्रति सहानुभूति दिखायेंगे। नगरपालिकाके सदस्य किसी एक ही जातिके संरक्षक तो है नहीं, वे तो सारी जनताके संरक्षक हैं और हमारा यह आन्दोलन विशुद्ध मानवोद्धारका आन्दोलन है। राजनीतिसे हमारा कोई वास्ता नहीं। हरिजन हिन्दुओंकी जैसी

१. यह 'हरिजन-सेवक-निर्देशिका', शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।
२. वालजी गो० देसाईकी "साप्ताहिक चिट्ठी" से।

सेवा करते हैं, वैसी ही गैर-हिन्दुओंकी भी। फिर एक और बात है। हरिजन-बस्तियोंकी यह गन्दगी समूचे शहरके लिए खतरनाक हो सकती है। यह सर्वविदित तथ्य है कि पानी, रोशनी, पाखाना आदिकी जो सुविधाएँ अन्य नागरिकोंके लिए नगरपालिकाने दे रखी हैं, उनसे बेचारे हरिजन वंचित रहते हैं।

नगरपालिकाएँ क्या करती हैं और क्या नहीं करतीं-इसे जाने दें, हरिजन-सेवक संघका यह फर्ज है कि हरिजनोंकी बस्तियोंको साफ-सुथरी रखनेका वह सदा प्रयत्न करता रहे। और यह आसानीसे हो सकता है, इसमें कुछ ऐसे बहुत खर्चेकी भी जरूरत नहीं है। प्रथम तो यह देखना चाहिए कि बस्तीकी नालियाँ ठीक हैं या नहीं और बस्तीमें सफाई कैसी है और सड़कें अच्छी हैं या नहीं। घरोंमें जरा-सा भी सुधार कर दिया जाये तो कम-से-कम रोशनी और हवा तो आने लगें। हरिजन-बस्तियोंके सुधारकी कोई आसान योजना अगर आप नगरपालिकाओंके आगे रखेंगे तो वे आपके संघको थोड़ी-बहुत सहायता तो दे ही देंगी। इस तरह संघ और नगरपालिका मिलकर कुछ-न-कुछ सुधार तो कर ही सकते हैं। नगरपालिकाओंके पास शायद कार्य करनेवाले आदमी न हों, और हों भी, तो इस तरहके काममें वे शायद पूरी दिलचस्पी न लेते हों।

दूसरी बात यह है कि हरिजनोंके लिए पानीका खूब अच्छा प्रबन्ध कर दिया जाना चाहिए। नगरवासियोंकी अपेक्षा बेचारे गाँवके हरिजनोंको पानीका बहुत अधिक कष्ट है। उन गरीबोंमें इतना कहनेकी भी हिम्मत नहीं है कि उन्हें भी सार्वजनिक कुओंसे पानी भरनेका सबके समान अधिकार है। अदालतकी मददसे या दूसरी तरह सार्वजनिक कुओंपर पानी भरनेका हक उन्हें जताना है। इस बीच संघको चाहिए कि वहाँ ऐसे सुन्दर कुएँ बनवा दें कि सवर्ण हिन्दुओंका भी मन उनसे पानी भरनेको लालायित हो जाये। पर जबतक कुएँ नहीं बन जाते, तबतक सुधारकोंको चाहिए कि वे खुद पानी खींच-खींचकर हरिजन भाइयोंके घड़ोंमें डाल दिया करें।

तीसरी बात यह है कि हरिजन बच्चोंके लिए हमारा संघ अच्छी प्रारम्भिक पाठशालाएँ स्थापित करे। इन पाठशालाओंके अध्यापक सिर्फ अक्षर और अंक सिखानेके फेरमें ही न पड़े रहें, बल्कि अपने विद्यार्थियोंको शरीर और वस्त्र साफ रखनेकी भी शिक्षा दिया करें, ताकि छः ही महीनेमें वे हरिजन बच्चे भी अपने समवयस्क सवर्ण बच्चोंके साथ बैठ सकें। हरिजन शिक्षकमें उतनी विद्वत्ताकी जरूरत नहीं है, जितनी कि सहृदयताकी। अच्छा हो कि संघ हरिजन प्राइमरी पाठशालाओंके अध्यापकोंके लिए एक 'गाइड' बनाकर छपवा दे, जिसमें यह सब रहे कि उन्हें अपने विद्यार्थियोंको वह सांस्कृतिक शिक्षा किस तरह देनी चाहिए जो कि सवर्ण बालकोंको अपने घरोंमें मिलती रहती है।

चौथी बात 'आश्रम' के सम्बन्धकी है। मैं देखता हूँ कि 'आश्रम' इतना ऊँचा शब्द है कि उसका प्रयोग करते हुए हमें संकोच होना चाहिए। मैं तो इन संस्थाओंको

'छात्रालय' या 'उद्योगालय' कहना ही पसन्द करूँगा। मैं स्वयं नहीं चाहता कि साबरमतीके आश्रमको 'हरिजन-आश्रम' कहा जाये। छात्रालयके बच्चोंको पाठशालामें जो शिक्षा दी जाती है, उसमें हम इतना और जोड़ दें तो बहुत अच्छा हो कि उन्हें वहाँ एकाध धन्धा सिखाया जाये और धर्मकी भी कुछ शिक्षा दी जाये। धर्मकी शिक्षा पोथियोंके द्वारा नहीं, किन्तु अपने सच्चे सदाचारके द्वारा दी जानी चाहिए। यह देखते रहना छात्रालयके अधीक्षकका कर्त्तव्य है कि उसके छात्र अपने हाथ-पैरोंसे काम लेते हैं या नहीं, उनका सत्य केवल किताबी सत्य तो नहीं है, उनके जीवनमें भी सत्यको सच्चा स्थान मिल रहा है या नहीं। सच पूछा जाये तो छात्रोंके प्रति उसका वही बरताव होना चाहिए जो कि पिताका अपनी सन्तानके प्रति हुआ करता है। वह छात्रोंका धर्मपिता है। हर प्रान्त में ऐसी यदि दो भी संस्थाएँ हों तो संस्कृतिका उनके द्वारा बहुत बड़ा प्रसार-प्रचार हो जाये।

'मद्य-निषेध' के विषयमें गांधीजी ने कहा कि आपकी बातोंका असर शराबियों पर तो तभी पड़ सकता है जब आप उनके जीवनका गहरा अध्ययन करें और उनके साथ अपना घनिष्ठ सम्पर्क कायम करें। सिर्फ प्रतिज्ञा-पत्रपर उनका हस्ताक्षर-भर करा लेना कोई अर्थ नहीं रखता। आपको कारणोंकी तहतक जाना चाहिए कि ये लोग शराब आखिर पीते क्यों हैं। शराबके बदले आपको उन्हें दूध या चाय देनेका शुरू-शुरूमें प्रबन्ध करना होगा। खेल-कूद या कथा-व्याख्यान आदिमें भी उनका मन लगाये रहना होगा।

अन्तमें, गांधीजी ने बड़े जोरदार शब्दोंमें हरिजन-सेवकोंसे कहा कि जबतक आप लोग गाँवोंमें जाकर डेरा न डालेंगे, तबतक आपके इस अस्पृश्यता-निवारण कार्यका श्रीगणेश भी हुआ नहीं कहा जा सकता। गाँव ही तो असलमें अस्पृश्यताके मजबूत गढ़ हैं। गाँवोंमें जब उसपर तीव्र प्रहार होगा, तभी वह समाप्त होगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १०-८-१९३४

२६५. भाषण: छात्रों और हरिजनोंके समक्ष, कानपुरमें[1]

२४ जुलाई, १९३४

महात्मा गांधीने अभिनन्दनका उत्तर देते हुए छात्रोको थैलीके लिए धन्यवाद दिया, परन्तु कहा कि कानपुरके छात्रोके लिए यह रकम बहुत ही थोड़ी है। जब वे पहले यहाँ आये थे तो उन्होने १५०० रुपये दिये थे। फिर भी उन्होंने उसका स्वागत किया, क्योंकि वह प्रेमसे दी गई थी। उन्हे यह जानकर खुशी हुई कि विद्यार्थी उन्हें सच्चे सनातनधर्म का उपासक मानते है। हरिजन-सेवाकी उनकी इच्छाको उन्होंने एक शुभ लक्षण बताया।

हरिजन कार्यकर्त्ताओंकी सभामें[2] यह कहा गया था कि हरिजन कार्यकर्त्ता काफी नहीं हैं, पर यहाँ आप लोग तो हैं। मैं आपसे यह अपेक्षा नहीं करता कि आप अपनी पढ़ाई-लिखाई छोड़ दें और अपना सारा समय इसी कार्यमें लगायें। पर मैं यह अपेक्षा अवश्य करता हूँ कि पढ़ाई-लिखाईके साथ-साथ आप अपना समय इस कार्यमें भी लगायें, जैसेकि आप अपने माँ-बाप के बीमार पड़ने पर उनकी सेवा-शुश्रूषा करते हैं। मैं चाहता हूँ कि आपमें त्यागकी भावनाएँ पैदा हों। ज्ञानका अर्थ मात्र पुस्तकें पढ़ना नहीं है। इस तरहकी सेवा भी उसके अन्तर्गत आती है। मैं चाहता हूँ कि मैं आपको यह महसूस करा सकूँ कि गरीब हरिजन बहुत कष्ट भोग रहे हैं और आप यदि उनके सारे नहीं तो बहुत-से कष्ट दूर कर सकते हैं; और यह सब नियमित पढ़ाई-लिखाई जारी रखते हुए किया जा सकता है।

अन्तमें, महात्मा गांधीने छात्रों, लड़के-लड़कियो, दोनो से अपील की कि यदि वे हरिजन-कार्यमें ज्यादा समय नहीं दे सकें तो कम-से-कम खादी तो अवश्य पहनें। खादी पहननेपर हम जो-कुछ खर्च करते हैं, उसका बहुत ज्यादा भाग हरिजनोंको जाता है।[3]

हरिजनोंके अभिनन्दनका उत्तर देते हुए, गांधीजी ने कहा कि सफाईका काम एक पवित्र धन्धा है और भंगियोंका तिरस्कार करना उतना ही अनुचित है जितना कि किसी नर्स, सर्जन या माताका तिरस्कार करना, क्योंकि उन सबको भी मैलेको हाथ लगाना पड़ता है। परन्तु सफाईके नियमोंका पालन करना चाहिए और मरे

१. क्वीन्स पार्कमें; सनातन धर्म कॉलिजके छात्रोंने उन्हें अभिनन्दन-पत्र भेंट किया था।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

३. गांधीजी को तब हरिजन भंगियोंकी ओरसे अभिनन्दन-पत्र भेंट किया गया, जिसे लल्लूराम भंगीने पढ़ा।

हुए पशुओंका मांस, शराब और जुएकी आदत छोड़ देनी चाहिए। जूठन लेनेसे इनकार कर देना चाहिए और यह माँग करनी चाहिए कि सेवाओंके बदलेमें पैसे या कम-से-कम कच्चा अनाज, दालें आदि दी जायें। हड़तालोंके बारेमें गांधीजी ने कहा कि मैं स्वयं दक्षिण आफ्रिकामें और अपनी मातृभूमिमें कई सफल हड़तालोंका नेतृत्व कर चुका हूँ, और इस विद्याके एक विशेषज्ञ के नाते मैं आपको यह सलाह दूँगा कि काम बन्द करनेसे पहले झगड़ा निपटानेके अन्य सभी उपाय काममें लाने चाहिए।[1]

[अंग्रेजीसे]
लीडर, २७-७-१९३४, हरिजन, १९-८-१९३४ भी

२६६. भेंट : राष्ट्रीय भाषा शिष्टमण्डलको[2]

कानपुर
२४ जुलाई, १९३४

उन्होंने उनसे जोरदार प्रचार-कार्य करनेको कहा और कहा कि हिन्दी पत्र-पत्रिकाओंके अंकोंमें तत्सम्बन्धी साहित्य और पत्रक लिखे जाने चाहिए, शब्दकोश तैयार होने चाहिए और पश्चिममें अपनाये गये तरीकोंसे हिन्दीमें किताबें लिखी जानी चाहिए। उन्होंने हिन्दी भाषा और साहित्यको उन्नत तथा लोकप्रिय बनानेके कई अन्य सुझाव दिये।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, २५-७-१९३४

२६७. पत्र : मीराबहनको

रेलमें जाते हुए
२५ जुलाई, १९३४

चि० मीरा,

यह सिर्फ इतना ही बतानेके लिए है कि तुम सदा मेरे पास हो।

सस्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]
बापूज लेटर्स टु मीरा, पृ० २६७

१. यह अनुच्छेद वालजी गो० देसाईकी "साप्ताहिक चिट्ठी" से लिया गया है।

२. शिष्टमण्डलमें हीरालाल खन्ना, प्रिंसिपल विशम्भरनाथ सनातन धर्म इण्टरमीजिएट कालेज, ब्रजविहारी मेहरोत्रा, बालकृष्ण शर्मा, छैलविहारी कटक और अन्य लोग थे। शिष्टमण्डलका नेतृत्व बाबा राघवदास कर रहे थे।

२६८. टिप्पणी : दर्शक-पुस्तिकामें[1]

२५ जुलाई, १९३४

जो लोग खादी नही पहनते, वे दरिद्रनारायणकी सेवा कैसे कर सकते हैं?

[अंग्रेजीसे]
पायनियर, २७-७-१९३४

२६९. भाषण : सार्वजनिक सभा, लखनऊमें[2]

२५ जुलाई, १९३४

अभिनन्दन-पत्रोंका उत्तर देते हुए, महात्मा गांधीने सनातनियो, हरिजनों और लखनऊके अन्य नागरिकोको उनके स्वागत-सत्कारके लिए धन्यवाद दिया। पर, साथ ही उन्होने इस बातपर अपना असन्तोप भी साफ-साफ व्यक्त किया कि लखनऊसे हरिजन-कोषको थोड़ी रकम मिली है। वे यह माननेको तैयार नही थे कि परिस्थितियाँ ही ऐसी थीं कि इतनी मामूली रकम इकट्ठी हो सकी। लखनऊको उनके आनेकी सूचना काफी पहले मिल गई थी, इसलिए हरिजन-ध्येयके लिए इकट्ठी की गई रकम इससे बहुत ज्यादा होनी चाहिए थी। कुछ साल पहले जब वे लखनऊ आये थे, तो संयुक्त प्रान्तके इस मुख्य नगरने उन्हें इससे बहुत बड़ी थैली भेंट की थी, पर इस बार उसने उन्हें निराश किया।

लखनऊकी महिलाओंने उन्हे जब १,५०० रुपयेकी थैली और ५०० रुपयेके आभूषण भेंट किये थे[3] तो उन्होंने यह आशा की थी कि अन्य नागरिक हरिजन-कोषमें इतनी रकम देंगे जो इस नगरकी प्रतिष्ठाके अनुरूप होगी। पर उनकी सभी आशाएँ विफल रहीं। फिर भी वे लखनऊको अपनी मान-रक्षाका एक और अवसर देनेको तैयार थे और उन्होंने आशा प्रकट की कि यहाँके नागरिक उन्हे प्रान्तका दौरा समाप्त करनेसे पहले एक अच्छी रकम भेजेंगे।

१. सुबह गांधीजीने लखनऊमें अमीनुद्दौला पार्कके पास स्थित चरखा-संघके खादी भंडारका निरीक्षण किया था।

२. अमीनुद्दौला पार्कमें।

३. जनाना पार्कमें, प्रातःकाल, गांधीजी के लखनऊ पहुँचते ही।

हरिजन-कार्यके सिलसिलेमें महात्मा गांधीने लोगोंसे कहा कि वे खुद जाय और देखें कि भारतमें हरिजनोंकी दशा कितनी खराब है। उन्हें बहिष्कृत माना जाता है और, धर्मके नामपर, मनुष्योंके मूल अधिकारोंतक से वंचित रखा जाता है। जो अस्पृश्यताका समर्थन करते हैं वे एक गम्भीर सामाजिक पापके भागी हैं। धर्मके नाम पर ६ करोड़ लोगोंको समाजसे बाहर रखना एक अक्षम्य अपराध है, जो किसी भी तरह न्यायोचित नहीं ठहराया जा सकता।

दक्षिण आफ्रिका और अमेरिकामें गोरे लोग काली नस्लोंके लोगोंके प्रति वैसी ही विरुचि और असहनशीलता दिखाते हैं जैसीकि भारतमें सवर्ण लोग दलित वर्गके लोगोंके प्रति दिखाते हैं। परन्तु उन देशोंमें गोरे लोगोंने यह रुख, अपनी खुदकी उन्नतिके लिए, राजनैतिक अस्त्रके रूपमें अपनाया है। अपने कार्यको उचित ठहरानेके लिए उन्होंने धर्मका सहारा नहीं लिया है, जैसाकि भारतमें सवर्ण हिन्दू कर रहे हैं।

इस असह्य रुखके ही कारण, जिसमें कोई औचित्य नहीं है, डॉ० अम्बेडकर जैसे लोगोंको हिन्दू-समाजमें अस्पृश्य माना जाता है। हरिजन-प्रश्नपर यद्यपि उनका मुझसे मतभेद है, पर उनकी बुद्धिमत्ता, लगन और अन्य खूबियोंका मैं बहुत ही आदर करता हूँ। दलित वर्ग दलित पैदा नहीं हुए हैं, बल्कि सवर्ण हिन्दुओंने सदियोंसे उन्हें दलित रखा है।

सवर्ण हिन्दुओं द्वारा प्रस्तुत इस सिद्धान्तमें कि दलित वर्गोंने पिछले जन्मोंके अपने पापोंके कारण ही अस्पृश्यके रूपमें जन्म लिया है, कोई औचित्य नहीं है। दलित वर्गोंके लोगोंको मानव अधिकारोंसे वंचित रखना सरासर अन्याय और पाप है।

सभी धर्मोंके अनुसार, ईश्वर-सेवाका सबसे सुनिश्चित मार्ग गरीबोंकी सेवा है। खादीका उपयोग कर लोग आसानीसे वह सेवा कर सकते हैं। यदि खादीका चलन और ज्यादा बढ़ जाये तो भारतके लाखों लोगोंको, जो आज भूखों मरते हैं, कम-से-कम एक जून तो भोजन मिलने ही लगे। जो व्यक्ति एक रुपयेकी भी खादी खरीदता है, वह यह यकीन कर सकता है कि उसमें से पन्द्रह आने गरीबोंके पास जायेंगे और उन्हें भूखों मरनेसे बचायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

लीडर २७-७-१९३४

२७०. भाषण : आर्यसमाज-सभामें

कानपुर
२५ जुलाई, १९३४

गांधीजी ने अभिनन्दन-पत्र[1] ग्रहण करनेके आमन्त्रणके लिए सभाका आभार प्रकट किया। महात्माजी सभाके सदस्योंकी इस बातसे सहमत थे, कि स्वामी दयानन्दने पीड़ित वर्गोंकी सेवाका प्रयत्न किया है और अस्पृश्यता-निवारणमें एक बड़ी भूमिका अदा की है। महात्मा गांधीने बताया कि आर्यसमाजसे उनका सम्बन्ध नया नहीं है, बल्कि जब वे दक्षिण आफ्रिकामें थे तबसे है। उन्होंने खुशी जाहिर करते हुए कहा कि वह सम्बन्ध बराबर गहरा और मजबूत हो रहा है। अन्तमें महात्मा गांधीने यह कामना प्रकट की कि आर्यसमाजके साथ उनका सम्बन्ध भविष्यमें और भी गहरा हो और वे आर्यसमाज, ईश्वर और अपने देशकी मिलकर सेवा कर सकें।

[अंग्रेजीसे]
लीडर, २९-७-१९३४

२७१. उत्तर : जमींदारोंको[2]

२५ जुलाई, १९३४

प्रश्न : कराची कांग्रेसमें जनताके मूल अधिकारोंपर एक प्रस्ताव पास हुआ था। उसमें निजी सम्पत्तिको स्वीकार किया गया था; इसलिए राष्ट्रीय जमींदारोंने कांग्रेसका समर्थन किया। परन्तु कांग्रेसका नया समाजवादी दल निजी सम्पत्तिको खत्म करनेकी धमकी दे रहा है। कांग्रेसकी नीतिपर इसका क्या असर पड़ेगा? आपके खयालमें क्या इससे वर्ग-संघर्षको बढ़ावा नहीं मिलेगा? क्या आप उसे रोकेंगे?

उत्तर : कराची प्रस्ताव केवल अगली कांग्रेसके खुले अधिवेशनमें ही बदला जा सकता है। पर मैं आपको यह विश्वास दिलाता हूँ कि मैं सम्पत्तिवान वर्गोंको, बिना किसी न्यायोचित कारणके, उनकी निजी सम्पत्तिसे वंचित करनेके पक्षमें नहीं हूँ।

१. साधन-सूत्रके अनुसार यू० पी० आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा यह शामके ५ बजे भेंट किया गया था। इसमें आर्यसमाज द्वारा किये गये कार्य, विशेषतः अस्पृश्यता-निवारण-आन्दोलनके सिलसिलेमें किये गये कार्यका विवरण था।

२. साधन-सूत्रके अनुसार यह "महादेव देसाई द्वारा लिखा गया" और "गांधीजी द्वारा ठीक किया गया" टिप्पणीके साथ प्रकाशित हुआ था। गांधीजी ने "जमींदारों द्वारा पढ़कर सुनाये गये" प्रश्नोंका उत्तर दिया था।

मेरा लक्ष्य तो आपके दिलोंतक पहुँचना और आपको बदलना है, जिससे कि आप अपनी सारी सम्पत्तिको रैयतकी अमानत मानें और उसका उपयोग मुख्यतया उसकी भलाईके लिए करें।

मैं यह बात तो मानता हूँ कि कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओंमें 'समाजवादी' दल नामके एक नये दलका जन्म हुआ है, किन्तु यह दल यदि कांग्रेसको अपने साथ ले जानेमें सफल हो गया, तो क्या होगा सो मैं नहीं कह सकता। फिर भी मुझे पक्का यकीन है कि यदि हमारे करोड़ों लोगोंका पूरी तरह निष्पक्ष असन्दिग्ध मत लिया जाये तो वे सम्पत्तिवान वर्गोंकी सारी सम्पत्ति छीननेके पक्षमें मत नहीं देंगे। मैं तो पूँजी व श्रम और जमींदारों व रैयतके सहयोग और तालमेलके लिए प्रयत्नशील हूँ। आप कांग्रेसमें उसी तरह शामिल हो सकते हैं जैसेकि गरीब-से-गरीब लोग चार आना चन्दा देकर और कांग्रेसके सिद्धान्तोंमें विश्वास प्रकट करके उसमें शामिल हो सकते हैं।

फिर भी मैं आपको एक चेतावनी दे देना चाहता हूँ। मिल-मालिकोंसे मैंने कहा है कि वे अकेले ही मिलोंके मालिक नहीं हैं। मजदूरोंका भी मिल्कियतमें बराबरका हिस्सा है। इसी तरह मैं आपसे कहूँगा कि जमीनके जितने मालिक आप हैं उतनी ही रैयत भी है और आपको अपनी आमदनी विलासिता या फिजूलखर्चीमें नहीं उड़ानी चाहिए, बल्कि रैयतकी भलाईके लिए काममें लानी चाहिए। अपनी रैयतको यदि आप एक बार यह महसूस करा दें कि आपके साथ उसका पारिवारिक नाता है और उसमें सुरक्षाकी यह भावना पैदा हो जाये कि परिवारके सदस्य होनेके नाते उसके हितोंको आपके हाथों कोई क्षति नहीं पहुँचेगी, तो आप यह यकीन कर सकते हैं कि आपमें और उनमें कोई वर्ग-संघर्ष नहीं हो सकता।

वर्ग-संघर्ष भारतकी मूल प्रकृतिके लिए विजातीय तत्त्व है और वह, सबके लिए मूल अधिकार और सबके लिए समान न्यायके व्यापक आधारपर, एक प्रकारका साम्यवाद विकसित कर सकती है। मेरी कल्पनाका रामराज्य राजा और रंकको एक-से अधिकार देता है।

आप यह यकीन कर सकते हैं कि मैं अपनी पूरी शक्ति और सारा प्रभाव वर्ग-संघर्षको रोकनेमें लगाऊँगा। स्वयं अपनेपर मैंने जो प्रतिबन्ध लगा रखा है, तीन अगस्तको जब वह समाप्त हो जायेगा तो मैं क्या करूँगा, यह अभी मुझे पता नहीं है। पर मैं अपनी ओरसे पुनः जेल न जानेकी पूरी कोशिश करूँगा। जिस स्थितिकी अभी मुझे जानकारी नहीं है, उसके बारेमें निश्चयके साथ पहलेसे कुछ कहना कठिन है। पर, मान लीजिए, आपको अनुचित रूपसे आपकी सम्पत्तिसे वंचित करनेकी कोशिश की जाती है तो आप मुझे अपने पक्षमें लड़ता हुए पायेंगे।

विधानसभाके अगले चुनावोंमें हम कांग्रेसी उम्मीदवारोंका समर्थन करना चाहते हैं। पर वे लोग विधानसभामें क्या नीति अपनायेंगे, इसके बारेमें हमें आशंका है। क्या आप संसदीय बोर्डको हमारी आशंकाएँ दूर करनेके लिए राजी कर सकते हैं?

इस विषयपर मैं आपको संसदीय बोर्डके साथ विचार-विमर्श करनेको आमन्त्रित करता हूँ। परन्तु मैं यह जानता हूँ कि कोई भी सदस्य निजी सम्पत्तिको जब्त करने

या खत्म करनेकी बात नहीं करेगा। रैयतके साथ आपके जो सम्बन्ध हैं, उनमें मौलिक सुधार करनेपर वे जरूर जोर देंगे। पर वह आपके लिए कोई नई चीज नही होनी चाहिए। सर मैल्कम हेली[1] और लॉर्ड इर्विन तक ने आपसे यह अपील की है कि आप युगकी भावनाको समझें और अपना जीवन उसके अनुरूप बनायें। आप यदि केवल इतना करें तो यह निश्चित है कि हम एक विशुद्ध समाजवाद विकसित कर सकेंगे।

पश्चिमका समाजवाद और साम्यवाद कुछ ऐसी धारणाओंपर आधारित है जो हमारी धारणाओंसे मूलत. भिन्न है। इस तरहकी एक धारणा उनका यह विश्वास है कि मनुष्यकी प्रकृति मूलतः स्वार्थी है। मै इसमे विश्वास नही करता, क्योंकि मै यह जानता हूँ कि मनुष्य और पशुमे मूल भेद यह है कि पहला अपनी अन्तरात्माकी पुकारके अनुरूप कार्य कर सकता है और उसमे पशुके-से जो आवेग है, उनसे वह ऊपर उठ सकता है। इसीलिए वह स्वार्थ और हिंसासे, जिनका सम्बन्ध पाशविक प्रकृतिसे है मनुष्यकी नित्य आत्मासे नही, ऊपर उठ सकता है।

यह हिन्दू-धर्मकी मूल धारणा है और इस सत्यकी खोजके पीछे वर्षोंका तप और संयम रहा है। इसीलिए जहाँ हमारे यहाँ ऐसे संत हुए है जिन्होंने आत्माके रहस्योंको खोजनेके लिए अपने शरीर स्वाहा कर दिये और प्राण त्याग दिये, वही पश्चिमकी तरह हमारे यहाँ ऐसा कोई नही हुआ जिसने पृथ्वीके दूरतम या उच्चतम प्रदेशोकी खोजके लिए अपने प्राण त्यागे हों। हमारा समाजवाद या साम्यवाद इसीलिए अहिंसापर तथा श्रम व पूंजी और जमीदार व रैयतके सामंजस्यपूर्ण सहयोगपर आधारित होना चाहिए।

अतः कांग्रेसके सिद्धान्त या नीतिमे ऐसा कुछ नही है जिससे आपको आतंकित होनेकी जरूरत हो। यदि आप अनुमति दें तो मैं कहूँगा कि मनमें भय और आशंकाएँ आपके स्वयं दोषी होनेके ही कारण हैं। जाने-अनजाने आप जिन अन्यायोंके दोषी रहे है, उन्हें खत्म कर दीजिए और कांग्रेस व कांग्रेसियोंसे आपको जो भय है उसे दूर भगाइये।

जमीदार और रैयतके सम्बन्धोंको यदि आप एक बार नया मोड़ दे दें, तो आप देखेंगे कि हम आपके साथ होंगे और आपके निजी अधिकारों और सम्पत्तिकी बड़ी सजगतासे रक्षा करेंगे। जब मैं 'हम' कहता हूँ, तो मेरे दिमागमें पण्डित जवाहरलाल भी होते हैं, क्योंकि मुझे यकीन है कि अहिंसाके इस मूल सिद्धान्तपर हममें कोई मतभेद नही है। बेशक, वे सम्पत्तिके राष्ट्रीयकरणकी बात करते हैं, पर उससे आपको आतंकित होनेकी जरूरत नही है।

राष्ट्र सम्पत्तिको व्यक्तियोंको सुपुर्द किये बिना उसपर अपना स्वामित्व रख ही नही सकता। वह केवल उसके न्यायोचित और पक्षपात-रहित उपयोगकी गारंटी करता है और उन सभी दुरुपयोगोंको रोकता है जो संभाव्य हैं। अपनी सम्पत्तिको रैयतकी भलाईके लिए अपने पास रखनेमें आपको कोई आपत्ति हो सकती है, मैं

१. संयुक्त प्रान्तके गवर्नर।

ऐसा नही सोचता। रैयत केवल शान्ति और स्वतन्त्रतासे रहना चाहती है, और इससे बड़ी उसकी कोई महत्वाकांक्षा नहीं है। यदि आप सम्पत्तिका उसके लिए उपयोग करते हैं तो उसपर आपके अधिकारसे उसे कोई ईर्ष्या नही होगी।

आप हमसे और गाँवोंसे प्रायः कन्नी काटते आये हैं। आप अपने उम्मीदवार देहाती वर्गोंसे क्यों नहीं लेते?

आप विश्वास रखें कि हम गाँवोंमें प्रवेश करनेवाले हैं और आपके साथ स्वस्थ सम्बन्ध स्थापित करेंगे।

[अंग्रेजीसे]
पायनियर, ३-८-१९३४

२७२. पत्र : मीराबहनको

२६ जुलाई, १९३४

चि० मीरा,

यह पत्र ऐसे समय लिखा जा रहा है जब एक हाथमें सब्जी और दूसरेमें कलम है। डाकका समय निकट है। इसलिए तुम्हें केवल प्रेम ही भेज सकता हूँ।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२९३) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७५९ से भी।

२७३. पत्र : सरिताको

२६ जुलाई, १९३४

चि० सरिता,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं उसकी राह देख ही रहा था। तुमने सुख-दुःख दोनों देखे ही हैं। वहाँ जो बहनें हैं, उनके साथ हिल-मिल जाना। मेरे लिए बम्बईमें और कोई घर नही है। इस कुटुम्बके साथ मेरे सम्बन्ध अनेक वर्षोंके है। निर्मलाके यहाँ भी घर तो है ही। उसके यहाँ हमेशा [आने-जानेवालोंके कारण] जगहकी तंगी रहती है। तथापि जगहकी तंगी हो या न हो, यह कुटुम्ब ऐसा तो है ही कि सब का समावेश कर सके। तो भी यदि वहाँ रहा जा सकता हो तो रहना। मैंने दोनों बहनोंको लिख दिया है।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (जी० एन० ११५२९) से।

२७४. बातचीत: कांग्रेस, हरिजन और खादी-कार्यकर्त्ताओंके साथ

कानपुर
२६ जुलाई, १९३४

महात्मा गांधीका यह दिन भी बहुत व्यस्त बीता। कांग्रेस, हरिजन और खादी-कार्यकर्त्ताओंके साथ विचार-विमर्शसे बातोंपर काफी प्रकाश पड़ा। बहुत-से मामलोंमें कार्यकर्त्ताओंको उन्होंने ठोस सलाहें दीं और कहा कि उनमें अनुशासनका बहुत तीव्र एहसास होना चाहिए। इसके बिना वास्तविक प्रगति असम्भव है। उन्होंने कहा कि और लोगोंकी तरह स्वयंसेवकोंमें भी कमियाँ हैं, पर उनपर काबू पाना कठिन या असम्भव नहीं है। जिन उच्च आदर्शोंने उन्हें अपने भाइयोंकी सेवाके लिए प्रेरित किया, वे उन्हें अपने सम्मुख रखने चाहिए। उन्हें यह बात ध्यानमें रखनी चाहिए कि वे जन-साधारणके सेवक हैं और इसलिए उन्हें यथासम्भव सभी तरहसे उनकी सहायता करनेको सदा तैयार रहना चाहिए। देशके कार्यके लिए कष्ट सहनेको उन्हें सदा तैयार रहना चाहिए और सौंपे गये कार्य उन्हें ईमानदारी, निष्ठा और परिश्रमसे पूरे करने चाहिए। उन्होंने कहा कि स्वयंसेवकोंपर भारी दायित्व है। अपने कर्त्तव्योंके बारेमें बातें करनेकी अपेक्षा उन दायित्वोंको पूरा करना कहीं कठिन काम है।

खादी-कार्यकर्त्ताओंसे उन्होंने अपील की कि वे अपना काम बराबर जारी रखें। खादीकी बिक्रीका काम, किसी भी कारण, उन्हें रोकना नहीं चाहिए, क्योंकि खादीका उपयोग ही ईश्वर-सेवाका सबसे सच्चा मार्ग है; गरीबोंकी सेवा ही ईश्वर-सेवा है। खादीके इस्तेमालसे लाखों भूखे लोगोंको रोटी मिलेगी। महात्मा गांधीने कांग्रेसियोंसे कहा कि उन्हें गैर-कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओंका सहयोग प्राप्त करना चाहिए, उन्हें पदाधिकारी बनाकर उनके नीचे काम करना चाहिए। कांग्रेसियों और गैर-कांग्रेसियोंमें भेद नहीं करना चाहिए, क्योंकि हरिजन-कार्यमें सभीकी समान रुचि है। उन्होंने कहा कि मेरे विचारसे हरिजन-कार्यमें कांग्रेसियों और गैर-कांग्रेसियोंका स्वस्थ सहयोग हरिजनोंके लिए बहुत ही लाभप्रद सिद्ध होगा। उन्होंने अपील की कि आप लोग गैर-कांग्रेसियोंसे जो भी सहायता प्राप्त की जा सकती हो, प्राप्त करनेकी कोशिश करें।[1]

कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओंने वर्ग-संघर्षपर उनके विचार पूछे और यह जानना चाहा कि क्या वह अहिंसात्मक हो सकता है। उन्होंने जवाब दिया कि जिस रूपमें आज

१. इससे आगेका अंश हिन्दुस्तान टाइम्स, २७-७-१९३४ से लिया गया है।

उसकी चर्चा होती है उस रूपमें वह अहिंसात्मक नहीं हो सकता। जहाँ-कहीं किसी व्यक्तिको कुचलनेका सवाल उठता हो, वहाँ हिंसा होगी ही।

यह पूछनेपर कि कांग्रेस-समाजवादी दलकी वर्तमान नीतिसे क्या कांग्रेसके ध्येयको क्षति पहुँचेगी, उन्होंने कहा कि वह नीति बम्बईसे जारी किये गये घोषणापत्रमें घोषित नीति-जैसी ही हो तो मुझे कोई शिकायत नहीं है। क्या समाजवाद कांग्रेसकी नीतिके विरुद्ध है, यह पूछनेपर महात्माजी ने कहा कि समाजवाद एक अच्छी चीज है। मैं स्वयं समाजवादी हूँ। परन्तु मेरी व्याख्या सदा अहिंसात्मक रही है और वस्तुतः जो मेरा आशय है, वह कराची-प्रस्तावमें व्यक्त किया गया है। मैं अभी भी उसपर कायम हूँ और उससे आगे जानेको तैयार नहीं हूँ।

जमींदारोंके प्रति कांग्रेसियोंका रूख क्या होना चाहिए, यह पूछनेपर उन्होंने कहा कि उनके प्रति भाइयोंका-सा स्नेह होना चाहिए और हमारा लक्ष्य अन्याय को मिटाना और समन्वय स्थापित करना होना चाहिए। हमें हृदय-परिवर्तन करना है। उन्होंने कहा कि जमींदारोंमें यह आशंका पैदा कर दी गई है कि स्वराज्य मिल जानेपर जमींदारोंसे सब-कुछ छीन लिया जायेगा। यदि सरकारने किसी आदमीको खुश होकर १८५७ में कुछ जमीन इनाममें दी थी, तो उसके पोतोंसे आज वह सम्पत्ति छीनना कैसे उचित हो सकता है? यदि उनकी जमीन ली जाती है, तो राज्यको उन्हें समुचित मुआवजा देना चाहिए। इसी तरह जिस आदमीने आज जमीन खरीदी है और बाकायदा उसकी कीमत दी है, उसे उससे वंचित नहीं किया जा सकता।

पण्डित बालकृष्ण शर्माने पूछा कि क्या जमींदारोंके रहते हुए काश्तकारोंकी दशा सुधारी जा सकती है। संयुक्त प्रान्तके किसानोंसे १९ करोड़ रुपये वसूल किये जाते हैं, जिनमें से केवल ७ करोड़ रुपये सरकारी खजानमें जाते हैं। शेष १२ करोड़ रुपये जमींदार ले लेते हैं।

गांधीजी ने इसका जवाब देते हुए कहा कि यह सच है कि जबतक वे किसानोंकी इतने ही मूल्यकी सेवा न करें, ये १२ करोड़ रुपये उनके पास नहीं जाने चाहिए। ऐसा भी समय रहा है जब उन्होंने १२ करोड़ रुपये लिये और २९ करोड़ रुपये मूल्यकी उनकी सेवा की। पर आज तो किसानोंको बदलेमें १२ रुपये मूल्यकी भी सेवा नहीं मिलती।

उन्हें खत्म करना इसका कोई हल नहीं होगा और उससे हिंसाको प्रवेश मिलेगा। हमें जमींदारोंकी एक अलग और अस्पृश्य श्रेणी नहीं बनानी चाहिए। हमें ऐसे काश्तकारी अधिनियम पास करवाने चाहिए जो मौजूदा अधिनियमोंसे अलग ढंगके हों। गुजरातमें जमींदार नहीं हैं, फिर भी वहाँ काश्तकारोंकी दशा वैसी ही है।

यह पूछनेपर कि काश्तकारोंमें किस तरहका काम किया जाना चाहिए, महात्माजी ने कहा कि उनके ज्यादातर कष्ट अज्ञानका परिणाम हैं, इसलिए उसे मिटाना चाहिए। सालमें छः महीने वे बेकार रहते हैं, अतः उनके लिए कुछ कुटीर उद्योगोंकी

व्यवस्था की जा सकती है। शिक्षाके अलावा, उन्होंने सफाई और स्वास्थ्यके नियमोंके प्रशिक्षणपर भी जोर दिया।

यह पूछनेपर कि जहाँ सत्याग्रहके दौरान जमीनें जब्त कर ली गई हैं और जमींदार उन्हें लौटानेसे इनकार करते हैं, वहाँ कार्यकर्त्ताओंको क्या करना चाहिए। महात्माजी ने कहा कि उनके सामने एक ही रास्ता है कि वे जमींदारोंके पास जायें और उनकी न्यायबुद्धिको जगायें। मुझे आशा है कि जमींदारोंको राजी किया जा सकेगा, पर यदि वे ऐसा न कर सकें तो अदालतोंकी शरण लेकर इन्साफका दावा करना चाहिए।

सत्याग्रहका जिक्र करते हुए उन्होंने कहा कि वह किसी को भी नहीं करना चाहिए, क्योंकि १९२० से अबतक बराबर जन-साधारणके मनमें प्रवेश करनेकी कोशिश करते रहनेके बाद, मैंने यह जाना है कि उनमें अनुशासनकी भावना विकसित नहीं हो सकती।

अन्तमें, उनसे यह पूछा गया कि जब यह देख लिया है कि आदतन खादी पहननेवालोंका अल्पसंख्यामें भी मिलना व्यावहारिक नहीं है, तो मताधिकारके लिए आदतन खादी पहननेकी शर्त्त हटा क्यों नहीं दी जाती। उन्होंने बताया कि यही सवाल इसी शहरमें श्री परांजपेने भी उठाया था। मेरा जवाब तब यह था कि यदि वे सचमुच जन-साधारणके साथ रहना चाहते हैं, तो उन्हें मताधिकारके नियमोंमें यह शर्त्त अवश्य रखनी होगी; परन्तु यदि वे इसे हटाना चाहते हैं, तो मैं इस प्रश्न पर मतदानके समय मतदानके अपने अधिकारका उपयोग न करनेको तैयार हूँ। खादी न पहननेवाले एक करोड़ कांग्रेसियोंके बजाय, यदि केवल सौ भी खादी पहननेवाले कांग्रेसी हों तो मुझे पूर्ण सन्तोष होगा।

[अंग्रेजीसे]
लीडर, ३०-७-१९३४, हिन्दुस्तान टाइम्स, २७-७-१९३४ भी

२७५. भाषण : महिला सभा, कानपुरमें

२६ जुलाई, १९३४

गांधीजी ने उत्तर देते हुए कहा कि कानपुरकी महिलाओंकी ओरसे ५०१ रुपयेकी रकम बहुत ही थोड़ी है। वे धनी हैं, यदि चाहतीं तो अधिक दे सकती थीं। फिर भी वे उनके कृतज्ञ हैं और यह महसूस करते हैं कि वे और धन देंगी। फिर उन्होंने इसपर जोर दिया कि महिलाओंको हरिजन-उद्धार आन्दोलनमें बहुत ही महत्त्व-पूर्ण भूमिका अदा करनी है। उन्होंने उनसे अपील की कि वे हरिजन-उद्धारके कार्यको अपने हाथमें लें और हरिजनोंकी, जो मानव-समाजकी उतनी ही महत्त्वपूर्ण इकाई हैं जितने कि सवर्ण हिन्दू — सामाजिक और आर्थिक दशाको सुधारनेके लिए यथाशक्ति प्रयत्न करें। उन्होंने कहा कि महिलाएँ पुरुषोंसे काफी ज्यादा काम कर सकती हैं, इसलिए उन्हें घरोंसे बाहर आना चाहिए और इस कामको पूरी तत्परता, सचाई और लगनके साथ, जो महिलाओंका गुण है, अपने हाथमें लेना चाहिए। उन्होंने उनसे खादीका उपयोग करनेकी पुरजोर अपील की और कहा कि लाखों संघर्षरत और भूखे लोगोंकी मुक्ति उसीमें निहित है। खादीका उपयोगकर वे उन्हें रोटी और रोजगार दे सकती हैं। उन्होंने कहा, चरखा सभी रोगोंके लिए रामबाण है। चरखा अद्‌भुत वस्तु है और महिलाएँ चरखेके उपयोगसे देशका आर्थिक उद्धार कर सकती हैं। स्त्री-शिक्षापर उन्होंने बहुत जोर दिया। उन्होंने कहा कि स्त्रियोंको शिक्षित किये बिना कोई भी सामाजिक उन्नति सम्भव नहीं है। शिक्षित महिला केवल अपने परिवारके लिए ही नहीं, बल्कि पूरे देशके लिए एक सम्पदा है।

उन्होंने फिर उनसे पर्दा छोड़ने, घरोंसे बाहर आने और उन दायित्वोंको अपने हाथमें लेनेकी अपील की जो उन्हें पूरे करने हैं। पर्दा उनकी स्वतन्त्रताका हनन कर रहा है, उनके उत्साह और जीवनतकको उनसे छीन रहा है, और महिलाएँ जितनी जल्दी उसे छोड़ेंगी उतना ही अधिक सबका भला होगा।

[अंग्रेजीसे]
लीडर, ३०-७-१९३४

२७६. पत्र : एम० एस० अणेको

[२७ जुलाई, १९३४ से पूर्व][1]

एक तो मेरा लेख पहले ही खराब है दूसरे, चलती गाड़ीमें लिखनेके कारण यह और भी खराब हो रहा है।

न तो मालवीयजी ने और न आपने ही अपनी कठिनाइयाँ दूर करनेके सुझाव मेरे पास भेजे हैं। मैं समाधानके लिए अपना दिमाग लगा रहा हूँ। जितना ज्यादा मैं इसके बारेमें सोचता हूँ उतना ही ज्यादा मेरे मनमें यह बात साफ होती जाती है कि कार्य-समितिका प्रस्ताव निर्दोष है। कांग्रेस यही स्थिति अपना सकती है कि वह अपने-आपको वचनबद्ध न करे। साम्प्रदायिक फोड़ेको हमें बिलकुल नहीं छेड़ना चाहिए। हम इसे जितना ज्यादा छेड़ेंगे यह उतना ही ज्यादा खराब होगा। मेरी रायमें श्वेत-पत्रपर से अपना ध्यान हटा लेना गम्भीर गलती होगी। यदि शासन-सुधार समाप्त न कर दिये गये तो आन्दोलनके बावजूद साम्प्रदायिक आधारपर चुनावका निर्णय बरकरार रहेगा। ये शासन-सुधार लगातार प्रयत्नोंसे समाप्त किये जा सकते हैं। परन्तु मैंने तो आपको यह कहते सुना है कि [साम्प्रदायिक आधारपर चुनावका] निर्णय शासन-सुधारोंसे भी बदतर है।

[अंग्रेजीसे]
रिमिनिसेंसज ऑफ गांधीजी, पृ० २११

२७७. बातचीत : समाजवादियोंके शिष्टमण्डलके साथ[2]

बनारस
२७ जुलाई, १९३४

पता चला है कि शिष्टमण्डलके सदस्योंने, जिन्हें गांधीजी ने मुक्त और खुले विचार-विमर्शके लिए बुलाया था, उन्हें बताया कि कांग्रेसका इस समय जो कार्यक्रम है, वह समाजवादियोंकी माँगको देखते हुए बहुत अपर्याप्त है और उन्हें, कांग्रेस कार्यकारी समितिपर अपने असरको काममें लाते हुए, समाजवादी सम्मेलनके पटना-प्रस्ताव में रखा गया समाजवादी कार्यक्रम पास करवाना चाहिए।

१. साधन-सूत्रमें चन्द्रशंकर शुक्लने स्पष्ट किया है कि यह पत्र बनारसमें कांग्रेस कार्यसमितिकी बैठकसे पहले लिखा गया था।

२. उनके नेता थे, आचार्य नरेन्द्रदेव।

ऐसा समझा जाता है कि गांधीजी ने कांग्रेस कार्यकारी समिति और उसके कार्यक्रमपर समाजवादियोंके आये दिनके अयुक्तियुक्त आक्षेपोंकी निन्दा की और समाजवादियोंसे साफ-साफ यह कह दिया कि वे कांग्रेस-कार्यकर्त्ताओंमें अनावश्यक फूट डालनेकी कोशिश किये बिना या तो कांग्रेसके फैसलेके पाबन्द रहें या फिर कार्यकारी समिति सहित कांग्रेसकी पूरी मशीनका भार अपने ऊपर ले लें। यदि वे चाहें तो वे स्वयं और कार्यकारी समितिके अन्य सदस्य उन्हें नियन्त्रण सौंपने और उनके लिए जगह छोड़नेको तैयार हैं।

समाजवादी, जाहिर था, इससे हैरान रह गये और वे मुख्यतया निराश ही लौटे। पर उन्हें गांधीजी के इस आश्वासनसे थोड़ी-बहुत शान्ति मिली कि वे उनके सुझावोंको कार्यकारी समितिके आगे रखेंगे और पूरी तरह सलाह-मशविरा करके उससे एक ऐसा प्रस्ताव पास करवायेंगे जिसमें समाजवाद, सम्पत्तिकी जब्ती, आदिके बारेमें कांग्रेसका रुख स्पष्ट किया जायेगा।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २८-७-१९३४

२७८. पत्र : डॉ० गोपीचन्द भार्गवको

२८ जुलाई, १९३४

प्रिय डॉ० गोपीचन्द,

आपने जितना कांग्रेसके लिए खर्च किया है, उतना क्या आप जनतासे नहीं उगाह सकते? लेकिन अगर आपको पैसा देना ही पड़े, तो बेहतर यह है कि जितनी जल्दी बने, दे डालिए जिससे ब्याज बचे। इसलिए जितना ध्यान आप अपनी प्रैक्टिसकी ओर अभी दे रहे हैं, उससे अब अधिक दीजिए।

मेरा बिलकुल स्पष्ट मत है कि आपको कांग्रेससे और चुनावोंसे दूर रहना चाहिए।

डॉ० किचलूका उपवास मुझे बिलकुल नहीं जँचा। आशा करता हूँ, इस पत्रके आपके पास पहुँचनेतक वह उपवास समाप्त हो गया होगा।

खादीपर आपके पत्रकी प्रतीक्षा करूँगा।

अपने निवासके समय मैंने आपको जो कष्टप्रद तकलीफ दी, उसके लिए मैं शर्मिन्दा हूँ।

हृदयसे आपका
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल कागज़ात; सौजन्य : प्यारेलाल।

२७९. कांग्रेस संसदीय बोर्डका घोषणा-पत्र[1]

बनारस
२९ जुलाई, १९३४

अखिल भारतीय कांग्रेस समितिने १९ मईको पटनाकी बैठकमें जो संसदीय बोर्ड नियुक्त किया था, वह विधानसभाके मतदाताओंसे यह अपील करता है कि वे आगामी चुनावोंमें अपना मत कांग्रेसी उम्मीदवारोंके पक्षमें दें।

कांग्रेसकी नीति घोषित कर दी गई है, और कार्यकारी समितिने १८ जूनको बम्बईमें निम्नलिखित प्रस्ताव[2] पास कर बोर्डको उसके लिए आदेश दे दिया है।

यद्यपि प्रस्तावके तथाकथित साम्प्रदायिक समझौतेसे सम्बन्धित अंशके पक्ष और विपक्षमें बहुत-कुछ लिखा गया है, फिर भी जहांतक कांग्रेसी उम्मीदवारोंका सवाल है, उनके लिए दिशा बिलकुल साफ है। इस बातपर सब सहमत हैं कि वह [समझौता] आन्तरिक रूपसे बुरा है। वह राष्ट्र-विरोधी है। परन्तु लगता है, मुसलमान आमतौर पर उस समझौतेको चाहते हैं। कांग्रेस उनके रुखपर ध्यान दिये बिना नहीं रह सकती। साथ ही कांग्रेस उसे स्वीकार भी नहीं कर सकती, क्योंकि हिन्दुओं और सिखोंको वह स्वीकार नहीं है। कांग्रेस सदा शान्ति और एकताके पक्षमें रही है और उसकी सभी गतिविधियां इस दृढ़ विश्वासपर आधारित रही हैं कि भारतके विभिन्न सम्प्रदाय एक-दूसरेके प्रति न्यायोचित और सम्मानपूर्ण व्यवहार करेंगे। अतः प्रस्तावमें स्पष्ट की गई नीतिके सिवा कोई भी अन्य नीति कांग्रेसके उद्देश्य और इतिहाससे संगत नहीं बैठती। कांग्रेसी उम्मीदवार और कांग्रेस, इसलिए, केवल एक ही काम कर सकते हैं कि एक सर्वसम्मत समाधानकी उपलब्धिको उत्तेजन दें और उसमें सहायक हों। यह कहना काफी है कि इस तरहका समाधान हम तीसरे पक्ष या शक्तिको अपनी सहायताके लिए आमन्त्रित करके कभी प्राप्त नहीं कर सकेंगे। फिर, जिन्हें यह विश्वास है कि श्वेत-पत्रके सुझावोंका विरोध सफल रहेगा, उन्हें समझौतेके बारे में चिन्तित होनेकी जरूरत ही नहीं है। उन्हें यह जान लेना चाहिए कि यदि श्वेत-पत्र खत्म होता है तो वह समझौता भी, जो श्वेत-पत्रके लिए गढ़ा गया था, अपने-आप खत्म हो जाता है। समझौता खराब है, तो श्वेत-पत्र उससे भी ज्यादा खराब है। संसदीय बोर्डको, इसलिए, मतदाताओंका ध्यान श्वेत-पत्रको अस्वीकार करने और एक संविधान सभा स्वीकार कराने और बुलानेपर केन्द्रित करना है, जो उसका एकमात्र विकल्प है।

१. साधन-सूत्रमें बताया गया है कि इसका मसौदा गांधीजी ने तैयार किया था। यह प्रातः बोर्डकी बैठकमें पास होनेके बाद समाचारपत्रोंको दिया गया था। देखिए अगला शीर्षक।

२. देखिए परिशिष्ट १।

श्वेत-पत्रका उद्देश्य किसी भी रूपमें पूर्ण स्वाधीनता या आंशिक स्वाधीनतातक देना नहीं है। उस दिशामें यह राष्ट्रकी प्रगतिको आसानीसे रोक सकता है। यह भारतमें प्रतिनिधि संस्थाओंके एक खर्चीले आडम्बरका सुझाव रखता है, जबकि वास्तविक नियन्त्रण सदा विदेशमें रहेगा। यह जिन रक्षोपायोंसे भरा है, वे भारतके हितोंकी रक्षाके लिए नहीं सोचे गये है। इसके विपरीत, यह आसानीसे सिद्ध किया जा सकता है कि वे उसकी आर्थिक प्रगतिको रोकने, जन-साधारणकी गरीबीको और बढ़ाने और भारतमें ब्रिटेनके शोषण और आधिपत्यको कायम रखनेके लिए हैं। यदि श्वेत-पत्रके सुझाव अमलमें लाये गये, तो सेना या वैदेशिक मामलोंपर राष्ट्रका कोई नियन्त्रण नहीं रह जायेगा, फौजी खर्चेका बोझ जैसा अबतक है वैसा ही बना रहेगा, और वस्तुतः वित्त तथा भारतकी वित्तीय और आर्थिक नीतिपर विदेशी नियन्त्रण कायम रहेगा। यदि कोई यह कहे कि ये सुझाव कम-से-कम प्रान्तोंको पूर्ण स्वायत्त शासन देना तो चाहते हैं, तो यह स्वायत्त शासन भी ऐसे प्रतिबन्धोंसे घिरा है जो उसे एक ढोंग और छलना बना देते हैं। इसीलिए यह कोई आश्चर्यकी बात नहीं है कि लगभग सभी दलोंने श्वेत-पत्रकी योजनाकी कमोबेश निन्दा की है।

फिर विकल्प क्या है? यद्यपि कांग्रेस पूरे राष्ट्रकी प्रतिनिधि होनेका दावा करती है, पर सरकारकी रायमें, वह एक बहुत शक्तिशाली दल होते हुए भी राजनैतिक दलोंमें से केवल एक है। कांग्रेसकी देशमें क्या स्थिति है, यह समय ही बतायेगा। आगामी चुनावोंमें मतदाता भी थोड़ा-बहुत यह बता सकते हैं। पर यह चीज साफ है कि जिसे सरकार आखिर रद कर ही देगी, वैसा कोई संविधान कांग्रेसको बनाना नहीं चाहिए। इसीलिए कार्यकारी समितिने, जैसाकि ऊपर कहा गया है, संविधान सभाका एक अचूक विकल्प सुझाया है, जो बालिग मताधिकार या यथासम्भव उसीसे मिलते-जुलते किसी आधारपर चुनी जायेगी। हम यह जानते हैं कि इस तरहकी सभा, जबतक कि वह एक सफल क्रान्तिके बाद आयोजित न की गई हो, केवल शासक शक्तियों और जनताकी सहमतिसे ही आयोजित की जा सकती है। इसीके बारेमें हम सोच रहे हैं। यदि मतदाता आगामी चुनावोंमें अपने प्रतिनिधियोंका चुनाव इस स्पष्ट आदेशके साथ करते हैं कि श्वेत-पत्रका एकमात्र विकल्प संविधान सभा ही है, तो उसकी स्वीकृतिके बारेमें हमारे मनमें कोई निराशा नहीं है। यह सही है कि वर्तमान मताधिकार संकुचित है और इसलिए सही मानोंमें जन-साधारणका प्रतिनिधित्व नहीं करता। इसके अतिरिक्त, विधानसभाका गठन ऐसा है कि लोगों द्वारा निर्वाचित सदस्य उसमें कोई कारगर भूमिका अदा नहीं कर सकते। फिर भी निर्वाचकोंका निर्णय यदि असंदिग्ध हो तो उसकी अवज्ञा नहीं की जा सकती।

यदि मतदाता श्वेत-पत्रको रद कर देते हैं और संविधान सभापर जोर देते हैं, तो ब्रिटिश नौकरशाही फिर यह नहीं कहेगी कि लोग ब्रिटिश सरकारके तरीकों और कार्योंसे और वह उनके लिए जो भी योजना बनाती है, उससे सन्तुष्ट हैं। इस भ्रमको दूर कर देनेसे कोई छोटा लाभ नहीं होगा। कांग्रेसी उम्मीदवारको दिया गया प्रत्येक वोट, जो श्वेत-पत्रकी जगह संविधान सभाका वोट होगा, वातावरणको साफ

करनेमे सहायक होगा। हमे आशा है कि सभी सम्प्रदाय इस सीधे-सादे प्रश्नपर एक होगे।

कांग्रेसी प्रतिनिधि केवल श्वेत-पत्रको रद कराने और संविधान सभाको स्वीकार करानेके लिए ही कोशिश नही करेगे। पिछले कुछ सालोमें जो प्रतिक्रियावादी कानून पास हुए हैं और जो दुर्भाग्यसे प्राय: निर्वाचित सदस्योंकी रायसे पास हुए हैं, वे उनपर विचार किये बिना नही रह सकते। आजादीके अहिंसात्मक संघर्षका मुकाबला जिस तरह अत्यधिक कठोर अध्यादेशोसे किया गया है और हजारो कांग्रेसजनोंने, जिनमें महिलाओंकी भी बड़ी संख्या रही हैं, जेल जाकर, अनेक कष्ट झेलकर, लाठियाँ खाकर, भारी जुर्मानो और सम्पत्तिकी जब्तीका शिकार होकर जो महान बलिदान किये हैं, वे उनपर भी विचार किये बिना नहीं रह सकते। निर्वाचित कांग्रेसी उम्मीदवारोका यह कर्त्तव्य होगा कि वे, जहाँतक सम्भव हो, उनकी वापसीके लिए और दमनकारी कानूनो और अध्यादेशोंको, जो अब विधान-मंडलके अधिनियम कहलाते है, रद करानेके लिए दबाव डाले। सीमाप्रान्तमें कांग्रेसी संगठनोंके प्रति जो बेहद उग्र तरीके अपनाये गये है, उनपर उन्हे खास ध्यान देना होगा। उनका यह भी कर्त्तव्य होगा कि आतंकवादका मुकाबला करनेके लिए सरकारने विधानसभामें जो तरीके अपनाये है, वे उनकी निष्पक्ष जांचकी मांग करे और उनके बारेमे जो लोकमत है उसे अमलमे लानेके लिए कदम उठाये।

कांग्रेस संसदीय दल किसी भी ऐसी छोटी या बड़ी राष्ट्रीय सेवा करनेमे जो विधान-मण्डलो द्वारा सम्भव है, पीछे नही रहेगा। हम यह भली-भाँति जानते है कि राष्ट्रको पूर्ण स्वाधीनताके अपने लक्ष्यकी प्राप्तिके लिए जो प्रयत्न करने होगे, उनके लिए प्रान्तीय और केन्द्रीय विधान-मंडलोके अधिकार बहुत ही थोड़े है। कांग्रेसका रचनात्मक कार्यक्रम, जिसे सफलताके साथ पूरा करके ही हम अपनी मांगको अनिवार्य बना सकते है, विधान-मंडलोंके बाहर ही सबसे ज्यादा कारगर ढंगसे चलाया जा सकता है। पर कुछ मामले ऐसे है जिनसे केवल विधान-मंडलो द्वारा ही निबटा जा सकता है। कांग्रेस दल उनपर ध्यान देगा।

जन-साधारणके शोषणको समाप्त करनेके लिए, राजनैतिक स्वतन्त्रतामें लाखो भूखे लोगोंकी सच्ची आर्थिक स्वतन्त्रता भी शामिल होनी चाहिए। दलकी आर्थिक नीति, इसलिए, अखिल भारतीय कांग्रेस समितिके कराची-प्रस्तावमें उल्लिखित मूल अधिकारो और आर्थिक कार्यक्रमके अनुरूप होगी।

इसलिए, बोर्ड मतदाताओंसे यह अपील करता है कि वे असंदिग्ध रूपसे यह दिखा दें कि वे कांग्रेसके तरीकों और उद्देश्यके पक्षमें है और नौकरशाहीके मौजूदा शासन और तरीकोंकी भर्त्सना करते है।

[अंग्रेजीसे]
लीडर, १-८-१९३४

२८०. भाषण : कांग्रेस संसदीय बोर्डके घोषणा-पत्रके सम्बन्धमें

२९ जुलाई, १९३४

मालूम हुआ है कि कार्यकारी समिति और संसदीय बोर्डकी संयुक्त बैठक[1] में, संसदीय बोर्डके घोषणा-पत्र पर बहसके दौरान, महात्मा गांधीने घोषणा-पत्रके समर्थनमें एक बहुत ही प्रभावशाली और मार्मिक भाषण दिया। कांग्रेस संसदीय बोर्डके बारेमें वे एक गलतफहमी दूर कर देना चाहते थे। वे इस निष्कर्षपर पहुँचे थे कि संसदीय मनोवृत्तिने कांग्रेसमें स्थायी जगह बना ली है। यह अब केवल पुरानी स्वराज्य पार्टीकी 'अड़ंगा नीति' नहीं रही है। संसदीय बोर्डका विचार था कि विधानसभाओंमें जानेके लिए चुनाव लड़े जायें और श्वेत-पत्रको रद करने, एक संविधान सभा बुलाने, दमनकारी कानूनोंको खत्म करने और, जहाँतक अवसर मिले वहाँतक, रचनात्मक कार्यक्रम और कांग्रेसकी अन्य राष्ट्रीय गतिविधियोंको अमलमें लानेके लिए विधानसभाओंमें रहा जाये।

पुरानी स्वराज्य पार्टीके कार्यका जिक्र करते हुए, महात्मा गांधीने यह कहा बताते हैं कि उसने विधानसभाओंमें अच्छा काम किया है और वे उसपर सन्तोष का अनुभव करते हैं। स्वर्गीय पण्डित मोतीलाल नेहरूका एक भी भाषण ऐसा नहीं है जिसपर राष्ट्रको लज्जित होना पड़े। उनका अच्छा नैतिक प्रभाव पड़ा है।

इस प्रश्नका उत्तर देते हुए कि क्या कांग्रेसियोंके वहाँ अल्पमतमें चुने जानेकी सम्भावना नहीं है, महात्मा गांधीने कहा कि बहुमतकी आशा रखते हुए भी वे यह माननेको तैयार हैं कि हम अल्पमतमें भी हो सकते हैं; पर सब-कुछ इसपर निर्भर करता है कि अल्पमतमें कौन लोग हैं।

श्री सत्यमूर्त्तिका जिक्र करते हुए, उन्होंने कहा कि यदि वे अकेले भी अल्पमतमें हों तो मुझे विश्वास है कि वे अच्छा काम करेंगे। सरकारकी तरह, कांग्रेस भी अनुभवसे सीख रही है। यदि कांग्रेसी विधानसभाओंमें होते, तो सविनय अवज्ञा और अन्य मामलोंके बारेमें कई चीजें जिस तरहकी हुई, वैसी नहीं होतीं। निस्सन्देह, उन्हें यह यकीन था कि यदि कांग्रेस कार्यकारी-समितिने कांग्रेसियोंसे विधानसभाओंसे बाहर आ जानेको कहा तो कांग्रेसजन वैसा ही करेंगे। परन्तु जबतक यह बहुत ही जरूरी न हो जाये और विधानसभाओंके कांग्रेसी स्वेच्छासे उस तरीकेपर सहमत न हों, तबतक मैं उन्हें बाहर बुलानेके पक्षमें नहीं हूँ। सविनय अवज्ञा फिरसे शुरू होनेपर भी, यह

१. यह बैठक बनारसमें हुई थी।

हो सकता है कि हम विधानसभाओंके कांग्रेसी सदस्योंसे बाहर आनेको न कहें, क्योंकि यदि एक करोड़ भारतीय भी सविनय अवज्ञा करते हैं तो कोई एक हजार कांग्रेसियोंको विधानसभाओंमें कार्य करनेके लिए आसानीसे छोड़ा जा सकता है। आजकल सरकार एकके बाद दूसरा दमनकारी कानून बना रही है, जैसेकि विधानसभा द्वारा हाल ही में पारित बंगाल अधिनियम; और दुनियाके आगे यह दावा कर रही है कि इस कार्यमें उसे विधानसभाके निर्वाचित सदस्योंका समर्थन प्राप्त है। कांग्रेस सरकारको इस बहानेसे वंचित कर सकेगी।

अन्तमें, महात्माजी ने कहा कि कांग्रेस संसदीय बोर्ड विधानसभाओंके समस्त कार्यके बारेमें एक घोषणा-पत्र जारी करेगा; पर नीतिसे सम्बन्धित मामलोंपर जो समय-समयपर निर्धारित की जानी है, कांग्रेसका नियन्त्रण रहेगा।

[अंग्रेजीसे]
लीडर, १-८-१९३४

२८१. भाषण : हरिजन सेवक संघके केन्द्रीय बोर्डकी बैठक, बनारसमें[1]

२९ जुलाई, १९३४

दो प्रश्न हैं जिनके सम्बन्धमें मुझे आप लोगोंसे कुछ कहना है। एक तो यह कि संघका संगठन किस प्रकारका किया जाये, और दूसरा है एक ऐसी शिक्षण-संस्था स्थापित करनेके सम्बन्धमें जिसमें नियतकालिक अथवा आजीवन सदस्य हरिजन-सेवाकी शिक्षा पा सकें। पहले प्रश्नको लेते हुए मैं जानता हूँ कि आप लोगोंकी आमतौर पर यह इच्छा है कि जनतंत्र अर्थात् वोट, चुनाव इत्यादिका रूप हमारे संघमें लाया जाये। पहले मैं कुछ दुविधामें पड़ गया था, पर यह नौ महीनेकी यात्रा करनेके बाद मैं इस नतीजेपर पहुँचा हूँ कि चुनाव या जनतंत्र जैसी किसी चीजके लिए हमारे इस संघमें कोई स्थान नहीं है। हमारी संस्था तो एक भिन्न ही प्रकारकी है। वह मामूली तरहकी कोई लोक-संस्था नहीं है। हम तो एक प्रकारके स्वयं-नियुक्त न्यासी हैं, पैसा महज न्यासीके रूपमें हम अपने पास रखते हैं, और केवल हरिजनोंके हितार्थ उसका उपयोग करते हैं, और इस ढंगसे कि वह सीधा हरिजनोंकी ही जेबमें जाये। हमारे संघका संगठन इस विचारको सामने रखकर हुआ है कि जिन भाइयोंको हमने सदियोंसे तुच्छ मान रखा है, उनके प्रति अब अपना कर्त्तव्य पालन करें। यह तो आप जानते ही हैं कि बम्बईमें मालवीयजी महाराजकी अध्यक्षतामें हिन्दू-प्रतिनिधियोंकी जो विशाल

1. "प्रवचन: कार्यकर्त्ताओंके समक्ष" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित, यह काशी विद्यापीठमें २८-२९ जुलाईकी बैठकके अन्तमें दिये गये "गांधीजी के भाषणका सार-संक्षेप" के रूपमें छपा था।

सभा हुई थी उसमें हरिजनोंके प्रति कर्त्तव्य-पालनकी प्रतिज्ञा की गई थी।[1] उस प्रतिज्ञाका पालन करनेके लिए ही हमारे इस संघका निर्माण हुआ है। हम मानते हैं कि हरिजन-कोषमें लोग प्रायश्चित्तकी भावनासे दान देते हैं। तब हमारा यही एक-मात्र कर्त्तव्य है कि इस कोषका उपयोग हम हरिजनोंके ही हितार्थ करें। जनतन्त्रात्मक संस्थाके चलानेमें पैसा भी खर्च होगा और काममें देरी भी होगी। हमारा उद्देश्य तो यह है कि हम कम-से-कम खर्च और कम-से-कम समयमें इस कोषको हरिजन-हितकारी कार्योंमें लगा दें। हम हरिजनों और अपने बीच हस्तक्षेप करनेवाला कोई मध्यस्थ नहीं चाहते। हम महज न्यासी हैं और न्यासकी सारी जिम्मेवारी हमारे ऊपर है। कुछ लोग कहते हैं कि प्रबन्ध-कार्यमें पैसा देनेवालोंकी भी आवाज होनी चाहिए। मेरी रायमें वे भूल करते हैं। मेरी दृष्टिमें तो एक पाई देनेवाला और दससे लेकर पचास हजार रुपयेतक देनेवाला, जैसे घनश्यामदास बिड़ला, दोनों ही एक समान दाता हैं। शायद घनश्यामदासके दस हजार रुपयोंसे भी उस एक पाईकी कीमत अधिक हो। उड़ीसामें मैंने खुद अपनी आँखों देखा है कि वहाँके गरीब आदमी किस प्रकार अपने फटे-पुराने चीथड़ोंकी गाँठमें बड़े जतनसे बँधे हुए पैसे-पाईको प्रेमसे हमारी झोलीमें डालते थे। हजारों रुपयोंकी अपेक्षा, चाहे वे कितनी ही राजी-खुशीसे लोगोंने दिये हों, मुझे तो गरीबकी गाँठकी वह कौड़ी ही पाकर अधिक आशा और प्रसन्नता हुई है। आत्मशुद्धिके इस यज्ञमें गरीबकी कौड़ीके बिना हजारोंकी थैलियाँ किसी अर्थ की नहीं। लेकिन आपके उस जनतन्त्रमें उन हजारों गरीबोंको तो कभी मत मिलेगा नहीं। हम उनके नामतक तो जानते नहीं। फिर भी हमारी उनके प्रति उतनी ही या उससे भी अधिक जवाबदेही है जितनी कि हजारोंकी थैलियाँ भेंट करनेवाले बड़े-बड़े दानियोंके प्रति। हमारी यह संस्था तो एक दातव्य संस्था है और इसका अस्तित्व प्रामाणिक और योग्य प्रबन्धके ही ऊपर निर्भर करता है। यदि हम अपने प्रबन्ध-कार्यमें अधिक-से-अधिक कुशलता चाहते हैं, तो हमें अच्छे-से-अच्छे और बहुत ईमान-दार कार्यकर्त्ता चुनने होंगे।

बस, मुझे जो कहना था, कह चुका, अब आपको जो ठीक जँचे वह करें। इस आन्दोलनको मैं विशुद्ध धार्मिक या नैतिक या मानवतावादी आन्दोलन मानता हूँ। मेरे लिए तो यह खालिस सेवा और प्रायश्चित्तका ही आन्दोलन है। मैं नहीं जानता कि हरिजन-कोषमें पैसा देनेवाले लाखों लोग मेरे इस कामको प्रायश्चित्तका काम माननेकी बातसे कहाँतक सहमत होंगे। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मुझे यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि अस्पृश्यताको आश्रय देकर वर्षोंसे हम जो पाप करते चले आ रहे हैं, उसका प्रायश्चित्त करनेके विचारको छोड़कर मेरे मनमें कोई दूसरी बात नहीं है। इसलिए मेरे विचारसे इस आन्दोलनमें कोई राजनीतिक हेतु नहीं है। यह बात नहीं कि इसके राजनीतिक परिणाम नहीं होंगे, किन्तु उनके विषयमें हम सोचें ही क्यों? हमारे कार्यका क्या फल होगा, इसपर विचार करनेकी आवश्यकता

१. देखिए खण्ड ५१, पृ० १४६।

नही। अगर हमने इस आन्दोलनका विशाल उद्देश्य सामने रखा, तो निश्चय ही इसका यह फल होगा कि मुसलमानो, ईसाइयो तथा अन्य सम्प्रदायोके साथ हमारा प्रेम-सम्बन्ध अत्यन्त शुद्ध हो जायेगा। मै चाहता हूँ कि इस विचारको तो दिलसे निकाल ही देना चाहिए कि हमारा उद्देश्य छ' करोड गुण्डोकी एक फौज तैयार करनेका है। इस प्रकार हिन्दू-धर्मकी रक्षा हरगिज नही होगी। मेरा विश्वास है कि यदि अस्पृश्यताके अभिशापसे हिन्दू-धर्म मुक्त हो गया तो सारा संसार भी उसका कुछ नही बिगाड़ सकता। यह आन्दोलन कोई छोटा-मोटा संकुचित दायरेका आन्दोलन नही है। मुझे उम्मीद है कि हमारे इस युगका यह सबसे विशाल और व्यापक आन्दोलन है।

दूसरा प्रश्न इससे सरल है। वास्तवमें यह उसीके बादका प्रश्न है जो-कुछ मैंने कहा है। आजीवन सेवा-कार्यमें मेरा विश्वास है। मैं तो लगनवाले ऐसे सेवकोकी टोहमें हूँ जिनकी यही एकमात्र अभिलाषा हो कि हरिजन-सेवामें ही हम अपना तन, मन और अपनी आत्मा लगा देंगे। अगर ऐसे कार्यकर्त्ता हमे दस हजार मिल जायें — मैं तो यहाँतक कहूँगा कि एक ही हजार मिल जायें — तो हमारे इस सेवा-कार्यके आश्चर्यकारी परिणाम होंगे। ऐसे कार्यकर्त्ताओंके लिए शिक्षण-सस्था खोली जाये, यह विचार मुझे अच्छा लगता है। दक्षिण आफ्रिकामें डरबनके पास पाइन-टाउनमे एक 'ट्रेपिस्ट मठ'[१] है। तीस सालसे ऊपर हुआ, जब मैंने वह आश्रम देखा था। मैंने वहाँ बडी कठिन साधना देखी। वहाँ मैंने कोई गोपनीय या गोल-मोल बात नही देखी। एक लम्बा-सा कमरा था, उसीमें वे सब आश्रमवासी रहते थे। सबेरे चार बजे वे लोग उठते थे। बिलकुल निरामिष भोजन करते और मौनव्रतको बड़ी दृढतासे पालते थे। सिर्फ दो-तीन व्यक्ति उनमे बोल सकते थे, जिन्हे हाट-बाजारमें कामसे जाना होता था, या आश्रममें आने-जानेवालोसे बात करनी पडती थी शेष सबको चुपचाप काम करना पडता था। यह आश्रम जूलू लोगोको शिक्षा व दीक्षा देता था। जूलू लोगोके बीच वे काम करते और अपने जीवनके सुन्दरतम साधनोंके फल उन्हे देते थे। मठवासी सभी आजीवन सेवक थे। सभी विद्वान संन्यासी थे। ज्ञानके साथ-साथ उद्योगकी भी उन्होंने साधना की थी। उनमें बढई थे, लुहार थे, पल्लेदार थे और मोची थे। उन्होंने सब प्रकारके प्रयोग किये थे। उनका वह आश्रम सुन्दरता का मानो नमूना था। कितनी सफाई थी। धूलका तो कही नाम भी नही था। आश्रमका बाग भी रमणीय था। चारो ओर सारे वातावरणमें एक मधुर शान्ति छायी हुई थी। आश्रममें बिलकुल अनगढ़ जूलू युवक भरती होते थे, पर जब निकलते थे तो पक्के कारीगर बनकर। मेरा विचार इसी ढंगकी शिक्षण-संस्था स्थापित करनेका है। चीज बनानी ही है तो बहुत अच्छी क्यो न बनाई जाये। पर आज हममें हमारा वह गौरव कहाँ रहा है? पहले इस प्रकारकी कठिन साधनाका हमारे देशमें अनुशासन था। पर अपने आश्रम-जीवनमें हमने तो तनिक-भी उन्नति नही की और वे लोग हमसे बहुत आगे बढ गये हैं। उन्होने नये-नये शोध किये हैं और प्रगति-पथपर

१. देखिये खण्ड १ (द्वि० सं०), पृ० २३१-३६।

बहुत आगे निकल गये हैं। अगर हम वैसी कोई चीज बना सकें, तब मुझे सन्तोष हो। ऐसे अगर पाँच भी आदमी मिल जायें जो अपने माता-पिता, पुत्र-कलत्र आदि सबको भूल जानेको तैयार हों, और जो हरिजन-सेवामें ही अपना शेष जीवन खपा दें तो मेरा काम बन जाये। ऐसे त्यागी और अनुरागी जो संस्था बनायेंगे, वह एक सार की चीज होगी। अगर हमारा इतना ऊँचा लक्ष्य नही हो सकता, तो हमें अभी एकाध उद्योग-गृह, हरिजन-छात्रालय या कोई ऐसी ही संस्था बनानी चाहिए। कराचीमें सेठ शिवरतन मोहताकी, उनके भाईकी पुण्यार्थ निधिसे, एक ऐसी उद्योगशाला चल रही है। आगरेके सुप्रसिद्ध 'दयालबाग' के दो शिक्षक वहाँ काम सिखाते है। वहाँ एक बढ़िया छात्रावास भी है, जिसमें पाश्चात्य ढंगकी साज-सज्जा है। वहाँ छात्रो को बड़ी अच्छी तरह रखते है। एक जूते बनानेका और एक सिलाई सिखानेका — यह दो विभाग फिलहाल उस उद्योगालामें है। वह कोई शिक्षण-संस्था नहीं, किन्तु एक उद्योग-गृह है। वहाँके हरिजनोका यह विश्वास है कि कोई-न-कोई दस्तकारी सीखकर ही वे उद्योगशालासे निकलेंगे, ताकि उन्हे पेटके लिए दर-दर न भटकना पड़े। ऐसी औद्योगिक संस्थाएँ हम चाहें तो और भी जहाँ-तहाँ खोल सकते है।

हम हरिजन-सेवकोंने खुद अपने प्रति न्याय नही किया है। बहुत-से लोग तो हममें ऐसे हैं जिन्होंने अपना सारा समय हरिजन-कार्यमें नही दिया। इस कार्यको तो वे यो ही शौकिया कर रहे हैं। मैंने अकसर उनसे पूछा कि 'क्या आप 'हरिजन' पढ़ते है? तो उन्होंने इसका 'नही' में जवाब दिया। तीन हरिजन पत्र चल रहे है — अंग्रेजी 'हरिजन', गुजराती 'हरिजन-बंधु' और हिन्दी 'हरिजन-सेवक'। अंग्रेजी और गुजरातीके पत्र तो स्वावलम्बी हो गये हैं, पर हिन्दीका अब भी नही हुआ है। इन पत्रोंको जैसा चाहिए था वैसा लोगोंने अपनाया नही; हालाँकि इनका सम्पादन बड़े परिश्रमसे हो रहा है। ग्राहक बनना-बनाना तो दूर रहा, हमारे कार्यकर्त्ता सूचनाएँ या घटनाओंका विवरणतक सम्पादकोंके पास ठीक-ठीक नही भेजते। आये दिन जो समस्याएँ उपस्थित होती रहती हैं, उनतक पर वे विचार-विनिमय नही करते। समस्याएँ तो कार्यकर्त्ताओंके सामने आती हैं, विचारकोंके नहीं। अगर हमारे हरिजन-सेवक सचमुच कार्यरत होते, तो वे इतनी अधिक सामग्री सम्पादकोको भेजते रहते कि उसमें से संकलन करना उन्हे कठिन हो जाता। आज तो सामग्रीका ही अकाल पड़ा हुआ है। 'हरिजन' कार्यकर्त्ताओंका पत्र हैं, अतः इसमें उनके पथ-प्रदर्शनकी सामग्री तथा उनके विचार-विनिमयकी बातें रहनी चाहिए। मैं इन पत्रोमें निबन्ध इत्यादि नही चाहता हूँ। जब हमारे कार्यकर्त्ता मुझसे ऐसे प्रश्न पूछ बैठते है, जिनके उत्तर हरिजन पत्रोंमें निकल चुके हैं तो मुझे दुःख होता है। अगर वे इन पत्रोको ध्यानसे पढ़ते होते, तो कभी ऐसे सवाल न पूछते। पर बहुत-से तो इन अखबारोको पढ़ते ही नही। अगर आप लोग हरिजन समाचारोंका ब्योरा ठीक तरहसे न पढ़ेंगे तो इतने बड़े आन्दोलनकी प्रगतिके साथ आप कैसे संगति रख सकेंगे? आपको यह जानना जरूरी है कि दूसरे हरिजन-संघ क्या-क्या काम कर रहे हैं। हमारे पास जगह-जगह घूमनेवाले ऐसे संवाददाता तो है नही जो तमाम संस्थाओके समाचार भेज दिया

करें। और यह साधन खर्चीला भी है। लेकिन हमारे पास 'हरिजन' है, इसमें खबरें रहती तो हैं, पर और भी यथार्थ खबरें और विविध बातें दी जा सकती हैं।

कृपाकर यह विचार मनमें लेकर न जाइएगा कि जो-कुछ थोड़ा-सा काम हुआ है, उसकी मैं कद्र नहीं कर सका। कुछ अच्छे काम हुए हैं सही, पर यहाँ उनका बखान करनेकी जरूरत नहीं। धर्मका फल तो स्वयं धर्म ही है। पर मैं ठहरा एक इन्स्पेक्टर, इससे मैं तो आपको आपकी त्रुटियाँ ही बताऊँगा। आपने जो अच्छे कार्य किये हैं, उनका बखान करके मैं आपको रिझानेकी चेष्टा नहीं करूँगा।

साबरमतीके हरिजन-आश्रमके बारेमें अब दो शब्द। साबरमती आश्रम एक बहुत बड़ी चीज है। उसका पूरा-पूरा उपयोग अभी नहीं हो रहा है। पर इसमें किसीका दोष नहीं। बेचारा परीक्षितलाल वहाँकी देखरेख करता है, पर इतने बड़े आश्रमका चलाना उसके सामर्थ्यके बाहर है। परीक्षितलालको समस्त गुजरातका हरिजन-कार्य भी तो देखना पड़ता है। इसलिए इतना बड़ा काम एक आदमीके बूतेका नहीं। इस संस्थाके चलानेका भार तो खास तौरपर नियुक्त न्यासी ही ले सकेंगे। रोज अनेकों उलझनमें डालनेवाली समस्याएँ उठ खड़ी होती हैं। अब आप लोग समझ सकते हैं कि क्यों हम 'ट्रस्टी'-कोटिके कार्यकर्त्ताओंकी आवश्यकता महसूस कर रहे हैं। हम तभी साबरमतीके बड़े हरिजन-आश्रमको पूर्णतया उपयोगी बना सकेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २४-८-१९३४

२८२. भाषण : राष्ट्रीय शिक्षाके सम्बन्धमें[1]

२९ जुलाई, १९३४

गांधीजी ने राष्ट्रीय शिक्षा आज जिस तरह चल रही है, इसपर विस्तारसे चर्चा की और कहा कि अभीतक विद्यापीठ केवल शहरों ही में काम करता रहा है। अब वह समय आ गया है जब राष्ट्रीय शिक्षाका प्रसार गाँवोंमें भी किया जाना चाहिए। गांधीजी ने इस बातकी जरूरत की ओर लोगोंका ध्यान दिलाया।

विद्यापीठने राष्ट्रीय आन्दोलनमें जो भूमिका अदा की है, उसे मैं अच्छी तरह जानता हूँ। मैं उक्त विषयपर कोई भी सलाह देनेको हमेशा तैयार हूँ।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ३१-७-१९३४

१. साधन-सूत्रमें बताया गया था कि काशी विद्यापीठके प्रोफेसर और अनेकों राष्ट्रीय शिक्षा-शास्त्री वहाँ उपस्थित थे।

२८३. पत्र : आनन्द तो० हिंगोरानीको

३० जुलाई, १९३४

प्रिय आनन्द,

तुम्हारा पत्र मिला। इस पत्रमें जो कमी रह गई थी उसे तुम्हारे और विद्या, दोनोंके बारेमें खबर देकर जयरामदासने पूरा कर दिया है।

मुझे पता चला है कि तुम्हें जुलाईसे अक्तूबरतक ५० रु० प्रति माह चाहिए और उसके बाद १०० रु० महीनेकी जरूरत पड़ेगी। मैं ऐसा प्रबन्ध कर दूंगा कि यह रकम तुम्हें दे दी जाये। मैं चाहता हूँ कि तुम अपनी जरूरतें घटाकर कम-से-कम आश्रमके स्तरपर तो ले ही आओ, लेकिन इस तरह नहीं कि अपना या विद्या या महादेवका स्वास्थ्य बिगाड़ लो।

तुम्हें एक योग्य डॉक्टरसे अपनी परीक्षा करवानी चाहिए और अपना शरीर दुरुस्त करना चाहिए।

बाकी सब छोड़कर अपने कामपर ध्यान लगाओ। यदि तुम ऐसा करोगे तो तुम्हें उससे बड़ा आनन्द मिलेगा और वह स्वतः तुम्हें अपना शारीरिक स्वास्थ्य पुनः प्राप्त करनेमें बड़ी मदद करेगा।

तुम सबको प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

२८४. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

३० जुलाई, १९३४

अच्छा किया तूने पत्र लिखा। आज ही मिला। कार्य-समितिकी बैठक समाप्त हुई ही थी कि वह मेरे हाथमें आया।

तेरे सुझावमें दोष यह है कि इस समय हम सविनय अवज्ञा नहीं कर रहे हैं। अब्दुल गफ्फार खाँको नियुक्त करनेमें शिष्टाचारका उल्लंघन होगा। इस समयका कार्यक्रम पिछले कार्यक्रमसे भिन्न है, यह बात कोई समझ नहीं सका। हमारे कार्यमें, हमारी भाषामें, बेहिसाब उद्दण्डता आ गई है। यह हिंसा की सूचक है। शत्रुके प्रति भी मित्रता, शिष्टता होनी चाहिए; सो तो है ही नहीं। उल्टे, लगता है, झूठ और औद्धत्य कार्यकर्त्ताओंमें कम होनेके बदले न जाने क्यों बढ़ गये हैं। इस बातको

अधिक विस्तारसे समझानेकी जरूरत है, किन्तु अभी समय नही है। जब मिलेंगे, तब यदि समय हुआ और तुझे जिज्ञासा हो तो पूछना।

नियुक्त किये गये खजांचियोंमें से तू भी तो एक है।[1] शरीरसे अधिक काम मत लेना। यह उचित नही होगा।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृ० १४९

२८५. वक्तव्य : उपवासके बारेमें

बनारस
३० जुलाई, १९३४

यह आशा की जानी चाहिए कि ७ से १४ अगस्ततक और उसके बाद मेरे विश्राम-कालमें कोई भी वर्धा नही आयेगा। इन दिनो मुझे पूर्ण आराम और शान्ति की जरूरत होगी। अपनी सहानुभूति दिखलाने और मुझे ताकतवर बनाये रखनेका सबसे अच्छा तरीका यही होगा कि हर दोस्त—स्त्री या पुरुष, जैसे भी हो सके हरिजनोको मित्र बनानेका भरसक प्रयत्न करे और विरोधियोको सही व शिष्ट व्यवहार द्वारा अपने पक्षमें कर लें। जिन्होने साहसपूर्वक अपनी गलती स्वीकार कर ली है, वे उपवासमें शरीक होकर नही, बल्कि यह दृढ निश्चय करके योगदान करेंगे कि वे वैसी गलती फिर नही करेंगे जिसके कारण यह उपवास करनेकी जरूरत हुई है।

[अंग्रेजीसे]
लीडर, १-८-१९३४

२८६. बातचीत : वल्लभभाई पटेलके साथ[2]

[३० जुलाई, १९३४ या उसके पश्चात्][3]

गांधीजी : मेरा यह विचार है कि विद्यापीठके पुस्तकालयको अब नगरपालिकाके ही अधीन रहने देना चाहिए और सम्भव हो तो इसके लिए एक अलग ट्रस्ट[4], बना

१. साधन-सूत्रके अनुसार बम्बईमें अक्तूबरमें होनेवाले कांग्रेसके अधिवेशनके लिए स्वागत समितिके चार कोषाध्यक्ष नियुक्त किये गये थे।

२ और ३. साधन-सूत्रमें नरहरि परीखने स्पष्ट किया है कि १४ जुलाई, १९३४को वल्लभभाई रिहा हुए थे और यह बातचीत उसके बाद एक मौन-दिवसपर लिखित रूपमें हुई थी। गांधीजी से वल्लभभाई पटेलकी मुलाकात बनारसमें १ अगस्त, १९३४को हुई थी। देखिए पृ० २८०।

४. नरहरि परीखने स्पष्ट किया है कि जुलाई, १९३३ में जब साबरमती आश्रम भंग किया गया तो आश्रमका पुस्तकालय अहमदाबाद नगरपालिकाको सौंप दिया गया था। बादमें द० बा० कालेलकरके साथ मशविरा करके गुजरात विद्यापीठके पुस्तकालयके साथ भी यही किया गया। वल्लभभाई पटेल और विद्यापीठके

देना चाहिए। मैं समझता हूँ कि इस प्रकार पुस्तकालयका उचित उपयोग ही होगा। लेकिन अगर दूसरे ट्रस्टियोको यह विचार न जँचे तो इसे वापस ले लेनेके लिए कहनेमें हमें संकोच बिलकुल नही करना चाहिए। यह मान-सम्मानका प्रश्न नही है, इसलिए जो उचित है वही करना चाहिए। मुझे विश्वास है, काकासाहेब इसका बुरा नही मानेंगे, वे महान व्यक्ति हैं। जब आगे मैं इस विषयपर विचार करता हूँ तो निश्चय ही ऐसा मानता हूँ कि अगर काकासाहेबने इस बातको नजरअन्दाज भी कर दिया था तो भी मुझे यह विचार करना चाहिए था कि क्या ऐसा करनेका उन्हें अधिकार प्राप्त था। समयाभावके कारण मैंने बहुत-से काम जल्दबाजीमें किये है। यह काम भी उन्ही कामोमें से एक है जिनपर मैं पूरी तरह ध्यान नही दे पाया हूँ।

वल्लभभाई पटेल: काकासाहेबके अनुसार आपने ही यह सुझाव दिया था कि विद्यापीठ-पुस्तकालय नगरपालिकाको सौप दिया जाये।

गाधीजी: यह सुझाव मैंने दिया, यह तो मुझे याद नही है। लेकिन अगर वे कहते है तो मै यह माननेके लिए तैयार हूँ कि मैंने ऐसा किया होगा . . .।[1]

यह सच है कि ऐसा करनेका अधिकार उन्हें भी नहीं था। मै तो बस इतना ही कहूँगा कि अगर किसी व्यक्तिने कोई ऐसी वसीयत भी की हो जिसका वह अधिकारी नही था तो ऐसी वसीयत भी चाहे जब वापस ली जा सकती है। इसलिए अगर इन पुस्तकोंको नगरपालिकासे वापस ले लेना ठीक माना जा रहा है तो इन्हे वापस ले ही लेना चाहिए। जो भी हो, मै समझता हूँ कि अगर काकासाहेबने उस वक्त सभीसे यह बात कही होती तो सम्भवतः हर व्यक्ति उनसे सहमत हो गया होता . . . .।[2]

आप कहते है कि ट्रस्टियोको अधिकार नही था। बहुत ठीक, अगर ऐसा है तो अवश्य ही आप पुस्तकोको वापस ले ले।[3]

[अंग्रेजीसे]

सरदार वल्लभभाई पटेल, भाग–२, पृ० १६३

कुछ अन्य ट्रस्टियोंके साथ मशविरा नहीं किया गया जा सका, क्योंकि वे उस समय जेलमें थे। वल्लभभाई पटेलको जेलमें जब इसका पता चला तो उन्हें यह अच्छा नहीं लगा। रिहाईके बाद उन्होंने इस विषयमें गांधीजी से मार्ग-दर्शन चाहा था। देखिए "पत्र: वल्लभभाई पटेलको", २१-८-१९३४ और "पत्र: जी० वी० मावलंकरको", १५-९-१९३४ भी।

१. नरहरि परीखका अनुमान है: "सरदारने तब अवश्य ही ट्रस्टियोंके अधिकारोंकी बात की होगी।"

२. नरहरि परीखका अनुमान है: "वल्लभभाईने तब अवश्य ही यह कहा होगा कि सरकारके अधीन चल रही किसी संस्थासे ऐसी प्रार्थना करनेका ट्रस्टियोंको कोई अधिकार नहीं है।"

३. बादमें क० मा० मुन्शी और भुलाभाई देसाईसे कानूनी मशविरा लेनेके बाद वल्लभभाईने नगर-पालिकासे दरख्वास्त की कि पुस्तकालयको वह विद्यापीठको सौंप दे। नगरपालिकाने अपनी ओरसे एक दूसरे मशहूर वकील बहादुरजीसे मशविरा करके पुस्तकालय विद्यापीठको सौंप दिया।

२८७. भाषण : सार्वजनिक सभा, बनारसमें

३१ जुलाई, १९३४

ईश्वरकी कृपासे मुझे काशीजी में दूसरी बार आनेका अवसर मिला है — इससे मुझे बडी खुशी हुई है; और यह सोचकर खुशी और बढ जाती है कि इस पवित्र पुरीमें ही मेरा हरिजन-दौरा समाप्त होगा। यदि कोई भाई किसी प्रकारका मतभेद रखते हों तो वे कृपया इस मंचपर आकर कुछ कहें। मालूम नहीं, वर्णाश्रम स्वराज्य संघके पण्डितजी[1] किस कारणवश नही आ सके। हरिजन-उद्धारका कार्य धार्मिक आन्दोलन है। इसमें दुराग्रहको स्थान नही है। मै कितना ही यत्न क्यो न करूँ, मुझसे भी गलतियाँ हो सकती है और हुई भी है। मैंने कभी गलती नही की है, यह दावा न तो मैंने कभी किया है और न करूँगा। जो बात मै आज मान रहा हूँ वह नई नही है। यह बात बचपनसे ही मेरे दिलमें स्वयंसिद्ध रही है। जब मैं स्वेच्छाचारी बालक था, तभी मैं अस्पृश्यताको नही मानता था। मुझे रामनामका मन्त्र सिखाया गया, जिसके प्रतापसे मै सुरक्षित रह सकता था। इस स्वयसिद्ध बातके माननेमें अगर मुझसे भूल हुई होगी तो इस तीर्थक्षेत्रमें उसे स्वीकार करनेमें मुझे तनिक भी संकोच नही होगा। जिस हालतमें अस्पृश्यता इस समय मौजूद है, उसके लिए शास्त्रमें स्थान नही है। अस्पृश्यता हिन्दू-धर्मपर कलंक है। कितने ही शास्त्री मेरे निमन्त्रणपर और कितने ही स्वेच्छासे यहाँ आये है और उन्होंने अस्पृश्यताके आधुनिक स्वरूपको शास्त्रके उद्धरणो द्वारा सही बतानेकी चेष्टा की है, परन्तु शास्त्रियोंकी दलीलोको समझनेकी चेष्टा करते हुए भी मुझपर उनका असर नही हुआ।

यह कहते हुए मुझे बडा दु:ख होता है कि सरकारी जनगणनाके अनुसार अस्पृश्य कहे जानेवाले भाइयों और बहनोंकी संख्या ७ करोड़के लगभग बताई जाती है। जनगणना करनेवाले लोग इस बातकी जाँच करनेका प्रयत्न ही नही करते कि मनुस्मृतिके अनुसार वे सचमुच अस्पृश्य है या नही। जनगणना करनेवाले निरीक्षक लोग जो-कुछ लिखा देते है, उसे ही लिख लिया जाता है। हर दस वर्ष बाद जनगणना होती है और जनसंख्या हर दस वर्षमें घटती-बढती रहती है। जलाशयपर एक

१. तात्पर्य देवनायकाचार्यसे है, जो देरसे पहुँचे थे। वालजी गो० देसाईने अपनी "साप्ताहिक चिट्ठी" (हरिजन, १७-८-१९३४) में बताया है कि "वर्णाश्रम स्वराज्य संघ तथा भारत धर्म महामण्डलके एक प्रतिनिधिको गांधीजी के भाषणके पूर्व अपने विचार जनताके सामने रखनेके लिए" आमन्त्रित किया गया था।

कुत्ता भले ही जल पी जाये, पर प्यासा हरिजन बालक वहाँ जल नहीं पी सकता। यदि वह वहाँ चला भी जाये तो मार खानेसे बच नहीं सकता। इस समय अस्पृश्यता मनुष्यको कुत्तेसे भी हीन मानती है।

एक हरिजनको निमोनिया हो गया। फीस देकर एक सनातनी डॉक्टर बुलाये गये। फीस तो आप ले चुके, पर रोगीको कैसे छूते? एक मुसलमानको बुलाकर उसे घड़ी देकर कहा कि एक मिनटमें इसकी नाड़ी कितनी बार चलती है, गिनकर मुझे बताओ। डॉक्टर साहबको नाड़ीकी गति बताई गई और आप नुस्खा लिखकर चले गये। फिर एक दूसरे डॉक्टर बुलाये गये। उन्होंने अच्छी तरह फेफड़े और हृदय की परीक्षा करके दवा दी, तब रोगीको आराम पहुँचा। इस प्रकारकी जो अस्पृश्यता मानी जा रही है, उसके लिए शास्त्रमें कोई प्रमाण है, मेरे खयालसे इसे कोई भी शास्त्री माननेको तैयार नहीं होगा। ऐसी अस्पृश्यताको न मेरी बुद्धि शास्त्रसम्मत मान सकती है, न मेरा हृदय।

बस, मैं अब आगे कुछ नहीं कहूँगा। पण्डितजी[1] को भाषण देनेका मौका देना इस समय मेरा सर्वप्रथम कर्त्तव्य है। सिर्फ एक बात कहूँगा। काशीके पण्डितोंकी ओरसे मुझे जो अभिनंदन-पत्र दिया गया है, उसके लिए मैं बहुत आभारी हूँ। उसे मैं आप लोगोंका आशीर्वाद मानता हूँ। मुझे जो धन दिया गया है, उसके लिए मैं धन्यवाद देता हूँ। यद्यपि वह बहुत थोड़ा है, परन्तु मुझे विश्वास दिलाया गया है कि अभी और संग्रह करनेकी चेष्टा की जायेगी। आप लोग पण्डितजी की बातको ध्यानसे शान्तिपूर्वक सुनें और अस्पृश्यता-निवारणके सम्बन्धमें आपकी बुद्धि जो निश्चय करे, उसे मानें। आशा है कि आप लोग पण्डितजी का भाषण आदरपूर्वक सुनेंगे।[2]

पण्डित मालवीयजी ने हृदयकी आपको बात सुना दी है, उसके बाद मुझे कुछ कहनेकी आवश्यकता नहीं। पण्डित देवनायकाचार्यने जो शान्तिके साथ और संक्षेपमें उपदेश दिया है, उसके लिए मैं उन्हें धन्यवाद देता हूँ। और शान्तिपूर्वक सुननेके लिए आप लोगोंको भी धन्यवाद देता हूँ। परन्तु देवनायकाचार्यजी को कुछ भी उत्तर न दूँ तो असभ्यता मानी जायेगी। पण्डितजी की मुख्य आपत्ति मन्दिर-प्रवेश बिलके सम्बन्धमें है। जैसाकि मालवीयजी ने कहा है, मेरी और उनकी बातचीत होनेवाली है और आगे कोई ऐसा उपाय निकल आयेगा जिससे मन्दिरमें जानेवालोंकी सहमति होनेसे हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशमें कोई कानूनी बाधा नहीं आयेगी, तब फिर मुझे कोई एतराज न होगा। और यह तो मैं कह ही चुका हूँ कि हिन्दू लोगोंकी सहमतिके बिना इस सम्बन्धमें कोई कानून नहीं बनेगा। इतना कहनेसे सन्तोष हो जाना चाहिए। बिलके सम्बन्धमें तो अपने हरिजन-दौरेमें मैंने कोई आन्दोलन ही नहीं किया, बिलका नाम भी नहीं लिया। शास्त्रार्थके विषयमें मुझे यह कहना है कि आज, कल

१. देवनायकाचार्य, जो अभी-अभी पहुँचे थे।

२. अपने भाषणमें देवनायकाचार्यने मन्दिर-प्रवेश बिलका विरोध किया और कहा कि गांधीजी सनातनधर्मको रसातलमें दबा देनेका प्रयत्न कर रहे हैं। इसके बाद पं० मदनमोहन मालवीयने भाषण दिया जिसमें उन्होंने सुधारके समर्थनमें जोरदार अपील की।

या कभी भी और कही भी शास्त्रार्थ हो सकता है। परन्तु धर्म बुद्धिग्राह्य विषय नही, हृदयग्राह्य विषय है। मन्दिर-प्रवेशको छोड़कर और किसी विषयमें तो किसीका विरोध मुझे मालूम नही पडता है। मैं किसीके साथ बलप्रयोग तो करना नही चाहता और न झगडा ही करना चाहता हूँ। किसीको भी मुझसे डर नही होना चाहिए। मुझसे सनातनधर्म का अहित, अकल्याण नही हो सकता। जिस सनातनधर्मको आप मानते है उसीको मैं भी मानता हूँ।

हरिजनसेवक, १०-८-१९३४

२८८. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

१ अगस्त, १९३४

चि० प्रेमा,

तेरा काफी लम्बा और स्पष्ट पत्र मिला।

माता-पिता बच्चोके स्वास्थ्यका स्मरण या वर्णन नही करते। उनकी व्याधियो का स्मरण-वर्णन करते है। व्याधि केवल शारीरिक ही नही।

तू आश्रमके नियमोका पालन कर रही है, इससे मुझे आश्चर्य नही हुआ। न करती तो जरूर आश्चर्य होता।

तेरे शुभ मनोरथ पूरे हो।

वर्षगाठ तो रोज होती है। हम रोज जन्म लेते है और रोज मरकर फिर जन्म लेते है। परन्तु रूढिके वश होकर हम किसी विशेष दिनको ही जन्म-दिन मानते है। उस दिनके और सदाके मेरे आशीष तेरे पास है ही।

तुझे उत्तर नारणदासकी मारफत लिख रहा हूँ। इस तरह पाँच पैसे बचा रहा हूँ। नारणदास तो तुझे लिखेगे ही। उन्हे मुझे आज लिखना पड रहा है। इसलिए यह पत्र धुरन्धरकी मार्फत न भेजकर नारणदासकी मार्फत भेज रहा हूँ।

तू लिखती रहना। वहाँका तेरा विवरण अच्छा है। यह पत्र सुबहकी प्रार्थनासे पहले लिखवा रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३५७) से। सी० डब्ल्यू० ६७९६ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कटक।

२८९. पत्र : नारणदास गांधीको

१ अगस्त, १९३४

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। यह आश्चर्यकी बात है कि सन्तोक कोई काम नहीं कर सकती। बाबाका[1] लालन-पालन कैसा हुआ जो वह उसे कुछ करने ही नही देता? गरीबोंके बच्चे कैसे पलते होंगे?

कुसुम, लीलावती आदि मुझे जब चाहें तब लिखें, फिर भी वे मुझसे पत्रकी आशा न रखें, क्योंकि मैं लिख नही पाऊँगा।

प्रेमाका लम्बा पत्र मिला है। उसका जवाब[2] इसके साथ है।

अमला बड़ी मुँहफट है। किन्तु है बिलकुल पगली। मैं अगर उसे तुम्हारे पास भेजूं तो वह तुम्हारा पैसा बरबाद करेगी। उसके लिए अच्छा तो यह है कि जब तक मैं एक जगह रह सकूं, उसकी जिम्मेदारी उठाऊँ। जब मैं अनिकेतन हो जाऊँगा तब देखूंगा। तब मैं वह जहाँ होगी, उसे वही रखनेकी कोशिश करूँगा।

केशु क्या काम करता है? वह कहाँ रहता है? यहाँ रखीसे प्रायः मिलता रहता हूँ। उसका स्वास्थ्य बहुत अच्छा नहीं कहा जा सकता।

काम हो या न हो, तुम सप्ताहमें किसी एक निश्चित दिन पत्र लिखते रहना। काम आ पड़नेपर चाहे जब लिख सकते हो। एक पोस्टकार्डसे भी काम चल जायेगा।

गोशाला के बारेमें विचार कर रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८४०५से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१. माधव, रुक्मिणी बजाजका पुत्र।
२. देखिए पिछला शीर्षक।

२९०. भाषण: हिन्दू विश्वविद्यालय, बनारसमें

१ अगस्त, १९३४

हिन्दू विश्वविद्यालय मेरे लिए कोई नया नही है। जब यह आरम्भ हुआ, तभी से मालवीयजी ने इसमे मेरा सम्बन्ध स्थापित कर दिया था[1] और वह आजतक वैसा ही बना हुआ है। यदि कोई परिवर्तन हुआ भी है तो उससे वह सम्बन्ध और घनिष्ठ हुआ है और मेरा आदरभाव इसकी ओर अधिक बढ़ता जा रहा है। विश्वविद्यालयकी उन्नतिके साथ-साथ धर्मकी भी उन्नति होनी चाहिए, पडित माल्वीयजी का भाव यही है। मुझे आशा है कि विद्यार्थी यहाँ विद्या प्राप्त करके उसका सद्व्यय करेंगे, सकुचित धर्मको ग्रहण नही करेंगे। उदार धर्म दूसरे धर्मोको भी अपनाता है। आज लोकमान्य तिलककी पुण्य-तिथिका शुभ अवसर है और इस अवसरपर धर्मके एक अगमे क्या होना चाहिए यह बतानेके लिए मैं यहाँ आया हूँ। लोकमान्यकी राजनीतिक शक्तिके सम्बन्धमें मैं कुछ नही कहूँगा, उसे कहनेके लिए मै अभी स्वतन्त्र भी नही हूँ। तिलक महाराजने धर्मके बारेमें क्या कहा है, यह इस समय कहना है। आपको जानना चाहिए कि लोकमान्यके दिलमे हरिजन भाइयोंके प्रति बड़ी दया थी। मेरा उनसे जो विचार-विनिमय हुआ था, उसमे उन्होंने कहा था कि धर्मशास्त्रोमें अस्पृश्यताके लिए कोई प्रमाण नही है और हो ही नही सकता, क्योकि हिन्दू-धर्ममें सत्यका दर्जा सबसे ऊँचा है। अगर तराजूपर एक ओर सत्य रखा जाये और दूसरी ओर अन्य सब बातें, तो भी सत्यका ही पल्डा भारी रहेगा। कोई भी पण्डित वेद, पुराण, इतिहासमे कही भी धर्मके सिद्धान्तोके विपरीत कोई बात नही बता सकता। अन्य धर्मोमें अस्पृश्यताकी कोई चर्चा नही है। हिन्दू-धर्मने ही तो इजारा नही लिया है। हमारे धर्ममें कई ऐसी बातें बताई गई हैं जो और कही नहीं हैं। हमारे यहाँ जो वर्णाश्रम धर्म है वह यदि लुप्त हो जाये तो हिन्दू-धर्मका ही लोप हो जायेगा। वर्णाश्रम धर्मके साथ वर्तमान अस्पृश्यताका कोई सम्बन्ध नही है। इस बातपर मेरा विश्वास दृढ़ होता जा रहा है, और छ मासके इस दौरेके बाद तो मैं यह और भी दृढताके साथ कह सकता हूँ।[2]

आचार्य आनन्दशंकर ध्रुवने मुझे काशी विश्वविद्यालयके विद्यार्थियोसे दो शब्द 'गीता' पर कहनेका आदेश दिया है। उनका यह आदेश मैंने थोड़ी झिझकके साथ ही स्वीकार किया है। उनके-जैसे विद्वानके सामने इस तरहके विषयपर प्रवचन देनेका

१. उस अवसरपर गांधीजी के भाषणके लिए, देखिए खण्ड १३, पृ० २१२-१८।

२. यह अनुच्छेद हरिजनसेवकसे लिया गया है। इसके बादका अंश हरिजनसे लिया गया है। यह "गीतामाता" शीर्षकसे छपा था।

मुझ-जैसे साधारण आदमीको भला क्या अधिकार है? उनके-जैसा अगाध पाण्डित्य मुझमें कहाँ है और न पण्डित मालवीयजी की तरह मैंने प्राचीन धर्मशास्त्रोंका गहरा अध्ययन ही किया है। सरदार वल्लभभाईने, अपने खास लहजेमें, आज सुबह मुझसे कहा था कि काशी-जैसी पण्डितोकी नगरीमें और मालवीयजी तथा आचार्य ध्रुव-जैसे प्रकाण्ड पण्डितोंकी उपस्थितिमें उनके और मेरे जैसे मेहतर, काश्तकार और जुलाहे क्या नक्कारखानेमें तूतीकी तरह नही है? एक तरहसे उनकी बात ठीक थी। पर मैं यहाँ पाण्डित्य-प्रदर्शनके लिए नही, बल्कि आपको केवल यह बताने आया हूँ कि मेरे और सरदार-जैसे सामान्य जनोपर गीताका क्या प्रभाव पड़ा है। पता नही आपको इसका कोई आभास भी है या नही कि सरदारपर इसका कारावासके दिनोमें कितना गहरा प्रभाव पड़ा था। मैं यहाँ इस तथ्यका साक्षी हूँ कि यरवदा जेलमें उन्हें इससे माँस और मदिरासे भी कही अधिक शक्ति और पोषण मिलता था। 'गीता' के मूलमें पहुँचनेके लिए वे पण्डित सातवलेकरकी 'संस्कृत स्वयंशिक्षक' पुस्तककी सहायतासे संस्कृत सीखने लगे। और एक बार शुरू कर देनेपर वह उनके हाथसे कभी छूटती ही नही थी। सुबहसे राततक वे उसीमें जुटे रहते थे। जैसाकि आप शायद सोचें, वह खाली मनकी मनोग्रस्तता नही थी। बल्कि गहरे चिन्तनका परिणाम था। हमारे मनमें यह सवाल था कि ईसाइयोके लिए जैसे 'बाइबिल' है, मुसलमानोके लिए 'कुरान' है, वैसे हिन्दुओके लिए एक पुस्तक क्या हो सकती है? क्या 'वेद'? नही। 'भागवत?' नही। 'देवी पुराण'? नही। अपने बचपनमें ही मुझे एक ऐसे धर्मग्रन्थकी जरूरत महसूस हुई थी जो जीवनकी परीक्षाओ और प्रलोभनोमें मेरा अचूक पथ-प्रदर्शक बन सके। 'वेद' उस जरूरतको पूरा नही कर सकते थे, यदि और किसी कारण नहीं तो केवल इसी कारण कि उन्हें जाननेके लिए काशी-जैसे किसी स्थान पर १५-१६ वर्ष कड़ा अध्ययन करना पड़ता, जिसके लिए मैं तब तैयार नही था। परन्तु मैंने कही पढ़ा था कि 'गीता' अपने ७०० श्लोकोमें सभी शास्त्रों और उपनिषदो का सार दे देती है। उससे मैं एक निश्चयपर पहुँच गया। 'गीता' पढ सकनेके लिए मैंने संस्कृत सीखी। आज 'गीता' मेरे लिए केवल 'बाइबिल' या 'कुरान' ही नही है, बल्कि उससे भी अधिक है। वह मेरी माता है। जिस पार्थिव माताने मुझे जन्म दिया उसे मैं बहुत पहले खो चुका हूँ। परन्तु तबसे इस अविनाशी माताने उसका स्थान पूरी तरह ग्रहण कर लिया है। यह न कभी बदली है और न इसने मुझे कभी निराश किया है। मैं जब भी किसी कठिनाई या मुसीबतमें होता हूँ तो इसकी गोदमें ही शरण लेता हूँ। अस्पृश्यताके विरुद्ध अपने संघर्षमें प्रायः मेरे सामने आचार्यों द्वारा व्यक्त की गई परस्पर विरोधी सम्मतियाँ आती रही हैं। उनमें से कुछ मुझे बताते है कि जिस तरहकी अस्पृश्यताका आज चलन है उसके लिए हिन्दू-धर्ममें कोई प्रमाण नही है, और उसे मिटानेके मेरे प्रयत्नोको वे अपना आशीर्वाद देते है। परन्तु कुछ अन्य यह कहते है कि अस्पृश्यता आरम्भ से ही हिन्दू-धर्मका आवश्यक अंग रही है। ऐसी परिस्थितियोमें मैं किस अधिकारी विद्वानका अनुसरण करूँ? मैं किंकर्त्तव्यविमूढ हो जाता हूँ। वेदो और स्मृतियोसे मुझे कोई सहायता नही मिलती। मै तब अपनी माताके पास पहुँचता हूँ और

कहता हूँ, "माता इन विद्वान पण्डितोने मुझे असमजसमें डाल दिया है। मुझे इस उलझनसे निकालो" और माता मुस्कुराती हुई उत्तर देती है · "नौवे अध्याय[1] में जो आश्वासन दिया है, वह केवल ब्राह्मणोके लिए नही, बल्कि पापी, बहिष्कृत, दलित और अकिंचनके लिए भी है।" पर उस आश्वासनका पात्र बननेके लिए यह आवश्यक है कि हम माताकी आज्ञाकारी और भक्त सन्तान हो, भक्तिका मात्र दिखावा करनेवाली, विद्रोही और भक्तिहीन सन्तान नही।

'गीता' के विरुद्ध कुछ लोगोका यह आक्षेप है कि यह साधारण आदमीके लिए बहुत ही गूढ ग्रन्थ है। मैं यह कह सकता हूँ कि यह आलोचना निराधार है। स्वर्गीय लोकमान्यने अपने अगाध पाडित्य और अध्ययनके बलपर 'गीता' की एक स्मरणीय टीका लिखी। उनके लिए यह गहन सत्योका भण्डार थी जिनकी खोजमें उन्होंने अपनी बुद्धि लगाई। परन्तु उससे सामान्य पाठकको भयभीत होनेकी जरूरत नही है। यदि अठारह अध्यायोका समझना आपको बहुत कठिन लगे, तो केवल पहले तीन अध्यायोका ही खूब ध्यानसे अध्ययन कीजिए। शेष पन्द्रह अध्यायोमे जो-कुछ अधिक विस्तारसे और विभिन्न दृष्टिकोणोंमे प्रतिपादित किया गया है वह सब वे आपको संक्षेपमें दे देंगे। इन तीन अध्यायोंका भी सार इन्ही अध्यायोंमें से छाँटे गये कुछ श्लोकोमे देखा जा सकता है। और फिर इस तथ्यको भी ध्यानमें रखिए कि तीन पृथक् स्थलो[2] पर 'गीता' इससे भी आगे बढ़ जाती है और हमे सभी धर्मोंको छोडकर केवल एक ईश्वरकी शरण लेनेको प्रेरित करती है। इस तरह आप देखेगे कि 'गीता'के सन्देशके बारेमें यह आक्षेप कि वह सामान्य जनोके लिए इतना गूढ़ और जटिल है कि वे उसे समझ नही सकते, कितना निराधार है। 'गीता' सबकी माता है। वह किसीको भी दुत्कारती नही है। उसका द्वार जो भी उसे खटखटाये उसीके लिए खुला है। 'गीता'का सच्चा अनुयायी यह नही जानता कि निराशा क्या है। वह सदा शाश्वत आनन्द और शान्तिकी स्थितिमें रहता है जो बुद्धिगम्य नही है। परन्तु जो सशयात्मा है या जिसे अपनी बुद्धि और विद्याका अभिमान है, वह उस शान्ति और आनन्दको प्राप्त नही कर सकता। वह तो केवल उसीके लिए है जो विनम्र है और जिसकी उपासनामें निष्ठाकी पूर्णता और मनकी अनन्य एकाग्रता है। आजतक कोई भी मनुष्य, जिसने 'गीता' की इस भावनासे उपासना की हो, निराश नही हुआ है।

हमारे विद्यार्थी छोटी-छोटी बातोसे घबरा जाते है। परीक्षामें फेल हो जाने जैसी तुच्छ चीज उन्हे गहरी निराशामें डुबो देती है। 'गीता' उन्हे यह समझाती है कि असफलता सामने दिखाई देती हो तो भी धीरज रखना कर्त्तव्य है। वह सिखाती है कि हमें केवल कर्मका अधिकार है, फलका नही, और सफलता व असफलता मूलतः एक ही चीज है।[3] वह हमसे कहती है कि तन, मन और आत्मासे अपनेको पूर्णतया विशुद्ध कर्तव्यको समर्पित कर दो और आकस्मिक इच्छाओ व

१. भगवद्गीता, अध्याय-९, श्लोक ३२।
२. वहीं अध्याय-३, श्लोक-३०; अध्याय-८, श्लोक-७; और अध्याय-१८, श्लोक-६६।
३. वहीं अध्याय-२, श्लोक ४७ और ३८।

अनियन्त्रित आवेगोंसे विचलित मत हो और मनसा भोगासक्त मत बनो। एक सत्याग्रही के नाते मैं यह कह सकता हूँ कि 'गीता' मुझे नित्य नई शिक्षाएँ देती है। यदि कोई यह कहे कि यह मात्र मेरा भ्रम है, तो मेरा उत्तर उसे यह होगा कि इस भ्रमको मैं अपनी सबसे मूल्यवान निधिकी तरह सदा हृदयसे लगाकर रखूँगा।

विद्यार्थियोंको मैं यह सलाह दूँगा कि वे अपनी दिनचर्या ब्राह्म मुहूर्तमें गीता-पाठसे शुरू करें। मैं तुलसीदासका प्रेमी और भक्त हूँ। जिस महान् आत्माने दु:खी जगतको रामायणका संजीवन मन्त्र दिया वह मेरे लिए पूजनीय है। पर मैं आज यहाँ आपके आगे तुलसीदासको नहीं रख रहा हूँ, बल्कि आपसे यह कहता हूँ कि आप 'गीता'का छिद्रान्वेषण या आलोचनाकी भावनासे नहीं, बल्कि भक्ति और श्रद्धासे अध्ययन करें। आपका रुख जब उसके प्रति इस प्रकारका होगा तो वह आपकी हर इच्छा पूरी करेगी। मैं मानता हूँ कि अठारह अध्यायोंको कण्ठस्थ करना कोई मजाक नहीं है, पर यह ऐसा प्रयास है जो करने योग्य है। एक बार जब आप इस अमृतका स्वाद चख लेंगे तो इसके साथ आपका लगाव दिन-प्रतिदिन बढ़ता जायेगा। 'गीता' के श्लोकोंके पाठसे कठिन घड़ियोंमें और विपत्तिमें आपको सहायता मिलेगी — काल-कोठरीके अन्धकारतक में सान्त्वना मिलेगी। और यदि आखिरी बुलावा आनेपर प्राण त्यागते समय ये श्लोक आपके होठोंपर हों, तो आपको ब्रह्म-निर्वाण और अन्तिम मुक्ति प्राप्त हो जायेगी। परमानन्दकी वह स्थिति क्या है, यह आपके विद्वान आचार्य आपको बता सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]

हरिजनसेवक, १०-८-१९३४; *हरिजन*, २४-८-१९३४ भी

२९१. भाषण: हरिजनोंकी सभा, बनारसमें[1]

१ अगस्त, १९३४

सभामें भाषण करते हुए गांधीजी ने कहा: हरिजन-आन्दोलनसे बड़ी-बड़ी आशाएँ हैं। भारतकी ही विभिन्न जातियोंकी नहीं, बल्कि संसारकी श्वेत और श्वेतेतर जातियों की एकताके बीज भी इस आन्दोलनमें अन्तर्निहित हैं।

बनारसकी नगरपालिका और नागरिकोंको इस बातपर शर्म आनी चाहिए कि यहाँकी हरिजन-बस्तियाँ सार्वजनिक टट्टियोंसे सटी हुई हैं, और हरिजनोंको ऐसी जगह रहना पड़ता है जो मवेशियोंके रहने लायक भी नहीं है। नगरपालिकाका यह कर्त्तव्य है कि वह उनके लिए खुली खुशनुमा जगहपर मकान बनवाये।

हरिजनोंको गोमांस, मुर्दार मांस खाना, शराब पीना, जुआ खेलना और आपसका ऊँच-नीचका झूठा भेदभाव त्यागकर अपना कर्त्तव्य पालन करना चाहिए।[2]

१. *लीडर*में बताया गया था कि सभा केन्द्रीय हिन्दू स्कूलमें हुई थी।
२. आगेका अंश *लीडर*से लिया गया है।

महात्मा गांधीने अपने इस मतको फिर दोहराया कि अस्पृश्यता-निवारणका कार्य शास्त्र-विरोधी नहीं है। उन्होंने कहा कि यदि कोई व्यक्ति मुझे यह विश्वास दिला दे कि मेरा आन्दोलन शास्त्र-विरोधी है, तो सबसे पहले मैं ही इसे त्याग दूँगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १७-८-१९३४; लीडर, २-८-१९३४ भी

२९२. पत्र : नरेन्द्रदेवको

बनारस
२ अगस्त, १९३४

प्रिय नरेन्द्रदेव,

थोड़े दिन आपके साथ रहते हुए और आपके आतिथ्यका सुख भोगते हुए दो-बार समाजवादी मित्रोंके साथ मेरी हार्दिक भेंट हुई; उनके लिए मैं आपका बहुत ही आभारी हूँ।

आपके कार्यक्रमके मसौदेको पढ़ने और उसकी आलोचना करनेका मैंने आपसे वायदा किया था। जितने ध्यानसे मैं पढ़ना चाहता था, उतने ध्यानसे उसे नहीं पढ़ पाया हूँ। इसलिए इसे किसी भी तरह विस्तृत नहीं, एक सरसरी आलोचना ही समझना चाहिए।

मेरे खयालसे जबतक आप इस दलको कांग्रेस संगठनका अंग बनानेकी अनुमति न माँगें, इसे 'कांग्रेस समाजवादी दल' कहना गलत है। पर इसे 'कांग्रेसजनोंका अखिल भारतीय समाजवादी दल' कहना पूर्णतया उचित होगा। मुझे यकीन है कि इस अन्तरके महत्त्वको आप समझ जायेंगे।

कांग्रेसका न्यायोचित और शान्तिपूर्ण उपायोंसे पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करनेका जो उद्देश्य है, आपके संविधानके मसौदेमें मुझे उसकी स्वीकृति नहीं मिली।

यदि उसे जान-बूझकर छोड़ दिया गया है तो मैं यह बात समझ सकता हूँ, क्योंकि आपका उद्देश्य कांग्रेसके उद्देश्यसे बहुत भिन्न है। आपका शायद यह दावा है कि वह कांग्रेसके उद्देश्यसे कहीं प्रगतिशील है। फिर भी, आप अपनेको कांग्रेसका एक दल नहीं कह सकते।

कांग्रेसका उद्देश्य स्वाधीन राज्य स्थापित करना है। वह राज्य किस तरहका होगा, इसका हम अभी धुंधला-सा अनुमान ही लगा सकते हैं। उसकी कुछ विशेषताएँ हम निर्धारित कर चुके हैं। अनुभव हमें रोज यह सिखा रहा है कि उनमें नई चीजें जोड़नी होंगी। परन्तु समाजवादी उद्देश्यका आपका जो प्रतिपादन है, वह मुझे भयभीत करता है, तीनों सिद्धान्तोंके फलितार्थ इतने व्यापक हैं कि मेरी समझसे बाहर हैं। वे कार्यक्रमको नशीला बना देते हैं, जबकि सभी तरहके नशोंसे मुझे डर लगता है।

अब मैं, दृष्टान्तके रूपमें, आपके कार्यक्रमके उन मुद्दोंको लेता हूँ जो मुझे आपत्तिजनक लगते हैं। ७ और ८ मुद्दे कांग्रेसकी वर्तमान नीतिके प्रतिकूल हैं। यद्यपि जीवन-भर मैं अपनेको जन-साधारणके साथ एकाकार करता आया हूँ और निजी सम्पत्तिका मैंने त्याग कर दिया है, फिर भी मेरा इरादा नरेशों और जमीदारोंको खत्म करनेका नहीं है और न जमीनको फिरसे किसानोंमें बाँटनेका ही है। मेरा लक्ष्य नरेशों और जमीदारोंको सुधारना है। जमीनका जबर्दस्ती फिरसे बँटवारा किये बिना मुजारोंके लिए ऐसे अधिकार प्राप्त किये जा सकते हैं जो वस्तुतः मिल्कियत-जैसे ही होंगे। ११ वाँ मुद्दा, जिसका ७-८ और कुछ अन्य मुद्दे खण्डन करते लगते हैं, मुझे पसंद है। आवश्यकताओंके पहले यदि आप 'न्यायोचित' शब्द रख सकें, तो मेरी रायमें हरेकको उसकी 'आवश्यकताओंके अनुसार एक निर्दोष सूत्र हो सकता है। हमारे करोड़ों . . .[1] में जो सबसे असहाय और बेसहारा हैं, उनके लिए आप जो-कुछ भी चाह सकते हैं, उस सबका सार अकेले इसी सूत्रमें आ जाता है। आपका पाँचवाँ तरीका, जैसा मैं उसे समझा हूँ, अहिंसाका प्रतिवाद है। संवैधानिक प्रश्नपर ब्रिटिश सरकारके साथ किसी भी अवस्थामें बातचीतके लिए तैयार न होनेमें क्या औचित्य है, मै समझ नहीं पा रहा हूँ। कांग्रेसने यह नीति उस समय भी नहीं अपनाई थी। जब असहयोग पूरे जोर पर था। मुझे यकीन है कि यह चीज अधीर होकर ही डाल दी गई है।

आपकी 'मजदूरों और किसानोंकी आम हड़तालें', जिनपर किसी तरहका कोई प्रतिबन्ध नहीं है, संयत और अहिंसात्मक कार्यक्रमके लिए बहुत ही खतरनाक है।

आपकी तात्कालिक माँगें, केवल कुछ मुद्दोंको छोड़कर, आकर्षक है। पर आपके तरीकोंमें मुझे ऐसा कुछ नहीं मिला जो यह दिखाए कि आपको तुरन्त उनकी प्राप्ति की कोई आशा है।

कुछ बहुत ही स्पष्ट चीजें छूट गई हैं, जिनकी ओर मै आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ:

अस्पृश्यता-निवारण।

साम्प्रदायिक एकता।

खद्दर जन-साधारणसे एकात्मताका प्रतीक है और सालमें चार-छः महीने बेकार रहनेवाले लाखों लोग, जबतक उन्हें कोई और बेहतर धन्धा न मिल जाये, इस धन्धेको तुरन्त अपना सकते हैं।

मद्य और मादक पदार्थोंका पूर्ण निषेध।

मै इस बातके पक्षमें हूँ कि समूचे संविधानका कड़ाईसे संशोधन होना चाहिए। हम दोनोंके मार्गमें भारी अड़चन यह है कि जवाहरलाल, जिन्होंने हमें समाजवादका मन्त्र दिया, हमारे बीचमें नहीं है। मै यह समझता हूँ कि जब मुझे और अन्य बूढ़ोंको विश्रामकी अनुमति मिल जायेगी, जिसके कि हम सर्वथा अधिकारी है, तो कांग्रेस के काँटोंके ताजका स्वाभाविक उत्तराधिकारी उन्हें ही होना है। मेरा ऐसा विश्वास

१. साधन-सूत्रमें यहाँपर अस्पष्ट है।

है कि यदि वे हमारे बीचमें होते तो गति धीरे-धीरे तेज करते। मेरा सुझाव यह है कि आप वैज्ञानिक समाजवादकी बजाय, जैसाकि आपके कार्यक्रमको नाम दिया गया है, देशको व्यावहारिक समाजवाद दें, जो भारतीय परिस्थितियोंके अनुरूप हो। मुझे इस बातकी खुशी है कि जो कार्यक्रम आपने मुझे दिया है वह, इसी उद्देश्यके लिए नियुक्त एक प्रभावशाली समिति द्वारा तैयार किया होनेपर भी, अभी एक मसौदा ही है। इसलिए अपने कार्यक्रमको अन्तिम रूप देते हुए यदि आप ऐसे लोगोंसे सहयोग करें जिनका झुकाव समाजवादकी ओर हो और जिन्हें वास्तविक परिस्थितियोंका अनुभव हो, तो वह बुद्धिमत्ता होगी।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]
महात्मा, खण्ड-३, पृ० ३४४-४५ के बीचकी प्रतिकृति।

२९३. पत्र : गोविन्ददासको

बनारस
'२ [अगस्त]'[1], १९३४

भाई गोविन्ददासजी,

आपका पत्र मैंने पढ़ लिया है। मेरे लेख अथवा कथनका यह मतलब कभी नही था कि देशी रियासतोंमें कांग्रेस कमेटियाँ नही होनी चाहिए अथवा नही हो सकती। जो कमेटियाँ पहले ही कायम हो चुकी, जैसेकि बघेलखण्ड जिला कांग्रेस कमेटी, जिसके सम्बन्धमें आपने मुझे लिखा है, वे तो अवश्य रहनी ही चाहिए। यदि किसी राज्यमें ऐसी कमेटीकी रोक की जाये तो अवश्य बड़े खेदकी बात है।

आपका,
मोहनदास गांधी

मध्यप्रदेश और गांधीजी, पृ० १०३

१. साधन-सूत्रमें तारीखकी जगह २-३-१९३४ है, पर गांधीजी अगस्त, १९३४ में बनारसमें थे।

२९४. पत्र : मदनमोहन मालवीयको

बनारस
२ अगस्त, १९३४

आपकी माँगके अनुसार प्रबन्ध करनेमें बड़ी आपत्ति है। उससे कांग्रेसके ऊपर अपने प्रस्तावको बिलकुल रद कर देनेका आक्षेप आ जायेगा। कांग्रेस ऐसा नही कर सकती। अव्वल तो इसपर पूरा विचार संसदीय बोर्ड ही कर सकता है, क्योंकि उसीको ठीक-ठीक पता है कि कितने आदमी खड़े किये जानेवाले हैं और कौन-कौन किस-किस जगहसे खड़े किये जानेवाले हैं। लेकिन संसदीय बोर्डके लिये भी ऐसी व्यवस्थाको मान लेनेमें कठिनाई होगी। बहुत-से स्थानोंमें उसके उम्मीदवार खड़े हो गये हैं, और काम भी शुरू कर दिया है। उन स्थानोंमें कांग्रेस उम्मीदवारको हटा कर आपके उम्मीदवारको खड़ा करनेका प्रभाव बम्बईके प्रस्तावको देखते हुए बहुत ही बुरा होगा। यह भी कहना बहुत मुश्किल है कि जितने उम्मीदवार आप चाहते है उतनी अधिक संख्यामें आपकी ओरसे खड़े होनेवाले पक्के कांग्रेसजन मिलेंगे। हमारा निवेदन तो यही था कि आप स्वयं, श्री अणे, तथा थोड़े और विशेष व्यक्ति जो पक्के कांग्रेसजन होते हुए साम्प्रदायिक निर्णयको छोड़कर और बातोंमें संसदीय बोर्डके उम्मीदवारोंका पूरा साथ देनेवाले हों और जिनका आना आप अत्यावश्यक समझते हों, वे ही आयें। यही व्यवस्था मुझे तो उचित मालूम होती है। अन्य किसी प्रकारकी व्यवस्थाका फल मैं अच्छा नही देखता। मेरी अब भी प्रार्थना है कि ऐसी व्यवस्थाको आप मान्य रखें और एक नये पक्षकी रचना की झंझटमें न पड़ें। कांग्रेसके उम्मीदवारोंसे आप मुकाबला न होने दें तो दोनोंके लिये शोभाकी बात होगी। आप धर्म समझकर संसदीय बोर्डसे अलग हुए हैं। इसी धर्म-भावनाको सामने रखकर हम लोग काम लेंगे तो सबका श्रेय होगा और हम दोनोंका हेतु पूरा होगा। मुकाबले (में) बहुत बिगड़नेवाला है। मुझे विश्वास है कि साम्प्रदायिक निर्णयके विषयमें विरोध प्रकट करनेके लिए आप अकेले ही काफी हैं। मैं आशा करता हूँ कि मेरी नम्र प्रार्थनाको आप स्वीकार करेंगे।

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य : नारायण देसाई।

२९५. भाषण : महिला सभा, बनारसमें[1]

[२ अगस्त, १९३४][2]

यह बड़े दुःखकी बात है कि धर्मका अर्थ आज हमारे लिए खान-पानके प्रतिबन्धों और ऊँच-नीचकी भावनासे चिपके रहनेके सिवा और कुछ नही रहा है। मैं आपको बताना चाहता हूँ कि इससे बड़ी मूढ़ता और कोई नही है। जन्म और बाह्य विधियोंका पालन किसीके ऊँचा या नीचा होनेके निर्णायक तत्त्व नही हो सकते, केवल चरित्र ही निर्णायक तत्त्व है। ईश्वरने मनुष्योंको उनपर उच्च या नीच का ठप्पा लगाकर पैदा नही किया है। जो शास्त्र मानव-प्राणीको उसके जन्मके कारण नीच या अस्पृश्य ठहराता है, उसमें हमारी निष्ठा नही हो सकती। यह ईश्वरको और सत्यको, जो ईश्वर ही है, नकारना है। ईश्वर तो सच्चाई, ईमानदारी और न्यायकी मूर्ति है; वह ऐसे धर्म या चलनका अनुमोदन नही कर सकता जो हमारी विशाल आबादीके पाँचवें भागको अस्पृश्य मानता हो। इसलिए, मैं चाहता हूँ कि आप अपनेको इस पैशाचिक धारणासे मुक्त करें। जो अस्पृश्यता गन्दे कामसे जुड़ी होती है, वह तो ठीक है, और होनी चाहिए। वह हममें से हरेकपर लागू होती है। परन्तु जैसे ही हम धूल या गन्दगीको धोकर अपनेको स्वच्छ कर लेते है, हम अस्पृश्य नही रहते। कोई भी काम या व्यवहार किसी पुरुष या स्त्रीको सदाके लिए अस्पृश्य नही बना सकता। हम सभी थोड़े-बहुत पापी तो है ही, और हमारे धर्मग्रन्थ — गीता, भागवत और तुलसीकृत रामायण — स्पष्ट शब्दोंमें यह घोषणा करते है कि जो ईश्वरकी शरण लेगा, उसका नाम जपेगा, वह पापसे छूट जायेगा। यह प्रतिज्ञा सारी मानव-जातिके लिए है।

एक और सीधी-सादी कसौटी है, जो मेरे खयालसे आपको इस समस्यापर लागू करनी चाहिए। हर प्राणीका, चाहे वह मानव-जातिका हो या उससे निचली किसी अन्य जातिका, कुछ विशिष्ट लक्षण होता है, जिसके आधारपर मनुष्यका पशुसे, कुत्तेका गायसे और इसी तरह एक जातिका दूसरीसे भेद किया जा सकता है। क्या तथाकथित अस्पृश्योंमें ऐसा कोई विशिष्ट लक्षण होता है जो उन्हें अस्पृश्य सिद्ध कर सके? वे वैसे ही मनुष्य है जैसाकि हममें से हरेक है। मनुष्यसे निचले प्राणियों तकको हम अस्पृश्यताके चिह्नसे लांछित नही मानते है। फिर यह पैशाचिक अन्याय किसलिए? यह धर्म नही है, बल्कि अधर्मका सबसे भद्दा रूप है। मैं चाहता हूँ कि आप इस पापको, यदि यह अभी भी आपमें है तो, खत्म करें।

१. यह "महिलाओंसे खरी-खरी बातें" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था। सभा हरिश्चन्द्र स्कूलमें हुई थी।

२. वालजी गो० देसाईकी "साप्ताहिक चिट्ठी", हरिजन, १७-८-१९३४ से।

सदियोंसे होते आ रहे इस पापसे छूटनेका एक ही तरीका है कि हरिजनोंको मित्र बनाया जाये, उनके घरोंमें जाया जाये, उनके बच्चोंको अपने ही बच्चोंकी तरह गले लगाया जाये, उनकी भलाईमें रुचि ली जाये, यह पता लगाया जाये कि उन्हें पर्याप्त भोजन, पीनेका साफ पानी, ताजी हवा और रोशनी, जिनका आप अपना अधिकार मानकर उपभोग करते हैं, मिलते हैं या नहीं। दूसरा तरीका यह है कि आपमें से हरेक कताई-यज्ञ शुरू करे और खादी पहननेका व्रत ले, जिससे उन लाखों अभावग्रस्त मनुष्योंका गुजारा चलता है। कताई-यज्ञसे आपको, कुछ हदतक, उनके साथ तादात्म्य स्थापित करनेमें सहायता मिलेगी और आपके द्वारा प्रयुक्त प्रत्येक गज खादीसे कुछ पैसे हरिजनों और गरीबोंकी जेबमें जायेंगे। आखिरी बात यह है कि आप यथाशक्ति हरिजन-कोषमें दान दें, जिसका एकमात्र उद्देश्य हरिजनोंकी दशा सुधारना है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३१-८-१९३४

२९६. अस्पृश्यता-विरोधी विधेयक[1]

३ अगस्त, १९३४

विधेयककी इस व्याख्याको विधिवेत्ता सही नहीं मानते हैं। जहाँ सवर्ण हिन्दू हरिजनोंके प्रवेशके विरुद्ध होंगे, वहाँ उन्हें कारगर ढंगसे मन्दिर-प्रवेशसे रोका जा सकेगा; यद्यपि उसका आधार अस्पृश्यता नहीं होगा। यदि इसमें कोई सन्देह हो, तो विधेयकमें संशोधन किया जा सकता है। परन्तु मेरी यह धारणा है कि सिद्धान्ततः यह बहुत ही, मन्दिर-प्रवेश विधेयकसे भी अधिक, आवश्यक है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३-८-१९३४

१. यह वसन्तकुमार चटर्जीके सम्पादकके नाम पत्रके उत्तरमें प्रकाशित किया गया था। उस पत्रमें कहा गया था: "गांधीजी कई बार यह घोषणा कर चुके हैं कि 'जबतक उच्च वर्णोंके हिन्दुओंकी बहुसंख्या इस सुधारके पक्षमें न हो, मैं हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें नहीं हूँ।' पर यदि अस्पृश्यता-विरोधी विधेयक पास हो गया, तो चाहे उच्च वर्णोंके हिन्दुओंकी बहुसंख्या उनके मन्दिर-प्रवेशके विरुद्ध ही क्यों न हो, हरिजनोंको मन्दिरोंमें प्रवेश मिल जायेगा। क्या गांधीजी यह बतानेकी कृपा करेंगे कि वे अस्पृश्यता-विरोधी विधेयकके विरुद्ध हैं या नहीं?"

२९७. पत्र : जे० सी० गुप्ताको

पटना
३ अगस्त, १९३४

प्रियश्री गुप्ता,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। मुझे तो यही लगता है कि आपने त्यागपत्र देकर गलती की है। संसदीय बोर्डका सदस्य होते हुए भी, आप पृथक निर्वाचक-मंडलोंके विरुद्ध और जिसे आप ठीक समझते हो, ऐसे किसी सम्मत समाधानके लिए आन्दोलन करनेके लिए स्वतन्त्र थे। एक सदस्यकी हैसियतसे, आप शायद ज्यादा कारगर रहते। बहरहाल, यदि आप बंगालके लिए एक सम्मत समाधान निकाल सकें, तो आपको सभी धन्यवाद देंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य नारायण : देसाई।

२९८. पत्र : सुरेन्द्रनाथ चटर्जीको

पटना
३ अगस्त, १९३४

प्रिय मित्र,

आपके पिछले महीनेकी १८ तारीखके पत्रके लिए धन्यवाद। आपने जो प्रश्न उठाया है उसका कोई निर्णायक उत्तर नही दिया जा सकता। धार्मिक मामलोंमें बहुमतकी राय अल्पमतको बाध्य नही कर सकती। उसका निश्चित रूपसे यह अर्थ अवश्य है कि अल्पमत अपनेको बहुमतसे अलग कर लेता है। जहाँतक विधानका सवाल है, कानून जब धर्मके विकासको रोकता हो तो विधान आवश्यक हो जाता है। विशुद्ध हिन्दू-युगमें सामयिक आचार ही विधान था।

सुरेन्द्रनाथ चटर्जी
६५, ललित घाट, बनारस

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य : नारायण देसाई।

२९९. पत्र : मुल्कराजको

पटना
३ अगस्त, १९३४

प्रिय लाला मुल्कराज,

आपका तार मिला है; उसका उत्तर मैंने कल ही भेज दिया था। आपके खर्चके बजटपर पंडितजी ने कुछ दिन पहले हस्ताक्षर कर दिये थे, पर कामके दबाव के कारण मैं उसे आपके पास भेज नहीं सका।

पंडितजीने वायदा किया है कि जैसे ही आप उन्हें लिखेंगे वे आपको चेक भेज देंगे। यदि उसमें कुछ देरी हो तो आप कृपया मुझे लिखें। इस बीच मैं कांग्रेस-प्रस्ताव, न्यासपत्र और व्यवस्थापक समितिके नियुक्ति-पत्रकी एक-एक नकल चाहूँगा।

पंडितजी चाहते हैं कि कार्य तुरन्त शुरू कर दिया जाये और उसकी प्रगति और खर्चेकी प्रतिमास एक रिपोर्ट भेजी जाये।

कल सुबह मैं यहाँसे वर्धाके लिए चल दूँगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

लाला मुल्कराज
जलियाँवाला बाग समिति
अमृतसर, पंजाब

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य: नारायण देसाई।

३००. पत्र : विधानचन्द्र रायको

पटना
३ अगस्त, १९३४

प्रिय डॉ० विधान,

आपका पत्र मिला। आपके सवालोंका मैंने मंत्रेश्वरकी जनताको जवाब दे दिया है। मालवीयजी के साथ समझौतेकी मुझे कोई जानकारी नहीं है और न मुझे इस विषयमें कोई अधिकार ही है। पर मैंने यह सुझाव[1] रखा है कि यदि मालवीयजी द्वारा मनोनीत दो-तीन व्यक्तियोंके खिलाफ, जो सभी कांग्रेसी हों, कोई उम्मीदवार खड़ा न किया जाये तो उन्हें सन्तुष्ट हो जाना चाहिए। वे २२से कम सीटोंसे सन्तुष्ट नहीं होते। मैंने कह दिया है कि यह सम्भव नहीं है। इस तरहके किसी प्रस्तावसे मैं स्वयं ही सहमत नहीं हो सकता। मेरा यह खयाल है कि महा समितियोंके सदस्यों के मतभेद व्यक्त करनेपर हम आपत्ति नहीं कर सकते, पर कार्यकारी समितियाँ या उनके सदस्य ऐसा करें तो उनका हम विरोध कर सकते हैं। हमें करना भी चाहिए। ये समितियाँ ऐसी कार्यकारिणियाँ हैं जो प्रान्तीय बहुमतोंके कार्यक्रमको पूरा करनेके लिए वचनबद्ध हैं।

आपके हमारे पाससे जानेके बादसे यद्यपि मैं कुछ दुर्बल हूँ, पर आपकी तरह मुझे भी यह विश्वास है कि मैं इस उपवासको पार कर लूँगा। संसदीय बोर्डकी मीटिंगपर मुझे कोई आपत्ति नहीं है, पर सरदारका आग्रह मुझे उससे बचाने पर ही रहेगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य : नारायण देसाई।

१. देखिए पृ० २९०।

३०१. पत्र : लीलावती आसरको

३ अगस्त, १९३४

चि० लीलावती,

तेरा पत्र मिला। तूने ठीक लिखा है। जैसा नारणदासभाई कहें, वैसा करना। अब तो सुशीलाबहन भी हैं, उनसे भी पूछना। अब मेरी दलीलपर विचार कर। तुझे डिग्री चाहिए कि ज्ञान? ज्ञान देनेवाली शिक्षा प्राप्त करना है, या सच्ची-झूठी डिग्री देनेवाली? डिग्री ज्ञानका माप नहीं होती, यह तो जानती है न?[१] . . .

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९८७३) से।

३०२. पत्र : हीरालाल शर्माको

३ अगस्त, १९३४

चि० शर्मा,

तुमारा खत मिला। सब खतोंके उत्तरकी तो आवश्यकता अब नहिं है ना? यदि है तो जिनकी चाहिये वह वापिस कर दो?[२]

भाई यदि बिना संकोच शक्ति होनेसे आर्थिक मदद देना चाहें तो उनकी मदद लेनेमें कोई अयोग्यता नहिं पाता हूं। इसलिए जितनी मदद वे दे सकते हैं देवें।

तुमको वहां बनवास-सा लगता है यह अच्छी बात नहिं है। इसमें सुधारणा नहिं होगी तो रामदास[३] पर उसका बुरा प्रभाव पड़ेगा।

तुमारे काममें हम सबने रुकावट डाली है या कैसे? मैंने तो जितना उत्तेजन दे सकता था देनेकी चेष्टा की है। अनजानपणमें कुछ उलटा हुआ है तो तुमारे बताना चाहिये।

१. साधन-सूत्रमें शेष पत्र पढ़ा नहीं जा सका।

२. हीरालाल शर्मा नित्य गांधीजी के पास रिपोर्ट भेजते रहते थे और अपने सुझावोंके साथ गांधीजी उसे उनके पास वापस भेज देते थे। गांधीजी ने कुछ रिपोर्ट अस्वस्थताके कारण अपने सुझावोंके बगैर ही वापस कर दी थीं।

३. रामदास खुर्जामें हीरालाल शर्माकी चिकित्सामें थे।

देवी[1]को टाइफाइड कैसे? और हुआ है तो उसका इलाज क्या तुमारे पास नहिं है? बच्चोका दिल चाहे ऐसे किया जाय। मैं ज्यादा दखल देना नहिं चाहता।

सबको
बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

वीर्यस्रावके लिए शीर्षासन अथवा अर्ध सर्वांगासन अच्छा काम करता है। इसी तरह सिद्धासन और प्राणायाम।

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, (१९३०-४८), पृ० ८२-८३ के बीचकी प्रतिकृतिसे।

३०३. पत्र : व्रजकृष्ण चांदीवालाको

३ अगस्त, १९३४

चि० व्रजकृष्ण,

तुमारा पत्र मिला है। दामोदरदासको जो खत तुमने लिखा है उसका उत्तर आनेके पहले मैं कुछ निर्णय नहिं कर पाता। इतना अवश्य कह सकता हूं कि मेरे तरफसे जो कुछ कहा जाये उसको अभिप्राय रूपमें हि समजा जाय यदि वह बुद्धि और हृदय कबूल करे तो उसका पालन किया जाय अन्यथा नही। जब मेरी यही राय है तो जैसे करना है ऐसे करनेकी स्वतंत्रता अवश्य है। दामोदरदासके खतकी प्रतीक्षा तो यो करनी है जिससे मेरे अभिप्रायमें कुछ परिवर्तन होता है या नहिं मैं जान सकुं तुमको बता सकुं।

तुमारी प्रकृति अच्छी होगी। दिल्लीमें समझौता हुआ सो तो अच्छा हुआ लेकिन प्रकृतिको बिगाड़कर कुछ भी न किया जाय।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४१६) से।

1. हीरालाल शर्माके पुत्र।

३०४. भाषण: बिहार केन्द्रीय सहायता समितिकी बैठक, पटनामें[1]

३ अगस्त, १९३४

यह ठीक ही है कि हमने प्रस्तावमें विश्वास-भर प्रकट किया है, [समितिकी] लम्बी-चौड़ी सराहना नहीं की है। इसके दो कारण हैं: एक यह कि रिपोर्ट अभी सर्व-साधारणके हाथोंतक नहीं पहुँची है, और दूसरा यह कि महा समिति यदि अपनी प्रबन्ध समितिकी प्रशंसा करती है तो वह अपनी ही प्रशंसा करना होगा। परन्तु प्रस्ताव सर्व-साधारणको यह बतानेकी दृष्टिसे जरूरी है कि प्रबन्ध समितिपर महा समितिका विश्वास है और वह चाहती है कि समिति अपना काम जारी रखे। यह बात ध्यान देने लायक है कि समितिने अपने पासके कोषका आधेसे थोड़ा कम भाग ही खर्च किया है। ऐसा नही है कि वह सारी रकम खर्च नही कर सकती थी, पर उसे अपनी सीमाओंका पता था। उदाहरणके लिए वह बालूसे अटे इलाकोको साफ करनेकी कोशिश कर सकती थी और इस तरह सारा कोष बालूको भेंट कर दे सकती थी। मैं इस रिपोर्टको पूरा पढ़ नहीं पाया हूँ; फिर भी मै प्रस्ताव पेश इसलिए कर सकता हूँ कि समितिके कार्यसे मेरा बराबर सम्पर्क बना रहा है।

एक शिकायत की गई है कि समितिने मध्यम वर्गोके हितोंका ध्यान नही रखा है; उसने मध्यम वर्गोकी सहायताके लिए बाईस हजार रुपये ही खर्च किये हैं। यह शिकायत वाजिब नही है, क्योंकि कुल ५ लाख रुपयेकी राशि निश्चित की गई है। मैं यह विश्वास दिलाता हूँ कि शेष राशि मध्यम वर्गोंपर ही खर्च की जायेगी। आलोचकोंको यह याद रखना चाहिए कि जिन लोगोंपर सहायता-राशि वितरित करनेका दायित्व है, वे स्वयं मध्यम वर्गोंके हैं और इसलिए उनपर उनकी उपेक्षाका आरोप नही लगाया जा सकता। इसके अलावा, सरकारने उनकी सहायताके लिए २२ लाख रुपये वितरित किये हैं; कारण यह है कि सरकार इन वर्गोंकी दशा ज्यादा अच्छी तरह समझ सकती है। बिहार केन्द्रीय सहायता समितिको, स्वभावतः, अपना ध्यान गरीब वर्गोंकी सहायतापर केन्द्रित करना था, क्योंकि किसी अन्य संस्थानकी अपेक्षा वह उनकी दशा और शिकायतोंको ज्यादा अच्छी तरह जानती है। सरकारी संस्थान और हमारे संस्थानके बीच कार्यका एक स्वाभाविक विभाजन अच्छा

१. साधन-सूत्रमें बताया गया था कि पुनर्गठनके बाद व्हीलर सीनेट हॉलमें आयोजित भूकम्प-सहायता समितिकी पहली महा सभाका राजेन्द्र प्रसादने सभापतित्व किया। गांधीजी ने अपने भाषणसे पहले निम्न-लिखित प्रस्ताव पेश किया था: "बिहार केन्द्रीय सहायता समितिकी यह महा सभा, ३० जूनतकके कामपर प्रबन्ध-समितिकी रिपोर्ट प्राप्त करनेके बाद, प्रबन्ध समितिमें अपना विश्वास व्यक्त करती है।"

ही रहा। मध्यम वर्गोंकी सहायताका कार्य कुछ समयके लिए इस कारण भी स्थगित रखा जा सकता था कि टिके रहनेकी शक्ति उनमें गरीब वर्गोंसे कहीं ज्यादा होती है। मैं आपको यह विश्वास दिला सकता हूँ कि न केवल बाकी ४,८०,००० रुपये मध्यम वर्गोंकी सहायतापर खर्च किये जायेंगे, बल्कि यदि जरूरत हुई और उपलब्ध हो सकी तो इससे भी अधिक रकम इसके लिए मंजूर की जायेगी। जो ऐसा कर सकते हैं, उन सभीसे मेरा अनुरोध है कि वह इस रिपोर्टकी एक नकल लें और उसका अध्ययन करें। हर छोटे-से-छोटे चन्देका इसमें उल्लेख किया गया है। मैं चाहूँगा कि सभी इस रिपोर्टका बारीकीसे अध्ययन करें और अपनी-अपनी आलोचना समितिके पास भेजें।

रेलवे कम्पनियों और टाटा कम्पनीसे समितिको जो रियायतें और सहायता मिली है, उसके लिए मैं उनका आभारी हूँ। पर मैं बाबू राजेन्द्र प्रसादकी इस बात का समर्थन करता हूँ कि जबतक इन रियायतोंको बंद करनेके जबर्दस्त कारण न हों, इन्हें जारी रखना चाहिए।

इस काममें हमारी सहायताके लिए हमारे पास स्वयंसेवकों और कार्यकर्त्ताओंका एक दल था। इसके लिए मैं ईश्वरको धन्यवाद देता हूँ। मजदूरी देकर जो काम हुआ, उससे कहीं ज्यादा कुशलता और ईमानदारीसे स्वयंसेवकोंने काम किया है। मेरी यही आशा और प्रार्थना है कि वर्तमान विपत्ति हमें सूझ-बूझ और आत्म-सहायताकी शिक्षा दे, जिससे कि भावी संकटोंमें हम अपनेको उनका सामना करनेमें असमर्थ न पायें।

मुझे खेद है कि हमारे पास आज पूरी तरह जाँचा हुआ हिसाब तैयार नहीं है। यह एक ऐसी चीज है जिसकी सार्वजनिक संगठन उपेक्षा नहीं कर सकते, और हमें प्राप्त रकमोंका हिसाब देनेके लिए प्रति दिन और प्रति मिनट तैयार रहना चाहिए। इस मामलेमें जितनी भी सावधानी रखी जाये थोड़ी है।

अन्तमें, मैं चाहूँगा कि आप यह ध्यान रखें कि समिति, मुख्यतया मेरे कहने पर ही, अभी धनकी और अपील नहीं कर रही है। हमें और रुपयोंकी जरूरत नहीं है, यह बात नहीं है। वाइसरायके कोष और बिहार केन्द्रीय सहायता समितिको मिली ८३ लाख रुपयेकी रकम हमारी जरूरतोंके लिए काफी नहीं है। परन्तु जबतक हम अपने पास की सारी रकम खर्च न कर दें, हम और रुपयोंकी अपील नहीं कर सकते। फिर भी, सर्व-साधारणको यह याद रखना चाहिए कि हमें आगे और अपील करनी होगी और जिस तरह उदारतासे उन्होंने पहले दान दिया है उसी तरह फिर देनेके लिए तैयार रहना चाहिए। वे यह जानते ही हैं कि सारा धन अच्छे काम पर खर्च होता है और एक-एक पैसेका हिसाब रखा जाता है।

[अंग्रेजीसे]

सर्चलाइट, ५-८-१९३४

३०५. भेंट: समाचारपत्रोंके प्रतिनिधियोंको[1]

पटना
३ अगस्त, १९३४

भेंटकर्त्ता: क्या आप अब यह बता सकते हैं कि निकट भविष्यमें आपका कार्यक्रम क्या होगा?

गांधीजी: जहाँतक मुझे मालूम है, यह महीना तो उपवास और पुनः स्वास्थ्य-लाभ करनेमें बीतेगा। इसलिए सितम्बरमें मेरे भाग्यमें क्या है, इसकी मेरे मनमें अभी कोई कल्पना नही है। पर मैं इतना कह सकता हूँ कि जेल जानेकी मुझे कोई जल्दी नही है। इसके विपरीत, अपने सामर्थ्यके अनुसार, मैं उससे बचनेकी ही कोशिश करूँगा। यदि कुछ समयतक कारावाससे बचना सम्भव हुआ, तो मुझे आशा है कि मैं वह समय हरिजन-कार्य और कार्यकारी समितिके बाकी रचनात्मक कार्यक्रमको जारी रखनेमें ही लगाऊँगा। कारण कि मैं उस कार्यक्रमसे प्रतिबद्ध हूँ; और मेरा यह दृढ विश्वास है कि यदि हमें अहिंसात्मक उपायोसे स्वतन्त्रता प्राप्त करनी है, तो कार्यकर्त्ताओंको अपनेको इस तरहके रचनात्मक कार्यके योग्य बनाना होगा और पूरे दिलसे उसमें जुटना होगा।

कांग्रेस संसदीय बोर्डकी स्थापनाके लिए यद्यपि मुख्यतया मैं ही उत्तरदायी हूँ, फिर भी मैंने सदा इस चीजपर जोर दिया है कि राष्ट्रीय कार्यक्रममें उसका स्थान सबसे छोटा है। रचनात्मक कार्यक्रमकी मदद बिना यह, स्वराज्यकी दृष्टिसे, बेकार रहेगा। वह कार्यक्रम केवल कागजपर नही, बल्कि ठोस और वास्तविक भारतव्यापी कार्यमें चलना चाहिए। यदि ईश्वरने मुझे ऐसा करनेका मौका दिया तो मैं, आशा है, यह दिखा सकूँगा कि कार्यकारी समितिने बनारसमें स्वदेशीपर जो प्रस्ताव[2] पास किया है, वह कितनी जबर्दस्त शक्ति रखता है।

भें०: परन्तु पण्डित मालवीय और श्री अणे तथा कार्यकारी समिति और संसदीय बोर्ड के बीच जो फूट है, उसके बारेमें आपको क्या कहना है?

गां०: आप इसे फूट कहना चाहें तो कह सकते हैं। यद्यपि हर पक्षने अलगाव को रोकनेका भागीरथ प्रयत्न किया, पर हमने देखा कि कुछ ऐसे बुनियादी मतभेद हैं जो दूर नही होते हैं। इसलिए हम मित्रोकी तरह अलग हो गये और यह आशा करते हैं कि संघर्षकी सम्भावनाके बावजूद हम मित्र बने रहेंगे।

१. हिन्दू और हिन्दुस्तान टाइम्सके प्रतिनिधियोंको संयुक्त रूपसे।

२. देखिए परिशिष्ट-३।

लड़ाई टाली जा सकती है, यह आशा वस्तुतः मैंने अभी छोड़ी नहीं है। यह कैसे होगा, यह तो मैं नहीं जानता, पर यह कैसे हो सकता है, यह मैं जानता हूँ। अपना सुझाव[1] मैंने पण्डित मालवीयजी को भेजा है। यदि उसका कुछ परिणाम निकला तो उसे कार्यकारी समिति और संसदीय बोर्डके आगे रखना होगा। कोई समझौता करनेका मुझे तो कोई अधिकार है नहीं।

भें० : पर अफवाह यह है कि आप और सरदार वल्लभभाई पटेल उपलब्ध सीटोंमें से आधी पण्डितजी और उनके प्रतिनिधियोंको देनेको सहमत हो गये हैं।

गा० : मैं आपके आगे इस अफवाहका तुरन्त खण्डन कर सकता हूँ। इस तरहका विभाजन वस्तुतः विश्वासघात होगा। कार्यकारी समितिका प्रस्ताव आखिर एक बहुत बड़े सिद्धान्तका प्रतिपादन करता है। कार्यकारी समितिके सदस्योंको यदि अपनी नीतिके सही होनेका विश्वास न होता, तो पण्डित मालवीय और श्री अणे-जैसे लोगोंके सहयोगको खोना गलत होता। कार्यकारी समिति और संसदीय बोर्डको, इसलिए श्वेत-पत्र और साम्प्रदायिक समझौतेवाले व्यापक प्रस्तावको पूरी तरह अमलमें लाना है और उसके सभी भाग कितने कारगर हैं यह जानना तथा औरोंको भी दिखाना है। यह काम, निश्चय ही, उपलब्ध सीटोंमें से आधी उन लोगोंको सौंपकर कभी नहीं किया जा सकता जो पण्डित मालवीयजी के दृष्टिकोणका प्रतिनिधित्व करते हैं। इसलिए सर्व-साधारणसे मेरा अनुरोध है कि वे इन सब अफवाहोंपर विश्वास न करें।

पण्डित मालवीय राष्ट्रके एक मँजे हुए सेवक हैं। वे उन थोड़े-से सबसे पुराने कांग्रेसियोंमें से हैं जो निरन्तर शानदार सेवा और त्याग करते आये हैं। मुझे इसमें जरा भी सन्देह नहीं है कि चाहे वे और या हमारे लिए किसी सम्मानजनक समझौते पर पहुँचना सम्भव हो जाये, जैसीकि मुझे आशा है कि हो जायेगा, पर वे ऐसा कुछ नहीं करेंगे जिससे कांग्रेसके प्रभावको क्षति पहुँचे। पर मेरा पहलेसे कोई अनुमान लगाना उचित नहीं होगा।

भें० : अनुशासनके बारेमें कार्यकारी समितिका प्रस्ताव[2] हमने पढ़ा है। ऐसे भी कांग्रेसी हैं जिनके विचार पण्डित मालवीयजी के विचारोंसे मिलते हैं। ऐसे लोगोंको, यदि वे कांग्रेस समितियोंके सदस्य हों तो, क्या श्री अणेकी तरह अलग हो जाना चाहिए ?

गा० : मेरा अपना विचार ऐसा नहीं है। इस तरहके मामलोंमें अनुशासनात्मक कार्रवाई केन्द्रीय कार्यकारी समितिसे मिलती-जुलती समितियोंतक ही पहुँच सकती है। प्रान्तीय कांग्रेस समितियोंमें ऐसे सदस्य हो सकते हैं जो मालवीयजी के दृष्टिकोणका प्रतिनिधित्व करते हों और समाचारपत्रों या सभाओंमें उसकी वकालत करते हों, पर उन्हें अनुशासनहीनताका दोषी नहीं माना जाता। उसी तरह जैसेकि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके सदस्य कार्यकारी समितिके विचारोंके विरुद्ध विचार व्यक्त करनेपर

१. देखिए पृ० २९०।
२. देखिए परिशिष्ट-४।

अनुशासनहीनताके दोषी नहीं माने जायेंगे। लेकिन प्रत्येक प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी, केन्द्रीय कार्यकारी समितिसे मिलती-जुलती, अपनी कार्य-समिति है या होनी चाहिए। वही वह वास्तविक कार्य-समिति है जिसे पूरे कांग्रेस कार्यक्रमको ईमानदारीसे और बिना किसी ननु-नचके अमलमें लाना है। यदि उसके किसी सदस्यका कार्यक्रममें विश्वास नही है, तो उसे कार्य-समितिसे अलग हो जाना चाहिए। लेकिन जबतक वह उसमें है, वह समाचारपत्रों या सभाओंमे कार्यक्रमकी आलोचना नहीं कर सकता। मेरा सदा यही विचार रहा है। इससे भिन्न कोई रुख किसी भी संगठनको टुकड़े-टुकड़े कर देगा।

भें० : क्या इसकी कोई सम्भावना है कि आप अभी या निकट भविष्यमें कुछ समय निकालकर आतंकवादकी समस्यासे निपटनेके लिए विशेष प्रयत्न करेंगे? क्रान्तिकारी नौजवानोंको नियन्त्रणमें लानेके लिए आप कौन-से विशेष तरीके काममें लाना चाहते हैं?

गां० : हिंसाके पंथका मैं निस्सन्देह दृढ़ विरोधी हूँ। कोई भी दिन ऐसा नही जाता जब मैं इस प्रश्नके बारेमें, जो मेरे लिए जीवन और मरणका प्रश्न है, कुछ-न-कुछ करता या सोचता न होऊँ। पर मैं जो-कुछ अब कर पाता हूँ, उससे बहुत अधिक करना चाहता हूँ। उसके लिए मुझे भारतीयोंकी और अंग्रेजोंकी, सरकारी और गैर-सरकारी, बाहरी मददकी जरूरत है। हिंसाका पंथ आसानीसे मरनेवाला नही है। पृथ्वीपर अहिंसाके राज्यकी स्थापनाके बारेमें मेरे कोई बहुत लम्बे-चौड़े स्वप्न नहीं हैं। कार्यके लिए जिस तरहका वातावरण चाहिए वह यदि मुझे मिल जाये, तो मैं अपने-आपको कुछ समयतक बंगालमें ही डुबो देना चाहूँगा और यह देखूँगा कि हिंसासे लड़नेकी वहाँ मेरे लिए कैसी सम्भावनाएँ हैं। पर मुझमें धैर्य है। यदि ईश्वरकी यह इच्छा हुई कि मै उस दिशामें और अधिक सक्रियतासे काम करूँ, तो वह मेरे लिए रास्ता खोलेगा।[1]

ईश्वरको बहुत धन्यवाद देना चाहिए कि यह दौरा निर्विघ्न और समय-समय पर निश्चित किये गये कार्यक्रमके अनुसार पूरा हो गया। इससे मेरे मनपर जो छाप पड़ी है, वह यह है कि अस्पृश्यता अब आखिरी सांस ले रही है। सभाओंमें लाखों लोगोंने भाग लिया है और वे सबके-सब तो ऐसे नही होंगे कि जो-कुछ मैंने उनसे कहा उसे बिलकुल समझते ही न हों। वे निश्चय ही इस विषयमें उदासीन नहीं थे। सनातनियोंने जो जबर्दस्त प्रचार किया है, उससे कोई अनभिज्ञ या उदासीन रह ही नहीं सकता। जन-साधारणके मनको इस आन्दोलनके विरुद्ध करनेमें उन्होंने कोई कोशिश बाकी नहीं छोड़ी है। सरासर झूठी बातोंका प्रचार किया गया है। इसलिए, यह कहना कि सभाओंमें लोगोंकी जो भारी भीड़ जमा हुई, वह केवल मेरे प्रति सम्मानकी सूचक थी, मेरे सन्देशसे उसका कोई सम्बन्ध नही था, गलत होगा। मुझे पूरा यकीन है कि उस सन्देशने जन-साधारणके विवेकको प्रभावित किया है।

१. साधन-सूत्रके अनुसार, उसके बाद गांधीजी से "हरिजन-दौरेके बारेमें उनकी धारणाके विषयमें पूछा गया"।

मैं इस बातसे भी पूरी तरह वाकिफ हूँ कि उनमें से सभी अभी अपने विश्वासोंपर अमल करनेको तैयार नहीं हैं। परन्तु जन-साधारण उस सन्देशकी सचाईमें विश्वास करने लगे हैं — मैं इसीको एक जबर्दस्त उपलब्धि मानता हूँ। इससे कार्यकर्त्ताओंका काम पहलेसे कहीं आसान हो जाता है। जन-साधारणने इस आन्दोलनमें दिलसे भाग लिया है, यह दिखानेके लिए मैं यह कह सकता हूँ कि पिछले नौ महीनोंमें जो आठ लाख रुपया एकत्रित हुआ है वह ज्यादातर बहुत ही गरीब लोगोंसे प्राप्त हुआ है। सार्वजनिक सभाओं या रेलवे स्टेशनोंपर इकट्ठे हुए पैसों और छोटे सिक्कोंको गिननेमें हिसाब रखनेवालोंको रोज घंटों लग जाते थे। लोग जिस ध्येयको बिलकुल पसन्द न करते हों, उसके लिए चन्दा देनेकी बात तो कभी सुनी नहीं गई। तीसरी बात इस दौरेके बारेमें मैं यह कहना चाहूँगा कि हरिजनोंमें बड़े पैमानेपर जागृति आ गई है और वह साफ दिखाई देती है। उनमें से बहुतोंने अपने-आप मेरे आगे इस तरहके बयान दिये हैं कि स्थिति काफी सुधर गई है और उन्हें विश्वास है कि अस्पृश्यता निकट भविष्यमें ही अतीतकी चीज हो जायेगी। उनकी तरह मेरा भी यही विश्वास है। आन्दोलन जिस तरह अब चल रहा है यदि उसी तरह चलता रहा — और वह उस तरह चलेगा मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है — तो हरिजनोंमें रोज ज्यादा जागृति आयेगी। और जब वे यह पूरी तरह समझ जायेंगे कि वे किस तरह ठोस ढंगसे स्वयं अपनी मदद कर सकते हैं और बहुत-सी बातोंमें कानून उनके साथ है, तो सवर्ण हिन्दू चाहें या न चाहें, हरिजनोंकी दशा जरूर सुधरेगी। पर, मुझे आशा है कि सवर्ण हिन्दू, अनिवार्य परिस्थितियोंसे बाध्य हुए बिना ही, यह महसूस करने लगेंगे कि अस्पृश्यता जिस रूपमें आज प्रचलित है वह बहुत गर्हित है और वे स्वयं उसे तिलांजलि दे देंगे। जो भी हो, अस्पृश्यता अब बहुत दिनों जीवित नहीं रह सकती।

यद्यपि मैंने इस दौरेके शुरूमें ही इस प्रश्नपर अपनी स्थिति स्पष्ट कर दी थी, फिर भी इस सिलसिलेमें बहुत-ही शरारत-भरा आन्दोलन चलाया गया है। आदतन मन्दिर जानेवाले लोग जहाँ लगभग एकमतसे मन्दिरको हरिजनोंके लिए खोलनेके पक्षमें नहीं हैं, वहाँ मन्दिर खोला नहीं गया है। और यह तो किसीने भी कभी नहीं कहा है कि यदि उपासकोंका लगभग सारा समुदाय भी मन्दिर खोलनेके पक्षमें हो, तो भी उसे नहीं खोलना चाहिए। जहाँतक मन्दिर-प्रवेश विधेयकका सवाल है, मैं उसे एक वैधानिक आवश्यकता मानता हूँ। पर मैं बार-बार यह घोषणा कर चुका हूँ कि मैं इस विधेयकको मिश्रित बहुमतसे असेम्बलीमें पास करवानेका कदापि समर्थन नहीं करूँगा। इसीलिए श्री च० राजगोपालाचारी विधान-मण्डलमें स्वतन्त्र रूपसे हिन्दू-भावनाकी जाँच कर रहे हैं, और यदि हिन्दू-भावना इस विधेयकके विरुद्ध हुई तो, जहाँतक मेरा सवाल है, यह वापस ले लिया जायेगा। इसलिए, इन सब संरक्षणोंको ध्यानमें रखते हुए, इसके विरुद्ध सारा आन्दोलन खत्म हो जाना चाहिए। अलबत्ता, मैं अपने वचनसे ही फिर जाऊँ तो बात दूसरी है। मेरी बड़ी इच्छा है कि हरिजन-सेवक संघने जो सुधारके कदम उठाये हैं, सभी हिन्दू उनपर पूरी एकाग्रतासे ध्यान दें।

अन्तमें, मैं यह और कह देना चाहता हूँ कि इन नौ महीनोंमें मन्दिर-प्रवेश आन्दोलन या विधेयकके लिए कुछ भी खर्च नहीं किया गया है। हरिजन-कोषसे कोई भी मन्दिर बनवाया नहीं गया है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ३-८-१९३४

३०६. तार: हीरालाल शर्माको[1]

मुगलसराय
४ अगस्त, १९३४

डॉ० शर्मा,
खुर्जा

ज्वर नहीं है। दोनों अच्छी तरह हैं। आशा है कि रामदासमें ताकत लौट रही होगी।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, (१९३२-४८), पृ०, ८३ के सामनेकी प्रतिकृतिसे।

३०७. पत्र: मणिलाल और सुशीला गांधीको

४ अगस्त, १९३४

चि० मणिलाल तथा सुशीला,

उपवास शुरू होनेमें अभी दो दिन बाकी हैं, तो मैंने सोचा, दो लकीरें लिख दूँ। इस समय हम लोग रेलगाड़ीमें हैं। कल सुबह वर्धा पहुँच जायेंगे। देवदास काशी आया था, इलाहाबादसे अलग हो गया।

इस बार तो मैंने पहले ही उपवास शुरू कर दिया है, ऐसा कहा जा सकता है। किन्तु इसका श्रेय मुझे कैसे मिलेगा? दौरेके अन्तिम दो दिनोंमें तबीयत लस्त हो गई, इसलिए चार दिनसे दूध नहीं लिया है। दो दिनसे फलोंपर हूँ। वे भी कम ही लेता हूँ। शक्ति और वजन फिर भी ठीक रहे हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि शरीरमें से जहरके सिवाय कुछ नहीं निकला है। अतः चिन्ताका कोई कारण

१. गांधीजी और कस्तूरबा बनारसमें बीमार पड़ गये थे।

नहीं है। यह पत्र पहुँचेगा, तबतक तो सब समाप्त हो गया होगा। इसलिए ऐसा भी कहा जा सकता है कि यह सब लिखना निरर्थक है। फिर भी, तुम इस समयकी मेरी दशा जान लो, यह अच्छा है।

लगता है, सुशीला तुम्हें ठीक मदद दे रही है। शरीर मजबूत होता, तो बहुत अधिक करती। फिर भी, जितना कर रही है, सन्तोषजनक है। अरुणके लिए अच्छा नाम चुनकर भेजा है, मिला होगा।

रामदासकी तबीयतके कारण चिन्ता उत्पन्न हो गई है। बिलकुल सूख गया है। उसके और डॉ० शर्माके लिए पास मिले, तो उन्हें भेजूं। लेकिन खुशामद करके पास मत लेना। आसानीसे मिलें, तो ठीक है।

मेरे साथ बा, महादेव, प्रभावती, बालजीभाई, काकासाहब, ठ० बापा और पृथुराज हैं। बाकी लोग वर्धा पहले चले गये हैं।

मणिलालने खूब चन्दा उगाहा होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८२४) से। सी० डब्ल्यू० १२३६ से भी; सौजन्य : सुशीला गांधी।

३०८. बातचीत : रामनामपर[1]

४ अगस्त, १९३४[2]

मेरे लिए तो रामनाम ही सब-कुछ है। ईश्वरकी जितनी विभूतियाँ हैं, उतने ही उसके नाम हैं। भक्तों द्वारा लिये जानेवाले इन नामोंकी कल्पना ऋषियोंने अपनी आजीवन तपस्याके बलपर इसलिए की है कि नामहीन परमेश्वरके साथ हम आत्मीयताका नाता जोड़ सकें। वैसे तो रामनामके अलावा और भी मन्त्र हैं, लेकिन मेरे लिए यही सर्वोत्तम है। यह मेरे जीवनका अंग बन गया है। बचपनमें जब कभी मैं भय या संकटका अनुभव करता था तो मेरी धाय मुझे रामनाम जपनेको कहा करती थी और ज्यों-ज्यों मुझमें समझ आती गई और मेरी उम्र बढ़ती गई, यह अभ्यास मेरा स्वभाव ही बन गया। मैं यह भी कह सकता हूँ कि यह शब्द मेरी जीभपर भले न हो पर चौबीसों घंटे मेरे मानस-पटलपर अंकित रहता है। यह सदैव मेरा त्राणकर्त्ता रहा है और मैंने सदैव इसपर भरोसा किया है। विश्वके आध्यात्मिक साहित्यमें तुलसीदास कृत 'रामायण' का स्थान प्रथम पंक्तिमें है। जो

१ और २. यह महादेव देसाई द्वारा लिखित "आत्मशुद्धि सप्ताह" से उद्धृत है। महादेव देसाईने बताया है कि "उपवाससे दो दिन पूर्व" गांधीजी ने यह बातचीत अपने एक मित्रके साथ की थी जो उनके साथ यात्रा कर रहे थे।

मनोरमत्व मुझे इसमें मिला वह 'महाभारत' में नहीं मिला और न वाल्मीकि 'रामायण' में ही मिला।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १७-८-१९३४

३०९. भेंट: जबलपुरमें[1]

४ अगस्त, १९३४

महात्मा गांधी कमजोरीके बावजूद, प्रसन्न नजर आते थे। पूछनेपर उन्होंने बताया कि वे इस समय बिलकुल ठीक हैं और उनका तापमान सामान्य है। उन्होंने यह भी बताया कि वे अपना सात दिनका उपवास ७ अगस्तसे शुरू करेंगे। उन्होंने स्थानीय राजनैतिक वातावरण और दलगत झगड़ोंके बारेमें भी पूछताछ की।

सेठ गोविन्ददासने उसके उत्तरमें उन्हें बताया कि यद्यपि वातावरण दलगत भावनाओंके कारण तनावपूर्ण है, पर कार्यकर्त्ताओंके विरोधी गुटोंमें एक सन्तोषजनक समझौता करानेके प्रयत्न चल रहे हैं। उन्होंने यह भी कहा कि यदि कोई सन्तोष-जनक समझौता नहीं हो पाया तो उन्होंने, अपने मित्रों सहित, राजनैतिक क्षेत्रसे अलग हो जाने और धैर्यसे उस दिनकी प्रतीक्षा करनेका निश्चय किया है जब मातृभूमिको उनकी सेवाओंकी पुनः आवश्यकता होगी।

महात्मा गांधीने सेठ गोविन्ददासके विचारोंसे सहमति प्रकट की और कहा कि झगड़े और टकरावको टालनेके लिए निष्ठावान कांग्रेसियोंको उन्होंने हमेशा यही सलाह दी है कि वे दलगत भावनाके क्षेत्रसे अलग हो जायें और अपनी शक्तियोंको अन्य रचनात्मक और ठोस कार्यक्रममें लगा दें।

महात्मा गांधीने लोगोंसे हरिजन-कोषमें चन्दा देनेकी अपील की और कुछ रकम वहीं इकट्ठी की गई।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ७-८-१९३४

१. वर्धा जाते हुए।

३१०. सन्देश : जन्म-दिवसपर[1]

५ अगस्त, १९३४

मैं यह बात कभी समझ ही नही सकता कि जिन लोगोंके हृदयमें सात लाख गाँवोमें रहनेवाले करोड़ो अधभूखे लोगोके लिए एक बूँद भी सहानुभूति है, वे कताई या खादीका विरोध कर सकते हैं।

मो० क० गांधी

गुजरातीकी फोटोनकल (जी० एन० ७७५२) से।

३११. "हरिजन" के लिए

[६ अगस्त, १९३४][2]

अब मेरी हरिजन-यात्रा समाप्त हो गई है, और इसके साथ ही वह पूरा वर्ष भी जिसमें मैंने हरिजन-कार्यके लिए अपना सारा समय देनेकी प्रतिज्ञा की थी समाप्त हो गया है। इसलिए लोग अब मेरी भावी प्रवृत्तिके विषयमे अनेक अटकलें लगाने लगे हैं। हर्षकी बात है कि उपवासके कारण मुझे तय कर लेना है कि इस उपवास-कालके दरम्यान तथा इसके कुछ समय बाद मेरा क्या कार्यक्रम रहेगा। उपवासको एक तरफ रख दें, तो भी मैं यह कह देना चाहता हूँ कि यद्यपि राजनीतिके विषयमे बोलने और लिखनेकी मुझे स्वतन्त्रता है, पर जहाँतक हो सके मैं उससे विरत रहना चाहता हूँ। गत वर्ष जिस संयमके बन्धनमे मैंने अपने-आपको बाँध रखा था, उस संयमके आनन्दकी स्मृति अब भी वैसी ही ताजी है और यह संयम-जनित आनन्द सहज ही मुझे राजनीतिक भाषणो और लेखोकी प्रवृत्तिमे बहनेको बढ़ावा नही दे रहा है। हरिजन-कार्य और उससे मिलती-जुलती दूसरी प्रवृत्तियोके सम्बन्धमें मेरा पक्षपात वैसा ही कायम है, और मुझे आशा है कि वह मेरे मरते दमतक कायम रहेगा।

१. बॉम्बे क्रॉनिकल; १५-८-१९३४ में यह 'महात्माका जन्म-दिवस' शीर्षकसे छपा था। अनुमान है कि यह सन्देश १५ सितम्बरसे ७ अक्तूबर १९३४ तक होनेवाले गांधी जयन्ती उत्सवके सिलसिलेमें दिया गया था।

२. १७-८-१९३४ के हरिजनमें महादेव देसाईने "शुद्धि-सप्ताह" के दौरान गांधीजी के दैनिक क्रिया-कलापका विवरण देते हुए इस तारीखके अन्तर्गत बताया है कि एकदम थके होनेके बावजूद [गांधीजी ने] कुछ पत्र और गत [सप्ताहके] हरिजनके लिए दो लेख लिखे। वे लेख यह और अगला शीर्षक है।

अपनी सामान्य प्रवृत्तिके विषयमें जो मैंने ऊपर बतलाया है, वह 'हरिजन'के विषयमें तो विशेष रूपसे लागू होता है। निस्सन्देह मुझे राजनीतिक कार्य अधिक करने पड़ेंगे। शायद सविनय अवज्ञा भी मुझे करनी पड़े, पर 'हरिजन' का उसके आरम्भसे जो रूप रहा है, आगे भी वही कायम रहेगा, राजनीतिसे तो वह निश्चय ही दूर रहेगा। किन्तु मुझे आशा है कि अब दूसरे रचनात्मक कार्योंके लिए, खासकर हरिजनोंसे सीधा सम्बन्ध रखनेवाले कार्योंके लिए मुझे थोड़ा समय मिलेगा, तो उनकी चर्चा मैं अवश्य 'हरिजन'में करना चाहूँगा। इसलिए हरिजन-कार्यके साथ-साथ, समय और प्रसंगके अनुसार, साम्प्रदायिक-एकता, खादी और खादीकी सभी प्रक्रियाओं तथा स्वदेशीकी दूसरी शाखाओंका कार्य, मद्यनिषेध-कार्य और उसका रचनात्मक पहलू और अस्पृश्यवत् समझी जानेवाली जरायमपेशा तथा आदिम जातियोंकी स्थिति सुधारनेका कार्य — इन सब विषयोंकी चर्चा मैं 'हरिजन'में करता रहूँगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १०-८-१९३४

३१२. स्वदेशी

[६ अगस्त, १९३४][1]

गत वर्ष मेरे उपवासके उपरान्त, विश्राम-कालके तुरन्त बाद, या इस वर्षके शुरूमें 'स्वदेशी'में दिलचस्पी रखनेवालोंकी ओरसे यह आग्रह किया गया था कि मैं 'स्वदेशी'की एक ऐसी परिभाषा बना दूँ, जिससे उनके मार्गमें आनेवाली अनेक कठिनाइयाँ दूर हो जायें। मिलके बने कपड़ेमें स्वदेशीके जो अनेक पहलू हैं, उन सबका ध्यान मुझे रखना था। कई परिभाषाएँ जो मुझे सुझाई गईं, उन सबको मैंने मिलाकर देखा। श्री शिवराव और श्री जालभाई नौरोजी तथा अन्य सज्जनोंके साथ मैंने लिखा-पढ़ी भी की। मैं कोई ऐसी परिभाषा न बना सका जो सभी प्रसंगोंपर काम दे सके। मुझे मालूम हुआ कि व्यापक व्याख्या बनाना तो असम्भव है। बादको मेरे देशव्यापी दौरेमें मुझे अनेक अनुभव हुए और संस्थाओंका काम किस तरह चल रहा है, यह देखनेके भी मुझे अनेक अवसर प्राप्त हुए। इस सबसे मैं इस नतीजे पर पहुँचा कि 'स्वदेशी'का काम जिस तरह आज चल रहा है, वह तो एक प्रकारसे जनताको धोखा दिया जा रहा है। यह बात नहीं कि जान-बूझकर कोई आँखोंमें धूल झोंक रहा है। यह भी मैंने देखा कि हमारे बहुत-से योग्य कार्यकर्ताओंकी शक्ति इस व्यर्थके प्रयत्नमें ही नष्ट हो रही है और वे आत्मवंचनामें पड़े हुए हैं। मैं यहाँ जो ऐसी

१. देखिए पिछले शीर्षककी पाद-टिप्पणी संख्या २।

सख्त भाषाका प्रयोग कर रहा हूँ, उससे यह न समझ लिया जाये कि स्वदेशीके प्रचारका काम करनेवाले बेईमान हैं, स्वदेशीके सम्बन्धके केवल मेरे मनोगत विचार ही इन कडे शब्दोमें प्रकट हो रहे हैं। वे बेचारे तो काम करते चले जा रहे थे, उन्हे यह थोड़े ही मालूम था कि इस काममें किसी तरहकी कोई धोखाधड़ी या आत्मप्रवचना भी हो सकती है।

मैं अपने अभिप्रायको और अधिक स्पष्ट करूँगा। जिन चीजोके प्रचारके लिए खास सहायता करनेकी जरूरत नही, उन्ही चीजोकी प्रदर्शनी हम करते फिरते है। इसका यह परिणाम होता है कि उन चीजोकी या तो कीमतें बढ जाती हैं या एक-दूसरेके साथ स्पर्धा करनेवाली उन्नतिशील फर्मोमें अवाछनीय रस्साकशी होने लगती है।

कपडेकी, शक्करकी और चावलकी मिलोंको हमारी मददकी दरकार नही है। किन्तु फिर भी यदि हम इन मिलोको बिनमांगी मदद देते रहेंगे, तो चरखा, करघा, खादी, ईख पेरनेका कोल्हू और विटामिनोंसे युक्त पोषक तत्त्वोसे भरा हुआ गुड़ और ओखली-मूसलका कुटा हुआ चावल — गांवकी इन सब चीजोका हम नाश कर देंगे। इसलिए हमारा यह स्पष्ट कर्त्तव्य है कि गांवके चरखेको, गांवके कोल्हूको और गांवकी ओखलीको किस रीतिसे जिन्दा रखा जा सकता है, इसका हम बराबर शोध करते रहे। चरखे, कोल्हू और ओखलीके ही मालका प्रचार किया जाये। उनके गुणोको बतलाया जाये। उनमे काम करनेवाले लोगोंकी स्थितिकी जांच-पड़ताल की जाये और कल-कारखानोंके कारण बेकार हुए कारीगरोकी गणना करके ग्रामके इन साधनोंके ग्राम्य रूपमें ही सुधार करनेके तरीके ढूंढकर इन्हे मिलोंकी प्रतिस्पर्धाका मुकाबला करने योग्य बनाया जाये। गांवके इन उद्योग-धन्धोंके सम्बन्धमें हमने कितनी भयंकर और अक्षम्य उपेक्षा दिखाई है। इन उद्योगोंको जिन्दा रखनेके प्रयासमें कपड़े या शक्कर या चावलकी मिलोंके साथ कोई झगडा नही है। विदेशी शक्कर या विदेशी कपड़ा या विदेशी चावलकी अपेक्षा तो हमें अपने देशकी मिलोमें ही बना हुआ कपड़ा, शक्कर या चावल काममें लाना चाहिए। अगर विदेशी स्पर्धाके मुकाबलेमें खड़े रहनेकी उनमें शक्ति न हो, तो उन्हें पूरी मदद भी मिलनी चाहिए। पर आज तो ऐसी किसी मददकी जरूरत नही है। विदेशी मालसे देशी मिलोका माल बराबर टक्कर ले रहा है। आवश्यकता तो आज ग्रामोद्योगोके संरक्षण की है। बचे-खुचे ग्रामोद्योगोंमे लगे हुए लोगोंकी हमें रक्षा करनी है, और विदेशी या स्वदेशी मिलोके आक्रमणसे उन बेचारोको बचाना है। सम्भव है कि खादी, गुड़ और ओखलीका कुटा चावल मिलके मालसे घटिया हों, और इसीसे वे उसके मुकाबलेमें न टिक सकते हों। पर असल बात तो यह है कि खादीके उद्योगके बारेमें जितनी खोज-बीन हुई है, उतनी गुड और हथकुटे चावलके धन्धेमें लगे हुए हजारों आदमियोकी स्थितिके सम्बन्धमे नहीं हुई। इस काममें तो देशभक्तोकी एक भारी सेना खप सकती है। पाठक कहेंगे, 'पर यह तो बड़ा कठिन काम है।' किन्तु यह काम जितने महत्वका

है, उतना ही दिलचस्प है। मेरा तो यह दावा है कि यही काम सच्चा, सफल और सौ फीसदी 'स्वदेशी' है।

पर यह तो मेरी भूमिका मात्र है। मैंने तो ऊपर सिर्फ तीन ही बड़े-बड़े उद्योगोंका उदाहरण देकर बताया है कि स्वदेशीका प्रचार करनेवाले इन्ही असंगठित ग्रामोद्योगोके ऊपर अपना समग्र ध्यान एकाग्र करें, जो स्वेच्छासे दी जानेवाली व समझदारीसे संगठित सहायताके बिना मर रहे हैं।

इनके अतिरिक्त अन्य अनेक ऐसे ग्रामीण और नागरिक उद्योग-धन्धे हैं, जिन्हें जीवित रखनेके लिए सार्वजनिक सहायताकी आवश्यकता है, कारण कि इन उद्योगोकी बदौलत हजारों गरीब कारीगरोंको रोटी मिल रही है। इस सम्बन्धमें जितना भी काम किया जाये, थोड़ा है। यह समझ लेना चाहिए कि इस काममें जितना समय हमें देंगे, वह योग्य कारीगरोंको जीवित रखनेमें खर्च होगा।

मेरा दृढ़ विश्वास है कि अगर यह काम सलीकेसे किया जाये तो इसे चलानेवाले विभागको पैसा तो इसीमें से मिलता रहेगा। नई प्रतिभाको प्रोत्साहन मिलेगा, अनेक शिक्षित और अशिक्षित लोगोंको, बिना दूसरोके मुँहका कौर छीने, अनायास काम मिल जायेगा और हमारा देश जो नित्यप्रति अधिकाधिक दरिद्र होता जा रहा है, उसकी सम्पत्तिमें करोड़ोंकी वृद्धि हो जायेगी।

इसमें सन्देह नही कि इस काममें लाभ काफी है, और मन भी इसमें खूब लगेगा। हमारे यहाँ आज जितने भी स्वदेशी संघ काम कर रहे हैं, वे सब-के-सब इस काममें लगा दिये जायें, तो भी पूरा न पड़ेगा। मैंने ऊपर जो लिखा है, वह सब और उससे भी अधिक कांग्रेस कार्य-समितिके हालके 'स्वदेशी' सम्बन्धी प्रस्ताव[1] में है। हमारे मुल्कमे जो रचनात्मक प्रतिभा एवं शक्ति है, उसको इससे असीम कार्य मिल सकता है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १०-८-१९३४

१. देखिए परिशिष्ट-३।

३१३. तार : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

वर्धा[1]
६ अगस्त, १९३४

ब्रजकृष्ण
कटरा खुशालराय
दिल्ली

मुझे कोई भी कष्ट नहीं है। विश्वास बनाये रखो। स्वस्थ रहो। काम करते रहो।[2]

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २४१७) से।

३१४. एक पत्र

६ अगस्त, १९३४

प्रिय . . .

जमनालाल और स्वामी आनन्द कहते हैं कि तुमने विभिन्न व्यक्तियोंको भिन्न-भिन्न प्रकारकी बातें बताई हैं, तुमने स्वामी आनन्दको दिये गये अपने कई वायदे पूरे नहीं किये हैं और उनको बहुत ज्यादा शक है, बल्कि लगभग विश्वास है कि तुमने लड़कीके बारेमें कहानी गढ़ी है। मुझे यह सब अविश्वसनीय लगता है। तिसपर भी यदि तुम लड़कीका नाम मुझे नहीं बता सकते, तो मुझे भी न चाहते हुए उसी निष्कर्षपर पहुँचना होगा जिसपर ज० या स्वामी शीघ्र पहुँचते जा रहे हैं।

लड़कीके बारेमें तुम्हारी चिन्ता निश्चय ही व्यर्थ है। तुम्हें यह जानकर आश्चर्य होगा कि . . .[4] तथा उनकी पत्नी यह पत्र लिखते समय मेरे पास बैठे हैं। मुझे

१. अगले शीर्षकोंमें इस जगहका नाम नहीं दिया जा रहा है।

२. चाँदीवाला गांधीजी के संकल्पित उपवासके बारेमें चिन्तित थे और उन्होंने उनके पास पहुँचनेकी इच्छा व्यक्त की थी।

३ व ४. नाम छोड़ दिये गये हैं।

यदि यह पता चला कि तुम एक ऐसे युवक हो जो तरुणाईके दिनोंमें किशोर वयकी लड़कियोंके सम्मानको आघात पहुँचा सकता है, तो मुझे गहरा धक्का लगेगा।

ईश्वर तुम्हारा पथप्रदर्शन करे और तुम्हें मदद दे।

सस्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य: नारायण देसाई।

३१५. पत्र: रणछोड़लाल ए० शोधनको

६ अगस्त, १९३४

चि० रणछोडलाल,

कल जमनालालजी से तुम्हारी आर्थिक स्थितिकी बात सुनकर मैं तो भौंचक्का ही रह गया। मैंने कभी नही सोचा था कि तुम्हारे पास जमा किया गया पैसा कभी जोखिममें भी पड़ सकता है। तुम्हारी साख मेरी नजरमें बैंक ऑफ इंडियासे ज्यादा थी। आज वैसी स्थिति नहीं है। नही है, तो क्यों नहीं है? तुमने क्यों मुझसे एक शब्द भी नही कहा? तुम मेरे पुत्रके समान हो, तो तुम्हें अवश्य बताना चाहिए था। जमनालालजी की स्थिति ऐसी हुई होती, तो वे मुझे कभी बिना बताये नही रहते।

संक्षेपमें सारा ब्यौरा मुझे बताओ। अब इतना करना, एक कौड़ी भी अपने पास मत रखना। घरबार, जेवर भी लेनदारोंको दे देना। मोतीबहन अथवा रमाके नामसे कहीं कुछ जमा किया गया हो, तो उसे भी उन्हें और तुम्हें लेनदारोंका समझना चाहिए। अच्छे दिनोंमें स्नेहियोंको दिया गया दान बुरे दिनोंमें लेनदारकी अमानत समझा जाना चाहिए। कठिन समय तो सबपर आता है, किन्तु उस समय जो हरिश्चन्द्रके समान पत्नी और पुत्रको बेचकर भी अपनी लाज बचाता है, उसीके बारेमें कहा जाता है कि वह जीना जानता है। हरिश्चन्द्र जैसा और हरिश्चन्द्र जितना पुरुषार्थ करनेमें तुम संकोच नही करोगे, यही मेरी आशा है, यही मेरा आशीर्वाद है।

मेरे उपवासकी चिन्ता मत करना। अपनी साधुताका विश्वास दिलाकर मुझे सान्त्वना देना।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य: नारायण देसाई।

३१६. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

[६ अगस्त, १९३४]

चि० ब्रजकृष्ण,

तुमारा तार मिला था। पत्र भी मिला। तारका उत्तर[1] तारसे दिया है। खेद होता है इतनी अधीराइ बताते हो। इसको मैं कैसे उत्तेजन दू? तुमारे ऐसी बातोंमें भी संयम पालन करना चाहिये। क्या सेवा करोगे? आश्रम सेवक और सेविकाओंसे भरा है। वहांसे नवको रोक रहा हू। मेहनाको भी रोक लिया है विधानको भी। अब तुम को कैसे इजाजत दूं? जो हो सके वह कार्य वहा करो। हरिजन बस्ती साफ करो। कोई साथ आवे तो ले जाओ। म्युनिसिपाल्टिीने कुछ किया? दामोदरदास का उत्तर अब तक नहि मिला? उनका क्या अर्थ है? मुझे शीघ्र बताओ। उनकी बाते ऐसी है मैं ऐसे नहि रहने दे सकता हू।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४१८) से

३१७. वक्तव्य : उपवासपर[2]

६ अगस्त, १९३४

कल (मंगलवार)से मैं सात दिनका उपवास शुरू कर रहा हूँ। इसलिए मैं इस बातपर फिर जोर देना चाहूँगा कि हरिजन कार्यकर्त्ताओंके लिए यह जरूरी है कि वे अपनेको और ज्यादा शुद्ध करके जो कार्य सम्मुख है उसपर अधिक एकाग्र होकर, इस ध्येयमें हाथ बँटायें। जबतक ऐसे कार्यकर्त्ता, जिनकी इस कार्यमें आस्था है और जो धैर्यपूर्वक श्रम करते रहकर स्वयं शुद्ध और सत्यनिष्ठ हो गये हैं, निरन्तर अथक प्रयास नहीं करेंगे, तबतक अस्पृश्यताके इस दानवको नष्ट नहीं किया जा सकेगा। हर किसीको यह भी समझ लेना चाहिए कि उपवास हर कोई जब चाहे तब नहीं कर सकता। आस्थाहीन उपवासके परिणाम विनाशकारीतक हो सकते हैं।

१. देखिए पृ० ३११।

२. इसे महादेव देसाईके "शुद्धिकरण सप्ताह" से उद्धृत किया गया है। महादेव देसाईने बताया है कि इसे गांधीजी ने "संध्याकी ओर" शीर्षकसे लिखा था।

अयोग्य व्यक्तियों द्वारा प्रयुक्त होनेपर इस तरहके सभी आध्यात्मिक शस्त्र खतरनाक हो जाते है।

कांग्रेसजनों और कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओंको मैं एक चेतावनी देना चाहता हूँ। अगले सात दिनोमे मैं उन्हीके बारेमें सोचता रहूँगा; मैं पिछले महीने भी उन्हीके बारेमें सोचता रहा हूँ। कुछ स्थानोंपर कांग्रेसके चुनाव जिस कटुताके साथ लड़े गये है और काग्रेसी कार्यकर्त्ताओंने वोटोंमें चालाकी करके और आदतन खादी पहननेके नियमका स्पष्ट दुरुपयोग करके जो गंदे तरीके अपनाये हैं, उनसे मेरा मन भय और निराशा से भर गया है। संविधान सच्चे और अहिंसक तरीकोके लिए कहता है। कुछ प्रान्तोमें, कुछ चुनावोके अन्दर, सत्य और अहिंसाका पूर्ण अभाव रहा है। यद्यपि मेरे उपवासको इन गन्दे तरीकोसे कुछ लेना-देना नही है, पर मेरी बड़ी इच्छा है कि कांग्रेसी कार्यकर्त्ता मेरे इन शब्दोसे मेरी पीड़ाको समझें और उसे कम करनेके लिए इस शुद्धीकरण-सप्ताहमें अपना अन्तर्निरीक्षण करें और कांग्रेसको उसके सिद्धान्तोके अनुरूप संगठन बनानेका संकल्प करें, जिससे कि वह सभी लोगोको, बिना किसी कठिनाईके, अपने सिद्धान्तोंकी सजीव मूर्त्ति लगे। इसकी शुद्धिके लिए मैं निश्चय ही प्रार्थना करूँगा। इस सबसे बड़े राष्ट्रीय संगठनकी विशुद्धतासे हरिजन-आन्दोलनको निश्चय ही सहायता मिलेगी, क्योकि कांग्रेस इस अभिशापको मिटानेके लिए वचनबद्ध है।

अन्तमें, मैं भारतके और बाहरके, हर धर्म और जातिके, सभी मित्रोसे यह चाहता हूँ कि वे यह प्रार्थना करें कि ईश्वर इस छोटी-सी आगामी तपस्याको सफल करे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १७-८-१९३४

३१८. पत्र : मीराबहनको

७ अगस्त, १९३४

चि० मीरा,

६ बजे प्रातःकाल मैंने उपवास शुरू किया। अब ७ बजे हैं। मुझे विश्वास है कि सप्ताहके इन दिनोमें तुम अशान्तिका अनुभव नही करोगी। बेचैनीका कोई कारण नही है। लेकिन मेरे इस सब-कुछ कहनेसे फायदा क्या? इस पत्रके पहुँचनेसे पहले तो उपवास दो बार पूरा हो सकता है।

अपनी चेतावनी दोहराकर तुमने बिलकुल ठीक ही किया है। (इतना लिखनेके बाद मुझे बड़ी नीद आने लगी, इसलिए मैं सो गया था। अब सुबहके साढ़े सात बजे हैं) जबतक तुम्हें ऐसा लगता रहे कि चेतावनी देनी चाहिए, तुम देती जाओ, और वह भी जोरदार शब्दोमें। हो सकता है कि किसी दिन इसका पूरा असर

हो। कुछ अंशोमें तो असर अब भी है। यह मुझे सतर्क रखती है। अगर. . .[1]ने मेरा अनुकरण किया तो निश्चय ही उसके मनमें विकृति थी। क्योंकि ऐसा सोचनेका तो कोई कारण नही था कि किसी अन्य व्यक्तिपर भी मेरे कामोका वैसा असर पडा था। हाँ, यह हो सकता है कि मुझे गफलतमें रखा गया हो या फिर तुम यह कहना चाहती हो कि आश्रमकी हर गिरावट मेरी आदतके कारण हुई। जहाँ तक . . .[2]का सम्बन्ध है, जमनालालजी और स्वामी आनन्द, जिनसे . . .[3]की लम्बी बातचीत हुई है, लगभग इस नतीजेपर पहुँचे हैं कि . . .[4]ने नाजायज फायदा उठानेके लिए पूरी कहानी गढी है। वे दोनो ही श्रृंखलाकी कड़ियोको जोड़कर पूरा कर चुके हैं। लेकिन यह सब तो सहज ही लिख दिया है। तुम्हे इस सबसे अशान्त नही होना चाहिए। मै तो नही होता। मै जरूरी कदम उठाता हूँ और उसके बाद उसके बारेमें सब-कुछ भूल जाता हूँ। तुमने इस मामलेपर पूरा अनुच्छेद लिखा है। इसलिए यह जवाब लिख दिया है।

अभी तो मेरे मनमे बड़ी उथल-पुथल हो रही है। इस समय काग्रेसकी भ्रष्टता जैसा मुझे खाये डाल रही है, ऐसा पहले कभी नही हुआ। मै मित्रोसे सलाह-मशविरा कर रहा हूँ कि मेरा काग्रेस छोडकर और बाहर रहकर उसके आदर्शोको पूरा करने की कोशिश करना कहाँतक ठीक होगा।[5] भ्रष्टाचारसे मेरा बेचैन होना अच्छा है। मै जल्दबाजीमें कोई कदम नही उठाऊँगा, मगर उठाना तो है ही। मै यह सोचता हूँ कि यदि मै वर्धामें बैठ जानेको तैयार नही हूँ या विनोबा अकेले उसकी व्यवस्थाकी जिम्मेदारी नही ले लेते, तो यहाँकी लडकियोकी संस्था बन्द कर देनी चाहिए। उपवासके दिनोमें वे इसपर विचार करेगे। यही दो चीजे मेरे मनमे इस समय मुख्य हैं।

बाकी समाचार तुम्हे महादेव या प्यारेलालसे मिलेगे। ये दोनो और बाल, बापा, देवराज तथा पृथुराज यहाँ हैं। मैंने जमनालालजी से कानकी तकलीफके लिए बम्बई जानेका आग्रह किया है। बा, प्रभावती और ओम यहाँ हैं। और वसुमती तथा अमतुस्सलामने यहाँ आनेका आग्रह किया है। अमतुस्सलाम कुछ बेहतर है, लेकिन बिलकुल ठीक नही है।

तुम्हारा वहाँका काम बेशक भारी है। तुम असाधारण शक्ति लगा रही हो। इससे ज्यादा और क्या कर सकती हो? वहाँसे लौटनेकी जल्दी न करना। बीमार न पड़ना।

कमलानी[6]का दिमाग खराब होना दुखद समाचार है। आशा है कि तुम्हे उसके पास जानेका समय मिला होगा। तुम्हारी उपस्थिति मात्रसे उसे लाभ होगा।

बापू

१, २, ३ और ४. नाम छोड दिये गये हैं।

५. जो उन्होंने अन्ततोगत्वा १७ सितम्बर, १९३४को किया, देखिए खण्ड ५९।

६. ए० एस० कमलानी, सचिव, फ्रेंड्स ऑफ इंडिया लीग, लन्दन

[पुनश्चः]

अफसोस, मैं अभीतक मैक्सवेलको नही लिख सका हूँ।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२९४) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७६० से भी।

३१९ पत्र : अगाथा हैरिसनको

दुबारा नहीं पढ़ा

७ अगस्त, १९३४

प्रिय अगाथा,

तुम्हारे प्रेम-पत्र बराबर मिलते रहते हैं। और चूँकि तुम मेरे पास (अभी जो) अनेकों साथी हैं, उनमें से किसी-न-किसीसे मेरे हाल बराबर पाती रही हो, इसलिए मैं तुम्हें पत्र नही लिखता। यह पत्र तुम्हे मैंने यह सूचित करनेके लिए लिखा है कि आज सुबह ६ बजेसे मैंने अपना छोटा-सा उपवास शुरू किया है। इसकी तुम चिन्ता न करना। लेकिन 'चिन्ता न करना' कहनेसे लाभ ही क्या है; मैं जानता हूँ कि यह पत्र तुम्हे जब मिलेगा तबतक तो उपवासकी एक हल्की-सी याद ही बाकी रह जायेगी।

मुझे इस बातमे कोई सन्देह नहीं है कि यह उपवास हरिजन-कार्य सम्बन्धी दौरेका सही समापन है। यह एक महान आध्यात्मिक अस्त्र है। प्रोटेस्टैंट धर्मने उपवास का एक तरहसे बिलकुल बहिष्कार कर रखा है; यह उस संस्थाके लिए स्पष्ट ही हानिकारक बात है। संसार देख रहा है कि उपवास आज एक बड़ी शक्ति है। यों मुझे इसके बारेमें बहस नही करनी चाहिए। यदि यह आत्माकी एक अभीप्ट वस्तु है, तो प्रॉटेस्टैंट लोगोमें भी अनेक सत्यान्वेपी ऐसे है जो देर-सवेर अपने धर्ममें उपवासके त्यागको कमीके रूपमें महसूस करेंगे ही।

इस महीने मैं वर्धामे आराम करूँगा और अपने विचारोंको सुसम्बद्ध करूँगा। मैं नहीं जानता कि सितम्बरमें मेरे लिए क्या बदा है। लेकिन यह मैं जानता हूँ। मेरी हार्दिक इच्छा है कि सीमान्त प्रान्त या बंगाल या बारी-बारीसे दोनों जगह जाऊँ। मैं समझ नही पाया हूँ कि पहले कहाँ जाना चाहिए। यदि तथाकथित लाल कुर्त्तियोंवाले लोग हिंसक है, तो मुझे वह बात समझ लेनी चाहिए और घोपित कर देनी चाहिए कि वे हमारे नही है। और यदि वे हिंसक नहीं है, तो मुझे उनको उस कलंकसे बचाना चाहिए जो उनपर लगाया गया है। जो झूठ नही बोलते और जो निर्णय कर सकनेमें समर्थ है, ऐसे लोगोंने उनकी अहिंसाको प्रमाणित किया है। ये लोग हैं, खुर्शेद नौरोजी, एल्विन और देवदास। खुर्शेद काफी देशाटन कर चुकी है और वह निष्कलंक और प्रामाणिक महिला है। एल्विनको तुम जानती हो और देव-,

दासको भी तुम जानती हो। ये तीनों ही चश्मदीद गवाह हैं। और फिर भी ब्रिटिश सरकार उनके हिंसक होनेके बारेमें जो प्रमाण रखती है वह भी उतना ही जोरदार है। यह सभी बातें एक साथ तो नहीं हो सकतीं। यह पहेली केवल तभी सुलझ सकती है जब मुझे जानेकी और उनके बीच रहनेकी इजाजत दे दी जाये। यह एक सैद्धान्तिक आवश्यकता है, जो बंगाल जानेकी अपेक्षा एक दृष्टिसे ज्यादा आवश्यक है। मैं सत्यका पता लगानेके लिए सीमान्त जाऊँगा और तदनुसार काम करूँगा। मैं बंगाल किसी सत्यका पता लगाने नहीं बल्कि आतंकवादियोंको आतंकवादसे अलग हटानेका प्रयत्न करने जाऊँगा। अब्दुल गफ्फार खाँ और जवाहरलालकी कैद एक बेचैन करनेवाली, सर्वथा अनावश्यक और खीझ उत्पन्न करनेवाली बात है। लेकिन उनका यह कैदमें रहना जहाँ मुझे चिन्तित करता है, वहाँ अभी इसमें मुझे संघर्ष छेड़नेका पर्याप्त कारण नहीं दिखाई देता। अब तुम्हें मेरे मस्तिष्ककी रूपरेखा मिल गई। महीनेके अन्ततक मेरे सोचनेकी ऐसी ही दिशा रहनेवाली है। इस समय मेरा मस्तिष्क इस बातमें लगा है कि कांग्रेसकी शुद्धि कैसे की जाये और यहाँ आश्रमको छोटे-मोटे असत्य और ब्रह्मचर्य-भंगके मामलोंसे कैसे मुक्त किया जाये। शायद तुम इस तरहकी चीजोंमें काफी दिलचस्पी नहीं रखती हो। इस समय डॉक्टरोंकी एक फौजने मेरे लिखनेमें बाधा डाल दी है। उन्होंने शारीरिक प्रक्रियाको बिलकुल दुरुस्त कर दिया है और वे कहते हैं कि उपवासके इस प्रथम दिन भी मुझे लिखनेका काम बिलकुल नहीं करना चाहिए। इसलिए अब बस और बहुत-बहुत प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४७८) से।

३२०. भाषण : प्रार्थना-सभा, वर्धामें[1]

७ अगस्त, १९३४

मैं अपने अनुभवके आधारपर कह सकता हूँ कि उपवास आश्रम-जीवनका एक आवश्यक अंग है। लालनाथ पर हमला निश्चय ही उपवासके योग्य अवसर था। लेकिन जैसाकि मैंने अपने सार्वजनिक वक्तव्य[2] में कहा है, इस उपवासका उद्देश्य अनेक लोगोंका शुद्धीकरण है। यदि मैं उन सब घटनाओं और बातोंका ध्यान रखता जिन्होंने मुझे यह कदम उठानेके लिए उकसाया है, तो मुझे कहीं ज्यादा लम्बा उपवास करना चाहिए था। लेकिन मुझे दुःखपूर्वक यह प्रतीति है कि मेरी अपनी

१. यह महादेव देसाईके "शुद्धीकरण सप्ताह" से उद्धृत है। महादेव देसाईने बताया है: "सुबहकी प्रार्थना और ५-३० बजे अंतिम आहार लेनेके बाद उपवास ६ बजे सुबह शुरू हुआ। प्रार्थनाके बाद गांधीजी ने कुछ शब्द कहे . . . ।"

२. देखिए पृ० ३१३-१४।

शारीरिक और आध्यात्मिक सीमाएँ क्या हैं; इसीलिए मैं अधिक लम्बे उपवासकी बात नहीं सोच सका।

जब मैंने उपवास करनेका निर्णय किया, उस समय निश्चय ही हमारा आश्रम मेरे ध्यानमें था। असत्य और अशुद्धि हमारे दो ऐसे शत्रु हैं जिनसे हमें सावधान रहना ही है। सभी वचनोंके पालनके लिए बुद्धिकी शुद्धि अत्यावश्यक है। यदि बुद्धि शुद्ध नहीं है, तो कितना ही शारीरिक संयम क्यों न हो, कोई लाभ नहीं होगा। 'गीता' हमें शिक्षा देती है कि जो व्यक्ति इन्द्रियोंका दमन करता है लेकिन साथमें विषयोंके पीछे मनको लगा रहने देता है, वह मिथ्याचारी है।[1] हो सकता है कि हम बुद्धिको संयमित करनेमें सफल न हो सकें, लेकिन हमें मिथ्याचारी नहीं बनना चाहिए। यदि हम सफल न हो सकें तो हमें वैसा स्वीकार करना चाहिए, बजाय इसके कि असत्य और संयमके अभावके दोहरे पापके भागी बनें। क्योंकि केवल झूठ बोलना ही असत्य नहीं है, अपराधयुक्त मौन या अपने अभिभावकसे अपनी सही मनःस्थिति छिपाना भी असत्य है। मेरा उपवास आपको और अधिक आत्मशुद्धि और आत्मनिरीक्षण करनेके लिए प्रेरित करे!

हमें यह भी याद रखना है कि आश्रमके उद्देश्योंमें से एक उद्देश्य अस्पृश्यता खत्म करना भी है; यह हमारी ग्यारह प्रतिज्ञाओंमें[2] से एक है। इस प्रतिज्ञाका प्रभावशाली ढंगसे पालन कर सकना अन्य प्रतिज्ञाओंके पालनके बिना असम्भव है, खासकर सत्य और अहिंसाके पालनके बिना। वास्तवमें कोई भी कार्यकर्त्ता जो अस्पृश्यता-निवारण कार्यमें लगा है — और हम सभी ऐसे कार्यकर्त्ता हैं — इस काम के लिए तबतक उपयुक्त नहीं जबतक वह मनसा-वाचा-कर्मणा सत्य और अहिंसा का पालन करनेको वचनबद्ध नहीं है। एक शब्दमें कहें तो आत्मशुद्धिके बिना कोई सेवा-कार्य नहीं हो सकता। इसलिए यदि इस उपवासके परिणामस्वरूप हम अधिकाधिक आत्मशुद्धिकी बात सोचें तो सही वातावरण बना सकेंगे। मैं इस सप्ताह-भर बराबर आपके बारेमें सोचता रहूँगा। मैं चाहता हूँ कि आप मेरे साथ सहयोग करें। मैं आशा करता हूँ कि परमेश्वर मुझे इस अग्नि-परीक्षासे बाहर निकालेगा। मुझे विश्वास है कि आप सबकी प्रार्थनासे मुझे मदद मिलेगी।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १७-८-१९३४

१. भगवद्गीता, अध्याय ३, श्लोक ६।

२. देखिए खण्ड ३६, पृ० ४१९-२३।

३२१. टिप्पणी: मौन-दिवसपर

[१३ अगस्त, १९३४]

जानकीबहनसे कहना कि व्यर्थ हठ न करें। बहुत करके ऑपरेशनके[1] वक्त मैं वहाँ पहुँच जाऊँगा। दो-चार दिनोंमें मेरी शक्ति लौट आयेगी। मेरा आना न भी हो, तो भी कोई हर्ज नहीं। किन्तु ऑपरेशनमें देर करनेकी जोखिम नहीं लेनी चाहिए। मेरी इच्छा तो आज ही तार[2] भेजनेकी है। ईश्वरकी कृपा हुई तो हम दोनों ही वहाँ हाजिर होंगे। किन्तु इसके लिए ऑपरेशन न रोका जाये।

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० १२६

३२२. तार: जमनालाल बजाजको

१३ अगस्त, १९३४

जमनालालजी,
पोलीक्लिनिक, क्वीन्सरोड, बम्बई-८

मैं बिलकुल ठीक हूँ। पत्र मिला और उसपर ध्यान दिया। मेरा निश्चित मत है कि हर हालतमें डॉक्टर द्वारा निर्धारित तारीख पर ऑपरेशन होना ही चाहिए। निश्चित तारीखकी सूचना तारसे दो।

बापू

[अंग्रेजीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० १२६

१. जमनालाल बजाजके कानके रोगसे सम्बद्ध।
२. देखिए अगला शीर्षक।

३२३. तार : नारणदास गांधीको[1]

१४ अगस्त, १९३४

नारणदास गांधी
मिडिल स्कूलके सामने
राजकोट

ईश्वरको धन्यवाद। उपवास तोड़ दिया। ठीक हूँ।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८४०७ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

३२४. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

१४ अगस्त, १९३४

प्रिय जवाहरलाल,

यद्यपि परिस्थिति ऐसी संकटपूर्ण नही है, फिर भी तुम्हारी रिहाईसे[2] मेरे मन का बड़ा बोझ उतर गया है, क्योंकि कमलाकी तीन-चौथाई बीमारीकी दवा तो इसीसे हो जायेगी। मैंने जितने भी महत्वपूर्ण कदम उठाये, उन सबमे तुम्हारी अनुपस्थिति बहुत महसूस की। लेकिन उनके बारेमें मिलनेपर बात होगी।

मैं ठीक हूँ, हालाँकि अन्तिम दिन सब दिनोंसे ज्यादा कष्टप्रद साबित हुआ और उसने मुझे पूरी तरह तोड़ दिया। लेकिन मुझे कोई सन्देह नही कि मैं जल्दी ही फिर ताकत हासिल कर लूँगा।

खैर, यह पत्र तुम्हें यह सुझाव देनेके विचारसे लिख रहा हूँ कि कोई सार्वजनिक राजनीतिक घोषणा तुम्हें नही करनी चाहिए। मैंने महसूस किया है कि घरमें कोई बीमारी या दुःख आ पड़नेपर सरकारने शिष्ट ढंगका बर्ताव किया है। इस-लिए मुझे यह जरूरी लगता है कि हम इस तरहकी प्राप्त आजादीका किसी अन्य ऐसे

१. एक बिलकुल ऐसा ही तार (सी० डब्ल्यू० ७९६८) घनश्यामदास बिड़लाको भी इसी दिन बिड़ला मिल्स, दिल्लीके पतेपर भेजा गया था।

२. जवाहरलालजी ने तार द्वारा गांधीजी को सूचित किया था : "मुझे कमलाके साथ रहनेकी इजाजत दे दी गई है। स्थिति साफ नहीं है। आशा है कि आप ठीक हैं।"

उद्देश्यके लिए उपयोग न करें जो सरकारकी नीतिसे सगति न रखता हो। हम सरकारके शिष्ट वर्त्तावको इसी तरह स्वीकार करें। मुझे लगता है कि यह सरकार के प्रति और स्वयं अपने प्रति हमारी देनदारी है, खासकर उस समय जब सत्याग्रह मुल्तवी है। यदि मेरी दलील तुम्हारी विवेक-बुद्धिको जँचती है, तो तुम अपने आत्मसंयमको सही ढंगसे प्रकट करोगे। मै आशा करता हूँ कि तुम कमलाका हाल बेहतर हो जानेपर यहाँ आओगे। मैं महीनेके अन्ततक वर्धा रहूँगा, सिवाय इसके कि शायद मुझे जमनालालजी के नाजुक ऑपरेशनमे महीनेके बीचमें ही बम्बई जाना पडे।

आशा है कि माँ और कृष्णा ठीक चल रही हैं। मुझे लिखना कि इस बार तुम जेलमें कैसे रहे।

सस्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

गाधी-नेहरू कागजात, १९३४; सौजन्य· नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

३२५. पत्र : हीरालाल शर्माको

१४ अगस्त, १९३४

दुबारा नहीं पढ़ा

चि० शर्मा,

शरनामे[1] में मेरी गलती हो गई। इसका दुःख है। होनी नहिं चाहिये थी। रामदासके हाल तुमारी दृष्टिसे लिखो।

अमतुल सलामको तुमने पैसे भेजे सो तो अच्छा नहिं था। तुमारे पास अब दान करनेके पैसे कहा है? अमतुल सलामकी ऐसी हालत भी नहिं जिस लिये किसी न किसी तरह उसे मदद पहोचाना आवश्यक था। मैंने उससे बताया है उसका धर्म इस तरह पैसे नहिं लेनेका था। वह समझ गई है। मित्रताका यह कभी अर्थ नहिं है कि हम एक दूसरोके दौर्बल्यको पोषें। उसका हेतु है एक दूसरोकी उन्नति करना। इसे मैं नैसर्गिक उपचारकके अभ्यासका विषय मानता हूं। नैसर्गिक उपचारक शारीरिक, मानसिक और आत्मिक व्याधिको पहचानता है, उसका इलाज करता है और वह ज्यादातर आतरिक शक्तियोके विकाससे। उसमें पृथ्वी, पाणी, आकाश, तेज और वायुकी मदद ली जाती है। नैसर्गिक उपचारकसे आत्माकी अधोगति अशक्य होनी चाहिए। इस दृष्टिसे अमतुल सलामका केइस लो। उसे हृदय दौर्बल्य है। यह एक व्याधि है। पैसा उडाना उसकी दुर्बलता है। फिर भी अपने घरसे पैसे लेनेसे

१. पत्रमें गलतीसे गांधीजी ने पता खुर्जाकी जगह खुर्दा लिख दिया था।

हिचकचाती है। उसको पैसे भेजना अधोगति-वर्धक है। न भेजना उन्नति-वर्धक है। नैसर्गिक उपचारक पैसे नहिं भेजेगा।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, (१९३२-४८), पृ० ८६-८७के बीचकी प्रतिकृति।

३२६. बातचीत : गुजरात विद्यापीठके शिक्षकोंके साथ[1]

[१४ अगस्त, १९३४के पश्चात्][2]

विद्यापीठका असली काम तो गाँवोंमें है। मैं विद्यापीठके जन्मसे ही इस बात पर जोर देता आ रहा हूँ। लेकिन दो साल पहलेतक, जबतक कि विद्यापीठ एक गैर-कानूनी संस्था घोषित नही कर दी गई और हमारे अधिकांश शिक्षक व बालक कैद नही कर लिये गये, हम इस भ्रममें पड़े रहे कि हमारा काम केवल गुजरातकी राजधानीमें स्थित केन्द्रीय प्रतिष्ठानके जरिये ही चलाया जा सकता है। लेकिन बदले हुए हालातमें, अब हमें थोड़ा-सा दम लेनेका वक्त मिल गया है और हम आपसमें मिलकर शान्तिसे विचार कर सकते हैं। इसलिए यदि हम अपनी मूल धारणापर फिरसे गौर करके अपने भावी कार्यक्रमपर विचार करें तो अच्छा होगा। एक जीवित संस्थाके प्रत्येक सदस्यको जहाँ-कही भी वह जाये, संस्थाके आदर्शोकी सजीव मूर्ति होना चाहिए। और यदि ऐसी हालत हो जाये, तो फिर चाहे संस्थाका कोई विशेष स्थान अथवा संघबद्ध अस्तित्व हो या न हो, अन्तर नही पड़ेगा।

इसलिए मैं आपमें से हर व्यक्तिसे, जिसने विद्यापीठके आदर्शोको दिलसे अपनाया है और जो विद्यापीठकी सेवा करनेको वचनबद्ध है, आशा करता हूँ कि वह सीधा गाँवोंमें जायेगा और वहाँ उन आदर्शोके अनुसार रहना शुरू कर देगा। इस तरह आपमें से हर व्यक्ति ऐसा जंगम विद्यापीठ होगा जो अपने व्यक्तिगत उदाहरणसे उसके आदर्शोकी शिक्षा देता रहेगा। ऐसा भी सोचा जा सकता है कि कुछ कार्यकर्त्ताओंका समूह विद्यापीठके आदर्शोके अनुसार गाँवोमें जीवन बितानेके बाद किसी गाँवमें फिरसे केन्द्रीय संस्थानकी स्थापना करे। लेकिन अभी हम उस स्थितिमें नही हैं। हमें अभी वह सारा अनुभव हासिल करना है, जिसके आधारपर ही आप नया विद्यापीठ बना सकते हैं।

१. गांधीजी की बातचीतका यह सारांश "गाँवोंका काम क्या है" शीर्षकसे महादेव देसाईकी निम्नलिखित परिचयात्मक टिप्पणीके साथ छपा था : "उपवासके बाद अपने विश्राम-कालमें गांधीजी प्रतिदिन थोड़ा समय शंकाएँ व कठिनाइयाँ लेकर आनेवाले कार्यकर्त्ताओंको देते रहे हैं। इनमें से कुछ गुजरात विद्यापीठके शिक्षक थे।

२. गांधीजी ने १४ अगस्त, १९३४ को अपना उपवास तोड़ा था।

इस गाँवके कार्यकर्त्ताके जीवनका केन्द्रबिन्दु चरखा होगा। मुझे खेद है कि मैं अभीतक किसीको भी चरखेका सन्देश सम्पूर्ण निहितार्थों सहित समझा नही सका हूँ। कारण यह है कि मेरा जीवन खुद उस सन्देशकी सच्ची अनुगूँज नही है। भारतमें अपने नौ महीनेके परिभ्रमण-कालमें बार-बार यह बात मेरी समझमे आई है। हमने अभीतक यह चीज काफी महसूस नही की है कि हाथ-कताई भारत मे सर्वत्र उपयोगमें लाया जा सकनेवाला एक पूरक उद्योग है और उसका काफी विस्तार हो सकता है। गाँवका बुनकर चरखेके बिना टिक ही नही सकता। इसमें सन्देह नही कि आज उसे मिलोंसे सूत मिलता है, लेकिन यदि उसे हमेशाके लिए मिलोपर निर्भर रहना पड़ा तो उसका विनाश अवश्यम्भावी है। आज हमारे आर्थिक जीवनमे चरखेका स्थान केवल उस हदतक बन पाया है कि वह खादी-बुनकरोंके उस नये वर्गके लिए, जो पिछले दशकमे तैयार हुआ है, कपड़ोंकी जरूरत पूरी करे। लेकिन चरखा-सघ जैसी बड़ी संस्था इस सीमित कामके लिए ही अपने अस्तित्वका औचित्य नही सिद्ध कर सकती। खादीके पीछे यह भावना है कि यह खेतीबाडी के कामका एक पूरक उद्योग है और उसके साथ पनपकर उन लाखों हरिजन बुनकरो के जीवनका सहारा बन सकता है जो खादी बेचकर अपना गुजारा करते हैं। पर जबतक हम अपने गाँवोमे आलस्य नहीं मिटा देते और गाँवके हर घरको पूरा काम नही दे पाते तबतक यह नहीं कहा जा सकता कि चरखा हमारे जीवनमें अपने उचित स्थानपर आसीन हो चुका है। लाखों लोगोंकी बेरोजगारी और आलस्यके परिणामस्वरूप हिंसक सघर्ष होना अवश्यम्भावी है। इसका एकमात्र विकल्प खादी है, तथाकथित समाजवाद नही जो कि उद्योगवादको मानकर ही चलता है। भारत जिस समाजवादको अपना सकता है, वह चरखेका समाजवाद है। इसलिए गाँवके कार्यकर्त्ताको अपनी गतिविधियोंका केन्द्रबिन्दु चरखेको बनाना चाहिए।

कार्यकर्त्ता न केवल नियमित रूपसे कताई करेगा, बल्कि वह अपनी रोटी कमाने के लिए बसूले, फावड़े चलाना या अन्य ऐसे ही किसी कामको अपनायेगा। सोनेके और आराम करनेके आठ घंटोंके अलावा उसका सारा समय पूरी तरहसे किसी न किसी काममें लगेगा। उसके पास नष्ट करनेको समय होगा ही नही। वह न खुद आलस्य करेगा और न अन्य लोगोंको आलस्य करने देगा। उसका जीवन सदा अपने पड़ोसियो के लिए निरन्तर और आनन्दप्रद उद्योगका सबक होगा। शरीरकी शक्तिके लिए शारीरिक श्रम और मस्तिष्कके संस्कारके लिए बौद्धिक श्रम जरूरी है। श्रमका विभाजन तो होगा, लेकिन विभाजन विभिन्न प्रकारके शारीरिक श्रमोंमे होगा, न कि ऐसा कि बौद्धिक श्रम एक वर्गमें सीमित हो जाये और शारीरिक श्रम दूसरे वर्गमें। हमारे बीच व्याप्त अनिवार्य या स्वैच्छिक आलस्य हमें समाप्त करना ही होगा। यदि ऐसा नही होता, तो किसी भी रामबाण औषधिसे कोई लाभ नही होगा और अर्ध-भुखमरी आज की तरह शाश्वत समस्या बनी रहेगी। जो व्यक्ति दो दाने खाता है, उसे चार पैदा करने चाहिए। जबतक यह नियम सब लोग स्वीकार नही कर लेते, तबतक जनसंख्याको कितना ही कम क्यो न कर लिया जाये, समस्या हल नहीं

होगी। यदि यह नियम स्वीकार कर लिया जाता है और उसका पालन किया जाता है, तो हमारे पास भविष्यमें लाखों और लोगोके लिए भी गुंजाइश बनी रहेगी।

इस प्रकार गाँवका कार्यकर्त्ता उद्योगकी जीती-जागती प्रतिमा होगा। वह खादी के लिए कपास उगाने और कताई करनेसे लेकर बुनाईतक की सभी प्रक्रियाओंमें सिद्धहस्त बनेगा और एकाग्र होकर इनमें पूरी कुशलता प्राप्त करनेका प्रयत्न करेगा। वह इसे यदि विज्ञानकी तरह मानेगा, तो इसकी महान सम्भावनाओंको अधिकाधिक समझता जायेगा और ऊबेगा नही; बल्कि उसे प्रतिदिन इससे आनन्द प्राप्त होगा। वह गाँवमें जितना सिखानेकी दृष्टिसे जायेगा, उतना ही सीखनेकी दृष्टिसे भी। वह शीघ्र समझ लेगा कि सीधे-सादे ग्रामीणोंसे उसे काफी-कुछ सीखना है। वह ग्रामीण जीवनकी हर छोटीसे-छोटी बातको समझेगा, ग्रामीण उद्योग-धन्धोका पता लगायेगा और उनके विकास तथा उनमें सुधारकी सम्भावनाओंकी जाँच करेगा। हो सकता है कि वह ग्रामीणोंको खादीके सन्देशके प्रति सर्वथा उदासीन पाये, लेकिन वह अपने सेवामय जीवन द्वारा खादीमें उनकी रुचि पैदा करेगा, खादीकी तरफ उनका ध्यान आकर्षित करेगा। निश्चय ही वह अपनी सीमाएँ नही भूलेगा और खेतीवाड़ी सम्बन्धी कर्जकी समस्या सुलझानेमें, जो उसके लिए व्यर्थका काम है, नही लगेगा।

सफाई और स्वास्थ्य सम्बन्धी नियमोकी ओर उसे काफी ध्यान देना होगा। उसका घर और चारों ओरका इलाका तो सफाईका नमूना होगा ही, वह झाड़ू और बाल्टी उठाकर सारे गाँवमें भी सफाईके कामको आगे बढ़ायेगा।

वह गाँवमें दवाखाना बनानेका या गाँवका डॉक्टर बननेका प्रयत्न नही करेगा। ये ऐसे जाल है जिनसे बचना चाहिए। अपने हरिजन-कार्य सम्बन्धी दौरेमें मैं एक ऐसे गाँवमें पहुँचा जहाँ हमारे एक कार्यकर्त्ताने एक आलीशान इमारत बनाकर उसमें दवाखाना खोल रखा था और आसपासके गाँवोंको मुफ्त दवा बाँट रहा था। यह नादानी है। यहाँतक कि स्वयंसेवक घर-घर जाकर दवाएँ देते थे। मुझे बताया गया कि दवाखानेके रजिस्टरमें महीने-भर में १२०० मरीजोंके नाम आ जाते हैं। स्वाभाविक रूपसे मुझे इसकी कड़ी आलोचना करनी पड़ी। मैंने उससे कहा कि गाँवमें काम करनेका यह तरीका नही है। बजाय इसके कि वह बीमारियोंको दूर करनेकी कोशिश करे, उसका कर्त्तव्य तो गाँवके लोगोंको स्वास्थ्यके नियम और सफाईकी आदत सिखाकर उन्हें बीमारीसे बचनेका तरीका बताना है। मैंने उससे महल-जैसी इमारत छोड़ देनेको और उसे स्थानीय बोर्डको किरायेपर दे देनेको कहा और उसे एक घास-फूसकी झोपड़ीमें रहनेको कहा। दवाओंमें सिर्फ कुनैन, अरंडीका तेल और आयोडीन-जैसी चीजें ही रखनेकी जरूरत है। कार्यकर्त्ताओंको इस बातपर अधिक ध्यान देना चाहिए कि वे लोगोंको यह महसूस करायें कि हर हालतमें निजी तथा गाँवकी सफाई बनाये रखनेका कितना महत्व है।

इसके साथ कार्यकर्त्ता गाँवके हरिजनोके कल्याणमें दिलचस्पी लेगा। उसका घर उनके लिए खुला रहेगा। वास्तवमें वे अपनी परेशानियों और कठिनाइयोंमें उसके पास

आयेंगे। यदि गाँवके लोग अपने-बीच स्थित उसके घरमें हरिजन मित्रोका आना बर्दाश्त न करें, तो उसे अपना आवास हरिजन-बस्तीके बीच बनाना होगा।

कुछ शब्द अक्षरज्ञानके बारेमें कहूँगा। इसका अपना महत्व है, लेकिन इसपर जरूरतसे ज्यादा जोर देनेके विरुद्ध मैं आपको चेतावनी देना चाहूँगा। यह मानकर मत चलिए कि बच्चो या बालिगोको पढना-लिखना सिखाए बगैर आप ग्रामीणोके प्रशिक्षण कार्यमें आगे नही बढ सकते। अक्षरज्ञानके बिना भी मौजूदा हालातकी और इतिहास, भूगोल तथा प्राथमिक हिसाब-किताबकी काफी उपयोगी जानकारी मौखिक रूपसे दी जा सकती है। शिक्षाके क्षेत्रमें आँख, कान और जीभका स्थान हाथसे पहले आता है। लिखनेसे पहले पढनेका और वर्णमालाके अक्षरोका रूप खीचनेसे पहले चित्र खीचनेका स्थान है। यदि यह स्वाभाविक तरीका अपनाया जाये, तो बच्चोकी बुद्धिको विकासका ज्यादा अच्छा अवसर मिलेगा। बच्चोका प्रशिक्षण वर्णमालासे शुरू करके उनकी बुद्धिपर जोर डालनेसे यह अधिक अच्छा है।

कार्यकर्त्ताका जीवन गाँवके निवासियोके जीवन जैसा होगा। वह ऐसा नही जाहिर करेगा कि वह अपनी पुस्तकोमें डूबा हुआ कोई ऐसा साहित्यिक है जिसे जीवनके शोरगुलकी बातें सुननेसे नफरत है। इसके विपरीत, जब कभी लोग उससे मिलेगे, वे उसे अपने औजारो अर्थात् चरखा, करघा, बसूला-फावडा आदिमे व्यस्त पायेगे और वह उनकी छोटी-से-छोटी बातका सही जवाब देगा। वह हमेशा अपनी रोजीके लिए काम करनेका आग्रह रखेगा। परमेश्वरने हर व्यक्तिको अपनी रोजकी जरूरतसे ज्यादा कमानेकी ताकत दी है और यदि वह अपनी सूझ-बूझ इस्तेमाल करेगा तो अपने कौशलके अनुकूल धन्धेकी उसे कभी नही होगी, फिर यह कौशल कितना ही कम क्यो न हो। बल्कि इस बातकी ज्यादा सम्भावना है कि खुद लोग खुशीसे उसका भरण-पोषण करे, लेकिन यह भी असम्भव नही कि कुछ जगहोमें वे उसके प्रति उदासीनता बरते। फिर भी वह तो अपने रास्तेपर बढता ही रहे। हो सकता है कि कुछ गाँवोमें अपनी हरिजन-समर्थक गतिविधियोके कारण उसका बहिष्कार किया जाये। उस दशामें उसे हरिजनोके पास जाना चाहिए और उनसे भोजन प्राप्त करनेकी अपेक्षा करनी चाहिए। मजदूर हमेशा अपनी मजदूरी पानेका हकदार है। यदि वह ईमानदारीसे उनकी सेवा करता है, तो उसे हरिजनोसे भोजन स्वीकार करनेमें संकोच नही करना चाहिए। अलबत्ता वह उनसे जितना लेता हो उससे ज्यादा उसे उनकी सेवा करते रहना चाहिए। बिलकुल शुरूमें किसी केन्द्रीय कोषमें से वह बहुत थोड़ा-सा भत्ता लेगा, सो भी जहाँ ऐसा सम्भव हो।

गायका प्रश्न मैंने जान-बूझकर छोड़ दिया है। गाँवके कार्यकर्त्ताके लिए इस मसलेको हल करनेमें कठिनाई होगी। वह इसका प्रयत्न न करे। वह लोगोको इस सवालके सिद्धान्त भर बताये। हम अभीतक मरे हुए ढोरके चमड़ेको पकाने और रंगनेका सबसे अच्छा तरीका नही खोज पाये हैं और न ही गोरक्षाका सर्वोत्तम उपाय हमारे हाथ लगा है। गुजरातमें भैंसोकी समस्यासे स्थिति और भी जटिल है। हमें

लोगोंको यह महसूस करवाना है कि भैंसोंको तरजीह देनेका अर्थ गायको मरने देना है। लेकिन इस विषयमें और अधिक फिर किसी समय कहूँगा।

याद रखें कि हमारे साधन आध्यात्मिक हैं। यह ऐसी ताकत है जो यद्यपि अनदेखे काम करती है लेकिन इसका काम अमोघरूपसे प्रभावकारी होता है। इसकी प्रगति गणित-जैसी नही ज्यामिति-जैसी है। जबतक इसके पीछे इसे संचालित करने-वाली कोई शक्ति है, तबतक यह कभी नहीं चुकती। इसलिए आपकी समस्त गति-विधियोंकी आधारभूमि आध्यात्मिक होनी चाहिए। और इसीलिए आचरण तथा चरित्र पूरी तरह शुद्ध रखनेकी जरूरत है।

आप मुझसे यह न कहें कि यह एक असम्भव कार्यक्रम है और हममें इसके लिए योग्य गुण नही है। आपने अबतक यह कार्यक्रम पूरा नही किया है, यह बात भी आपके रास्तेमें रुकावट नही बननी चाहिए। यदि यह आपके विवेक और हृदयको ठीक जँचता है, तो आपको इसे करनेमें झिझकना नहीं चाहिए। प्रयोग करनेमें शर्म महसूस मत कीजिए। प्रयोग स्वतः अधिकाधिक प्रयत्नको गति प्रदान करेगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३१-८-१९३४

३२७. "ईश्वर धन्य है"

[१५ अगस्त, १९३४][1]

यह खुशी की बात है कि मेरे इस उपवासके औचित्य के बारेमें किसीने शंका नही उठाई। इसके विपरीत जिन्होंने इस उपवासके विषयमें लिखा है, उन्होंने यह कबूल किया है कि उपवास करना आवश्यक था। उपवासका आध्यात्मिक मूल्य मेरी दृष्टिमें इतना अधिक रहा है कि मैं उसे आँक नहीं सकता। मैं नहीं जानता कि ऐसा क्यों है, पर इसमें कोई सन्देह नही कि जब मनुष्यपर संकट आता है, तो वह उसी तरह सर्वतोभावेन भगवानसे चिपट जाता है जिस तरह कि कष्टमें अबोध बच्चा अपनी माँसे चिपट जाता है। मेरा चित्त प्रसन्न तो रहा, पर यह बात नही कि और उपवासोंकी तरह इस उपवासमें शारीरिक कष्ट न हुआ हो। हाँ, अस्वस्थता के कारण किये गये उपवासकी बात दूसरी है।

सैकड़ों सार्वजनिक सभाओमें मैंने चीख-चीखकर यह कहा है कि जबतक हरिजन-सेवकोंका चरित्र कुन्दन-सा शुद्ध नहीं हो जाता, तबतक अस्पृश्यता दूर होने की नहीं। अपने इस कथनमें अन्तर्निहित भावोंको इन सात दिनोंमें मैं और भी अधिक स्पष्टतासे समझ सका हूँ। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि इस उपवासने मेरी आत्मशुद्धिका मतलब तो पूरा कर दिया। उपवास-कालमें जिस आदर्शकी मैंने झाँकी देखी है, बहुत सम्भव है कि उसतक पहुँचनेमें मुझे सफलता न मिले। किन्तु किसी

1. देखिए "भेंट: पत्र-प्रतिनिधियोंको", पृ० ३३३-३४।

भी उपवाससे इस बातकी गारंटी नही हो जाती कि मनुष्यसे आगे कोई भूल होगी ही नही। आखिर हम लोग ठोकरें खाकर ही तो सफलता प्राप्त कर सकते हैं।

इस उपवासका उद्देश्य, कहनेके लिए तो, अजमेरमें हरिजन-आन्दोलनके समर्थकों द्वारा स्वामी लालनाथ और उनके साथियोंको जो चोट पहुँचाई गई थी, उसके लिए प्रायश्चित्त करना था। पर असलमें इसका उद्देश्य आन्दोलनसे सहानुभूति रखनेवालोसे तथा कार्यकर्त्ताओसे यह अनुरोध करना था कि वे अपने विरोधियोके साथ सही और शिष्ट व्यवहार करे। विरोधियोके प्रति अधिकसे-अधिक सौजन्य दिखाना आन्दोलनके हकमे सबसे सुन्दर प्रचार-कार्य होगा। कार्यकर्त्ताओको इस सत्यका ज्ञान करानेके लिए यह उपवास किया गया था कि हम अपने विरोधियोको प्रेमके बलसे ही जीत सकते है, घृणासे कभी नही। घृणा हिंसाका ही एक सूक्ष्म रूप है। घृणाका भाव मनमें रखते हुए हम पूर्ण अहिंसात्मक नही बन सकते। यह तो मोटीसे-मोटी बुद्धिवाला भी समझ सकता है कि हिंसाके द्वारा करोड़ो सवर्ण हिन्दुओके दिलसे अस्पृश्यताकी बुरी भावनाको, जिसे 'धर्म समझना' उन्हें सिखाया गया है, दूर करना असम्भव है।

अबतक प्राप्त प्रमाणोसे तो यही प्रकट होता है कि मेरे इस उपवासने अनेक कार्यकर्त्ताओकी अन्तरात्माको सचेत कर दिया है। उपवासका कितना और कैसा प्रभाव पड़ा है, इसे तो सिर्फ समय ही बतला सकेगा। उपवासके असरका हिसाब लगाना मेरा काम नही है। मेरे लिए तो नम्रतापूर्वक अपने स्पष्ट धर्मका आचरण करना ही काफी था। ईश्वर धन्य है कि उसकी कृपासे मैं यह उपवास सकुशल पूरा कर सका। पाठक भी मेरे साथ यह प्रार्थना करे कि जो काम ईश्वरने मुझे सौप रखा है, उसे पूरा कर सकनेकी पवित्रता और शक्ति वह मुझे और भी अधिक दे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १७-८-१९३४

३२८. पत्र : जमनालाल बजाजको

१५ अगस्त, १९३४

चि० जमनालाल,

उपवासके बाद यह पहला पत्र लिख रहा हूँ। मजेमें हूँ। आज दूध लिया है। रक्तचाप अच्छा है। इसलिए मेरी चिन्ता न करो। जानकीबहन जबतक वहाँ रहना चाहे तबतक उन्हें रहने दो। ओमको ज्यादा दिनतक वहाँ रखने की शायद जरूरत न हो। अच्छा है कि महादेव और मदनमोहन वहाँ आ रहे है। उनका जाना मुझे आवश्यक मालूम हुआ। भले ही लौट सके तो वह कल वापस लौट आयें। यहाँ कोई उलझन नही होगी। अतः हृदयमें रामको अंकित करते हुए

क्लोरोफार्म लेना। यहाँ सब कुशल है। ईश्वरको तो तुमसे अभी बहुत सेवा लेनी है। बहुत-कुछ अर्पण कराना है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९३७) से।

३२९. तार: मोहनलाल सक्सेनाको[1]

[१६ अगस्त, १९३४ या उससे पूर्व][2]

आशा है कि सभी काग्रेसी कांग्रेसके फरमानका आदर करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १७-८-१९३४

३३०. पत्र: मीराबहनको

१६ अगस्त, १९३४

दुबारा नहीं पढ़ा

चि० मीरा,

मैंने तुम्हें उपवास शुरू करनेके बाद मंगलवार ७ तारीख[3] को पत्र लिखा था। आज गुरुवार और उपवास तोड़नेके बाद तीसरा दिन है। अन्तिम दिन शारीरिक कष्टमें बीता। शायद कल्याण इसीमें हो। मुझे शारीरिक यातना न हो तो प्रायश्चित्त का मूल्य ही क्या? कष्ट अनुभव न हो, तो 'कष्ट भोगनेका आनन्द' इस वचनके कोई मानी ही नहीं। 'कष्ट भोगनेका आनन्द' इन शब्दोंका अर्थ मुझे पहलेकी अपेक्षा सोमवारको ज्यादा पूरी तरह मालूम हुआ। इस खजानेको पाकर मैं इतना सम्पन्न हो गया कि उसे मैं किसी राज्यके बदले भी जाने न देता।

यह तो हुआ। जिस समय मैं यह पत्र लिख रहा हूँ, ऐसा लग रहा है कि शक्ति धीरे-धीरे आ रही है। यह पत्र मैं वसुमतीके सहारेसे छतपर थोड़ा टहलनेके बाद लिखने बैठा हूँ। वह, अमतुलसलाम और अमला बराबर मेरे साथ रहे हैं। प्रभावती तो है ही। इन दिनों उसने बहुत परिश्रम किया। समझमें नहीं आता

१ और २. साधन-सूत्रमें बताया गया है कि यह तार गांधीजी द्वारा संयुक्त प्रान्त संसदीय बोर्डका चुनाव-अभियान प्रारम्भ होनेके समय भेजा गया था। यह "कानपुर, १६ अगस्त" की तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत छपा था।

३. देखिए पृ० ३१४-१५।

उसमें इतनी सारी ताकत आती कहाँसे है। कभी थकी हुई नही दीखती। अमला हमेशा-जैसी पगली है। लेकिन मेरे साथ वह दूसरी जगहोंसे ज्यादा अच्छी तरह रहती है।

तुम्हे इस बातपर खेद या क्रोध नही होना चाहिए कि मैंने अभीतक कैदियोंके बारेमें श्री मैक्सवेलको नही लिखा है। बात हमेशा मेरे ध्यानमें रही, लेकिन समयकी कमीके कारण लिख नही पाया।

तुम्हे उस हरे कैन्वसके थैलेकी याद है जिसमें मेरी गीता, भजनावली और ऐसी ही अन्य चीजें थी। वह तथा हरी खादीवाला थैला मुझे कही दिखाई नही दे रहा है। मैंने सोचा था कि तुमने उन्हे वर्धामें अन्य चीजोंके साथ रख दिया होगा। लेडी ठाकरसीके यहाँ जो खादीका बण्डल तुमने रखा था, वह भी गुम है।

यह जानकर आश्चर्य हुआ कि तुम वहाँ तन्दुरुस्त नही रही। आशा है, तुमने ताजे फल और सलाद लेना छोड़ नही दिया होगा। परिश्रम करनेकी स्थितिमें बने रहनेके लिए वहाँ ये चीजें जरूरी है।

अपने ऑक्सफोर्डवाले चाचा[1] के यहाँ जानेका तुम्हारा वर्णन दिलचस्प है। किसी-न-किसी कारण वह अण्डाकार इटालियन चेहरा[2] मुझे बहुत आकर्षित करता है। इसलिए शिशुके तुम्हारे सुन्दर वर्णन पर मुझे आश्चर्य नही हुआ।

आज बम्बईमें कानकी तकलीफके लिए जमनालालजी का ऑपरेशन होगा। जानकीबहन, ओम और महादेव इस कामके लिए बम्बई गये है। शायद इस पत्रमें ऑपरेशनका परिणाम लिखा होगा।[3]

सस्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२९५) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७६१ से भी।

१. मूलमें गांधीजी ने 'कजिन' लिखा था, जिसे मीराबहनने पेन्सिलसे गोलघेरेमें करके "चाचा" लिखा था।

२. यहाँ 'अंडाकार इटालियन चेहरे' से मतलब मीराबहनकी चाचीसे है। मीराबहनने लिखा है कि वे हैं तो अंग्रेज मगर उनका चेहरा ऐसा ही है।

३. गांधीजी ने उम्मीद की थी कि वे इस पत्रमें ही ऑपरेशनके बारेमें लिख सकेंगे, देखिए अगले चार शीर्षक भी।

३३१. तार: जमनालाल बजाजको

१६ अगस्त, १९३४

जमनालालजी
श्री, बम्बई

परमेश्वरको धन्यवाद। आशा है आरामसे होगे। सबकी ओरसे प्यार।

बापू

[अंग्रेजीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० १२९

३३२. पत्र: जमनालाल बजाजको

१६ अगस्त, १९३४

चि० जमनालाल,

ऑपरेशनका तार अभी-अभी मिला। जानकीमैयाके सिरसे चिन्ताका पहाड़ उतर गया। मेरी चिन्ता न करना। मुझे आराम है। खाना खाया जाता है। मैं वहाँ दौड़ आनेकी उतावली नहीं करूँगा। यो पूरी ताकत आये बिना न कहीं अन्यत्र जाऊँगा। इसलिए निश्चिन्त रहकर स्वास्थ्य लाभ करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९३८) से।

३३३. पत्र: नारणदास गांधीको

[१६ अगस्त, १९३४][1]

चि० नारणदास,

आज उपवास छोड़नेके बादका तीसरा दिन है। हालत ठीक है। कलसे ही दूध लेना शुरू किया। काफी शक्ति आ गई है। अखबारोंमें छपा विवरण तो तुमने देखा ही होगा।

फिलहाल कुछ दिनों तो यहाँ पड़ा हूँ। शक्ति आते-आते कुछ दिन तो लगेंगे ही। देखें, इस महीनेके अन्ततक क्या होता है।

मैं तुम्हारी ओरसे नियमित पत्रोंकी आशा रखूँगा।

जमनादास कैसा है? सन्तोकने कोई काम हाथमें ले लिया हो तो अच्छा।

अभी तार मिला कि जमनालालके कानका सफल ऑपरेशन हो गया है, इसमें कुछ चिन्ताका कारण था। घाव भरनेमें कोई छः हफ्ते लग जायेंगे। उन्हें पत्र लिखना। महादेव वहाँ गया है। दो दिनोंमें लौट आयेगा।

आज अधिक नहीं लिखूँगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

माताजी और पिताजी को मेरे प्रणाम। जमना चुप क्यों हो गई?

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८४०८ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

१. उपवास और जमनालाल बजाजके सन्दर्भसे।

३३४. पत्र : एफ० मेरी बारको

१६ अगस्त, १९३४

चि० मेरी,

तुम्हारा छोटा-सा पत्र मिला। ईश्वरको धन्यवाद कि उपवास ठीकसे पूरा हो गया, हालाँकि अन्तिम दिन काफी तकलीफ हुई। मै ठीकसे प्रगति कर रहा हूँ। जमनालालजी वम्बईमे है। आज उनके कानका ऑपरेशन काफी सफलतापूर्वक हुआ। मै कुछ दिनोके लिए यहाँ हूँ। मीरा इंग्लैडमे काम कर रही है। पत्र जरूर नियमित रूपसे लिखती रहना।

सस्नेह।

बापू

श्री मेरी बार
खेडी, बैतूलके समीप, मध्यप्रदेश

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०२५) से। सी० डब्ल्यू० ३३५४ से भी; सौजन्य : एफ० मेरी बार

३३५. पत्र : रमाबहन जोशीको

१६ अगस्त, १९३४

चि० रमा,

तुम्हारी दो लकीरोके लिए भी धन्यवाद। अब तो तुम्हारा मन शान्त है न? समयका उपयोग कैसे करती हो? बाकी समाचार दूसरे पत्रोमें पढ़ो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३६६) से।

३३६. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

१६ अगस्त, १९३४

चि० ब्रजकृष्ण,

तुमारा खत मिला। मुझे अच्छा है। बाकी तो सब अखबारोसे देखा होगा। जमनालालजीके कानका आपरेशन आज मुंबईमें सफलतापूर्वक हो गया।

दामोदरदासके बारेमें मैं तुमारी सम्मति बगैर केशु इ०को कभी नहि लिखुगा। उनकी दलीलमें कुछ वजूद नहि है। उसमें न मैं मित्रधर्म पाता हू न और कुछ। मेरा अविश्वास दामोदरदासके प्रति बढता है और ऐसे ही केशु इ० प्रत्ये (के प्रति) पैदा होता है। इसलिये जहातक मैं निश्चयपूर्वक सत्य न जान सकू मेरी तटस्थता टूट जाती है इससे केशु कुटुंबकी सेवा करनेकी मेरी शक्ति क्षीण होती। दामोदरदास यदि इस स्पष्ट धर्मको न समजे सके तो दु:खकी बात है। लेकिन वे समजे अथवा न समजें तुमारे तो यह स्पष्ट धर्म समजना चाहीये। तुमारा एक और धर्म भी है। तुमारे पास इस जगतमें मेरेसे कोई छीपी बात नहि हो सकती है इसलिये तुमारे साथ बात करनेवालोको जानना चाहीये कि वे जो कुछ कहेंगे वह मेरी पास आ जायगा। उसका क्या उपयोग करना वह मेरे पर निर्भर रहता है। अगर यह स्पष्ट है तो तुमारे मुझे सम्मति दे देना चाहीये। यह खत दामोदरदासको बता सकते हो। और क्या लिखु? इतना अभयदान दू। बगैर तुमारी सम्मतिके मैं केशु इ०को इस बारेमें कुछ नहि लिखूंगा।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४१९) से।

३३७. भेंट : पत्र-प्रतिनिधियोंको

१६ अगस्त, १९३४

म बिलकुल ठीक हूँ।

मेरे अभिवादन और कुशलक्षेमके प्रश्नका महात्मा गांधीने मनमोहक मुस्कानके साथ जवाब दिया। . . . वे जी० डी० एच० कोलकी लिखी "व्हाट मार्क्स रियली मेन्ट" पढ़ रहे थे। गांधीजी ने कहा कि मैं इसे अपने उपवासके दौरान पढ़ता रहा हूँ और अभीतक खत्म नहीं कर पाया हूँ। जब उनसे भावी कार्यक्रम के बारेमें पूछा गया तो गांधीजी ने धीमे स्वरमें कहना शुरू किया:

मेरी कोई योजना तैयार नही है। इस समय सबसे पहले तो मेरा ध्यान (शारीरिक) ताकत हासिल करनेकी ओर है।

उन्होंने यह भी कहा कि मै सन्तोषजनक प्रगति कर रहा हूँ। आठ दिनोंके बाद कल मैंने पहली बार करीब आधा घंटा चरखा चलाया है। इस सप्ताहके 'हरिजन' के लिए कल एक लेख[1] भी लिखा और थोड़ा टहला भी। आशा है कि शीघ्र ही अपनी शक्ति और स्फूर्त्ति पुनः हासिल कर लूँगा। उन्होंने कहा कि यदि किसी खास जरूरी कामसे बाहर न जाना पड़ा तो पुनः स्वास्थ्य लाभ करते समय वर्धा ही रहूँगा।

यदि आप मुझसे यह पूछें कि इन सात दिनोमें मैंने क्या कांग्रेसके बारेमें भी कुछ सोचा, तो जैसाकि मैंने 'हरिजन' के स्तम्भोमे कहा है, मै कह सकता हूँ कि मै बराबर कांग्रेसी लोगोके बारेमें सोचता रहा हूँ। उनके बारेमें मै राजनीतिकी दृष्टिसे नही सोचता रहा और इसलिए मैंने यह विचार नही किया कि स्वतन्त्रतासे काग्रेसको क्या प्राप्त होता है। मै तो आन्तरिक शुद्धि हासिल करनेकी महान आवश्यकताकी बात सोचता रहा।

मेरे पास काग्रेसियोंके पत्र आते रहे हैं। काग्रेसके चुनावों आदिके मामलेमें जो भ्रष्ट तरीके काग्रेसी लोगोके बीच आ घुसे है, ये पत्र उनके बारेमें मेरी आशकाओकी पुष्टि करते रहे हैं। सात दिनोतक मै अपने बिस्तरपर लेटा रहा। उन दिनो रोज मै यही सोचता रहा कि क्या ही अच्छा होता यदि काग्रेसकी हर महिला व पुरुष यह महसूस करता कि वह कोई पद या यश पानेके लिए नही बल्कि देशकी मूक सेवा करनेके लिए काग्रेसमे है। एक-दूसरेपर कीचड़ उछालना और वाक्-हिंसा करना मेरी समझमें नही आता।

सविनय अवज्ञा निश्चय ही उन लोगोके लिए नही है जिन्होने कानूनका, चाहे वह तकलीफदेह हो, स्वेच्छासे पालन करनेकी कला नही सीखी है। लगता है कि इस प्राथमिक सिद्धान्तका कोई ख्याल ही नही किया गया। अन्यथा अनुशासनहीनताकी और उन कानूनो व नियमोका, जिन्हें हमने स्वयं बनाया है और जिनके अनुसार चलनेकी हमने स्वेच्छासे शपथ ली है, पालन न करनेकी यह भावना देखनेमें न आती।

इसलिए मेरे निकट, आन्तरिक शुद्धि हासिल करनेकी मख्य आवश्यकताके आगे हर अन्य चीज महत्वहीन हो गई है, क्योंकि मुझे लगता है कि जिस प्रकार हरिजन-सेवकोंकी शुद्धिके बिना अस्पृश्यता-निवारण नही हो सकता, उसी प्रकार यदि काग्रेसको उन लोगोकी, जिनसे मिलकर काग्रेस-संस्था बनी है, आन्तरिक शुद्धि द्वारा पोषण नही मिलता, तो एक शक्तिशाली राष्ट्रीय संस्थाके रूपमें वह समाप्त हो जायेगी। अभी इस समय मुझे कोई अन्य सन्देश नही देना है, क्योंकि मेरा मन अभीतक इस सर्वोपरि विचारमें ही व्यस्त है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १६-८-१९३४

१. देखिए पृ० ३२६-२७।

३३८. पत्र : न० चि० केलकरको[1]

[१७ अगस्त, १९३४ या उससे पूर्व][1]

कांग्रेस जहाँ-जहाँ चुनाव लड़ना चाहती है, वहाँ हर क्षेत्रके लिए कांग्रेस उम्मीदवारका चयन संसदीय बोर्ड करेगा। यदि विधानसभामें स्थान चाहनेवाला कांग्रेसी कांग्रेस कार्य-समितिके साम्प्रदायिक निर्णय (कम्यूनल एवार्ड) सम्बन्धी प्रस्ताव[3] के प्रति अन्तरात्मासे दुविधा रखता है, तो वह बोर्डके नाम अपने पत्र या अर्जीमें अपनी आपत्ति लिखेगा और यदि बोर्ड उसका नामांकनपत्र अन्यथा वांछनीय मानता है, तो वह उसकी दुविधाका आदर करेगा और उसे उम्मीदवार नामजद करेगा। अर्जी स्वीकृत या अस्वीकृत करनेका निर्णय पूरी तरहसे बोर्डके अधिकारकी बात होगी। श्री अणे इस स्थितिको जानते हैं।[4]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १८-८-१९३४

१ और २. साधन-सूत्रमें बताया गया है कि यह "श्री केलकरके उस तारके जवाबमें था जिसमें गांधीजी से आग्रह किया गया था कि वे कांग्रेस तथा राष्ट्रवादियोंके बीच एक समझौता करायें और साम्प्रदायिक निर्णय [कम्यूनल एवार्ड] के बारेमें मतदान करते समय काँग्रेसी सदस्योंको अन्तरात्माकी आवाज माननेकी स्वतन्त्रता प्रदान करें।" यह "नागपुर, १७ अगस्त" तिथिके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

३. देखिए परिशिष्ट १।

४. **दि हिस्ट्री ऑफ दि इंडियन नेशनल कांग्रेस,** खण्ड १, पृ० ५७६-७७ में पट्टाभि सीतारमैयाने बताया है कि श्री एम० एस० अणे और म० मो० मालवीयने समझौतेको स्वीकार नहीं किया। परिणामस्वरूप उन्होंने कांग्रेस संसदीय बोर्डसे इस्तीफा दे दिया और कांग्रेसी तथा अन्य लोगोंकी एक सभा कलकत्तामें १८ और १९ अगस्तको मालवीयजीकी अध्यक्षतामें बुलाई और उसने राष्ट्रवादी दलके गठनकी घोषणा की जिसका उद्देश्य विधानसभाओंमें और उनके बाहर साम्प्रदायिक निर्णय (कम्यूनल एवार्ड) तथा श्वेत-पत्रके खिलाफ आन्दोलन चलाना और इस उद्देश्यको आगे बढ़ानेके लिए विधानसभाओंके लिए उम्मीदवार खड़े करना माना गया।

३३९. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

१७ अगस्त, १९३४

दुबारा नहीं पढ़ा

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा भावपूर्ण और मर्मस्पर्शी पत्र मिला।[1] उसका उत्तर मेरी सामर्थ्यसे कहीं अधिक लम्बा होना चाहिए।

मुझे सरकारसे अधिक शराफतकी आशा थी। किन्तु तुम्हारे मौजूद रहनेने कमला के लिए और साथ ही मामाके लिए जो काम किया वह किसी दवा या डॉक्टरसे नही हो सकता था। मुझे आशा है कि जितने थोड़े दिनोंकी अपेक्षा है तुम वहाँ उससे अधिक ठहरने दिये जाओगे।

तुम्हारे गहरे दुःखको मैं समझता हूँ। अपनी भावनाओंको पूरी तरह और आजादीके साथ प्रकट करके तुमने बिलकुल ठीक किया है। परन्तु मुझे पूरा विश्वास है कि जो बात मैंने हमारे सामान्य दृष्टिकोणसे लिखी है उसे अधिक बारीकीसे पढ़नेपर तुम्हें पता चल जायेगा कि तुमने जो इतने दुःख और निराशाका अनुभव किया है, उसके लिए काफी कारण नहीं है। मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि तुमने मेरा साथ नहीं खोया है। मैं तुम्हारा वैसा ही सहयोगी हूँ जैसा तुम मुझे १९१७ में और उसके बादसे जानते हो। मुझमें वही लगन है जो कि सामान्य लक्ष्यके लिए तुमने मुझमें पाई थी। मुझे देशके लिए पूरे अर्थमे सम्पूर्ण स्वाधीनता चाहिए और वे सारे प्रस्ताव, जिनसे तुम्हे पीड़ा हुई है, उसी लक्ष्यको ध्यानमे रखकर तैयार किये गये हैं। उन प्रस्तावों और उनकी सारी कल्पनाकी पूरी जिम्मेदारी मेरी है।

मेरी समझमे मुझमें समयकी नाड़ीको पहचान लेनेका माद्दा सवा है। ये प्रस्ताव उसीके परिणाम हैं। अलबत्ता तरीके या साधनपर हमारे जोर देनेमें अन्तर है। मेरे लिए साधन उतने ही महत्वपूर्ण हैं जितना लक्ष्य; बल्कि एक तरहसे साधन अधिक महत्वपूर्ण है, क्योंकि उनपर तो हम कुछ नियन्त्रण रख सकते हैं। अगर साधनों पर हमारा काबू न रहे तो लक्ष्यपर वह बिलकुल ही नहीं रह जायेगा!

'विचारहीन बातों' के बारेमें प्रस्तावको निर्विकार होकर जरूर पढ़ो। समाजवादके विषयमें उसमें एक भी शब्द नही है। समाजवादियोंका अधिकसे-अधिक लिहाज रखा गया है, क्योंकि उनमें से कुछके साथ मेरा घनिष्ठ परिचय है। क्या मैं उनके त्यागको नही जानता? मगर मैंने देखा है कि वे सबके-सब अधीर हैं। क्यों न हों? बात इतनी ही है कि यदि मैं उनकी तरह तेज नही चल सकता तो मुझे उनसे कहना

१. १३ अगस्तका; देखिए परिशिष्ट–५।

पड़ता है कि ठहरो और मुझे अपने साथ ले चलो। अक्षरशः मेरा यही रवैया है। मैंने शब्दकोशमें समाजवादका अर्थ देखा है। परिभाषा पढ़नेसे पहले जहाँ मैं था, पढ़नेके बाद उससे आगे नहीं पहुँच सका। तुम बताओ, पूरा अर्थ जाननेके लिए मुझे क्या पढ़ना चाहिए? मैंने मसानी[1] की दी हुई पुस्तकोंमें से एक पुस्तक पढ़ी है और अब मैं अपना सारा फाजिल समय, नरेन्द्रदेवकी सिफारिश की हुई पुस्तक पढ़नेमें लगा रहा हूँ।

तुम कार्य-समितिके सदस्योंके प्रति कठोरता दिखा रहे हो। वे जैसे भी हैं, हमारे साथी हैं। आखिर हमारी संस्था एक स्वतन्त्र संस्था है। यदि वे विश्वासपात्र नहीं हैं तो उन्हें हटा देना चाहिए। परन्तु जो कष्ट कुछ दूसरे लोग सह चुके हैं, उन्हें वे न सह सकें तो इसके लिए उन्हें दोष देना अनुचित है।

विस्फोटके बाद हम रचना चाहते हैं। कदाचित् हमारा मिलना न हो, इसलिए अब मुझे ठीक-ठीक बता दो कि तुम मुझसे क्या कराना चाहते हो और तुम्हारे खयालसे तुम्हारे विचारोंका सबसे अच्छा प्रतिनिधि कौन होगा।

न्यास[2] के विषयमें बात यह है कि मैं तो उपस्थित नहीं था। वल्लभभाई थे। तुम्हारे रुखसे क्रोध प्रकट होता है। तुम्हें ट्रस्टियोंपर विश्वास रखना चाहिए कि वे अपना फर्ज अदा करेंगे। मैं नहीं समझता कि कोई बेजा बात हुई। मैं इतना व्यस्त था कि उसपर पूरा ध्यान नहीं दे सका। अब मैं कागजात और हर चीजका अध्ययन करूँगा। बेशक तुम्हारी भावनाओंका आदर दूसरे न्यासी पूरी तरह करेंगे। यह आश्वासन देनेके बाद मैं तुमसे कहूँगा कि इस मामलेको इस प्रकार व्यक्तिगत न समझो जैसा तुमने समझा है। यह तुम्हारे उदार स्वभावके अधिक योग्य होगा कि पिताजी की स्मृतिके लिए जितना लिहाज तुमको है, उतना ही अपने साथी ट्रस्टियोंको होनेका श्रेय दे सको। पिताजी की स्मृतिका संरक्षक राष्ट्रको बना दो और तुम राष्ट्रके एक अंग बन जाओ।

आशा है, इन्दु अच्छी तरह होगी और उसे अपना नया जीवन पसन्द आ रहा होगा। कृष्णाका क्या हाल है?

सस्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू कागजात, १९३४; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय। **ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स**, पृ० ११७-१९ भी।

१. एम० आर० मसानी; तात्पर्य शायद **व्हाट मार्क्स रियली मेन्ट** से है; देखिए पृ० ३३३।

२. आनन्द भवनका न्यास।

३४०. तार : जमनालाल बजाजको

१८ अगस्त, १९३४

जमनालालजी

श्री, बम्बई

महादेवने तुम्हारे बारेमें अच्छी खबर दी। बातचीत करनेकी इजाजत नहीं है। संसदीय बोर्डकी बैठक मुल्तवी कर दी। ताकत लौट रही है।

बापू

[अंग्रेजीसे]

पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० १३०

३४१. तार : हीरालाल शर्माको

१८ अगस्त, १९३४

डॉ॰ शर्मा,

खुर्जा

रामदास[1] के विषयमें तुम जो उचित समझो, करो।

बापू

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, (१९३२–४८), पृ० ८८ के सामनेकी अंग्रेजीकी प्रतिकृति से।

१. हीरालाल शर्माने बताया था कि रामदासके स्वास्थ्यमें काफी सुधार हुआ था। वह वर्धा जानेको आतुर था। लेकिन हीरालाल शर्मा इस बातके पक्षमें नहीं थे। उन्हें आशंका थी कि वहाँ रामदासको स्वास्थ्य कहीं फिर न गिर जाये। शर्माजी चाहते थे कि उसे विदेश भेज दिया जाये और किसी दूसरे ढंगके काममें लगाया जाये। इसलिए उन्होंने गांधीजी को लिखा था कि रामदासको ऐसी ही सलाह दें।

३४२. पत्र : डॉ० शेरवुड एड्डीको

१८ अगस्त, १९३४

प्रिय डॉ० एड्डी,

आशा करता हूँ, यह पत्र आपको उचित समयके भीतर मिल जायेगा। अगर आपको बिना हमारी भेंट हुए ही चले जाना पड़ा, तो मुझे सचमुच ही बहुत दुःख होगा। हालके उपवासके बाद स्वास्थ्य-लाभकी स्थितिमें मेरे डॉक्टर मित्र इतनी जल्दी मेरे वर्धा छोड़नेकी बात सुनना भी नहीं चाहते, और मुझे भी नहीं लगता कि मैं उनकी सलाहकी उपेक्षा करूँ। अत. यदि हम न मिल सकें तो आप जो मुझसे कहना चाहते हैं, उसे अधिक-से-अधिक जितना सम्भव हो सके, कृपया एक कागजपर लिख दें। मैं जानता हूँ कि परस्पर हार्दिक वार्तालापका वह बड़ा घटिया विकल्प होगा, परन्तु फिर भी मेरे लिए आपके पत्रका अपने-आपमें एक महत्व होगा।

आशा करता हूँ, आपकी समुद्री यात्रा मजेमें हुई होगी, और शेष यात्रामें भी वैसी ही खुशकिस्मती आपका साथ देगी।

हृदयसे आपका,

डॉ० शेरवुड एड्डी
बम्बई

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

३४३. पत्र : एच० ए० पॉपलेको

१८ अगस्त, १९३४

प्रिय रेवरेंड पॉपले,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। काश कि सिर्फ डॉ० एड्डीसे मिलनेके लिए ही मेरा बम्बई जा सकना सम्भव होता। लेकिन डॉक्टर दोस्त ऐसी किसी भी यात्राकी मनाही करते हैं, और मेरा मन नहीं करता कि उनकी सलाहकी उपेक्षा करूँ। दिन प्रतिदिन आ रही शक्तिमेंसे जितनी बने उतनी बचाकर मैं यथासम्भव शीघ्र ही खोई हुई शक्ति पुन. प्राप्त करनेका प्रयत्न कर रहा हूँ।

यह उपवास मेरे लिए बड़ा मूल्यवान अनुभव सिद्ध हुआ। 'हरिजन' के चालू अंकमें उसपर मेरे विचार[1] आपने शायद देखे हों।

रेव० एच० ए० पॉपले
ईरोड (दक्षिण भारत)

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागज़ात; सौजन्य : प्यारेलाल।

३४४. पत्र : भास्कर मुखर्जीको

१८ अगस्त, १९३४

प्रिय भास्कर,

पिछली १५ को महादेवको लिखा तुम्हारा पत्र मैंने पढ़ा। मैं सोचनेको बाध्य हूँ कि भंगियोंके स्कूल बन्द कर देनेमें तुमने जरा ज्यादा ही उतावलीसे काम लिया। जिस धारा ९१ को तुमने उद्धृत किया है, मैं उसका वह अर्थ नहीं लगाता जो तुम लगाते हो। वह धारा निगमको भंगी बालकों और बालिकाओंकी शिक्षापर एक लाख रुपयेके किसी अंशको भी खर्च करनेकी मनाही नहीं करती। बल्कि, इसके विपरीत, मैं तो उस धाराका यह अर्थ लगाता हूँ कि वह निगमको बाध्य करती है कि वह उस राशिका कुछ अंश भंगियोंपर खर्च करे। अगर वह धारा किसी भी कामकी हो, तो उसका यही अर्थ हो सकता है कि निगम सबसे पहले सबसे गरीब लोगों पर पैसा खर्च करे, न कि कलकत्ताके फ़ैशनेबल उपनगरोंपर। क्या निगमने उक्त धाराकी व्याख्याके सम्बन्धमें कानूनी सलाह ली है? अतः यदि इस मामलेमें निगमके अपना कदम वापस लेनेकी कुछ भी सम्भावना हो, तो मैं इसपर पुनर्विचारकी माँग करता हूँ।

तुम्हारे पत्रके अन्तिमसे पहले अनुच्छेदके सम्बन्धमें मैं चाहता हूँ कि तुम मुझे ब्यौरेवार बताओ कि हरिजनोंके लिए निगमने क्या काम किया है, इस समय क्या कर रहा है और पिछले बारह महीनोंमें उसने उनके लिए कितनी रकम खर्च की है।

यह पत्र मैं लिख रहा हूँ, इससे ही स्पष्ट है कि मैं शक्तिलाभ कर रहा हूँ।

जवाहरलालके जेलसे छूटनेसे बेचारी कमलाको शान्ति मिली, और कमलाकी बीमारीके कारण जवाहरलालके अनेक दोस्तोंपर चिन्ताका जो बोझ था वह भी हल्का हुआ।

बेबी और बच्चोंको प्यार। आशा है, तुम सब प्रकारसे मजेमें होगे।

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागज़ात; सौजन्य : प्यारेलाल।

१. देखिए "ईश्वर धन्य है", पृ० ३२६।

३४५. पत्र : हीरालाल शर्माको

१८ अगस्त, १९३४

चि० शर्मा,

जमनालालजी को तो ऑपरेशन हुआ है। मुंबईमें हस्पतालमें हैं। रामदासके बारेमें तार[1] दिया है। उचित किया जाय। देवीको ऐसे छोड़कर आनेका धर्म मैं नहि समजता हू। लेकिन इस बारेमें मेरा कोई आग्रह नहि हो सकता है। पिता धर्म प्रत्येक पिता अपने लिये बना लेता है। और तो अब क्या लिखुं? मिलनेसे अथवा खतोंसे बातें करेंगे।

बापूके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, १९३२-४८, पृ० ८९ के सामनेकी प्रतिकृतिसे।

३४६. पत्र : जमनालाल बजाजको

१९ अगस्त, १९३४

चि० जमनालाल,

तुम्हारी गाड़ी ठीक चलती जान पड़ती है। घाव भरनेके सम्बन्धमें अधीर न होना। समयपर अपने-आप भर जायेगा। काम करनेकी चिन्तामें कतई न पड़ना। बातचीत भी मत करना। कुछ खास कहना हो तो लिखकर बताओ। इस नियमका पालन करनेसे बहुत फायदा होनेकी सम्भावना है।

यहांकी चिन्ता बिलकुल न करना। मुझे कोई तकलीफ नहीं देता। अधिक काम नहीं करता हूँ। वजन ९६ हो गया है। तुम्हें आश्रमकी चिन्ता कतई नहीं करनी है। मदनमोहन वहीं रहे।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

यह तो सवेरे ४ बजेसे पहले लिखा गया था। उसके बाद कमलनयन आया। यदि डॉक्टर कहते हैं कि घाववाली तरफ करवट न लो तो तुम्हें अच्छा लगे या न लगे फिर भी उचित होगा कि तुम एक ही करवट या चित्त सोये रहो।

[गुजरातीसे]
पांचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० १२०

1. देखिए पृ० ३३८।

३४७. पत्र : उमादेवी बजाजको

१९ अगस्त, १९३४

चि० ओम,

तेरे पत्र मिले हैं। तू आलस न करना। रोज पत्र लिखनेका एक समय निश्चित रखना और तभी लिखना। इसलिए उस वक्त और कोई काम हो ही नही सकेगा। धीरज रखकर सुन्दर अक्षरोंमें लिखना। जमनालालजी क्या खाते हैं, क्या पीते हैं, कितनी नींद आती है, कष्ट कितना होता है, घाव कैसे भर रहा है, कौन-कौन मिलने आते हैं, यह सब विस्तारसे लिखना। बातें मत करना, न दूसरोंको करने देना। ऐसे नियमोंका पालन करनेसे घाव जल्दी भरेगा।

अपने समयका हिसाब देना। तुम सब सोते कहाँ हो? अस्पतालका वर्णन करना। वहाँ और कौन मरीज है?

गोपी अभी यही है। बीमार-जैसी ही रहती है। उसे पत्र लिखना। मदालसा रोज सेवामे समय लगाती है। तुम्हारा पत्र उसे देता हूँ।

अब सवेरे चार बजे का समय होने आया है। दातुन करके यह लिखने बैठा हूँ।

जानकीमैयाका पत्र पढ़कर प्रसन्न हुआ। अब तो खुश होंगी।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३३६

३४८. पत्र : कलकत्ताके कांग्रेसियोंको

१९ अगस्त, १९३४

मुझे कार्यकारिणी समितिके प्रस्तावके औचित्यमें विश्वास है। ऐसी कोई बात मुझे नही दिखी जिससे मेरा यह विश्वास विचलित हो सके। अतः मेरा खयाल है आपकी आशावादिताकी कोई ठीक वजह नही है। बनारसमें जिसे स्वीकृति प्रदान की गई थी अधिक-से-अधिक उस सीमातक सामंजस्य बैठाया जा सकता है; वह सीमा अभी तो अक्षुण्ण है।

समझौता किसीने पसन्द नही किया है; न कोई उससे सन्तुष्ट ही है। सभी लोग इसे गलत मानते हैं। लेकिन कोई भी कांग्रेसी, कांग्रेसी होनेके नाते ही उसे न स्वीकार कर सकता है और न अस्वीकार। क्योंकि अगर वह कोई एक पक्ष लेता है तो उसे पक्षधर माना जायेगा और तब वह पूरे राष्ट्रका प्रतिनिधित्व नही कर

सकता। आपकी आशावादिताका जवाब मैं आसानीसे दे सकता हूँ। लेकिन अगर यह इस विश्वासपर आधारित है कि मैं किसी तरह प्रस्तावपर फिरसे विचार करनेके लिए कार्यकारिणी समितिपर जोर डालूँगा तो मुझे यह बात आपकी आशावादिताकी ठीक वजह दिखाई नहीं देती।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, २४-८-१९३४

३४९. पत्र : च० राजगोपालाचारीको

१९ अगस्त, १९३४

चुनावोंसे सम्बद्ध सनातनियोंके पत्रका जो उत्तर तुमने प्रेसको भेजा है, उसकी नकल सहित तुम्हारा पत्र मिला। मैं समझता हूँ, तुम्हारा उत्तर सोलहों आने ठीक है। लेकिन मैं नहीं समझता कि सनातनियोंपर उसका कोई असर पड़ेगा, क्योंकि वे कभी बात ठीक समझना ही नहीं चाहते। लेकिन हाँ, ढुलमुलयकीन लोगोंको वह जरूर स्थिरता प्रदान करेगा।

मैं समझता हूँ, तुमने सुन लिया है कि संसदीय बोर्डकी बैठक यहाँ नहीं हो रही। वह अनिश्चित कालके लिए स्थगित कर दी गई है।

श्रीयुत च० राजगोपालाचारी
मद्रास

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य: प्यारेलाल।

३५०. पत्र : पी० जी० दाते तथा अन्य लोगोंको

१९ अगस्त, १९३४

प्रिय मित्रो,

तुम्हारा १२ अगस्तका पत्र मैंने कल ही देखा। जिस चुनावकी चर्चा तुमने की है, उसमें यदि तुम्हारे मत पंजीकृत नहीं हुए तो यह सचमुच बड़े खेदकी बात है। लेकिन तुम्हारे लिए उचित उपाय यह है कि तुम बम्बई प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके सचिवको अपनी शिकायत भेजो और यदि तब भी तुम्हें समाधान प्राप्त न हो तो कार्य-समितिको अपील करो।

हृदयसे तुम्हारा

श्रीयुत पी० जी० दाते तथा अन्य लोग
मारफत – दि बॉम्बे स्टुडेंट्स ब्रदरहुड
फ्रेंच ब्रिज, चौपाटी
बम्बई

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

३५१. पत्र : मोतीलाल रायको

१९ अगस्त, १९३४

प्रिय मोतीबाबू,

तुम्हारे पत्रके लिए धन्यवाद। मैं क्रमशः खोई हुई शक्ति प्राप्त कर रहा हूँ। मैं चाहता हूँ कि पहले तुम मुझे अपनी कार्यवाहियोंका ब्यौरेवार विवरण भेजो। तब, मैं यदि कुछ सुझाव दे सका तो अवश्य दूँगा।

सस्नेह।

मो० क० गांधी

श्री मोतीलाल राय
प्रवर्तक संघ
चन्द्रनगर

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

पूरी जिम्मेदारी लेनेके लिए तैयार हो गये हैं। मैं कुछ निश्चय करूँ, इसके पहले ऐसा लगता है कि तुम्हें एक बार यहाँ बुलाना पड़ेगा। समय रहते सूचित कर सकूँगा, इसकी आशा है।

मेरी ताकत ठीक लौट रही है, गति तो धीमी है, परन्तु मैं सन्तुष्ट हूँ।

यहाँ इस समय नरहरि, किशोरलाल, मगनभाई, सोमण और काकासाहेब हैं। ग्राम-संगठनके विषयमें बातचीत[1] चल रही है।

'हरिजन' ध्यानपूर्वक पढ़ रहे होगे। तुम्हें मालूम होगा कि कृष्णमाचारी और सुलोचना यहीं हैं। अमतुलसलाम और वसुमती मेरे साथ हैं। प्रभा तो है ही। शायद रामदास भी दो-चार दिनोंमें वापिस आ जायेगा।

खुर्जामें हैजा फैला हुआ है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८४०९ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

३५५. पत्र : मनु गांधीको

१९ अगस्त, १९३४

चि० मनुड़ी,

तू अपनी बड़ी माँको भूल गई, मुझे भी भूल गई, क्या यह ठीक है? तू क्या अध्ययन कर रही है, कहाँ कर रही है, मुझे लिखना। भाई[2] इस समय वहाँ हैं। तू घबराती तो नहीं है न? मौसीकी तबीयत कैसी रहती है? इस समय वहाँ कौन-कौन हैं?

सब समाचार लिखना। विद्या अभी यहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५३१) से; सौजन्य : मनुबहन एस० मशरूवाला।

१. देखिए पृ० ३२२-२६।
२. हरिलाल गांधी, मनु गांधीके पिता।

३५४. पत्र : नारणदास गांधीको

१९ अगस्त, १९३४

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। सिद्धिमतीके बारेमें समझ गया। उसे इस तरह नही जाना चाहिए था। मेरी राय है कि अब उसे आसानीसे पुनः प्रवेश नही दिया जाना चाहिए।

क्या जमनादास नौकरीकी तलाशमें कहीं निकल गया? मैंने चाहा था कि यहाँ उतरे, किन्तु नही उतरा। लगता है उसका क्रोध अभी तक शान्त नही हुआ। क्या तुम्हारी भेजी हुई गश्ती चिट्ठी उसने और दूसरे लोगोने नही पढी थी?

यह सन्तोषकी बात है कि लीलावतीका काम ठीक चल रहा है। यदि कुसुमको ज्वर आ रहा हो तो क्या उसका राणावाव चले जाना ठीक नही होगा? वह वहाँ अच्छी हो जाती है। चिमनलालका मामला भी करुणाजनक है। उसका स्वास्थ्य सुधरता ही नही है। अमलाके पत्रपर बहुत भरोसा मत कर लेना। वह यहाँ बहुत प्रसन्न रहती है। कुछ रास्तेसे भी लग रही है। जबतक मैं यहाँ बना हुआ हूँ, तब तक तो उसे यहाँसे और कही भेजना ठीक नही होगा। जब मै यहाँसे कही और चला जाऊँगा तब यदि उसकी हालत वहाँ आने जैसी लगी तो उसका बोझ तुमपर डालूँगा। अगर वह कहीं ठीक रह सकती है तो तुम्हारे ही पास, मै तो ऐसा ही मानता हूँ।

यदि केशुको चरखेके प्रयोगमें सफलता मिल जाये तो एक बड़ी बात कही जायेगी। वह अपना प्रयोग जारी रखे। अवधि तो नही बढ़ाई जा सकती। किन्तु इनामके लायक चरखा बना डाले तो सबको बड़ी खुशी होगी। इसलिए वह निश्चिंत रहे। अभीतक तो इनामके योग्य चरखा हाथ नही लगा है।

गोशालाके बारेमें मैं कुछ निश्चय नही कर सका हूँ। जमनालालजी अस्पतालमे है, उनके साथ भी सलाह-मशविरा करना है। तुम्हारे बारेमें मैं यह समझा हूँ कि तुम यह प्रयोग स्वतन्त्र रूपसे चलाते रहना पसन्द करते हो। और चाहते हो कि गोशाला हरिजन आश्रमको न सौंपी जाये। क्या मुझे तुम्हारी बात ठीकसे याद है?

क्या हरिलालकी चालढालमे कोई परिवर्तन हुआ? वहाँ संयमित रहता है या जैसा का तैसा ही है?

यहाँ तो सड़ी गर्मीका आलम है। बड़ी वर्षा हुई। जहाँतक बनेगा कन्याश्रमके लिए तुम्हें वहाँसे हटाना नही चाहूँगा। तुम वहाँ बहुत अच्छी तरह काम कर रहे हो। वहाँ सब-कुछ बिलकुल ठीक-ठाक करके ही वह जगह छोड़नी चाहिए। बिलकुल ही आवश्यक हो जाये तो अलग बात है — तब तो तुम हो ही। विनोबा

पूरी जिम्मेदारी लेनेके लिए तैयार हो गये हैं। मैं कुछ निश्चय करूँ, इसके पहले ऐसा लगता है कि तुम्हें एक बार यहाँ बुलाना पड़ेगा। समय रहते सूचित कर सकूँगा, इसकी आशा है।

मेरी ताकत ठीक लौट रही है, गति तो धीमी है, परन्तु मैं सन्तुष्ट हूँ।

यहाँ इस समय नरहरि, किशोरलाल, मगनभाई, सोमण और काकासाहेब हैं। ग्राम-संगठनके विषयमें बातचीत[1] चल रही है।

'हरिजन' ध्यानपूर्वक पढ़ रहे होगे। तुम्हें मालूम होगा कि कृष्णमाचारी और सुलोचना यहीं हैं। अमतुस्सलाम और वसुमती मेरे साथ हैं। प्रभा तो है ही। शायद रामदास भी दो-चार दिनोंमें वापिस आ जायेगा।

खुर्जामें हैजा फैला हुआ है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८४०९ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

३५५. पत्र : मनु गांधीको

१९ अगस्त, १९३४

चि० मनुड़ी,

तू अपनी बड़ी माँको भूल गई, मुझे भी भूल गई, क्या यह ठीक है? तू क्या अध्ययन कर रही है, कहाँ कर रही है, मुझे लिखना। भाई[2] इस समय वहाँ हैं। तू घबराती तो नहीं है न? मौसीकी तबीयत कैसी रहती है? इस समय वहाँ कौन-कौन हैं?

सब समाचार लिखना। विद्या अभी यहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५३१) से, सौजन्य : मनुबहन एस० मशरूवाला।

१. देखिए पृ० ३२२-२६।

२. हरिलाल गांधी, मनु गांधीके पिता।

३५६. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

१९ अगस्त, १९३४

भाईश्री वल्लभभाई,

आपके सन्देश मिले। स्वास्थ्य अच्छा हो जानेके बाद ही यहाँ आयें तो अच्छा होगा। २५ तारीखको एन्ड्रयूज आयेंगे। ऐसा लगता है कि तब आप यहाँ हों तो अच्छा रहेगा। मुझे जितने आरामकी जरूरत है वह तो यहाँ मिल ही रहा है। कोई परेशान नही करता। पहरेदार भी जमनालालजी की आज्ञाका अच्छा पालन कर रहे हैं। आपको भी यहाँ वहाँसे ज्यादा शान्ति मिलेगी। परन्तु यह तभी जब आपका बुखार बिलकुल उतर जाये और चैन पड़े। आपके आनेसे मणिको तो फायदा होगा ही।

मै समझता हूँ नाकका तो अभी कुछ इलाज नहीं हो सकता। अगर वहाँ रहनेसे इलाज हो सके तो, मेरे विचारमें, करा लेना उचित होगा। उसका परिणाम तो देख लें। अभी इसमें खतरा तो कुछ है ही नही। कुछ समय पड़े रहनेकी ही बात है, सो भले पड़े रहें।

कल जयप्रकाशका लम्बा पत्र आया था। वह दुखी है। उसने बहुत अध्ययन किया है, परन्तु यह नही कहा जा सकता कि सब पचाया भी है। अनुभव तो बिलकुल नहीं है। परन्तु अपना अध्ययन वाणीमें व्यक्त कर सकता है, इसलिए पढ़े-लिखे लोग चौंधिया जाते है। इससे उत्साहका नशा चढ़ता है और वह घरबार छोड़ता है, शरीरकी परवाह नही करता और धूमधाम मचाता है। वह यहाँ आनेको लिख तो रहा है। पर आ सके तब न!

कांग्रेससे मेरा निकलना तुरन्त तो होगा नहीं। मगर मैं अपने मनकी व्याकुलता आपको बताता रहता हूँ। आप सब जाने नहीं देंगे तबतक कैसे जाऊँगा? परन्तु मुझे तो महसूस होता ही रहता है कि मेरे सामने इसके सिवा दूसरा कोई मार्ग नही है। मालूम होता है मै कांग्रेसकी प्रगतिको रोक रहा हूँ। साधनसे चिपटे रहना लेकिन उसमें विश्वास न रखना, विश्वास रखनेवालेका उसपर अमल न करना — यह स्थिति कितनी दयनीय, कितनी भयंकर है। इससे कांग्रेसको मुक्त करना क्या आपका धर्म नही है? सड़न मिटानेका मार्ग सूझे, वहाँतक तो कोई हर्ज नही। परन्तु निकल जानेके सिवा दूसरा कोई रास्ता ही न हो तो क्या किया जाये? मेरे निकल जानेसे कांग्रेससे पाखण्ड चला जायेगा। सच-झूठ, हिंसा-अहिंसा, खादी, केलिको, जगन्नाथी, मलमल सब चल सकता है — अगर साधारण कांग्रेसीकी यह दृष्टि हो तो उसका अनुसरण करना ही उसके लिए ठीक है। परन्तु मेरे निकले

बिना यह होगा नही। मेरी सहमतिसे ये मर्यादाएँ नही हटाई जा सकती। मैं यह चाहूँगा भी नही। मेरे विरोधके बावजूद कांग्रेस ये प्रतिबन्ध हटा दे, तो वह मुझे ही निकालनेके बराबर हुआ न? नौबत यहाँतक आने देना क्या ठीक होगा? मैं चाहता हूँ कि आप राजाजी वगैरहसे इन विषयोंपर विचार करें। यहाँ आ सके तो धैर्यसे चर्चा कर लेंगे।

सितम्बरमें, या पूरी ताकत आजानेके बाद क्या करना है, इसपर भी हमें सोचना है। यह चर्चा तो करनी ही पड़ेगी। अवसर भी नजदीक आ गया है। जवाहरलालके क्रोधकी आग जितनी चमकती है, उतनी भयानक नही है। उन्हें अपने दिलका गुबार निकालनेका अधिकार था, सो निकाल लिया।[1] मेरे विचारमें अब वे शान्त हो गये हैं।

गुजरातके दुखी किसानोंके लिए आपका सोचा हुआ ही करना है, मगर इस विषयमें मेरे कुछ निश्चित विचार हैं।

नगरीय बोर्ड का जो आप चाहते थे वही हुआ, यद्यपि मुलतवी रहनेका कारण तो और ही था।

बस, अब लगता है कि आज बहुत लिख लिया।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–२ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० ११५-१६

३५७. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

२० अगस्त, १९३४

भाई वल्लभभाई,

आपकी एक बातका जवाब देना रह गया। . . .[2] के पत्रका उत्तर मैं तुरन्त दे सकता हूँ, परन्तु . . .[3] वगैरहका विचार हमें करना चाहिए। फिर इस विषयमें मेरे जो विचार है, वे क्या पूरे आपके गले उतरते है? मुझे तो वे ही सही मालूम होते है। चोरकी माँ कोठरीमें मुँह छुपाए, इसमें भी कोई लाभ[4] है? इसलिए . . . वगैरह अगर हमारी तरफसे मौन चाहें, तो रखा जा सकता है, या हम जिसे कांग्रेस की वर्तमान नीति मानते हैं उसके अनुसार वक्तव्य प्रकाशित करें। या मैं अपनी

१. देखिए परिशिष्ट–५।
२ और ३. ये नाम साधन-सूत्रमें छूटे हुए हैं।
४. एक गुजराती कहावत जिसका अर्थ है "अपने कष्टोंको चुपचाप सहना।"

जिम्मेदारीपर अपनी स्वतन्त्र राय जाहिर करूँ। . . . को बुलाकर आप कुछ तय कीजिये और मुझे लिखिये। फिर मैं मसविदा तैयार करके भेजूँगा[1]। इस बीच . . . को लिखता हूँ कि आपके साथ पत्र-व्यवहार कर रहा हूँ, बादमें विस्तृत उत्तर मिलेगा। वह व्यर्थ जल्दी मचा रहा है। मेरी रायमें उतावलीकी कोई जरूरत नही है।

महादेवको प्रयागजी भेजनेकी बात समझ ली। सोच रहा हूँ। अपने पत्रके जवाबकी प्रतीक्षा करूँ?

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–२ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० ११७

३५८. पत्र : जमनालाल बजाजको

२० अगस्त, १९३४

चि० जमनालाल,

कल विनोबाके रवाना होनेके बाद डॉ० जीवराजका बहुत अच्छा तार मिला। उससे मालूम हुआ कि फिर खून-जानेकी शिकायत नही हुई और दर्द भी कम हुआ। फिर भी ठीक हुआ जो विनोबा वहाँ कुछ दिनोके लिए चले गये। उनके जानेका कारण कमलनयन है, यह तो मालूम होगा। कमलनयन खुद तुम्हारी शनिवारके दिनकी तकलीफ देखकर घबरा गया; इसलिए यहाँ पहुँचते ही उसने मुझे महादेवके हाथ सन्देश भेजा। मैंने सुझावका स्वागत किया और विनोबाको खबर भेजी और वे तुरन्त तैयार हो गये। मदालसाकी भी इच्छा हुई, परन्तु वह तो भक्त है न? इसलिए विनोबाकी मंशा देखकर रुक गई। उसका संयम उसे फलेगा। रह गई सो ठीक हुआ। अब यदि दर्द मिटा हो और चित्त शान्त हुआ हो तो विनोबाको जल्दी छुट्टी दे देना। परन्तु जरूरत हो तबतक वे भले ही वहाँ रहें। यहाँके प्रबन्धकी व्यवस्था हो रही है, जिसमें विनोबा रात-दिन व्यस्त रहते हैं।

विद्याभ्यास-सम्बन्धी तुम्हारी प्रतिज्ञाका पालन अवश्य होगा। तुमको आश्वासन देनेके लिए इतना लिख दिया है। इसकी चर्चा विनोबाके साथ करनेकी जरूरत नही। इस समय तुमको केवल अपना स्वास्थ्य जल्दी ठीक करनेकी साधना करनी है। यहाँ की अथवा दूसरी और कोई भी चिन्ता ढोनेकी जरूरत नही। मेरी चिन्ता तो बिलकुल ही न करना, क्योंकि गाड़ी अच्छी तरह चल रही है। राधाकिशन और शिवाजी बहुत अच्छी तरह पहरा दे रहे हैं। तुम बहुत नहीं बोलते होगे। डॉक्टर जो छूट दें उसका उपयोग कंजूसीसे करनेमें ही हित है। डॉ० जो स्वयं कहें वह अगर धर्म-विरुद्ध न

१. देखिए, "पत्र : वल्लभभाई पटेलको", ५ सितम्बर, १९३४ से पूर्व।

हो तो करना चाहिए, परन्तु हमारी इच्छाके वश होकर कोई छूट दे तो उसकी बात और है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

जाजूजी मिलने आये थे और सब खबर दे गये। मदनमोहनको भेजनेमें कोई जल्दबाजी न करना। विश्वास रखो कि यहां किसीको किसी प्रकारकी झंझट नहीं है।

[गुजरातीसे]
पांचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० १३१

३५९. पत्र : उमादेवी बजाजको

२० अगस्त, १९३४

चि० ओम

केवल वचनका पालन करनेकी खातिर चाहे जैसे अक्षर बनाकर बेगार टालनेको तुम पत्र लिखती हो, तो मुझे तुम्हारे पत्र नहीं चाहिए। वचनका पालन करो तो मन और कर्मसे। मनसे वचन पालन करनेसे तो जी चुराओ और कर्मसे पालन करनेका पुण्य प्राप्त करो, यह असम्भव बात है। मुझे यह जरा भी पसन्द नहीं। क्या मैंने यह नहीं सिखाया कि जो करो, वह ठीकसे करो और सुघड़तासे करो? छोटे या बड़े किसी भी काममें बेगार न टालो।

एक पल भी व्यर्थ न जाने दो।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पांचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३३६

३६०. पत्र : मीराबहनको

२१ अगस्त, १९३४

चि० मीरा,

अब यह बताने की जरूरत नहीं है कि मैं किस तरह प्रगति कर रहा हूं। उस के प्रमाणके लिए यह पत्र काफी है। खुराक तकरीबन सामान्य हो गई है।

तुम्हारा पत्र पर्दाफाश करता है, लेकिन मैं अपनी क्रियाविधिमें फेर-बदल नहीं करना चाहता। ध्येयको अहित हम स्वयं ही पहुंच सकते हैं; और कोई नहीं। कमोबेश जो कुछ वे करते हैं करने दो। उनकी नीयत नेक है। बस, हमारे लिए इतना ही काफी है। जैसाकि तुम जानती हो, वहां जो कुछ काम हुआ है मैंने

उसे बहुत महत्त्व नही दिया है। यद्यपि जो-कुछ तुमने कहा है, उसके आधारपर म कोई कार्रवाई करना नही चाहता, लेकिन मै चाहूँगा कि तुम अगाथा और म्यूरियल दोनोंसे साफ-साफ और विस्तारसे बातें करो और वे जो-कुछ कहें उसे सुनो। जहाँ तक बड़े लोगोंकी बात है, मैं तुम्हारी इस बातसे पूर्णतया सहमत हूँ कि तुम्हें स्वय सीधे उनसे भेंट करनी चाहिए। मुझे पक्का विश्वास है कि वे सभी तुमसे मिलेंगे। अगर न मिले तो तुम्हें चिन्ता करनेकी जरूरत नही है।

दारा का सवाल भिन्न और कठिन है। किस तरह सहायता की जाये किसीको पता नही है। मेरे सामने वह हमेशा एक रहस्य ही रहा है। ब्रॉकवे[1] नेता माना जाता है। लेकिन मुझे वह नेता नही लगता। दाराके मामलेमें उसका रुख क्षमायाचकका था और उत्साही तो वह किसी भी मानेमें नहीं था। मुझे डर है हम शायद ही उसके लिए कुछ कर पायें। हाँ, उसके साथ पत्र-व्यवहार जारी रखनेमें कोई दिक्कत नही है। मित्रों या 'फैलोशिप ग्रुप' के लिए हम ज्यादा कुछ नही कर रहे हैं। हम उन्हें कुछ दे भी नही रहे हैं। अगाथाको ही बस देते है। अच्छा हो यदि हम शेक्सपियरकी यह सलाह मानें: "सबकी सुनो, किसीसे कुछ कहो नही"। सभी खबरे अपने पास रखना और जब मिलेंगे तो बातें होंगी, अगर मिल पाये तो। 'अगर' शब्द मात्र सतर्कताके लिए है, उसका कोई महत्त्व नही है। इस समय स्वास्थ्य-लाभके अलावा मेरे पास कोई योजना नही है। २५ तारीखको एन्ड्रयूज बम्बई पहुँच रहे हैं। २६ को उन्हें मेरे साथ होना चाहिए।

जवाहरलाल तथा औरोंके बारेमें तुम्हे महादेव और प्यारेलालमें से जो भी पत्र-व्यवहार करता होगा, उससे जानकारी हासिल होगी।

उपवास तोड़े आज ठीक एक सप्ताह हो गया।

सस्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२९६) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७६२ से भी।

१. फेनर ब्रॉकवे।

३६१. पत्र : सिस्टर अमताको

२१ अगस्त, १९३४

प्रिय अमता,

तुम्हारा मूल्यवान पत्र मुझे ठीक उपवासकी समाप्तिके बाद मिला। भगवान तुम सब क्लार्क[1] बहनोंको प्रसन्न रखे। मुझे अभी भी बहुत पत्र लिखनेका प्रयास नहीं करना चाहिए, यद्यपि तुम यह जानकर प्रसन्न होगी कि मैं धीरे-धीरे किन्तु निश्चित रूपसे खोई हुई शक्ति पुन: प्राप्त कर रहा हूँ। बस, मुझे अभी भी सावधानी बरतनेकी जरूरत है।

तुम सबको स्नेह।

बापू

सिस्टर अमता
एरेमो, फ्रेन्सेस्कैनो
ट्रेवी (अम्ब्रिया)

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

३६२. पत्र : जी० आर० सहगलको

२१ अगस्त, १९३४

प्रिय मित्र,

तुम्हारे उदार प्रस्तावके लिए धन्यवाद। तुम वहाँ क्या कर रहे हो? वहाँ तुम्हें क्या मिलता है, तुम कौन-कौनसे विषय पढ़ा सकते हो और कितने वेतनकी आशा करोगे? क्या तुम विवाहित हो? तुम्हारी उम्र क्या है? तुम्हारे कोई आश्रित हैं क्या, अगर हैं तो वे कौन हैं? तुम्हारे पिता क्या कर रहे हैं?

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

श्री जी० आर० सहगल
मारफत गुरुकुल
सूपा, व्हारता नवसारी

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात, सौजन्य : प्यारेलाल।

१. सन्त फ्रान्सिसके दलाल्की फ्रान्वेन्टकी बहनें; देखिए खण्ड ५२, पृ० ६०।

३६३. पत्र : एस० गणेशनको

२१ अगस्त, १९३४

प्रिय गणेशन,

मुझे खुशी है कि तुम्हारी योजना नियमित रूपसे प्रगति कर रही है। उतावली मत करना, बल्कि मजबूत आधारपर तैयार करना।

अगर उक्त लड़केका केवल नाममात्रको धर्म-परिवर्तन हुआ था और अगर वह ईसाई-धर्मके बारेमें अथवा किसी भी धर्मके बारेमें कुछ नही जानता तो, मेरी रायमें, वह अपने जन्मगत धर्मसे कभी विच्छिन्न हुआ ही नही। और तब उसके पुन; धर्म-परिवर्तनका प्रश्न ही नही उठता। लेकिन अगर उसका प्रामाणिक रीतिसे धर्म-परिवर्तन हुआ है, तो तुम्हे क्या पड़ी है कि उससे पुनः धर्म-परिवर्तन कराओ। उसका धर्म उसके लिए अपनी निजी चीज होना चाहिए और जो-कुछ वह है, उसके लिए उसे भगवानके प्रति उत्तरदायी होना है। मै समझता हूँ, बात बिलकुल साफ हो गई होगी।

तुम्हारे ईसाई लड़को को भर्ती करनेपर कोई आपत्ति नही हो सकती, लेकिन वे लड़के साधारण-से हरिजन-कोष पर भार नही बन सकते। उनके लिए छात्रवृत्ति तुम्हें अपने निजी मित्रोंसे जुटानी पड़ेगी। यदि छात्र और प्रकारसे योग्य है तो यह दु:खकी बात होगी कि धनके अभावमें उन्हें निकाल देना पड़ा। लेकिन फिर भी यह गलत होगा कि उनके खर्चका भुगतान उस कोषसे हो जो केवल हिन्दुओके लिए उद्दिष्ट है।

तुम्हारा,
बापू

श्री एस० गणेशन
८ पाईक्राफट्स रोड
ट्रिप्लिकेन, मद्रास

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य: प्यारेलाल।

क्या जगदीश पूरी तरह तैयार हो गया है? तुम दोनों शरीरसे बिलकुल ठीक हो गये हो?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५५१)से; सौजन्य : लीलावती मुन्शी।

३६७. पत्र : क० मा० मुन्शीको

२१ अगस्त, १९३४

भाई मुन्शी,

मेरी तबीयत अब दिनपर-दिन सुधरती जा रही है और मैं रोज अधिकाधिक काम कर पा रहा हूँ। शंकरलालको आपने जो टिप्पणी दी थी, उसपर सरसरी नजर डाल गया था। उसका सार्वजनिक उपयोग तो अभी नहीं करना है। कांग्रेसके चुनावके बारेमें आपका सुझाव मुझे पसन्द आया है। किन्तु वह अधूरा है। जो-जो सुधार आपको आवश्यक लगें, उन्हें लेखबद्ध कर लीजिए। उपनियम भी लिख डालिए। कितने ही सुझावोंपर अमल करनेके लिए संविधानमें परिवर्तन करने पड़ेंगे। इनके बारेमें भी सुझाव देनेमें संकोच मत कीजिए। इसके लिए आपको समय निकालना पड़ेगा। बने, तो निकालिए।

पत्र-पत्रिकाओंमें आप जो लिख रहे हैं, उसकी कतरनें भेजें तो समय निकाल कर पढ़नेका प्रयत्न करूँगा। महादेव अथवा प्यारेलाल पढ़कर उनका सार मुझे सुना सकें, इसके लिए भी कोई समय निश्चित नहीं है। कोई भी ऐसा नहीं है जिसे अपने कामसे सिर उठानेका समय मिलता हो। अगर कोई सिरतक उठानेका समय पा भी जाये तो मुझे फुर्सतमें नहीं पायेगा।

बम्बईकी कांग्रेसका काम सचमुच कठिन है। आपने जो चित्र खींचा है, बिलकुल सही है। ऐसी स्थितिमें कांग्रेसकी शोभा बनाये रखना सरल काम नहीं है। आपसे जो बने, करें।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५५२) से; सौजन्य : क० मा० मुन्शी।

३६५. पत्र : जमनालाल बजाजको

२१ अगस्त, १९३४

चि० जमनालाल,

कल तुम्हारे बारेमें अच्छी खबरे मिलती ही रही। शामको डॉ० जीवराज और डॉ० रजबअलीका सम्मिलित तार मिला। अब अगर इसी तरह प्रगति जारी रहे तो बहुत जल्द आराम हो जाना चाहिए। लेकिन जल्दबाजी नही करनी है। जैसा हो वैसा भले ही चले। काममें जुटनेकी जल्दी न करना। ओमसे कहना कि आज वहाँसे डाक बिलकुल नही आई। शायद आज तार आये।

डॉ० रजबअलीको मेरा वन्देमातरम् वगैरह कहना। वे जितना ध्यान दे रहे है, उसके लिए क्या कहूँ? डॉ० जीवराजके लिए एक पुर्जी साथ है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९३९) से।

३६६. पत्र : लीलावती मुन्शीको

२१ अगस्त, १९३४

चि० लीलावती,

तुम्हारा पत्र मुझे मिल गया था। मै तुम्हारे एक सुझावपर अमल करनेका प्रयत्न कर रहा हूँ, यानी कुमारप्पाको इसमे लानेका। मेरा 'स्वदेशी' के लिए लिखना मुश्किल होगा? मै एक ही वक्तमें दो घोड़ोंपर सवारी नही कर सकता। 'हरिजन' को अधिक व्यापक बनानेके मेरे निश्चयके बारेमें पढ़ा होगा। अतः मेरे मनमें जो विचार उठेंगे, वे तो उसमे जायेंगे। मेरे विचारोंका भंडार सीमित होता है, अतः एक ही वस्तु अनेक पत्रोको नही दे सकता। अभी फिलहाल तो मै 'हरिजन' में जो-कुछ लिखूँ उसीसे तुम सन्तुष्ट रहना। हाँ, 'स्वदेशी' मुझे भेजती रहना। क्या वहाँ नई नीति स्वीकृत हो गई? लल्लूकाका तो कहते थे, पहले जैसी ही है। क्या तुम्हें नया रूप पूरी तरह समझमें आ गया? उसमें रस ले पाती हो? उस ढंगसे सोच पाती हो?

क्या जगदीश पूरी तरह तैयार हो गया है? तुम दोनो शरीरसे बिलकुल ठीक हो गये हो?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५५१)से; सौजन्य: लीलावती मुन्शी।

३६७. पत्र : क० मा० मुन्शीको

२१ अगस्त, १९३४

भाई मुन्शी,

मेरी तबीयत अब दिनपर-दिन सुधरती जा रही है और मैं रोज अधिकाधिक काम कर पा रहा हूँ। शंकरलालको आपने जो टिप्पणी दी थी, उसपर सरसरी नजर डाल गया था। उसका सार्वजनिक उपयोग तो अभी नही करना है। कांग्रेसके चुनावके बारेमें आपका सुझाव मुझे पसन्द आया है। किन्तु वह अधूरा है। जो-जो सुधार आपको आवश्यक लगें, उन्हे लेखबद्ध कर लीजिए। उपनियम भी लिख डालिए। कितने ही सुझावोंपर अमल करनेके लिए संविधानमें परिवर्तन करने पड़ेंगे। इनके बारेमें भी सुझाव देनेमें संकोच मत कीजिए। इसके लिए आपको समय निकालना पड़ेगा। बने, तो निकालिए।

पत्र-पत्रिकाओमें आप जो लिख रहे हैं, उसकी कतरनें भेजें तो समय निकाल कर पढ़नेका प्रयत्न करूँगा। महादेव अथवा प्यारेलाल पढ़कर उनका सार मुझे सुना सकें, इसके लिए भी कोई समय निश्चित नही है। कोई भी ऐसा नही है जिसे अपने कामसे सिर उठानेका समय मिलता हो। अगर कोई सिरतक उठानेका समय पा भी जाये तो मुझे फुर्सतमें नही पायेगा।

बम्बईकी कांग्रेसका काम सचमुच कठिन है। आपने जो चित्र खींचा है, बिलकुल सही है। ऐसी स्थितिमें कांग्रेसकी शोभा बनाये रखना सरल काम नही है। आपसे जो बने, करें।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५५२) से; सौजन्य: क० मा० मुन्शी।

३६८. पत्र : नारणदास गांधीको

२१ अगस्त, १९३४

चि० नारणदास,

. . . .[1]का दु:खसे भरा हुआ पत्र मिला है। मुझे लगा कि इसे तुम्हारे पास भेजना ठीक रहेगा; भेज रहा हूँ। इसका सार लिखकर भेजना ठीक नहीं होगा। उसका घाव भरनेकी कोशिश करना। कहीं कुछ गलतफहमी हो गई है। वह बहुत तुनकमिजाज हो गई है। उसे इस बीच काफी आघात लगे हैं। शायद और भी आघात लगें। कह नहीं सकते कि समस्या कब सुलझेगी? इस बीच उसको सान्त्वना देनेकी कोशिश करना।

मेरा पिछला पत्र[2] मिला होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८४१० से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

३६९. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

२१ अगस्त, १९३४

भाई वल्लभभाई,

आपका पत्र मिला। वहाँ आपकी उपस्थितिकी आवश्यकता समझ सकता हूँ। तुलना तो आप ही कर सकते हैं। यहाँ या वहाँ, दोनों ही जगह हमें एक ही किस्मका काम करना है। जहाँ ज्यादा जरूरत हो वहीं बसना है। इसलिए जो उचित जँचे वही कीजिए। बम्बईके कांग्रेस-कार्यके बारेमें मेरी राय है कि जिन्होंने उसका जिम्मा लिया है, वे अपने ढंगसे उसे पूरा करें या उसपर अधिकार छोड़ दें। छिपानेसे कबतक काम चलेगा?

कांग्रेसकी शुद्धिका सवाल बड़ा है। इसकी विस्तृत चर्चा तो जब मिलेंगे तभी हो सकती है। . . .[3]के बारेमें आप जो लिख रहे हैं वही मैं भी मानता हूँ। कांग्रेसको अपनी नीति तय करनी ही पड़ेगी। . . .[4]को बुलाकर बात की जाये, तो निपटारा हो सकता है। . . .[5]का पत्र आया था। उसे मैंने लिखा है कि

१. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिया गया है।

२. देखिए पृ० ३४६-७।

३, ४ और ५. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिये गये हैं।

सितम्बरके पहले सप्ताहमें आये और तारीख आपसे तय करा ले। अगर आपका आना असम्भव हो जाये, तो मैं उससे जो माथापच्ची करनी होगी कर लूंगा। आपको दिखाये बिना कुछ भी लिखकर नही दूंगा।

गुजरातके बारेमें आपकी बेचैनीको पूरी तरह समझता हूँ। जैसा ठीक लगे वैसा कीजिए। हमें जो समझना है वह भविष्यको दृष्टिमें रखकर समझना है।

एन्ड्रचूज आयें तब जी भरकर बातें कर लीजिये। यहाँ जो होगा वह लिखता-लिखाता रहूँगा।

महादेव आज प्रयाग जायेंगे। शनिवारतक लौट आयेंगे।

शक्तिसे अधिक काम करके फिर तबीयत न बिगाडें।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

काकाकी बात तो रह ही गयी। काकाने मेरी सम्मतिसे निर्णय[1] किया। मुझे वह पसन्द आया। इसमें उनको कोई दु:ख नही था, केवल कर्त्तव्य-परायणभाव था। आपको लिखनेका तो मैंने ही सुझाया था। आपको अधिकार है या नही, यह तो मैंने सोचा भी नही।[2] ट्रस्टियोंसे न पूछनेके बावजूद पूछा है ऐसा लिखने[3]के कारण काकाको भारी आघात लगा है। वह ठीक ही था।

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० ११८-९।

३७०. पत्र : अन्नपूर्णाको

२१ अगस्त, १९३४

चि० अन्नपूर्णा,[4]

तुमारा खत बहुत दिन पे मिला। रोज सूत कितना कातती है? सबकी गति क्या है, नं० क्या है।

सबकी प्रकृति अच्छी होगी।

देहातके रास्ते पक्के बनानेकी कोशीश की जाय। देहाती उसमें मदद देवे तो बहुत कम खर्चसे ग्राम सुधार हो सकता है।

१. सभी न्यासोंसे इस्तीफा देनेका।

२. तात्पर्य वल्लभभाईकी सलाहके बिना विद्यापीठ पुस्तकालयको, जिसके वे भी एक ट्रस्टी थे, अहमदाबाद-नगरपालिकाको सौंपनेसे है; देखिए पृ० २७७-८।

३. कलक्टर, अहमदाबादको; देखिए खण्ड ५५, परिशिष्टांश पृ० ४८१।

४. गोपबन्धु चौधरीकी पुत्री।

पिताजी के पत्रका उत्तर ठक्कर बापाने दिया होगा। अब तो मैंने थोड़ा-थोड़ा लिखना शुरू कर दिया है। मुझे लिखा करो।

बापुके आशीर्वाद

श्री अन्नपूर्णा कुमारी[1]
बारी[2], कटक[3]

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २७८६) से।

३७१. तार: प्रभाशंकर पट्टणीको

सर प्रभाशंकर पट्टणी
भावनगर

२२ अगस्त, १९३४

तलाजा[4] के हरिजनोंके साथ हुए दुर्व्यवहारके आरोपके बारेमें आशा है आप आवश्यक कार्रवाई कर रहे हैं।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९३४) से। सी० डब्ल्यू० ३२५० से भी; सौजन्य: महेश प्र० पट्टणी।

३७२. पत्र: प्रभाशंकर पट्टणीको

२२ अगस्त, १९३४

सुज्ञ भाईश्री,

आपका तार मिला था। भगवान जबतक इस शरीरसे कुछ भी सेवा लेना चाहेंगे, तबतक इसे बनाये रखेंगे। जब इसकी जरूरत नहीं होगी, तब तो एक जम्हाई भी प्राण लेनेको काफी होगी न? मेरी शक्ति लौट रही है। अब धीरे-धीरे कामकाज हाथमें लेता जा रहा हूँ।

साथका पत्र पढ़िये। यदि इसमें लिखा विवरण सच हो, तो आप अपने किसी मित्रकी ऐसी दुर्गति होनेपर जो उपाय करते, वह कीजियेगा।

आपका,
मोहनदास

१, २ और ३. रोमन लिपिमें हैं।
४. देखिए "असह्य दुर्व्यवहार" २-९-१९३४ भी।

[पुनश्च]

यह पत्र लिख चुकनेके बाद भावनगरसे अधिक विवरण सहित तार आया। इसलिए मैंने तार[1] किया, और अब यह पत्र भेज रहा हूँ।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९३५) से। सी० डब्ल्यू० ३२५१ से भी; सौजन्य : महेश प्र० पट्टणी।

३७३. पत्र : अगाथा हैरिसनको

२२ अगस्त, १९३४

प्रिय अगाथा,

धीरे-धीरे मेरा स्वास्थ्य सुधरता जा रहा है, तुम्हें यही सूचित करनेके लिए पत्र लिखा है। सात दिनोंके इस आरामकी कीमत मुझे सात-आठ पौंड वजन के रूपमें देनी पड़ी। तुम्हारे पत्र और तारसे तुम्हारी चिन्ताका एहसास हुआ। उपवास तो मुझे करना ही था। मेरे दोस्तोंको मेरे इस स्वभावको बर्दाश्त करना ही है, क्योंकि मेरा यह पिछला उपवास कदाचित् अन्तिम उपवास न हो। संसारकी नजरोंसे गिरकर तो मैं जी भी सकता हूँ, पर अपनी नजरसे गिरकर कदापि नहीं जी सकता।

ताजा गतिविधियोंकी जानकारी महादेव और प्यारेलालसे तथा चन्द्रशंकर जो कतरनें भेज रहा हो, उससे मिलेगी। इन पत्रोंमें जो-कुछ लिखा गया है, मीराको भी वह सब नहीं लिखा गया होगा। इसलिए तुम जरूरी समझो तो मीराको पत्र दिखाती रहना। वह व्यावहारिक बुद्धिसे काम लेती जान पड रही है। अपनी प्रतिक्रिया जैसी भी हो, उसे जरूर बताना।

बेचारा कमलानी![2] उसके बारेमें तुम और पोलक जो-कुछ जानते हो, लिखना।

सी० एफ० एन्ड्रचूज २५ तारीखको बम्बई पहुँच रहे हैं। २६को कदाचित् वे यहाँ रहें। तबतक तुम, क्या होने जा रहा है, इसे लेकर चिन्ता मत करना। मेरा कोई बिलकुल ही निश्चित कार्यक्रम नहीं है। बंगाल और सीमाप्रान्त तो मुख्य हैं ही। लेकिन कार्यकी ठीक-ठीक रूपरेखा अभी मेरी नजरमें नहीं है। मैं जल्दबाजी में कोई बडा खतरा पैदा नहीं करना चाहता। पर मेरे लिए स्थिति किसी भी क्षण दुष्कर बन सकती है? मुझे घूमने-फिरनेकी गुंजाइश मिलनी ही चाहिए। काल-कोठरीमें कोई भी ऊब जायेगा — मेरे-जैसा खुली हवाका प्राणी तो और भी अधिक। इस दुःखी देशमें यह अस्वाभाविक स्थिति ही अब स्वाभाविक होती जा रही है। मैंने अपने मनकी स्थिति बतानेके खयालसे ही तुम्हे यह लिखा है, न कि इस खयालसे कि तुम और ज्यादा काम करो। अगर हम यहाँ कुछ नहीं कर पा रहे हैं तो तुम

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२. देखिए पृ० ३१९।

इने-गिने लोग वहाँ क्या कर सकते हो? और मैं यह स्वीकार करता हूँ कि हम कुछ नही कर रहे हैं या जो कर रहे हैं वह काफी नही है। स्वास्थ्य-लाभकी अवधि समाप्त होनेपर मुझे ऐसे एक माहौलमें काम करना पड़ेगा। तुम भयभीत मत हो जाना। मैंने जो-कुछ कहा है, उसमें नया कुछ नही है। तुम्हे सब-कुछ पता है। यहाँ इनका जिक्र यह बतानेके आशयसे मैंने किया है कि तुम्हारे भारत छोड़नेसे पूर्व जो स्थिति थी तकरीबन आज भी वही है। सविनय अवज्ञा के सारे सामान्य कैदी तक रिहा नही किये गये। और जवाहरलालके साथ तो असाधारण बर्ताव हुआ है। किसी भी दिन उन्हे गिरफ्तार किया जा सकता है। फिलहाल वे मुक्त हैं। कोई अशोभन कार्य किये बिना वे जेल नही जा सकते और सरकार की किसी भी क्षण उन्हें गिरफ्तारीकी सूचना मिल सकती है। बेचारी कमलाको, जिसकी देखभालके लिए उन्हे रिहा किया गया है, इससे कोई राहत नही मिल पाई है। यह निहायत ही कठोर क्रूरता है। प्रतिज्ञा-पत्र देनेके बावजूद बहुत-से कैदियोको बिना किसी कारण अभीतक रोक रखा गया है। जमीन अभीतक जुर्मानेके बदले कुर्क की जा रही है। मेरी अहिंसाकी परीक्षा हो रही है। लेकिन मेरी अपनी इच्छा कोई कदम उठानेकी नही है। जबतक ईश्वर मुझसे काम कराना चाहता है, मैं सह रहा हूँ। मेरी नहीं बल्कि उसकी इच्छा पूरी होगी।

मीरा और म्यूरियलको भी इसे जरूर पढ़ा देना, तथा पोलक और जिसको तुम चाहो।

तुम्हें और तुम्हारी बहनको, जिसके छोटे-से पत्रका जवाब मैं न दे सका, स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४७९) से।

३७४. पत्र: म्यूरियल लेस्टरको

२२ अगस्त, १९३४

प्रिय म्यूरियल,

अगाथाको लम्बी चिट्ठी[1] लिखनेके बाद यह पत्र हाथमें ले रहा हूँ। इसलिए अब मुझे संक्षेप करना चाहिए। सात दिनके उपवासके बाद मेरा स्वास्थ्य जितना ठीक हो सकता है, उतना ही है।

अगर समय निकाल सको, तो मेरी इच्छा है कि रूसके अपने अनुभव मुझे बताओ।

राजकुमारी अमृतकौरके लिए अहिंसापर अपने विचार लेखबद्ध करनेका जो काम तुमने मुझे सौंपा था, वह मैं कभी भूला नही। लेकिन वह काम करनेके

१. देखिए पिछला शीर्षक।

लिए मेरे पास कभी समय नही बचा, और क्या मालूम कभी बचेगा भी या नही। मैं केवल यही वचन दे सकता हूँ कि उस कामकी बात याद रखूँगा।

तुम्हे याद है, तुम उस साक्षात्कार[1] का रहस्योद्घाटन करने खास तौरपर रोम जानेवाली थी। उस पत्रके सम्पादकसे मिलकर तुम्हे यह जानना था कि उसने सचमुच क्या कहा था और तुमसे उसे क्या कहना है? बाह्य संसारके लिए चाहे इस बातका कोई मूल्य न हो, किन्तु तुम्हारे लिए था, और उसके लिए था जो केवल सत्यकी सेवा करना चाहता है, सत्यके सिवाय और किसीकी नही।

तुम्हारी रायमें मीरा कैसी है?

तुम्हें, डोरिस[2] को तथा बढते हुए परिवारके शेप सदस्योको मेरा प्यार।

बापू

कुमारी म्यूरियल लेस्टर
बो, लन्दन

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात, सौजन्य : प्यारेलाल।

३७५. पत्र : स० ना० गांगुलीको

२२ अगस्त, १९३४

प्रिय मित्र,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारा यह कहना बिलकुल सही है कि शारीरिक ब्रह्मचर्यके लिए मैं कोई उत्कृष्ट मार्ग नही खोज पाया हूँ। मैं केवल इतना ही कह सकता हूँ कि तुम्हें अध्यवसायके साथ मेरी सुझाई लीकोपर चलना चाहिए। शुद्ध आहार, स्वच्छ वायु और हल्का व्यायाम, इनसे इच्छित फल प्राप्त होता है। प्राणायाम और आसनोके बारेमें भी कहा जाता है कि उनका परिणाम अच्छा होता है। कटि-स्नान भी उपयोगी होते है। सरसोका तेल ऐसा मसाला है जिसका त्याग करना चाहिए। वैसे मैं तो तुम्हे सभी तेलोका त्याग करनेकी सलाह दूँगा। भाजियाँ उबाली जानी चाहिए। स्टार्च (श्वेतसार) वाली भाजियाँ नही खाना चाहिए, न दालें ही। दूधके बारेमें तुम्हे चिन्ताकी जरूरत नही है। शहद दूधकी जगह नही ले सकता। काफी मात्रामें रोज लेना चाहिए। और सबसे बडी बात यह है कि तुम्हे लगनके

१. गांधीजी के साथ एक मनगढ़न्त साक्षात्कार, जो इटलीके एक पत्रमें प्रकाशित हुआ था और टाइम्सके रोम-स्थित संवाददाताने जिसकी रिपोर्ट भेजी थी। देखिए खण्ड ५७, पृ० २७१-२ और ३०३-४।

२. कुमारी लेस्टरकी बहन।

साथ नित्य प्रार्थना करनी चाहिए और यह विश्वास रखना चाहिए कि तुम्हारी प्रार्थनाका उत्तर मिलेगा।

हृदयसे तुम्हारा,

श्री सत्येन्द्रनाथ गांगुली
अठाराबाड़ी
जिला मैमनसिंह

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

३७६. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

२२ अगस्त, १९३४

भाईश्री वल्लभभाई,

एक प्रश्न आपको हल करना है। काकाकी इच्छा दक्षिणमें जाकर काम करनेकी है। उनके ट्रस्टीपद[1] से इस्तीफा देनेका इसके साथ कोई सम्बन्ध नहीं है। मै यहाँ आये हुए शिक्षकों[2] से कह रहा हूँ कि उन्हें देहातमें बसना चाहिए और वहाँ रहकर रचनात्मक काम करके जो संगठन हो सके, करना चाहिए और जो शिक्षा दी जा सके देनी चाहिए। शिक्षकोंको यह बात पसन्द आई है, और जिन्हे छुट्टी मिल सके वे ऐसा करनेको तैयार हो गये हैं। उनमें काका भी शामिल हैं। विद्यापीठके मकानोंका उपयोग शहरकी जरूरतके अनुसार हमें करना ही है . . .।[3]

महादेव कल शामको गया। आज रातको वहाँ पहुँचेगा।

एन्ड्रयूजको लेने मथुरादास शनिवारको जायेंगे ही। और भी जो कोई जा सकें, उन्हें भेज दें। हो सके तो एन्ड्रयूजको अपने पास ही ठहराइये और वे चाहें तो उसी दिन इधर भेज दीजिए।

यह लिखनेके बाद आपका पत्र मिला।

. . .[4] से मिलना हो गया यह ठीक हुआ। कैदियोंके बारेमें वे और 'क्रॉनिकल', 'फ्री प्रेस' वगैरह ऊहापोह जरूर करें। छोटी बातोंपर चुप रहें, पर बड़ी बातपर कैसे चुप रहें? डाह्याभाई नटराजन[5] से भी आनेको कहें। घनश्यामदासके तारके मुताबिक तो वे यहाँ आनेके लिए सोमवारको रवाना हो जायेंगे।

मैं मानता हूँ कि एन्ड्रयूज दो-चार दिन तो रहेंगे ही। कदाचित् तुरन्त शान्ति-निकेतन जाना चाहें। आप ही उनसे निश्चित जान लें।

१. देखिए पृ० ३५९।
२. देखिए पृ० ३२२-६।
३ और ४. साधन-सूत्रमें ये छूटे हैं।
४. इंडियन सोशल रिफार्मरके सम्पादक।

अब आज अधिक नही लिख सकता।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो-२ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० ११९-२०।

३७७. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

दुबारा नहीं पढ़ा

२२ अगस्त, १९३४

चि० व्रजकृष्ण,

तुमारा खत मिला है। दामोदरदासको तुमारे पास बुलाना है तो अवश्य बुलाओ। ऐसे बातोमें मुझको पूछना अनावश्यक है। मैं रुकावट भी कैसे डाल सकता हूँ? तुमारी स्वतत्रता किसी तरह मैं छीनना नहिं चाहता हूँ। मै तो दामोदरदासने जो बातें . , [1]के बारेमें कही है उस बारेमें उन लोगोको न्याय मिलनेके कारण उस बातके उपयोगकी इजाजत अगर मिल सकती है तो अवश्य चाहता हूँ। यह चीज मुझे झहरकी मानिंद खाती है क्योंकि अब . , .[2] और . . .[3]को खत लिखनेके समय बडा सकोच पाता हूँ। एक बात उनके विरोधकी मैंने सुनी उसका असर पड़ता है तो भी उनसे मै बता न सकुँ ऐसा मौका मेरी जिंदगी भरमें शायद पहेला होगा। इस बंधनसे मुझे मुक्ति मिल सके तो मेरे लिये पर्याप्त होगा।

दिल्ली काग्रेसके झगड़ेमें कभी नहिं पड़ूगा। ऐसी बातें मेरी शक्तिके बाहर हो गई है।

तुमारी इजाजत है इसलिये तुमारा खत सरदारको भेजता हूँ उसमें दामोदर-दासका उल्लेख तो है ही।

प्रभावतीसे जो विवाह संबंधी लिखा उस बारेमें अब समज पड़ी होगी। विवाहकी बात ही न करना ऐसा कुछ नहिं था। लेकिन विवाहकी बात प्रभावतीके मार्फत कभी होनी नहिं चाहिये थी। यह उसका क्षेत्र कभी नही बन सकता। या न कभी बन सकता है। जबतक प्रभावती ऐसी बातोमें स्वतंत्र नहिं बनी है। आश्रमकी किसी लड़कीके बारेमें किसीसे बात हो सकती है तो जमनालालजी, विनोबा और मेरे साथ ही हो सकती है। और विनोबा और मै ऐसी बातोमें जमनालालजीको ही प्रधान पद देते है इसलिये जमनालालजीसे बात करना सर्वथा उचित था फिर प्रभावतीसे क्यो।

तुमारे स्वास्थ्यके लिये अवश्य मसुरी जाओ। मसुरीके बाद देखा जायगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४२०) से।

१, २ और ३. नाम नहीं दिये गये हैं

३७८. वक्तव्य : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको[1]

[२३ अगस्त, १९३४ या उससे पूर्व][2]

भाषण और साम्प्रदायिक परिनिर्णयके बारेमें कार्यकारिणी समितिके प्रस्तावपर लिए हृदयसे आपत्ति हो ऐसे उम्मीदवारकोके पक्षमें मत देनेकी और भाषण देनेकी स्वतन्त्रता प्रदान की गई थी। पंडितजीको इससे सन्तोष नहीं हुआ। वह सबके लिए कार्य करनेकी पूरी स्वतन्त्रता चाहते थे। इससे कार्यकारिणीका प्रस्ताव प्रभावहीन बन जाता था, इसलिए कार्यकारिणी इसे स्वीकार न कर सकी। यह मानना गलत है कि समितिके प्रस्तावका अर्थ लगभग परिनिर्णयको स्वीकार कर लेना ही था। समितिने परिनिर्णयको न तो स्वीकार किया था और न अस्वीकार। और इससे उसकी निष्पक्षता और राष्ट्रीयताका प्रमाण मिलता था। सर्वसम्मत हल मात्र इसी तरीकेसे निकल सकता था और अगर हिन्दू, मुसलमान तथा अन्य लोग वफादारी और गम्भीरताके साथ प्रस्तावके अनुकूल काम करते तो हल निकल सकता था।

इसके बाद महात्मा गांधीसे पूछा गया कि क्या पंडित मदनमोहन मालवीयकी नई संस्था कांग्रेसके नामसे चुनाव लड़ सकती है? उन्होंने बताया कि केवल संसदीय बोर्ड ही एक ऐसी संस्था है जो कांग्रेसके नामसे कोई काम कर सकती है।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, २४-८-१९३४

१. साधन-सूत्रमें बताया गया है: "चूँकि कार्यकारिणीके साम्प्रदायिक परिनिर्णय-सम्बन्धी प्रस्तावके सम्बन्धमें समझौता करनेके गांधीजी के प्रस्तावसे कुछ भ्रांतियाँ उठ खड़ी हुई थीं, इसलिए उनसे स्थिति साफ करनेके लिए कहा गया था।"

२. यह "वर्धा, २३ अगस्त" तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत छपा था। देखिए "पत्र: वल्लभभाई पटेलको", पृ० ३७२-३।

३७९. तार : आनन्द तो० हिंगोरानीको

२३ अगस्त, १९३४

आनन्द हिंगोरानी
सहितीपुर
कराची

आशा है कि दाद ठीक हो गया होगा। शल्यचिकित्सककी सलाहसे बवासीरका ऑपरेशन तुरन्त करवा लो।[1]

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे, सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

३८०. पत्र : आनन्द तो० हिंगोरानीको

२३ अगस्त, १९३४

प्रिय आनन्द,

तुमने अपनी तकलीफोंकी दर्दनाक कहानी मुझे लिखी है। मामूली दाद बढ़कर इतना भयानक हो जाये, यह बात समझमें नहीं आती। आम तौरपर वह सामान्य इलाजसे दो या तीन दिनके भीतर ही ठीक हो जाता है। क्या तुम किसी योग्य डॉक्टरसे इलाज नहीं करा रहे हो? और तुम्हें अपनी बवासीरकी अवज्ञा नहीं करनी चाहिए। उसका ऑपरेशन बहुत ही आसान है और यदि कोई योग्य शल्यचिकित्सक यह सलाह देता है कि तुम्हें तुरन्त ऑपरेशन करवाना चाहिए, तो तुम्हें बिना आगा-पीछा किये वैसा करना चाहिए।

मैं देखता हूँ कि तुम्हारा पत्र १६ तारीखका है। वह कल ही मिला है। जाहिर है कि पत्रके कराची पहुँचनेमें काफी समय लगता है और इसलिए मैं निम्नलिखित तार भेज रहा हूँ :

> "आशा है कि दाद ठीक हो गया होगा। शल्यचिकित्सककी सलाहसे बवासीरका ऑपरेशन तुरन्त करवा लो।"

मेरा ईश्वरविषयक संदेश तुम प्रकाशित कर सकते हो। चाहो तो उसका पूरा पाठ 'यंग इंडिया'से उतार सकते हो। जैसाकि तुम जानते हो, 'यंग इंडिया'से

१. देखिए अगला शीर्षक भी।

चुने हुए लेख पुस्तकके रूपमें प्रकाशित किये गये हैं। यह सन्देश उन चुने हुए लेखोमें है।

मैं विद्याको अलगसे नहीं लिख रहा हूँ, लेकिन उसे लिखना चाहिए। आशा है कि वह और महादेव बिलकुल ठीक होगे।

यदि तुम्हे जल्दी न हो तो मैं पैसा भेजना तबतक रोक रखना चाहता हूँ जबतक कि जमनालालजी अस्पतालसे बाहर नही आ जाते या अपना कामकाज सम्हालने योग्य नही हो जाते।

तुम दोनोंको प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार तथा आनन्द तो० हिंगोरानी

३८१. पत्र: सी० एफ० एन्ड्रयूजको

२३ अगस्त, १९३४

प्रिय चार्ली,

इतना केवल तुम्हारे स्वागतके लिए है।[1] आशा है, तुम्हारी समुद्र-यात्रा अच्छी रही होगी। सम्भव हो हो पहली गाड़ीसे चले आओ।

सस्नेह।

मोहन

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९६८३) से; सौजन्य: विश्वभारती पुस्तकालय, शान्तिनिकेतन

३८२. पत्र: मथुरादास त्रिकमजीको

२३ अगस्त, १९३४

तू मुझे न लिखे और मैं तुझे न लिखूँ, यह अच्छा सौदा है। अब मैंने तुझे लिखा है, तो तू लिखना। मिस्टर एन्ड्रयूजका पत्र उनको दे देना।[2]

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृ० १५१

१. एन्ड्रयूजको २५ अगस्तको इंग्लैंडसे बम्बई पहुँचना था, देखिए पृ० ३६१।

२. देखिए पिछला शीर्षक। मथुरादास त्रिकमजीको एन्ड्रयूजकी अगवानी करनी थी; देखिए पृ० ३६४।

३८३. पत्र : ना० र० मलकानीको

२३ अगस्त, १९३४

प्रिय मलकानी,

मुझे वह पत्र याद है जो मैंने तुम्हारे कहनेपर एक सिन्धी मित्रको भेजा था। जब मुझे ड्राफ्ट मिलेगा, तब मैं तुम्हारे सुझाये अनुसार रसीदें भेज दूंगा।

हैम्प्टन इन्स्टीट्यूट सम्बन्धी पुस्तिकाओंके बारेमें मुझे कुछ ऐसा याद है कि पढ़नेके बाद मैंने उन्हें ठक्करबापाके पास भेज दिया था। लेकिन ऐसे मामलोंमें मेरी याददाश्त बिलकुल विश्वसनीय नही है। मैं इतना जानता हूँ कि मैंने उन्हे नष्ट नही किया और तुम्हारे बताये अनुसार ही उनका निवटारा किया होगा। फिर भी मैंने देवराजसे उनकी खोज करनेको कहा है, और यदि पुस्तिकाएँ मिल गईं, तो तुम्हे भेज दी जायेंगी।

आशा करता हूँ कि कल्याण-केन्द्रके लिए तुम्हें कोई सुभीतेका भूखण्ड मिल जायेगा। व्रजकिशोरने मुझे उसके बारेमें लिखा था।

मैं खोई हुई शक्ति धीरे-धीरे पुनः प्राप्त कर रहा हूँ।

क्या तुम्हें आगराके उस मित्रकी याद है जिसने चर्मशोधनपर एक टिप्पणी तैयार की थी? मैंने वह टिप्पणी विस्तृत व्याख्याके लिए वापस भेजी थी। मुझे ठीक याद नही आ रहा कि वह मैंने तुम्हें भेजी थी या ठक्करबापाको या घनश्याम दासको। लेकिन मैं चाहता हूँ कि तुम खोजकर पता लगाओ कि वह व्याख्याके लिए लेखकके पास भेजी गई या नही। अगर भेजी गई थी, तो मैं चाहता हूँ कि तुम लेखकको याद दिलाओ कि आवश्यक संशोधनोके साथ भी इस टिप्पणीकी मैं अभी प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

आशा है, सिन्धमें तुम्हारा समय मजेमें बीता होगा।

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

३८४. पत्र : एच० ए० ललवानीको

२३ अगस्त, १९३४

प्रिय ललवानी,

तुम्हारा पत्र मिला। यह भूल तुम मेरे ध्यानमे तत्काल क्यों नहीं लाये? इस प्रकारके मामलोमे पैसा लौटानेकी कठिनाई तुम समझ सकते हो। निश्चय ही यह भूल तुम्हारे ध्यानमें फौरन आ गई होगी। अब मेरी सलाह है कि तुम उस सौ रुपयेके नोटको बिलकुल भूल जाओ। हरिजन-सेवक संघ जैसा विशाल संगठन ऐसी भूले सुधारनेके फेरमें नही पड़ सकता। लेकिन अगर तुम्हे मेरी सलाहसे सन्तोष न हो तो अच्छा यह है कि तुम जयरामदासको लिखो, और अगर जयरामदास मानें कि इस मामलेमें पैसा लौटाया जाना चाहिए तो मै उन्हे सलाह दूँगा कि वे तुम्हारी ओरसे ठक्करबापाको लिखें। अगर तुम्हारा इरादा जयरामदाससे मिलनेका हो तो यह पत्र तुम उन्हें दिखा देना।

हृदयसे तुम्हारा,

श्री एच० ए० ललवानी
हैदराबाद

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य: प्यारेलाल।

३८५. पत्र : जमनालाल बजाजको

२३ अगस्त, १९३४

चि० जमनालाल,

तुम्हारा पत्र मिला और ओम, जानकीमैया तथा मदनमोहनके भी। विनोबासे समाचार सुने और अभी-अभी डॉ० शाहका तार भी मिला। इससे अब तो ऐसा ही मानना चाहिए कि थोड़े दिनमें ही जख्म भर जायेगा। परन्तु तुम हवाई किले न बाँधना। वहाँका सब काम धीरजके साथ पूरा करना। किसी तरहकी जल्दी या चिन्ताकी आवश्यकता नही है। यहाँ राधाकिसन[1] सब बातका ठीक इन्तजाम कर लेता है। और मेरी रखवाली तो वह तथा और दूसरे कितने ही लोग कर रहे हैं।

१. जमनालाल बजाजका भतीजा।

जिस वाक्यके बाद 'विनोद' में लिखना पड़े उसे क्या विनोद कहेंगे? जानकी-मैंया चीख-पुकार मचा दे यह अच्छा, या तुम मनमें सब-कुछ दबाकर सपने देखते रहो, यह अच्छा है? जानकीमैंया शोर मचा देती है तो हम समझ जाते है कि उसे बड़ा दु.ख है, और तुम बात मनमें ही रख लेते हो तो हम लोग धोखेमे पड़ जाते हैं। कहो, अब कौन बढ़कर है?

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० १३२।

३८६. पत्र : उमादेवी बजाजको

२३ अगस्त, १९३४

चि० ओम उर्फ सोती सुन्दरी,[1]

अब कह सकते है, तुमने ठीक पत्र भेजा। अक्षर अभी और अच्छे होने चाहिए। तुम सोनेसे सीनेकी ओर जा रही हो, इसलिए बेचारे दर्जी अब क्या करेंगे? पर उन्हे डरका कारण नही रहेगा, क्योकि थोड़े ही दिनोमें तुम सिलाईकी मशीनपर ही सोती नजर आओगी।

तुम्हारे बदले अभी भी मदालसा रोज सेवामें समय लगाती है। और दूसरा धन्धा तो है नही, इसलिए मक्खियाँ उड़ाती है।[2]

पत्र बराबर लिखा करना। उन्हे[3] अभी बातें अधिक न करने देना। जो आये, उससे जानकीबहन बातें करें। उनका बातें किये बिना काम तो चल ही नही सकता और उसमें तू सहज ही शामिल हो सकती है — फिर लोगोको काकाजी के साथ बातें करनेकी क्या जरूरत?

मेरा वजन आज राधाकिसनने लिया — ९८ पौंड हुआ। ऐसे बढ़ता रहेगा, तो कहाँतक पहुँचेगा, कौन जाने?

तू रामायणका सुरसे पाठ करती है क्या? सुमित्रा-लक्ष्मणका संवाद सचमुच हृदयद्रावक है। पर ऐसे संवाद तो रामायणमे खूब भरे है।

तू कितने बजे उठती है?

१. १९३३ में गांधीजी के हरिजन-दौरेके समय ओम उनके साथ थी। उस समय उसकी उम्र १३ वर्ष थी। यात्रामें जब कभी समय मिल जाता तो वह झटसे सो जाती। इसीलिए गांधीजी ने उसका नाम 'सोती सुन्दरी' रख दिया था।

२. गुजराती कहावत, जिसका अर्थ है "समय बिताना"।

३. जमनालाल बजाजको।

गोपी आज बलेव-दिवस[1] के लिए जबलपुर गई। उसने जल्दी आ जानेको कहा तो है। गजाननके पत्र भी आते रहते हैं।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३३७

३८७. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

२३ अगस्त, १९३४

भाईश्री वल्लभभाई,

इसके साथ ब्रजकृष्णका दिल्लीके झगड़ोंके सम्बन्धमें पत्र है। उसे पढ़कर फाड डालिये। मैंने साफ लिख[2] दिया है कि वे यदि कहेंगे भी तो भी मैं इस झगड़ेमें नही पड़ूँगा। रोज ऐसी ही खबरें आती रहती है। सबको अपनी-अपनी पड़ी है, देशकी किसीको नही पड़ी। ऐसी हालतमें कैसे पार लगेंगे, यह समझमें नही आता।

बंगालसे मेरे पास भी अणेके विरुद्ध तार आये हैं। मैंने साफ लिख दिया है कि उनकी निष्पक्षताके बारेमें किसीको शंका नही करनी चाहिए। उनपर पूरा भरोसा रखना चाहिए।

मालवीयजी ने 'हिन्दुस्तान टाइम्स' को अवार्डके बारेमें नीति बदलनेका हुक्म जारी किया है। इसलिए घनश्यामदासने त्यागपत्र भेज दिया है। त्यागपत्रमें जो कारण दिये हैं उनसे इन दोनोंका मतभेद प्रकट होता है। देखना है, अब क्या होता है। पता नही दोनोंको क्या सूझी है।

राजेन्द्रबाबूके तारके आधारपर एसोसिएटेड प्रेसको एक वक्तव्य[3] भिजवाया है, जो आप अखबारोमे देखेंगे। नकल होगी तो भेज देंगे। ऐसी-ऐसी चीजें आप भी बम्बईसे निकाला करें तो ठीक रहे। मौलानाने तारसे पूछा है कि यह कांग्रेस नेशलिस्ट पार्टी क्या है? मैंने उन्हें तार दिया है कि इसका उत्तर तो प्रेसिडेंटको देना चाहिए; मैं भी वल्लभभाईको लिखूँगा, मगर आप भी उन्हें तार भेजिये। अब तार आये तो आप देख लें।

आज राजाजी का एक पत्र आया है, जो आपके देखने योग्य है। पढ़कर फाड़ दीजिए। कुछ लिखना हो तो लिख भेजिए। मद्रास जाने लायक शक्ति हो और समय मिले तो जाइये। 'स्टेट्समैन' की कतरन मैंने नही देखी। यदि मिल गई तो

१. एक हिन्दू-पर्व जब लोग अपने जनेऊ बदलते हैं। देशके कुछ भागोंमें इसे रक्षाबन्धनके रूपमें भी मनाते हैं।
२. देखिए पृ० ३६५।
३. देखिए पृ० ३६६।

वह भी भेजूंगा। वे जो चाहे लिखें, परन्तु हम सत्यको कैसे छिपा सकते है? प्रफुल्ल घोष आये है। वे बंगालकी जो सड़ी-गली बातें सुनाते हैं, उनसे बड़ा दु:ख होता है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १२०-२१

३८८. भेंट : खादी-कार्यकर्त्ताओंको[1]

[२४ अगस्त, १९३४ या उससे पूर्व][2]

खादी, एक तरहसे, विशुद्ध आर्थिक योजना है। खादीके किसी भी संगठनको सबसे पहले व्यावसायिक संस्थान होना चाहिए। इसलिए लोकतान्त्रिक सिद्धान्त उसपर लागू नही हो सकता। अनिवार्य रूपसे, लोकतन्त्रका अर्थ, संकल्प और विचारोका टकराव होता है; इसमें कभी-कभी उन विचारोके बीच घोर शत्रुतातक रहती है। पर एक व्यावसायिक संगठनमें इस तरहके संघर्षके लिए कोई स्थान हो ही नही सकता। किसी व्यावसायिक संस्थानमें दलो, गुटो आदिकी कल्पना कीजिये। वह उनके बोझसे टुकड़े-टुकड़े हो जाता है। परन्तु खादी-संगठन केवल व्यावसायिक संस्थान नही, उससे कुछ अधिक है। यह जनता-जनार्दनकी सेवाके लिए बनाया गया एक लोकहितकारी संस्थान है। इस तरहका संस्थान लोगोंकी आम सनकसे शासित नही हो सकता। इसमें व्यक्तिगत महत्वाकाक्षाके लिए कोई जगह नही है।

खादीके उत्पादनका पुनर्गठन करते समय आपको यह नही भूलना चाहिए कि कुछ बातोमें खादीका शास्त्र साधारण व्यवसायसे बिलकुल उल्टे ढंगपर चलता है। आप जानते है कि एडम स्मिथने अपने 'वैल्थ ऑफ नेशन्स' ग्रन्थमें पहले तो कुछ ऐसे सिद्धान्त बताये है जिनके अनुसार आर्थिक घटनाक्रम चलता है, और उसके बाद कुछ ऐसी बातें बताई हैं जो 'गड़बड पैदा करनेवाले तत्त्व' हैं और जिनके कारण आर्थिक नियमोको पूरी तरह अपना काम करनेका मौका नही मिलता। इनमें मुख्य है 'मानव तत्त्व।' इसी 'मानव तत्त्व' पर खादीका समूचा अर्थशास्त्र टिका है; और मानवकी स्वार्थपरायणता, जिसे एडम स्मिथ 'शुद्ध आर्थिक हेतु' कहते है, 'गड़बड़ पैदा करनेवाला तत्त्व' है जिसपर हमें काबू पाना होगा। इसलिए जो बात मिलके

१. यह "खादी — एक नई दिशा" शीर्षकसे और पट्टाभि सीतारमैया, सीताराम शास्त्री और नारायण राजू-जैसे आन्ध्रके प्रमुख खादी-कार्यकर्त्ताओंके सम्मुख व्यक्त किये गये "गांधीजी के विचारोंका सार" के रूपमें प्रकाशित हुआ था। विचार-विमर्श दो दिन चलता रहा था।

२. बॉम्बे क्रॉनिकल, २६-७-१९३४ से, जिसमें यह रिपोर्ट थी कि पट्टाभि सीतारमैया २४ अगस्त, १९३४ को वर्धासे मद्रासके लिए रवाना हो गये थे।

कपड़ेके उत्पादनपर लागू होती है, वह खादीपर लागू नही होती। व्यावसायिक उत्पादनमें घटिया माल बनाना, मिलावट करना, मानवकी हीन रुचियोको सन्तुष्ट करना, वगैरह आम बातें है। खादीमें इनके लिए कोई स्थान नही है; और न खादीमें अधिक-से-अधिक मुनाफा और कम-से-कम मजदूरीके सिद्धान्तकी गुंजाइश है। इसके विपरीत, खादीमें खालिस लाभ जैसी कोई वस्तु नही है और घाटा तो होना ही नही चाहिए। घाटा होता है इसलिए कि कार्यकर्त्ता अभीतक अयोग्य और नौसिखिये हैं। खादीके जो दाम वसूल किये जाते है, वे मूल उत्पादकों अर्थात् कत्तिनोको वापस मिल जाते हैं; और दूसरे लोगोंको अपनी मजदूरीसे अधिक कुछ नही मिलता।

अब स्तर कायम रखनेका सवाल लें। खादीमे उसे लागू नही किया जा सकता। जैसा राजगोपालाचारीने एक बार कहा था, एक गरीब कत्तिन हमेशा एक ही तरह का सूत नही कात सकती। वह कोई मशीन नही है। आज उसकी तबीयत अच्छी न हो, कल उसका बच्चा बीमार पड़ जाये, तो उसका मन उद्विग्न हो सकता है। अगर आपमे गरीब कत्तिन या उसके बच्चेके प्रति प्रेम हो तो आप यह आग्रह नही करेंगे कि उसका धागा हमेशा चिकना और एक-सा हो, बल्कि वह जो भी कातकर दे देगी आप उसीसे सन्तोप कर लेंगे। शर्त यही है कि अपनी स्थितिके अनुसार वह यथाशक्ति अच्छा सूत काते। उसके हाथका पवित्र स्पर्श खादीको वह जीवन और इतिहास देता है जो यन्त्रसे निकला सूत कभी नही दे सकता। यन्त्रके बने पदार्थमें जो कला है वह सिर्फ आँखको भाती है। खादीकी कला पहले हृदयको और बादमें आँखको भाती है। इसलिए मै रासायनिक प्रक्रियासे खादीकी धुलाई नापसन्द करता हूँ। उससे उत्पादनका खर्च बढता है, कपड़ेके टिकाऊपनमें फर्क आता है, और धोखेबाजीका पता लगाना और भी मुश्किल हो जाता है। हमें लोकरुचिको अनुचित सन्तोष नही देना चाहिए, बल्कि नई रुचि विकसित करनेका प्रयत्न करना चाहिए। साधारण ढंगकी कुछ धुलाइयोंसे खादी बिलकुल सफेद निकल आयेगी और उसमें वह मुलायमत आ जायेगी जो रासायनिक प्रक्रियाकी धुलाईसे नष्ट हो जाती है। हम सबको अनावश्यक खर्च कम करनेके लिए भरसक प्रयत्न करना चाहिए।

इसलिए खादीको हम अगर व्यवसायकी वस्तु नही बल्कि करोडो अधभूखोके गुजारेके लिए जरूरी चीज मानते हों, तो हमें कत्तिनोंके घरोमें जाकर उन्हें अपने ही सूतकी बनी खादी पहननेको राजी करना चाहिए। इससे उत्पादनका खर्च एकदम घट जायेगा और बँटवारा अपने-आप होने लगेगा। अबतक हमने सिर्फ शहरी लोगोके लिए खादी तैयार करनेकी कोशिश की है। तुच्छ प्रारम्भसे खादीका उत्पादन अब कई लाख गज वार्षिकतक बढ़ गया है। हमने उसकी किस्में भी बढ़ाई हैं। परन्तु मुझे उससे सन्तोष नही होता। खादीकी कल्पना इससे बहुत अधिक महत्वाकांक्षी हेतुसे की गई थी। वह हेतु यह था कि हमारे देहातमें कभी भुखमरी न आने पाये। यह तभी सम्भव है जब हमारे देहाती खुद खादी पहनने लगें और शहरोको सिर्फ फाजिल खादी ही भेजें। खादीका विशेष रहस्य यही है कि वह अपने उत्पादनके स्थानमें बेची जा सकती है और उसे तैयार करनेवाले खुद उसे काममे ले सकते है।

मेरी दृष्टिसे हमारा मौजूदा व्यवस्था-खर्च बहुत ज्यादा है। अगर हम अपना ध्यान खादीके मुख्य हेतुपर केन्द्रित करें, तो यह खर्च बहुत कम हो जायेगा। खादीके भाव कम करनेके नियम, पूरी तरह नही तो अंशत:, उन नियमोंसे भिन्न हैं जो मुख्यतः लाभके लिए तैयार किये जानेवाले निरे व्यावसायिक पदार्थोंपर लागू होते हैं। खादीमें औजारोंके सुधारकी एक सीमा है। परन्तु मनुष्यकी बुद्धि और ईमानदारीमें सुधारकी कोई सीमा नही है। अगर हम इन दो में सफलताकी आशा छोड़ दें, तो हमें खादीकी ही आशा छोड देनी चाहिए। इसलिए खादीमें हम, जहाँतक संगठनके व्यवस्थित संचालनमें रुकावट न हो वहाँतक, बीचके लोगोको हटाकर ही उसकी लागत घटाते हैं। और जब खादी स्वावलम्बी और अपने-आप काम करनेवाली बन जायेगी, तब तो सगठनकी भी जरूरत नही रहेगी।

खादी-शास्त्र अभीतक शैशवावस्थामें है। उसका विकास हो रहा है। उसमें मैं जो भी नई खोज करता हूँ उससे मुझे इस बातका और भी ज्यादा अनुभव होता है कि इस शास्त्रका मुझे कितना थोडा ज्ञान है। शायद एक चीनको छोडकर, दुनिया में ऐसा कोई देश नही है जो भारतकी तरह अपार और अप्रयुक्त जन-शक्ति और समृद्धिकी अपरिमित क्षमता रखता हो। इस शक्तिको काममें लाइये तो गरीबी इस देशसे तुरन्त गायब हो जायेगी। हाथ-कताई वह साधन है जिससे ऐसा किया जा सकता है। खादीके क्षेत्रमें हमने अबतक जो-कुछ किया है, वह जरूरी था। उसके बिना इस मंजिलतक नही पहुँच सकते थे। परन्तु इस समस्याको हमने अभी केवल छुआ ही है। हमें अब अगला कदम उठानेकी जरूरत है। इसलिए यदि आप आन्ध्रमें खादीके मामलेमें स्वायत्तता चाहते हैं तो वह आपको तुरन्त मिल सकती है और आप अपने दायित्व बिना किसी झंझटके पूरे कर सकते हैं। जो दिशा मैंने सुझाई है, उसमें काम करनेसे कोई भी चीज आपको नही रोकेगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २१-९-१९३४

३८९. टिप्पणियाँ

शरीरपर उपवासका असर

गत उपवासका मेरे शरीरपर क्या असर पडा, इस विषयमें दो शब्द कह दूँ तो असंगत न होगा। मनुष्य चाहे जितनी आध्यात्मिक वृत्तिका हो, तो भी उसके जिस कामका सम्बन्ध शरीरके साथ होता है, उसका असर शरीरपर पडे बिना रह ही नही सकता। आध्यात्मिक प्रयत्नसे उस असरपर नियन्त्रण तो रखा जा सकता है, पर वह पूरी तरहसे हटाया नही जा सकता। चूँकि स्वास्थ्य सुधारनेके लिए यानी कि शारीरिक असरके लिए मैंने अक्सर उपवास किये हैं, अत. आध्यात्मिक हेतुसे किये गये तमाम उपवासोका अध्ययन उनकी दृष्टिसे करनेसे मैं चूका नही। हरिजन-कार्यके सम्बन्धमें इधर मैंने कुल मिलाकर चार उपवास किये हैं। उनमें एक खास बात यह देखी कि पानी पीनेमें मुझे अरुचि ही रही है, फिर चाहे वह सोडा या नमकके

साथ हो या बिना सोडा नमकके या गरम या ठंडा। सोडावाटर मैं बस बर्दाश्त ही कर सका हूँ। पानी पीनेकी यह असमर्थता मेरे इन उपवासोंमें सबसे बड़ी त्रुटि रही है। मैं यह अवश्य कहूँगा कि मैं अधिकतर फलाहारी ही रहा हूँ और सिवा नमकके गत चालीस वर्षसे मैंने कोई मसाला नहीं खाया। इसलिए आम तौरपर भी मैं पानी तो शायद ही कभी पीता हूँ। शरीरको तरल तत्वकी जितनी जरूरत पड़ती है, वह सब मुझे ताजे रसदार फलोंसे, हरी तरकारियोंसे और शहद व गरम पानीसे मिल जाता है। मैं ऐसे अनेक मित्रोंको जानता हूँ जिन्होंने एकसे-एक लम्बे उपवास किये हैं, किन्तु यह मैं नहीं जानता कि उनमें से किसीको उपवास-कालमें मेरी तरह पानी पीनेकी अरुचि रही हो। मेरे जिन डॉक्टर मित्रोंने कृपा करके मेरे उपवासोंमें मेरी सार-संभाल की है, वे ऐसा कोई उपाय नहीं सुझा सके जिससे उपवासकी मर्यादाके अन्दर रहकर मैं यथेच्छ पानी पी सकूँ। काफी पानी न पी सकनेसे शरीर पर जो बुरा असर पड़ता है, उसे कम करनेका इलाज उन्होंने बताया और किया भी है। पर मेरे लिखनेका उद्देश्य यहाँ यह है कि जिन्हें उपवासका कुछ ज्ञान हो, उनके अनुभवके साथ मैं अपनी इस बातकी तुलना करूँ और पानीकी अरुचि दूर करनेका कोई उपाय ढूँढ़ निकालूँ। यद्यपि मैं उन्हें जानता नहीं, तो भी अवश्य ही ऐसे लोग होंगे जिन्हें मेरी ही तरह उपवासके समय पानी अरुचिकर लगता होगा। इस प्रश्नपर अगर कुछ प्रकाश पड़ सके, तो उससे मेरे जैसे अनेक उपवासियोंको सहायता मिलेगी। मैं चाहता तो बहुत हूँ कि अब उपवास न करना पड़े, पर मैं अपने मनको यह विश्वास नहीं करा सकता कि यह उपवास मेरे जीवनमें अन्तिम उपवास था। यह बात मेरे बसकी थोड़े ही है।

अजमेरकी दुर्घटना

यद्यपि श्री रामनारायण चौधरी और अजमेरके स्वयंसेवकोंके नायक श्री दुर्गाप्रसाद चौधरी अजमेरवाली घटनाके सम्बन्धमें अपने ऊपर किये जानेवाले लापरवाही या असावधानीके दोषारोपसे मुक्त होनेकी इच्छा नहीं रखते, तथापि वे इस बातके लिए बहुत उत्कण्ठित हैं कि स्वयंसेवक, जो अखबारोंमें दोषी ठहराये गये हैं और जिन्हें वे बिलकुल निर्दोष समझते हैं, दोष-रहित करार दिये जायें। उन्होंने सावधानी के साथ जाँच की है और वे इस निश्चयपर पहुँचे हैं कि स्वामी लालनाथ या उनके दलको चोट पहुँचानेमें एक भी स्वयंसेवक शामिल नहीं था। जाँच-सम्बन्धी कागज-पत्र मेरे पास भेज दिये गये हैं। स्वयंसेवकोंके अपराधी होनेके पक्षमें जो एकमात्र मुख्य प्रमाण था, वह बिलकुल झूठा सिद्ध हो चुका है। जान पड़ता है, अपराधी मनुष्यका कोई पता नहीं लग सका। जिस समाचारपत्रने अपराध-स्वीकृति वाला बयान छापा था, वह लेखकका नाम प्राप्त करनेमें असफल हुआ है और सम्पादकने यह बात अपने पत्रमें स्वीकार की है तथा एक अप्रामाणिक पत्र छापनेके लिए खेद भी प्रकट किया है। इसलिए अभीतक मेरे सामने जितने भी प्रमाण आये हैं, उनसे यही मालूम होता है कि इस घटनामें कोई स्वयंसेवक शामिल नहीं था। मेरे बयान में कोई ऐसी बात नहीं है जिससे यह आशय निकाला जा सके कि स्वयंसेवकोंने सचमुच

स्वामी लालनाथ या उनके किसी व्यक्तिपर वार किया। मेरा कहना तो केवल इतना था कि स्वामी लालनाथने मुझसे कहा था कि स्वयसेवक इसमें शामिल थे। किन्तु जाहिर है कि इस विश्वासमें वे गलतीपर थे। उनके बताये स्वयसेवकका जरा भी पता न चला। चूंकि अजमेरके स्वयसेवकोकी काफी सार्वजनिक आलोचना हुई है, इसलिए इस विषयमें मुझे अपनी सम्मति देना जरूरी लगा। पर इस बातसे कि मेरी सम्मतिमे किसी स्वयंसेवक द्वारा यह अपराध हुआ नही जान पड़ता, यह अर्थ नही निकलता कि उपवास किसी प्रकार आवश्यक नही था। वार किया गया, इससे इनकार नही किया जा सकता, और न इसी बातसे इनकार किया जा सकता है कि जो लोग इसमें शामिल थे, वे सुधारक दलके थे। फिर यह बात भी तो है ही कि श्री रामनारायण चौधरी आवश्यक सूचनाएँ देना और दुर्घटना न हो, इसके लिए समुचित प्रबन्ध करना भूल गये। इसलिए उपवास स्पष्टत· आवश्यक था और मैं प्रभुका आभारी हूँ कि उसने मुझे इसे पार करनेकी शक्ति दी। जो लोग पवित्रताके आन्दोलन चलाते हैं उनकी जागरूकताकी कोई सीमा नही हो सकती। कानूनी उक्ति है: 'कानून, अर्थात् ईश्वर जाग्रतकी सहायता करता है, निद्रालुकी नही।'

एक अंग्रेज मित्रकी चेतावनी

एक अंग्रेज मित्रने यह सन्देश भेजा है:

> **हम अंग्रेज लोग आपके इन उपवासोंका कोई अर्थ नहीं समझ सकते। आपके पिछले उपवासोंको हम मुश्किलसे ही बरदाश्त कर सके हैं। अगर आपने फिर कभी उपवास किया तो आप बदनाम हो जायेंगे।**

मैं जानता हूँ कि मेरी बदनामी न हो इसीलिए यह चेतावनी दी गई है। मैं यह भी जानता हूँ कि ईसाइयोका प्रोटेस्टेण्ट सम्प्रदाय उपवासको पसन्द नही करता। किन्तु मेरे अंग्रेज मित्र मुझे अच्छा कहे इसकी इच्छा रखते हुए भी मैं इस विषयमें सचमुच लाचार हूँ। इन उपवासोके लिए मैं उत्तरदायी नही हूँ। मैं दिल बहलावके लिए उपवास नही किया करता। प्रसिद्धिके लिए मैं अपने शरीरको कष्ट नही देता, हालाँकि उपवासके समय भूखकी ज्वाला और दूसरे कष्टोको मैं प्रसन्नतापूर्वक सह लेता हूँ। कोई यह न समझे कि उपवासमें मुझे क्लेश नही होता। मैं तो इन उपवासोको सिर्फ इसलिए निबाह ले जाता हूँ कि इनका सकल्प मेरे मनमें परमात्माकी प्रेरणासे उठता है, और परमात्मा द्वारा ही मुझे कष्ट-सहनका बल भी प्राप्त होता है। उस परमशक्ति परमात्मासे ही मैं यह अनुरोध कर सकता हूँ कि अब वह मुझे ऐसी कठिन परीक्षामें न डाले। पर अगर उसके दरबारमें मेरी सुनवाई न हो और फिर दूसरे उपवासका अवसर आ जाये तो उपवास करना ही पड़ेगा, चाहे उससे दुनिया में मेरे सनकी कहलाये जानेका ही खतरा क्यो न हो। यदि किसीको अखिल विश्वका आधिपत्य प्राप्त हो जाये, पर उसे धर्मच्युत होना पड़े, तो वह आधिपत्य किस कामका?

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २४-८-१९३४

३९०. पत्र : एफ० मेरी बारको

२४ अगस्त, १९३४

चि० मेरी,

अपने पोस्टकार्डके[1] जवाबमें इतनी जल्दी तुम्हारा पत्र पाकर मुझे खुशी हुई। जमनालालजी के स्वास्थ्यमें बहुत अच्छी तरहसे प्रगति हो रही है। ऑपरेशन लम्बा काम था; कानके हड्डियोंवाले हिस्सेसे उसका सम्बन्ध था और कुछ मजबूत हड्डियोंको तराशना-काटना था। लेकिन पुनः स्वास्थ्य-लाभ असाधारण ढंगसे सरल रहा। कल उन्हें चलने-फिरनेकी इजाजत मिल गई और उनकी खुराक लगभग सामान्य हो गई है। टाँके भी काट दिये गये। निश्चय ही इसका यह अर्थ नही कि हड्डियोंमें जहाँ काट-छाँट की गई थी वहाँके जख्म भर गये हैं। इसमें तो कुछ समय लगेगा ही, लेकिन उतना नही जितना कि डॉक्टर सोच रहे थे। कहते हैं कि ऑपरेशन सफल हुआ और बहुत सफाईसे किया गया।

मीराकी अन्तरात्मामें अचानक आवाज उठी। एक दिन सुबह वह मेरे पास आई और उसने कहा कि मुझे इंग्लैंड जानेकी अदम्य पुकार सुनाई दे रही है। मैंने पूछा, "कब जाओगी"। उसने कहा, "जल्दी-से-जल्दी मैं तत्काल सामान बाँधकर जा सकती हूँ।" मैंने उसे नही रोका। बल्कि उसे प्रोत्साहित किया क्योंकि मुझे लगा कि इससे उसे लाभ होगा और यह एक अच्छा अनुभव होगा, भले ही वह कर कुछ न पाये। मुझे विश्वास है कि वह अनाप-शनाप बातें करके कोई भारी गलती नही करेगी। वह इतनी सन्तुलित तो है ही कि उससे ऐसा कुछ नही हो सकता। वह चार महीनेसे ज्यादा वहाँ रहनेकी आशा नही करती, लेकिन मैंने उसे लिखा है कि वापस लौटनेमें जल्दबाजी न करे और यदि जरूरी हो तो उसे वहाँ और अधिक ठहर जाना चाहिए। उसने कार्यक्रम बहुत लम्बा बनाया है। वह लगभग हर मित्रके घर जायेगी और स्काटलैंड भी जानेवाली है। वह लम्बे पत्र भेजती रही है और जिस तरह उसका स्वागत किया जा रहा है, उससे काफी सन्तुष्ट है। मेरा खयाल है कि वह अक्तूबरमें लौटेगी। क्या यह अजीब बात नही है कि उसे इंग्लैंडकी जलवायु भी माफिक नही पड़ रही है और भारतकी भी? उसने मुझे लिखा है कि मैं वेल्समें ठिठुर रही हूँ। यदि तुम उसके लम्बे लेकिन दिलचस्प पत्रोंका नमूना देखना चाहती हो, तो मैं कोई एक नमूना खुशीसे भेज दूँगा।

१. देखिए पृ० ३३२

आशा है कि अब तुम पूरी तरह स्वस्थ हो गई होगी। क्या तुम्हें डंकनके पत्र मिलते हैं?

सस्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०२६) से। सी० डब्ल्यू० ३३५५ से भी; सौजन्य: एफ० मेरी बार।

३९१. पत्र : टी० एम० जरीफको

२४ अगस्त, १९३४

प्रिय तैयबभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हे कोई पक्की राय देना मेरे लिए कठिन है। मैं ऐसी परिस्थितिकी कल्पना कर सकता हूँ जिसमें किसी कांग्रेसीका अवैतनिक मजिस्ट्रेटका पद स्वीकार करना उचित हो। प्रत्येक मामलेकी जाँच उसके निजी गुण-दोषके आधार पर की जानी चाहिए। लेकिन सामान्यत: मैं कहना चाहूँगा कि ऐसे मामलोंमें प्रत्येक कांग्रेसीको अपने विवेकके अनुसार कार्य करना चाहिए। इससे भी अधिक सामान्य नियम यह होगा कि यदि वह सरकारसे प्राप्त सम्मानको स्वीकार करनेसे बच सके, तो अच्छा होगा। बिलकुल निरापद मार्गको छोड़कर (अन्य मार्गसे) चलनेकी बातको न्यायोचित सिद्ध करना, किसी भी व्यक्तिके लिए कठिन होगा।

हृदयसे तुम्हारा,

श्री तैयबभाई एम० जरीफ
१४ सूकियास लेन
कलकत्ता

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य: प्यारेलाल।

३९२. पत्र : क्षितीशचन्द्र दासगुप्तको

२४ अगस्त, १९३४

प्रिय क्षितीशबाबू[1],

मुझे मालूम हुआ है कि साम्प्रदायिक निर्णय-सम्बन्धी कार्य-समितिके प्रस्तावसे[2] सहमत होना, और इसी प्रकार संसदीय बोर्डके सम्बन्धमें मैंने जो रुख[3] अख्तियार किया है उससे सहमत होना, तुम्हारे लिए कठिन हो रहा है। जब तुम्हारा मत मेरे मतसे न मिले, तब तुम्हें मुझसे तर्क-वितर्क करनेका अधिकार है। मेरे स्वास्थ्यके कारण तुम्हें मुझे माफ करनेकी बात नही सोचनी चाहिए। हो सकता है, मै एकदम सीधे तुम्हारे पत्रोका उत्तर न दे सकूँ। लेकिन मुझे यह सोचकर दुःख होगा कि मैंने जो भी कदम उठाया है, उसके बारेमें बिना मुझसे तर्क किये ही तुमने कोई प्रतिकूल मत बना लिया है। तुम जानते हो, तुम्हारी मौन देश-सेवाकी और उसी प्रकार तुम्हारे मौन सहयोगकी मैंने कितनी कद्र की है। मैं नही चाहता कि मैं तुम-जैसे मूल्यवान सहयोगियोका विश्वास खो दूँ।[4]

श्री क्षितीशचन्द्र दासगुप्त
कलकत्ता

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

३९३. पत्र : वीरेन्द्रनाथ गुहाको

२४ अगस्त, १९३४

प्रिय वीरेन्द्र,

नीति-घोषणापत्रकी नकलके साथ तुम्हारा पत्र पाकर प्रसन्न हुआ। तुम्हें ऐसी सब सूचनाएँ, जिनकी मुझे जानकारी होना जरूरी समझो, मेरे पास भेजते रहना

१. सतीशचन्द्र दासगुप्तके भाई।
२. देखिए परिशिष्ट १।
३. देखिए पृ० २७०-७१।
४. देखिए अगला शीर्षक भी।

चाहिए। मुझे इसमें सन्देह नही कि क्षितीश बाबू भी अन्तमें वह सत्य[1] देख पायेंगे जो मुझे साफ दिखाई दे रहा है।

श्री वीरेन्द्रनाथ गुहा
विद्याश्रम
बी–७६, कॉलेज स्ट्रीट मार्किट
कलकत्ता

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

३९४. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

२४ अगस्त, १९३४

भाईश्री वल्लभभाई,

काकाने विद्यापीठके ट्रस्टी-पदका अधिकार छोड़ दिया। इस सिलसिलेमें हम सबकी यह राय है कि मण्डलके अध्यक्ष आप हों। हमने तो आपको बना भी दिया है। विद्यापीठमें मेरा अपना स्थान नियमानुसार क्या था, इसका मुझे कुछ भी ध्यान नही था। इसलिए पूछनेपर मालूम हुआ कि नियमानुसार तो मेरा स्थान कुछ भी नही है। परन्तु नैतिक दृष्टिसे मुझे कुलपति माना गया है। और सब अध्यापकोंने निर्णय द्वारा मुझे अधिकार दिया है कि जब मैं उचित समझूँ, हस्तक्षेप बीचमें कर सकूं। परन्तु इससे कोई संस्था थोड़े ही चल सकती है? इसके उचित अध्यक्ष तो आप ही हो सकते हैं। मुझे तो नैतिक स्थानसे ही सन्तोष है। उससे ज्यादा बोझ उठानेकी न मेरी इच्छा है, न शक्ति।

मेरी सलाहसे, बशर्ते आपकी मंजूरी हो, दूसरा निर्णय हमने यह किया है कि हरिजन आश्रमकी व्यवस्था नरहरि अपने हाथोंमें ले लें, और उनकी आवश्यकतानुसार विद्यापीठके शिक्षक उनके साथ रख दिये जायें। नरहरिका और विद्यापीठ की तरफसे दूसरे जो शिक्षक वहाँ रखे जायें, उनका खर्च, जबतक विद्यापीठके पास रुपया हो तबतक उसमें से दिया जाये। मेरी रायमें इस वक्त हरिजन-सेवक संघ पर यह बोझ न डालना ही उचित होगा, क्योंकि इस संघकी यह नीति रखी गई है कि सवर्ण हिन्दुओंको उसमें से कम-से-कम पैसा दिया जाये। आदर्श यह है कि उसकी ९५ फीसदी आय सीधी हरिजनोंकी जेबमें जानी चाहिए। उस आदर्शतक पहुँचना हो तो इस प्रकारका उदाहरण हमें अपने लोगोंसे ही पेश करना चाहिए। तीसरा निर्णय यह किया है — वह भी आपकी सहमतिकी शर्तपर — कि दूसरे जो शिक्षक बाकी रह जाते हैं, उन सबको, अगर वे मानें तो, ग्रामसुधार और ग्रामसेवाके लिए देहातोंमें फैल जाना

1. देखिए पिछला शीर्षक भी।

चाहिए। वे मेरी सुझाई हुई योजना अथवा कल्पनाके अनुसार काम करें। यह योजना आपको नरहरि समझायेंगे। उसकी कोई बात आपको पसन्द न आये तो उसे निःसंकोच रद कर दें। इस निर्णयके समय काकासाहब, किशोरलालभाई, मगनभाई सोमण और नरहरि मौजूद थे और वे इससे सहमत हैं। नरहरिके बारेमें ठक्करबापासे भी बात कर चुका हूँ। हरिजन आश्रम वैसे ही किसी व्यक्तिके बिना चमक नहीं सकता। मुझे पूर्ण विश्वास है कि इस तरह आश्रमको उन्नत करके ही हम हरिजन-सुधारको खूब आगे बढ़ा सकेंगे। ऐसा होनेपर ही आश्रमके दानकी सार्थकता सिद्ध मानी जायेगी। इसलिए यद्यपि मैं जानता हूँ कि नरहरिसे और कई सेवाएँ ली जा सकती हैं, फिर भी इस समय उनका उत्तम उपयोग यही है और उन्हें खुद भी इस काममें दिलचस्पी और पूर्ण आत्म विश्वास है। इसलिए नरहरिको तो हरिजन-आश्रमकी सेवामें अर्पित कर दीजिए।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १२२-२३

३९५. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

२४ अगस्त, १९३४

भाईश्री वल्लभभाई,

आपका पत्र और तार मिला। तारका जवाब तारसे नहीं दे रहा हूँ, क्योंकि इसी विषयपर कल लिख चुका हूँ।[1] अगर उसके आधारपर आप कुछ कह न चुके हों तो यों कहिये :

> पण्डित मालवीयजी और श्री अणेके बनाये हुए नये दलकी कार्रवाई मैंने पढ़ी है। कुछ बातें स्पष्ट करनेकी माँगवाले तार और पत्र भी मैंने पढ़े हैं। मेरी राय यह है कि कांग्रेसकी अनुमतिके बिना कांग्रेसका नाम इस्तेमाल करना उचित नहीं है। अगर इस दलमें केवल कांग्रेसियोंके ही शरीक होनेका कड़ा नियम हो, तो इसे कांग्रेसियोंका राष्ट्रीय दल जरूर कहा जा सकता है। परन्तु इसके लिए कांग्रेसकी बाजाप्ता मंजूरी लिये बिना इसे कांग्रेस राष्ट्रीय दल कहना उचित नहीं, खास तौरपर इसलिए कि यह दल जान-बूझकर कांग्रेसकी अधिकृत नीतिसे पूर्ण विरोधी नीतिका प्रचार करनेके लिए बनाया गया है। इस दलके साथ कांग्रेसका नाम इस्तेमाल करनेसे जनताके मनमें भ्रम हुए बिना नहीं रह सकता। इसलिए मैं पण्डितजी से आदरपूर्वक विनती करता हूँ कि वे

१, देखिए पृ० ३७२।

स्थितिपर पुनर्विचार करें और जो दल वे कांग्रेसियों और दूसरे लोगोंकी शिक्षा के लिए बनाना चाहते हैं – और जिसका उन्हें पूर्ण अधिकार है – उसका दूसरा नाम रख लें। एक दूसरी बात भी मैं आग्रहपूर्वक बताना चाहता हूँ कि कांग्रेस के नामपर चुनावोंका संचालन करनेका काम कांग्रेसके संसदीय बोर्डके सिवा और कोई नहीं कर सकता। अन्तमें, जबकि एक तरफ पण्डित मालवीयजी और श्री अणे तथा दूसरी तरफ कांग्रेसकी कार्य-समितिके बीच मतभेद है, मैं आशा रखता हूँ कि सभी कांग्रेसी साम्प्रदायिक निर्णयके मामलेमें कार्य-समितिने अपने प्रस्तावमें जो नीति प्रतिपादित की है, उसका वफादारीके साथ समर्थन करेंगे।[1]

इसमें जो फेरबदल करने हों, कर लीजिए।

राजेन्द्रबाबूका पत्र विचित्र है। उसका जवाब एक ही हो सकता है। कांग्रेस पैसे-सम्बन्धी जिम्मेदारी हरगिज नहीं ले सकती और हम व्यक्तिगत प्रयासोंसे रुपया नहीं जमा कर सकते। यह काम भूलाभाई वगैरहका है। आप इस बारेमें भूलाभाईसे बात कीजिए।

अ० भा० कां० क० के बारेमें भूलाभाईको लिखूँगा।

वे कार्य-समितिकी बैठक चाहते हैं, इसलिए बैठक बुलाना ठीक ही होगा। बम्बईमें करना हो तो वहाँ कीजिये और वर्धामें करना हो तो वर्धामें। वे सितम्बरके आरम्भमें चाहते हैं।

राजाजी परसों या रविवारको यहाँ पहुँचेंगे।

पट्टाभि वगैरह यहीं हैं। . . .[2] वगैरह आये हैं। आज जायेंगे।

काकाके बारेमें समझ गया। जवाहरलाल पकड़े गये। महादेवका तार आया है। महादेव उनसे मिल सके थे और कल आ रहे हैं।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो–२ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १२४-२६

१. साधन-सूत्रमें यह पूरा अनुच्छेद अंग्रेजीमें है।

२. साधन-सूत्रमें नाम छूटा है।

३९६. पत्र : भूलाभाई जे० देसाईको

२४ अगस्त, १९३४

आपकी इच्छा यदि अ० भा० कां० कमेटीमें चुने जानेकी हो रही हो, तो मेरी सलाह है कि इस समय उसे नियन्त्रित कीजिए। जब सभी एक स्वरसे आपकी माँग करें, तब आइएगा, और तभी आपका आना शोभा देगा। फिलहाल आप उसमें नहीं हैं, तब भी होने-जैसे ही हैं। और इस समय और इस वातावरणमें इतना ही काफी है।

मोहनदासके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]
महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य : नारायण देसाई।

३९७. पत्र : भगवानजी पु० पण्ड्याको

२४ अगस्त, १९३४

चि० भगवानजी,

तुम्हारा पत्र पाकर खुशी हुई। उस औरतके बारेमें तुम्हारा शक मुझे बिलकुल ठीक लगता है। मेरे सामने ही वह बहुत-से लोगोंके बीच कातती थी। पंजाबमें ऐसा पर्दा है ही नहीं। तुमने जमनाप्रसादको सचेत कर दिया, यह ठीक किया। शंकरलालको लिखना। मैं मानता हूँ कि वह भी सावधान है।

बलरामको लिखा है। मैं बिलकुल ठीक-ठाक हूँ। सुरेन्द्रसे कहना कि पत्र लिखे।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ३७२)से; सौजन्य : भगवानजी पु० पण्ड्या।

३९८. तार : राजेन्द्रप्रसादको[1]

[२५ अगस्त, १९३४ या उससे पूर्व]

बाढकी खबरसे बहुत दुःख पहुँचा। भूचालके लिए एकत्र धनसे इसमें सहायता करें। आशा है बाढ उतर चुकी होगी।

[अंग्रेजीसे]
सर्चलाइट, २९-८-१९३४

३९९. पत्र : डॉ० विधानचन्द्र रायको

२५ अगस्त, १९३४

प्रिय डॉ० विधान,

हाँ, मैं उपवासके प्रभावसे उबर आया हूँ, इस अर्थमें कि उसका कोई दुष्परिणाम नही हुआ। मैं निरन्तर लेकिन धीरे-धीरे पुनः शक्ति-लाभ कर रहा हूँ।

मेरी कोई इच्छा नही है कि कार्य-समितिकी बैठक हो। लेकिन अगर संसदीय बोर्डको उसकी जरूरत हो, तो मैं समझता हूँ कि सरदार वल्लभभाई बैठक अवश्य बुलायेंगे। लेकिन क्या तुम्हें उसकी जरूरत है? मुझे मौलाना साहब और सरदार शार्दूल सिंहका तार मिला है। साफ है कि वे संसदीय बोर्डकी बैठकके समय ही कार्य-समिति की बैठक चाहते हैं। अगर तुम्हारा भी यही भाव है, तो स्वाभाविक है कि कार्य-समितिकी बैठक अवश्य होनी चाहिए। मेरी इस समय बम्बई घसीटे जानेकी इच्छा नही है। जमनालालजी अपनी रोग-शय्यासे मुझे चेतावनी देते रहे हैं कि जबतक वजन ११० पौंड न हो जाये, वर्धा न छोड़ूँ। मैं अभी ९८ पौंड हूँ, और मेरा वजन प्रतिदिन आधा पौंडसे कमके हिसाबसे बढ़ रहा है। मान लो, यह रफ्तार कायम रही, तो मैं २० सितम्बरसे पहले वर्धा नही छोड़ सकूँगा। लेकिन यह तो ठीक ही है कि जमनालाल जी जरा सख्त हैं और इसलिए उनकी बात तब ही अमान्य की जा सकती है जब कि दोनों बैठकें बम्बईमें ही होनी हों, और वह भी सितम्बरके प्रारम्भमें और यदि मेरी उपस्थिति आवश्यक हो। ये सब बातें तय करना और तदनुसार सरदार वल्लभभाईको प्रेरित करना, आदि मैं तुमपर छोड़ता हूँ।

1. "पटना, २५ अगस्त", १९३४ की तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत प्रकाशित राजेन्द्रबाबूके तारके उत्तरमें। तार इस तरह था: "गंगा और सोनमें एकसाथ बाढ़ आ जानेकी वजहसे छपरा और आराके बीच पानी ही पानी हो गया है... मनुष्य और जानवर बड़ी संख्यामें हताहत हुए हैं... सहायता पहुँचानेकी कोशिश कर रहा हूँ, लेकिन भीषण बाढ़के सामने अपनेको असहाय पाता हूँ।"

निस्संदेह, पण्डितजी की पार्टीका 'कांग्रेस' नाम हथिया लेना बुरी बात है। बिना वैध अधिकारके कोई भी कांग्रेसके नामपर कार्य नही कर सकता। मैं समझता हूँ, सरदार वल्लभभाई इस सम्बन्धमें अपना वक्तव्य[1] जारी करेंगे। मैंने जो संक्षिप्त वक्तव्य[2] निकाला है, आपने देखा होगा।

आशा करता हूँ कि आप नही चाहते कि वर्तमान परिस्थितिमें कार्य-समिति वह कार्य-पद्धति निर्धारित करे जिसका अनुसरण कांग्रेसके सदस्योको विधानसभामें करना है। जिस प्रकारके संशोधनकी आप बात कर रहे है, यदि उस प्रकारका कोई संशोधन इस समय बैठकमे लाया जाये तो मै समझता हूँ, बेहतर होगा कि उसपर कुछ न कहा जाये। पर आवश्यक क्या है, इस बातका सर्वोत्तम निर्णायक संसदीय बोर्ड है। लेकिन अगर संशोधन प्रस्तावित हुआ, तो कांग्रेसके स्पष्ट कर्त्तव्यके बारेमें मेरा मत आपने सही समझा है। उन्हे साम्प्रदायिक निर्णयको स्वीकार करनेवाले प्रस्ताव या संशोधनके विरुद्ध मत देना चाहिए। और चूंकि वे उसकी नामंजूरीके पक्षमें मत नही दे सकते, अत यह स्वाभाविक है कि वे निर्णयको अस्वीकार करनेवाले प्रस्ताव या संशोधनपर मतदान न करे।

मै इस बातसे प्रसन्न हूँ कि अनेक जिलोमे निर्विरोध चुनाव हुआ है। मै चाहता हूँ, बहुसंख्यक जिलोने जो सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत किया है, बाकी जिले भी उसका अनुसरण करें। लेकिन यदि संघर्ष अनिवार्य ही हो जाये तो, मै समझता हूँ, श्री अणेके निर्णयोंका निष्ठाके साथ अनुसरण होना चाहिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

डॉ० विधानचन्द्र राय
कलकत्ता

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

१. देखिए "पत्र : वल्लभभाई पटेलको", पृ० ३८२-८३।
२. देखिए पृ० ३६६।

४००. पत्र : मंघाराम सन्तदासको

२५ अगस्त, १९३४

प्रिय सन्तदास,

बिल हेजके पत्रकी पुश्तपर जयरामदासको लिखी तुम्हारी संक्षिप्त टिप्पणी मैंने पढ़ी। यद्यपि मैं तुम्हें लिख नहीं पाया हूँ, तथापि कमलानीकी विक्षिप्तता जो रुख अख्तियार कर रही है, उसकी खोज-खबर मैं ध्यानपूर्वक रखता आया हूँ[1]। मुझे इस बातमें कोई सन्देह नहीं है कि वह फिर अपने-आपेमें आ जायेगा, और जब वह पुनः अपना सन्तुलन प्राप्त कर लेगा, तब यदि तुम्हारी स्वीकृति होगी तो मैं उससे पूछूंगा कि क्या वह फिरसे काम शुरू करनेसे पहले कुछ समयके लिए हिन्दुस्तान आना चाहता है। इंग्लैंडका जीवन कमलानी-जैसे कोमल अन्तःकरणके व्यक्तिके लिए बहुत कठिन समस्या है। आशा करता हूँ, तुम चिन्तित नहीं हो। आखिर, क्या कमलानी और क्या हम लोग, सभी भगवानके हाथमें हैं। हम तो बस काम कर सकते हैं और भगवानसे प्रार्थना कर सकते हैं।

श्री म० सन्तदास
हैदराबाद

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

४०१. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

२५ अगस्त, १९३४

चि० नरहरि,

काकासाहबने विद्यापीठ मण्डलके ट्रस्टसे त्यागपत्र दे दिया है, इसलिए अब यह सवाल पैदा होता है कि श्री नगीनदास अमुलखरायकी ग्रामसुधार योजनाके सम्बन्धमें क्या किया जाये। नगीनदासकी इच्छानुसार मैंने एक समिति नियुक्त की थी। विचार करनेसे आज ऐसा समझमें आता है कि विद्यापीठसे इस समितिको बिलकुल स्वतन्त्र कर दिया जाये और सरदार वल्लभभाईको इसका अध्यक्ष नियुक्त किया जाये। इसमें मंत्रीका काम रावजीभाई नाथाभाई करें तथा उनकी नियुक्ति एक बरसके लिए की जाये।

१. देखिए "पत्र : मीराबहनको", पृ० ३१५।

नगीनदास ट्रस्टका पैसा काकासाहबने जमनालालजी के पास जमा किया है, यह उचित है। जमनालालजी के तन्दुरुस्त हो जानेपर कोई दूसरा प्रबन्ध करनेकी जरूरत हुई तो कर लेंगे। मेरे अधीन एक कोष और भी है। इसकी रकम भी काकासाहबने जमनालालजी के पास जमा की है। हिसाबके सुभीतेके लिए और अन्य विचारोंसे भी मुझे उचित लगता है कि इस रकमको नगीनदास ट्रस्टके पैसेमें मिला दिया जाये।

स्वर्गीय पूँजाभाईने एक खास रकम देकर मेरी सलाहसे एक समिति द्वारा जैन-साहित्यके प्रकाशनकी जिम्मेदारी विद्यापीठको सौंपी थी। इसलिए इस विषयमें भी मेरा नैतिक उत्तरदायित्व है। मेरा सुझाव है कि परिस्थितिको देखते हुए यह काम भी विद्यापीठके नियन्त्रणसे स्वतन्त्र चले। इस, स्वतन्त्र मण्डलके ट्रस्टियोंके लिए मैं नीचे लिखे नाम सुझाता हूँ:

१. नरहरि परीख	४. मगनभाई देसाई
२. वालजी देसाई	५. नीलकंठ मशरूवाला
३. रमणीकलाल मोदी	६. गोपालदास पटेल

इसके अलावा यदि एक विद्वान् तथा धर्मनिष्ठ जैनका नाम हमें मिल सके, तो उन्हें ट्रस्टीके नाते निमन्त्रित किया जाये, यह भी मुझे उचित लगता है। ऐसा नाम खोजना पड़ेगा। कोई नाम तुम्हारे ध्यानमें आये, तो मुझे बताना।

इस कार्यक्रमके अन्तर्गत आजतक जैन-आगमोंके मूल ग्रन्थोंको उनके अनुवाद सहित प्रकाशित करनेपर महत्व दिया गया है। इसके बदले अब यदि हम --- जैसाकि वालजीभाईका सुझाव है --- इस विशाल साहित्य-क्षेत्रसे ऐसे अंशोंका चयन करें अथवा करायें जो जनताके लिए उपयोगी हों और उन्हें प्रकाशित करें, साथ ही अन्य धर्मोंमें से अहिंसाके पोषक साहित्यको प्रकाशित करें, तो मेरा खयाल है कि स्व० पूंजाभाईका उद्देश्य अधिक सही ढंगसे मूर्तिमान् होगा।

स्व० पूंजाभाईकी सदा यह इच्छा रही कि श्री राजचन्द्रकी जयन्ती उचित ढंगसे मनाई जानी चाहिए। इसे मनानेका भार हम अपने ऊपर ले ले, यह आवश्यक है। किन्तु पूंजाभाईके समयमें जयन्तीके दिन सभाएँ करके सन्तोष कर लिया जाता था। इसके बदले यदि प्रत्येक जयन्तीके अवसरपर कोई रचनात्मक कार्य किया जा सके तो वह समितिको अधिक शोभा देगा और श्री राजचन्द्रकी आत्माको भी अधिक शान्ति मिलेगी -- ऐसी मेरी मान्यता है। यह कार्य कुछ साहित्य तैयार करके या किसी विद्वानका व्याख्यान कराके अथवा और किसी रीतिसे किया जाये, यह समितिको सोच लेना चाहिए। आगामी जयन्ती कार्तिक-पूर्णिमाके दिन है, अतः यह पूर्णिमा किस ढंगसे मनाई जाये, इसका विचार समय रहते कर लेना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९०६३)से।

४०२. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

२५ अगस्त, १९३४

भाई वल्लभभाई,

'मेरा कलका पत्र'[1] मिल गया होगा। आज मथुराबाबू[2] आपका पत्र लाये। वे आये, यह ठीक हुआ। मैंने साफ-साफ कहलवा दिया है कि यदि ससदीय बोर्ड खर्च दे तो वे चुनाव लड़ें, अन्यथा रहने दें। आपकी या मेरी तरफसे कोई आशा न रखें। हाँ, यदि बिना खर्चके लड़नेकी हिम्मत हो तो जरूर लडें। लेकिन यह सम्भव न हो तो पूरा विचार करके ही लडें। यदि रुपयेके बिना केवल प्रतिष्ठाके बलपर ही चुनाव लड़ना कही सम्भव है, तो वह बिहारमें ही संभव है। पर इसमें मेरा दखल नही है। यह सारा काम किस तरहसे होता है, इसकी भी मुझे कल्पना नही है। वैसे बिना खर्च या नाम-मात्रके खर्चपर यदि कांग्रेसके नामसे चुनाव लड़ा जा सके, तो एसी शोभाकी बात और क्या हो सकती है?

तार आया है कि आज ३-४ के बीच भुलाभाई आ रहे है। महादेव शामको पहुँचेगा।

यह तो मैं लिख चुका हूँ न कि कार्य-समितिके बारेमें मेरे पास तीन तार आये थे? मैंने तारसे इतना ही जवाब दिया है कि इस बारेमें आपसे पूछा जाये।

आपके लिए आना यदि असम्भव हो तो कोई बात नही। पत्रो द्वारा सम्पर्कसे सन्तोष कर लूंगा। मेरी जानकारीमें जो-कुछ नया आयेगा, वह बताता रहूँगा।

मीराबहन बहुत काम करती मालूम होती है। फल तो शायद अभी कुछ भी न निकले, फिर भी उसका (विलायतका) चक्कर बेकार नही माना जा सकता। आपको इस सिलसिलेमे पत्र न मिलते हो, तो महादेवके आनेपर भेजनेकी व्यवस्था करूँगा। म्यूरियल लॉयड जार्जसे मिली। घटो बातें की। इस प्रकार ये कुछ साथी अपनी शक्तिके अनुसार काम करते रहते है। मीराबाई और अगाथा कुछ झगड़ पड़ी। मीराबाईकी कुछ तो जल्दबाजी और कुछ वहमी प्रकृति इसका कारण है। यह सब विस्तारपूर्वक महादेव या प्यारेलाल लिखेंगे।

लगता है, आपमें अभी भी पूरी शक्ति नही आई। भुलाभाई आ गये है। बम्बईमें सभा कर लीजिये। मुझे वहाँ घसीट लेगे। अ० भा० का० कमेटीकी गाड़ी खीच सकेंगे।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल,
८९, वार्डन रोड, बम्बई

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १२७-२८

१. देखिए पृ० ३८२-८३।

२. मथुराप्रसाद; बिहारके एक कार्यकर्ता और राजेन्द्रबाबूके साथी।

४०३. पत्र : उमादेवी बजाजको

२५ अगस्त, १९३४

चि० ओम,

तेरे पत्र मिलते रहते हैं। लिखावट जैसी मुझे चाहिए वैसी तो नही है, किन्तु ठीक है। किसन आकर तुझसे मिल जाती है न?

रोज लिखनेके लिए काफी सामग्री मिल सकती है। इसके विषयमें क्या मैंने तुझसे कुछ नही कहा? कौन-कौन आता है? खानेमें क्या दिया जाता है? नीद कितनी लेती है? यदि कम हो तो तू अपनी शक्ति-भर काम कर पाती है या नही? ये सब बातें तो लिख ही सकती है। यदि प्रतिदिन 'रामायण' पढ़ती है, यह भी लिख सकती है कि क्या पढ़ा?

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३३७-३८

४०४. पत्र : जमनालाल बजाजको

२५ अगस्त, १९३४

चि० जमनालाल,

मैं देख रहा हूँ कि तुम्हारा काम पूरे अश्ववेगसे चल रहा है। बीमार लोग तो बादशाही ही भोगते हैं न? बीमारीका यही आनन्द है। पर जब बेचारे दरिद्रनारायणके भाग्यमें बीमारी आती है तो उसके भागमें तीमारदारीका यह सुख नहीं आता।

इसके साथ डॉ० शाहका पत्र है। ओमका तो है ही।

यहाँ सब ठीक चल रहा लगता है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० १३२

४०५. पत्र : मणिबहन पटेलको

२५ अगस्त, १९३४

चि० मणि,

तेरी लिखी दो पक्तियाँ पढी। तू आजकल नही लिखती, यह बिलकुल ठीक है। स्वास्थ्यकी लापरवाही न करके उसे अच्छी तरह सुधार लेना। लिखने योग्य हो जाओ तो अच्छी तरह लिखना। इस समय मेरे प्रति दयाभाव रखनेकी आवश्यकता नही है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–४: मणिबहन पटेलने, पृ० ११७

४०६. पत्र : जी० आर० सहगलको

२६ अगस्त, १९३४

प्रिय सहगल,

सिर्फ एकको छोडकर सभी वांछित सूचनाओ सहित तुम्हारा तत्काल पत्रोत्तर पाकर खुशी हुई। मेरी समझमें नही आता कि इतनी अधिक योग्यता होते हुए भी तुम्हारे लिए — जिसके पत्नी है बच्चे है — क्या यह उचित होगा कि १५० रुपयोके लिए किसी हरिजन-संस्थाको अपनी सेवाएँ दो। प्रश्न तुम्हारे स्वल्प निर्वाह-व्ययका, जिसकी कि तुम्हे आवश्यकता है, उतना नही है जितना इस तथ्यका है कि शायद अभी कुछ बरसोतक तुम्हारी योग्यताके लिए जो क्षेत्र चाहिए, वह मै तुम्हें नही दे सकूँगा। कोई विशाल हरिजन-सस्था खड़ी करनेका विचार मेरे मनमें नही है। वह संस्था एक छोटी चीज होगी, जिसकी कुछ सुदूर भविष्यमें बड़ी सम्भावना होगी। तो क्या तुम्हे अपनी योग्यताको बेकार रहने देनेमें सन्तोष होगा? तुम्हे मुझे केवल यह बताना है कि वह कौन-सी बात है जो तुम्हें प्रेरित कर रही है। और क्या ७५० रुपये प्रतिमाससे १५० रुपये प्रतिमासपर उतर आनेमें तुम्हारी पत्नीका तुम्हारे साथ हार्दिक सहयोग है? क्योकि मै समझता हूँ कि तुम अगर ७५० रुपये प्रतिमास नही, तो उसके लगभग कुछ अभी भी प्राप्त कर सकते हो।

हृदयसे तुम्हारा,

श्री जी० आर० सहगल
मारफत गुरुकुल
सूपा बरास्ता नवसारी

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य: प्यारेलाल।

४०७. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

२६/२७ अगस्त, १९३४

भाई वल्लभभाई,

आपके पत्रका जवाब महादेवने दिया होगा। आज राजाजी मानो घोड़ेपर सवार होकर आये हैं। उनके साथ बहुत समय बिताया, इसलिए डाक पिछड़ गई। अणे भी आये थे। उनके बारेमें इतना ही कहा जा सकता है कि वे मालवीयजी का मीठा सन्देश लाये थे, और मुझसे बोले कि मुझे कुछ कहना हो तो कहूँ। मैंने कहा कि शिष्ट व्यवहार रखना हो तो हर जगह सलाह-मशविरा करके उम्मीदवार खड़े कीजिये, केवल टक्कर लेनेकी खातिर कही नही। उन्हें नागपुरकी रेल पकड़नी थी, इसलिए वापस आनेकी कहकर गये हैं। इस पार्टीने काम उलझाया ही है, बाकी कुछ विशेष कर सकेंगे, ऐसा मुझे दिखाई नहीं देता।

भुलाभाई आ गये। मौलानाका मेरे नाम तार आया है। भले ही कमेटीकी बैठक वर्धामें हो। यहाँ जगह तो है। होटलके बिना ही काम चल जायेगा। दो दिनसे ज्यादा तो लोग ठहरेंगे नहीं। मुझे तो सचमुच वर्धा अधिक अनुकूल होगा। राधाकिसन पर जरा भार जरूर पड़ेगा, मगर उसने तो सारी तैयारी कर ही रखी है। अभी-अभी जमनालालजी ने नये मकान बनवाये हैं। इसलिए जगह तो काफी है। राधाकिसन कहता है कि पूरी व्यवस्था है। इन सबके पीछे जमनालालजी के व्यक्तित्वका प्रभाव जो है।

भुलाभाई आपसे मिलकर सब-कुछ तय करायेंगे। आगे जैसा अनुकूल हो वैसा कीजिये। यहाँ तय करेंगे तो इतना तो है कि सब मिलेंगे।

कांग्रेससे निकल जानेकी बात मैं राजाजी के साथ कर रहा हूँ। इसीलिए वे आये हुए हैं। हो सके तो मंगलवारको भाग जाना चाहते हैं।

रामदास मंगलवारको खुर्जासे वापस आ रहा है। खुर्जामें हैजा है इसलिए। आनेपर और पता चलेगा।

आपमें शक्ति आ रही होगी।

जवाहरलालके विषयमें महादेवने आपको सब-कुछ लिख दिया है। उसका जाना कितना अच्छा रहा! उन्हें बड़ा आश्वासन मिला। उनकी माता और कमला तो खुश हुईं ही।

शामकी प्रार्थनाके बाद मौन लेकर इतना तो घसीट डाला है। बाकी कुछ होगा तो कल लिखूंगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्चः]

प्रातःकाल, २७ अगस्त, १९३४

एक बात याद आ गई है। नगरपालिकाके कामके बारेमें अब मुझे वल्लूभाई[1] या और किसीको लिखना नहीं होगा। आपको ही लिखा जायेगा। विद्यापीठकी पुस्तकें ही वापस लेनेका तय करें तो भी आश्रमकी तीससे पचास हजार मूल्यतककी पुस्तकें होंगी। शायद कुछ कम या ज्यादा की हों। इनका अभी कोई उपयोग नहीं होता। अगर एक लाइब्रेरियन रखें तो शास्त्रीय पद्धतिसे पुस्तक-सूची बने, पढ़नेके लिए देनेके नियम बनाये जायें और तदनुसार उनका कुछ उपयोग हो। कुछ किया जा सके तो अच्छा हो।[2]

एन्ड्रयूज और जोन्स[3] आ गये हैं। आपका पत्र मिला। कल आपसे भुलाभाईकी भेंट होनी चाहिए। खुशीसे बैठक वर्धामें रखिये। महादेवसे तो आप आयें, तभी मिल सकेंगे। एन्ड्रयूज और राजा यहीं हैं।

बापू

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १२८-३०

४०८. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

२७ अगस्त, १९३४

भाई बापा,

अमलाबहन सम्बन्धी आपका पत्र मिला। यह पैसा संघको नहीं खर्च करना चाहिए था। किन्तु यह बात मैं छिद्रान्वेषणके भावसे नहीं कह रहा हूँ। दया अद्‌भुत चीज है। ट्रस्ट एक ओर है और दया दूसरी ओर। इस द्वन्द्वमें से कौन बचकर निकल सकता है? किन्तु यह पैसा संघके पैसेमें से तो नहीं ही जाना चाहिए। इसलिए इस बिलकी और परीक्षितलालके खर्च हुए दस रुपयोंकी जिम्मेदारी मैं लिये लेता हूँ। अन्य किसी उपयुक्त कोषसे इसे दे दूंगा। आप इस बिलको भूल जाइए। मैं यहाँसे हुंडी या मनीआर्डर परीक्षितलालको एक-दो दिनमें भेज दूंगा।

बाकी तो पृथुराजसे बहुत-कुछ लिखनेके लिए कहा है। किसीने एक हुंडी मेरी इच्छानुसार खर्च करनेके लिए मुझे दी है। मेरे बताये ढंगसे आपके हाथों खर्च होनेके लिए वह भी पृथुराज भेज रहा है।

बापूके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११४०) से। एस० एन० २२७५५ से भी।

१. बलवन्तराय ठाकुर, अहमदाबाद नगरपालिकाके अध्यक्ष।
२. देखिए पृ० २७७ भी।
३. स्टेनली जोन्स।

४०९. पत्र : चन्दूलाल मोदीको

२७ अगस्त, १९३४

भाई चन्दूलाल,

आपका पत्र मिला। रमणीकलालसे कहिए कि मैं उनसे मिलनेके लिए अधीर हो रहा हूँ। कहिए कि जल्दी मिले। किन्तु न भी मिल सके, तो क्या कर सकते हैं? हम जो-कुछ चाहते हैं, संसारमें वही-सब नही होता। आपकी खबर ताराके जरिए मिलती रहती है। आप खुश रहते हैं, यह अच्छी बात है। ऐसा ही होना चाहिए। मेरा शरीर फिर सुधरता जा रहा है। उपवासके एकदम बाद वजन ९४ था, आज १०० हो गया है। चौदह दिनमें इतना हो जाना कुछ बुरा नही है।

उपवासमें मैं गरम पानी ठंडा करके पीता था। मुझे उबाले या बिना उबाले पानीसे कोई फर्क नही पड़ता। पानी ही सहन नही होता। आप क्या उपवासमें सन्तरे खाते हैं? बाकी और भी जो लक्षण दिखाई दें, मुझे बताइए।[1]

रमणीकलालसे मिलनेके बाद तुरन्त मुझे खबर दीजिए। बहुत करके तो वे अब जल्दी ही छूटेंगे। प्रयत्न तो हो रहा है। किन्तु वह तो ऐसा ही हो सकता है जो हम लोगोको शोभा दे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४१८१) से। सी० डब्ल्यू० १६८० से भी; सौजन्य: रमणीकलाल मोदी।

४१०. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

२७ अगस्त, १९३४

चि० सुशीला और मणिलाल,

मुझे पत्र मणिलालने नही सुशीलाने लिखा है, इसलिए क्या पहले उसीका नाम रखना उचित नही है?

रामदासके लिए एक अनुमति-पत्रके बारेमें मैं तुम्हारे जवाबका इन्तजार कर रहा हूँ।[2] मेढने अभीतक मामा[3] के पास कुछ नही भेजा है। यदि वह भेजना ही चाहता है, तो सीधे मामाके पास या मेरे पास क्यों नही भेजता?

१. देखिए "टिप्पणियाँ", पृ० ३७५-७६ भी।

२. देखिए पृ० २०६-७।

३. माधवदास कापडिया, कस्तूरबाके भाई।

मेरा खयाल है कि मैंने तुम्हें पहले ही मामाके लिए कम-से-कम पाँच रुपया बचाकर मेरे पास भेजनेके लिए लिख दिया है। यह तो मैंने जो मामाको दिया जा चुका है, उसीमें से माँगा है। यह पैसा भी दानके रूपमें न दिया जाये तो अच्छा। वह वापस कर सकेगा, यह मैं नहीं मानता। यदि तुम दोनों और देवदास हर महीने इतना देते रहो, तो तुम्हें बोझ नहीं महसूस होगा और जो पैसा मैंने जमनालालजी से उधार लिया है, वापस लौटाया जा सकेगा। तुम्हें कोशिश करके इतना करना चाहिए।

एन्ड्रयूज वापस लौट आये हैं। खासकर तुम्हारे ही बारेमें काफी बातें हुई। वे बहुत निराश हो गये हैं और शिकायत करते हैं कि मणिलाल एजेंटके बारेमें लेख लिखता रहा है, जो क्रोध व घृणासे भरे हैं। वे यह नहीं कहते कि एजेंटकी कोई आलोचना नहीं होनी चाहिए, बल्कि उनका कहना है कि आलोचना उपयुक्त सीमाके अन्दर होनी चाहिए। मैं इन दिनों खुद तो 'इंडियन ओपिनियन' नहीं पढ़ सकता। मैं शायद ही कोई समाचारपत्र पढ़ पाता हूँ, इसलिए मैं जान नहीं पाता। फिर भी यदि तुम क्रोध या घृणामें कुछ लिखते रहे हो, तो इस त्रुटिको सुधार लेना। तुम्हें महसूस करना चाहिए कि तुम्हारी जिम्मेदारी बड़ी भारी है। चूंकि मैंने कुछ पढ़ा नहीं है, इसलिए आलोचनाके तौरपर यह सब नहीं लिख रहा हूँ। मैं केवल तुम्हें यह जानकारी दे रहा हूँ कि एन्ड्रयूजके मनपर क्या प्रभाव पड़ा है।

बंगालका कौन-सा स्वामी है जो मणिलालका काफी समय ले लेता है?

खुरजामें हैजा है, इसलिए रामदास कल यहाँ आ रहा है।

किशोरीलाल और गोमती इन दिनों यहीं हैं। किशोरीलालकी तन्दुरुस्ती बहुत अच्छी नहीं कही जा सकती।

देवदास एक तरहसे बिलकुल ठीक है। लक्ष्मी तो नाजुक है ही। उसकी बेटी मजेमें है। एन्ड्रयूज गोविन्द उर्फ अरुणकी बड़ी प्रशंसा कर रहे थे।

फिरसे मेरी काफी शक्ति लौट आई है। लेकिन मुझे अब भी थोड़ा-बहुत आराम करना ही पड़ता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८२५) से। सी० डब्ल्यू० १२३७ से भी; सौजन्य: सुशीला गांधी।

४११. ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

२७ अगस्त, १९३४

चि० व्रजकिसन,

तुमारे दो खत मिले हैं।

तुमारी कठिनाई समझ सकता हूँ। धीरजसे सब कुशल ही होगा। मेरे से हो सके तबतक मैं अवश्य तुमारा कर्त्तव्य बताता रहुंगा। लेकिन मेरी मानसिक वृत्ति आज ऐसी बन गई है कि किसीको आज्ञाके रूपसे नहिं कहना, जब पूछे तब सम्मतिके रूपमें कहना।

यदि तुमने इजाजत दे दी हैं मैं दामोदरदासको मिलूंगा और बादमें केशुको लिखुंगा। दामोदरदासको यहां बुलाउंगा।

मेरा यहांसे आजकल तो जाना है ही नही।

मसूरीमें जहांतक रहना पडे रहना और शरीर और मन दोनों दुरस्त करके नीचे उतरना।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४२१) से।

४१२. एक पत्रका अंश[1]

[२८ अगस्त, १९३४ से पूर्व]

कांग्रेसकी स्वागत-समितिने पूछा था कि गांधीजी आगामी कांग्रेस-अधिवेशनके दौरान कहाँ ठहरना चाहेंगे। इस प्रश्नके जवाबमें उन्होंने जो पत्र लिखा, उससे यह संकेत मिलता है कि वे, कमसे-कम जबतक बम्बई कांग्रेस-अधिवेशन समाप्त नहीं हो जाता, जेल नहीं जायेंगे। महात्मा गांधीने अपने जवाबमें लिखा है कि वे कांग्रेस-नगरमें भावी व निवर्त्तमान अध्यक्षोंके साथ ठहरना चाहेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, २९-८-१९३४

१. एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके इस संवादको "बम्बई, २८ अगस्त १९३४", की तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत प्रकाशित किया गया था।

४१३. पत्र : वलीवहन एम० अडालजाको

२९ अगस्त, १९३४

चि० वली,

तेरा पत्र मिला। प्रसन्न हुआ। हरिलालके वारेमें जैसा तू सोचती है, वैसा ही मै भी सोचता हूँ। पोरवन्दरसे उसका पत्र मेरे पास आया है। लगभग एक वर्षके वाद यह पत्र आया। मैंने उसे सतर्क तो कर ही दिया है। मनुका डर निकल गया, यह अच्छा हुआ। किन्तु उसकी खीझका क्या इलाज हो सकता है?

लगता है, तेरी तवीयत काफी लस्त हो गई है। कुमीकी भी उम्दा तो नही ही कही जा सकती। किन्तु तुम दोनो वहन सेवाका मन्त्र जानती हो, इसलिए सेवासे नही चूकती।

यहाँ सव मजेमें हैं।

वापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५३१) से, सौजन्य. मनुवहन एस० मशरूवाला।

४१४. पत्र : उमादेवी बजाजको

२९ अगस्त, १९३४

चि० ओम,

तू जवर्दस्त है। मालूम होता है कि मारवाड़ी तो अच्छी लिख लेती है। मारवाड़ीमें और गुजरातीमें वहुत फर्क नही है। कोई तो कहते है कि गुजराती मारवाड़ी में से ही निकली है और अव तो वह मारवाड़ीको भी मात दे जाती है। इसी कारण तूने मुझे दत्तक वाप वनाया है न? यहाँ मदालसा खड़ी-खड़ी तेरी टीका कर रही है कि तूने मारवाड़ी शुद्ध नही लिखी। लेकिन परीक्षक अपनी योग्यतानुसार ही जाँचेगा न? और मदालसी[1] कहाँसे मारवाडीकी शिक्षिका या परीक्षिका वन गई? इस कारण तुम मारवाड़ीमें पास हो।

वापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पांचवें पुत्रको वापूके आशीर्वाद, पृ० ३३८

१. साधन-सूत्रके अनुसार।

४१५. पत्र : डॉ० विधानचन्द्र रायको

३० अगस्त, १९३४

प्रिय डॉ० विधान,

मुझे मालूम हुआ है कि बंगालके काग्रेसी उम्मीदवारोको विवेकगत संशयके आधारपर साम्प्रदायिक निर्णय सम्बन्धी कार्य-समितिके प्रस्तावका अनुसरण करने या न करनेकी छूट दी जा रही है। क्या यह सम्भव है? यदि है तो, मै समझता हूँ, हमें ऐसी छूट देनेका अधिकार ही नही है। इस सम्बन्धमें प्रेसको दिया गया मेरा वक्तव्य[1] आपने देखा होगा। मैंने उसमें कहा है कि ऐसा प्रस्ताव पेश किया गया था और अस्वीकार कर दिया गया। लेकिन अगर मालवीयजी उसे स्वीकार करनेके पक्षमें है, तो कार्य-समिति शायद फिर उसका प्रस्ताव रखेगी। लेकिन जबतक यह छूट कार्य-समितिके किसी प्रस्तावका अंग नही बन जाती, तबतक छूट देनेका अधिकार किसीको नही है। और कार्य-समिति भी तबतक यह छूट नही दे सकती जबतक कि नेशनलिस्ट पार्टीका अस्तित्व कायम है। अतः जिन्हे छूट चाहिए, उनके लिए नेशनलिस्ट पार्टीके सदस्य हो जानेके सिवाय और कोई चारा नही है।

हृदयसे आपका,

डॉ० विधानचन्द्र राय
कलकत्ता

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

४१६. पत्र : हरिभाऊ फाटकको

३० अगस्त, १९३४

प्रिय हरिभाऊ,

तुम्हारा पत्र मिला। गायके विषयमें मेरा मत यह नही है कि गाय दूध देनेमें भैससे बढ़कर है। यदि गोरक्षा हिन्दू-धर्मका अंग है, तो हमें भैसका दूध अवश्य ही त्याग देना चाहिए, चाहे वह गायके दूधसे बेहतर ही क्यों न हो। धर्मकी ऐसी ही अवधारणा है। तुम इस बारेमे मात्र उपयोगिताका नियम लागू नही कर सकते। यदि हम भैसका दूध ज्यादा पसन्द करेंगे, तो धीरे-धीरे भैस पूजाका विषय बन जायेगी और गायका अस्तित्व मिट जायेगा; वैसे भी वह तेजी-से मिट रही है।

1. देखिए पृ० ३६६।

इतना कहनेके बाद, मैं यह कह सकता हूँ कि मेरे पास जितनी जानकारी है, उससे यही जाहिर होता है कि सभी बातोंको देखते हुए गायका दूध भैंसके दूधसे अच्छा है। लेकिन यह ऐसा सवाल है जिसमें मुझे ज्यादा दिलचस्पी नहीं है, क्योंकि मुझे पक्का यकीन है कि गायका दूध भैंसके दूधसे बेहतर है या भैंसका दूध गायके दूधसे, दोनोंके पक्षमें डॉक्टरी प्रमाण प्राप्त किया जा सकता है। इसलिए इस तरहके मामलोंमें विशेषज्ञकी रायसे साफ बचना चाहिए। यदि हम गायकी पूजा करते हैं तो हमें विभिन्न जानवरोंके दूधके गुणोंका खयाल किये बिना, उसे हर तरहसे पहला स्थान देना चाहिए।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

श्री हरिभाऊ फाटक
सदाशिव पेठ, पूना

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १३७२) से।

४१७. पत्र : नारणदास गांधीको

३० अगस्त, १९३४

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम कमजोर पड़ जाओगे तो कैसे काम चलेगा। जो चिकित्साका धन्धा अपनाता है, उसे रोज ही बीमारियोंकी बात कहनी-सुननी पड़ती है। यह अच्छा ही हुआ कि मैंने . . .[1]का पूरा पत्र ही भेज दिया था। तुम्हारे पत्रमें तो इस बातका दूसरा पहलू ही सामने आता है। ऐसी हालतमें तुम मुझे परिस्थितिसे अवगत बनाये रखना और दूसरे, तुम्हें जो योग्य लगे वही करना। मैं जो कहता हूँ, तदनुसार तो तभी करना चाहिए जब तुम्हारी बुद्धि उसे स्वीकार करे। अथवा जब यह कहूँ कि बुद्धि कबूल न करे तब भी करना। मैंने . . .के एकतरफा पत्रके आधारपर कुछ लिख दिया था। उसपर अमल तो तभी किया जा सकता है जब बात तुम्हारे गले उतरे। तुमने तो जवाबमें उसकी सारी शिकायतोंका खण्डन किया है। ऐसी हालतमें मैंने जो कहा है उसपर अमल नहीं करना है। पहले तो तुम्हें यह करना चाहिए कि तुम . . के पत्रका विश्लेषण करके उसे उसकी शिकायतोंका अनौचित्य समझा दो। और उसके बाद उसी तरह पैसेके विषयमें भी दृढ़तापूर्वक कह दो। तुम्हारा पत्र पानेके बाद यदि तुम चाहो तो मैं उसे लिखकर इसका अनौचित्य बतानेके लिए भी तैयार हूँ। किन्तु मेरे लिखनेसे अनर्थ हो सकता है, इसलिए नहीं लिखता।

१. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिया गया है।

गोशालाके बारेमें समझ गया। ट्रस्टियोंमें किनके नाम रखनेका सुझाव देते हो। कुछ नाम तो मैंने सुझाये थे, पर मैं भूल गया हूँ। इसलिए तुम लिख भेजना। रामदास और डॉ० शर्मा यहाँ वापस आ गये हैं। उनके खुर्जा वापस जानेकी बात नहीं रही, क्योंकि जो मकान वहाँ अपने पास था, उसे खाली करना पड़ा है और दूसरे, खुर्जामें कोई विशेषता तो है नहीं।

इन दिनों यहाँ काफी लोग हैं। एन्ड्रयूज और घनश्यामदास तो हैं ही। सरदार और जयरामदास आज आ रहे हैं। अन्य लोग आते ही रहते हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४११ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

४१८. पत्र: विमला जोशीको

३० अगस्त, १९३४

चि० विमू,

तू पेंसिलसे क्यों लिखती है? स्याहीसे लिखना चाहिए और अक्षर ऐसे बनाने चाहिए मानो सुन्दर चित्र खींच दिये हों। क्या तुझे जल्दीसे पत्र लिख डालनेकी जरूरत लगती है? तुम सब फिलहाल तो वहाँ जम गये हो, यह अच्छा हुआ।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ७: श्री छगनलाल जोशीने, पृ० ३०२

४१९. पत्र: मनु गांधीको

३० अगस्त, १९३४

चि० मनुड़ी,

तेरा पत्र मिला था। क्या अब तू सुशीला बहनके स्कूलमें नहीं जाती? जो पढ़ा जा सकता है, वह तू पढ़ती है, इससे मुझे सन्तोष है। भाईसे डरना छोड़ दिया, यह तो बहुत ही ठीक किया। अपना शरीर सँभालना, क्रोधका त्याग करना। मौसीकी सेवा करना और सुखी रहना। रामदास अब यहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५३३) से; सौजन्य: मनुबहन एस० मशरूवाला।

४२०. एक पत्र

३० अगस्त, १९३४

चि० . . .[1]

मगनभाईने तेरा सन्देशा मुझे दिया है। यदि तेरे मनमें ऐसा विचार बराबर उठता रहा है, तो मनमें आते ही बतानेकी तेरी प्रतिज्ञा भंग हुई है। दूसरी रीतिसे भी शायद . . .[2] के साथ तेरा सम्बन्ध दूषित माना जायेगा। ऐसा होते हुए भी, यदि तुम दोनों अभी भी राजी हो, और बड़े-बूढ़ोंके आशीर्वाद तुम दोनोंको मिले तो मेरे तो मिलेंगे ही। किन्तु पाँच वर्षतक ठहरनेका अपना हठ तू छोड़ दे। वैसे मुझे तो वह पसन्द है। किन्तु सगाई होनेके बाद विकारपूर्ण विचार तो तुम दोनोंके मनमें आते ही रहेंगे। यह अत्यन्त भद्दी बात होगी। अतः सम्बन्ध निश्चित करना ही है, तो अभी कर लिया जाये, अर्थात् . . .के (जेलसे) छूटते ही तुरन्त विवाह कर लिया जाये।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०७०) से। सी० डब्ल्यू० २१ से भी; सौजन्य: शान्ताबहन पटेल।

४२१. पत्र: ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

३० अगस्त, १९३४

चि० ब्रजकृष्ण,

दामोदरदासका यह खत आया है। इसमें तो दूसरी ही बात है। अब मुझे ठीक लिखो। तुमसे दामोदरदासने क्या कहा था। मैंने उनको लिखा है यदि आ सकते हैं तो वर्धा आ जावें। मुंबईका तो मेरा बिल्कुल अनिश्चित है। सप्टेम्बरमें तो जाना नहिं होगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४२२) से।

१ और २. नाम छोड़ दिये गये हैं।

४२२. वह अभागा बिल

वह अभागा मन्दिर-प्रवेश बिल अपने प्रस्तावकके हाथों ही दफना दिया गया है। अगर ऐसा ही करना था तो उसे उससे अधिक अच्छी रीतिसे दफनाया जाना चाहिए था। वह ऐसा बिल नहीं था जिसे किसी व्यक्ति विशेषने अपने निजी सन्तोषके लिए पेश किया हो। वह तो सुधारकोंकी ओरसे तैयार हुआ था और पेश किया गया था। इसलिए प्रस्तावकको सुधारकोंसे सलाह ले लेनी चाहिए थी और उनके निर्देशोंके अनुसार ही कारंवाई करनी चाहिए थी। बिलके प्रस्तावक श्री रंगा अय्यर कांग्रेसियोंके प्रति जिस आवेशमें आ गये और उन्होंने जो रोष प्रकट किया, जहाँतक मैं जानता हूँ, उसके लिए भी कोई कारण नहीं था। १९३२में २५ सितम्बरको पं० मालवीयजी की अध्यक्षतामें हिन्दू प्रतिनिधियोंकी जो सभा हुई थी, उसमें खुले तौरपर अस्पृश्यता दूर करनेकी पवित्र शपथ ली गई थी।[1] जिन्हें उत्सुकता हो, वे सज्जन उक्त घोषणा 'हरिजन' के मुखपृष्ठपर प्रायः हर सप्ताह पढ़ सकते हैं। मन्दिर-प्रवेश बिल उस प्रतिज्ञा या घोषणाके फलस्वरूप ही पेश किया गया था, और उसका सम्बन्ध धर्म से था। इसलिए उस बिलमें हरएक हिन्दू — सवर्ण अथवा हरिजन — की दिलचस्पी थी। मन्दिर-प्रवेश बिल कोई ऐसा बिल तो था नहीं कि जिसमें कांग्रेसी हिन्दू, अन्य हिन्दुओंकी अपेक्षा अधिक दिलचस्पी रखते हों। इसलिए यह बड़े दुर्भाग्यकी बात हुई कि इस प्रसंगमें कांग्रेसका नाम घसीटा गया। बिलके साथ इससे अधिक सौम्य व्यवहार किया जाना चाहिए था।

मुझे तो अंग-अंग को ढीला कर देनेवाले, भाग-दौड़ीके इस दौरेमें दम मारनेकी भी फुरसत थी नहीं। इसलिए मैंने सार्वजनिक सभाओंमें और निजी तौरपर तथा 'हरिजन' के द्वारा सनातनी मित्रोंको जो वचन दिया था, उसके अनुसार श्री राजगोपालाचारीसे कह दिया कि वे एसेम्बलीके हिन्दू मेम्बरोंकी रायका अनौपचारिक तौर पर (क्योंकि केवल अनौपचारिक रूपसे ही ऐसा हो सकता था) निश्चित पता लगा लें और अगर यह मालूम हो जाये कि उनका बहुमत बिलके खिलाफ है, तो बिलको वापस ले लेना चाहिए। यह एक सीधा-सादा प्रश्न था जिसके आधारपर या तो बिलका अन्त कर दिया जा सकता था या उसे आगे बढ़ाया जा सकता था। सनातनी और सुधारक, दोनों इस वस्तुस्थितिको समझ सकते थे। इस बिलका भाग्य-निर्णय इस तरह किसी गौण मामलेको ध्यानमें रखकर नहीं किया जाना चाहिए था। श्री राजगोपालाचारीने या मैंने अगर कोई गलती की थी, तो उसका फल हम भोग लेते। मगर बिल तो व्यक्तियोंसे ऊपर था। सही हो या गलत, उसने एक

[1] १. देखिए खण्ड ५१, पृ० १४८-४९।

महान सिद्धान्त सामने रखा था, इसलिए उसके साथ तो अधिक शिष्ट व्यवहार होना चाहिए था।

अब रही सरकारके सम्बन्धकी बात, सो इस पत्रकी नीति ऐसी है कि जहाँ तक हो, सरकारकी टीका-टिप्पणीसे इसे अलग ही रखा जाये। पर इतना तो मैं कहूँगा कि सरकारके सामने जो सामग्री थी उसपर उसने वही किया जो उस परिस्थितिमें वह कर सकती थी। किन्तु जनताको यह जान लेना चाहिए कि सुधारकोंकी तरफसे न केवल लोकमत प्राप्त करनेका प्रयत्न नही हुआ, बल्कि साफ तौरपर यह तय कर दिया गया था कि बिलके पक्षमे साधारण जनताके हस्ताक्षर प्राप्त करनेकी कोई चेष्टा न की जाये; हाँ, अगर विरोधी चाहे तो भले अपने आवेदनपत्र भेज दे। 'हरिजन'मे यह बात स्पष्ट कर दी गई थी। मेरे साथी और मैं इस नतीजेपर पहुँचे कि यह बिल, जो लोकमत जाननेके लिए प्रचारित किया गया है, उसके अन्तर्गत इतने अधिक कानूनी प्रश्न हैं कि साधारण जनता उनका निर्णय नही कर सकती। इसलिए सवाल यह नही था कि सार्वजनिक हिन्दू मन्दिरोमें हरिजन ठीक उन्ही शर्त्तों पर जाये या नही जिन शर्त्तोंपर अन्य हिन्दू जाते हैं। सवाल तो असलमें यह था कि इस सम्बन्धमे कोई कानून होना चाहिए या नही—और अगर कोई कानून हो, तो इस मन्दिर-प्रवेश बिलमे क्या गुण-दोष हैं। मेरी रायमें ये दोनो ही प्रश्न इतने अधिक कानूनी और जटिल थे कि सर्वसाधारणके आगे उनका रखना ही गलत था। निश्चय ही ऐसे अवसरोंकी कल्पना करनी असम्भव नही है जब कानूनी सहायता या दस्तन्दाजी धार्मिक मामलोंतकमें अत्यावश्यक हो जाती है। ऐसे कानूनी हस्तक्षेपके अनेक उदाहरण मौजूद हैं। पर इस बिलपर साधारण जनताका यथेष्ट युक्तिसंगत मत प्राप्त करना कोई आसान काम नही था। फिर जनताको यह समझाना भी उतना ही कठिन काम था कि मन्दिर-प्रवेश बिलमे रत्तीभर भी जोर-जबर्दस्ती नही है और मन्दिरमें जानेवाले लोगोंके बहुमतकी मर्जीके विरुद्ध एक भी मन्दिर खोला नहीं जा सकता। अनुकूल परिस्थितियोंमें लोकमतकी ऐसी जागृति कोई असम्भव चीज नही है, किन्तु जब दलीय भावनाका पूरा बोलबाला हो और सत्यकी अवहेलना की जाती हो, तब तो यह बात असम्भव-सी ही है।

मन्दिर-प्रवेशकी लड़ाई तो जारी रखनी ही है। हरिजनोंको दिया हुआ वचन तो पूरा करना ही है, और उनके लिए मन्दिरोंको अवश्य खुलवाना है। कानूनी स्वीकृतिके बिना ही अगर मन्दिर खुल सके, तो सबसे अधिक प्रसन्नता सुधारकोंको ही होगी। यह बात नही है कि जहाँ मन्दिरोमें जानेवाले सवर्ण हिन्दुओंका बहुमत हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशके विरुद्ध हो, वहाँ भी सुधारक मन्दिर खुलवाना चाहते हैं। कानूनी सहायताकी जरूरत तो इसलिए आ पड़ी है कि कानून-विशारदोंकी रायमें मौजूदा कानून मन्दिरोंके इस तरह खुलनेमें बाधक हो रहा है—वहाँ भी जहाँ मन्दिरमें जानेवाले लोगोंका बहुत बड़ा बहुमत मन्दिरको खोल देनेके पक्षमें है। अगर ऐसी बात है, तो कानूनका बनना जरूरी है। कानूनकृत स्थितिको कानून ही रद्द कर सकता है, फिर उस स्थितिको चाहे न्यायाधीशाने जन्म दिया हो, चाहे व्यवस्था-

पिका सभाने या किसी रूढ़िने। पर इस कानूनके पास होनेमें कोई बाधा न हो, ऐसी स्थितिके आनेतक सुधारकोंको राह देखनी चाहिए। किन्तु प्रतीक्षासे लाभ तो जाग्रत व्यक्ति ही उठा सकते हैं। उतावलीमें बिलको वापस ले लेना खुद हमें सबक सिखाता है। निराश होनेका कोई कारण नही। अब दूने प्रयत्नकी जरूरत है। हरिजन मन्दिर-प्रवेश चाहते हैं या नही, इसे जानने या साबित करनेकी कोई आवश्यकता नही। पापका यह निवारण उन सवर्ण हिन्दुओंके आत्मसन्तोषके लिए आवश्यक है जिन्होंने यह अनुभव कर लिया है कि अस्पृश्यतारूपी घुन हिन्दू-धर्मको भीतर-ही-भीतर खोखला कर रहा है, और अगर समय रहते उसे दूर न किया, तो निश्चय ही वह हिन्दू-धर्मका अन्त करके रहेगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३१-८-१९३४

४२३. पत्र : पी० एन० राजभोजको

३१ अगस्त, १९३४

प्रिय राजभोज,

आपके २५ अगस्तके पत्रने मुझे चकित कर दिया, क्योंकि हरिजन-सेवक संघके कार्यके बारेमें आपने अब जो रुख अपनाया है वह उससे, जो आपने कुछ समय पहले मेरे साथ हुए पत्र-व्यवहार और बातचीतमें अपनाया था, विपरीत है। शायद अनुभवसे आपके विचार बदल गये। यदि ऐसा है, तो मुझे कुछ नही कहना है सिवाय इसके कि आपने आलोचना अपर्याप्त हवालेके आधारपर की है।

आप जानते हैं कि मैंने बार-बार अपनी यह राय जाहिर की है कि हरिजन-सेवक संघ पश्चात्तापी अपराधियोंकी संस्था है। इसलिए इसमें हरिजन अधिक अंशमें नही हो सकते। इसमें पश्चात्ताप करनेवाले जो सवर्ण हैं, वे जिस ढंगको सबसे ज्यादा उपयुक्त समझें, इस संस्थाको उस ढंगसे पश्चाताप करना है। यदि यह बात हरिजनो को नही जंचती तो निस्सन्देह यह एक दुर्भाग्यपूर्ण बात होगी। तब पश्चात्तापी लोगोको पुनः प्रयत्न करना चाहिए। लेकिन उन्हें कटु अनुभवसे गुजरकर पश्चात्ताप करनेकी कला सीखनी होगी।

जैसाकि मैंने खुद आपसे बहुधा कहा है और आप जिसपर कुछ सहमत भी दिखाई दिये थे, हरिजन-सेवक संघोंकी नीतिपर असर डालनेका बेहतर और ज्यादा प्रभावशाली तरीका यह होगा कि स्थानीय हरिजन स्थानीय संघोकी गतिविधियोका सहानुभूतिपूर्वक अध्ययन करनेके लिए अपना प्रतिनिधित्व करनेवाले सलाहकार मंडल बना लें और फिर स्थानीय संघोंको सलाह दें, उनकी आलोचना करें और ठोस सुझाव दें। अगर ऐसे सलाहकार मंडल हर जगह बना लिये जाते हैं, तो हरिजन

बोर्डों द्वारा किया जा रहा काम जैसा आज हो रहा है, स्वाभाविक रूपसे उससे कहीं ज्यादा प्रभावशाली होगा। लेकिन जैसा वह अभी हो रहा है उसके लिए भी बोर्डोंको शर्मिन्दा होनेकी जरूरत नहीं है। यदि आप हर सप्ताह 'हरिजन' के स्तम्भ पढ़ेंगे, तो आपको निश्चय ही यह जानकर अचम्भा होगा कि भारतमें हर जगह किस तरह से हरिजनोंमें पैसा बांटा जा रहा है। रिकार्डोंसे यह दिखाया जा सकता है कि हरिजनों द्वारा चलाई जा रही अनेकों संस्थाएं हरिजन बोर्डों द्वारा इकट्ठे किये गये कोषोंसे ठोस मदद पा रही हैं। यदि आप आँकड़ोंका अध्ययन करें तो आप यह भी देखेंगे कि सीधे हरिजनोंमें और हरिजन-संस्थाओंमें धनका वितरण बराबर बढ़ रहा है। कोषका निष्पक्ष वितरण हो, इसके लिए असाधारण सतर्कता बरती जा रही है।

आपका यह सोचना बिलकुल गलत है कि धन वितरणका हिसाब-किताब प्रकाशित नहीं किया जाता। प्रान्तीय शाखाओं द्वारा समय-समयपर रिपोर्टें प्रकाशित की जाती हैं। जनताके देख सकनेके लिए वे उपलब्ध हैं और मेरा यह कहना बिलकुल सही है या नहीं, इसकी जाँच करनेके लिए आप 'हरिजन' के स्तम्भ पलटकर देख सकते हैं या फिर स्थानीय कार्यालयोंको उन रिपोर्टोंकी नकलके लिए अर्जी देकर जाँच कर सकते हैं। 'हरिजन' में देनेके लिए मैं ठक्करबापासे पूरा हिसाब माँग रहा हूँ। आप स्वयं सारे भारतमें हरिजन-संस्थाओं और विद्यार्थियोंपर खर्च की गई धनराशियोंको देखकर चकित हो जायेंगे।

मन्दिर-प्रवेशके बारेमें आप देखेंगे कि उनके खुलवानेपर या नये मन्दिरोंके बनवानेपर एक तरहसे कुछ खर्च नहीं किया है, और नौ महीनोंके दौरेमें बराबर 'हरिजन' के स्तम्भोंमें छपी मेरे भाषणोंकी रिपोर्टोंसे आपको यह पता चलेगा कि मन्दिर-प्रवेशके सवालपर उनमें सबसे कम बोला गया है। आपने जिन चीजोंका उल्लेख किया है, उनमें से कुछपर हरिजन-सेवक संघोंने ध्यान दिया है। यदि उन्होंने सभी चीजोंपर काम नहीं किया है, तो उसका कारण करनेकी इच्छाका अभाव नहीं है। एकसाथ सभी चीजें कर पानेकी क्षमताका अभाव है।

महाराष्ट्र हरिजन बोर्डपर आपने जो चोट की है, वह अशोभनीय है। हरिजन-कल्याणके पक्के हिमायती श्री देवधर प्रान्तीय बोर्डके अध्यक्ष हैं। उन्होंने यह काम हरिजन बोर्ड बननेके बहुत पहले, शायद हममें से बहुत लोगोंके जन्मसे भी पहले, शुरू किया था। जहाँतक मैं जानता हूँ, इस सुधारमें कम उत्साहका दोष उनपर आजतक किसीने नहीं लगाया। यदि स्थानीय बोर्डके खिलाफ आपको कोई खास शिकायतें हैं, तो क्या आप ऐसा नहीं समझते कि वे शिकायतें स्थानीय बोर्डके पास लिख भेजना और यदि वहाँसे आपको राहत या सन्तोष न हो तो केन्द्रीय बोर्डके पास अपील करना आपका प्रथम कर्त्तव्य है? इस सबके बाद भी यदि आप पायें कि आपकी शिकायतपर कोई ध्यान नहीं दिया गया, तो सम्बन्धित बोर्डोंकी कलई जनताके सामने खोलना उचित होगा। वैसे भी, महाराष्ट्र बोर्डके खिलाफ आपके पास कुछ

खास नही, केवल एक अस्पष्ट आरोप है। मेरी रायमें उससे और अच्छी तरह निबटना उचित होता।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री पी० एन० राजभोज
२०७ घोरपडे पेठ, पूना-२

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७८६) से। हरिजन, ७-९-१९३४से भी।

४२४. पत्र : सीताराम शास्त्रीको

३१ अगस्त, १९३४

प्रिय सीताराम शास्त्री,

तुम्हारा पत्र मिला। यद्यपि जिस बातका तुम उल्लेख कर रहे हो, वह तुम्हारे ध्यानमे नही आई, फिर भी उसमे नया कुछ नही है। हमने वह बडी रकम आन्ध्र पर इसलिए खर्च होने दी कि खादीके दौरेके समय आन्ध्रने अपना उचित अंश दिया था। लेकिन इससे आन्ध्रको यह अधिकार नही मिल जाता कि वह उस रकमको अपनी इच्छानुसार उपयोगमें लानेके लिए हथिया लें। वह रकम अखिल भारतीय चरखा संघको दी गई थी, वैसे ही जैसे हरिजन-कोष हरिजन-सेवक संघको दिया गया था। उस कोषका उपयोग अधिकतर उसी प्रान्तमें किया जाना चाहिए जहाँ वह इकट्ठा किया गया हो। लेकिन उसका उपयोग किया जाता है केन्द्रीय संगठनके निर्देशोके अनुसार। इसलिए जहाँतक जमानतका सवाल है, वह दोनो कोषोंके लिए स्पष्टतः समान होनी चाहिए। और प्रस्तावित स्वायत्त-शासनके अधीन तुम दोनो कोषोकी समान राशि खादी तथा फर्नीचरके रूपमे रखोगे। अगर तुम ऋणपत्र जारी करो और उन्हें जमानतके रूपमे दो, तो वह बिलकुल अलग बात है। यदि इस प्रकारकी जमानत संघको रुचे तो स्वाभाविक है कि वह स्वीकार की जायेगी। मैंने ऋणपत्रोंपर इतना विचार नही किया है कि उनकी योग्यतापर अपनी राय दे सकूँ। आशा करता हूँ, मेरी बात ठीक समझ गये होगे।

हृदयसे तुम्हारा,

श्री सीताराम शास्त्री
विनय आश्रम
चंडोल (जिला गुंटूर)

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल कागजात-सौजन्य : प्यारेलाल।

४२५. पत्र : परीक्षितलाल एल० मजमूदारको

३१ अगस्त, १९३४

भाई परीक्षितलाल,

रामदास कमजोर हो गया है, यह तो आप जानते ही हैं। उसे सुरेन्द्रका साथ अच्छा लगता है। वह उपचार डॉक्टर शर्माका कराना चाहता है। वे प्राकृतिक चिकित्सा करते हैं। रामदासकी ऐसी कमजोरीकी हालतमें वा उसके साथ रहना चाहती हैं। इसलिए रामदास, वा और डॉक्टर शर्मा एकसाथ रवाना होकर वहाँ पहुँचेंगे। उन्हें साबरमतीसे किसी वाहनमें ले जाइये और जो मकान खाली हो उसमें रखिए। भाड़ेकी दर जो तय हुई हो, उस हिसाबसे भाड़ा लिया जाये। उनकी और कोई देखभाल नहीं करनी पड़ेगी। वहाँ चारपाई तो क्या होगी? रामदासके लिए बुधाभाईसे भीख माँग लीजिए। किरानेकी दुकान तो वहाँ होगी। खर्च तो यहीं से पूरा किया जायेगा। अगर रामदास कुछ समय वहाँ रहे, तो डॉक्टरकी पत्नी और उनके दो बच्चे वहाँ आयेंगे। कोई अड़चन आ पड़े तो बताइयेगा। वा रसोई करके खिलायेगी। उन्हें एक नौकरकी जरूरत पड़ेगी। नौकर खोजा जा सके तो खोज दीजियेगा। यह पत्र भाई नरहरिको दिखा दीजिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०४३) से।

४२६. भयानक अत्याचार

तलाजाके आसपास हरिजनोंपर जो अत्याचार हुआ बताया जाता है, उसके विवरण मेरे पास चारों तरफसे आते रहे हैं। उनमें अतिशयोक्ति है ऐसा मान लें तो अतिशयोक्तिको घटाकर भी जो बच रहता है, वह भी इतना भयानक है कि उससे हृदय काँप जाता है। ऐसी निर्दयताका व्यवहार मनुष्य कैसे कर सकता है, यह सोच पाना भी कठिन है।

और दुःख तो इस बातका है कि हरिजन बिलकुल निर्दोष हैं। ढोरोंमें महामारी फैली और ढोर मरे; लोगोंने मान लिया, यह हरिजनोंका काम है। और इसलिए उनपर अत्याचार किये गये, उन्हें इतना पीटा गया कि अनेक अधमरे हो गये, कुछ मर भी गये, और अन्तमें त्रस्त होकर वे लोग घरबार छोड़कर तलाजा चले गये।

अधिक दुःख यह देखकर होता है कि भावनगर जैसे आदर्श राज्यमें भी यह सब हो सकता है। मेरा यह कहनेका अभिप्राय राज्यका दोष निकालना नहीं है। मेरे

पास जो पत्र तथा तार आये है, उनसे समझमें आता है कि राज्यके अधिकारी सावधान हैं। मुझे आशा है कि इस हत्याकाण्डकी पूरी जाँच की जायेगी, निर्दोष हरिजनोंको न्याय मिलेगा, वे फिरसे अपने घरबारमें बसाये जायेंगे; जो आहत हुए हैं तथा जिन्हें जान-मालका नुकसान भोगना पड़ा है, उन्हें आततायियोंकी ओरसे उचित हर्जाना दिलाया जायेगा, तथा आगे फिर कभी ऐसा न हो, इसका प्रबन्ध किया जायेगा।

दरअसल यह सब दुखड़ा मैं यह देखकर रोया कि एक प्रगतिशील राज्यमें भी लोगोके हृदय हरिजनोके प्रति कितने कठोर हैं। हरिजनोको पशुओंसे भी हीन माना जाता है, उन्हे अधमरा कर देने अथवा मार डालनेमे भी लोगोको संकोच नही होता, न ही उन्हे कड़ी सजा या फाँसीका डर लगता है। अनेक लोग ऐसा मानते लगते है कि यदि कुत्ते या बिल्लीको अधमरा करने या मार डालनेमें राज्य या ईश्वरका डर लगे तो हरिजनको मारने या मार डालनेमें भी डर लगेगा। और उनका यह तर्क बिलकुल असंगत भी नही होता।

इस सम्बन्धमें राज्य जो सहायता प्रदान कर सकता है, वह पर्याप्त नही होगी। घटना हो जानेके बाद राज्य न्याय कर सकता है तथा अपराधी गाँवसे क्षतिपूर्ति करा सकता है। किन्तु जहाँ इस सम्बन्धमें सशक्त लोकमतका निर्माण न किया गया हो, वहाँ राज्य कोई महत्त्वपूर्ण परिणाम उत्पन्न नही कर सकता। तलाजाके हत्याकाण्डकी जड़मे घोर अज्ञान तथा अन्धविश्वास है। इस अन्धकारको दूर करनेका काम हरि-जन-सेवकोका है। लोगोंको बताना चाहिए कि ढोरोमें महामारी तो जब-तब सारी दुनियामें फैलती देखी जाती है। ऐसी महामारी फैलनेपर हिन्दुस्तानके बाहर किसी को किसीपर सन्देह नही होता। वहाँ लोग मान लेते है कि यह तो एक नैसर्गिक उपद्रव है। वे उसे समाप्त करनेके सही उपायोंका प्रबन्ध करते हैं और ढोरोंका इलाज करते है। अज्ञानके अन्धकारमें पड़े हुए गाँवोमे ऐसा प्रचार बड़े वेगके साथ निरन्तर होते रहना चाहिए।

इस सम्बन्धमें एक हरिजन भाईका बड़ा हृदयद्रावक पत्र आया है, जो प्रत्येक सवर्ण हिन्दूके पढ़ने योग्य है। उसका महत्वपूर्ण अंग नीचे दे रहा हूँ।[1]

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २-९-१९३४

१. पत्रका अनुवाद यहाँ नहीं दिया जा रहा है। पत्र-लेखकने सौराष्ट्रके हरिजनोंकी दयनीय दुदशाका वर्णन करते हुए गांधीजी से रक्षाकी प्रार्थना की थी।

४२७. नम्र प्रायश्चित्त

इस पत्र[1] के लेखकने अपना नाम-ठिकाना दिया है। मैंने यह सोचकर कि उसे देनेसे मूक सेवाका मूल्य कम न हो जाये, वह नहीं दिया है। जहाँ-तहाँ इस तरह की सेवा हो रही है, यह जानकर तलाजाके दुःखद समाचारका[2] थोड़ा-बहुत निवारण होता है। इसी प्रकारकी सेवासे अस्पृश्यता दूर हो सकती है।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २-९-१९३४

४२८. पत्र : साहेबजी महाराजको

२ सितम्बर, १९३४

प्रिय साहेबजी महाराज,

आपका पत्र पाकर मुझे वास्तवमें आश्चर्य और सुख हुआ। लेकिन मैं आपकी बधाइयाँ स्वीकार नहीं कर सकता। भारतके विभिन्न प्रान्तोंमें और दयालबाग[3] बना सकनेकी योग्यता मुझमें नहीं है। मेरा संकेत तो उन बहुत अच्छे लोगोंकी ओर था जिन्हें आपने मेरी माँगपर कराची भेजा है और जो बड़े ही व्यवस्थित ढंगसे मोहट्टा ब्रदर्स द्वारा शुरू किया गया औद्योगिक संस्थान चला रहे हैं। आपका काम तो बहुत ही बड़ा है। मैं अपनी सीमाएँ जानता हूँ। हो सकता है कि कुछ दिशाओंमें मेरा अनुभव ज्यादा हो, लेकिन जिस दिशामें चलकर आपने दयालबाग बनाया है, उसमें मैं बहुत ही कम अनुभवका दावा करता हूँ। वैसे मेरे साधन भी सीमित हैं। समय आनेपर मैं हरिजनोंके लिए उद्योग-गृह स्थापित करनेमें मदद देनेके लिए आपसे प्रशिक्षित आदमियोंके लिए कहूँगा। इसके लिए यह जरूरी है कि वे महत्वाकांक्षा-रहित व्यक्ति हों।

मुझे खुशी हुई कि आपने एक चर्मालय स्थापित किया है। क्या आपके विशेषज्ञ मुझे एक ऐसा संक्षिप्त लेख देंगे जिसमें चमड़ा पकानेके तरीकाका विवरण इस तरह हो

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है। पत्र-लेखकने लिखा था कि वह सवर्णों द्वारा हरिजनोंपर किये जानेवाले क्रूर व्यवहारके प्रायश्चित्तस्वरूप, जिस प्रकारसे भी हो सकता है, हरिजनोंकी सेवामें संलग्न है।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

३. राधास्वामी सम्प्रदायकी बस्ती जो एक शताब्दी पूर्व आगराके निकट ५०० एकड़से ज्यादा भूमिमें बनाई गई थी। यह बस्ती साहेबजी महाराजकी निजी देखरेखमें थी। महाराजजी सम्प्रदायके पाँचवें प्रधान थे। देखिए खण्ड ४१, पृ० ४७१-७२ भी।

कि कोई होशियार आदमी उसे पढ़कर चर्म-शोधनके काममें अपने-आप प्रयोग कर सके? क्या आपके यहाँ मृत ढोरोंकी सार-सँभाल, उनकी खाल निकालना, खालको हड्डियों व माससे अलग करना आदि काम भी शामिल हैं। यदि ऐसा है, तो उन हड्डियों, खून, मांस और अन्य चीजोंका क्या उपयोग किया जाता है? मेरे लिए तो ढोरोंके संरक्षणका चर्मशोधनसे बड़ा ही महत्त्वपूर्ण सम्बन्ध है। संरक्षणसे मेरा अर्थ गायकी पवित्रतामें हिन्दू-आस्थासे संगत विचारसे है। आप क्या बाहरसे भी चमड़ा खरीदते हैं या अपना काम मारे हुए पशुके चमड़ेसे नहीं, बल्कि अपने-आप मरे ढोरके चमड़ेतक ही सीमित रखते हैं?

क्या मैं आपके कृपापत्रसे यह अर्थ निकाल सकता हूँ कि दयालबागको हरिजन-बस्तियोंकी सूचीमें शामिल किया जा सकता है और हरिजन-सेवक संघ हरिजन बच्चों को वहाँ विभिन्न विभागोंमें प्रशिक्षणके लिए भेज सकता है। यदि संघ वहाँ बच्चोंको भेजे तो किन शर्तोंपर?

मीराबहन भी मेरी तरह यह जानकर खुश होगी कि आप इरीडियम धातुकी नोकवाली ऐसी सुनहरी निब बनानेमें सफल हुए हैं जो ११–१२ अंशतक स्वदेशी है। इस खुशखबरीकी सूचना मैं मीराबहनको दूँगा।

मेरे स्वास्थ्यके विषयमें आपने कृपापूर्वक जो पूछताछ की है, उसके लिए धन्यवाद। उपवासके बाद जितनी अच्छी प्रगतिकी आशा की जा सकती है, उतनी मैं कर रहा हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

साहेबजी महाराज
श्री आनन्द सरूप, दयालबाग, आगरा

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१५९) से।

४२९. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

२ सितम्बर, १९३४

प्रिय ठक्कर बापा,

मुझे हरिजी ने अभी-अभी याद दिलाई[1] है कि छेवकीमें — जहाँ वे हमें मिले थे — मैंने उनके इस सुझावका अनुमोदन किया था कि सयुक्तप्रान्तमे सग्रह की गई राशिका २५ प्रतिशत भी सयुक्तप्रान्त बोर्डको भेजा जाये। मतलब यह कि संग्रहकी समूची राशि सयुक्तप्रान्त बोर्ड द्वारा खर्च की जाये — स्वभावत शर्त यह होगी कि बोर्ड जो योजना अथवा योजनाएँ विचारार्थ प्रस्तुत करे, वे स्वीकृत हो जायें।

श्रीयुत ए० वि० ठक्कर
दिल्ली

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

४३०. पत्र : हृ० ना० कुँजरूको

२ सितम्बर, १९३४

प्रिय हरिजी,

अपनी छेवकीकी बातचीत मुझे खूब याद है, और यह भी याद है कि मैंने तुम्हारे सुझावका पूरा-पूरा अनुमोदन किया था। लेकिन वह बात बिलकुल विस्मृत हो गई थी, और अगर तुमने याद न दिलाई होती, तो मैं ठक्कर बापाको न लिखता। अब मैं उन्हें लिख[2] रहा हूँ।

हृदयसे तुम्हारा,

पं० हृदयनाथ कुँजरू
इलाहाबाद

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

१. देखिए अगला शीर्षक।
२. देखिए पिछला शीर्षक।

४३१. पत्र : बीरेन्द्रनाथ गुहाको

२ सितम्बर, १९३४

प्रिय बीरेन,

मैं यह जानकर खुश हूँ कि क्षितीश बाबू थोड़े नरम पड़े हैं। मालूम नही मेरा पत्र[१] उन्हें मिला या नही।

मुझे यह जानकर दुःख हुआ कि डॉ० इन्द्र नारायण सेन अपने हाथसे निकल गये। लेकिन हमें आशा करनी चाहिए कि वे भावी कुछ समयके लिए ही हाथसे निकले हैं।

हृदयसे तुम्हारा,

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

४३२. पत्र : उमादेवी बजाजको

२ सितम्बर, १९३४

चि० पण्डिता ओम

इस बारके पत्रमें तो तुमने अच्छा उपदेश दिया है। पर अपने उपदेशके अनुसार तुम खुद चलती भी हो? अगर मै आराम न करता, प्रयत्न न करता, तो हर रोज आधे पौंडके हिसाबसे कैसे बढता? तुमने मुझे जिस तरह काम करते देखा है, उससे आजकी तुलना करोगी तो तुम मुझे आलसी और सोते रहनेवाला आदमी मानोगी। अच्छा ही है कि तुम वहाँ हैंगिंग गार्डनमें चक्कर काटती हो और गप्पें मारती हो; बदलेमें काकाजी की थोड़ी सेवा कर लेती हो। हैंगिंग गार्डनकी कथा तुम जानती हो? मेरा अभिप्राय यह है कि हमारे-जैसे गरीबोंके घूमने लायक वह जगह नही है। वह तो छैल-छबीलोंके घूमनेकी जगह है। अगर अब तुम जाओ तो देखना और मुझे लिखना कि कितने गरीब लोगोंको तुमने वहाँ देखा। मै तो वहाँ एक-दो बार जाकर अघा गया था।

भले मेरे पास तुमने ज्ञान उँड़ेला। दत्तक बापका ऐसा ही हाल होता है। पर काकाजी को तो नही भड़काया न?

१. देखिए पृ० ३८० ।

तुम्हारे लिखनेमें भूल है। काकाजी का वजन १०४ बताती हो। उनको तो शायद मैं चार दिनमें ही लांघ जाऊँगा। तुम्हारा मतलब २०४ से तो नहीं है? क्या तुम नियमित रूपसे 'रामायण' पढ़ती हो?

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पांचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३२८-२९

४३३. पत्र : द्रौपदी शर्माको

२ सितम्बर, १९३४

चि० द्रौपदी,

तुमारे मेरा डर तो छोड़ ही देना चाहिये। डरानेकी तो मैंने कोई बात नहिं कही थी। मैंने तो केवल मात-पिताका अपने बच्चोंके प्रति क्या धर्म है, वह बताया। लेकिन कुछ भी हो अब उसे भूल जाना। मुझको निडर होकर लिखो।

अब बात यहांकी—आज शर्मा, रामदास, कनु और बा साबरमती गये। अच्छा ही हुआ। हिसाब जैसे मुझे दिया गया कायम रखा है। रामदासके चित्तको तुमने हर लिया है यह क्या चीज है। अमतुलसलाम तो चोर लिया ही। बताओ यह क्या चीज है?

तुमको साबरमती बुलानेका यदि होगा तो दस अथवा 'चौवीस'[1] दिनके बाद होगा। यदि रामदासका द० अफरीका जाना हुआ तो बुलानेकी बात छुट जाती है। अगर रामदास नहिं जायगा तो तुमारे साबरमती जाना है ही। दस दिन या २४ का मतलब यह है कि द० अफरीकासे जहाज हर चौदा दिन [बाद] आती है। एक शनीचरको आवेगी। उसमें अगर कोई पता न चला तो चौदा दिनके बाद तो मिलना ही चाहिये। तब तक भी न मिला तो रामदास नहिं जायगा। बच्चे सब अच्छे होंगे।

बापूके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, १९३२-४८, पृ० ९०-९१ के बीचकी प्रतिकृतिसे।

1. साधन-सूत्रमें यहाँ पच्चीस लिखा है।

४३४. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

सुबहके तीन बजे
३ सितम्बर, १९३४

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र वर्णनसे भरपूर है। मालूम होता है, तेरा काम अच्छा चल रहा है। इसी तरह कामका विवरण भेजती रहना।

गाँवमें काम करनेके बारेमें 'हरिजन' में जो लिखा है[1] उसे देख लेना। सब जगह एक ही तरीका काम नही देता। इस क्षेत्रमें अभी कुछ काम नही हुआ है। इसलिए काममें काफी विविधता होना सम्भव ही है। मेरे पास जो योजना है और जिसे मैंने 'हरिजन' में प्रस्तुत किया है, वह तो एक ही प्रकार की है। परन्तु उसका घूँट किसके गले उतारूँ? तेरे ही गले न? अब यह देखूंगा कि उसे तू कितनोके गले उतारती है।

तेरी परेशानीसे मुझे आश्चर्य नही होता। मेरी सलाह है कि तुझे कांग्रेसका नामतक नही लेना चाहिए। सविनय-अवज्ञाका नाम तो ले ही क्यो? अभी तो जो-जो काम तू कर रही है उनके गुण-दोष तुझे ग्रामवासियोके सामने रखने चाहिए। कांग्रेसके कामके बिना उसका नाम मिथ्या है। काम हो तो नाम अनावश्यक है। जो लोग कृष्ण-कृष्ण कहते हैं वे उसके पुजारी नही हैं। जो उसका काम करते हैं वे ही उसके पुजारी हैं। रोटी-रोटी कहनेसे पेट नही भरता। रोटी खानेसे ही भरता है।

तेरा कहना ठीक ही है। अगर गाँव छोड़नेका हुक्म मिले तो उसका खुशीसे पालन करना चाहिए। जो अरुचिकर कानूनोंका भी इच्छापूर्वक पालन करते हैं, उन्हीको कभी कानून-भंग करनेका अधिकार मिलता है। यह लोग कदाचित ही याद रखते हैं।

यह न मान लिया जाये कि मैं कांग्रेसमें पहुँचूंगा ही। मनमें बहुत-सी बातें पक रही हैं। उन सबको लिखनेका समय नही मिल पाता। जो हो देखती रहना। तेरा कार्य निश्चित हो गया, इतना काफी है।

किसन कभी-कभी लिखती रहती है। अमतुलसलामके नाम तेरा पत्र अच्छा है।

रामदास बीमार है, यह तो तू जानती ही है। शर्माको लेकर वह साबरमती गया है। बा उसकी देखभालके लिए उसके साथ गई है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३५९) से। सी० डब्ल्यू० ६७९८ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक।

1. देखिए पृ० ३२२-२६।

४३५. पत्र : एस० ए० ब्रेल्वीको

३ सितम्बर, १९३४

प्रिय ब्रेल्वी,

महादेवने शाह-सम्बन्धी तुम्हारा पत्र मुझे दिखाया। मैं चाहता हूँ कि वह चुना जाये। वह मूल्यवान प्रतिनिधि सिद्ध होगा। लेकिन किसी समाजवादीके, एक जाने-माने पूंजीवादी गुटकी ओरसे खड़े होनेके औचित्यमें मुझे सन्देह है। मुझे यह ठीक नहीं लगता कि इस प्रश्नपर चेम्बरको ऐसे समय विभाजित किया जाये जबकि वह अपनी स्थितिको सिद्ध करनेके लिए संघर्ष कर रहा है। साथ ही, मुझे यह भी ठीक नहीं लगता कि अगर मथुरादास खडा हो रहा है, तो उसका विरोध किया जाये। अगर शाह इस बार जनताके किसी निर्वाचन-क्षेत्रसे खड़ा नहीं हो सकता तो उसे ठहरना चाहिए। लेकिन अगर तुम्हारी और उसकी राय इससे भिन्न हो, तो यह स्वाभाविक है कि तुम मामला संसदीय बोर्डके सामने पेश करोगे। आखिर निर्णय तो उसीके हाथमें रहेगा। और मैं न तो तुम्हारी बैठकोंमें उपस्थित होता हूँ, न ऐसे मामलोंमें उसके निर्णयोंको प्रभावित करनेका प्रयत्न ही करता हूँ।

हृदयसे तुम्हारा,

श्रीयुत एस० ए० ब्रेल्वी
बम्बई

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

४३६. पत्र : परीक्षितलाल एल० मजमूदारको

३ सितम्बर, १९३४

भाई परीक्षितलाल,

आपका पत्र मिला। लखतर[1]के मामलेको अभी अखबारोंमें नहीं देना है। ठाकुर साहबके किसी परिचितके जरिए जो हो सके, सो कराना चाहिए। अगर कुछ न हो सका, तो अन्तमें अखबारमें तो देना ही पड़ेगा। कोई ऐसा व्यक्ति खोजूंगा। रामदासके ससुरके पिता उस गाँवके थे। उनका दरबारके साथ अच्छा सम्बन्ध था। उनका तो स्वर्गवास हो गया। अब वहाँ कौन जिम्मेदार व्यक्ति है, मालूम नहीं। रामदाससे पूछिए। वह किसीको जानता हो तो लिखे। रामदासकी पत्नीसे भी पूछूंगा। यों आज तो मौन (दिवस) है।

रामदासके कारण असुविधा हो तो मुझे बतानेमें संकोच मत कीजियेगा। सुरेन्द्रके सत्संगके लिए रामदास वहाँ गया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०४४) से।

४३७. पत्र : प्रभाशंकर पट्टणीको

३ सितम्बर, १९३४

सुज्ञ भाईश्री,

आपका पत्र आज ही मिला।

तलाजाके सम्बन्धमें जितने उपाय किये जा सके, कम समझियेगा। अतिशयोक्ति को घटाकर जो बच रहता है, वह भी भयानक है, इसमें सन्देह नहीं। ऐसा कुछ कीजिए कि आपके राज्यमें ऐसा फिर कभी न हो। आपके अधिकारी तो अपना काम कर रहे हैं,[2] ऐसा मुझे नानाभाई और छगनलाल जोशीने लिखा है।

कुमार साहब बीमार हैं, इसका मुझे दुःख है। यदि मेरे आशीर्वाद कुछ कर सकें, तो उनपर तो आपका इजारा है ही। किन्तु सच्चे आशीर्वाद तो हरिजनोंके ही हो सकते हैं। गरीबोंका अन्तःकरण राजाको दुआ दे तो वह अवश्य फलीभूत होती है।

१. जहाँपर हरिजनोंको आम जलाशयोंसे पानी लेनेकी मनाही थी, देखिए खण्ड ५९, "पत्र: छगनलाल जोशीको, २१-९-१९३४" भी।

२. देखिए पृ० ४०७-८।

दुखियाकी दुआ ही राजा-प्रजा सबको लगती है। मुझ-जैसे दुखियाकी दुआपर आप जैसे भले ही विश्वास करें, लेकिन उसकी कीमत एक कौड़ी की ही समझिए।

कुमार साहब अच्छे हो जायें, तो खबर दीजिएगा।

मोहनदास

[पुनश्चः]

मेरे बम्बई आनेकी कोई बात नहीं है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९३६) से। सी० डब्ल्यू० ३२५२ से भी; सौजन्य: महेश प्र० पट्टणी।

४३८. पत्र : प्रागजी के० देसाईको

३ सितम्बर, १९३४

चि० प्रागजी,

बन्द तो कुछ भी नहीं किया गया। तुम जो चाहते हो, वही हुआ है। एक सत्याग्रही व्यक्ति बरकरार है, और एक ही काफी है। इसमें हारके लिए स्थान ही नहीं है। निराशाके लिए भी नहीं। मेरा वक्तव्य फिरसे पढ़ो, तो उसमें यह सब मिलेगा। तुम्हारी तकलीफोंकी बात समझा, लेकिन ये तो शरीरके साथ लगी ही रहती हैं। तुम सबको,

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५०३९) से।

४३९. पत्र : प्रेमलीला ठाकरसीको

३ सितम्बर, १९३४

प्यारी बहन,

रामदास बीमार है। बा उसे लेकर साबरमती हरिजन आश्रममें गई है। उसके वहां अच्छे हो जानेकी आशा है। मेरे लिए आपने शहदका संग्रह किया है। अभी एक भाई बड़े आग्रहपूर्वक कलकत्तासे शहद भेज देते हैं, इसलिए आपको कष्ट नहीं दिया। किन्तु अब आप शहद रामदासके लिए हरिजन आश्रम, साबरमतीके पतेपर भेज दीजिए। वहांकी सभी बालिकाओंको आशीर्वाद। उनकी सेवाकी याद भुलाई नहीं जा सकती।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

मुझमें शक्ति आती जा रही है।

बापूके आशीर्वाद

श्री प्रेमलीलाबहन ठाकरसी
पर्णकुटी
यरवदा, बरास्ता पूना,

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४८३४) से; सौजन्य: प्रेमलीला ठाकरसी।

४४०. पत्र: महेन्द्र वा० देसाईको

३ सितम्बर, १९३४

चि० मनु,

तूने अक्षर सुधारनेका प्रयत्न तो अच्छा किया है, किन्तु अभी भी उनमें सुधार की गुंजाइश है। काका[1] का लेख स्वीकृत हो गया है, अतः अब वे उसका दूसरा भाग भेजें। आँख क्यों आ गई थी? अबतक तो अच्छी हो गई होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४६७) से; सौजन्य: महेन्द्र वा० देसाई।

४४१. पत्र: शान्तिकुमार मोरारजीको

३ सितम्बर, १९३४

चि० शान्तिकुमार,

ब्रह्मदेशके श्री मंग दो दिन पहले आकर मुझसे मिल गये। उनका कहना है कि हाजीके कहनेसे वे ब्रह्मदेशके आन्दोलनमें पड़े और इतना जोरदार आन्दोलन किया कि अपनी तबीयततक बिगाड़ ली। वे कहते हैं कि उनका २००० रुपया खर्च हुआ है। कुछ हो नहीं सका, इसलिए अब कोई नही सुनता। उनके साथ किसी प्रकारका कोई समझौता हुआ था, इस बातसे इनकार करते हैं। तुमसे मिलनेकी बात भी वे कह रहे थे। मैंने तो उनसे कह दिया कि ऐसे कामोंमें तो सब अपनी इच्छासे अथवा अपने देशके लोगोंके कल्याण हेतु पड़ते हैं। इसमें कोई अपने वचनका पालन न करे तो अपनी ही मूर्खता समझनी चाहिए। फिर भी मैंने उनसे कहा है

1. महेन्द्र वा० देसाईके पिता।

कि तुम्हें लिखकर देखें। यदि किसी प्रकारकी नैतिक जिम्मेदारी हाजीने ली हो तो श्री मंगको उनका खर्च दिलाना चाहिए, यह मेरा मन्तव्य है। इसमें सत्य क्या है, मुझे बताना।

तुम्हारी गाड़ी ठीक चल रही होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४७२३) से; सौजन्य: शान्तिकुमार मोरारजी।

४४२. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

३ सितम्बर, १९३४

भाई वल्लभभाई,

आज तो लिखनेमें मैंने हद कर दी है। कमर और पीठ अब जवाब दे रही हैं। परन्तु इस निषेधाज्ञाको तुरन्त नहीं माना जा सकता। नरहरिका पत्र मैं आज ही पढ़ पाया। मुझे लगता है, उनके साथ थोड़ा अन्याय हुआ। इसमें उनपर नाराज होनेका मैं कोई कारण नहीं देखता। वे बम्बईमें अपना पक्ष आपके सामने पेश नहीं कर सके, इसलिए उन्होंने बहुत नम्रतापूर्वक पत्रमें पेश किया है। उसमें काकासे रुकनेका आग्रह करनेकी और जिनका उनके साथ मेल नहीं बैठता, उनसे मेल करा देनेकी आपसे जो आशा रखी गई है, वह अवश्य निस्सन्देह अधिक है। परन्तु यह तो आपके सामने प्रार्थनाके रूपमें रखी गई है। इससे मालूम होता है कि उन्हें आपके स्वभावका पूरा ज्ञान नहीं है। उन्हें चाहिए था कि आपने मुझे जो पत्र लिखा, उसे ही आपका अन्तिम निर्णय समझते। वह मत स्पष्ट और पर्याप्त है। मैंने नरहरिको लिखा है कि काकाको कोई गुजरातमें रख ले तो उन्हें रखनेकी आपकी तरफसे छूट और आशीर्वाद है। किशोरलाल मुझे कहते थे कि आपने नरहरिको कड़ा पत्र लिखा था। अगर मेरी दलील ठीक मालूम हो तो नरहरिको एक मीठा-सा पत्र लिखिए। उनका पत्र आपको दुबारा पढ़नेकी शायद जरूरत महसूस हो, इसलिए उसे वापस भेज रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १३१

४४३. पुर्जा : जयरामदास दौलतरामको

[३][1] सितम्बर, १९३४ [या उसके बाद]

उसके पास कागज-पत्र तथा जो हो रहा है, उसका संक्षिप्त ब्यौरा भेज दो। आनन्दको कितना पैसा भेजा जाना है, यह मैं भूल गया हूँ। मैंने उसे बतलाया था कि जमनालालकी बीमारी[2] के कारण कुछ देर हो जायेगी। लेकिन यदि तुम्हें रकम याद हो तो मुझे बताओ।

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म से; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी।

४४४. पत्र : अब्बास तैयबजीको

४ सितम्वर, १९३४

चि० अब्बास,

जूठा हिरानीसे लिखकर पूछना चाहिए कि मेरे हरिजन आश्रममें न जानेसे उसकी आत्मशुद्धिका क्या सम्बन्ध है। और यदि उपवास-मात्रसे निश्चित आत्मशुद्धि हो जाती तो आत्मशुद्धि साग-पातके समान सस्ती चीज होती।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६३०९) से।

४४५. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

४ सितम्वर, १९३४

तेरा पत्र मिला। तूने कर्मयोगपर लेख लिखा है, यह तो मैंने कल अनायास ही देखा। जब समय मिलेगा तब उसे पढ़ूँगा।

यह संगीत और सिनेमाकी बात कैसी? क्या कांग्रेसके अधिवेशनको फैलिक्स सर्कस या बर्नम शो बनाना है? लेकिन मैं इस सम्बन्धमें क्या कह सकता हूँ? मुझे संगीत प्रिय है, किन्तु सब-कुछ अपनी जगह शोभा देता है। तीन-चार दिन कांग्रेसका

१. गांधीजी ने यह पुर्जा मौनवारके दिन लिखा था और महीनेका पहला सोमवार इसी तारीखको था।

२. देखिए "पत्र : आनन्द तो० हिंगोरानी" को, पृ० २७६ और ३६७।

अधिवेशन होता है, उसमें यह सब हो तो उसका गाम्भीर्य नष्ट हो जायेगा। ऐसा कुछ करना हो तो उसका ठेका किसीको दिया जा सकता है। किन्तु मेरा आशय यह है कि जहाँ देशकी संसद बैठे, वहाँ ऐसा कुछ नहीं होना चाहिए। लेकिन लोगोंने कांग्रेसको तो तमाशा बना डाला है। हिन्दुस्तानके सच्चे संगीतके लिए स्वदेशी प्रदर्शनीमें स्थान होना उचित है, किन्तु उसमें भी वाद्ययंत्र पुराने होने चाहिए। बैंडके लिए तो मैं उसमें कोई स्थान नहीं देखता। यह तू सरदारको पढ़नेको दे सकता है। बाकी 'सबसे बड़ी चुप' का आश्रय लेना हो तो लेना। मैं जो कदम उठाना चाहता हूँ, उसके बारेमें तो तूने सरदारसे सुन ही लिया होगा। इसलिए यहाँ लिखकर अपने क्षणोंका अपव्यय नहीं करता।

मेरी तबीयतका क्या पूछना है? कल उसकी परीक्षा हो गई। सारा दिन कलम चली, फिर भी कोई तकलीफ नहीं हुई।

बाकी कौन जाने, यहाँसे कोई तुझे कुछ और लिख देता होगा।

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी, पृ० १५२

४४६. बातचीत : डॉडके साथ[1]

४ सितम्बर, १९३४

डॉ० डॉड : मैं १०,००० मीलसे भारत आया हूँ[2] ताकि ताजको जो भूतकालका स्मृतिचिह्न है और महात्मा गांधीको जो भविष्यके प्रतीक हैं, देख सकूँ।

गांधीजी : लेकिन मृत ताजके बजाय जीवन्त ताज क्यों न बने? और भविष्यके बजाय वर्तमानका ही प्रतीक क्यों नहीं?

क्या अमेरिका आनेका आपका कोई इरादा है? क्या हम आपका अपहरण कर अमेरिका ले जा सकते हैं? आप तो जानते ही हैं कि आजकल अपहरणकी बहुत घटनाएँ हो रही हैं।

गांधी : नहीं, भाई! मेरे अमेरिका जानेसे कोई लाभ नहीं होगा। अगर मैं वहाँ जाऊँ, तो वहाँ अहिंसाका रहस्य, सुन्दरता और शक्ति समझानेके लिए ही जाऊँगा। मुझे नहीं लगता कि मैं आज ऐसा कर सकूँगा। मैं अपने ही देशको अभी अहिंसाकी संजीवनी बूटी पूरी तरहसे नहीं पिला सका।

आपका मुख्य ध्येय क्या है?

जिस ध्येयकी खातिर मैं काम कर रहा हूँ, वह तो स्पष्ट ही है। हिन्दुस्तानके गिने-गिने अमीरों और पढ़े-लिखे लोगोंके ही लिए नहीं, किन्तु करोड़ों मूक निरक्षरोंके लिए मैं पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करना चाहता हूँ।

१. यह हरिजनबन्धुमें "बातचीत : एक अमेरिकन शिक्षकके साथ" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था। प्रथम दो अनुच्छेद महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे उद्धृत किये गये हैं।

२. डॉड अमेरिकाके एक महिला महाविद्यालयके प्रधान थे।

मैं जानता हूँ। अकसर मैंने आपके लेखोंमें इस बातकी अभिव्यक्ति पाई है। लेकिन इसके लिए आप किन साधनोंका प्रयोग कर रहे हैं?

साधनोंका नही, एक ही साधन, शुद्ध सत्य और अहिंसाका। पर आप पूछेंगे कि सत्य और अहिंसाको कैसे साकार स्वरूप दिया जाये और कैसे प्रयोगमें लाया जाये? तो उसी क्षण मैं यह जवाब दूँगा कि मेरे साधन-क्रमका मध्यबिन्दु चरखा है। मैं जानता हूँ कि अमेरिकी लोग चरखेकी मेरी यह बात सुनकर एकदम भड़क जाते है। वे पूछते हैं कि इस मामूली-सी चीजसे इतने चिपके रहनेका क्या अर्थ है?

नहीं, सभी अमेरिकी ऐसे नहीं हैं। हमारे यहाँके एक दैनिक पत्रमें आपके चरखेके कार्यक्रमकी बड़ी कड़ी टीका की गई थी और उसी पत्रमें अन्यत्र एक ऐसा लेख था जिसमें कुदाली-फावड़ेसे काम करनेवाले ४० आदमियोंका वर्णन किया गया था। ये आदमी बिलकुल बेकार थे, इसलिए जो काम मशीनसे हो सकता है, उसके लिए उन्हें वहाँ लगा दिया था। इसी तरह आपने अपने देशकी भयंकर बेकारी दूर करनेके लिए यह चरखा ढूँढ़ निकाला है। पर आप तो इसे एक नैतिक और आध्यात्मिक प्रतीक भी मान रहे हैं। इसका क्या अर्थ है?

हाँ, चरखेको मैं सत्य और अहिंसाका प्रतीक मानता हूँ। राष्ट्रके रूपमें जब हमने चरखेको ग्रहण किया है तो इसका अर्थ सिर्फ इतना ही नही है कि इसके द्वारा हम अपने यहाँकी बेकारीके प्रश्नको हल कर लेंगे; बल्कि इसका यह भी अर्थ है कि हमारा किसी राष्ट्रके शोषणका कतई इरादा नही है, और देशके शक्तिशाली लोग गरीब कमजोरोंका जो शोषण कर रहे हैं, उस लूट-खसोटका भी हम अन्त कर देंगे। यह तो एक आध्यात्मिक शक्ति है। पहले तो इसका बहुत ही कम प्रभाव दिखाई देता है, पर जनताके जीवनमें इसका पूरा संचार होते ही यह शक्ति 'वायु-वेग' से काम करने लगती है। अर्थात् जब मैं यह कहता हूँ कि मैं करोड़ोके लिए पूर्ण स्वराज्य चाहता हूँ, तब इसका यह अर्थ होता है कि उन्हे खाने-पीने और पहननेका साधन मिले, सिर्फ इतना ही नही, बल्कि उन्हें दूसरोंके मुँहकी तरफ ताकना भी न पड़े, अर्थात् न उनका देशके लोग शोषणकर सके, न विदेशके। हिन्दुस्तानको हम तबतक यन्त्र-प्रधान देश नही बना सकते, जबतक उसकी ३५ करोड़की आबादीके बदले साढ़े तीन करोड़की आबादी नही कर दी जाती, या जबतक हमें अपने बाजारोंसे भी बड़े और पूर्णतया हमपर निर्भर और बाजार नही मिल जाते। जहाँ करोड़ों आदमी बेकार पड़े हों, वहाँ बड़े पैमानेपर चलनेवाले यन्त्रों या कल-कारखानोंके लिए जगह ही नहीं है। हमारे यहाँका एक अर्थशास्त्री कहता था कि प्रत्येक अमेरिकीके पास ३६ गुलाम होते है, अर्थात् प्रत्येक यन्त्र ३६ गुलामोंका काम करता है। अमेरिकाको भले ही इन गुलामोंकी जरूरत हो, पर हमारे हिन्दुस्तानको तो निश्चय ही नही है। मानव-समूहको हमारा हिन्दुस्तान हरगिज गुलाम बनाकर नही रखना चाहता।

इसके बाद हमें अस्पृश्यताके खिलाफ जूझना है। एक प्रकारकी आवश्यक अस्पृश्यता तो संसारमें सर्वत्र ही है। आपके यहाँ कोयलेकी खानमें काम करनेवाला आदमी खानसे सीधा आता हुआ रास्तेमें आपको मिले, तो वह आपसे हाथ नही मिलायेगा। वह कहेगा कि मैं नहा-धोकर पहले स्वच्छ बन जाऊँ, तब हाथ मिलाऊँगा। अस्वच्छ

शरीरको धो-धाकर फिर वह अस्पृश्य नहीं रह जाता। पर हमने तो अपनी जनसंख्याके एक हिस्सेको हमेशा ही अस्पृश्य माना है।[1] हम इसी अस्पृश्यताको दूर करनेकी कोशिश कर रहे हैं। वे केवल अस्पृश्य ही नहीं, बेरोजगार भी हैं, जैसेकि दूसरे असंख्य लोग हैं। आपके यहाँ जो बेकारी है, उसे तो आपने खुद पैदा किया है। पर हिन्दुस्तानकी बेकारीके लिए हम ही अकेले जवाबदेह नहीं हैं। चाहे जो जवाबदेह हो, मेरा उपाय यदि सारे देशमें अपना लिया जाये, तो हमारे यहाँ आज जितनी जनसंख्या है, केवल उसकी ही बेकारी दूर नहीं हो जायेगी, बल्कि यदि जनसंख्या और भी बढ़ जाये, तब भी मुझे बेकारोंकी कोई चिन्ता न रहेगी। हमारे यहाँ बढ़ती हुई जनसंख्या का प्रश्न ही, मेरे हिसाबसे, नहीं उठता। सवाल तो सिर्फ यह है कि जिनके पास कोई काम नहीं है, उन्हें कुछ-न-कुछ काम मिलना चाहिए, और जहाँ एक आनेकी आमदनी है वहाँ दो आने मिलने चाहिए। अगर मैं हरएक हिन्दुस्तानीकी आमदनी एक पैसेसे दो पैसे कर सका, तो मेरे लिए यह काफी है। इने-गिने थोड़े-से लोगोंकी नहीं, किन्तु करोड़ोंकी रोजकी आमदनी जिससे दूनी हो सके, ऐसा कोई दूसरा साधन आप ढूँढ़ दें तो मैं चरखा छोड़ देनेको तैयार हूँ।

मैं समझ गया। हमारे यहाँ आजकल कामके घंटे कम करानेका आन्दोलन चल रहा है। मगर यह हममें से कोई नहीं सोचता कि इस तरह कामके घंटे कम हो गये तो अवकाशके घंटोंमें लोग क्या करेंगे?

अब एक दूसरा प्रश्न पूछता हूँ। मुझे प्रायः अनेक युवक-युवतियोंसे मिलनेका अवसर मिलता है। आपके जीवनसे वे क्या मुख्य चीज सीखें, यह मुझे उन्हें बतलाना है। बड़ी-से-बड़ी, अथवा बड़ी-से-बड़ी न कहूँ तो अधिक-से-अधिक, सन्तोषप्रद सफलता या सिद्धि आपको कौन-सी मिली? जिसमें युवक-युवतियाँ अपने जीवनको लगा दें, आपकी ऐसी कौन-सी चीज मैं उनके आगे रखूँ?

यह प्रश्न आपने विकट पूछा। मैं नहीं जानता कि एक वाक्यमें मैं क्या कहूँ। मैं तो इतना ही कह सकता हूँ — आप इसे सफलता या सिद्धि कहें या न कहें — कि इस ऊपरसे दीखनेवाली भारी निष्फलता और पूरी पराजयके होते हुए भी, इस आँधी-तूफानसे आक्रान्त जीवनमें भी, मैं अपनी आन्तरिक शान्ति कायम रख सका हूँ; क्योंकि सत्य अथवा ईश्वरके विषयमें मेरी श्रद्धा कभी विचलित नहीं हुई। परमात्माकी अनेक कोटि व्याख्याएँ क्यों न हों, पर मेरे लिए तो उसकी इतनी ही व्याख्या बहुत है कि 'सत्य ही ईश्वर है।'

ठीक है, ठीक है। आपने इस अशान्त और तूफानी दुनियामें जो शान्ति प्राप्त की है, यही आपकी सबसे बड़ी सिद्धि है।

पर बहुत-से अमेरिकी कहते हैं कि 'तुम ईसा मसीहको न मानोगे, तो तुम्हें शान्ति मिलनेकी नहीं।' मैं उनसे कह देता हूँ कि मैं ईसा मसीहको यद्यपि ईश्वरके एकमात्र पुत्रके रूपमें नहीं मानता तो भी मुझे शान्ति प्राप्त करनेमें कोई कठिनाई नहीं आती।

१. यह वाक्य महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे लिया गया है।

जब आपने यह विषय छेड़ ही दिया, तो मैं आपसे पूछता हूँ कि ईसाके सम्बन्धमें आपके क्या विचार हैं?

मैं मानता हूँ कि वे मानव-जातिके एक महान शिक्षक थे और शिक्षकके रूपमें ही मैं उन्हें पूजता हूँ। मैंने उनके वचनोंको भी एक ईसाई-जैसी श्रद्धा और भक्तिसे पढ़ा है, क्योंकि मैं तो जहाँ-तहाँसे सत्यका शोध करनेवाला मनुष्य ठहरा। संसारके अन्य शिक्षकोंकी शिक्षाके विषयमें भी मेरी यही मनोवृत्ति रही है।

इस सिलसिलेमें मिशनरियोंके भारतमें किये गये कार्यके सम्बन्धमें आपके विचार जानना चाहूँगा। क्या उन्होंने आपके देशका कुछ अपकार किया है?

यह मैं नही कहता कि उन्होने जान-बूझकर कोई नुकसान किया है। निश्चय ही वे यहाँ आलोचकके रूपमें आते है। वे हमारे समाजके दूषण बढ़ा-चढ़ाकर दिखाते है। वे हमारे धर्मकी कटु आलोचना करते है। लेकिन इससे क्या? उनकी सारी आलोचनासे हमें अपने दोषोंका तीव्र भान हुआ है और अपने कर्त्तव्योंके विषयमें हम जाग्रत हो गये हैं।

मैं समझता हूँ कि आप यह मिशनरी लोगोंके बारेमें कहते है, मिशनरी संस्थाओंके बारेमें नहीं?

मैं इन दोनोंमें भेद नही करना चाहता। मिशनरी संस्थाएँ हमारे समाजके बारेमें पहलेसे ही कोई-न-कोई खयाल बाँध लेती है और उनके सदस्य उसीका प्रचार करते है। ३५ वर्षसे ऊपर हुआ कि मैं जंजीबारसे गुजर रहा था। वहाँ बाइबिल खरीदने मैं बाईबिल-सोसाइटीकी दूकानपर गया और बाइबिलके साथ मुझे मिशनके कार्यका एक विवरण भी मिला। इस विवरणमें मिशनरियोके कामका हिसाब करनेका एक विचित्र ढंग देखकर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। एक व्यक्तिको धर्ममें मिलानेसे इतने शिलिंग मिलेंगे, जैसे एक रंगरूट भर्ती करानेसे इतनी रकम मिलेगी? इतने मनुष्य धर्ममें आनेसे धर्म इतना बढ़ गया, यह हिसाब मुझे तो बड़ा भूल-भरा लगता है।

आपके अपने जीवनमें भारी-से-भारी निराशा क्या रही है?

मुझे निराशा-जैसी वस्तुका तो पता ही नहीं। हाँ, कभी-कभी मैं अपने ही प्रति अधीर अवश्य हो जाता हूँ, और मुझे अकुलाहट भी होती है कि मनमें उठते हुए संकल्प-विकल्पोंपर मैं यथेष्ट अंकुश क्यों नही रख सकता।

आपके आदर्शोंका स्रोत क्या है?[1]

स्रोत है सत्य अथवा सभी जीवोंसे परम तादात्म्य। ईश्वरको पहचानना ही सत्य है।

एक आखिरी बात और। मैं अभी जर्मनीमें हो रही बैप्टिस्ट ईसाइयोंकी एक परिषदसे आ रहा हूँ। वहाँ युद्ध और जाति-विद्वेषके विरुद्ध एक जोरदार प्रस्ताव पास हुआ। मैं भी वहाँ 'गॉस्पेल ऑफ दि डे' और 'ऑन स्ट्रिक्ट ऑनेस्टी ऐंड इनटेग्रीटी इन दि बिजनेस ऑफ अवर लाइफ' तथा 'वार एज दि मोस्ट इनसेन ऐंड अनक्रिश्चियन थिंग

१. यह प्रश्न तथा गांधीजी का इसका उत्तर महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे उद्धृत हैं।

ऑन अर्थ' पर बोला था। मैंने अपने भाषणमें कहा कि हरएक ईसाईको यह प्रतिज्ञा कर लेनी चाहिए कि जब उसकी सरकार दूसरे राष्ट्रके विरुद्ध युद्ध छेड़ दे, तब वह खुद अपने ईसाई भाइयोंकी जान लेनेके लिए हथियार उठानेसे साफ इनकार कर दे। आपका विचार भी करीब-करीब ऐसा ही है न?

हाँ, लगभग ऐसा ही है। अन्तर केवल इतना है कि मैं 'ईसाई भाई' इस पदमें से 'ईसाई' शब्द निकाल दूँगा। सिर्फ ईसाइयोंके ही विषयमें क्यों, दूसरोंके लिए क्यों नहीं?

नहीं, सभीके लिए। चूँकि मैं ईसाई-समाजके आगे बोल रहा था, इसीसे मैंने 'ईसाई भाइयों' इस पदका वहाँ प्रयोग किया।

तब ठीक है। मुझे आपको इसलिए सचेत करना पड़ा कि अनेक ईसाइयोंकी यह धारणा है कि असभ्य कही जानेवाली प्रजाका संहार करनेमें कोई दोष नहीं।

नहीं, नहीं।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १४-९-१९३४। महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी भी; सौजन्य : नारायण देसाई।

४४७. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

[५] सितम्बर, १९३४ [से पूर्व][1]

प्रिय वल्लभभाई,

जो मित्र हाल ही में वर्धा आये उनके साथ काफी विचार-विमर्श और बातचीतके बाद मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि कांग्रेससे अपने सभी तरहके पद-सम्बन्ध और शारीरिक, यहाँतक कि मूल सदस्यताके सम्बन्ध भी सर्वथा तोड़ देनेसे कांग्रेस और राष्ट्रका सबसे अधिक हित होगा। इसका यह अर्थ नहीं कि मैं उस संस्थामें दिलचस्पी लेना छोड़ रहा हूँ जिसके साथ १९२० से मेरा घनिष्ठ सम्बन्ध रहा और जिसे मैं अपने यौवनकालसे आदर देता रहा हूँ। संस्थामें जो भ्रष्टाचार प्रविष्ट हो गया है, उसके बारेमें मैंने हालमें जो-कुछ कहा है, उस सबके बावजूद मेरी रायमें वह अब भी देशकी सबसे शक्तिशाली और सबसे अधिक प्रतिनिधि राष्ट्रीय संस्था है। अपने जन्मसे लेकर अबतक बराबर अखण्ड सेवा एवं त्यागका उसका इतिहास है। उसकी प्रगति निरन्तर होती रही है। उसने जिस तरह तूफान झेले हैं, उस तरह देशमें किसी अन्य संस्थाने नहीं झेले। इसने सबसे अधिक त्याग किये हैं जिनपर

१. गांधीजी कांग्रेसके सक्रिय नेतृत्वसे हटनेके बारेमें बातचीत करते रहे थे; देखिए अगला शीर्षक। वल्लभभाईके नाम अपने २० अगस्तके पत्रमें गांधीजी ने लिखा था कि मैं एक मसविदा तैयार करूँगा और तुम्हें भेजूँगा। ऐसा लगता है कि यह पत्र १७-९-१९३४को जारी किये गये "वक्तव्य : समाचारपत्रोंको," का मसविदा है; देखिए खण्ड ५९।

किसी भी देशको गर्व हो सकता है। आज अनिन्दनीय चरित्रवाले आत्म-बलिदानी पुरुष व महिलाएँ इसमें सबसे अधिक संख्यामे है।

ऐसा नही है कि मैं बड़े हल्के मनसे इस महान संस्थाको छोड़ रहा हूँ। लेकिन मुझे लगता है कि अब मेरे इसमें बने रहनेसे लाभकी अपेक्षा हानि अधिक है। जवाहरलाल निकट भविष्यमें संस्थाके न्यायसम्मत सेनापति अवश्य ही बनेंगे। इस समय वे यहाँ नही है और मुझे उनकी सलाह न ले पानेकी बात खटक रही है। इसलिए मैं उनकी उदार भावनाका भरोसा किये हूँ। और मुझे लगता है कि यद्यपि उनके मनमें मेरे प्रति तीव्र स्नेहकी भावना है, जिसके कारण वे मुझे कांग्रेसमें रखना चाहेंगे, लेकिन उनकी विवेकबुद्धि मेरे उठाये कदमका अनुमोदन करेगी। एक महान संस्था भावनाओंसे नही बल्कि शान्त विवेकबुद्धिसे ही चलाई जा सकती है, इसलिए बेहतर यही है कि मैं एक ऐसे क्षेत्रसे हट जाऊँ जहाँ मेरी उपस्थितिके परिणामस्वरूप विवेकका पूरा प्रयोग निर्बाध रूपसे नही हो पाता। अतः यह संस्था छोड़ते हुए मुझे लगता है कि मैं किसी भी अर्थमें इसे नही त्याग रहा हूँ, यह एक साथीसे कहीं ज्यादा है और कितना भी बड़ा राजनीतिक मतभेद इसे मुझसे अलग नहीं कर सकता।

इस नाजुक स्थितिमें अलग हटकर मैं राजेन्द्रप्रसादके प्रति भी कम सच्चा नही हो जाता जो सम्भवतः आगामी कांग्रेसके अध्यक्ष होंगे और जो मेरे अधिकांश सिद्धान्तोंको मानते हैं जबकि जवाहरलाल ऐसा नही करते; राजेन्द्रबाबूका राष्ट्रके लिए त्याग — चाहे वह मात्राकी दृष्टिसे देखा जाये अथवा प्रकारकी दृष्टिसे — ऐसा है जिससे बढ़कर त्याग नहीं किया जा सकता।

फिर कांग्रेस संसदीय बोर्ड है, जो शायद बनता ही नहीं यदि मैंने पूरे मनसे उसके गठनमें प्रोत्साहन न दिया होता। बोर्ड उस जरूरतको पूरी करता है जो अनेकों कट्टर और सच्चे कांग्रेसी लोगोंने महसूस कर रहे थे। इसलिए उसका गठन जरूरी था। मैं बोर्डकी जो भी सेवाएँ कर सकता हूँ अब भी उसी तरह करूँगा जैसे कि किसी भी कांग्रेसीकी करूँगा। बोर्डको उन सभी कांग्रेसी जनोंका पूरा सहयोग मिलना चाहिए जिन्हे वर्तमान विधानसभाओंमें कांग्रेसी जनोंके प्रवेशके बारेमें कोई अकाट्य आपत्ति नही है। यदि मेरे हटनेसे बोर्ड एक भी मत खोता है तो मुझे खेद होगा।

कुछ मित्रोंको मेरे हटनेसे कतिपय परिणामोंका भय है। मेरे मनमें उनमें से एककी भी आशंका नही है, क्योंकि मैं अपना आधार जानता हूँ। एक पके फलके गिरनेसे पेड़को कोई क्षति नही होती। इसी प्रकार मेरे बाहर चले जानेसे कांग्रेसको कोई क्षति नही पहुँचेगी। वस्तुतः फल तो व्यर्थका बोझ होगा अगर वह पूरी तरह पक चुकनेके बाद भी पेड़से न गिरे। मेरी यही दशा है। मुझे लगता है कि मैं अब कांग्रेसके लिए व्यर्थका बोझ हूँ।

मेरे और कई कांग्रेसी जनोंके बीच दृष्टिकोणका महत्वपूर्ण मतभेद है। मेरी उपस्थितिसे बुद्धिजीवी वर्ग कांग्रेससे अधिकाधिक विरत होता है। मुझे लगता है कि मेरी नीतियाँ उनकी विवेकबुद्धिको सही नहीं जँचती, हालाँकि हो सकता है

यह बात कुछ अजीब लगे, पर मैं कोई भी काम ऐसा नहीं करता जो स्वयं मेरी विवेकबुद्धिको सही नहीं लगता हो। लेकिन मेरी विवेकबुद्धि उस दिशासे ठीक विपरीत दिशाकी ओर मुझे ले जाती है जिधर कि अधिकांश बुद्धिमान कांग्रेसी, अगर मेरे प्रति अद्‌भुत वफादारीके कारण उनकी गतिमें बाधा न पड़े तो सहर्ष और सोत्साह जाना चाहेंगे। मुझे बुद्धिमान कांग्रेसी जनोंसे, जबकि उन्होंने कांग्रेसके सामने पेश की गई मेरी नीतियोंका विरोध किया है और अपनी असहमति व्यक्त की है, जितनी वफादारी और भक्ति प्राप्त हुई है, उससे अधिक कोई भी नेता आशा नहीं कर सकता। मुझे लगता है कि इस वफादारी और भक्तिसे और कुछ उगाहना उन लोगोंपर अनुचित दबाव डालना होगा। अच्छा होता कि जो लोग दृढ़तापूर्वक मेरे तरीकेको गलत मानते हैं, वे मत द्वारा मुझे पराजित करते और मेरी निवृत्ति बरबस कराते। मैंने इस स्थितिपर पहुँचनेकी कोशिश की है लेकिन उसमें मैं असफल रहा। वे अन्ततक मुझसे लिपटे रहेंगे। ऐसी वफादारीको मैं एक-मात्र इसी तरीकेसे तुष्ट कर सकता हूँ कि स्वेच्छापूर्वक निवृत्त हो जाऊँ। जब कांग्रेसके बुद्धिजीवी वर्ग और मेरे बीच कुछ सैद्धान्तिक मतभेद हैं, तो मैं विरोधमें काम नहीं कर सकता। सार्वजनिक जीवनमें प्रवेश करनेके समयसे लेकर अबतक मैंने कभी इस तरीकेसे काम नहीं किया है। . . .[1]

फिर समाजवादियोंका गुट बढ़ रहा है। जवाहरलाल उन लोगोंके निर्विवाद नेता हैं। मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि वह क्या चाहता है और उसका उद्देश्य क्या है। वह हर चीजको वैज्ञानिक दृष्टिसे परखनेका दावा रखता है। वह मूर्तिमान साहस है। उसके सामने सेवाके अनेक वर्ष हैं। उसे अपने उद्देश्यमें अदम्य विश्वास है। समाजवादी गुट न्यूनाधिक जवाहरलालके ही विचारोंका प्रतिनिधित्व करता है, हालाँकि उन विचारोंको अमलमें लानेका तरीका ठीक उनके तरीके जैसा नहीं है। उस गुटका प्रभाव और महत्व अवश्य बढ़ेगा। मैंने उस गुटका स्वागत किया है। उसमें से अनेक आदरणीय और आत्म-बलिदानी सहयोगी हैं। इस सबके बावजूद, उनके अधिकृत इश्तिहारोंमें जो कार्यक्रम प्रकाशित है, उसपर मेरा उनसे सैद्धान्तिक मतभेद है। लेकिन जो नैतिक जोर मैं काममें ला सकूँगा, उसके द्वारा मैं उनके साहित्यमें प्रस्तुत विचारोंके प्रसारको नहीं दबाऊँगा। कांग्रेसमें मेरे बने रहनेका अर्थ ऐसा दबाव डालना ही होगा। मैं उन विचारोंकी खुली अभिव्यक्तिमें बाधा नहीं डालूँगा, भले ही उनमें से कुछ मेरे लिए कितने ही अरुचिकर क्यों न हों। . . .[2]

इन सैद्धान्तिक मतभेदोंके बावजूद कांग्रेसपर छाये रहना मेरे लिये एक तरहकी हिंसा है, जिससे मुझे अवश्य बचना है। हर मूल्यपर उनकी विवेकबुद्धिको स्वतन्त्र बनाना होगा। इस निर्विवाद तथ्यको समझ लेनेके बाद भी अपनी सारी ख्याति नष्ट होनेकी जोखिम उठाकर भी, मैं कांग्रेसको नहीं छोड़ता, तो मैं कांग्रेसके प्रति सच्चा नहीं होऊँगा।

१ और २. साधन-सूत्रमें इन स्थलोंपर कुछ छूट गया है।

लेकिन यदि मैं मनसा-वाचा-कर्मणा बेहतर ढंगसे कांग्रेसकी सेवा करनेके लिए ही कांग्रेसको छोड़ता हूँ तो मेरी ख्यातिको या कांग्रेसकी ख्यातिको कोई खतरा नही है। मैं क्रोध, उद्वेग, या निराशामें कांग्रेसको नही छोड़ रहा हूँ। मुझमें कोई नैराश्यभाव नहीं है। मैं अपने सामने देशका उज्जवल भविष्य देख रहा हूँ। यदि हम अपने प्रति सच्चे हैं, तो सब ठीक चलेगा। सिवाय कांग्रेसके उस कार्यक्रमके जो देश के सामने है, मेरे सामने कोई अन्य कार्यक्रम नहीं है। . . .[1]

इस तरह तथा अन्य कई तरीकोंसे मैं अपने नम्र ढंगसे कांग्रेसकी सेवा करना चाहूँगा। इस प्रकार पूर्ण असम्पृक्त रहते हुए मैं आशा करता हूँ कि मैं कांग्रेसके अधिक निकट आ जाऊँगा। तब कांग्रेसी लोग बिना परेशान हुए, बिना दबे मेरी सेवाएँ स्वीकार करेंगे।

कुछ शब्द उन लोगोंके प्रति जिन्होंने समान लक्ष्यकी प्राप्तिके रास्तेमें मुझे पूरे दिलसे मनसा-वाचा-कर्मणा अपनी भक्ति दी है। कांग्रेससे मेरा शारीरिक रूपमें हटनेका यह अर्थ नही लगाया जाना चाहिए कि यह उन्हें भी हट जानेका निमन्त्रण है। कांग्रेसको जबतक उनकी जरूरत है, वे कांग्रेसके बीच रहेंगे और उन समान आदर्शोंको अमलमें लायेंगे जिन्हें उन्होंने आत्मसात् किया है।

तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]
महात्मा, खण्ड ३, पृ० ३८६-८८

४४८. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

५ सितम्बर, १९३४

मुझे आश्चर्य है कि 'हिन्दू' जैसे एक जिम्मेदार पत्रका, मुझसे पूछे बिना, मेरे द्वारा लिये गये एक कथित गम्भीर निर्णयके बारेमें अनधिकृत समाचार छाप देना कैसे उचित ठहराया जा सकता है। निश्चय ही वर्धाका संवाददाता समाचारकी पुष्टि अथवा खण्डन करा सकता था।[2] गोपनीय बातचीतके बारेमें अधूरी और अनधिकृत रिपोर्ट प्रकाशित करना गलत हुआ।

मैं कह सकता हूँ कि इस विषयमें साथियोंके साथ बातचीत हुई है; लेकिन कोई अन्तिम निर्णय नहीं लिया गया है। अपनी प्रकृतिके अनुसार मैं उन मित्रोंसे जो वर्धा आते हैं, अपने उन विचारोंपर चर्चा करता हूँ जो मेरे मनमें सर्वाधिक

१. साधन-सूत्रमें यहाँपर कुछ छूट गया है।
२. ५-४-१९३४ के हिन्दुस्तान टाइम्सके अनुसार, संवाददाताने रिपोर्ट दी थी: "महात्मा गांधीने कांग्रेसके सक्रिय नेतृत्वसे हटनेका निश्चय किया है।. . .समझा जाता है कि यह निर्णय पण्डित मालवीय तथा अन्य लोगोंके साथ मतभेदके कारण लिया गया है।" देखिए पृ० ३४८-४९ भी।

प्रबल होते हैं। कोई निश्चित विचार बनाते समय किये गये विचारोंके आदान-प्रदान यदि प्रकाशित किये जाते हैं, खासकर इस रूपमें मानो वे निर्णय हों, तो सार्वजनिक जीवन कठिन हो जायेगा।

निर्णय चाहे जो भी लिया जाये, उसका मालवीयजी और श्री अणेसे न तो कोई सम्बन्ध है, न होगा।

यद्यपि मतभेदोंको दूर करनेके और मालवीयजी द्वारा गठित नये दलसे संघर्ष बचाकर चुनाव-आन्दोलन चलानेके सभी प्रयत्न किये जायेंगे, फिर भी मेरे मनमें अथवा कार्य-समितिके सदस्योंके मनमें इसे लेकर कोई सन्देह नहीं है कि कांग्रेस संसदीय बोर्डको कार्य-समितिके पूरे सहयोगसे चुनाव आन्दोलन चलाना चाहिए और ऐसा करते समय साम्प्रदायिक निर्णय सम्बन्धी कार्य-समितिके प्रस्तावपर, जिसमें वह पूरा विश्वास रखती है और जिसको वह सम्बद्ध सम्प्रदायोंके बीच एक सम्मत हल निकालनेका एकमात्र प्रभावी तरीका मानती है, पूरी तरह अमल किया जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ५-९-१९३४

४४९. पत्र : एस० गणेशनको

५ सितम्बर, १९३४

प्रिय गणेशन,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं समझता हूँ कि इस प्रश्नपर किसी भी उम्मीदवारसे भिड़ना बुद्धिमानी नहीं होगी। और इसका सीधा कारण यह है कि कांग्रेसके सब सदस्य उन सब निर्देशोंका पालन करनेके लिए बाध्य हैं जो कांग्रेस समय-समयपर प्रसारित करती है। और मन्दिर-प्रवेश विधेयक अपने-आपमें इतना प्राविधिक है कि विरोधी अवश्य ही उसका अनुचित लाभ उठायेंगे। और तब, जो एकमात्र मसला उलझन पैदा करेगा, वह मन्दिरोंको खोलनेका नहीं होगा, वह होगा तथाकथित कानूनी हस्तक्षेप का।

श्री एस० गणेशन
ट्रिप्लिकेन
मद्रास

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात, सौजन्य : प्यारेलाल।

४५०. पत्र : स० न० बोसको

५ सितम्बर, १९३४

प्रिय सत्यानन्द बाबू,

तुम्हारा पत्र मिला। तुमने मेरे सामने अनेक प्रश्न रखे है, जिन्हें मै आगामी बैठकमे अवश्य ध्यानमें रखूंगा। यह ठीक है कि मालवीयजी और बापूजी अणेके अलग हो जानेसे[1] स्थिति उलझ गई है। लेकिन ये तो राजनैतिक जीवनके उतार-चढ़ाव हैं।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

श्री सत्यानन्द बोस
४ नन्दी स्ट्रीट
बालीगंज, कलकत्ता

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

४५१. पत्र : डॉ० एन० आर० धर्मवीरको

५ सितम्बर, १९३४

प्रिय डॉ० धर्मवीर[2],

तुम्हारे पत्रके लिए धन्यवाद। यदि मैं अपने-आपको नीबूका रस लेनेकी छूट दे सकता, तो मै जानता हूँ कि नीबूका रस मिलाकर काफी परिमाणमें पानी पीनेमें कोई कठिनाई नही होगी। लेकिन मेरे उपवास नीबूका रस मिलानेकी छूट नही देते; क्योंकि चाहे कितनी ही कम हो, नीबूके रसमें पानी और नमकके अलावा, आहारकी एक मात्रा होती है। अतः मेरे सामने समस्या थोड़ी कठिन है—और वह यह है

१. कांग्रेस संसदीय बोर्डसे।

२. गुलाबदेवी हॉस्पिटल ट्रस्ट, लाहौरके अध्यक्ष। १७ जुलाईको गांधीजी ने उक्त अस्पतालका उद्घाटन किया था।

कि सोडा और नमकके सिवाय और कुछ भी मिलाये बिना, पानीकी अरुचिकरतासे पेश पाया जाये।

हृदयसे तुम्हारा,

डॉ० एन० आर० धर्मवीर
पाडिहाम ग्रोव
डेविस रोड, लाहौर

अंग्रेजीकी नकलसे. प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

४५२. पत्र : मंघाराम सन्तदासको

५ सितम्बर, १९३४

प्रिय सन्तदास,

तुम्हारा पत्र मिला। तो आत्माकी ओरसे तुम्हें अच्छी खबर मिली है। डॉक्टर की रिपोर्टसे मैं बिल्कुल विचलित नहीं हूँ। हाँ, यह ठीक है कि उसे सावधान रहना चाहिए। और उसने एक शब्द प्रयोग किया है, जिससे हमें डर जानेकी जरूरत नहीं है। पोलकसे मेरा पत्र-व्यवहार शुरू हो गया है। मेरी ओरसे भेजा गया कोई भी पत्र उसे उत्तेजित कर सकता है। इसलिए, फिलहाल मैं अपना पत्र-लेखन पोलकतक ही सीमित रख रहा हूँ। मैं भूल रहा हूँ किसको[1], लेकिन मैं या तो मीराबहनको या अगाथा हैरीसनको लिख चुका हूँ कि आत्माको हिन्दुस्तान लौटनेके लिए प्रेरित किया जाये। जब उचित समय आयेगा, तब मैं आत्माको सीधे पत्र लिखनेसे और लौटनेका आग्रह करनेसे चूकूँगा नहीं, क्योंकि मेरे मनमें यह बात बिल्कुल साफ है कि अगर वह यहाँ आ गया, तो बिल्कुल अच्छा हो जायेगा। और अगर वह यहाँ दुखी रहता है, तो बादमें वापस जा सकता है।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

श्री मघाराम सन्तदास
हैदराबाद (सिन्ध)

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

१. गांधीजीने आनन्द हिंगोरानीके बारेमें मीराबहनको ही लिखा था; देखिए "पत्र : मीराबहनको", ७-८-१९३४।

४५३. पत्र : जी० आर० सहगलको

५ सितम्बर, १९३४

प्रिय सहगल,

इससे पहले मैं तुम्हारे पत्रका उत्तर नहीं दे पाया। मैं तुम्हें निश्चयपूर्वक बता नहीं सकता कि मैं तुम्हारा क्या उपयोग[1] कर सकता हूँ। वैसे मैं चाहता जरूर हूँ कि हरिजनोंके हितके लिए तुम्हारी योग्यताओंका उपयोग करूँ। तो क्या तुम इतना करनेको राजी हो कि हरिजन आश्रम, सावरमती जाओ, कुछ दिन या अधिक वहाँ रहो, और वहाँके कार्यकर्त्ताओंके सम्पर्कमें आओ। तब मैनेजर मुझे रिपोर्ट भेजेगा, और तुम भी मुझे बताओगे कि तुम्हें वहाँ कैसा लगता है और यदि तुम्हें वहाँका कार्य-भार सौंप दिया जाये, तो तुम इसका क्या उपयोग करोगे। मुझे डर है कि अगर तुमने मेरा विश्वास कर लिया, तो बादमें तुम्हारे मनमें प्रतिक्रिया हो सकती है और तुम पूर्णतः निराश हो सकते हो। या फिर ऐसा हो सकता है कि तुम वह आदमी न सिद्ध हो जो मैं तुम्हें समझता हूँ, और तब मेरा या सहकर्मियोंका भ्रम भंग हो सकता है। मैं नहीं चाहता कि इन दोमें से कोई भी दुःखद स्थिति उत्पन्न हो। और फिर मैं तो तुम्हें लूँगा नहीं। अन्तिम निर्णय तो हरिजन-सेवक संघको करना पड़ेगा। हाँ, यह ठीक है कि वे बहुत अंशमें मुझसे मार्गदर्शन प्राप्त करेंगे, क्योंकि तुम उन तक मेरे माध्यमसे पहुँचोगे। तो अगर खोज-बीन या जाँच-पड़तालके उद्देश्यसे तुम सावरमती जाना चाहो, तो मुझे बताना। मैं तुम्हें आवश्यक अनुमति प्राप्त करा दूँगा। लेकिन अगर समय बचाना चाहो, तो तुम इस पत्रका उल्लेख करके सीधे वहाँके मैनेजर, श्रीयुत परीक्षितलालसे पत्र-व्यवहार कर सकते हो, और मुझे इस बातमें सन्देह नहीं है कि वे तुम्हें आने देंगे। और तब, इससे पहले कि मैं अन्तिम निर्णय पर पहुँच सकूँ, शायद यह आवश्यक होगा कि तुम वर्धामें मुझसे मिलो। अगर तुम सावरमती जाओ या वर्धा आओ तो यह स्वाभाविक ही है कि अपना मार्ग-व्यय तुम्हीं दोगे।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

१. देखिए पृ० ३५३ और ३९१ भी।

४५४. पत्र : रेहाना तैयबजीको

५ सितम्बर, १९३४

प्यारी बेटी रेहाना,

कैसा पत्र है! लेकिन जवाब अंग्रेजीमें ही देना होगा।[1]

तुम बड़ी चालाक हो—एक विचित्र रहस्यमयी दुनियामें रहती हो और अभिभावकोंके प्रेमपूर्ण पूर्वग्रहोंके ऊपर नहीं उठ सकती। तुम्हारी बात मुझे काफी सही लगती है। लेकिन तुम इतने ही से सन्तुष्ट क्यों नहीं हो कि तुम सही रास्तेपर हो? क्या यह जरूरी है कि तुम्हारे पड़ोसी भी तुम्हारे अभिभावक बनें और तुम्हारे इस दावेको कि तुम सही रास्तेपर हो, सही मानें? तुम्हारा इतना जानना कि तुम सही रास्तेपर हो, अपने-आपमें सन्तोषका कारण क्यों नहीं होना चाहिए? तुम्हें निराशाओंसे पराजित क्यों होना चाहिए? या फिर तुम्हें अपना यह दावा वापस ले लेना चाहिए कि तुम्हारी बुद्धि आध्यात्मिक दिशामें चलती है और तुम कोई रहस्यवादिनी हो। रहस्यवादी अधिक कठोर धातुके बने होते हैं—वे कष्ट या व्यथा या अपमानसे उद्वेलित नहीं होते और न खुशी या आनन्दसे या प्रशंसासे प्रफुल्लित ही होते हैं।

यदि तुम कहो कि अभिभावक तुम्हारे काममें दखल देते हैं, तो यह सही नहीं माना जायेगा। वे तुम्हें दो घंटे या अधिक समयतक प्रार्थना या ध्यानमें डूब जानेके विरोधमें कोई शारीरिक बाधा तो उत्पन्न नहीं करते। मैं समझता हूँ कि यदि तुम बिना खीझ या गुस्सेके या बातपर बिना कोई जोर दिये उन्हें दृढ़तापूर्वक और साथ ही सौम्यतासे मुस्कुराते हुए बताओ कि जो-कुछ तुम कर रही हो, वह तुम्हारे अस्तित्वकी मूलभूत आवश्यकता है, तो तुम्हारी सारी कठिनाइयाँ दूर हो जायेंगी।

मैं यह सब कह रहा हूँ, और फिर भी तुम्हें मालूम होना चाहिए कि मैं पूरे दिलसे तुम्हारे साथ हूँ। तुम्हें सोचने-बोलने और कार्य करनेकी स्वतन्त्रता होनी चाहिए। तुम्हारे साथ मित्र जैसा बरताव किया जाना चाहिए, बच्चे जैसा नहीं। मुझे लगता है कि तुमने अपने क्रोधमें दरियादिली और सहनशीलताके उस वातावरणका, जो तैयब-परिवारकी विशेषता है, अल्प-सा अनुमान ही लगाया है; यदि तुम इस दुर्लभ गुणको पूरा महत्व दो, तो तुम्हें उन लोगोंके व्यवहारमें जो बात संरक्षण जैसी दीखती है, उसे तुम नजरंदाज कर दोगी। याद रखो कि उन लोगोंने तुम्हें जो प्रशिक्षण दिया है और स्नेहका जो घेरा तुम सबके आसपास डाल रखा है, यदि वह न होता तो तुम तुम नहीं होतीं। क्या तुम रहस्यवादी तुलसीदासका दोहा जानती हो?

१. साधन-सूत्रमें यह वाक्य तथा सम्बोधन उर्दूमें लिखा हुआ है।

"जड़ चेतन गुण दोषमय विश्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुण गहहिं पय परिहरि वारि विकार।।"

मैं तुम्हें सलाह देता हूँ कि अपने इस साथी रहस्यवादीकी सलाह मानो।

पत्रके जवाबमें मुझे लिखो कि तुम अपना सब कष्ट दूर फेंक चुकी हो और तुम अल्लाहका, परवर दिगारका गुणगान कर रही हो।

तुमको और सरोजको प्यार। क्या हरिजनोंके लिए १५ रुपये भेजनेके बदले तुम्हें धन्यवाद दूं?

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६५३) से। महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे भी; सौजन्य: नारायण देसाई।

४५५. पत्र: एफ० मेरी बारको

५ सितम्बर, १९३४

चि० मेरी,

तुम्हारे दो पत्र मिले हैं। उपनिषदोंके संकलन 'गीता' से पहलेके हैं और इसलिए वे यदि और अधिक पहले नहीं, तो ई० पू० दसवी और पन्द्रहवी शताब्दीके बीच लिखे गये थे। कुछ अन्य हैं जो अपेक्षाकृत आधुनिक हैं, लेकिन संस्कृतके संकलन बहुत कम हैं।

कुमारी लिनफार्थकी क्षतिके लिए मुझे खेद है। यदि वह चाहती है कि मैं उस क्षतिको पूरा करूँ तो मैं खुशीसे वैसा करूँगा। लेकिन मुझे पूरा पाठ मिलना चाहिए।[1]

आशा है कि तुम पूरी तरह पुनः स्वस्थ हो गई होगी। मैं बिलकुल ठीक चल रहा हूँ। मेरा वजन आठ पौंड बढ़ गया है। मैं मजेमें टहलता हूँ, हालाँकि टहलता हूँ छतपर ही; और काफी काम भी कर लेता हूँ।

हरिजनोंको कातनेके लिए प्रेरित करना कठिन काम है। कुछ जगहोंपर ऐसा करनेमें हमें सफलता मिली है।

मैं अलग डाकसे मीराबहनका एक पत्र तुम्हारे पढ़नेके लिए भेज रहा हूँ। कृपया उसे पढ़कर लौटा देना। लौटानेमें जलदीकी कोई बात नहीं है।

मैं तुम्हें 'हरिजन'का नवीनतम अंक भी भेज रहा हूँ।

सस्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०२७) से। सी० डब्ल्यू० ३३५६ से भी; सौजन्य: एफ० मेरी बार।

१. देखिए "एक प्रार्थना", पृ० ४६०।

४५६. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

५ सितम्बर, १९३४

भाई ठक्कर बापा,

सूरजवहनके बारेमें आपने पूनामें ही मुझसे कहा होता तो कितना अच्छा होता? मुझे मालूम ही नहीं था कि आपने और देवधरने उसे प्रसूति-गृहको चलानेके लिए प्रोत्साहित किया है। प्रसूति-गृह चलानेकी योग्यता और इच्छा अनेक बहनोंमें होती है। जो काम अनेक बहनें कर सकती हैं और करनेकी इच्छा रखती हैं, ऐसे किसी काममें सूरजबहनको लगानेका मेरा तो मन नहीं होता। साथ ही, किशोरलालके कहनेके अनुसार हमारे उद्देश्योंमें इसका समावेश होता हो, ऐसा भी नहीं लगता। मेरा बस चले, अर्थात् ट्रस्टके नियमोंके अधीन मैं कुछ कर सकूं, तो आपने और देवधरने जो किया है, मैं उसीको मान्य करूँगा। किन्तु यदि सब-कुछ देखभाल करके निर्णय करना हो, तो मेरे विचारसे तो सूरजबहनका मकान खाली कर देना ही उचित होगा।

किशोरलालको मैंने जो पत्र लिखा है, उसे पढ़िए। स्वामीके बारेमें भी मुझे आश्चर्य हुआ। कोई स्त्री या पुरुष जेल न जाये, तो उसका अनादर करना, सत्याग्रही होनेका दावा करनेवालेको शोभा नहीं देता। इसीलिए इस विषयको मैंने इतना समय दिया है। अब आप मेरा मार्गदर्शन कीजिए।

घनश्यामदासके साथ बातें हुई हैं। पूरी तो नहीं हुई, लेकिन काम लायक हो गई हैं। आश्रमके सम्बन्धकी बात भी कर ली है। मसौदा आजकलमें भेजा जायेगा।

बाकीके पत्रोंका उत्तर फिर कभी।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११४१)से।

४५७. पत्र : एस्थर मेननको

६ सितम्बर, १९३४

रानी बिटिया,

मैंने इतने दिनोंतक तुम्हारे पत्रका जवाब इस आशासे नहीं दिया था कि मैं खुद जवाब लिख सकूंगा। लेकिन यदि मुझे बकाया पत्राचार पूरा करना है तो जरूरी है कि स्वयं लिखनेके सुखसे अपने-आपको वंचित रखूं और पत्र बोलकर लिखवाऊँ।

यदि प्रमाणोंकी जरूरत हो तो प्रतिदिन परमेश्वर मेरे प्रति अपनी उदारता और भलाईके प्रमाण दे रहा है। वह गीत याद करो "गिनो भला वरदान मिले जो (काउंट योर मेनी ब्लेसिंग्स)।" मेरा खयाल है कि यह गीत मूडे और संकेकी गीतोंकी

पुस्तकमें है। मैं तो वरदान गिन भी नहीं सकता, क्योंकि वे इतने ज्यादा हैं कि गिने नहीं जा सकते। जो तथाकथित दुःख-दर्द भी वह देता है, सो भी वरदानके रूपमें ही तो आते हैं। यदि हम उसका स्नेह समझते हों, तो हमें समझना चाहिए कि उसके प्राणिमात्रके लिए वरदानके सिवा कुछ नहीं हैं, शाप तो कदापि नहीं है।

आशा है, टांगाईपर कोई बन्धन नहीं होगा और दोनों बच्चे खूब अच्छी तरह बढ़ रहे होंगे। तुम्हें अबतक चरखा अवश्य मिल गया होगा। आशा है कि मेनन ठीकसे जम गया होगा।

मैं ठीक हो रहा हूँ। मेरा वजन ९४ पौंडसे बढ़कर १०१ हो गया है। मैं काफी काम करता रहता हूँ और नियमित रूपसे व्यायाम कर रहा हूँ।

मीरा लन्दनमें अच्छा काम कर रही है। वह अक्तूबरमें लौट आनेकी उम्मीद करती है। एन्ड्रयूज यहाँ एक सप्ताहसे ऊपर रहे और अब शिमला चले गये हैं। वे शायद ६ अक्तूबरको लन्दनके लिए जहाजमें बैठेंगे। उससे पहले एक बार फिर वर्धा आयेंगे। वे काफी स्वस्थ दिख रहे थे। दक्षिण आफ्रिकासे वे एक वेल्स प्रदेशका लुहार अपने साथ लाये हैं। उसका नाम है श्री जोन्स। वह हाल में ही आक्सफोर्ड आन्दोलनमें शरीक हुआ था और अपने-आपको एक बदला हुआ व्यक्ति मानता है। हम सबको वह बहुत ही अच्छा लगा। जब एन्ड्रयूज इंग्लैंड जायेंगे, वह वापस दक्षिण आफ्रिका चला जायेगा।

प्यारेलाल और महादेव यहाँ हैं। बा रामदासके साथ साबरमती चली गई है। वहाँ रामदास आराम करते हुए अपने रोगका इलाज करवायेगा। देवदास कुछ दिनोंके लिए यहाँ था। वह कल बम्बईके लिए रवाना हो गया है। ८ तारीखको कार्य-समिति की बैठकके लिए उसके वापस आनेकी सम्भावना है। तुम स्वीकार करोगी कि मैंने सारे पारिवारिक समाचारोंका खासा हिसाब दे दिया। तुम अबतक जिस तरह पत्र लिखती रही हो, उससे और अधिक नियमित रूपसे लिखना चाहिए। उम्मीद है कि मैं अभी और कुछ दिन वर्धासे बाहर नहीं जाऊँगा।

तुम सबको प्यार।

बापू

श्रीमती एस्थर मेनन
तंजोर

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सं० २०१३०)से; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार। **माई डियर चाइल्ड**, पृ० १०६-७ से भी।

४५८. पत्र : सुरेशचन्द्र बनर्जीको

६ सितम्बर, १९३४

प्रिय सुरेश,

तुम्हारा पत्र मिला। इससे पहले मैं उसका जवाब नहीं दे पाया। बिड़लाजीसे मेरी बातचीत हुई। वे इस बातपर राजी हैं कि तुम जमीन और इमारतोंपर २,००० से ३,००० तक रुपया खर्च करो, बशर्ते कि वे उनकी ही सम्पत्ति बनी रहें। लेकिन तुम्हें बिना किराये या अन्य किसी व्ययके उसमें रहनेका अधिकार होगा, जबतक स्वास्थ्यकी दृष्टिसे तुम्हारा उसमें रहना आवश्यक हो। ऐसी सम्पत्तिको अपने निजी काममें लानेका इरादा उनका नहीं है। वे उसे किसी परोपकारके कार्यके लिए दे देंगे, बहुत अधिक उम्मीद है कि शायद हरिजन छात्रावासके लिए। लेकिन वह एक ऐसी बात है जिससे न तुम्हें कोई वास्ता है न मुझे। तब — मैं समझता हूँ — तुम्हें २०० रुपयेकी जरूरत नहीं होगी, बल्कि केवल ६० रुपये प्रतिमास की होगी। यह भी ध्यान रहे कि अक्तूबरसे दिसम्बरतक तुम्हें २०० रुपयेकी नहीं, बल्कि १२५ से १५० रुपयेतककी जरूरत होगी। कितने की जरूरत होगी, यह तुम मुझे समयपर बताओगे। साथ ही, मुझे आशा है कि तुम्हारी स्थितिमें नियमित सुधार होगा? तुम्हें इस विचारको बढ़ावा नहीं देना चाहिए कि रोग असाध्य है और तुम एक-दो सालके भीतर जानेवाले हो।

हृदयसे तुम्हारा,

श्री सुरेशचन्द्र बनर्जी
११/१, दिलकुशा स्ट्रीट
पार्क सर्कस, कलकत्ता

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

४५९. पत्र : बी० जे० मराठेको

६ सितम्बर, १९३४

प्रिय मराठे,[1]

राजभोजके[2] अभियोगके सम्बन्धमें एक चीज मैंने तुम्हें भेजी है। मैं तुम्हारे उत्तरकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ। अब मैं तुम्हें डॉ० मुलेका पत्र भेज रहा हूँ। कृपया इसे वापस करना।

हृदयसे तुम्हारा,

श्री बी० जे० मराठे
पूना

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

४६०. पत्र : भास्कर मुखर्जीको

६ सितम्बर, १९३४

प्रिय भास्कर,

तुम्हारे पत्रके लिए और निगम द्वारा किये गये कार्यके सम्पूर्ण विवरणके लिए धन्यवाद। अब साफ-साफ मेरी समझमें आ गया कि जब तुमने कहा था कि निगमको कोई अधिकार नही है, तब तुम्हारा क्या मतलब था। विवरणसे यह नहीं मालूम होता कि निगमने कोई दिलेरीका काम किया है। जो हो, हम आशा करें कि इस वर्ष कलकत्ताके सबसे उपेक्षित तथापि सबसे योग्य नागरिकोंके प्रति व्यवहारमें विशिष्ट सुधार होगा[3]।

तुम्हे, 'बेबी' और बच्चोंको प्यार।

श्री भास्कर मुखर्जी
सेन्ट्रल म्यूनिसिपल आफिस
कारपोरेशन ऑफ कलकत्ता
कलकत्ता

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागज़ात; सौजन्य : प्यारेलाल।

१. हरिजन-सेवक संघ, महाराष्ट्र बोर्डके सचिव।
२. देखिए पृ० ४०४-६।
३. देखिए पृ० ३४० भी।

४६१. पत्र : शंकरलाल बैंकरको

६ सितम्बर, १९३४

प्रिय शंकरलाल,

मौलानाने खादी-प्रचारके लिए जिस हसनअलीकी सिफारिश की है, उसके सम्बन्धमें सतीश बाबूके तुम्हें लिखे पत्रकी नकल मेरे पास है। जो डर सतीश बाबूको है, वह मुझे भी है। लेकिन मैं समझता हूँ, हसनअलीको तीन महीनेतक जाँचनेके लिए ले लिया जाये। लेकिन अन्तिम निर्णय मुझे तुमपर और सतीश बाबू पर छोड़ना चाहिए।

श्री शंकरलाल बैंकर
अहमदाबाद

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

४६२. गाँवोंमें चमड़ा कमानेका धन्धा और उसकी सम्भावनाएँ

७ सितम्बर, १९३४

हमारे गाँवोंमें चमड़ेका धन्धा उतना ही प्राचीन है जितना स्वयं भारतवर्ष। यह कोई नहीं बतला सकता कि चमड़ा कमानेका यह धन्धा कब हीन धन्धा माना जाने लगा। यह प्राचीन कालमें तो नहीं हुआ होगा। फिर भी हम जानते हैं कि आज हमारे यहाँके इस अत्यन्त उपयोगी और आवश्यक उद्योगने करीब दस लाख आदमियों को पुश्तैनी अछूत बना दिया है। वह कोई कुदिन ही था जिस दिनसे इस अभागे देशमें लोग परिश्रमको घृणाकी दृष्टिसे देखने लगे और उसकी इस प्रकार अवज्ञा प्रारम्भ हुई। लाखों-करोड़ों मनुष्य जो इस धरतीके रत्न थे और जिनके उद्योगपर यह देश जी रहा था, वे तो नीच समझे जाने लगे, और ऊपरसे बड़े दीखनेवाले थोड़े-से अहदी आदमियोंको प्रतिष्ठित वर्ग समझा जाने लगा। इसका दुःखद परिणाम यह हुआ कि भारतको नैतिक और आर्थिक दोनों ही प्रकारकी भारी क्षति पहुँची। यह हिसाब लगाना असम्भव नहीं, तो कठिन जरूर है कि इन दोमें से कौन-सी हानि बड़ी थी। किन्तु किसानों और कारीगरोंके प्रति की गई इस अपराधपूर्ण लापरवाहीने हमें दरिद्र, मूढ़ और काहिल बनाकर ही छोड़ा। भारतके पास क्या साधन नहीं हैं? उसकी सुन्दर जलवायु, उसके गगनचुम्बी पर्वत, उसकी विशाल नदियाँ और उसका

विस्तृत समुद्र, ये सब ऐसे असीम साधन हैं कि अगर इन सबका पूरा-पूरा उपयोग गाँवोंमें किया जाये, तो इस देशमें दारिद्रय और रोग आये ही क्यों? पर जबसे हमने शारीरिक श्रमसे बुद्धिका सम्बन्ध-विच्छेद कर दिया, तबसे हमारी कौमका सब तरहसे पतन हो गया। दुनियामे आज हम सबसे अल्पजीवी, निपट साधनहीन और अत्यन्त शोषित माने जाते हैं। चमड़ेके देशी धन्धेकी आज जो हालत है, शायद वह मेरे इस कथनका सबसे अच्छा सबूत है। यह तो स्व० मधुसूदनदासने मेरी आँखें खोली, नही तो मैं क्या जानता था कि मनुष्योंके एक हिस्सेके साथ कितना बड़ा जुर्म किया गया है। मधुसूदनदासजी ने राष्ट्रके इस महान पापका प्रायश्चित्त एक ऐसा चर्मालय खोलकर किया, जिसमे चमड़ा कमानेका हुनर सिखाया जाता है। उनका उद्योग उनकी आशानुकूल तो नहीं हुआ, पर कटकमें सैकड़ों जूते बनानेवालोंको वे जीविका तो दे ही गये।

हिसाब लगाकर देखा गया है कि नौ करोड़ रुपयेका कच्चा चमड़ा हर साल हिन्दुस्तानसे बाहर जाता है और वह सबका-सब बनी-बनाई चीजोंके रूपमें फिर यहाँ वापस आ जाता है। यह देशका सिर्फ आर्थिक ही नही, बौद्धिक शोषण भी है। चमड़ा कमाने और अपने नित्यके उपयोगमे आनेवाली उसकी अनगिनत चीजे बनाने की शिक्षा जो हमें मिलनी चाहिए, आज कहाँ मिल रही है?

इस हुनरमें काफी वैज्ञानिक दिमाग़ चाहिए। हजारों रसायन-विशारद चाहें तो इस महान उद्योगमें अपनी आविष्कारिणी शक्तिका काफी उपयोग कर सकते हैं। उसे विकसित करनेके दो रास्ते हैं। एक तो यह है कि जो हरिजन गाँवोमें रहते हैं और गाँवकी खास बस्तीसे दूर, समाजके संसर्गसे अलग, टूटे-फूटे गन्दे झोंपड़ोंमे पड़े सड़ रहे हैं और बड़ी मुश्किलसे बेचारे किसी तरह पेट पाल रहे हैं, उनकी मदद करके उन्हे ऊँचा उठाया जाये। यह रास्ता अपनानेका यह भी अर्थ है कि गाँवोंका पुनर्गठन किया जाये, अर्थात् कला, शिक्षा, स्वच्छता, समृद्धि और प्रतिष्ठाकी वहाँ पुनः स्थापना की जाये। गाँवोके उत्थान-कार्यमें हमारे रसायन-विशारदोंकी बुद्धिका उपयोग हो। रसायनशास्त्रियोको चाहिए कि वे चमड़ा कमानेकी अच्छीसे-अच्छी वैज्ञानिक क्रियाएँ ढूंढ़ निकालें। गाँवके रसायनशास्त्रीको नम्रतापूर्वक इस कलापर अधिकार करना हैं। चमड़ा कमानेकी अनघड़ कला गाँवोंमें अभी जीवित है, पर वह प्रोत्साहन न मिलनेसे ही नही, बल्कि उपेक्षाके कारण भी बड़ी तेजीसे लुप्त होती जा रही है। उस कलाको इन रसायनशास्त्रियोंको सीखना और समझना चाहिए। उस अनघड़ तरीकेको यकायक नही छोड़ देना चाहिए। पहले कमसे-कम उसकी अच्छी तरह परीक्षा तो होनी ही चाहिए। उस पद्धतिसे सदियोंतक बड़ी अच्छी तरह काम चला है। अगर उसमें कोई गुण न होता, तो उससे यह काम न चलता। जहाँतक मैं जानता हूँ, हमारे देशमें शान्तिनिकेतनमें ही इस विषयकी कुछ खोजबीन हो रही है। उसके बाद साबरमती आश्रममें इस कामका आरम्भ किया गया। शान्तिनिकेतनका प्रयोग कितनी उन्नति कर पाया है, इसका पता मैं नहीं लगा सका। साबरमती आश्रम के स्थानपर अब जो हरिजन आश्रम है, उसमें इस कामको फिरसे आरम्भ करनेकी

पूरी सम्भावना है। यह शोध-कार्य तो समुद्रके समान है; उसमें हमारे इन प्रयोगोंको तो आप बिन्दुमात्र ही समझें।

गोरक्षा हिन्दू-धर्मका एक अविभाज्य अंग है। कोई भी असल हरिजन खानेके लिए गाय-भैंसको नहीं मारेगा। किन्तु अस्पृश्य बनकर उसने मुर्दार मांस खानेकी बुरी आदत सीख ली है। वह गायकी हत्या तो नहीं करेगा, पर मरी हुई गायका मांस बड़े ही स्वादसे खायेगा। शारीरिक दृष्टिसे यह मांस शायद हानिकारक न हो, पर मानसिक दृष्टिसे तो मुर्दार मांस खाने-जैसी घृणा पैदा करनेवाली दूसरी चीज है ही नहीं। तो भी चमारके घरमें जब मरी हुई गाय आती है, तब उसका सारा कुटुम्ब आनन्दोत्सवमें फूला नहीं समाता। बालक तो लाशके चारों ओर नाचने लगते हैं और जब उसकी खाल उधेड़ी जाती है, तब हड्डियाँ और मांसके लोथड़ोंको एक-दूसरे पर फेंकते हैं। अपना घरबार त्यागकर हरिजन आश्रममें जो एक चमार रहता है, उसने खुद अपने घरका खाका खींचते हुए मुझसे कहा कि मुर्दार जानवरको देखते ही चमारका सारा कुटुम्ब आनन्दविभोर हो जाता है। मैं ही जानता हूँ कि हरिजनोंके बीच काम करते हुए उनसे मुर्दार मांस खानेकी यह आत्मघातिनी कुटेव छुड़वानेमें मुझे कितनी कठिनाई पड़ी है। पर चमड़ा कमानेकी रीतिमें सुधार हो जाये तो मुर्दार मांस खानेका यह रिवाज आप ही नष्ट हो जाये।

इस कार्यमें बुद्धि और चीर-फाड़की कला जाननेकी जरूरत है। गोरक्षा की दिशामें भी इस कामके सहारे हम काफी आगे बढ़ सकते हैं। अगर हमने गायकी दूध देनेकी शक्ति बढ़ानेकी कला न सीखी, उसकी सन्ततिमें हमने सुधार न किया और उसके बछड़ेको खेती और गाड़ी खींचनेके कामके लिए अधिक उपयोगी न बनाया, गायके गोबर व मूत्रका खादमें उपयोग न किया, और गाय और उसके बछड़ोंके मरने पर उनकी खाल, हड्डियों, मांस, अन्तड़ियों आदिका अच्छेसे-अच्छा उपयोग करनेको अगर हम तैयार न हुए, तो गायको कसाईके हाथों तो मरना ही है।

अभी तो मैं सिर्फ मरे ढोरोंकी ही बात कर रहा हूँ। यहाँ हमें इतना भलीभाँति स्मरण रखना चाहिए कि ईश्वरकी कृपासे गाँवोंमें चमारको मारे गये ढोरोंकी नहीं, किन्तु केवल अपनी मौतसे मरे हुए ढोरोंकी ही खाल उधेड़नी पड़ती है। उसके पास मरे हुए ढोरको अच्छी तरह उठा ले जानेका कोई साधन नहीं है। वह उसे उठाकर घसीटता हुआ ले जाता है, और इससे खाल खराब हो जाती है। उतार लेने पर इस तरहके कटे-फटे चमड़ेके दाम भी कम मिलते हैं। चमार जो अनमोल और सुन्दर समाज-सेवा करता है, उसका अगर गाँववालों और जनताको भान हो, तो वे लाश उठा ले जानेका कोई ऐसा आसान और सादा तरीका ढूँढ़ निकालेंगे जिससे चमड़ेको जरा भी नुकसान न पहुँचने पायेगा।

इसके बाद ढोरकी खाल उतारनेकी क्रिया है। इसमें बड़ी कुशलताकी जरूरत है। मैंने सुना है कि गाँवका चमार अपनी गाँवकी बनी छुरीसे इस चीर-फाड़को जिस कुशलतासे और जितनी जल्दी करता है, उस कुशलतासे और उतनी जल्दी कोई भी, डॉक्टर भी, नहीं कर सकता। इस विषयका जिन्हें ज्ञान होना चाहिए,

उनसे मैंने इस सम्बन्धमें जब पूछताछ की, तो गाँवके चमारके चीर-फाड़के ढंगसे बेहतर तरीका वे मुझे नहीं बता सके। पर इसका यह अर्थ नहीं कि इससे बढ़कर तरीका कोई दूसरा है ही नहीं। मैं तो पाठकोंको अपने अत्यन्त सीमित अनुभवका लाभ-भर पहुँचा रहा हूँ। गाँवका चमार हड्डियोंका कुछ भी उपयोग नहीं कर सकता। हड्डियोंको तो वह फेंक देता है। खाल उवड़ते वक्त लाशके इर्द-गिर्द जो कुत्ते घूमते रहते है, वे भी कुछ हड्डियोंको तो उठा ही ले जाते हैं। कुत्तोंकी छीना-झपटीसे जो बच रहती हैं, वे विदेशको भेज दी जाती हैं और वहाँसे मूठ, बटन वगैरहके रूपमें वे यहीं फिर वापस आ जाती हैं। इन हड्डियोंका अगर अच्छा चूरा बना लिया जाये, तो उसकी बहुत बढ़िया खाद हो सकती है।

दूसरा रास्ता इस जबर्दस्त उद्योगको शहरोंमें ले आनेका है। हिन्दुस्तानमें चमड़े के कई कारखाने आज यह काम कर रहे हैं। उन सबकी परीक्षा करना इस लेखका उद्देश्य नहीं है। शहरोमें इस उद्योगके ले आनेसे हरिजनोको कोई फायदा नहीं हो सकेगा, गाँवोंको तो कुछ भी लाभ नहीं पहुँचेगा। इससे तो गाँवोकी दूनी बरबादी ही होगी। भारतमें उद्योग-धन्धोंको शहरमें ले आने और बड़े-बड़े कारखानोंके द्वारा उन्हें चलानेका अर्थ है गाँवों और गाँवोंकी जनताको धीरे-धीरे, पर अचूक रीतिसे मौतके मुँहमें डाल देना। शहरके उद्योग भारतके सात लाख गाँवोंमें बसनेवाली उसकी ९० फीसदी जनसंख्याको कभी सहारा नहीं दे सकते। गाँवोंसे चमड़ेके धन्धेको तथा ऐसे ही दूसरे उद्योगोको हटा देनेका तो यही अर्थ होगा कि वहाँ हाथ और बुद्धिके कौशलको काममें लानेका जो थोड़ा-सा अवसर अभी किसी तरह बच रहा है, वह भी उनसे छीन लिया जाये। और जब गाँवके उद्योग-धन्धे नष्ट हो जायेंगे, तब ढोरोंको लेकर खेतमें मजदूरी करना और बरसातके छः या चार महीने आलसमें बैठे-बैठे बिताना, बस इतना ही ग्रामवासियोंके नसीबमें रह जायेगा। ऐसा हुआ, तो स्व० मधुसूदनदासके शब्दोंमें यही कहना चाहिए कि गाँवके मनुष्य जानवरों-जैसे ही हो जायेंगे। न तो उन्हें कहीसे मानसिक पोषण मिलेगा, न शारीरिक, और इससे उनकी आशा और आनन्द भी नष्ट ही समझिए।

यहाँ स्वदेशी-प्रेमीके लिए शत-प्रतिशत काम पड़ा हुआ है। साथ ही एक बहुत बड़े सवालके हल करनेमें जिस वैज्ञानिक ज्ञानकी आवश्यकता है, उसे काममें लानेका क्षेत्र भी मौजूद है। इस एक कामसे तीन अर्थ सधते हैं। एक तो इससे हरिजनोकी सेवा होती है, दूसरे ग्रामवासियोंकी सेवा होती है, और तीसरे मध्यम वर्गके जो बुद्धिमान लोग रोजगार-धन्धेकी खोजमें बेकार फिरते है, उन्हें जीविकाका एक प्रतिष्ठित साधन मिल जाता है। और यह लाभ तो जुदा ही है कि उन्हें गाँवकी जनताके सीधे संसर्गमें आनेका भी सुन्दर अवसर मिलता है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ७-९-१९३४

४६३. पत्र : मीराबहनको

७ सितम्बर, १९३४

दुबारा नहीं पढ़ा

चि० मीरा,

मैं इस सप्ताह तुम्हें पत्र लिखनेका प्रयत्न नहीं करूँगा। मेरे पास तुरन्त करनेके बहुत-से काम है; इसलिए मैं तुम्हें लम्बा पत्र नहीं लिख सकता। महादेवने तो लिखा ही होगा। यह तुम्हें केवल इतना बतानेके लिए लिख रहा हूँ कि मेरा स्वास्थ्य बिलकुल ठीक सुधर रहा है और मैं लगभग अपनी पूरी रफ्तारसे काम कर रहा हूँ। मेरे लिए चिन्ता करनेकी कोई बात नहीं है।

आशा है कि अगाथा और म्यूरियलके बारेमें जो बवंडर उठा था, वह पूरी तरह समाप्त हो गया होगा और उनके व तुम्हारे सम्बन्ध पहलेसे भी मधुर होंगे।

मेरे सामने संसदीय बोर्ड तथा कार्य-समितिकी बैठकका काम है। यह पत्र मिलनेसे पूर्व तुम कोई आश्चर्यजनक घोषणा[1] सुनोगी। तुम्हें उसके बारेमें वहाँ कतई चिन्ता नहीं करनी चाहिए।

बा रामदासकी देखभालके लिए साबरमती हरिजन आश्रम गई है। रामदास वहाँ डॉ० शर्मासे इलाज करानेवाला है। रामदासका स्वास्थ्य बिलकुल खराब हो गया है; यों किसी विशेष अंगमें कोई खराबी नहीं है। लेकिन बा उसके लिए चिन्तित थीं और रामदासके साथ जानेका सुझाव रखा। मैं भी खुश हुआ। देवदास यहाँ था और हमारे साथ उसने कुछ दिन गुजारे। खान-बन्धु यहाँ हैं और उनके साथ मेरा समय बड़ा अच्छा गुजर रहा है। उनके साथ अधिक रहनेका मतलब है कि मैं उन्हें और अधिक प्यार करने लगा हूँ। वे इतने अच्छे हैं, इतने सीधे-सादे हैं और फिर भी उनमें इतनी ज्यादा लोगोंके दिलोंमें समा जानेकी शक्ति है। वे घुमा-फिराकर बात नहीं करते।

सस्नेह।

बापू

श्रीमती मीराबहन
लन्दन

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२९७)से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७६३ से भी।

१. संकेत कांग्रेसके सक्रिय नेतृत्वसे अलग हटनेके निर्णयकी घोषणाकी ओर है। देखिए खण्ड ५९, "वक्तव्य : समाचारपत्रोंको", १७-९-१९३४।

४६४. पत्र : नरगिसबहन कैप्टेनको

७ सितम्बर, १९३४

मैं तुम्हारे और खुर्शीदके पत्रोंके उत्तर नहीं देता रहा हूँ, क्योंकि तुम्हें तो पत्रोत्तरकी अपेक्षा नही थी और मैं अपना समय और शक्ति बचाना चाहता था। लेकिन तुम्हारा अन्तिम पत्र जवाब माँगता है। और उत्तर मुझे जबतक मैं खुद उत्तर लिखने लायक न हो जाऊँ तबतक नही रोक रखना चाहिए।

जबतक हम कशीदेके कामके लायक हाथका कता सूत बना नहीं सकते, तबतक कढाईके लिए तुम्हारे स्वदेशी सूतका उपयोग करनेमें मैं कोई दोष नहीं देखता। इस छूटके लिए मेरा न्यायोचित तर्क यह है: कशीदाकारी मौलिक खादीका अंग नही है, कशीदाकारी तो ऊपर से जोड़ी जाती है, वैसे ही जैसे हम सिलाईका धागा कपड़े सीनेमे लगाते हैं या विदेशी रंग भी काममें लाते हैं, ताकि खादी बिक्रीके अधिक योग्य हो जाये।

मुझे खुशी है कि खुर्शीद अब अच्छी दिख रही है। तुम्हारा क्या इरादा है, तुम कब अच्छी दिखोगी? खान-बन्धु (इस समय) यहाँ हैं और उनके साथ मेरा समय बड़े आनन्दमें बीत रहा है। हर रोज दो बार लगभग दो घंटे मेरी उनसे शान्त चर्चा होती है। दोनों मुक्त मनके हैं और सुझबूझवाले भी।

जल्दी ही तुम मेरा एक और चौंका देनेवाला ऐलान सुनोगी। चिन्ता मत करना, न कुतूहलमें पड़ना। बेहतर है कि प्रस्तावित निर्णयका ढिंढोरा न पीटो, ताकि मैं सकुशल ऐलान कर सकूँ। ऐसी कोई बात नही है जो मैं तुम्हें न बताना चाहूँ, लेकिन मैं उसके बारेमें कुछ लिखना नहीं चाहता।

तुम सबको प्यार। मैं समझता हूँ, जमनाबहनसे मुझे पत्रकी कोई आशा नहीं करनी चाहिए।

श्री नरगिस बहन कैप्टेन
७८ नेपियन रोड, बम्बई

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

४६५. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

७ सितम्बर, १९३४

प्रिय सतीशबाबू,

तुम्हारे कई पत्र मिले, स्याहीकी बोतल भी मिली। स्याहीके बारेमें अपनी राय मैं अभी नहीं दे सकता, बादमें दूँगा। यह स्याही तुमने खास तौरपर मेरे लिए बनाई है या बाजारमें आम बिक्रीके लिए?

सुझाये गये दूध-सम्बन्धी क्षितीश बाबूके प्रयोगका क्या हुआ? मालूम नहीं, तुम्हारे जरिए भेजा गया मेरा पत्र[1] उन्हें मिला या नहीं? जहाँतक मुझे मालूम है, वे चुप्पी ही साधे हुए हैं।

क्या अभी भी तुम्हें हरिजन-कार्यालयका पद-भार मिला? तुमने मुझसे बंगालके हरिजनोंकी *कल्याण-योजनाके सम्बन्धमें सुझाव माँगे हैं।* मुझे तो कोई विशेष बात सूझती नहीं। अतः मैंने जो-कुछ भी कहा था, उसके लिए तुम्हें 'हरिजन' के अंक देखने चाहिए और, आवश्यक परिवर्तनोंके साथ, जो-कुछ भी वहाँके उपयुक्त हो, सो अपनाना चाहिए। वैसे यह तो ठीक ही है कि तुम्हारी समस्या और जगहोंकी समस्यासे कुछ भिन्न है। चर्म-शोधनपर जो लेख[2] मैंने 'हरिजन' को भेजा है, उसका ध्यानपूर्वक अध्ययन करना।

साधारण रोगों तथा दुर्घटनाओंके उपचार-सम्बन्धी तुम्हारी पुस्तक, "गाँवके कार्यकर्त्ताओंका मार्गदर्शन" कोई प्रगति कर रही है या नहीं?

'ऑनवर्ड' में मैंने कुवेर बोर्ड लिमिटेड, मिल डिपार्टमेंट, ८४ क्लाइव स्ट्रीट, कलकत्ता द्वारा निर्मित स्ट्रावोर्ड्स (गत्ते) का विज्ञापन देखा है। विज्ञापन कहता है कि ये हिन्दुस्तानी पूंजी, हिन्दुस्तानी श्रम और हिन्दुस्तानी सामग्रीसे बनाये गये हैं। ये गत्ते क्या होते हैं? क्या यरवदा-चक्रके लिए किसी कामके होंगे?

सतीशचन्द्र दासगुप्त
खादी प्रतिष्ठान
कलकत्ता

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

१. देखिए पृ० ३८०।
२. देखिए पृ० ४३९-४२।

४६६. पत्र : पुरातन जे० बुचको

७ सितम्बर, १९३४

चि० पुरातन,

तुम्हारा पत्र मिला। सौ रुपये देकर तुम ठगे नहीं गये तो और क्या हुआ? अगर तुम ठगे नहीं गये हो तो तुमने किस बातकी गलती मानी? मैं तो तुम्हें ठगा गया ही मानता हूँ। क्या कोई गरीब आदमी सहज ही सौ रुपये निकालकर दे देता है। मुझे तो पूरी आशंका है कि न तो तुमको सौ रुपये मिलेंगे और न बिलका पैसा। फिरसे ऐसा न हो, तो रुपये जानेको एक मामूली-सा प्रायश्चित्त समझ सकते हैं। परीक्षितलालके भोजनपर जो खर्च हुआ, क्या वह चर्खा संघके नाममें लिखा जायेगा? वह हरिजन-कोषसे तो नहीं ही लिया जा सकता। तुमने उनके रहनेका किराया तो ठीक लगाया है न? किरायेकी दर क्या रखी है?

परीक्षितलालसे कहना कि मैंने लखतरके एक दरबारी सज्जनको पत्र लिखा है। देखें क्या नतीजा निकलता है?

क्या तुम्हारा शरीर ठीक रहता है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०४६) से। सी० डब्ल्यू० १६० से भी; सौजन्य: परीक्षितलाल एल० मजमूदार।

४६७. पत्र : भगवानजी ए० मेहताको

७ सितम्बर, १९३४

भाई भगवानजी,

आपके दोनों पत्र मिले। अपनी शक्ति तथा रुचिके अनुसार मैं देशी राज्योंका काम करता रहता हूँ। मनुष्यमात्रमें सुधरनेकी शक्ति है, इस धारणाके आधारपर अहिंसाकी इमारत है। इस विश्वासको मैं छोड़ नहीं सकता, इसलिए हमारे बीच थोड़ा मतभेद तो बना ही रहेगा।

प्रभाशंकरवाली बात समझा। वे आगामी हफ्तेमें मिलेंगे, तब इस विषयकी बात भी करूँगा।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५८२४) से। सी० डब्ल्यू० ३०४७ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

४६८. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

७ सितम्बर, १९३४

चि० नरहरि,

तुम्हारा पत्र मिला। मेरा पत्र भी तुम्हे मिल गया होगा।

रामदासको मैनें जान-बूझकर खूब सोच-विचार करके (आश्रममें) भेजा है। नतीजा तो भगवानके हाथमें है। सुरेन्द्र वहाँ अपने कर्त्तव्य-पालनमें लगा हुआ है। उसे वहाँसे कैसे अलग किया जा सकता है? रामदासका रोग शारीरिककी अपेक्षा मानसिक अधिक है। उसे वहाँ सत्संग मिलेगा, और वही बड़ी औषधि है। वह चाहे जिसके साथ नही घुलमिल पाता।

तुम अनायास जो मदद कर सको करना। मैंने तुम्हारे लिए यह कोई नया सिरदर्द पैदा नही किया है।

तुम जब बिलकुल निवृत्त हो जाओ, तब आश्रम जाना। तुम्हे जो पत्र चाहिए, सो भेजनेका प्रबन्ध कर रहा हूँ। ठक्कर बापासे क्या डरना? कुछ नुक्स तो सबमें होते हैं, उन्हें परस्पर बर्दाश्त करना चाहिए। मै समझता हूँ, तुम पेश पा लोगे। और फिर मै तो यहाँ बैठा ही हूँ न?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९०६४) से

४६९. पत्र : हीरालाल शर्माको

[७ सितम्बर, १९३४][1]

चि० शर्मा,

तुम न मिल सके इसका मैंने बुरा नहि माना, अच्छा माना। मेरा समय बचानेके लिये नहि आये ऐसा समझ लिया।[2]

डाकतरकी ऐसी जरूरत में महसुस नहि करता। मूत्र-मल परीक्षा तुमारे जानना चाहिये। लेकिन एक पत्र मै भेजता हूँ। इस्तेमाल करना है तो अवश्य करो।

बा को मै लिखुगा कि जो कहना है कहा करे। ऐसे तो मैंने उसको कह दिया है। बा मुझको कुछ भी लिखेगी मै फौरन तुमको लिखुंगा।

१. हीरालाल शर्माके बतानेके अनुसार।

२. गाधीजी से विना मिले हीरालाल शर्मा साबरमती चले गये थे और इसके लिए उन्होंने गाधीजी से क्षमा माँगी थी।

जामनगरमें क्या है, उसका पता लगाकर[1] मुझे लिखो। ज्यादा बादमें मैं जान लूंगा और लिखूंगा। तुमने अपनी रसोई पकानेका इरादा कर लिया है सो अच्छा तो लगता है लेकिन हठ न किया जाय। क्या पका लेते हो?

फीनिक्ससे जो खबर आ जायगी शीघ्र भेज दूंगा। तय हो जानेसे द्रौपदीको बुलवा सकते हो। मैंने उसे खत लिख भेजा था।[2] यदि वहां कुछ तजरबा मिल गया है और अच्छा चल रहा है और रामदासको द० आ० जानेकी आवश्यकता ही नहिं है तो द्रौपदीको शीघ्र बुला सकते हो। सोमवारको कुछ न कुछ पता चल जायगा।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्चः]

मोघेजीसे मिल लिया अच्छा हूआ। रु० १५२ आश्रममें उसी रोज दे दिये गये। सामानके बारेमें मैंने पूछा है। उत्तरकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

बापु

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, १९३२-४८, पृ० ९२-९३ के बीचकी प्रतिकृतिसे।

४७०. पत्र : मोतीलाल दीवडाको

७ सितम्बर, १९३४

भाई मोतीलाल दीवडा[3],

आपका तार मिल गया था। पत्र भी मिल गया है। समयाभावके कारण उत्तर शीघ्र नही भेज सका। क्षमा कीजिये। तारका उत्तर तारसे दे नही सकता था।

. . .[4]की दूसरी शादीकी बात चल रही है। अंतमें क्या होगा, उनको मेरे और उनके वडीलोंके (बड़ोंका) आशीर्वाद मिलेगा या नहीं सो तो भविष्यमें ही कहा जा सकता है। मौजूदा पत्नी बिमारीके कारण २० से अधिक वयकी होते हुए १२ जैसी देखनेमें आती है। प्रजोत्पत्तिके लिए योग्य नहीं है। उनकी पूर्णतया इच्छा है कि . . . दूसरी शादी करे। वह तो बरसोंतक पत्नी-धर्मका पालन नही कर सकती है, इसलिए सेवा-धर्ममें पड़ना चाहती है। उनके लिए . . . के और उनके पिताके तरफसे संतोषजनक आर्थिक प्रबंधकी बात है, यदि दूसरी शादी हुई तो। . . .को पत्नी-सुखकी आवश्यकता महसूस होती हैं। यदि मर्यादामें रहकर उसको योग्य स्त्री

१. जामनगरके राजाने अपने व्यक्तिगत इस्तेमालके लिए एक सूर्य-चिकित्सालय बनवाया था।
२. देखिए पृ० ४१३।
३. मारवाड़ी-सभाके अध्यक्ष।
४. नाम नहीं दिया जा रहा है।

मिले तो उसको शादी करने देनेमें धर्म संग्रह है, ऐसा मेरा विश्वास है और सब धार्मिक वृत्तिके लोगोके तरफसे आशीर्वाद मिलने चाहिए, लेकिन यह सब बात . . . की शुद्धि और उनके संयम-पालनपर निर्भर है। कोई कार्य जल्दि से होनेवाला नही है। सब सम्बन्धी जनकी तीव्र इच्छा केवल धर्म पालनकी ही है। . . . यदि पूर्णतया संयम-पालन कर सके और अपने विकारोंको रोक सके तो सबसे उत्तम बात होगी। ऐसा तो लाखोंमें से कोई ही युवक कर सकता है। हम सब प्रार्थना करें कि . . . को भगवान ऐसी ही शक्ति देवे।

मेरा विनय है कि . . . और उनके हितके कारण इस पत्रको प्रकट न किया जाय न इस बातकी कोई जाहिर चर्चा की जाय। मुझको जो कुछ कहना है, तो अवश्य कहा जाय।[1]

आपका,
मोहनदास गांधी

पत्रकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०२२०) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला।

४७१. पत्र : जमनालाल बजाजको[2]

८ सितम्बर, १९३४

चि० जमनालाल,

तुम्हारे पत्र आते रहते हैं और खबर मिलती रहती है। ईश्वरका पूरा अनुग्रह मालूम होता है कि जख्म डॉक्टरोकी धारणासे भी जल्दी भर रहा है। उतावली बिलकुल न करना। जख्म पूरा भर जानेपर ही वहाँसे निकलना है। सिंहगढका विचार मुझे पसन्द है। मेहताकी मदद भी मिलती रहेगी। सिंहगढ़की हवा उत्तम है, पानी खूब हल्का है, इससे पूरा लाभ मिलेगा। उसे दूर भी नही कह सकते।

बातचीत ज्यादा न करना। करनी भी पड़े तो मुक्त स्वरसे नही, बल्कि बहुत धीमी आवाजमें। बोलनेका असर कानपर पड़े बिना नही रहता।

दाल-भात छोड़नेसे जरूर लाभ होगा। दूधकी मात्रा अधिक रखना। दही खट्टा बिलकुल नही होना चाहिए। जैसे-जैसे इजाजत मिलती जाये, कसरत बढ़ाते चले जायें। चिन्ता तो बिलकुल मत करना। ऐसा करनेसे कानके फायदेके साथ दिमाग भी तरोताजा हो जायेगा।

१. गांधीजी के कहनेपर प्रभावतीने इस पत्रकी नकल घनश्यादास बिड़लाको भेज दी थी।
२. यह ३-३० बजे भोरसे पहले लिखा गया था; देखिए अगला शीर्षक।

मालवीयजी आज आ गये। राधाकान्त भी साथ है। आसफअली और खलीक आ गये है। और लोग कल आयेंगे।

खानभाई खुश रहते हैं। रोज सुबह घूमते है और शामको ४ से ५ बजेका समय देता हूँ। धीरे-धीरे बातें हो रही हैं।

मेरे सम्बन्धमें पगलीकी बात तो सुनी होगी। उसमें मैं तुमको नहीं डालना चाहता। बादमें जब बिलकुल अच्छे हो जाओ तब जो टीका करनी हो, सो करना। मुझे तो लगता है कि तुमको यह सब अच्छा लगेगा।

ओम मेरे पास ही रहती है। आवश्यक मदद करती है। सच पूछो तो एक या दो लड़कियोका काम चार या पाँच लड़कियोंमें बँट गया है। इससे सबके हिस्से में थोड़ा-थोड़ा आता है। और प्रभावती कहाँ ऐसी है जो दूसरोंको बहुत करने दे। और मदालसा भी तो अपना हिस्सा बँटाने आती ही है।

राधाकिसन तुम्हारे सुझावोके कारण इतना चिन्तित रहता है कि मुझपर ठीक-ठीक पहरा रखते हुए भी घबराता रहता है। मैं जल्दी उठ ही जाता हूँ। अधिक सोनेकी जरूरत नही रहती और मेरा काम निपट जाता है तो मन हल्का रहता है। वजन अब धीरे-धीरे ही बढ़ेगा। खुराकमें वृद्धि करनेकी गुंजाइश नही। जो है उससे धीरे-धीरे बढ़ेगा। वही ठीक है। ताकत बढ़ती रहती है। दिनमें सो लेता हूँ। रातको ८ बजकर ४५ मिनटपर और ज्यादासे-ज्यादा ९ बजे चारपाईपर चला ही जाता हूँ। इस तरह मैने अपनी तबीयतके बारेमें उलाहना मिलने जैसी बात नहीं रखी। तुम्हारे आनेतक और उसके बाद भी यहीं रहूँगा। बिना कारण यहाँसे खिसकना नही है।

एन्ड्रयूज फिर रविवारको आ रहे है। कुमारप्पा २० दिनकी छुट्टी लेकर आये हैं। उनको तुरन्त वापस भेज दूंगा। यहाँ मंगलवारको आयेंगे।

कन्याओका काम ठीक चल रहा दीखता है। विनोबा ही सब-कुछ देखा करते है। इसलिए मुझे किसी चीजमे हाथ डालनेकी जरूरत नहीं रहती।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्चः]

असमके बारेमे लिखना रह गया। वहाँ कांग्रेसके लोगोको जानते हो तो उन्हें असमके रुपये भेज देना। यदि न जानते हो तो ज्वालाप्रसादको भेज देना। मारवाड़ी रिलीफ सोसायटी वहाँ काम करती है। उसमें यह रकम मिलाई जाये। तुमको जैसा उचित लगे वैसा करना।

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० १३४-३५

४७२. पत्र : नारणदास गांधीको

८ सितम्बर, १९३४

चि० नारणदास,

तुम्हारा छः तारीखका पत्र मिला।

मैंने नरहरिसे कह दिया है कि वह गोशालाके बारेमें जानकारी करके अपनी राय मुझे बताये। मै यह बात ध्यानमें रखूँगा।

मेरा आराम तो ऐसा ही रह गया है। ढाई बजे उठना शुरू कर दिया है। लगता है कि खुद खाट ही मुझे उठाकर फेंक देती है। इस समय साढ़े तीन बजे हैं। जमनालालजी का पत्र पूरा करनेके बाद यह शुरू किया है।

समझमें नही आता कि चिमनलाल और शारदाके बारेमें क्या करें। यह जरूर लगता है कि चिमनलालके साथ रहनेमें उसके हितकी हानि हो सकती है। यदि पितृभक्ति उसके मनमें गहरी हो तो वह चाहे तो स्वयं बीमार रहते हुए चिमनलालकी सेवामें अपने शरीरको और कमजोर बना ले। यूरोपमें ऐसे बहुत-से उदाहरण देखनेमें आते हैं। हमारे समाजमें मुझे ऐसा कोई उदाहरण याद नही पड़ता। यह तो ठीक ही है कि हम जो शिक्षण दे रहे हैं, उसमें ऐसी लड़कियाँ तैयार करने ही बात है। भावना तभी टिकती है जब वह अपने मनसे उपजी हो। यदि शारदामें यह भावना न हो तो केवल अपने स्वास्थ्यकी दृष्टिसे ही उसे चिमनलालके पाससे कही और चले जाना चाहिए। वह यहाँ आकर रह सकती है। यहाँ उसकी आयुकी बहुत-सी लड़कियाँ हैं। दस-एक तो गुजराती लड़कियाँ ही हैं। वाली भी उनमें से एक है। यहाँ की आबहवा भी अच्छी है, और फिलहाल मैं भी यहाँ हूँ। यह मेरा अड्डा तो बना ही रहेगा। पढ़ाई-लिखाई भी ठीक हो रही है। बीमार व्यक्ति बीमारकी सेवा न करे, ऐसी इच्छा करना उचित है। शकरीबहन चिमनलालकी सेवामें लग जाये। चिमनलालको चाहिए कि वह आहारमें दूध और फलके सिवा और कुछ न ले। केवल दूधके आहार का भी अच्छा परिणाम देखा गया है, किन्तु यह प्रयोग है बहुत सख्त। दूध और फल का प्रयोग करना उत्तम है। इससे जो कमजोरी आये उसे बरदाश्त करके आग्रह-पूर्वक इसी खुराकपर रहा जाये, ऐसी मेरी सलाह है। शर्मा इन दिनो साबरमती है। वह रामदासके पीछे घरबार छोड़ बैठा है, इसीलिए वह वहाँ रामदासको लेकर गया हुआ है। रामदासकी सार-सँभालके लिए बा भी गई है। चाहो तो शर्मासे पूछ देखना। उसकी भलमनसाहतका अनुभव कर रहा हूँ। चिकित्सककी हैसियतसे उसकी योग्यताके विषयमें कुछ नही कह सकता। फिर भी उससे पूछ लेनेमें कोई बुराई नही है। दूध और फल, खुराक भी है और औषधि भी। यदि वह इससे भी अच्छा न हो तो दूसरे किसी उपायसे अच्छे होनेकी सम्भावना कम ही समझो। जल और

सूर्य-उपचार तो चल ही रहा है। मेरी सलाहका महत्त्व, मैंने जो-कुछ शारदाके विषयमें लिखा है, उसीमें है। इस विषयमें तुम दोनों सोच लेना।

प्रभावती, अमतुलसलाम, वसुमती और ओम मेरी सेवामें रहती है। अमला भी कुछ करती है। मुझे बड़ी आशंका है कि वह कहीं पागल ही न हो जाये। जरा भी ठिकानेपर नही आती। सूखती चली जा रही है। अब शादीके बारेमें उतावली कर रही है। देखता हूँ, उसके मनमें विकार आते रहते हैं। विकारोंको दबानेके प्रयत्नमें वे इस तरह उत्कट होकर फूट निकले हैं। उसके मनमे बारह बच्चोकी माँ होनेका शौक है। इस समय उसकी उम्र सैंतीस वर्षकी है। देखें, क्या करती है। इस समय तुम्हारे पास या कही और भेजनेकी हिम्मत नही पड़ती। वह किसी कॉलेजमें नौकरी खोज रही है। अगर अपनी कोशिशसे वह इसमें सफल हो जाये, तो इसमें कोई हर्ज नहीं। मै अवश्य ही किसीसे उसकी सिफारिश नही करूँगा। मै चिन्ता नही करता, किन्तु जवाबदारी बहुत बढ़ गई है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

केशुके विवाहका क्या हुआ?

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८४१२ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

४७३. पत्र: सतीशचन्द्र दासगुप्तको

८ सितम्बर, १९३४

प्रिय सतीशबाबू,

तुमने बड़ा मनहूस चित्र खींचा है। लेकिन मै उससे विचलित नही हूँ। शीघ्र ही वातावरण अवश्य स्वच्छ हो जायेगा। कांग्रेससे अवकाश ग्रहण करनेके बारेमें मेरा प्रत्यावेदन[1] तुमने देखा होगा। चर्चा हो रही है। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मै अत्यन्त व्यग्र हूँ कि कांग्रेस छोड़ दूँ और बाहर रहकर उसकी सेवा करूँ। मैंने अपने वक्तव्य का मसौदा तैयार कर लिया है। मेरा विचार है कि कार्य-समितिसे उसकी चर्चा करूँ। नतीजा तुम्हें समय आनेपर मालूम हो जायेगा। जो बात भ्रष्टाचारसे भी गहरी है, वह यह है कि अनेक कांग्रेसियोके और मेरे बीच मौलिक मतभेद है। लेकिन मुझे भविष्यकी बात नही कहनी चाहिए। रचनात्मक कार्य करनेवाले अपने काममें लगे रहें।

रचनात्मक कार्य करनेवालोंको पत्रकारिता-सम्बन्धी किसी उद्योगमें हाथ नहीं लगाना चाहिए, और इस समय तो कतई नही। मैं तुम्हारे इस मतसे भी

१. देखिए पृ० ४२८-२९।

सहमत नही हूँ कि इस समय सन्तुलित विचारोंके एक पत्रकी आवश्यकता है। मौजूदा प्रेस-कानूनोंके रहते किसी स्पष्टवादी पत्रका टिकना असम्भव है, जबतक कि वह राजनीतिसे बिलकुल अछूता न रहे। लेकिन यह तो तुम्हारा उद्देश्य नही है। तुम कोई ऐसी चीज चाहते हो, जो (फैलते) जहरोंका प्रतिकार कर सके।

कितनी स्याही बनाई है तुमने? अगर यह विज्ञापनके लिए नही है, तो चीजें मुफ्त बाँटनेसे फायदा?

आशा है, हेमप्रभा मजेमें होगी।

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य. प्यारेलाल।

४७४. पत्र : नारायणस्वामीको

८ सितम्बर, १९३४

प्रिय नारायणस्वामी,

तुम्हारा पत्र पाकर बहुत प्रसन्न हुआ। भस्मका लिफाफा भी मिला। उचित समयपर यह गंगामें विसर्जित कर दी जायेगी।

आशा करता हूँ, तुम्हारी पत्नी भली स्त्री है और तुम सुखी हो। यदि वे शिक्षित हो और लिख सकती हों, तो उनसे पत्र लिखनेको कहना।

मुझे मालूम हुआ है कि तुम आर्थिक संकटमें हो। मै तुम्हे एक ही सलाह दे सकता हूँ: "उधार मत लेना"। ईमानदारी और परिश्रमसे जो मिल जाये, वही लेना और अपने पिताकी कीर्ति बनाये रखना। स्वस्थ शरीर, सच्चरित्रता और अथक परिश्रम —— नौजवानोंको जो सच्ची पूँजी चाहिए, वह यही है।

मै पार्थसारथी और सीसेमके पत्रोंकी राह देखूंगा। तुम्हे मुझे पत्र लिखते रहना चाहिए।

हृदयसे तुम्हारा,

श्री नारायणस्वामी
१७४, प्रेसिडेन्ट स्ट्रीट
जोहानिसबर्ग

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य: प्यारेलाल।

४७५. पत्र : रामचन्द्रनको

८ सितम्बर, १९३४

प्रिय रामचन्द्रन,

तुम्हारे प्रश्नोंका उत्तर मैं पहले नही दे पाया। गांधी सेवा-संघ का इस समय पूरा कायापलट हो रहा है, और वह कुछ आमूल परिवर्तन अंगीकार करनेवाला है। अबतक जो भत्ते दिये जाते थे, उदार पैमानेपर दिये जाते थे। अब उनमें आमूल परिवर्तन किये जा रहे है। और फिर, यदि ये परिवर्तन कार्यान्वित होने वाले हैं, तो जमनालालजी इस सबमें कोई भाग नही ले रहे हैं। वे अभी भी बम्बईमें इलाज करा रहे है, और शायद अभी कुछ महीनोंतक नियमित कामकाज नही कर सकेंगे। सामान्य कामकाज पुनः सँभालनेसे पहले, उन्हें किसी शान्त स्थानमें आराम करना है। इस बीच तुम मुझे बता सकते हो कि तुम्हारी निजी आवश्यकताएँ क्या हैं।

श्री रामचन्द्रन
बंगलोर

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

४७६. पत्र : बी० जे० मराठेको

८ सितम्बर, १९३४

प्रिय मराठे,

मुझे खुशी है कि तुमने मेरे प्रश्नों[1] का सुविस्तृत उत्तर भेजा है, और वह भी तत्काल ही। अब मैं इसका उपयोग करूँगा।[2]

श्री बी० जे० मराठे
सेक्रेटरी, एच० एस० एस०
महाराष्ट्र बोर्ड
पूना

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

१. देखिए पृ० ४३८।

२. यह २८-९-१९३४ के हरिजनमें प्रकाशित हुआ था; देखिए खण्ड ५९, "महाराष्ट्र, हरिजन-सेवक संघ", २८-९-१९३४। और देखिए "पत्र : डॉ० बी० वी० मुखेको", १२-९-१९३४।

४७७. पत्र : गुलजारीलाल नन्दाको

८ सितम्बर, १९३४

प्रिय गुलजारीलाल,

मुझे खुशी है कि वहाँ जो हो रहा है, उसकी खबर तुम मुझे देते आ रहे हो। यह बहुत अच्छी बात है कि सारी कार्यवाही पूर्णतः व्यवस्थित ढंगसे चलाई जा रही है। इसे कहते हैं असली ठोस काम।

मेरी तबीयत बिलकुल ठीक है।

श्री गुलजारीलाल नन्दा
४५ चौपाटी
बम्बई

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

४७८. पत्र : लीलावती आसरको

८ सितम्बर, १९३४

चि० लीलावती,

तेरा पत्र मिला। सिद्धिमतीका पत्र आये तो मुझे उसके समाचार देना।

तुम सब एकसाथ भोजन करती हो या अलग-अलग? एकसाथ कितनी बहनें भोजन करती हैं। वहाँ कोई फल मिलता है? दूध अच्छा मिलता है?

तू पुस्तकें कौन-कौनसी पढ़ती है? अपने अक्षर अभी और सुधारे तो अच्छा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३२९) से। सी० डब्ल्यू० ६६०४ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर।

४७९. पत्र : अन्नपूर्णाको

८ सितम्बर, १९३४

चि० अन्नपूर्णा,

तुमारा खत मिला। गतिमें पिताजी सबसे आगे है। उनको मेरे तरफसे धन्यवाद। तुमारी टिप्पणीमें सूतकी मजबूती और समानताके अंक नहिं दिये हैं। यह भी निकालनी चाहिये। कैसे निकलती है सो तो मालुम होगा। ग्रामोके लिये बहुत सादा तरीका है। बांसके चर्खेसे जो सूत निकले उसका ख्याल भी मुझे देना। उसके चक्रका घेराव कितना है?

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २७९२) से।

४८०. पत्र : निरुपमाको

८ सितम्बर, १९३४

चि० निरूपमा,

तुमारा खत मिला। अच्छा किया। अब तो बिलकुल अच्छा हो गया है। मुझे लिखा करो।

बापूके आशीर्वाद

कुमारी निरुपमा,[1]
सुदामा कुटीर, उदीपी[2] कर्नाटक[3]

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ९२२५) से।

१, २ और ३. रोमन लिपिमें हैं।

४८१. पत्र : श्रीपाद दामोदर सातवलेकरको

९ सितम्बर, १९३४

भाई सातवलेकर,

आपका पत्र मिला। विवाहके पूर्व स्त्री-पुरुषका विषय-भोग नीतिका और शरीर का नाश करता है।

जो अखबार इस नीतिका प्रचार करते हैं वे ज्ञानपूर्वक अथवा अज्ञानपूर्वक समाजके शत्रु बनते हैं। युवक और युवतीओको मेरा तो यह विनय है, इस स्वच्छदसे अपनेको और देशको बड़ी हानि करेंगे।

क्या दा० केलकर यहां है नही तो कहा है क्या करते है।

आपका,
मो० क० गांधी

पण्डित श्री सातवलेकर
स्वाध्याय मण्डल
औंध[1]
सतारा डिस्ट्रिक्ट[2]

पत्रकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४७७५)से; सौजन्य : श्री० दा० सातवलेकर।

४८२. पत्र : नारणदास गांधीको

११ सितम्बर, १९३४

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला।

मैं जानता था कि मैंने तुम्हें जो महत्वपूर्ण[3] पत्र लिखा था, वह तुम्हे कठिनाई में डालेगा। मैं इसे अनुचित लोभ करना मानता हूँ। मैंने जो चाहा था, वह स्पष्ट ही हिंसा थी। किन्तु उतने बडे पत्रका सारांश भी कैसे करता। इसलिए वह मेरा आलस्य था और इसलिए उस कृत्यकी हिंसा भी बढ गई। यो तो रोज ऐसी कितनी हिंसा होती होगी। निवृत्ति-मार्ग ऐसे ही दोषोसे बचनेके लिए खोजा गया था, किन्तु उसपर तो करोड़ोमें एक चल पाता है। शरीरसे निश्चेष्ट रहकर मनसे अबाध प्रवृत्तियोमें लगे . रहना अहिंसक थोड़े ही कहा जा सकता है। इसलिए हम तो

१ और २. रोमन लिपिमें हैं।
३. देखिए पृ० ४५१-५२।

त्रुटियाँ करते-करते प्रवृत्तियोंमें से ही निवृत्ति प्राप्त कर सकते हैं। दोषोंको कम करनेका भी हमारे पास यही उपाय है। मैं इस बातका प्रयत्न करूँगा कि मैंने तुम्हें जो पत्र लिखा, वह इस क्षेत्रमें मेरा अन्तिम दोष सिद्ध हो।

कनुका समय व्यर्थ न बीते, इसलिए उसे आज तार किया है कि चाहे तो आ जाये। लगता है, तुम्हारे पास पत्र पहुँचनेमें चार दिन लग जाते हैं।

धूलियाके सुपरिटेंडेंटका जो पत्र आया है, सो तुम्हारे पास भेज रहा हूँ। वह बुकपोस्टसे भेजा जायेगा। अभी विनोबाको देखनेके लिए दिया है।

मथुरादासका उत्तर अभीतक नहीं मिला। लीलावती छुट्टी होनेपर खुशीसे यहाँ आ सकती है। उसे मैं अच्छी तरह जानता हूँ। उसके अनिश्चयका पारावार नहीं है।

बहनें शिक्षिकाओंका काम ठीक कर रही हैं। यदि इनमें से आधी भी टिकी रह गईं तो बाल-मन्दिर ठीक चल सकेगा।

. . . [1] साबरमतीसे ही विषयसेवन करता रहा है। झूठ बोलनेमें उसने कोई कसर नहीं की। अब बालकृष्णके पास पश्चात्तापपूर्ण पत्र आया है। पूछा है कि पश्चात्तापके रूपमें क्या करे।

अमलाकी कहानी एक दूसरे ही प्रकारकी चीज है। उसे शान्तिनिकेतनमें फ्रेंच पढ़ानेका काम मिल गया है, इसलिए खुश है। कुछ दिनोंमें चली जायेगी। वहाँ से पक्का पत्र आनेका रास्ता देख रही है।

साबरमतीकी गोशालाके विषयमें नरहरिके वहाँ जानेके बाद ही तय किया जा सकेगा।

सुमित्राकी आँख खराब हो रही है, इसलिए आज बा उसके साथ इलाजके लिए बम्बई जा रही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८४१३ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

१. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिया गया है।

४८३. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

११ सितम्बर, १९३४

"तूने ४० बरस पूरे किये, तो यह भी तो कहा जा सकता है कि १००में से ४० कम हो गये। इस तरह हिसाब लगायें, तो यह भी कहा जा सकता है कि ज्यो-ज्यो दिन बीतते है, हम छोटे होते जाते है। जैसे ४० पूरे किये, वैसे ही बाकी के ६० भी पूरे करना, और आजतक की कमाईमें इजाफा करना।

... [1]तूने तो कर्मयोगपर पुस्तक मुझे नही भेजी, किन्तु वह अनायास ही मेरी नजरमें आ गई और अब मै उसे हर रोज वाचनालयमें पढता हूँ। कुछ दिनमें पूरी हो जायेगी। रचना मुझे अच्छी लगी है। थोड़े पृष्ठोमें बहुत-कुछ भरनेका प्रयत्न किया गया है। अनजान आदमीको समझनेमे मुश्किल होगी। जिल्द अच्छी नही बँधी है। बिक्री कैसी हो रही है? 'विचार सृष्टि' बिक भी रही है या नही?

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृ० १५३

४८४. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

११ सितम्बर, १९३४

चि० ब्रजकृष्ण,

तुमारा खत मिला है। दामोदरदासके खत जो पीछले दो आये है तुमको भेजे गये है। उसमें तो दूसरी ही बात पाता हूँ। वह कहते है तुमारी कुछ गैरसमझ हुई है। मेरी तो नहि है? तुमने मुझे क्या कहा था सो तुम ही दामोदरदासको लिखो और मुझे भी लिखो। अब तो केशु संतोक और राधाके दोषकी बात बिलकुल उड जाती है। तुमने जो दामोदरदासके खतका फिकरा भेजा था सो भी उड जाता है। स्मरणमें है न? मै गभराहटमें पडा हूँ। मेरे स्वभावसे प्रतिकुल मै चल रहा हूँ। संतोकादिके प्रति कुछ भी वहम रखकर मै कैसे शात बैठ सकता हूँ। तुमारे तरफसे सुनी हुई मै न मानुं तो क्या करूं? मेरा मुंबई जाना कब होगा मुझे कोई पता नहि है। शायद अक्तूबरमें जाऊं कांग्रेसके समय। उस वखत दामोदरदासके साथ बात करनेका मौका मिल ही नहि सकेगा।

१. साधन-सूत्रमें छूटा हुआ है।

तुमको वहां ठीक रहता होगा। बुखार फिर नही आया होगा।

राधाको भेजनेका तुमारे पास पैसे है तो मुझे क्यों भेजा न जाय। एक तरफ से भाई सब करजदार रहते है, मकान भी बच सके या नहि इसका विश्वास नहि दूसरी तरफसे राधाके खर्चका बोज उठानेको शक्ति है। तुमको मालुम है न की राधा के खर्चका प्रबंध है ही। उसमें आजतक कोई दिक्कत पैदा नहि हुई है। तुमारे मुझको मदद देना है तो अवश्य दे दो। राधाको जो मिलता है, तदुपरांत भेजनेकी सम्मति मांगते हो? यदि हां तो क्यो?

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४२३) से।

४८५. एक प्रार्थना[1]

[१२ सितम्बर, १९३४ या उससे पूर्व][2]

हे नम्रताके सागर, दीन भंगीकी हीन कुटियाके निवासी। गंगा, ब्रह्मपुत्र, यमुना के जलोसे सिंचित इस सुन्दर देशमें तुझे खोजनेमें हमे मदद कर। हमें ग्रहणशीलता दे, निश्छल हृदय दे, अपनी नम्रता दे, भारतकी जनतासे एकरूप होनेकी शक्ति और तत्परता दे।

हे भगवन्, तू तभी मददके लिए आता है जब मनुष्य बिलकुल नम्र बनकर तेरी शरण लेता है। हमें वर दे कि सेवक और मित्र बनकर जिस जनताकी हम सेवा करना चाहते है, उससे अलग न पड़ जायें। हमें आत्म-त्याग और सद्गुणोंके भाजन बना। हमें नम्रताकी साक्षात् मूर्ति बना ताकि इस देशको हम ज्यादा समझें और ज्यादा प्रेम करें।

[अंग्रेजीसे]

बापू — कन्वर्सेशन्स ऐंड कॉरेस्पोंडेन्स, पृ० ८८-८९

१ और २. यह प्रार्थना "पत्र : एफ० मेरी बारको", पृ० ४६२ के साथ संलग्न थी। अपनी पुस्तकमें इसके विषयमें मेरी बार लिखती हैं : "कुमारी लिनफोर्थ एक अंग्रेज महिला थीं जो उस समय हिन्दू, मुसलमान, ईसाई और पारसियोंकी एक अन्तर्जातीय समिति द्वारा चलाये जा रहे हैदराबाद समाज-कल्याण केन्द्रमें काम कर रही थीं। उन्होंने मुझे गांधीजीसे उनके लिए एक सन्देश लेनेको कहा था। अत: गांधीजी ने यह छोटी-सी प्रार्थना, जिसे उसने शीशेमें जड़वाकर अपने केन्द्रमें टाँग दिया था, मेरे नाम अपने पत्रके साथ भेजी थी।"

४८६. तार : हीरालाल शर्माको

१२ सितम्बर, १९३४

शर्मा
साबरमती
आश्रम

घर जानेकी जल्दी नही है।[1] मुझे तुमको तुम्हारे वचनपर कायम रखना है। वहा सन्तोषपूर्ण प्रमाणपत्र हासिल करो। कल पत्र लिख रहा हूँ।[2] रामदासकी प्रतिदिनकी उन्नति तार द्वारा बताओ।

बापू

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, १९३२-४८, पृ० ९५ के सामनेकी अंग्रेजीकी प्रतिकृतिसे।

४८७. पत्र : अब्बास तैयबजीको

१२ सितम्बर, १९३४

प्यारे भाई,

सुबहके ठीक ३ बजे है। मुंह धोनेके बाद यह पहला पत्र लिख रहा हूँ। मैं मनसे पूरी तरह आप सबके पास हूँ। आपके नाजुक और घरेलू मामलोपर फैसला करनेवाला मैं कौन होता हूँ? आपने अपनी गुप्त बातें जान पानेका अनोखा सौभाग्य मुझे दिया है। मैं उनका दुरुपयोग नही कर सकता। वास्तवमें घटनाएँ जिस रूपमें होती है, उनके फलितार्थ मै नही जानता। लेकिन अगर आप और रैहानाको शान्तिसे रहना है, तो यह मूक-युद्ध समाप्त ही होना चाहिए। यदि मै आपकी जगह होता तो या तो मै बिना किसी शिकायतके खुशीसे उसे अपने रास्तेपर चलने देता या उसे एक अलग घर और गुजारा दे देता और अपने मनके मुताबिक रहने देता। वह इतनी बीमार है कि अपने खुदके साधनके सहारे नही छोड़ी जा सकती। मै हमीदा के बारेमें चिन्ता नही करता; वह रैहानाकी तरह दुर्बल नही है। रैहानाके भाग्यमें विवाह नही लिखा है। जहाँतक मैं जानता हूँ, वह विषय-वासनासे बिलकुल अनजान है। अच्छा होता कि मै आपको एक प्रफुल्ल करनेवाला पत्र लिख पाता, लेकिन मैं

१. हीरालालजीने अपने बीमार पुत्रकी देखभालके लिए गांधीजी से खुर्जा जानेकी अनुमति चाही थी।
२. देखिए पृ० ४६७-६८।

वैसा पत्र नहीं लिख सकता। यह पत्र पढ़कर खुदा जो रास्ता दिखाये, आप वही करें। आप सबको प्यार।

आपका,
मो० क० गां०

अब्बास तैयबजी
बड़ौदा

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य: नारायण देसाई।

४८८. पत्र: एफ० मेरी बारको

१२ सितम्बर, १९३४

चि० मेरी,

तुम्हारा पत्र मिला जिसमें तुम्हारी गतिविधियोंकी पूरी सूचना थी। इसके साथ मिस लिनफोर्थके लिए एक पुर्जा[1] भेज रहा हूँ। यह हाथके बने कागजपर लिखा गया है, ऐसे कुछ कागज इस समय मेरे पास हैं।

मीराका पत्र तुम निश्चय ही अपनी बहनको भेज सकती हो। जब तुम उसे लिखो तो कृपया उसे मेरा प्यार भी लिख देना। जहाँतक मुझे याद आता है, उस पर मेरे एक पत्रका उत्तर बाकी है।

अपने कार्यके लिए हिन्दी सीखते हुए तुम्हें, मेरे खयालसे, अपनेको पुस्तकोंमें बेकार गर्क नहीं करना चाहिए।

तुम्हारे कपासके बीज कैसे निकले, इसकी तुम्हें पूरी रिपोर्ट देनी है।[2]

मृत गायके मांसका सदुपयोग उससे गो-वसा निकालनेके लिए किया जा सकता है, जो कई तरह काममें आ सकती है। उसकी हड्डियाँ खादके रूपमें काम आ सकती हैं।[3]

तुम्हारा पत्र मैं जमनालालजी को भेज रहा हूँ।

सस्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०२८)से। सी० डब्ल्यू० ३३५७ से भी; सौजन्य: एफ० मेरी बार।

१. देखिए "एक प्रार्थना", पृ० ४६०।

२. बापू – कन्वर्सेशन्स ऐंड कॉरेस्पॉण्डेन्स, पृ० ८९ पर मेरी बारने इसका यह स्पष्टीकरण दिया है: "कपासके बीजोंका यह उल्लेख उन परीक्षणोंके सिलसिलेमें है जो मैं इस जिलेमें एक खास किस्मकी कपास उगानेके लिए कर रही थी। वैसी कपास यहाँ पहले कभी नहीं उगाई गई थी।"

३. "मृत गायके उपयोगकी यह सलाह किसी ग्रामवासीके लिए ही होगी, क्योंकि मेरे पास तो जीवित या मृत कोई गाय थी नहीं।" (वही)

४८९. पत्र : डॉ० बी० वी० मुलेको

१२ सितम्बर, १९३४

प्रिय मित्र,

यह पत्र शोलापुर औषधालय-सम्बन्धी तुम्हारी शिकायतके उत्तरमें लिखे गये मेरे पत्रके सिलसिलेमें है। अब मुझे हरिजन-सेवक संघ, महाराष्ट्र बोर्डके सचिवका पत्र प्राप्त हुआ है, जिससे मालूम होता है कि उक्त अनुदान ठक्करबापाके प्रत्येक वस्तुका निरीक्षण करने और उससे सन्तुष्ट हो जानेके बाद ही पास किया और दिया जा रहा था। इस स्थितिमें मैं तुमसे यही कह सकता हूँ कि यदि तुम इस सिफारिशसे सन्तुष्ट नही हो, तो तुम्हें दिल्ली केन्द्रीय बोर्डके अध्यक्षको लिखना चाहिए। शायद तुम्हे मालूम हो, संघमें मेरी आधिकारिक हैसियत कुछ नही है। अतः मेरा सम्बन्ध शुद्ध नैतिक सम्बन्ध है। बिरले मौकोंपर ही मैं बोर्डको अपनी सलाह देता हूँ। लेकिन इस प्रसंगमें मुझे नही लगता कि मैंने जो-कुछ कर दिया है, उसके आगे भी कुछ किया जाये।

हृदयसे तुम्हारा,

डॉ० बी० वी० मुले, एम० एस०
शोलापुर

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

४९०. पत्र : बी० जे० मराठेको

१२ सितम्बर, १९३४

प्रिय मराठे,

दिनांक ६ के मेरे पत्र[1] के उत्तरमें तुम्हारा तुरन्त पत्र मिला। अब मैंने डॉ० मुलेको उपयुक्त पत्र[2] लिखा है।

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल-कागजात; सौजन्य : प्यारेलाल।

१. देखिए पृ० ४३८।
२. देखिए पिछला शीर्षक।

४९१. पत्र : सौदामिनी मेहताको

१२ सितम्बर, १९३४

चि० सौदामिनी,

तुम्हारा पत्र मिला।

तुम्हारा यह लिखना ठीक है कि मैं . . .[1] के विषयमें जितना जानता हूँ, उतना ही यदि . . .[2] के विषयमें जानूँ, तो मेरा मन्तव्य कदाचित् कुछ नरम पड़ जाये। मैंने जो-कुछ कहा था, . . .[3] का अपने बचावमें वक्तव्य तथा . . .[4] का विलाप पढ़नेपर कहा था। फिर भी, ऐसा हो सकता है कि सब पात्रोंके निकट सम्पर्कमें आनेसे उनके दृष्टिकोण अधिक स्पष्ट हो जायें। तात्पर्य यह हुआ कि किसीके कार्यकी आलोचना करना हो, तो बहुत गहरे उतरना पड़ता है। यह करना सरल नहीं है, इसलिए किसीकी आलोचना ही न करना स्वर्णिम मार्ग है। मैं यह मार्ग जानता हूँ। किसीकी आलोचना क्वचित् ही करता हूँ। यह ठीक है कि जिनके साथ कुछ सम्बन्ध होता है, उनके बारेमें उतावलीमें कुछ कह बैठता हूँ। अभी मुझमें इतना राग है। ऐसे सूक्ष्म राग इच्छा करने मात्रसे नहीं निकलते। प्रयत्न करनेसे ही धीरे-धीरे कम होते हैं।

. . .[5] के विषयमें तुम्हें थोड़ा और लिखूँ। आज भी . . .[6] के सिवाय अन्य बड़े-बूढ़े उसके दूसरे विवाहके विरुद्ध हैं। मैं यदि इसमें प्रोत्साहन न देता तो इस विवाहकी बात दब ही जाती। मेरा परिचय पहले . . .[7] से हुआ। उसे देखते ही मुझे लगा कि यह लड़की घरबार चला ही नहीं सकती। . . .[8] की विषय-वासना तृप्त करनेकी उसमें शक्ति ही नहीं है। मैंने उसके जीवनमें प्रवेश किया, उससे पहले वह . . .[9] को देखकर काँपने लगती थी, किसी-से बात नहीं करती थी, उदास रहती थी। अब तो वह सबके साथ हिम्मतसे बात करती है, मजाक भी कर सकती है और अपने विचार खुलकर बताती है। . . .[10] को लिखे उसके पत्र और . . .[11] को लिखे . . .[12] के पत्र वे दोनों मुझे पढ़नेको देते हैं। . . .[13] की चिन्ताका विषय ही . . .[14] का दूसरा विवाह न होना है। जबतक दूसरा विवाह नहीं होता, तब तक . . .[15] अपनेको बड़े-बूढ़ों तथा . . .[16] की ओरसे सुरक्षित नहीं मानती। सगे-सम्बन्धी उसे ताना देते हैं कि तू क्यों . . .[17] को सन्तुष्ट नहीं कर सकती। दूसरी ओर स्नेहमयी होनेके कारण अपने-आपसे यह प्रश्न करके वह दुखी होती है कि मैं क्यो. . .[18] को तृप्त नहीं कर सकती?" तुम्हारी जानकारीमें ऐसा उदाहरण दूसरा नहीं होगा। तुम स्त्री-जातिकी हो, इसलिए स्त्रीके हृदयको मेरी अपेक्षा अधिक

१ से १८. नाम छोड़ दिये गये हैं।

जाननेका दावा अवश्य कर सकती हो। पर इसके विरुद्ध मैं तुम्हारी अपेक्षा अधिक वर्षोंका अपना अनुभव रख सकता हूँ। पुरुष होते हुए भी निर्विकार होकर और निर्विकार बने रहकर, स्त्रीके हृदयमें प्रवेश करनेका मेरा प्रयास अनेक वर्षोंसे चला आ रहा है। इसके फलस्वरूप प्रत्येक वर्ग, धर्म और देशकी सैकड़ो स्त्रियोके जीवनसे मेरा गाढ़ा परिचय है। मेरे पास ऐसे अनेक उदाहरण मौजूद है जिनमें पत्नीने अपने पतिसे दूसरा विवाह करनेका आग्रह किया है। यह विशेषता केवल हिन्दू स्त्रीकी ही नही है। तुम्हे शायद आश्चर्य होगा कि ऐसे उदाहरण इंग्लैंडमें भी मिल जाते है।

कामका इतना बोझ होनेपर भी इतने विस्तारसे यह पत्र लिखनेमें हेतु है। तुमने इस काममें रुचि ली है, यह मुझे अच्छा लगा। . .[1] मेरे पीछे पडी ही थी। उसने भी अपना दु:ख प्रकट किया था। मैंने उसे वचन दिया है कि वह चाहे तो मेरे पास स्त्रियोका शिष्टमण्डल लेकर आ सकती है। उसके सामने मैं यह मामला रखनेको तैयार हूँ। मेरे लिए यह धर्म की बात है; सत्यके प्रयोगोमें से एक है। मैं जो-कुछ कर रहा हूँ, उसकी मुझे शर्म नही है। मै मित्रताके कारण विवश होकर इस मामलेमें नही पड़ा। स्त्री-जातिकी सेवाका यह एक अश है। . . .[2] को मैं गरीब गाय मानता हूँ। उसकी जितनी रक्षा हो सके, करनेकी इच्छा है। इसमें मुझे तुम बहनोकी मदद चाहिए। मतलब यह है कि यदि मै धर्मके बहाने अथवा किसी भी प्रकारके मोहमें पडकर अधर्मकी ओर जा रहा होऊँ, तो मुझे सावधान करके उससे बचा लो। इसलिए यदि तुम इस सम्बन्धमें अपनी यह रुचि बनाये रख सको, तो . . .[3] से मिलकर और बात करके तुम दो-चार बहनें मेरे पास आ सकती हो। मैं अपनी बात तुम्हारे सामने रखूँगा। तुम्हारा जो-कुछ कहना होगा, सुनूँगा। . . .[4] और . . .[5] को तो जो होना है, हो। ऐसी परिस्थितियाँ तो आती ही रहेंगी। हिन्दुस्तानमें अनमेल जोड़ोकी कहाँ कमी है? मैंने . . .[6] से कहा है कि जब उसका शरीर अवस्थाके अनुरूप विकसित होकर ठीक हो जायेगा और उसमें विषय-भोगकी लालसा उत्पन्न होगी, तब यदि वह दूसरा विवाह करना चाहेगी, तो मैं चाहे जितने कष्ट उठाकर भी उसकी सहायता करनेको तैयार रहूँगा। . . .[7] यदि दूसरा विवाह कर ले, और तब भी यदि . . .[8] ही उसके साथ सम्बन्ध बनाये रखना चाहे और . . .[9] भी राजी हो जाये, तब तो मैं लाचार हो जाऊँगा। . . .[10] के पिताकी तो यही इच्छा है, कि . . .[11] के दूसरा विवाह कर लेनेके बाद भी . . .[12] उसकी संगिनी बनी रहे। मेरा प्रयत्न इस परिस्थितिमें से दोनोंका उद्धार करनेका है। इस मामलेमें बड़ी गुत्थियाँ है। इसका समाधान मिल जानेसे मेरी अनेक समस्याओंका

१ से १२. नाम छोड दिये गये हैं।

समाधान हो जायेगा। इसलिए इस मामलेमें अपना समय लगानेमें मुझे संकोच नही होता।

हो सकता है, इस पत्रके द्वारा मैं तुम्हारा बोझ बढ़ा रहा हूँ। यदि तुम इस मामलेमें गहरे उतरना न चाहती हो तो इस पत्रका उत्तर देनेकी आवश्यकता नही है। ऐसा समझना कि यह पत्र तुम्हारे सन्तोषकी अपेक्षा मेरे सन्तोषके लिए अधिक लिखा गया है। लगता तो है कि मैं धर्मको समझता हूँ, किन्तु मेरी समझमें भी भूल की गुंजाइश हो ही सकती है। इसीलिए जो कोई मेरी भूल मुझे बताता है, उसीसे चिपट जाता हूँ। ऐसा करके अनेक भूलोंसे बच सका हूँ।

सौदामिनी गगनविहारी मेहता
कलकत्ता

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य: नारायण देसाई।

४९२. पत्र: रामदास गांधीको

१२ सितम्बर, १९३४

. . .[१] ईश्वर कल्याण करेगा। तुझे जिसका दास माना गया है, अर्थात् जिसे अर्पण करनेकी इच्छासे मैंने तेरा यह नाम रखा है, उसके नामको जपता रह। यह अच्छी तरह समझ ले कि रामनाम ही रामबाण औषधि है। हृदयकी शान्ति उत्तमसे-उत्तम दवा है। जन्म, मृत्यु और व्याधिने किसे छोड़ा है? ये अवस्थाएँ शरीरके साथ लगी ही हैं। किन्तु जो समता धारण कर सकता है, उसे ये सभी अलग होते हुए भी समान ही लगेंगी। . . .[२]

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य: नारायण देसाई।

१ और २. साधन-सूत्रमें स्थान खाली है।

४९३. रघुवीर नारायण सिंहको

१२ सितम्बर, १९३४

भाई चौधरीजी,

आपका पत्र मिला था। वर्किंग कमिटीके मिलनेतक उत्तर नही दिया। मेरा अभिप्राय तो यह है कि किसी हालतमें हम रिहाईकी अरजी नही कर सकते हैं। लेकिन मैं सुनता हुँ कि अरजी सिर्फ फारमले होगी। रिहाई दे देंगे। यदि बात सही है और आपका दिल माने तो अरजी देना। यदि अरजी मंजुर होनेके बारेमें कुछ संदेह हो तो किसी हालतमें अरजी न भेजी जाय। अभिप्राय यह भी है किसीकी अरजी नामंजुर होगी तो सब अपनी अरजी खीच लेगे। पी० बी०के तरफसे ऐलानकी प्रतिक्षा की जाय।

चौधरी रघुवीर नारायण सिंह
हापुर

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य: नारायण देसाई।

४९४. पत्र: हीरालाल शर्माको

१२ सितम्बर, १९३४

चि० शर्मा,

तुमारा पत्र मिला। चाबीओके बारेमें प्रभावती परका पत्र देखा।

बुखारका मुझे डर था ही। जो हुआ सो हुआ। मेरा ख्याल है इससे अच्छा ही होगा। दाक्तरोसे उसकी[1] दवाई करना योग्य ही था। धीरजसे काम लेना। दाक्तर लोग कहे वही किया जाय। तुम्हारे नर्स बनकर वे लोग जैसा कहें वही करना है। इसमें सब शुभ है। परिणामका स्वामी एक ईश्वर है। मुझे नित्य पत्र तुमारे तरफसे आना चाहिये।

इस वखत तो दक्षिण आफ्रिकाकी बात भी क्या करूं। मैं रास्ता साफ करनेकी कोशीश करता रहूँगा। आगे क्या होगा सो देखेंगे।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, १९३२-४८, पृ० ९३ के सामनेकी प्रतिकृतिसे।

१. रामदास गांधी; देखिए अगला शीर्षक भी।

४९५. पत्र : हीरालाल शर्माको

१३ सितम्बर, १९३४

चि० शर्मा,

दतून करके तुम्हारा पत्र पढ़ गया। कल पूरा नहिं पढ़ सका था। ऐसे आज-कल मेरे हाल हो गये है। कलके तारका तो उत्तर दे दिया है।[1] आज भी यही उत्तर है। धीरजसे काम करो। वहाँ से हट जाओगे तो रामदासका शरीर और विगड़ेगा। यह तो यहाँ वैठे हुए मेरा अभिप्राय। सुरेन्द्र वहां है। वह जैसा कहे ऐसे किया जाय। मेरा अभिप्राय यह है तुमारे मूक नर्स वन जाना। डाक्तरोंका अपमान भी सहन करे रामदास जहां तक खुश रहता है उसको साथ देना। जो वनता रहे मुझे वताते रहो। वा को सहन करो। जो वहा वन रहा है उस वारेमें मैंने चेतावनी दी थी। कानुको अभी भी यहां भेज दिया जाये तो अच्छा है ही। लेकिन इन सव वातोमें सुरेन्द्रकी सुनो। मै यहाँ वैठे हुए कर्त्तव्य-मूढ़ हूँ।

मेरे कारण लोग भयभीत हो जाते है, यह मै जानता हूं। क्या करूं। इसी कारण मै कांग्रेस छोड़ना चाहता हूँ। इसी कारण सवसे अलग रहना पसंद करता हूँ। लेकिन यह सव वलात्कारसे नहिं होगा। जैसे ईश्वर चाहता है ऐसे ही होगा। तुम्हारा अंतिम वचन सर्वथा योग्य है। हिन्दुस्तानका अथवा एक मनुष्यके किस्मतका ठेका लेने वाला मै कौन?

ऐसा होते हुए भी रागादिके कारण मैं अनजानपनमें भी भ्रममें पड़ता हूँगा।

सव कुछ देखते हुए यदि रामदासको छोड़ना ही पड़े तो यहां होकर जाना। द्रौपदी और वच्चोंका ख्याल यहाँ कर लेंगे। मुझे भी उनकी चिंता है ही। लेकिन किसी वातमें जल्दवाजी नहीं करेंगे। भविष्यकी वात भी कर लेंगे।

वापुके आशीर्वाद

वापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, १९३२-४८, पृ० ९६-९७ के वीचकी प्रतिकृतिसे।

१. देखिये पृ० ४६१।

४९६. स्वदेशीपर कुछ और

१० अगस्तके 'हरिजन' में 'स्वदेशी' पर मैंने जो लिखा[1] था, उसी सिलसिलेमें कुछ और लिखना चाहता हूँ। हरिजनोंके ही खास-खास धन्धे लीजिये। हरिजनोकी जो दो हजारसे ऊपर जातियाँ आज मौजूद है, उनका कुछ मतलब जरूर है। बहुत-सी जातियोसे उनके अपने-अपने धन्धोका पता चल जाता है, जैसे टोकरी बनाना, झाड़ू बनाना, रस्सी भाँजना, दरी बुनना वगैरह। अगर एक पूरी फेहरिस्त बनाई जाये तो कामकी एक खासी लिस्ट तैयार हो जायेगी। ये सब धन्धे अगर फायदेके हो तो उन्हें प्रोत्साहन मिलना चाहिए, और फायदेके न हों तो उन्हें जान-बूझकर नष्ट कर देना चाहिए। पर इसका निर्णय कौन करे कि वे फायदेके है या नही, उपयोगी है या अनुपयोगी? अगर एक सच्चा स्वदेशी संघ हो, तो वह इन तमाम अनगिनत दस्तकारियोकी ठीक-ठीक जाँच करे और इन कारीगरोमें दिलचस्पी ले। यह स्याही, जिससे मै लिखता हूँ, तेनाली (मद्रास) की बनी हुई है। इससे १२ आदमियोकी जीविका चल रही है। बड़ी कठिनाईसे किसी तरह वे इस कामको चलाये जा रहे है। मुख्तलिफ स्याही बनानेवालोने तीन और नमूने मेरे पास भेजे थे। इन सबका भी तेनालीवालोका-सा ही बुरा हाल है। मुझे उनका काम अच्छा लगा। मैंने उनसे पत्र-व्यवहार किया। पर इससे अधिक मै उनके लिए और कुछ नही कर सका। स्वदेशी संघ हो तो वह वैज्ञानिक ढंगपर इन स्याहियोकी जाँच-पड़ताल करे और जो सबसे अच्छी हो, उन्हें प्रोत्साहन दे। स्याहीका यह उद्योग है तो अच्छा और तरक्की भी कर रहा है, पर इसे अच्छे रासायनिक साधनोंकी आवश्यकता है।

कानपुरमें उस दिन एक सज्जनने ऐसे कागजके कुछ नमूने मेरे पास भेजे थे जो उनके एक मित्र पास ही गाँवमें तैयार करते हैं। पूछताछ करनेपर मालूम हुआ कि इस कामसे करीब नौ आदमियोकी रोजी चल रही है। कागज था तो मजबूत और घुटा हुआ, पर लिखनेमें बहुत अच्छा नही था। इस काममें जो आदमी लगे हुए है, उनकी रोजी-भर बड़ी मुश्किलसे चल रही है। मौतके किनारे बैठा एक बूढ़ा आदमी अपने हुनरसे उस गाँवमें यह काम चला रहा है। ठीक तरहसे अगर मदद न मिली, तो उस बूढ़ेके साथ ही यह सारा काम समाप्त समझिये। मुझे बतलाया गया कि अगर काफी माँग हो तो कागज उसी भावपर दिया जा सकता है जिस भावपर मिलका बना कागज बिक रहा है। मैं जानता हूँ कि हाथका बना देशी कागज नित्यप्रति बढ़ती हुई कागजकी माँगको कभी पूरा नही कर सकता। पर सात लाख गाँवों और वहाँकी दस्तकारियोके भक्त, अगर आसानीसे मिल सके तो, हाथके बने कागजपर ही लिखना पसन्द करेंगे। जो लोग हाथके

१. देखिए पृ० ३०८-११।

बने कागजको काममें लाते है, उन्हें यह मालूम है कि उसमे अपनी एक खास मनोहरता होती है। प्रसिद्ध अहमदाबादी कागजको कौन नही जानता? मिलका कागज अहमदाबादी कागजके टिकाऊपन और चिकनाहटका क्या मुकावला करेगा!

पुराने ढंगके सब बही-खाते अब भी उसी कागजके वनते हैं। पर दूसरी बहुत-सी ऐसी दस्तकारियोंकी तरह सम्भवतः यह उद्योग भी अब आखिरी साँस गिन रहा है। थोड़ा ही प्रोत्साहन मिलनेसे यह उद्योग मृत्यु-मुखमें जानेसे बच सकता है। अगर ठीक तरहसे देखभाल की जाये, तो बनानेकी रीतियोमें सुधार हो जाये और हाथके बने कागजमें जो दोष आज दिखाई देते है, वे आसानीसे दूर हो जायें। इन अप्रसिद्ध उद्योग-धन्धोमें जो बहुत-से आदमी लगे हुए हैं, उनकी आर्थिक अवस्थाकी भलीभाँति जाँच-पड़ताल न की जाये? इस काममें रस लेनेवाले लोग अगर उन्हें ठीक-ठीक राह दिखाये और कामकी सलाह दें, तो वे निश्चय ही उनकी बात मानेंगे और उनके कृतज्ञ होगे।

आशा है, यह दिखानेके लिए मैंने काफी उदाहरण दे दिए है कि सच्चे स्वदेशी का यह क्षेत्र कितना विशाल और अछूता पड़ा हुआ है। यह क्षेत्र बेहद विस्तृत किया जा सकता है, और इसमें ऐसी किसी खास लागत की भी जरूरत नही है। इससे देशकी सम्पत्ति बढ़ेगी, और आज जो लोग बेकारीकी हालतमें भूखों मर रहे है, उन्हें एक प्रतिष्ठित रोजगार भी मिल जायेगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १४-९-१९३४

४९७. 'हरिजन' क्यों नहीं?

सेवामें
सम्पादक, 'हरिजन'

महोदय,

'हरिजन' (१० अगस्त, १९३४, पृष्ठ २०६, स्तम्भ २) में श्री महादेव देसाईने लिखा है कि "कुछ सज्जन, जो हरिजनोंके अथवा 'दलितवर्ग' के प्रतिनिधि होनेका दावा कर रहे थे[1], गांधीजी से उस दिन मिलने आये थे।" यह देखकर मुझे कुछ दुःख-सा हुआ कि श्री महादेव देसाईकी तीक्ष्ण बुद्धि उन लोगोंके कहनेके वास्तविक अभिप्रायतक पहुँच नहीं सकी। 'दलित वर्ग' शब्दमें जो 'घृणित दुर्गन्ध' भरी हुई है, उसकी बदौलत उस वर्गमें जब जागृति पैदा होगी, तभी यह भेद-भाव समूल नष्ट होगा; और इसके परिणाम-स्वरूप समस्त हिन्दू-जातिका सामान्य एकीकरण और संगठन हो जायेगा। हम सब यह जानते हैं कि गांधीजी के इस महान और अद्वितीय प्रयासमें उनका

१. देखिए पृ० २२२-२३।

यही उद्देश्य है। किन्तु 'हरिजन' नामकी यह मिठास, सम्भव है, उनके और सवर्ण हिन्दुओंके बीचकी खाईको और भी विस्तृत कर दे, जो गांधीजी का निश्चय ही इरादा नहीं है। यह असली अभिप्राय श्री महादेव देसाईके ध्यानमें आ जाना चाहिए था। उन्होंने इस सम्बन्धमें जो 'विचित्र' (क्यूरियस) विशेषणका प्रयोग किया है, वह ध्यान देने योग्य तो है ही, साथ ही खेदजनक भी है, क्योंकि गांधीजी के एक अत्यन्त निकटके साथीकी लेखनीसे यह विशेषण लिखा गया है।

इस विषयमें मैं इसलिए दिलचस्पी ले रहा हूँ कि मैं खुद इस बृहत् वर्गका एक व्यक्ति हूँ। दूसरे लोग किस नाम या विशेषणका प्रयोग करते हैं, इसकी मुझे चिन्ता नहीं है। चिन्ता तो मुझे सिर्फ इतनी ही है कि हमारे विशाल हिन्दू-समाजमें इस बृहत् वर्गकी भावी स्थितिपर उसका कहाँतक प्रभाव पड़ेगा।

क्या आप कृपाकर यह पत्र श्री महादेव देसाईको दिखा देंगे?

आपका,

एच० के० मलिक

महादेवने यह पत्र मुझे दे दिया है। श्री मलिकको मैं जानता हूँ। थोड़े ही दिन पहले जब मैं कलकत्ता गया था, तो वे मुझसे वहाँ मिले थे। उनकी इस हार्दिक भावनामें, और जबतक अस्पृश्यताका यह कलंक कायम है तबतक इस दुर्गन्धयुक्त 'दलित' नामको कायम रखनेकी उनकी इच्छामें मैं हिस्सेदार हो सकता हूँ। लेकिन मैं श्री मलिकसे उन सुधारकोंकी भावनाको महसूस करनेके लिए कहूँगा जिनके दिलमें अस्पृश्यता अब रही ही नही है और जिन्हे अब उन प्रिय जनोके लिए, जिनकी कि वे यथाशक्ति सेवा करना चाहते हैं, किसी हीन नामका प्रयोग करते भय लगता है। मैं चाहता हूँ कि श्री मलिक उनकी भावनाको महसूस करें। फिर हजारों अस्पृश्योको 'अछूत', 'अस्पृश्य' आदि नाम पसन्द नही है, किन्तु यह 'हरिजन' नाम पसन्द है, इस बातको भी तो ध्यानमें रखना है। हम सबका ध्येय एक ही है और वह यह कि अस्पृश्यताको जड़मूलसे नष्ट कर देना है। जब वह मंगलमय दिन आयेगा, तब या तो 'हरिजन' शब्दका लोप हो जायेगा या फिर हम सभी 'हरिजन' अर्थात् हरिके भक्त कहलानेका गर्व अनुभव करेंगे, और ऊँच-नीच भावका जहर हृदयसे निकालकर इस सुन्दर नामके योग्य अपने को बना लेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १४-९-१९३४

४९८. तर्क नहीं, अनुभव

मेरी दृष्टिमें तो मेरी प्रत्येक प्रवृत्तिके लिए सत्यकी तरह अहिंसा भी मेरा शाश्वत धर्म है। मनुष्येतर जीव-सृष्टिके प्रति अपने व्यवहारमें अनेक बार इस धर्मका जो मैं पूर्ण आचरण नही कर पाता, वह मेरी निर्बलता ही सिद्ध करता है; इससे अहिंसा धर्मकी सत्यता अथवा मेरी तद्‌विषयक श्रद्धामें कमी नही आती, न आ सकती है। मैं तो केवल एक दुर्बल साधक हूँ। सदा ठोकरपर ठोकर खाता रहता हूँ, तो भी निरन्तर ऊपर चढ़नेका यत्न करता रहता हूं। मेरी निष्फलताएँ मुझे पहलेसे भी अधिक जाग्रत बनाती है और मेरी श्रद्धामें और भी अधिक शक्तिका संचार करती हैं। श्रद्धाकी दृष्टिसे मैं यह देख सकता हूँ कि सत्य और अहिंसाके द्विविध धर्मके पालनमे अमोघ शक्ति है और हमे उसकी बहुत ही स्वल्प-सी कल्पना है।

अगर हमे अपने जीवनके समस्त कार्यकलाप इन दोनों तत्वोंसे व्याप्त करने है, तो अस्पृश्यताके विरुद्ध हमने जो शुद्ध धार्मिक युद्ध छेड़ा है, उसमे इसकी बहुत अधिक आवश्यकता है। अतएव अमेरिकाके एक मित्रके लिखे पत्रका निम्नलिखित उद्धरण पाठकोंके आगे रखते हुए मुझे हर्ष होता है। इस पत्रमें मेरे अमेरिकी मित्रने इस बातका वर्णन करके कि उनकी मनोवृत्तियाँ किस तरह काम कर रही है, अपने हृदयका भाव प्रकट किया है। उन्होने घोर मन्थनपूर्वक शोध करनेके उपरान्त अहिंसाके विषयमें जो श्रद्धा — अभी स्यात् वह सम्पूर्ण नहीं कही जा सकती — प्राप्त की है उसे व्यक्त किया है।

> आपके साथ अभी पिछली बार मेरी जो बातचीत हुई थी, उससे आपने यह समझा होगा कि अहिंसाके बारेमें मेरी जो आस्था थी उसे अब मैं गँवाता जा रहा हूँ। इस सिद्धान्तके सम्बन्धमें मुझे अनेक शंकाओंने परेशान कर रखा था और इसीसे मुझे आपके साथ बात करनेका इतना अधिक मन हुआ। मुझे ऐसा लगता है कि यह मेरी भारी नादानी थी, क्योंकि मुझे यह साफ-साफ समझ लेना चाहिए था कि महान नैतिक तथा आध्यात्मिक सत्य तर्कके द्वारा सिद्ध हो ही नहीं सकते। इन सत्योंको तो अनुभवकी कसौटीपर कसना चाहिए। मैंने अपने जीवनको अभी ऐसी कठिन कसौटीपर कहाँ कसा है? मुझे ऐसा लगता है कि अहिंसाको अपने अनुभवसे शाश्वत धर्म सिद्ध करनेके लिए जितनी तपस्या मैंने आजतक की है, उससे कई गुनी अधिक अभी करनी चाहिए।
>
> किन्तु दूसरोंके जीवनमें इसका जो परिपाक हुआ है, उसे मैं देखता हूँ, और इसका जो फल हुआ है उसे भी मैं देख सकता हूँ और उससे मैं इसे अपनी धर्म-श्रद्धाके एक महान अंगके रूपमें अंगीकार भी कर सकता हूँ। राजेन्द्र बाबू-जैसे पुरुषोंके निकट संसर्गमें आना एक ऐसा सौभाग्य है जिसके लिए

मनुष्यको भगवानका आभारी होना चाहिए। मैंने देखा है कि राजेन्द्र बाबू और दूसरे कुछ व्यक्ति, जिनका नाम मैं बतला सकता हूँ और जिन्होंने अपने जीवनकी पतवार अहिंसाके ही सहारे चलाई है, लोभ, मोह, स्वार्थ, द्वेष, भय आदिको दूर करके ही शुद्ध हो सके हैं। अनेक लोग दूरवर्ती प्रकाशमय भविष्यकी झीनी झाँकी तो कुछ-कुछ ले सकते हैं, पर अन्तरमें डेरा डाले हुए ये षड्रिपु उन्हें ऐसा सताते हैं कि वे बाह्य शत्रुओंके सामने युद्धमें विजय-लाभ नहीं कर सकते। आपके विरोधियोंपर अहिंसाका जो प्रभाव पड़ा है उसपर मैं इतना अधिक मुग्ध नहीं हूँ; किन्तु आप और दूसरे मुट्ठी-भर मनुष्योंपर, जिन्होंने अहिंसा-धर्मको अपने अन्तरमें उतारा है, इसका जो प्रभाव पड़ा है मेरा मन तो उसीपर मन्त्रमुग्ध है। मैं मानता हूँ कि यह विश्व नीति-नियन्त्रित है। अतः जिस प्रकार दिनके बाद रात आती है, उसी प्रकार यह भी स्पष्टतः स्वयंसिद्ध है कि चारित्र्यका ऐसा सुन्दर विकास असत्यके प्रयोगोंसे हो ही नहीं सकता। और इसी तरह मैं यह भी मानता हूँ कि ईसामसीहका यह वचन अन्ततः सत्य ही है कि 'जो लोग तलवार उठायेंगे उनकी मौत तलवारसे ही होगी।'

. . .[1] मेरा विश्वास है कि आपको अपने युद्धकी अन्तिम विजयके लिए एक ही गुणका उपयोग करनेकी जरूरत है, और वह गुण है धीरज।

. . .[2] हिन्दुस्तानका आज आप जो नेतृत्व कर रहे हैं, उसके बारेमें तो मैं इतना ही कहूँगा कि आपने नेतृत्वका यह गुण एक दिनमें विकसित नहीं किया, और न यह गुण आपका जन्मजात ही है। मैं मानता हूँ कि आप सत्य-परायणताका दीर्घकालिक तप करके, लम्बे और कठिन अनुभवके परिणामस्वरूप ही अपने जीवनको इतना ऊँचा उठा सके हैं। भले ही यूरोपके लोगोंको अहिंसा-पालनकी शिक्षा न मिली हो, पर मैं यह नहीं मानता कि यूरोपमें मनुष्य-स्वभाव हिन्दुस्तानसे बिलकुल ही भिन्न होता है। इसलिए वे लोग भी आचरण द्वारा ही अहिंसा-धर्ममें निष्णात हो सकते हैं। इसमें अनेक बार निष्फलता होगी, अनेक बार हिम्मत टूटेगी, अनेक बार पराजय होगी। आपके भी जीवनमें यह सब हुआ है और अब भी हो रहा है। लेकिन अगर यह सत्य है, तो इस शाश्वत धर्मका त्याग तो किसी भी समय नहीं किया जा सकता।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १४-९-१९३४

१ और २. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ छूटा हुआ है।

४९९. प्राय: हरिजन-जैसा ही

एक आन्ध्र-निवासी ग्रेज्युएट, जिसने एक देवदासीके साथ ब्याह किया है, लिखता है:

आपको पत्र लिखनेकी इच्छा तो बहुत दिनोंसे थी, पर लिखते हुए मुझे अत्यन्त लज्जा लगती थी। ईश्वरका धन्यवाद कि आखिरकार आज मैंने अपना बोझ आपके आगे हल्का कर ही दिया।

मैं 'देवदासी-समाज' का हूँ, बस यही मेरा परिचय है। मेरा जीवन सामाजिक दृष्टिसे अत्यन्त वेदनापूर्ण है। महात्माजी! क्या आपके खयालमें नर्त्तकियोंके पेशेसे भी बदतर पेशा दुनियामें कोई है? भारतवर्षके लिए क्या यह एक कलंककी बात नहीं है कि एक समूची ही जातिपर वेश्यावृत्तिकी छाप लगी रहे?

मेरे खयालमें हमारा आन्ध्र देश तो इस पापका जैसे गढ़ है। यहाँका हिन्दू-समाज, खासकर ब्याह-शादी और देवोत्सवके अवसरपर, देवताके सामने अश्लील गीत गवाने और गन्दे हावभाव दिखानेके लिए नर्त्तकियोंको बुलाता है और इस तरह वह नव-विवाहित दम्पत्तिके आगे एक बहुत बुरा उदाहरण रखता है।

वेश्यावृत्तिका जीवन वितानेवाली इस देवदासी-जातिके दुःखोंका कुछ पार नहीं। यहाँके नवयुवक इस पापको जड़मूलसे उखाड़ फेंकनेका भरसक प्रयत्न कर तो रहे हैं, पर उन बेचारोंका न कोई सहायक है, न पथ-प्रदर्शक। कृपाकर आप क्यों न इस आन्दोलनको हाथमें ले लें, जबकि यह हरिजन-आन्दोलनके जैसा ही है और उतना ही आवश्यक है? कृपया इस चीजको भी अपने दिलके एक कोनेमें हमेशा जगह दिये रहें और समय-समयपर इसे प्रकाशमें लाते रहें। सिर्फ कांग्रेस ही नहीं, सारा लोकमत आपके पीछे है। मेरा तो ऐसा विश्वास है कि जो काम 'अ‍ॅथिल्स बिल' या भारतीय दण्ड-विधानके जरिए नहीं हो सकता, वह आपके एक शब्दसे ही हो जायेगा।

मैंने अपनी ही जातिकी एक देवदासीसे विवाह किया है, और हमारा यह विवाह कानून तथा धर्म दोनों ही दृष्टिसे जायज है। मेरी दो लड़कियाँ भी हैं। मेरी पत्नी मेरी आँखोंमें उतनी ही पवित्र है जितनी कि कोई हिन्दू स्त्री हो सकती है। फिर भी समाज तो हमें नीच ही समझता है। हमारे पुरखोंके पाप हमसे बुरी तरह बदला ले रहे हैं। वेश्यावृत्तिका धब्बा तो हमारे ऊपर लगा ही है, यद्यपि हम-दोनों इस पापसे कोसों दूर हैं।

हरिजन और देवदासी, यही ऐसी दो जातियाँ हैं जो करीब-करीब एक समान नीच समझी जाती हैं। इसमें सन्देह नहीं कि अपनी नैतिक उन्नति उन्हें खुद ही करनी होगी। तो भी आप-जैसा गुरु उन्हें और उनके समाजको जितनी जल्दी सदाचारी बना सकेगा, उतनी जल्दी वे अपने-आप नहीं बन सकते। ये दोनों एक-से ही आन्दोलन हैं। हरिजनोंके उत्थानके जोशमें कृपया इस गरीब देवदासी-जातिको न भूल जाइएगा।

क्या अच्छा होता कि ऐसी योग्यता मुझमें होती जैसीकि पत्र-लेखक बता रहा है। मुझे दु:ख है कि मुझमें वैसी योग्यता या क्षमता नही है, मुझे अपनी परिमित शक्तिका पता है। पत्र-लेखकको शायद यह पता नही है कि जब मैं 'यंग इंडिया'का सम्पादन करता था, मैं बराबर देवदासी-प्रथा और वेश्यावृत्तिकी कुछ-न-कुछ चर्चा करता रहता था।[1] भले ही इससे कुछ व्यक्तियोका कष्ट दूर हुआ हो, पर मेरा प्रयत्न समाजके इस पापको निर्मूल नही कर सका। 'हरिजन'मे इस प्रश्नको अगर आज मैं उठा रहा हूँ, तो इसका यह कारण नही कि 'यग इन्डिया'के दिनोकी अपेक्षा इस दिशामें मुझे अब कोई अधिक आशा हो गई है। मगर इस नये प्रयत्नसे कुछ व्यक्तियोका कष्ट अगर दूर हो गया तो प्रसन्नता तो मुझे होगी ही।

देवदासियोकी हरिजनोके साथ लेखकने जो समानता दिखलाई है, वह बिलकुल ठीक है। तो भी इन दोनोके बीच जो अन्तर है उसे तो उसने देखा ही होगा। पर उनके दुर्भाग्यमें कितना-क्या अन्तर है, इसे बतलानेमे क्यो समय नष्ट किया जाये। अगर हिन्दू-धर्मकी शुद्धि करनी है, तो अस्पृश्यताकी तरह इस पापपूर्ण देवदासी-प्रथा को भी नष्ट करना ही होगा। समाजको इस पापसे मुक्त करनेके सत्कार्यमें जो लोग लगे हुए हैं, उन्हें एक करीनेसे, सही ढगसे काम करना चाहिए, और अगर अपने प्रयत्नमें उन्हे तत्काल सफलता न मिले तो इससे उन्हे हताश नही होना चाहिए। तात्कालिक कर्त्तव्य तो उनका यह होना चाहिए कि पहले अपने निकटकी बुराईको ही दूर करनेका एकाग्र होकर प्रयत्न करे। काम करनेके दो तरीके हैं। एक तो उनके बीचमें काम होना चाहिए जो अपनी नीच वासना पूरी करनेके लिए देवदासियोको ब्याह-शादियो और देवोत्सवोपर बुलाते हैं, और दूसरा रास्ता यह है कि खुद देवदासी-समाजके अन्दर काम किया जाये। अगर देवदासियाँ समाजके इस पापमे भाग लेना बन्द कर दें, तो इस पाप-प्रथाका उसी क्षण अन्त हो जाये। पर यह बात ऐसी सरल है नही। 'बुभुक्षित किन्न करोति पापम्?' भूख पापका खयाल नही रखती। गुरु द्रोण और भीष्म पितामहकी तरह ये देवदासियाँ भी पाप-कृत्यके समर्थनमें उदरपोषणकी ही दलील देंगी। उनकी प्रकृति ही अब ऐसी बन गई है कि उन्हे अपने पेशेमें कोई पाप दिखाई नही देता। इसलिए वेश्यावृत्तिकी जगह उनके लिए आजीविकाका कोई अन्य शुद्ध साधन ढूँढना होगा। फिर समाजके अन्दर जाकर काम करना है। देवोत्सवो तथा ब्याह-शादियोके व्यवस्थापकोको दलीले दे-देकर समझाना होगा। आदेश देनेके ढंगसे तो समाजमें सुधार कभी होनेका नही। सुधारकोको तो

१. देखिए खण्ड २१, पृ० १०८-१०, खण्ड २६, पृ० ५०८-१० और खण्ड ४१, पृ० ३८१-८२।

समाजकी बुद्धि और हृदयका स्पर्श करना होगा। एक तरीकेसे, सभी सुधार एक प्रकारके शिक्षण हैं, और सामान्य शिक्षाकी तरह ये सुधार भी उतने ही आवश्यक हैं। इसलिए सुधार स्वयं एक शास्त्र है, और वह तभी सफल होता है जब नियमपूर्वक दत्तचित होकर उसका उपयोग किया जाता है।

एक देवदासीका पाणिग्रहण करके लेखकने जो साहसका काम किया है, इसके लिए वह बधाईका पात्र है। अपनी अन्तरात्माकी स्वीकृतिपर उसे सन्तोष करना चाहिए, और उसके तथा उसकी पत्नीके प्रति लोगोंकी जो तिरस्कारपूर्ण भावना है उसको उसे पी जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १४-९-१९३४

५००. तार : मीराबहनको

१४ सितम्बर, १९३४

मीराबहन
द्वारा कैलॉफ[1]
लन्दन

यदि कमलानी आना चाहे तो उसे अपने साथ लेती आओ। यदि हो सके तो एन्ड्रयूजके आनेतक, यानी बीस अक्तूबर तक ठहरो। सस्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२९८) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७६४ से भी।

५०१. पत्र : नारणदास गांधीको

१४ सितम्बर, १९३४

. . .[2]

यह ठीक है न?

किन्तु मैं धूलियासे इस रकमका थोड़ा-बहुत भाग पानेकी उम्मीद रखता हूँ। यदि मिला तो उसे गोसेवा संघके हिसाबमें जमा करा दूंगा। फिर भी पारनेरकरका बोझ तो गोसेवा संघको ही उठाना चाहिए। ऐसा मुझे लगता है। मेरा यह खयाल ठीक है या नहीं, इसके विषयमें लिखना।

मैं सेठ मथुरादासको लिख रहा हूँ।

१. वर्ण-विपर्यय द्वारा पोलकका यह दूसरा नाम बनाया गया है।
२. इस पत्रके आरम्भकी लगभग दस पंक्तियाँ हरी स्याहीसे लिखी गई थीं, जो बिल्कुल उड़ गई हैं।

लीलावतीके नाम मेरा पत्र पढ़ लेना और उसे दे देना। चिमनलालके विषयमें मैं लिख ही चुका हूँ। मैं उसी रायपर दृढ़ हूँ।

रामदासको साबरमतीमें मलेरिया हो गया था; अब अच्छा है।

कनुके अन्तिम पत्रसे मैंने जाना कि उसे वहाँ पूर्ण सन्तोष है। यदि वह मेरे पास आना चाहे तो यह पत्र मिलते ही उसे रवाना कर सकते हो। किन्तु वह मेरे पास आकर क्या पायेगा? पढ़ाईमें पिछड़ जायेगा। यहाँ तो पसीना टपकाना ही है; कोई कामसे सिर उठा पाये, इतना समय भी नही है। यदि इसीको पढ़ाई मानकर सन्तुष्ट रहें तो अवश्य आये। स्वयं अनुभव करके ही देख लेना चाहता हो कि यहाँ क्या हालत है, तो इसमें मैं कोई हर्ज नही मानता। बाल थक गया। कान्ति सोच-समझकर आया ही नही। पृथुराज जानेकी तैयारी कर रहा है। इन सबके आधारपर मैंने यह अनुमान लगाया है कि कोई ऐसा ही आदमी मेरे साथ निभ सकता है जो पढ़-लिखकर तृप्त हो गया हो। कनुके विषयमे अन्यथा सिद्ध हो तो मुझे अच्छा लगेगा। जवान लोग मुझे छोड़कर भाग जाते है, इसे मैं अपनी ही कमी मानता हूँ। फिर भी मैं ठीक नहीं समझ पाया हूँ कि वे ऐसा क्यो करते हैं।

जन्मदिनके अवसरपर मेरे अनेक आशीर्वाद लो। इसमें सरदारके भी हैं; वे मेरे पास बैठे हैं।

. . .[1] बिलकुल निरर्थक व्यक्ति सिद्ध हुआ। विषयसेवन करता रहा और झूठ भी बोलता रहा। मैंने जिसके विषयमें इतनी ऊँची राय बनायी थी, वह उसका मात्र पाखण्ड था।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८४१४ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

५०२. पत्र : जमनाबहन गांधीको

१४ सितम्बर, १९३४

चि० जमना,

तेरा पत्र मिला। समत्व सिखानेसे कोई नही सीखता। वह तो सावधान रहकर आचरणसे प्राप्त होता है। तू जैसे-तैसे काम करती रहे, इसके बजाय थोड़ा पैसा खर्च करके एक ऐसा नौकर रख लेना अच्छा है जिसे कुटुम्बी माना जा सके। देवभाई पर कोई बोझ नही डालना चाहिए। सन्तोकको लेकर कुछ असन्तोष दिखाई देता है। यह उसपर जाहिर कर देना चाहिए और फिर स्वयं सहना चाहिए। यह भी

१. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिया गया है।

नौकर रखकर किया जा सकता है। 'गीता' का वचन है कि जो अपरिहार्य है, उसे वर्दाश्त करना चाहिए।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य: नारायण देसाई।

५०३. पत्र : आत्मारामको

१४ सितम्बर, १९३४

भाई आत्माराम,

आपके पत्रका उत्तर इस प्रकार है। मैं जैसे-जैसे गहराईसे देखता हूँ, मुझे वलवन्तराय अधिक निर्दोष दिखाई देते हैं। मुझे यह ठीक नही लगता कि आप अपने मित्रके विषयमें शंका करें। आपको अभीतक शंका बनी हो तो आपका भाई वलवन्तरायसे मिल लेना अच्छा होगा। मैं तो अब उन्हें अधिक लिखकर चोट नहीं पहुँचाऊँगा। मैंने यह देखा है कि आपके स्वभावमे अतिशयोक्ति और सन्देहशीलता है।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य: नारायण देसाई।

५०४. पत्र : . . . को[1]

१४ सितम्बर, १९३४

चि० . . .

तुमारा खत मिला है। तुमारे नासीपास[2] नही होना। इतना निश्चय कर लो कि जबतक योग्य लड़की नही मिलेगी तबतक तुमारे संयमका ही पालन करना है। हारना नहीं।

. . .

कलकत्ता

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य: नारायण देसाई।

१. नाम नहीं दिया जा रहा है।

२. निराश।

५०५. पत्र : जी० वी० मावलंकरको

१५ सितम्बर, १९३४

भाई श्री मावलंकर,

आपका पत्र मिला।

विद्यापीठके पुस्तकालयका काकासाहबके गुजरात छोड़नेके साथ कोई सम्बन्ध नही है। विद्यापीठका पुस्तकालय दे देनेका अधिकार यदि मौलिक ट्रस्टियोको नही था, तब यदि सारे सर्वसम्मतिसे उसका दान कर दें, तब भी वह गैर-कानूनी ही रहेगा। किन्तु यदि आपका यह मन्तव्य हो कि ट्रस्टियोको दान करनेका अधिकार था, तो, मै समझता हूँ, काकाने जो दूसरी भूल की है, उसके सम्बन्धमें सरदार कुछ नही करना चाहेगे। वे स्वयं एक ट्रस्टी है, इसलिए अपना कर्त्तव्य-मात्र समझ लेना चाहते है। इस विषयमें मुझे कुछ कहने-जैसा नही लगता। किन्तु इस वायदेसे यदि काका अनभिज्ञ रहे हो, तो मै तो काकाको दोष नही दूंगा।

काकासे बड़ी भूल तो, फिर चाहे वह बिलकुल अनजानेमें हुई हो, यह हुई कि उन्होने ट्रस्टियोकी मंजूरी लिये बिना ही कलेक्टरको लिखे पत्र[1] में यह वाक्य रहने दिया कि मंजूरी ले ली गई है। इस असावधानीके लिए काकाने सब ट्रस्टोसे अलग हो जाना ठीक समझा। सरदारको इसमें कुछ लेना नही था।

किन्तु काकाने जो इस्तीफा दे दिया, उससे उनकी नैतिक समस्या ही हल हुई। उसका उनके गुजरातमें रहने अथवा न रहनेके साथ कोई भी सम्बन्ध नही है। गुजरातसे जानेकी उनकी इच्छा बहुत समयसे है। यहाँ उसके कारणकी गहराईमें जानेकी जरूरत नही है। किन्तु काका गुजरात छोड़ें या न छोड़े, इसका निर्णय तो अन्ततः मुझे करना है। उसके साथ सरदारका कोई सम्बन्ध नही है। मैं काकाको भागने नही दूंगा। मै लाचार हो जाऊँगा, तभी वे जायेंगे। किन्तु आप और अन्य साथी निश्चिन्त तथा निर्भय रहे।

आप वकील होनेके नाते केवल अपना कानूनी फैसला दीजिए।

बापूके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२३९)से। एस० एन० २२८५५ से भी।

१. इसका मसौदा गांधीजी ने तैयार किया था; देखिए खण्ड ५५, अवशिष्टांश, पृ० ४८२। देखिए पृ० २७७-७८ और ३५८-५९ भी।

अवशिष्टांश

१. पत्र : सरिताको

३१ मई, १९३४

चि० सरिता,

तुम्हारा पत्र मिला। मुझे लिखा, यह बहुत अच्छा किया। डॉ० [हीरालाल] शर्माका उपचार करा रही हो, यह बात मुझे अच्छी लगती है। कराती रहना। नीमूके साथ रहनेमें कोई दोष माननेका कारण नहीं है। हम लोगोंको यह अन्धविश्वास पालनेकी आवश्यकता नहीं। जो माँ-बाप लालची होनेके कारण अपनी लड़कीको गढ़ेमें हर कहीं धकेल देते थे, उनके लिए अपनी लड़कीके यहाँ पानी भी न पीनेका रिवाज ठीक था। किन्तु वे लोग भी अपना धन्धा तो छोड़ते नहीं थे।[1] इसके सिवा तुम्हारे साथ मेरा सम्बन्ध आजका नहीं है। अमृतलालके समयसे चला आ रहा है। इसलिए रामदासके साथ रहनेमें लेशमात्र भी संकोच न करना।

तथापि, यदि डॉ० शर्माके साथ रहनेसे तुम्हारा उपचार ज्यादा व्यवस्थित ढंगसे हो सकता हो, तो अवश्य उसके साथ रहने लगना।

पत्र लिखना शुरू किया है तो अब लिखती रहना।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती पत्र (जी० एन० ११५२८) से।

२. पत्र : काशीप्रसाद दीक्षितको

२५ जून, १९३४

भाई काशीप्रसाद,

तुमारा खत मिला है। वगैर दूसरे पक्षकी बात सुने हुए मैं क्या कह सकता हूं? टंडनजी जानबुझकर किसीको अन्याय करें ऐसा मैंने कभी नहिं पाया है।

मो० क० गांधीके आशीर्वाद

मूल सी० डब्ल्यू० ३०७० से; सौजन्य : काशीप्रसाद दीक्षित; जी० एन० ५८७४ से भी।

१. वाक्यका अर्थ मूलमें अस्पष्ट है।

परिशिष्ट

परिशिष्ट – १

श्वेत-पत्र एवं साम्प्रदायिक परिनिर्णय-सम्बन्धी प्रस्ताव[1]

श्वेत-पत्रके सुझावो तथा साम्प्रदायिक परिनिर्णयके बारेमें कांग्रेसकी नीतिपर कार्य-समितिका जो प्रस्ताव है, उसकी अधिकृत रिपोर्ट निम्नलिखित है:

कांग्रेस संसदीय बोर्डने कार्य-समितिसे श्वेत-पत्रके सुझावो तथा साम्प्रदायिक परिनिर्णयके बारेमें कांग्रेसकी नीति घोषित करनेके लिए कहा है, इसलिए कार्य-समिति घोषित करती है कि इन विषयोपर कांग्रेसकी नीति निम्न है:

> श्वेत-पत्र किसी भी तरह भारतकी जनताकी इच्छा व्यक्त नहीं करता, प्रायः सभी भारतीय राजनैतिक दलोने, कमोबेश, इसकी निन्दा की है, और अगर यह कांग्रेसके लक्ष्यकी ओर बढ़नेमें बाधक नही तो उससे बहुत कम तो है ही। श्वेत-पत्रका एकमात्र सन्तोषप्रद विकल्प है, सविधान सभा द्वारा तैयार किया गया सविधान। उस सविधान सभाका चुनाव बालिग मताधिकारके आधारपर अथवा उससे यथासम्भव मिलते-जुलते आधारपर हो और यदि आवश्यक हो तो प्रमुख अल्पसंख्यक वर्गोंके प्रतिनिधि केवल उन वर्गोंके मतदाताओं द्वारा ही चुने जायें।
>
> श्वेत-पत्रके समाप्त होनेपर, साम्प्रदायिक परिनिर्णय निश्चित रूपसे स्वयमेव समाप्त हो जाना चाहिए। अन्य बातोंके अलावा, संविधान सभाका यह भी दायित्व होगा कि वह प्रमुख अल्पसख्यक वर्गोंके प्रतिनिधित्वकी पद्धति निश्चित करे और, अन्य प्रकारसे भी, उनके हितोंकी रक्षा की व्यवस्था करे।
>
> परन्तु चूंकि देशके विभिन्न सम्प्रदायोमें साम्प्रदायिक परिनिर्णयके प्रश्नपर तीव्र मतभेद है, इसलिए उसके बारेमें कांग्रेसके दृष्टिकोणको स्पष्ट करना आवश्यक है। कांग्रेस दावा करती है कि वह भारत राष्ट्रके सभी सम्प्रदायोका समान रूपसे प्रतिनिधित्व करती है और इसलिए, विचार-विभेदको देखते हुए, साम्प्रदायिक परिनिर्णय को विचार-विभेद बने रहनेतक न तो स्वीकार ही कर सकती है, न अस्वीकार ही। साथ ही साम्प्रदायिक प्रश्नपर कांग्रेसकी नीति पुनः घोषित करना आवश्यक है।
>
> कांग्रेस कोई भी ऐसा समाधान जो पूर्णतया राष्ट्रीय न हो, प्रस्तुत नही कर सकती। लेकिन कांग्रेस ऐसे किसी भी समाधानको, जो राष्ट्रीय समाधानसे

१. देखिए, पृ० ८४, २६७-९ और ३३५।

कम होते हुए भी सभी सम्बन्धित पक्षोंको स्वीकार हो, स्वीकार करनेके लिए वचनबद्ध है और इसके विपरीत, वह ऐसे किसी भी समाधानको, जो कथित पक्षोंमें से एकको भी स्वीकार न हो, अस्वीकार करनेके लिए वचनबद्ध है।

अन्य आधारोंपर गम्भीर आपत्तियाँ होनेके अलावा, साम्प्रदायिक परिनिर्णय राष्ट्रीय मानदण्डपर परखनेपर भी सर्वथा असन्तोषप्रद है।

फिर भी, यह तो स्पष्ट ही है कि इस साम्प्रदायिक परिनिर्णयके दुष्परिणामोंको रोकनेका एकमात्र मार्ग, एक सर्वसम्मत समाधानके लिए रास्ता और उपाय ढूंढ़ना है, इस मूलतः घरेलू प्रश्नपर ब्रिटिश सरकार या किसी और बाह्य शक्तिसे अपील नहीं करनी है।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १८-६-१९३४

परिशिष्ट – २

एन० सी० केलकरका पत्र[1]

'केसरी' कार्यालय,
पूना – २
२२ जून, १९३४

प्रिय महात्माजी,

भारतीय रियासतोंकी जनता कुछ ऐसे विषयोंपर, जिनसे वह स्वयं प्रभावित होती है, आपके व्यक्तिगत विचार जानना चाहती है, ताकि हम कांग्रेससे यह कह सकें कि वह, आपके विचारके प्रकाशमें, कुछ मसलोंपर अपनी नीति और भी स्पष्ट रूपमें निर्धारित करने तथा कुछपर उसे थोड़ा बदलनेकी वांछनीयतापर विचार करे।

इस सिलसिलेमें पहला प्रश्न, जिसकी ओर हम अपना ध्यान आकर्षित करना चाहेंगे, यह है कि यह जरूरी है कि कांग्रेस रियासतोंसे सम्बन्धित समस्याओंको सुलझानेका काम अपने हाथमें ले। रियासतोंसे "अपनेको बेदाग रखने" की अपनी परम्परागत नीति कांग्रेसने अब छोड़ दी है। वह रियासतोंसे अपने सदस्य भर्ती करती है और उन्हें अपनी जिला और प्रान्तीय समितियोंके नियन्त्रणमें लाती है। इस तरह रियासतोंसे जो शक्ति उसे मिली है, वह किसी भी तरह नगण्य नहीं है; और न ही ये सदस्य कांग्रेसकी गतिविधियोंके सुप्त हिस्सेदार हैं, हालाँकि ये गतिविधियाँ मुख्यतया केवल ब्रिटिश भारतसे ही सम्बन्धित रही हैं। सविनय अवज्ञा-जैसे आन्दोलनोंतक में ये सदस्य अच्छे सहकर्मी साबित हुए हैं और इन्होंने अपनी जिम्मेदारी हँसी-खुशीसे निभाई है, क्योंकि इन्होंने यह समझ लिया है कि ब्रिटिश भारत और भारतीय भारत वस्तुतः एक और अविभाज्य हैं तथा जो समस्याएँ एककी हैं, वे दूसरेकी भी हैं।

१. देखिए पृ० १३९-४०।

हम समझते हैं कि अब वह समय आ गया है जब कांग्रेसको, रियासतोंकी जनता द्वारा प्रदर्शित सुसहयोगकी भावनाका उत्तर देते हुए, अपनी सारी शक्ति और प्रतिष्ठा उसके आत्मोद्धारके प्रयत्नोंके पीछे लगा देनी चाहिए। निस्सन्देह, मद्रास (१९२७) और कलकत्ता (१९२८) के अधिवेशनोंमें कांग्रेसने भारतीय रियासतोमें लोकतान्त्रिक स्वराज्यकी स्थापनाके लिए वकालत की थी और वहाँके निवासियोंके प्रति अपनी सहानुभूति दिखाई थी। कलकत्ताके प्रस्तावको यहाँपर विस्तारपूर्वक उद्धृत करना उपयोगी होगा :

> कांग्रेस भारतीय रियासतोके शासक नरेशोंसे अनुरोध करती है कि वे रियासतोमें प्रतिनिधि सस्थाओके आधारपर उत्तरदायी सरकार स्थापित करें, और संगठनके अधिकार, भाषणकी स्वतन्त्रता, समाचारपत्रोकी स्वतन्त्रता और जान और मालकी सुरक्षा-जैसे प्राथमिक और मौलिक नागरिक अधिकारोकी व्यवस्था शीघ्र ही अध्यादेश जारी करके या कानून बनाकर करें।
>
> भारतीय रियासतोंकी जनताको कांग्रेस यह भी आश्वासन देती है कि रियासतोमें उत्तरदायी सरकारकी स्थापनाके लिए उसका जो वैध और शान्ति-पूर्ण संघर्ष है, वह उससे सहानुभूति रखती है और उसका समर्थन करती है।

हमें इसमें कोई सन्देह नही है कि आगे भी जो अधिवेशन होंगे, उनमें इसी प्रकारके प्रस्ताव दोहराये जायेंगे। लेकिन क्या हम ऐसी आशा नही कर सकते कि जिस प्रकार भारतीय रियासतोंके कांग्रेसियोने ब्रिटिश भारतके लोगोको उनके लक्ष्यकी प्राप्तिके प्रयत्नोमें कुछ सहायता दी है, उसी प्रकार ब्रिटिश भारतके कांग्रेसी भारतीय रियासतोंकी जनताको राजनैतिक स्वतंन्त्रताकी प्राप्तिमें सक्रिय सहायता देंगे? ब्रिटिश भारतके लोग बहुत अधिक प्रगति कर चुके है, लेकिन वास्तवमें ब्रिटिश भारतके लोगोने रियासतोकी जनताको जितनी सहायता दी है; उससे बहुत अधिक सहायता रियासतोकी जनताने ब्रिटिश भारतके लोगोको दी है। क्या आप कांग्रेसके नामपर ब्रिटिश भारतके लोगोको यह सुझाव देना उचित नही समझते कि वे भारतीय रियासतोमें उनके शासकोके सरक्षणमें लोकप्रिय सरकार स्थापित करनेके लिए चल रहे सभी वैध आन्दोलनोंको अपनी सक्रिय सहायता दें और, यदि जरूरत पड़े तो उसके लिए कष्टतक सहे? हमें लगता है कि किसी औपचारिक सघकी अपेक्षा दोनो पक्षोंके ऐसा सहयोग दिखानेसे दोनों भारतमें कही अधिक दृढ़ एकता स्थापित होगी।

एक और भी अधिक आवश्यक प्रश्न, जिसपर कांग्रेसको अपनी नीति निश्चित रूपसे निर्धारित करनी है, यह है कि श्वेत-पत्र योजनाके उन अंशोंके बारेमें, जो भारतीय रियासतोसे सम्बन्धित है, उसका रुख क्या हो। काग्रेसके अधिकारियोंने घोषणा की है कि चूंकि योजना भारतीय जनताकी आकाक्षाओको पूरा नही करती, अत. वह अस्वीकार्य है। क्या हम यह कह सकते है कि रियासतोंसे सम्बन्धित व्यवस्थाएँ तो रियासतोंकी जनताको और भी अधिक अस्वीकार्य है, और क्या हम आशा करे कि उन व्यवस्थाओकी वस्तुत. स्वीकृति या अस्वीकृति जनताकी इच्छाओंके आधारपर की जायेंगी? काग्रेसके इरादेके अनुसार, भारतका भावी सविधान, जो श्वेत-पत्रके

संविधानकी जगह लेगा, आत्म-निर्णयके सिद्धान्तपर आधारित होगा, जिसे एक संविधान-सभा कार्यान्वित करेगी। क्या इसका अर्थ यह है कि इस सभा द्वारा संघकी जो योजना तैयार की जायेगी, वह ब्रिटिश भारतकी जनता और भारतीय रियासतोंकी जनताके आपसी समझौतेका परिणाम होगी?

इस विषयकी चर्चा करते हुए यह उचित होगा कि गोलमेज सम्मेलनमें दिये गये आपके भाषणोंके कुछ अंशोंसे भारतीय रियासतोंकी जनताके मनमें जो आशंकाएँ पैदा हो गई है, उनका भी जिक्र किया जाये। इस सम्मेलनमे आपने भारतीय रियासतोंके शासकोंके समक्ष गम्भीरतापूर्वक यह प्रतिपादित किया था कि वे सघीय विधानसभाके लिए, रियासतोंके प्रतिनिधियोका चयन मतदान द्वारा होने दे तथा रियासतोकी जनताके मौलिक अधिकारोको सघीय सविधानमे लिखे जाने और उन्हें संघीय न्यायालयकी सुरक्षामें रखने दे। लेकिन उस अवसरपर आपके प्रतिपादनसे ऐसी धारणा बनी है कि यदि नरेश उससे सहमत नही हुए, जैसाकि वे न हुए और न है,-तो आप एक ऐसा संविधान भी स्वीकार कर लेंगे जिसमें आपकी सुझाई हुई व्यवस्थाओंके लिए कोई स्थान न हो। यदि यह धारणा सही है तो हम यह कहे बिना, और साफ-साफ कहे बिना, नही रह सकते कि आपने रियासतोंकी जनताके साथ भारी बेइन्साफी की है। उदाहरणके लिए, यदि आप सोचते है कि वर्तमान परिस्थितियोंमें, यदि अवश्यक हो तो, नरेशो द्वारा मनोनीत प्रतिनिधियोंको अवश्य ही स्वीकार कर लिया जाये, तो हम आपसे यही प्रार्थना करेंगे कि इस सम्बन्धमें रियासतोंकी जनताकी क्या इच्छा है, यह जाननेके लिए इस विषयको आप उसीके आगे रखें। भारतीय रियासतोकी जनताका आत्म-निर्णयका अधिकार ब्रिटिश भारतके लोगोंके आत्म-निर्णयके अधिकारसे कम पवित्र नहीं है।

लेकिन हमें बताया गया है कि रियासतोंके प्रतिनिधियोंके चुनाव तथा रियासतोंकी जनताके मौलिक अधिकारोंकी सुरक्षाके पक्षमें आपने अपने विचार जिस प्रकार व्यक्त किये, उससे आप रियासतोंके शासकोको यह बताना चाहते थे कि यदि वे आपके अनुरोधसे सहमत नही हुए तो आप उन्हे सघमे सम्मिलित नही करेंगे। आपने इन्हें संघकी आवश्यक शर्त माना था, परन्तु आपने ऐसा साफ-साफ नही कहा था, क्योंकि उस समयतक संघ अनिश्चितताके गर्तमें था। यदि आपके कहनेका अर्थ यही है तो हम आपसे निवेदन करते है कि आप इसे इस तरह स्पष्ट करें कि किसी सन्देहकी कोई गुँजाइश ही न रहे, क्योंकि रियासतोके शासक, आपने जो-कुछ कहा था, उसकी दूसरी ही व्याख्या कर रहे है। उदाहरणार्थ, उनका कहना है कि आप नरेशो द्वारा मनोनीत प्रतिनिधियोको अनिश्चित अवधितक सहन करनेको तैयार हैं। आपके अभिप्रायको स्पष्ट करना आवश्यक है, क्योंकि राँचीमें हुए स्वराज्यवादियोंके सम्मेलनमें यह बताया गया है कि उनकी पार्टी (जो अब कांग्रेसकी एक शाखा मात्र है) भावी संविधानके निर्माणमे आपके भाषणोका अनुसरण करेगी। काग्रेसकी नीतिको अन्तिम रूपसे निश्चित करनेमें आपके व्यक्तिगत विचार बहुत ही निर्णायक भूमिका अदा करते हैं। इसलिए हम यह जाननेको उत्सुक है कि आपके विचारमें रियासतोंके लोगों

का चुनाव तथा उनके हितार्थ की गई अधिकारोंकी घोषणा संघकी महज वांछनीय विशेषताएँ हैं या उसकी आवश्यक शर्तें। सघीय सविधानसे सम्बन्धित और कितनी ही बातें है जिनपर कांग्रेसको सावधानीसे विचार करनेकी आवश्यकता है। लेकिन अभी हम उनको लेकर आपको परेशान करना नही चाहते। हमारी आपसे केवल यही प्रार्थना है कि इस पत्रमें उठाये गये विषयोंपर आप अपने विचार हमें साफ-साफ बतायें।

हृदयसे आपका,
(ह०) एन० सी० केलकर एवं अन्य लोग

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १०-७-१९३४

परिशिष्ट – ३

स्वदेशी विषयक प्रस्ताव[1]

स्वदेशी-सम्बन्धी कांग्रेस-नीतिके बारेमें सन्देह पैदा हो जानेसे, इस विषयपर कांग्रेस-नीतिकी स्पष्ट शब्दोमें अभिपुष्टि आवश्यक हो गयी है।

सत्याग्रह-संघर्षके दिनोंमें जो भी कुछ किया गया, उसके बावजूद, कांग्रेस-मंच पर और कांग्रेस प्रदर्शनियोमें मिलके बने कपड़े और हाथसे कती व हाथसे बुनी खादीके बीच प्रतिस्पर्धाकी अनुमति नही है। कांग्रेसियोंसे आशा की जाती है कि वे दूसरे कपड़ोंको छोड़कर हाथसे कती व हाथसे बुनी खादीका उपयोग करें तथा उसके उपयोगको बढ़ावा दें।

कपड़ेके अलावा अन्य वस्तुओंके सम्बन्धमें कार्य-समिति कांग्रेसकी सभी संस्थाओंके पथ-प्रदर्शनार्थ निम्न नियम स्वीकार करती है:

कार्य-समितिकी यह राय है कि कांग्रेस-संस्थाओंकी स्वदेशी-सम्बन्धी गतिविधियाँ उन उपयोगी वस्तुओंतक ही सीमित रहेंगी जिनका निर्माण भारतमें कुटीर और अन्य लघु उद्योगों द्वारा होता है, जिनके प्रोत्साहनके लिए लोगोंको शिक्षित करना आवश्यक है और जो मूल्योंके निर्धारण एवं अपने अधीन मजदूरोंकी मजदूरी एवं कल्याणके मामलोंमें कांग्रेस-सस्थाओंका पथ-प्रदर्शन स्वीकार करेंगे।

इस नियमका अर्थ यह हरगिज नहीं लगाना चाहिए कि देशमें स्वदेशीकी भावना को बढ़ाने और केवल स्वदेशी वस्तुओंके ही उपयोगको बढ़ावा देनेकी कांग्रेसकी अटूट नीतिमें कोई परिवर्तन किया गया है। यह नियम तो इस तथ्यकी स्वीकारोक्ति है कि बड़े और संगठित उद्योगोंको, जो सरकारी सहायता प्राप्त कर सकते हैं या कर रहे हैं, कांग्रेस-संस्थाओकी सेवा अथवा कांग्रेसके किसी प्रयासकी कोई आवश्यकता नहीं है।

[अंग्रेजीसे]
दि हिस्ट्री ऑफ दि इंडियन नेशनल कांग्रेस, भाग १, पृष्ठ ५७६-७७

१. देखिए, पृ० ३००-१ तथा ३०८-१०।

परिशिष्ट – ४

अनुशासनपर प्रस्ताव[1]

सभी कांग्रेसियोंसे, चाहे वे कांग्रेसके कार्यक्रम और नीतियोंमें विश्वास रखते हों या नहीं, यह आशा की जाती है और पदाधिकारी एवं कार्य-समितिके सदस्य तो अपने पदकी प्रतिष्ठाके अनुसार इस बातके लिए बाध्य ही हैं कि वे उनको कार्यान्वित करें। और जो पदाधिकारी और कार्यकारिणीके सदस्य कांग्रेसके कार्यक्रम और नीतियोंके विरुद्ध प्रचार या कोई काम करते हैं वे, संविधानकी धारा ३१ के अन्तर्गत २४ मई, १९२९ को अ० भा० कां० क० द्वारा निर्धारित नियमोंके अनुसार, स्पष्ट रूपसे अनुशासन-भंगके दोषी हैं और उनके विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्रवाई की जा सकती है।

[अंग्रेजीसे]

दि हिस्ट्री ऑफ दि इंडियन नेशनल कांग्रेस, भाग १, पृष्ठ ५७७

परिशिष्ट – ५

जवाहरलाल नेहरूका पत्र[2]

आनन्द भवन,
इलाहाबाद
१३ अगस्त, १९३४

प्रिय बापू,

मात्र छः महीनेके पूर्ण एकान्त और निष्क्रियताके बाद, मैं गत २७ घंटोंकी चिन्ता, उत्तेजना और हलचलमें अपनेको खोया-खोया-सा महसूस कर रहा हूँ। मैं बहुत थकान महसूस कर रहा हूँ। यह पत्र मैं आपको आधी रातको लिख रहा हूँ। दिन-भर लोगोंकी भीड़ आती रही है। अगर मौका मिला तो मैं पुनः आपको पत्र लिखूँगा, लेकिन कुछ महीनोंतक मैं शायद ही ऐसा कर पाऊँ। अतः मैं आपको संक्षेप में यह बताने जा रहा हूँ कि गत पांच-एक महीनोंके कांग्रेसके विभिन्न महत्वपूर्ण निर्णयोंपर मेरी क्या प्रतिक्रिया रही है। मेरे सूचनाके स्रोत स्वभावतः सीमित रहे

१. देखिए, पृ० ३०१।
२. देखिए पृ० ३३६-३७ तथा ३४८-४९।

है, फिर भी मैं समझता हूँ कि वे इस लायक थे कि मैं घटनाओंके सामान्य रुखके बारेमें काफी ठीक धारणा बना सकता था।

जब मैंने यह सुना कि आपने सविनय अवज्ञा आन्दोलन बन्द कर दिया है तो मुझे दुःख हुआ। पहले मुझे संक्षिप्त घोषणा ही मिली। बहुत बादमें मैंने आपका वक्तव्य पढा और उससे मेरे मनको इतना गहरा धक्का लगा जितना कि पहले कभी नही लगा था। स० अ० की समाप्तिको सह लेनेको मैं तैयार था। परन्तु उसके लिए आपने जो कारण बताये तथा भावी कार्यके लिए जो सुझाव दिये, उनसे मैं आश्चर्यचकित रह गया। अचानक बड़ी तीव्रतासे मुझे लगा कि मेरे भीतर कुछ टूट गया है— वह सम्बन्ध जिसे मैंने बहुमूल्य समझा था, टूट गया है। इस विराट संसारमें मैंने अपने-आपको भयावह रूपसे अकेला पाया। करीब-करीब बचपनसे ही मैं कुछ-कुछ अकेलापन महसूस करता आया हूँ। लेकिन कुछेक सम्बन्धोने मुझे शक्ति दी, कुछ मजबूत सहारोने मुझे खड़ा रखा। वह अकेलापन कभी गया तो नही, परन्तु उसमें कमी आ गई। लेकिन अब मैं अपनेको एक निर्जन द्वीपपर बिलकुल अकेला, परित्यक्त और घटना-प्रवाहसे विच्छिन्न पा रहा हूँ।

मनुष्यमें अपनेको परिस्थितियोंके अनुरूप ढालनेकी असीम शक्ति होती है, और इसलिए मैंने भी अपनेको कुछ हदतक नयी परिस्थितियोके अनुरूप ढाला। इस विषयमें मेरी अनुभूतिकी तीव्रता, जो करीब-करीब शारीरिक दर्द-सी थी, गुजर गई, उसकी धार कुण्ठित हो गई। परन्तु एकके-बाद-दूसरे धक्के तथा घटनाओंके तांते ने उस धारको फिर पैना कर दिया, तथा मेरे दिल और दिमागको शान्ति या राहत न मिलने दी। अपने पाससे गुजर जानेवाली भीड़से ही नही, अपितु जिन्हें मैं प्रिय और घनिष्ठ मित्र मानता था, उनसे भी समन्वय स्थापित न कर सकने और बिलकुल अजनबी रहनेकी आत्मिक अलगावकी वह अनुभूति मुझे फिर महसूस हुई। इस बारका कारावास मेरे धैर्यकी पहलेके किसी भी कारावाससे कहीं कठिन परीक्षा थी। मेरी तो प्रायः यह इच्छा होती थी कि सभी समाचारपत्रोंको मुझसे दूर रखा जाये, ताकि मैं बार-बारके धक्कोंसे बच सकूँ।

शारीरिक रूपसे मैं काफी ठीक रहा। जेलमें मैं हमेशा ठीक रहता हूँ। मेरा शरीर अच्छी तरह काम करता रहा है और काफी हदतक दुर्व्यवहार और तनाव सह सकता है। और चूंकि मुझमें यह दम्भ है कि मेरा भाग्य जिस देशसे बंधा है, मैं उसके लिए अभी भी कुछ कारगर काम कर सकता हूँ, इसलिए मैंने अपने शरीर की अच्छी देखभाल भी की है।

लेकिन मैंने प्रायः यह सोचा है कि कही मैं गोल छेदमें चौकोर खूंटा या समुद्र द्वारा तिरस्कृत और उसकी सतहपर इधर-उधर फेंका जानेवाला अहंकारका बुलबुला तो नहीं हूँ। लेकिन दम्भ और आत्माभिमानकी विजय हुई तथा मेरे अन्दर काम करनेवाले बौद्धिक तंत्रने हार नही मानी। वे आदर्श जिन्होने मुझे काम करनेके लिए प्रेरित किया और तूफानी मौसमम मुझे उल्लसित रखा, यदि उचित है—और मुझमें यह विश्वास हमेशा बढ़ता गया है कि वे उचित हैं—तो उनकी जीत होगी ही, भले ही हमारी पीढ़ी उस जीतको देखनेके लिए जिन्दा न रहे।

लेकिन इस सालके लम्बे और थकाऊ महीनोंमें, जब मैं अपनी निस्सहायतापर खीझता हुआ मूक एवं दूर का दर्शक बना था, उन आदर्शोंका क्या हुआ? रुकावटें और क्षणिक पराजय तो प्रायः हर बड़ी लड़ाईमें मिलती हैं। उनसे दुःख होता है, परन्तु मनुष्य प्रायः शीघ्र ही फिर ठीक हो जाता है। यदि आदर्शोंकी ज्योति मद्धिम न होने दी जाये और सिद्धान्तोंका लंगर अडिग रहे तो वह शीघ्र ठीक हो जाता है। लेकिन जो-कुछ मैंने देखा, वह ऐसी रुकावट और पराजय नहीं थी, वह तो आत्मिक पराजय थी जो सबसे भयावह है। यह न सोचें कि मैं कौंसिल-प्रवेशकी बात कर रहा हूँ। मैं उसे बहुत महत्त्वपूर्ण नहीं मानता। कुछ परिस्थितियोंमें तो मैं खुद विधान-मण्डलमें प्रवेश करनेकी कल्पना कर सकता हूँ। लेकिन चाहे मैं विधान-मण्डलमें काम करूँ या उसके बाहर, मैं एक क्रांतिकारीकी तरह काम करता हूँ, जिसका अर्थ है मूलभूत और क्रांतिकारी राजनैतिक एवं सामाजिक परिवर्तनोंके लिए काम करना, क्योंकि मेरा विश्वास है कि कोई और परिवर्तन भारत और संसारको शान्ति या सन्तोष नहीं दे सकता।

मैंने तो ऐसा ही सोचा था। लेकिन, जाहिर है कि बाहर काम करनेवाले नेताओंने ऐसा नहीं सोचा। वे लोग उस युगकी भाषा बोलने लगे जो असहयोग आन्दोलन और सविनय अवज्ञा आन्दोलनका उन्माद सिरपर चढ़नेसे पहले ही बीत चुका था। कभी-कभी वे वैसे ही शब्दों एवं वाक्योंका प्रयोग करते थे, परन्तु वे शब्द मृत थे, उनमें जीवन या वास्तविक अर्थ नहीं था। एकाएक कांग्रेसके अग्रणी नेता वे लोग बन गये जिन्होंने हमारी राहमें रोड़े अटकाये थे, हमारी टांगें खींची थीं, जो संघर्षसे दूर रहे थे और जिन्होंने मुसीबतकी घड़ीमें विरोधी पक्षका साथ तक दिया था। वे हमारे स्वतन्त्रता-मन्दिरके महापुजारी बन गये और बहुत-से बहादुर सैनिकोंको, जिनके कन्धोंपर लड़ाईकी गहमागहमीमें भारी बोझ रहा, मन्दिरके प्रांगणमें भी नहीं घुसने दिया गया। वे लोग अछूत और न मिलने लायक माने गये। यदि उन्होंने अपनी आवाज उठाई और इन नये महापुजारियोंकी आलोचना की, तो शोर मचाकर उनकी आवाज दबा दी गई और कहा गया कि वे उद्देश्यके विरुद्ध द्रोह कर रहे हैं, क्योंकि उन्होंने पवित्र स्थानकी सुव्यवस्था बिगाड़ी है।

और इस प्रकार बड़ी धूमधाम और समारोहके साथ भारतीय स्वतन्त्रताकी पताका उन्हें सौंप दी गई, जिन्होंने हमारे राष्ट्रीय संघर्षकी चरमावस्थामें दुश्मनके इशारेपर, वस्तुतः उसे नीचे झुकाया था; जिन्होने आसमान सरपर उठाकर घोषणा की थी कि उन्होंने राजनीति छोड़ दी है — क्योंकि तब राजनीति खतरेसे खाली नहीं थी, लेकिन ज्योंही राजनीति खतरेसे खाली हुई वे छलांग लगाकर अगली पंक्तिमें आ धमके।

और कांग्रेस तथा देशकी ओरसे बोलते हुए उन्होंने अपने सामने उद्देश्य क्या रखे? असली मसलोंसे बचना; जहाँतक हिम्मत की जा सकती थी वहाँतक कांग्रेस के राजनैतिक लक्ष्यतक को हल्का करना; प्रत्येक निहित स्वार्थके प्रति सदय उत्कंठा दिखाना; स्वतन्त्रताके घोषित शत्रुओंके सामने नतमस्तक होना; परन्तु प्रगतिशील

और संघर्षशील कांग्रेसियोका बड़ी उग्रता और हिम्मतके साथ विरोध करना—यही सब घृणित कृत्य। क्या गत कुछ वर्षोंसे कांग्रेस बड़ी तेजीसे सिमटकर लज्जास्पद कलकत्ता कॉरपोरेशनका महज एक परिवर्धित संस्करण नही बनती जा रही है? क्या बंगाल कांग्रेसके प्रमुख धड़ेको आज "श्री नलिनीरंजन सरकार विकास समिति" का नाम नही दिया जा रहा है? ये वही सज्जन है जिन्हे उस समय, जबकि हममें से ज्यादातर जेलमें थे और सविनय अवज्ञा जोरोंपर मानी जाती थी, सरकारी अधिकारियों, होम मेम्बरों तथा ऐसे ही अन्य लोगोंका स्वागत करनेमें आनन्द मिलता था। और क्या दूसरा धड़ा भी शायद ऐसे ही प्रशंसनीय उद्देश्यवाली इसी तरहकी समिति नही है? लेकिन यह दोष केवल बंगालमें ही नही है। प्रायः सब जगह ऐसी ही प्रवृत्ति है। कांग्रेस आज सिरसे पैरतक एक ऐसा दल है जिसमें अवसरवादका बोलबाला है।'

इस स्थितिके लिए कार्य-समिति प्रत्यक्ष रूपसे जिम्मेदार नही है। तथापि कार्य-समितिको जिम्मेदारी स्वीकार करनी ही चाहिए। नेता और उनकी नीति ही अनुयायिओंकी गतिविधियाँ निर्धारित करते है। अनुयायियोंपर दोषोरोपण करना न तो उचित है और न न्यायसंगत ही। 'नाच न जाने आंगन टेढ़ा' वाली कहावत प्रत्येक भाषामें किसी-न-किसी रूपमें मिलती है। समितिने हमारे आदर्शों और उद्देश्योंमें अस्पष्टताको जान-बूझकर बढ़ावा दिया है, जिसके फलस्वरूप न केवल भ्रान्ति फैलेगी, अपितु प्रतिक्रियाके दौरमें उत्साह-भंग भी होगा और अवसरवादी प्रतिक्रियावादी लोग उभरेगे।

मै विशेष रूपसे राजनैतिक उद्देश्योंकी बात कर रहा हूँ, जो कांग्रेसका खास कार्यक्षेत्र है। मै समझता हूँ कि कांग्रेसके लिए वह समय कभी का आ चुका है जब उसे सामाजिक और आर्थिक मसलोंपर स्पष्ट रूपसे विचार करना चाहिए। लेकिन मैं मानता हूँ कि इन मसलोंपर शिक्षा देनेमें समय लगता है और कांग्रेस समग्र रूपसे अभी वहाँतक नही जा सकती जहाँतक कि मै चाहता हूँ। परन्तु ऐसा लगता है कि कार्य-समिति इस विषयके सम्बन्धमें चाहे कुछ जानती है या नही, पर जिन्होने इस विषयका विशेष अध्ययन किया है और जो इसपर निश्चित विचार रखते है, उनकी भर्त्सना करने और उनका बहिष्कार करनेको वह एकदम इच्छुक है। जिन विचारोंके बारेमें ऐसा विख्यात है कि संसारके योग्यतम और सर्वाधिक त्यागी लोगोंका उनपर विश्वास है, उन्हें समझनेकी कोई कोशिश नही की गई है। वे विचार चाहे ठीक हो या गलत, उनकी भर्त्सना करनेसे पहले कार्य-समितिको उन्हे कुछ हदतक समझनेकी चेष्टा तो करनी ही चाहिए। एक तर्कयुक्त दलीलका जवाब भावुक अपीलों अथवा इस सस्ती टिप्पणीसे देना कि भारतकी परिस्थितियाँ भिन्न है तथा जो आर्थिक नियम दूसरी जगह लागू होते है वे भारतमें काम नहीं करते, शायद ही उचित है। इस विषयपर कार्य-समितिके प्रस्तावमें समाजवादके मूल तत्त्वोंके सम्बन्धमें ऐसी आश्चर्यजनक अज्ञानता झलकती थी कि उसे पढ़कर और यह सोचकर कि उन्हें भारतके बाहर भी पढ़ा जा सकता है, काफी कष्ट होता था। ऐसा जान पड़ा कि समितिकी

प्रबल इच्छा विभिन्न निहित स्वार्थोंको आश्वासन देना था, भले ही उसके लिए मूर्खता की भी बात क्यों न कहनी पड़े।

समाजवादके विषयपर विचार करनेका एक विचित्र तरीका यह है कि इस शब्दको, जिसका अंग्रेजी भाषामें एक निश्चित अर्थ है, बिलकुल दूसरे अर्थमें प्रयुक्त किया जाता है। शब्दोंका प्रयोग अपने व्यक्तिगत अर्थोंमें करना विचार-विनिमयमें सहायक नहीं होता। किसी व्यक्तिका पहले यह कहना कि वह इंजन-चालक है और फिर बादमें यह बात जोड़ना कि उसका इंजन काठका है और उसे बैल खींचते हैं, इंजन-चालक शब्दका दुरुपयोग ही है।

यह पत्र आशासे अधिक लम्बा हो गया है और रात काफी बीत चुकी है। दिमाग थका होनेके कारण शायद यह उलझे और असम्बद्ध तरीकेसे लिखा गया है। फिर भी मेरे मनकी कुछ झलक तो इसमें दिखाई देगी ही। पिछले कुछ महीने मेरे लिए, और मैं समझता हूँ बहुत-से दूसरे लोगोंके लिए भी, बहुत कष्टकर रहे हैं। कभी-कभी मुझे ऐसा लगता है कि आधुनिक संसारमें, और शायद प्राचीन संसारमें भी, दूसरोंकी जेबसे कुछ लेनेकी बजाय कुछ लोगोंके दिलोंको तोड़ना ही प्रायः पसन्द किया जाता है। जेब, वास्तवमें दिल, दिमाग, शरीर और मानवीय न्याय व गरिमासे अधिक कीमती और प्यारी है।

एक और विषय है जिसकी मैं चर्चा करना चाहूँगा। वह है, स्वराज भवन ट्रस्ट। मैं समझता हूँ कि कार्य-समितिने हालमें ही स्वराज भवनकी सार-सम्भालके सवालपर विचार किया था और वह इस नतीजेपर पहुँची थी कि वह इसके लिए जिम्मेदार नहीं है। लेकिन क्योंकि करीब तीन साल पहले उसने एक अनुदानकी घोषणा की थी जो अभीतक दिया नहीं गया है, हालाँकि उसकी आशापर पैसा खर्च कर दिया गया है, इसलिए एक नये अनुदानकी स्वीकृति दी गई। शायद यह कुछ महीनोंके लिए पर्याप्त होगा। जहाँतक भविष्यका सवाल है, जाहिर है कि कार्य-समिति मकान और उसकी खाली जमीनकी देखभाल का बोझ उठानेके लिए उत्सुक नहीं थी। यह बोझ, टैक्स आदि मिलाकर, १०० रुपये प्रति मासका है। मैं समझता हूँ कि ट्रस्टी भी इस बोझसे कुछ डरे हुए थे और उन्होंने यह सुझाव दिया कि मकानकी देखभालके खर्चके लिए उसके कुछ हिस्से, जैसाकि आम तरीका है, किराये पर चढा दिये जायें। दूसरा सुझाव था कि इसके लिए खाली जमीनके एक हिस्सेको बेच दिया जाये। मुझे इन सुझावोंको जानकर आश्चर्य हुआ, क्योंकि मुझे इनमें से कुछ तो ट्रस्टनामे से अक्षरशः और सब-के-सब उसकी भावनासे विपरीत लगे। एक ट्रस्टीकी हैसियतसे इस विषयमें मेरा सिर्फ एक मत है। लेकिन मैं यह कहना चाहूँगा कि ट्रस्टकी सम्पत्तिके ऐसे किसी भी दुरुपयोगपर मुझे इतनी जबरदस्त आपत्ति है जितनी कि हो सकती है। मेरे पिताकी इच्छाओंका इस तरहसे निरादर हो, इस बातकी कल्पना ही मेरे लिए असह्य है। ट्रस्ट केवल उनकी इच्छाओंका प्रतीक ही नहीं बल्कि कुछ अंश तक उनका स्मारक भी है, और उनकी इच्छाएँ और उनका स्मारक मेरे लिए एक सौ रुपये माहवारसे कहीं अधिक मूल्यवान है। इसलिए मैं कार्य-समिति और ट्रस्टियोंको

आश्वासन देना चाहूँगा कि उन्हें इस सम्पत्तिकी देखभालके लिए आवश्यक पैसेकी चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं है। कार्य-समितिने कुछ महीनोंके लिए जो अनुदान दिया है, उसके खत्म होते ही देखभालकी जिम्मेदारी मैं स्वयं व्यक्तिगत रूपसे ले लूँगा, कार्य-समितिको और अनुदान देनेकी कोई आवश्यकता नहीं रहेगी। मैं ट्रस्टियोंसे यह भी प्रार्थना करूँगा कि वे इस विषयमें मेरी भावनाओंकी कद्र करें और इस सम्पत्तिका क्षय न होने दें तथा इसे किरायेपर चढ़ानेके लिए किरायेपर न ले। जबतक स्वराज भवन सम्पत्तिका सदुपयोग होता रहेगा, मैं इसकी देखभाल करते रहनेका प्रयास करूँगा।

मेरे पास आँकड़े तो नहीं हैं, लेकिन मेरा विश्वास है कि स्वराज भवन वैसे भी अभीतक कार्य-समितिके लिए किसी भी अर्थमें आर्थिक बोझ नहीं रहा है। जो अनुदान इसे दिये गये हैं, वे उस स्थानके यथोचित किरायेसे जिसमें अ० भा० कां० क०का कार्यालय है, शायद बहुत अधिक नहीं है। इस किरायेको छोटा और सस्ता स्थान लेकर घटाया जा सकता था। पर अ० भा० कां० क० पहले केवल मद्रासमें ही एक ऊपरी मंजिलके लिए १५० रुपये प्रतिमास किराया दे चुकी है।

शायद इस पत्रके कुछ अंश आपके लिए कष्टकर हों। परन्तु आप यह भी नहीं चाहेंगे कि मैं आपसे अपने हृदयकी बात छिपाऊँ।

सस्नेह,
जवाहर

[पुनश्चः]

अलीपुर जेलमें मुझे आपकी संक्षिप्त टिप्पणी मिली थी और मैंने उसका जवाब भी भेज दिया था। लेकिन सुपरिंटेंडेंटने उसे दबा लिया।

[अंग्रेजीसे]
ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स, पृ० ११२-१७

सामग्रीके साधन-सूत्र

गांधी स्मारक संग्रहालय, नई दिल्ली : गांधी साहित्य और गांधीजीसे सम्बन्धित कागज-पत्रोंका केन्द्रीय संग्रहालय तथा पुस्तकालय; देखिए खण्ड १, पृ० ३५९ (प्रथम संस्करण १५ अगस्त, १९५८) तथा पृ० ३५५ (द्वितीय संशोधित संस्करण जून, १९७०)।

नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्ली।

सावरमती संग्रहालय : पुस्तकालय तथा संग्रहालय, जिसमें गांधीजीके दक्षिण आफ्रिकी काल तथा १९३३ तकके भारतीय कालसे सम्बन्धित कागजात रखे हैं; देखिए खण्ड १, पृ० ३६० (प्रथम संस्करण १५ अगस्त, १९५८) तथा पृ० ३५५ (द्वितीय संशोधित संस्करण जून, १९७०)।

'अमृतवाजार पत्रिका' : कलकत्तासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'खादी जगत' : वर्धासे प्रकाशित हिन्दी मासिक। कृष्णदास गांधी द्वारा सम्पादित। सर्वप्रथम अगस्त, १९४१ में प्रकाशित।

'ट्रिब्यून' : अम्वालासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'पायनियर' : लखनऊसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'वॉम्वे क्रॉनिकल' : वम्बईसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'लीडर' : इलाहावादसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'सर्चलाइट' : पटनासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'स्टेट्समैन' : कलकत्तासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हरिजन' : गांधीजीकी देखरेखमें आर० वी० शास्त्री द्वारा सम्पादित तथा पूनासे प्रकाशित अंग्रेजी साप्ताहिक। सर्वप्रथम ११ फरवरी, १९३३ को प्रकाशित।

'हरिजन सेवक' : वियोगी हरि द्वारा सम्पादित हिन्दी साप्ताहिक। सर्वप्रथम दिल्लीसे २३ फरवरी, १९३३ को प्रकाशित।

'हरिजनवन्धु' : चन्द्रशंकर शुक्ल द्वारा सम्पादित गुजराती साप्ताहिक। सर्वप्रथम पूनासे १२ मार्च, १९३३ को प्रकाशित।

'हिन्दुस्तान टाइम्स' : नई दिल्लीसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हिन्दू' : मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'ए वंच ऑफ ओल्ड लेटर्स' (अंग्रेजी) : सम्पादक जवाहरलाल नेहरू, एशिया पब्लिशिंग हाउस, वम्वई, १९५८।

'टु दि स्टुडेन्ट्स' (अंग्रेजी) : सं० – भारतन कुमारप्पा, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदावाद, १९४९।

'पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद' : सं० — काका कालेलकर, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली, १९५३।

'पिलग्रिमेज टु फ्रीडम (१९०२-१९५०) — इंडियन कान्स्टीट्यूशनल डाकूमैंट्स' भाग — १ (अंग्रेजी) : स० — क० मा० मुंशी, भारतीय विद्या भवन, बम्बई, १९६७।

'बापू — कन्वर्सेशन्स एण्ड कोरेसपोंडेंस (अंग्रेजी) : सं० — एफ० मेरी बार, इन्टरनेशनल बुक हाउस लि०, बम्बई, १९४९।

'बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष' (१९३२-४८) : सं० — हीरालाल शर्मा, ईश्वरशरण आश्रम, इलाहाबाद, १९५७।

'बापूज लेटर्स टु मीरा' (अंग्रेजी) : सं० — मीराबहन, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।

'बापुना पत्रो — ७ : श्री छगनलाल गांधीने' (गुजराती) : सं० — छगनलाल जोशी, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९६२।

'बापुना पत्रो — ४ : मणिबहन पटेलने' (गुजराती) : सं० — मणिबहन पटेल, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'बापुना पत्रो — २ : सरदार वल्लभभाईने' (गुजराती) : सं० — मणिबहन पटेल, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'बापुनी प्रसादी' (गुजराती) : सं० — मथुरादास त्रिकमजी, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।

'मध्य प्रदेश और गांधीजी' : सूचना और प्रकाशन निदेशालय, मध्य प्रदेश द्वारा गांधी शताब्दी समारोह समितिके लिए प्रकाशित, १९६९।

'महात्मा' भाग — ३ (अंग्रेजी) : डी० जी० तेंदुलकर; प्रकाशक : विट्ठलभाई के० झवेरी तथा डी० जी० तेंदुलकर, ६४ वालकेश्वर रोड, बम्बई–७, अक्टूबर, १९५२।

'महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी' : स्वराज्य आश्रम, बारडोलीमें सुरक्षित।

'माई डियर चाइल्ड' (अंग्रेजी) : सं० — एलिस एम० बॉर्न्ज, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद; १९५६।

'रेमिनिसैन्सिज ऑफ गांधीजी' (अंग्रेजी) : सं० — चन्द्रशंकर शुक्ल, वोरा एंड कम्पनी लि०, बम्बई, १९५१।

'सरदार वल्लभभाई पटेल — २' (मूल गुजरातीमें) : नरहरि द्वा० परीख, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, दिसम्बर, १९५६।

'(दि) हिस्ट्री ऑफ दि इंडियन नेशनल कांग्रेस,' भाग १ (अंग्रेजी) : डॉ० पट्टाभि सीतारमैया, पद्मा पब्लिकेशन्स, बम्बई, १९४६।

'बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स' : बम्बई सरकारके सरकारी कागजात।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(१८ मई, १९३४से १५ सितम्बर, १९३४ तक)

१८ मई: पटनामे अ० भा० कां० क० की बैठकमें भाषण।

१९ मई: अ० भा० कां० क० में कौंसिल-प्रवेश सम्बन्धी प्रस्ताव पेश करनेके बाद भाषण।

२० मई: पटनासे चल दिये। 'हिन्दू' के प्रतिनिधिको भेंट।

२१ मई: प्रातःकाल बेरी पहुँचे और वहाँसे गांधी सेवा आश्रम, चम्पापुरहाट पैदल गये; 'हिन्दुस्तान टाइम्स' के प्रतिनिधिको भेंट।

२२ मई: चम्पापुरहाटके अपने भाषणमें कहा कि रोगोंको दूर रखनेके लिए दवाएँ बाँटनेकी बजाय लोगोंको स्वास्थ्य-विज्ञान व सफाईकी शिक्षा देना जरूरी है।

२३ मई। गोपीनाथपुरमें भाषण।

२५ मई: एम० आर० मसानी और ना० र० मलकानीसे बातचीत; पातपुर निश्चिन्त कोइलीमें भाषण।

२६ मई: ककतिया, सलारमें भाषण।

२७ मई: केन्द्रपाड़ामें भाषण।

२९ मई: मसानीको लिखे पत्रमें समाजवादी कार्यक्रमपर विचार व्यक्त किये; केन्द्रपाड़ामें भाषण; 'एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडिया' के प्रतिनिधिको भेंट।

३० मई: उत्कलके कार्यकर्त्ताओंको भेंट।

३१ मई: बेरी, निओला और सहसपुरमें भाषण।

१ जून: पुरुषोत्तमपुर, बुद्धघाटमें भाषण; वर्षाके कारण एक टूटी-फूटी झोंपड़ीमें ठहरे।

२ जून: जाजपुरकी सार्वजनिक सभामें भाषण।

३ जून: भण्डारीपोखरी, जोड़ांगमें भाषण।

५ जून: गरदपुर आश्रम, भद्रक पहुँचे।

७ जून: भद्रकके गरदपुर आश्रममें हरिजन कार्यकर्त्ताओंके सम्मुख भाषण।

८ जून: वर्षाके कारण पद-यात्रा रद्द की। खड्गपुर रेलवे स्टेशनपर दिये गये अपने भाषणमें कलकत्ता महापौर चुनाव-सम्बन्धी विवादको कलकत्ता कॉरपोरेशनके कांग्रेस-समर्थकोंकी 'अशोभनीय लड़ाई' बताया।

बालासोरमें 'एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडिया' के प्रतिनिधिको भेंट; अस्पृश्यता-निवारणपर भाषण।

९ जून : नागपुर रेलवे स्टेशनपर, कपड़ा-कर्मचारियोंके समक्ष भाषण; शामको वर्धा पहुँचे; आश्रम पैदल गये।

१२ जून : वर्धामें ढाई साल बाद भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसकी कार्य-समितिकी बैठक हुई।

१३ जून : बम्बईके लिए रवाना हुए।

१४ जून : बम्बईमें हरिजन सेवक सघ और गांधी सेवा सेनाके सदस्योंको भेंट।

१५ जून : महिलाओंकी सभामें भाषण।

१६ जून : भीमराव अम्बेडकरको भेंट; काग्रेस संसदीय बोर्डकी बैठकमें भाषण; आजाद मैदानकी सार्वजनिक सभामें भाषण।

१७ जून : अ० भा० स्वदेशी लीगके सदस्योंको भेंट।

१९ जून : पूनामें इंडियन स्टेट्स पीपुल्स मूवमेंटके कार्यकर्त्ताओंको भेंट, उसका नेतृत्व एन० सी० केलकर कर रहे थे।

२० जून : कांग्रेसके रचनात्मक कार्यकर्त्ताओंको भेंट।

२१ जून : महिला आश्रममें भाषण; छात्रोंके समक्ष भाषण।

२२ जून : क्राइस्ट सेवा संघ देखने गये; राष्ट्रीय शिक्षा-कार्यकर्त्ताओंको भेंट।

२३ जून : महाराष्ट्र मण्डल नामके एक व्यायाम सस्थानमें भाषण देते हुए व्यायामके साथ-साथ नैतिक व आध्यात्मिक विकासकी आवश्यकतापर बल दिया; खादी भण्डार और ताराचन्द आयुर्वेदिक अस्पताल देखने गये; बारह वफातके जलसेमें भाषण।

२४ जून : जिला बोर्ड द्वारा भेंट किये गये अभिनन्दन-पत्रके उत्तरमें भाषण; हरिजनोंसे भेंट; एक सार्वजनिक सभामें भाषण।

२५ जून : गांधी जीकी हत्याकी कोशिश की गई, परन्तु वे बच गये। उन्होंने बमकाण्ड पर एक वक्तव्य दिया; सेवा सदन देखने गये; बम्बईके लिए रवाना हुए।

२६ जून : बम्बईमें, 'एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडिया' के प्रतिनिधिको भेंट; अहमदाबादके लिए रवाना हुए; बड़ौदा रेलवे स्टेशनपर भाषण दिया।

२७ जून : अहमदाबादमें गुजरात हरिजन सेवकोंसे बातचीत; महिलाओंकी सभामें भाषण; 'एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडिया' को दिये एक सन्देशमें उन बेशुमार लोगोंके प्रति कृतज्ञता प्रकट की, जिन्होंने पूनामें उनके बाल-बाल बचनेपर तार भेजे थे।

२८ जून : अहमदाबादमें २५ मीलमें फैली हरिजन बस्ती देखने गये; गुजराती स्वदेशी संघके कार्यकर्त्ताओंको भेंट।

२९ जून : मिल कर्मचारियोंकी सभामें भाषण; ज्योति सघ और एक सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

३० जून: समाजवादी कांग्रेसियोंकी सभामें भाषण।

१ जुलाई: भावनगरके सनातन धर्म हाई स्कूलमें हुए स्वागत-समारोहमें भाग लिया; काठियावाड़ी युवकोंसे बातचीत की; हरिजनोंके समक्ष भाषण दिया; एक सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

२ जुलाई: काठियावाड़ हरिजन सेवक संघ और काठियावाड़ राजकीय परिषद हरिजन समितिके संयुक्त अधिवेशनमें दोनों संस्थाओंके सदस्योंको अ० भा० केन्द्रीय लीग, दिल्लीमें शामिल होनेकी सलाह दी।

३ जुलाई: ठक्कर हरिजन आश्रम और खादी भवन देखने गये; हरिजनोंको भेंट; सार्वजनिक सभामें भाषण; राज्य गोशालामें भाषण; रेलसे अजमेरके लिए रवाना हुए।

४ जुलाई: अजमेर जाते हुए रास्तेमें मेहसाना और पालनपुरमें भाषण।

५ जुलाई: अजमेरमें महिलाओंकी सभामें भाषण दिया; हरिजन-सेवकोंसे मिले; सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

६ जुलाई: बहुत सवेरे मोटरसे ब्यावर गये; हरिजन बस्ती देखने गये; जैन साधुओंसे अभिनन्दन-पत्र ग्रहण किया। रेलसे कराचीके लिए रवाना हुए।

७ जुलाई: कराची जाते हुए रास्तेमें हैदराबादमें भाषण दिया; कराचीमें नगरपालिका द्वारा भेंट किये गये अभिनन्दन-पत्रके उत्तरमें भाषण दिया।

८ जुलाई: कांग्रेस-कार्यकर्त्ताओंके समक्ष भाषण; सिन्धके हरिजन-सेवकोंके समक्ष भाषण; कराची इन्डियन मर्चेन्ट्स एसोसिएशनके भवनका शिलान्यास करनेके बाद व्यापारियोंके समक्ष भाषण; हरिजन बस्ती देखने गये; सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

१० जुलाई: उपवासके बारेमें एक वक्तव्य जारी किया; हरिजन नेताओंको भेंट; द० जे० सिन्ध कालेजमें भाषण दिया।

११ जुलाई: सिंधके पत्रकारोंको भेंट; प्रान्तीय हरिजन सेवक संघके सदस्योंको प्रत्येक वर्षका चन्दा स्वतन्त्र रूपसे एकत्रित करनेकी राय दी और कहा कि जो चन्दा इस यात्राके दौरान एकत्र हो उसका उपयोग चालू खर्चके लिए न किया जाये बल्कि उसे पिछड़े क्षेत्रोंके लिए सुरक्षित रखा जाये; हरिजन हस्तशिल्प संस्थान देखने गये; पारसियोंकी सभामें भाषण दिया; रेलसे लाहौरके लिए रवाना हुए।

१२ जुलाई: रेलमें 'ट्रिब्यून' के प्रतिनिधिको भेंट।

१३ जुलाई: प्रान्तीय कांग्रेसके नेताओंको भेंट; हरिजन-शिष्टमण्डलको भेंट; छात्रोंकी सभामें भाषण।

१४ जुलाई: छात्राओंकी सभामें भाषण; महिलाओंकी सभामें भाषण।

१५ जुलाई: अकाली और खालसा दरबार शिष्टमण्डलको भेंट; पंजाबके हिन्दुओं और सिखोंके शिष्टमण्डलको भेंट; सार्वजनिक सभामें भाषण।

१७ जुलाई : प्रार्थना-सभामें भाषण; स्वयंसेवकोंको भेंट; सीमाप्रान्तके नेताओंको भेंट; पंजाबके राष्ट्रवादी कार्यकर्त्ताओं और खादी कार्यकर्त्ताओंके समक्ष भाषण, पत्रकारोंको भेंट; गुलाबदेवी तपेदिक अस्पताल और मॉडल टाउनमें भाषण। 'एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडिया' के प्रतिनिधिको भेंट; कलकत्ताके लिए रवाना हुए।

१८ जुलाई : कलकत्ता जाते हुए रास्तेमें नई दिल्लीमें 'एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडिया' के प्रतिनिधिको भेंट।

१९ जुलाई : कलकत्तामें समाचारपत्रोंको वक्तव्य दिया; डॉ० नीलरतन सरकार और बी० सी० रायने गांधीजीकी डाक्टरी जाँच की; एल्बर्ट हॉलमें महिलाओंकी सभामें शामिल हुए; रवीन्द्रनाथ ठाकुर मिलने आये।

२० जुलाई : डॉ० सरकार व डॉ. रायने गांधी जीकी डाक्टरी जाँच की।

२१ जुलाई : चित्तरंजन सेवा सदनमें भाषण दिया और उसके बाल-कक्षका शिलान्यास किया; विद्यार्थियोंको भेंट; टाउन हॉलमें भाषण; सार्वजनिक सभामें भाषण; कानपुरके लिए रवाना हुए; गाड़ीमें 'एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडिया' के प्रतिनिधिको भेंट।

२२ जुलाई : कानपुरमें नगरपालिका और जिला बोर्डके अभिनन्दन-पत्रोंका उत्तर देते हुए भाषण दिया; सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

२४ जुलाई : तिलक हॉलके उद्घाटन-समारोहमें भाषण; सनातनियों और संयुक्त प्रान्तके हरिजन कार्यकर्त्ताओंको भेंट; विद्यार्थियों व हरिजनोंके समक्ष भाषण; राष्ट्रभाषा शिष्टमण्डलको भेंट।

२५ जुलाई : दो घंटेके लिए लखनऊ गये और वहाँ जनाना पार्कमें महिलाओंके समक्ष भाषण दिया; चरखा संघ खादी भण्डार देखने गये; सार्वजनिक सभामें भाषण दिया; कानपुर लौटे; हरिजनों और विद्यार्थियोंके अभिनन्दन-पत्रोंके उत्तरमें भाषण दिया; आर्यसमाजमें भाषण दिया; जमींदारोंको भेंट।

२६ जुलाई : कांग्रेसी, हरिजन और खादी कार्यकर्त्ताओंको भेंट; महिलाओंकी सभामें भाषण; हरिजन बस्ती देखने गये; बनारसके लिए रवाना हुए।

२७ जुलाई : बनारसमें समाजवादियोंको भेंट।

२९ जुलाई : हरिजन सेवक संघके केन्द्रीय बोर्डकी बैठकमें भाषण दिया; कांग्रेस संसदीय बोर्डका घोषणा-पत्र तैयार किया; कांग्रेस संसदीय बोर्डके घोषणा-पत्र और राष्ट्रीय-शिक्षापर भाषण दिया।

३० जुलाई : उपवासपर एक वक्तव्य जारी किया।

३१ जुलाई : लालनाथ द्वारा भेजे गये आदेशपत्रको, जिसमें कोतवालके समक्ष उपस्थित होनेकी आज्ञा थी, माननेसे इनकार कर दिया; सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

१ अगस्त : बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयमें भाषण; हरिजनोंकी सभामें भाषण।

२ अगस्त : महिलाओंकी सभामें भाषण; पटनाके लिए रवाना हुए।

३ अगस्त : पटनामें समाचारपत्रोंके प्रतिनिधियोंको भेंट; बिहार केन्द्रीय सहायता समिति की बैठकमें भाषण दिया और यह प्रस्ताव पेश किया कि समिति प्रबन्ध-समितिमें अपना विश्वास प्रकट करती है।

४ अगस्त : सुबह पटनासे वर्धाके लिए रवाना हुए; जबलपुरमें लोगोंसे बातचीत की।

५ अगस्त : वर्धामें जमनालाल बजाजके साथ प्रत्येक संस्थाको शुद्ध करनेके प्रश्नपर विचार-विमर्श किया, उनको ऑपरेशनके लिए बम्बई जानेकी सलाह दी और आश्रममें शुद्धि-सप्ताहका निरीक्षण करनेका आश्वासन दिया।

६ अगस्त : उपवासपर एक वक्तव्य जारी किया।

७ अगस्त : प्रातःकालीन प्रार्थना समाप्त कर और ५.३० बजे आखिरी नाश्ता लेकर सुबह ६ बजेसे उपवास शुरू कर दिया; उपवासके महत्त्वपर बोले।

१४ अगस्त : सुबह ६ बजे एक गिलास गर्म पानी और शहद लेकर उपवास समाप्त किया।

१४ अगस्तके पश्चात् : गुजरात विद्यापीठके शिक्षकोंके साथ बातचीतकी और उनको गाँवोंमें जाने तथा वहाँ जंगम विद्यापीठके रूपमें कार्य करने लिए कहा।

१५ अगस्त : डाक्टरोंने गांधीजीकी जाँच की।

१६ अगस्त : समाचारपत्रोंके प्रतिनिधियोंको भेंट।

२३ अगस्त या उससे पूर्व : कांग्रेस कार्य-समितिके साम्प्रदायिक परिनिर्णय सम्बन्धी प्रस्तावपर समाचारपत्रोंको वक्तव्य दिया।

२४ अगस्त या उससे पूर्व : खादी-कार्यकर्त्ताओंको भेंट।

२६/२७ अगस्त : वल्लभभाई पटेलको एक पत्रमें राजगोपालाचारीके साथ अपने कांग्रेस-छोड़नेके इरादेपर बातचीतकी सूचना दी।

५ सितम्बर : समाचारपत्रोंको वक्तव्य जारी किया जिसमें इस अफवाहका खण्डन किया गया था कि वे कांग्रेसके नेतृत्वका त्याग कर रहे हैं।

शीर्षक-सांकेतिका

विविध

सांकेतिका

अ

आ

उ

ओ

क

ख

घ

च

प

फ

ब

य

र

ल

व

श

स